विमल मित्र की महान् कृति

रवीन्द्र-पुरस्कार से सम्मानित

खरीदी कौड़ियों के मोल

प्रथम खण्ड

खरीदी
कौड़ियों के मोल
बिमल मित्र

स्वर्गीय पितृदेव सतीशचन्द्र मित्र
के श्रीचरणों में समर्पित

All that I have is a voice
To undo the folded lie,
The romantic lie in the brain
Of the sensual Man in the Street,
The lie of Authority
Whose buildings scrape the sky;
There is no such thing as the State
And no one exists alone :
Hunger allows no choice
To the citizen or the police,.
We must love one another or die.

—W. H. Auden
[1907—1973]

भूमिका

बचपन में रामायण मेरी प्रिय पुस्तक थी। कहना चाहिए कि उसी में मुझे कहानी का पहला पाठ मिला। कहानी का रस कितना गहरा हो सकता है, यह उस समय मैं आँसू बहा-बहाकर जिस तरह समझ सका था, उसके बाद कोई भी पुस्तक पढ़कर उस तरह नहीं समझ सका।

यह तो कहानी की बात हुई। कहानी जब तक पढ़ी जाती है, तब तक उसका रस मिलता है। उसके बाद कहानी का प्रभाव कम हो जाता है। लेकिन कहानी से परे भी एक तरह का तीव्रतर और गम्भीरतर प्रभाव है जो कहानी पढ़ लेने के साथ ही साथ खत्म नहीं होता। वह जीवन के साथ एकरस बना रहता है। वह जीवन को आगे बढ़ाता है। वह जीवन को आगे बढ़ने में मदद देता है। रामायण की कहानी उसी तरह की है, जो जीवन को युग से युगांतर तक फैलाकर उसे जाग्रत और पुनर्जीवित करता है।

उम्र बढ़ने पर मैंने देखा है कि रामायण कवि की सारहीन कल्पना नहीं है। आज भी दुनिया में हजारों हजार, लाखों लाख राम, सीता और रावण अपनी-अपनी विशेषताएँ लिये विद्यमान है। अयोध्या और लंका सिर्फ भौगोलिक नाम नहीं है — शहर कलकत्ते में ही वे है। आज भी इस कलकत्ते में सीता का हरण होता है। इस युग में भी सीता वन को जाती है। इस बीसवीं सदी में भी सीता का पाताल-प्रवेश होता है।

बहुत दिनों से इच्छा थी कि रामायण की कथा अपनी भाषा में लिखूंगा। लेकिन वैसा हो न सका। जो हो सका, वह है 'खरीदी कौड़ियों के मोल'।

बिमल मित्र

एक महान् उपन्यास

बंगला साहित्य के वृहत्तम ग्रंथ के रूप में 'खरीदी कौड़ियों के मोल' ब
में सुपरिचित है। अतीत के महाकाव्य का स्थान आज उपन्यास ने ले लि
'खरीदी कौड़ियों के मोल' आधुनिक युग और जीवन का महाकाव्य है। इसमें क
की कालपरिधि अति विस्तृत नहीं है, बस एक बालक के बचपन से उसकी जवा
मध्य तक। लेकिन कुछ बरसों का यह समय बंगाल के लिए विपुल परिवर्तन का
उसके सामने देश का स्वतंत्रता-आंदोलन, नवजाग्रत युवसमाज, आत्मविस्मृत
आदर्शबोध तथा गहरी सत्यपरायणता थी। लेकिन इन कुछ बरसों की परत पड़ते
देश की चारित्रिक दृढ़ता एकदम गायब हो गयी। गृहस्थी और आदर्श के द्वन्द्व से जज
मास्टर साहबों ने तब नेपथ्य भूमिका ले ली। नयी व्यवस्था में स्वतंत्रता का चर
दुरुपयोग मिस्टर घोषाल, हुसेन भाई और छिटे-फोटा की शक्ति-पिपासा में प्रकट हुआ
इस राष्ट्रीय और सामाजिक चक्रवात का मध्यबिंदु कथानायक दीपंकर है। उसके
व्यक्तिगत जीवन में एक तरफ राष्ट्रीय संकट है तो दूसरी तरफ युग-यंत्रणा के प्रति-
निधि के रूप में सती और लक्ष्मी दी आदि हैं। दीपंकर सिर्फ कथा का केन्द्रबिन्दु नहीं
है, उसी का दृष्टिकोण कथा का रसभाष्य है। उसके चरित्र में 'ऐक्शन' या कर्मठता
का नितांत अभाव किसी को खटक सकता है। लेकिन वह तो वहाँ निष्क्रिय दर्शक मात्र
है। कैमरे की आँख की तरह उसने कथा के सूत्रों को सिर्फ यांत्रिक कुशलता से पकड़
रखा है। उसका अपना कोई व्यक्तित्व प्रकट नहीं हुआ। लेकिन यह याद रखना जरूरी
है कि परिवेश को सक्रियता से उभारने के लिए शायद ऐसे सादे परदे की जरूरत थी।
कैनवस सफेद न होने पर बहुरंगी चित्र में जान नहीं आती।

'खरीदी कौड़ियों के मोल' उपन्यास काफी हद तक 'एपिक' जैसा है, यह पहले
ही बताया गया है। 'एपिक' याने महाकाव्य में व्यक्तिजीवन या गृहजीवन मुख्य नहीं
होता, उसमें देश और काल का विशाल चित्र प्रकट होता है। उसमें मोटी कूची फेरकर
विशाल युग को जीवन्त करना पड़ता है। इस दृष्टि से यह ग्रंथ सफल है। कथा की
तुलना में इसमें चरित्र बहुत कम हैं। फिर भी पारिपार्श्विक और युग-परिवेश-रचना
में कथाकार को गजब की सफलता मिली है। इसमें देश, काल और समाज भी पात्र
बन गये हैं और वे जीते-जागते हैं। स्थिर-लक्ष्य राष्ट्र का आदर्शभ्रष्ट होना और उसका
स्वाभाविक परिणाम इसमें निपुण सहृदयता से आँका गया है। अंत में आशावादी
परिणाम-चिन्तन के बीच कथा की समाप्ति होती है।

कथा के नामकरण में आज के युगजीवन के 'मॉटो' की ओर संकेत किया गया

है। अघोर भट्टाचार्य ने कहा था — कौड़ियों से सब कुछ खरीदा जा सकता है। उसी का सबूत मिस्टर घोपाल और छिटे-फोंटा जैसे लोगों ने दिया। लेकिन दीपंकर का आदर्शवाद उस नकारात्मक मतवाद से टकराकर रह गया। उसके जीवन ने प्रमाण दिया है कि कौड़ियों से कम से कम जीवन का आनन्द नहीं खरीदा जा सकता। आधुनिक युग के प्रति लेखक की यही व्यंजनामय उक्ति है।

— श्री प्रमथनाथ विशी

" .... Bimal Mitra's encyclopaedic novel 'Karhi Diye Kinlam' (1962) sums up the complexities and unsolved riddles of modern life in a representative individual character and studies life against the background of an ever-widening environment. This is truly a novel with a third dimension that packs up the meaning of the lives of all classes of people and events of far-reaching magnitude into the life of a single individual .... This is a book which has an intellectual appeal not exhausted at the first reading of the story. With this novel, modern Bengali fiction may be said to have stepped into a new sense of life-values or a new world of cosmic proportions...."

— Dr. Srikumar Banerjee

ख़रीदी कौड़ियों के मोल

प्रथम खण्ड

उन दिनों इधर इतनी बस्ती नहीं थी। जो थी वह भी माझेरहाट से काल
कालीघाट से बालीगंज और बालीगंज से बेलेघाटा तक। बेलेघाटा से छूटकर
परती और सूखे नाले की बगल से आकर बालीगंज में एक मिनट रुकती। सिग
झुकते ही टन-टन घंटी बजती। घंटी सुनते ही गार्ड साहब हरी झंडी दि
कर सीटी बजा देते। धड़धड़ाती ट्रेन छूट जाती। दोनों तरफ सड़े पोखर और जंग
के बीच रेल लाइन थी। कांकुलिया के पास आकर लाइन दो तरफ चली गयी थी।
एक तरफ लक्ष्मीकान्तपुर और डायमण्ड हार्बर। दूसरी तरफ कालीघाट-माझेरहाट
होकर बजबज स्टेशन। ट्रेन बजबज की तरफ जायेगी। गार्ड साहब ने सिर निकालकर
एक बार देख लिया। सिगनल झुका है। लाइन क्लीयर है। इंजन ने एक बार
सीटी बजायी। लाइन के दोनों बगल की पगडंडियों से साग-सब्जी की टोकरी सिर
पर रखे व्योपारी बाजार जा रहे हैं। भाँटे की टोकरी, मछली की टोकरी और साग-
सब्जी की टोकरी। बनकचूर की छोटी-छोटी झाड़ियाँ। लेवल-क्रासिंग आ गया। हरी
झंडी लिए गुमटीवाला खड़ा है। उसने झंडीवाला हाथ आगे कर दिया है। लोहे का
फाटक बंद है। दोनों तरफ कतारों में बैलगाड़ियाँ और भैंसागाड़ियाँ खड़ी हैं।

—ऐ गेटमैन, गेटमैन!

गुमटीवाले को यह सब सुनने की आदत है। नौकरी करते हुए भूषण ने बीस
साल काट दिये। काम करते-करते बाल पके।

—ओ गेटमैन, गेटमैन।

लोग तो इस तरह चिल्लायेंगे ही। नयी मोटरगाड़ियों पर चढ़कर साहब लोग
शहर से कस्बे की तरफ जायेंगे। उधर यादवपुर है। उधर ही साहब लोगों का जोध-
पुर क्लब है। साहब-मेमों की भीड़। गाड़ी पर गाड़ी चली आती है। गाड़ियों के
आने में विराम नहीं। एकदम सवेरे से दिन के एक या दो बजे तक। फिर तीसरे
पहर से शुरू होता है। झुंड के झुंड चलते हैं। लाल चेहरेवाले। देखने से भक्ति होती
है। सर्र-सर्र लाइन पार कर मोटरें आँधी की तरह निकल जाती हैं। अगर कहीं
निवार हुआ तो क्या पूछना? घुड़दौड़ का मैदान उधर ही है। दिन के बारह बजे
गाड़ियों की भीड़ लग जाती है। फिर उस दिन नहाना-खाना हो नहीं पाता। जरा
ते ही, अनमना होते ही थर्टी-थ्री अप धड़धड़ाती चली आयेगी। भैंसागाड़ी से

टकराते ही हल्ला मच जायेगा। तब हेड आफिस से डी० टी० आई० साहब आयेगा। बेलेघाटा से रेलवे पुलिस के लोग आयेंगे। हाथों में हथकड़ी पड़ जायेगी। नौकरी को लेकर खींतचान शुरू होगी।

—गेटमैन तो बड़ा तंग करता है। इंजन का पता नहीं और घंटे भर से गेट बंद है। ओ गेटमैन—

यह सब सुनने पर गुमटीवाला अपनी नौकरी कर नहीं सकता। बाबुओं का मिजाज हमेशा बिगड़ा रहता है। उन सब बातों से अगर गुमटीवाला अपना मिजाज बिगाड़े तो उसी का नुकसान है। ऐसे कितने बाबू उसने देखे हैं, कितने साहब-हाकिमों से उसका पाला पड़ा है। तुम लोगों को तो भई नौकरी नहीं करनी पड़ती। मजा मार रहे हो। तुम लोगों को क्या फिकर है! पैसे हैं इसलिए मौज करने निकले हो। घर में बीबी है, रखैल है, कुत्ता है, गाड़ी के पीछे वाले बक्से में शराब की बोतलें हैं। क्लब जाओगे, गाना गाओगे और रात बारह बजे तक नाचोगे। अब रात बिताकर भिनसारे लौट रहे हो तो लगे गेटमैन पर रोब गाँठने। भइया, मैं तुम्हारा नौकर नहीं हूँ। तुम्हारी तनखाह से पेट नहीं पालता और न तुमसे उधार खाता हूँ। रोब दिखाओ घर के नौकर-चाकर पर। हम सरकारी मुलाज़िम हैं। कंपनी के नौकर। कंपनी का खाते हैं, कंपनी का पहनते हैं और कंपनी का हुक्म बजाते हैं। कंपनी जूता भी मारती है तो बरदाश्त कर लेते हैं। कंपनी को इसका अख्तियार है। हज़ार बार अख्तियार है। डी० टी० एस० अगर कहता है—मेरे बगीचे में कुदाल चलाओ भूषण, तो मैं चलाऊँगा। डी० टी० आई० अगर कहता है—जूते झाड़ दो भूषण, तो मैं झाड़ दूँगा। वे लोग मालिक हैं। मालिक का हुक्म हज़ार बार सुनूँगा। वही लोग माई-बाप हैं। रॉबिन्सन साहब एक बार लाइन देखने आया था। सात फुट लंबा कद्दावर जवान। असली गोरा। खाकी हाफ-पैण्ट पहने था। क्या सब अंग्रेज़ी में बोला—सिर-पैर समझ में नहीं आया। लेकिन आदमी क्या, देवता था। ट्राली से आया था। बालीगंज से चलकर ट्राली से बजबज की तरफ जायेगा। जमींदारी देखने निकला था। कैसे क्या काम हो रहा है, कैसा सब चल रहा है, यही देखना था, और क्या? साथ में मेम साहब थी। और था एक कुत्ता। एक दिन पहले खबर मिल गयी थी। डी० टी० आई० साहब ने खबर भिजवाकर होशियार कर दिया था। बड़े साहब आ रहे हैं! बड़े बिगड़ैल साहब हैं। वर्दी-ओर्दी पहनकर सब रेडी रखना। दाढ़ी-ओढ़ी बनी रहे। काली झंडी, हरी झंडी सब साबुन से धोकर साफ रखना। गुमटी के आसपास कहीं झाड़-झंखाड़ न रहे। साहब गुमटी के भीतर झाँक-कर देख सकता है। मैला-कुचैला सामान हटा दो। बत्तियाँ माँज-मूँजकर साफ रखो। बड़े साहब आ रहे हैं, बड़े बिगड़ैल साहब हैं। ज़रा भी ऐब देखा तो ज़िन्दा न छोड़ेगा। एकदम शेर-बच्चा है।

डी० टी० आई० साहब ने होशियार कर दिया था। लेकिन कितना प्यारा आदमी था रॉबिन्सन साहब।

साहब नहीं, देवता था। हमेशा हँसमुख। ट्राली पर बैठा मोटा चुरुट पी रहा था। बगल में मेमसाहब थी। मन ही मन डर रहा था भूषण। ट्राली गुमटी के पास रुक सकती है और नहीं भी रुक सकती है। रॉबिन्सन साहब का मन होगा तो कालीघाट पार कर सीधे बजबज की तरफ चला जायेगा। हे माँ काली, साहब यहाँ न रुके। हे माँ मंगलचंडी, ऐसा करो कि साहब सीधे पश्चिम की ओर बढ़ जाय। पता नहीं गुमटी-घर का कोई ऐब दीख जाय और भूषण माली के नाम रिपोर्ट हो। तब तो नौकरी पर आ पड़ेगी, या पाँच रुपये जुर्माना होगा।

लेकिन साहब ट्राली से उतरा।

ट्राली आकर गुमटी के सामने रेल लाइन पर रुकी।

भूषण ने पहले से गेट बंद रखा था। सब को होशियार किया था। ट्राली रुकते ही गेट खुल गया। बैलगाड़ी, भैसागाड़ी, लोग-बाग लाइन पार कर चले गये। सर्र-सर्र मोटरें निकल गयीं।

भूषण ने साहब के पाँवों के पास गिट्टियों तक सिर झुकाकर प्रणाम किया।

साहब ने उधर ध्यान नहीं दिया। लेकिन मेमसाहब ने देखा। अहा, मेमसाहब तो नहीं, मानो जगद्धात्री है। जैसा रूप वैसा आकार। वैसा ही चेहरा। अगर सिगरेट न पीती तो और अच्छी लगती। लेकिन लत पड़ चुकी है तो क्या किया जाय! फिर भी मेमसाहब को माँ कहकर पुकारने को मन कर रहा था। शायद माँ कहकर पुकारता भी भूषण। माँ को प्रणाम करने जा रहा था भूषण, लेकिन वह कुत्ता भों-भों करता हुआ दौड़ा।

कुत्ता चेन से बँधा नहीं था। इसलिए डरने की बात थी। नादान जीव, किसी के दिल की बात तो नहीं समझता।

मेमसाहब ने बुलाया — जिम्मी, जिम्मी।

अच्छा हुआ कि मेमसाहब ने देख लिया। जान बची। नहीं तो कुत्ता काट खाता। मेमसाहब के बुलाते ही कुत्ता दुम दबाकर उनकी गोद में पहुँचकर प्यार जताने लगा। उस वक्त तो भूषण बच गया, लेकिन एक और मुसीबत हो गयी। साहब उस समय डी० टी० आई० साहब से अंग्रेजी में बात कर रहा था। लाइन के किनारे-किनारे पैदल चलकर यह देख रहा है तो वह देख रहा है। गुमटी-घर की तरफ उँगली से इशारा कर कुछ कहने लगा। छत से पानी टपकने से दीवार में दरार पड़ गयी है, और गुमटी के ऊपर पीपल का छोटा-सा पेड़ उग आया है। डी० टी० आई० साहब वही सब दिखा रहा है। बगल में पनाला है, जहाँ वर्षा का जल इकट्ठा होता है। वर्षा का वही जल सड़कर बदबू फैलाता है। कंपनी के लोगों की तबीयत खराब होती है। फिर साँप का डर है। नाइट ड्यूटी के समय काम करना मुश्किल है। उधर देखिए सर, उधर जंगल है न। पीछे की तरफ ढाकुरिया जाने का रास्ता है। वहाँ थोड़ा शहर का लक्षण है। एक-दो दुकानें हैं। साँझ को टिमटिमाकर एक-दो बत्तियाँ तो जलती हैं

हैं। इस रास्ते से जो भी जाते हैं, मोटर से जाते हैं। उधर ही जोधपुर क्लब, रेसकोर्स और गोल्फ क्लब हैं। इसीलिए इस रास्ते में गाड़ियों की इतनी भीड़ है।

डी० टी० आई० साहब हाथ-मुंह नचाकर रॉबिन्सन साहब को यही सब समझाने लगा।

भूषण अंग्रेजी नहीं समझता — लेकिन हाथ-मुंह नचाना देखकर सब कुछ भांप लेता है। अब तो बारिश के दिन आ गये, उस समय इधर एकदम पानी भर जायेगा। इस बारे में इंजिनीयरिंग डिपार्टमेंट से लिखा पढ़ी हुई है। यह लेवल-क्रासिंग आज का नहीं है। जब पहले पहल रेल लाइन बिछायी गयी थी, तब इधर क़स्बा नहीं था। सिर्फ एक पगडंडी थी। उस समय गुमटी भी नहीं थी और गेट भी नहीं था। गेटमैन भी नहीं था। एक ही रात तीन ऐक्सिडेण्ट हुए। गुड्स ट्रेन से तीन आदमी कटकर मरे। वे तड़के ही ताड़ी लाने जा रहे थे। उन दिनों ताड़ी का कारोबार पासियों के हाथ में था। ढाकुरिया के जंगल में ताड़ के बड़े-बड़े पेड़ हैं। सिर्फ ढाकुरिया में नहीं — वह जो उत्तर की तरफ जंगल और तालाब देख रहे हैं, वहाँ भी ताड़ के पेड़ हैं। एक दिन सवेरे पासी लोग ताड़ के पेड़ पर हँड़िया बाँध आते और दूसरे दिन दोपहर को उसे उतारते। दोपहर का रस ही ताड़ी है। जैसे आप लोगों के मुल्क में शराब है, वैसे इस देश में ताड़ी है। ताड़ी सस्ती है। नशा खूब जमता है। इधर के इस जंगल में बहुत से लोग ताड़ी का व्यापार करते हैं। शुरू-शुरू में इन्हीं लोगों के लिए रेल कम्पनी को गेट बनवाना पड़ा। रात-बिरात कौन इस रास्ते से गुजरेगा कहा नहीं जा सकता। तभी से पहरा बैठाना पड़ा।

उस समय कलकत्ता शहर और उत्तर में था। चौरंगी तक आकर शहर रुक गया था। इस तरफ लोग आते न थे। यहाँ था डाकुओं का अड्डा। शहर में कतल कर लाश यहीं इसी जंगल में फेंकी जाती थी। फिर वह लाश सड़कर बदबू करने लगती। दो-तीन दिन किसी को पता भी न चलता। सड़े पोखरों और जंगल के बीच कौन किसका पता रखता भला! मील पर मील जमीन पड़ती थी और खाई-खंदक थे। इधर खून होता था तो उधर किसी को खटका नहीं होता था। अचानक किसी दिन जंगल में हो-हल्ला मचता। उधर बस्ती के लोगों के कान तक आवाज पहुँचती। वे लाठी से कनस्तर पीटकर आवाज करते। जंगल के सूखे झाड़-झंखाड़ों में आग लगा दी जाती। फिर भी कोई इधर आने की हिम्मत नहीं करता। लोग कहते — डाकुओं का भीटा है। डाकुओं के भीटे की तरफ शाम को कोई आता नहीं था। वारेन हेस्टिंग्स के समय इसके चार मील के घेरे में लोगों की बस्ती नहीं थी। अंग्रेज कंपनी के शहर में काम-काज से जो लोग जाते थे, वे दिन ही दिन लौटते थे। दिन में भी अकेला लौटना निरापद नहीं था। लोग दल बनाकर लौटते थे। उधर हरिनाभि और बारुईपुर हैं। सोनारपुर और डायमंड हार्बर के लोग आते समय लाठी-डंडा और मशाल साथ लाते थे। अंग्रेजों की कचहरी का काम-काज दिन ही दिन निबटाकर लौटना पड़ता था।

जलकर मरे थे ! रेलगाड़ी से भी तेल आता था। मालगाड़ी से सील किये कनस्तरों में तेल आता था। वह तेल शालीमार के गोदाम में रखा जाता था। उसके वाद वही टीन खरीदकर मोटर के टैंक में उड़ेला जाता था। फिर मोटर सर्र-सर्र चलने लगती थी ।

उसके वाद जिस साल वजवज में पाइप लाइन वनी, उसी साल यह लाइन वनी। रेलवे के वड़े-वड़े साहव जमीन की नाप-जोख करने आये। इंजीनियर आये। वेलेघाटा के वन-जंगल काटकर रेल के इंजीनियरों और ओवरसीयरों ने ऊबड़-खावड़ जमीन को चौरस वना दिया। दोनों तरफ तार की वाड़ें लगा दी गयीं। जंगल से कितने ही साँप निकले। साँप काटने से कितने ही लोग मरे। वालीगंज स्टेशन वना। वावुओं के क्वार्टर वने। कुलियों की वस्ती वनी। पानी के लिए पम्प लगा। वेलेघाटा से मालगाड़ी भरकर लोहा-लक्कड़ आये, स्क्रू, नट-वोल्ट और फिश-प्लेट आये; धौंकनी, हथौड़ी, और कुदाल आये। यहीं, इसी जगह ताड़ के पेड़ों के जंगल से लाइन विछाते-विछाते इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट के लोग आगे वढ़े। सिगनल लगे, टेलीग्राफ के खंभे लगे और स्लीपर विछाये गये। फिर वह सव यहाँ तक आ गया। यही ढाकुरिया और गाड़िया हाटा के लेवल-क्रासिंग तक।

यहीं से हमारी कहानी शुरू होती है।

असल में यही वह जगह है, जहाँ कहानी शुरू होती है और खत्म भी।

पहले अंत ही कहना ठीक होगा। इससे उत्सुकता वढ़ती है। पढ़ने के लिए धैर्य वना रहता है। नहीं तो शुरू से शुरू करने पर कौन मन लगाकर पढ़ेगा! आज इस भागम-भाग के जमाने में किसमें इतना धैर्य है! कौन पढ़ेगा इतना वड़ा उपन्यास! कव नायक वड़ा हुआ, कव उसने पढ़ना-लिखना सीखा, कव व्याह-शादी की और कव वह मर गया, इसका व्योरेवार विवरण जानने के लिए किसे ग़रज़ पड़ी है? जैसे भूषण माली को गरज नहीं पड़ी थी, जैसे डी० टी० आई० साहव को नहीं पड़ी थी और जैसे रॉविन्सन साहव को भी नहीं पड़ी थी। वड़े से छोटे तक सव कम्पनी के नौकर थे। कोई वड़ा नौकर तो कोई छोटा था। वह कौन-सा दूर देश था — स्कॉटलैण्ड या इंगलैण्ड, कोई नहीं जानता। हो सकता है, वह लन्दन या वर्मिंघम के किसी रोडसाइड स्टेशन का केविनमैन था पहले। फिर कम्पनी की वदौलत यहाँ आकर, एक ही छलाँग में डी० टी० एस० वनकर ठाठ से वैठ गया है। साथ में जहाज से आयी हैं मेमसाहव और आया है वड़ा-सा कुत्ता।

डी० टी० आई० साहव तो वड़े चाव से समझा रहा था। परंतु रॉविन्सन साहव क्या समझ रहा था यह भगवान् ही जाने।

सुन रहा हूँ, उधर उत्तर तरफ लेक वनेगा। उधर का जंगल साफ हो जायेगा।

कलकत्ता कार्पोरेशन अब उधर की जमीन बेच नही रहा है। कहा जा रहा है
भवानीपुर तक शहर की शकल एकदम बदल जायेगी। उधर खिदिरपुर औ
घाट, फिर इधर कस्बा — बीच का यह जंगल माफ करने पर कलकत्ते
एकदम बदल जायेगा सर ! तब उधर ढाकुरिया की तरफ भी लोग बसेंगे,
बढेगी। तब इस रास्ते में ट्रैफिक बढ जायेगा। तब इस मामूली लेवल-क्रॉसिंग
नही चलेगा। बम्पस साहब ने इस तरह का एक नोट दिया है — यह देखि
फाइल देखिए। प्लान भी एनक्लोज किया गया है। प्लान देखते ही समझ जा
यह इलाका फ्यूचर में कितना इम्पॉर्टेंट हो जायेगा। बम्पस साहब ने लिखा है —
एक स्टेशन बनाना उचित होगा। इससे हमारा पैसेञ्जर ट्रैफिक भी बढेगा।
बालीगज और पश्चिम में कालीघाट — इस तरह मील के डिस्टैन्स में एक स्टे
बनाकर साइडिंग खोलने पर सेकशन की कैपेसिटी बढ जायेगी —

रॉबिन्सन साहब इस बात का मतलब समझ नही पाये। उन्होने बायाँ हा
तिरछा हिलाकर कहा — यू मीन आवर रेलवे स्टेशन ?

डी० टी० आई० साहब ने कहा — येस सर।

रॉबिन्सन साहब खास विलायत में रोडसाइड स्टेशन के केबिनमैन थे। उनके
साथ मेमसाहब थी और विलायती कुत्ता था। उधर शाम हो चली थी। काम करते-
करते टी-टाइम निकल गया था।

बोले — नॉन्सेन्स !

रॉबिन्सन साहब के उस भारी आवाज में 'नॉन्सेन्स' कहते ही मानो वायुमंडल
कट आर्तनाद कर उठा। मेमसाहब उनके पीछे खडी थी। वह भी घबड़ाकर कुछ
ली। डी० टी० आई० साहब पीछे मुडा तो हैरान हो गया। रॉबिन्सन साहब का
किसी तरफ ध्यान नही था। वे काम करते-करते नहाना-खाना और टी-टाइम भूल जाते
हैं। पीछे की ओर मुड़कर देखा तो साहब की भी बोलती बद हो गयी। भूषण माली
साहब लोगों के पीछे हाथ जोडकर खडा उनकी बातें सुन रहा था। अब वह भी पीछे
की तरफ दौड़ा।

पीछे की तरफ याने उत्तर दिशा में। वहाँ कँटीली झाडियाँ थी और सडा
पोखर था। ठीक वही पर रॉबिन्सन साहब का कुत्ता जमीन पर पडा छटपटा रहा था।
उस समय उसके गले में इतनी ताकत भी न थी कि भौंकता। भूषण दौडकर उसके
पास गया। लेकिन उससे पहले ही पहुँचकर मेमसाहब ने जमीन पर बैठकर कुत्ते को
गोद में उठ लिया था।

— जिम्मी, डीयरी, जिम्मी —

डी० टी० आई० साहब, रॉबिन्सन साहब दोनो आये। कुत्ते की हालत देखकर
मेमसाहब जोर-जोर से रोने लगी थी। रॉबिन्सन साहब भी जमीन पर बैठकर कुत्ते
को देखना चाहते थे कि भूषण माली अचानक चिल्ला पडा — साँप ! ...

डी० टी० आई० साहब ने रॉबिन्सन साहब का हाथ पकड़कर खींचा — स्नेक सर, स्नेक।

काला गेहुँवन था। जाते-जाते साँप ने एक बार फन उठाकर पीछे की तरफ देख लिया। उसके बाद टेढ़ी-मेढ़ी चाल चलकर जंगल में गायब हो गया।

भूषण माली की उम्र अब अधिक हो गयी है। उन दिनों की वह गुमटी भी अब नहीं है। अब जो गुमटी है, वह नयी बनी है। वहाँ रास्ता चौड़ा किया गया है। बिजली बत्ती लगी है। गेट हाथ से बंद नहीं करना पड़ता। बटन दबाते ही गेट अपने आप धीरे-धीरे बंद हो जाता है। गुमटी में टेलीफोन है। केबिन से टेलीफोन पर हुक्म आता है। टेलीफोन पर हुक्म पाते ही गेट बंद करना पड़ता है। अब वह दलदल भी उतनी नहीं है। झाड़-झंखाड़ काफी साफ हो चुका है। पक्के मकान बन गये हैं। रात के वक्त वह जगह रोशनी से झलमलाती है। गाड़ियों का आना-जाना बढ़ा है। लोगों का चलना बढ़ गया है। उधर लेक है। तैराकी के लिए तालाब है। साहबों के नौका-विहार के लिए क्लब बना है। एक मन्दिर भी है। बुद्धजी का मन्दिर। देखते-देखते कितना उलट-फेर हो गया। आँखों के सामने सारा संसार मानो बदल गया। अब वह जमाना भी नहीं है। नौकरी में वह आराम भी नहीं है। रॉबिन्सन साहब भी नहीं है। कुत्ता मरने के बाद पता नहीं साहब को क्या हो गया, वह मेमसाहब को लेकर अपने मुल्क चला गया और लौटकर नहीं आया। साँप के डर से नहीं लौटा या कुत्ते के शोक से, यह कोई नहीं जानता। लेकिन वैसा साहब फिर कोई नहीं आया। बहुतों से उसने रॉबिन्सन साहब के बारे में पूछा है, लेकिन कोई कुछ बता नहीं पाया। उसकी जगह कितने नये डी० टी० एस० आये और गये, लेकिन वैसा डी० टी० एस० दोबारा नहीं आया। हेड आफिस से कोई आते ही, भूषण उससे पूछता — रॉबिन्सन साहब लौटा हुजूर?

सभी जवाब देते — नहीं।

फिर कोई पलटकर पूछता — क्यों, रॉबिन्सन साहब तुम्हारा क्या करेगा?

— नहीं, ऐसे ही पूछ रहा हूँ।

— रॉबिन्सन साहब ने ही क्या तुमको नौकरी दी थी भूषण?

भूषण कहता — जी नहीं हुजूर, रॉबिन्सन साहब के कुत्ते को यहीं साँप ने डँसा था न, इसीलिए पूछ रहा हूँ।

भूषण माली अकेला गेटमैन नहीं है। तीन गेटमैन बारी-बारी से ड्यूटी करते हैं। आठ घंटे की ड्यूटी। पूरे दिन में तीन जने; आठ तियाँ चौबीस। भूषण माली के अलावा मंगलदेव है, और है देवकीनन्दन। सवेरे आठ बजे से शाम के चार बजे तक। शाम के चार बजे से रात के बारह बजे तक। फिर रात के बारह बजे से सवेरे आठ बजे तक। ऐसे ही घूम-फिरकर ड्यूटी लगती है। काम कोई ज्यादा नहीं है। बस गेट

पर पहरा लगाकर पड़े रहना। वही असली काम है। बटन दबाते ही गेट बंद हो जायेगा। वह कोई झमेले का काम नहीं है। तीन जनों की ड्यूटी। पाली बदलकर काम करना। आपस में मिल-जुलकर काम सँभालना। शहर में किसी का काम पड़ता तो वह अपने साथवाले से कहकर चला जाता। साथ वाला उसके लिए डबल ड्यूटी कर देता। सवेरे आठ बजे से रात के बारह बजे तक एक ही आदमी ड्यूटी करता।

बालीगंज वेस्ट केबिन से हुक्म होता — थर्टी-थ्री अप, लाइन क्लीयर।

देवकीनन्दन फोन पकड़कर कहता — हाँ, हुजूर!

टेलीफोन रखते वक्त अचानक केबिनमैन का संदेह होता। पूछता — कौन बोल रहा है? देवकीनन्दन?

— जी हाँ।

केबिनमैन पूछता — क्या बात है? अभी तो मंगलदेव की ड्यूटी है। वह कहाँ गया?

— हुजूर, मंगल कलकत्ते गया है। लड़की की ससुराल वहीं है न। मैं डबल ड्यूटी कर रहा हूँ।

— और भूषण? भूषण की ड्यूटी कब है?

देवकीनन्दन कहता — भूषण का सेकिंड नाइट है मर। रात बारह बजे आयेगा।

असल में तीन गेटमैन होने पर भी भूषण की बात ज्यादा पूछी जाती। भूषण की ड्यूटी में ही वह घटना घटी थी। उस समय भी उसकी सेकिंड नाइट ड्यूटी थी। उस बार हुआ यह था कि जनरल मैनेजर लाइन देखने के लिए निकलनेवाला था। साल में एक बार लाइन देखने का नियम था। उस दिन स्टेशन की सफाई होती। स्टेशन मास्टर उस दिन धुला यूनिफार्म पहनता और सिर पर टोपी लगाता। माल-गोदाम में माल के बंडल और बोरे सजा कर रखे जाते। उस दिन प्लेटफार्म चमाचम चमकता। ढूंढने पर वहाँ किसी को धूल-मिट्टी नहीं मिलती। स्टेशन मास्टर खुद सब कुछ पर निगाह रखता। आउटर सिगनल ठीक से चल रहा है कि नहीं यह भी देखता। केबिन में पहुँचकर लीवर खींचता-खांचता। अगर जनरल मैनेजर कोई नुक्स पकड़ लेगा तो रिपोर्ट हो जायेगी। पर्सनल फाइल में कलम चल जायेगी। नौकरी में तरक्की का रास्ता हमेशा के लिए रुक जायेगा। इसीलिए स्टेशन मास्टर स्वीपर को बुलाकर होशियार करता और केबिनमैन को बुलाकर चौकन्ना करता। सबका कर्ता-धर्ता विधाता-पुरुष आ रहा है। कोई बच नहीं सकता। साथ में सभी डिपार्टमेंटों के आला अफसर रहेंगे। ट्रैफिक मैनेजर रहेगा, डी० टी० एस० रहेगा। और अनेक लोग रहेंगे। उस पूरे स्पेशल ट्रेन में बड़े-बड़े अफसर रहेंगे। चीफ इंजीनीयर और चीफ मेडिकल ऑफीसर भी रहेंगे। वह ट्रेन दिन के डेढ़ बजे बेलेघाटा से छूटेगी। दोपहर में खाना-पीना करके सब निकलेंगे। उसके बाद ट्रेन बालीगंज पहुँचेगी पौने दो बजे।

वालीगंज में आधे घंटे का हाल्ट है। आधे घंटे में स्टेशन का सारा काम-काज देख लिया जायेगा। वहाँ से स्पेशल ट्रेन छूटेगी दो वजकर पन्द्रह मिनट पर। उसके बाद ढाकुरिया। ढाकुरिया के वाद सोनारपुर। इस तरह लाइन देखते-देखते साहव लोग डायमंड हार्वर पहुँचेंगे। सात दिन पहले सर्कूलर निकल चुका है। सारे सेकशन में खलवली मची है। जिसको जो कुछ कहना-सुनना होगा, उसी समय वड़े साहव लोगों से कहेगा। साल भर में वही एक मौका है। उसी समय किसी का प्रमोशन होता है, किसी पर जुर्माना लगता है और किसी को ऊपर उठने के वजाय एक सीढ़ी नीचे उतरना पड़ता है।

भूषण केविन वावू से पूछता है — इस्पेशल इधर नहीं आयेगा हुजूर ?

केविनमैन कहता — नहीं भाई, इस वार तुम सव वच गये। अब की वार वह पहले डायमंड हार्वर की तरफ जायेगी, फिर जायेगी लक्ष्मीकान्तपुर —

— और वजवज सेकशन ?

केविन वावू जवाव देता — उसका सर्कूलर अभी नहीं मिला।

इधर कहीं कोई खटका नहीं, लेकिन ऐन मौके पर काम विगड़ा। वारिश का दिन नहीं — कहीं कुछ नहीं। सवेरे भी पता कुछ न चला। हलका-हलका कोहरा छाया था। सवेरे आठ वजे भी कैसा अँधेरा लग रहा था। फिर दिन जितना चढ़ता गया अँधेरा उतना वढ़ता गया। पानी उस वक्त भी वरसना शुरू नहीं हुआ था, लेकिन तेज नम हवा चलने लगी थी। वेलेघाटा स्टेशन पर सव चुस्त-दुरुस्त थे। प्लेट-फार्म धो-धाकर साफ किया गया था। वड़े-वड़े साहव गाड़ी से उतरे। लेकिन जनरल मैनेजर अभी तक नहीं आया। हथघड़ी, प्लेटफार्म की घड़ी, सव घड़ियाँ मिला-कर देखी गयीं। घड़ी की वड़ी सूई छः का निशान पार कर गयी। कभी तो ऐसी देर नहीं होती।

लेकिन वे आ पहुँचे हैं।

वालीगंज नार्थ केविन से केविनमैन ने फोन उठाया — हलो कौन ? लाहिड़ी ? क्या हुआ ? जनरल मैनेजर का क्या हुआ ? स्पेशल कैन्सिल हो गयी ?

उधर से जवाव आया — आ रही है। अभी-अभी सूचना आयी है। वड़े साहवों की वात ठहरी। अभी-अभी लाइन क्लीयर मिला है।

ट्रेन चल पड़ी। लेट करके ही चली। लेकिन ड्राइवर होशियार है। पहले अपर इंडिया एक्सप्रेस चलाता था। अभी उस वार उसने वाइसराय की स्पेशल चलायी। इंजन भी मजवूत है। मन-माफिक फौलादी घोड़ा पा गया है — इसलिए चालक ने उसे सरपट भगाया और देखते न देखते वालीगंज आ गया। स्टेशन पर स्टेशन मास्टर लाल झंडी लिये खड़ा था। चार वोगी वाली स्पेशल। ट्रेन प्लेटफार्म के ठीक सामने रुकी, जरा भी इधर-उधर नहीं। वालीगंज स्टेशन पर सव उतरेंगे। सव कुछ देखेंगे-भालेंगे। माल-गोदाम और स्टेशन देखेंगे। गाड़ी कुछ देर खड़ी रही। लेकि

फार्म पर पानी छिड़का गया था ताकि धूल न उड़े।

अगवानी के लिए स्टेशन मास्टर बढ़े। आज उन्होंने रेलवे का कोट पहन रखा था। आज वे भरपूर स्टेशन मास्टर लग रहे थे।

लेकिन कोई उतरता नहीं।

क्या हुआ ? हुआ क्या ?

स्टेशन मास्टर ने इधर से उधर देखा। चीफ मेडिकल आफीसर बड़े व्यस्त हैं। इधर से उधर भाग रहे हैं। उनके हाथ में दवा की शीशी है और गले से लटकता स्टैथसकोप।

अचानक तेज बारिश शुरू हो गयी। बेमौसम की बारिश। अँधेरा घिर आया। दोपहर के समय सन्-सन् हवा चलने लगी। सारा बदन जड़ाने लगा।

एकाएक सेन साहब उतरे तो स्टेशन मास्टर हिम्मत कर आगे बढ़े।

पूछा — सर, क्या हुआ है ? इन्स्पेक्शन नहीं होगा ?

सेन साहब पुराने आदमी हैं। बहुत दिन पहले जब नये-नये नौकरी में लगे थे, तब कभी-कभी आते थे। चेहरा-मोहरा अच्छा था। पन्द्रह साल पहले की बात है। स्टेशन मास्टर उसी समय बदली होकर आये थे। घाट-घाट का पानी पीकर और कई जगह डुबकियाँ लगाकर वे आये थे। उसी समय एक दिन यही सेन साहब डी० टी० आई० होकर आये। उन दिनों दबंग साहब रॉबिन्सन था। रॉबिन्सन साहब के नाम से लाइन भर के लोग काँपते थे। कभी-कभी वह सवेरे ड्यूटी पर आता था और घर लौटता था रात ग्यारह बजे के बाद। बात-बात पर स्टेटमेंट चाहिए। बैगनी का हिसाब लाओ। तरह-तरह के हुक्म और तरह-तरह की फरमाइशें। हेड ऑफिस के मारे जीना दूभर हो गया था। अब तो बालीगंज स्टेशन के दोनों तरफ कितनी चहल-पहल है। उस समय यह सब कहाँ था ? गेट के पास दसेक दुकानें थीं। एक दुकान थी परांठे और दमालू की। वह परांठे और दमालू बढ़िया बनाता था। बैठकखाना बाजार से आलू-गोभी खरीदकर लाता था और उकड़ूँ बैठ लकड़ी के बड़े पीढ़े पर घी लगाकर परांठा बेला करता था। किसी-किसी दिन स्टेशन का पोर्टर जाकर उससे कहता — दो गरम परांठे लाओ।

परांठेवाले का नाम अब याद नहीं पड़ता।

— किसके लिए परांठे चाहिए ? कौन खायेगा ?

पोर्टर कहता — मास्टर बाबू। हमारे नये स्टेशन मास्टर।

मास्टर बाबू को उस समय क्वार्टर नहीं मिला था। फैमिली नहीं आये थे। होटल से रोटी-परांठा खाकर दिन गुजार रहे थे। रात को वेटिंग-रूम में सोने का इन्तजाम था। हाँ, तो स्टेशन मास्टर का नाम सुनकर दुकानदार पैसा लेने से इन्कार कर देता। पोर्टर माँगता दो परांठे। मिल जाते चार। साथ में ढेर-सा दमालू फ्री। देखते ही मजूमदार बाबू आश्चर्य में पड़ जाते।

लेकिन वे आ पहुँचे हैं।

बालीगंज नार्थ केबिन से केबिनमैन ने फोन उठाया — हलो कौन ? लाहिड़ी
ग हुआ ? जनरल मैनेजर का क्या हुआ ? स्पेशल कैन्सिल हो गयी ?

उधर से जवाब आया — आ रही है। अभी-अभी सूचना आयी है। ब
गहबों की बात ठहरी। अभी-अभी लाइन क्लीयर मिला है।

ट्रेन चल पड़ी। लेट करके ही चली। लेकिन ड्राइवर होशियार है। पह
अपर इंडिया एक्सप्रेस चलाता था। अभी उस बार उसने वाइसराय की स्पेश
चलायी। इंजन भी मजबूत है। मन-माफिक फौलादी घोड़ा पा गया है — इसलि
चालक ने उसे सरपट भगाया और देखते न देखते बालीगंज आ गया। स्टेशन प
स्टेशन मास्टर लाल झंडी लिये खड़ा था। चार बोगी वाली स्पेशल। ट्रेन प्लेटफा
के ठीक सामने रुकी, जरा भी इधर-उधर नहीं। बालीगंज स्टेशन पर सब उतरेंगे। स
कुछ देखेंगे-भालेंगे। माल-गोदाम और स्टेशन देखेंगे। गाड़ी कुछ देर खड़ी रही। प्ले

भरता।

भूपण बोला था — रॉबिन्सन साहब बड़ा सीधा आदमी था हुजूर, रॉबिन्सन साहब की मेम भी बड़ी अच्छी थी। आज वह साहब होता तो क्या सोचना था। मैं तो जाकर मेमसाहब के पाँव पकड़ लेता।

बाहर शोरगुल सुनकर एक स्त्री कमरे से निकल आयी थी। खूब सजी-धजी। खूबसूरत चेहरा। माँग में सिंदूर। पहनावे में सिल्क की साड़ी। देखने से आँखें जुड़ा जाती हैं।

बोली थी — आप लोग क्यों शोर मचाते हैं ? घोपाल साहब बिगड़ रहे हैं।

मजूमदार बाबू ने आगे बढ़कर कहा था — हम घोपाल साहब से मिलने आये हैं। गड़ियाहाट लेवल-क्रासिंग के 'केस' के बारे में बात करनी है।

वह बोली थी — जब एन्क्वायरी होगी तब आइएगा। अभी जाइए।

कहकर वह अन्दर चली गयी थी।

कराली बाबू ने कहा था — इनको पहचाना मास्टर साहब ?

— नहीं तो !

कराली बाबू मुस्कराये थे।

बोले थे — अरे, पहचान नहीं पाये ? यही तो वही हैं — घोपाल साहब की वही।

छोड़ो भी, उन सब बातों में टाँग अड़ाना ठीक नहीं है। बस, उसी दिन एक
झलक देखा था। बड़े साहब के घर के मामले में सिर खपाने की आदत मजूमदार बाबू
को नहीं है। खुद मजूमदार बाबू के घर के मामले में कौन सिर खपाये, इसका पता
ही। पेट के कारण नौकरी करने आये हैं, नौकरी बनी रहे तो बहुत है। बालीगंज
जंगल काटकर कब रातों रात शहर बसाया गया, उनको पता भी न चला। कब
क' बना, यह भी वे जान न पाये। एक दिन घूमते-घामते उधर निकल गये तो सब-
देख-सुनकर दंग रहे। वह लेवल-क्रासिंग अब पहचाना भी नहीं जाता। बुद्ध जी
एक मंदिर भी बना है। कितने सारे मकान बन गये हैं। वे मुँह-बाये उधर देखते
ये। पहले पहल बालीगंज आने के बाद वे एक बार साउथ केबिन में घुसे थे —
चहल-कदमी करते हुए लेवल-क्रासिंग तक गये थे। उसके बाद उधर जाने की
नहीं पड़ी। भूपण ने दिखाया, किस जगह रॉबिन्सन साहब के कुत्ते को साँप ने
ा और कहाँ मेम साहब जमीन पर बैठी थी। अहा, वह सब साहब ही
। वे देवता जैसे थे। उनमें दया थी। वे बाबुओं के घर का हाल-चाल पूछते

कराली बाबू कहते थे — जानते हैं मास्टर साहब, मेरी लड़की की शादी के
न्सन साहब ने केले के पत्ते पर 'लूची' खाया था। आप उस समय नहीं आये थे।
पण कहता था — हुजूर, रॉबिन्सन साहब की मेम को देखा है — अहा,

पूछते — क्यों ? दाम क्यों नहीं लिया ?

खलासी कहता — दाम कैसे लेगा हुजूर ! दाम लेने की हिम्मत है उसमें ?

— क्यों ? सामान देगा और दाम नहीं लेगा ? खैरात बाँटने बैठा है क्या ?

— हुजूर, परांठे का दाम लेने पर क्या वह बिना टिकट गाड़ी में चढ़ पायेगा ? बैठकखाना बाजार से आलू और गोभी लाता है। क्या कभी उसने टिकट खरीदा है ? परांठे का दाम लेगा तो उसकी गरदन पकड़कर टिकट का दाम न वसूला जायेगा ?

उन दिनों की बात और थी। वहाँ पीछे, जहाँ इस समय ट्राम लाइन बिछी है और रातदिन घड़-घड़ आवाज से कान पड़ी आवाज नहीं, सुनाई देती वहीं सियार बोलता था। वहाँ से कालीघाट के केवड़ातल्ला मसानघाट तक सिर्फ जंगल था। जंगल में कहीं-कहीं पैदल चलने के लिए पगडंडियाँ बनी थीं। दीया जलने के बाद उधर कोई जाता न था। उधर सस्ते में कितनी जमीनें बिक गयीं। अगर उस समय रुपये होते और मजूमदार बाबू थोड़ी-सी जमीन खरीद लेते तो आज मालामाल हो जाते। उसी समय सर सुरेन बनर्जी जगबन्धु इन्स्टीट्यूशन में भाषण देने आये थे। उन्हीं ने पहले पहल कहा था — कालीघाट से बालीगंज स्टेशन तक जल्दी ही ट्राम चलने लगेगी।

बालीगंज स्टेशन के अपने कमरे में उस समय मजूमदार बाबू के सामने ढेरों काम फैला रहता था। किसी तरफ ध्यान देने की फुर्सत नहीं मिलती थी। टेबिल पर कागज-पत्तर और फाइलों का अम्बार लगा रहता था। कौन काम पहले किया जाय, वे समझ नहीं पाते थे। ढेर सारे इनवॉयस, ढेर सारे इनडेमनिटी बांड — उनको साँस लेने की फुर्सत नहीं मिलती थी। रॉबिन्सन साहब चाहे जितने सख्त रहे हो, लेकिन वे दूसरों का कष्ट समझते थे। गड़ियाहाट लेवल-क्रॉसिंग पर जब उनके कुत्ते को साँप ने काटा तब उनका मन उचट गया। उसके बाद वे ज्यादा दिन यहाँ नहीं रहे, रिटायरमेंट लेकर अपने देश चले गये। उनकी जगह आया घोषाल साहब। बंगाली था तो क्या ? एक नम्बर का बदमाश था। रोज एक जने की नौकरी खाये बिना वह पानी नहीं पीता था। कितने दिन हेड ऑफिस में मिलने जाकर देखा था घोषाल साहब चिल्ला रहा है — गेट आउट — गेट आउट !

गड़ियाहाट लेवल-क्रॉसिंग पर एक बार एक आदमी कटा था। मजूमदार बाबू को गवाही देनी पड़ी थी। साथ में गेटमैन भूषण था। और था केबिनमैन कराली बाबू। तीनों घोषाल साहब से मिलने हेड आफिस गये थे। घोषाल साहब पर तीनों की नौकरी का दारोमदार था। कलम की एक खरोंच से तीनों की नौकरी जा सकती थी।

घोषाल साहब के कमरे में झांकते ही घोषाल साहब चिल्लाया था — गेट आउट। गेट आउट।

'गेट आउट' घोषाल साहब का तकियाकलाम था।

कराली बाबू ने कहा था — इतने साहब मरते हैं और यह घोषाल साहब नहीं

मरता।

भूषण बोला था — रॉबिन्सन साहब बड़ा सीधा आदमी था हुजूर, रॉबिन्सन साहब की मेम भी बड़ी अच्छी थीं। आज वह साहब होता तो क्या सोचना था। मैं तो जाकर मेमसाहब के पाँव पकड़ लेता।

बाहर शोरगुल सुनकर एक स्त्री कमरे से निकल आयी थी। खूब सजी-धजी। खूबसूरत चेहरा। माँग में सिंदूर। पहनावे में सिल्क की साड़ी। देखने से आँखें जुड़ा जाती हैं।

बोली थी — आप लोग क्यों शोर मचाते हैं ? घोषाल साहब बिगड़ रहे हैं।

मजूमदार बाबू ने आगे बढ़कर कहा था — हम घोषाल साहब से मिलने आये हैं। गड़ियाहाट लेवल-क्रासिंग के 'केस' के बारे में बात करनी है।

वह बोली थी — जब एन्क्वायरी होगी तब आइएगा। अभी जाइए।

कहकर वह अन्दर चली गयी थी।

कराली बाबू ने कहा था — इनको पहचाना मास्टर साहब ?

— नहीं तो !

कराली बाबू मुस्कराये थे।

बोले थे — अरे, पहचान नहीं पाये ? यही तो वही है — घोषाल साहब की वही।

छोड़ो भी, उन सब बातों में टाँग अड़ाना ठीक नहीं है। बस, उसी दिन एक झलक देखा था। बड़े साहब के घर के मामले में सिर खपाने की आदत मजूमदार बाबू को नहीं है। खुद मजूमदार बाबू के घर के मामले में कौन सिर खपाये, इसका पता नहीं। पेट के कारण नौकरी करने आये हैं, नौकरी बनी रहे तो बहुत है। बालीगंज का जंगल काटकर कब रातों रात शहर बसाया गया, उनको पता भी न चला। कब 'लेक' बना, यह भी वे जान न पाये। एक दिन घूमते-घामते उधर निकल गये तो सब-कुछ देख-सुनकर दंग रहे। वह लेवल-क्रासिंग अब पहचाना भी नहीं जाता। बुद्ध जी का एक मंदिर भी बना है। कितने सारे मकान बन गये हैं। वे मुँह-बाये उधर देखते रह गये। पहले पहल बालीगंज आने के बाद वे एक बार गाउच केबिन में घुसे थे — फिर चहल-कदमी करते हुए लेवल-क्रासिंग तक गये थे। उसके बाद उधर जाने की जरूरत नहीं पड़ी। भूषण ने दिखाया, किस जगह रॉबिन्सन साहब के कुत्ते को साँप ने काटा था और कहाँ मेम साहब जमीन पर बैठी थीं। अहा, वह सब साहब ही और थे। वे देवता जैसे थे। उनमें दया थी। वे बाबुओं के घर का हाल-चाल पूछते थे।

कराली बाबू कहते थे — जानते हैं मास्टर साहब, मेरी लड़की की शादी के समय ऑस्बर्न साहब ने केले के पत्ते पर 'लूची' खाया था। आप उस समय नहीं आये थे।

भूषण कहता था — हुजूर, रॉबिन्सन साहब की मेम को देखा है — अहा,

क्या खूबसूरत चेहरा। जगद्धात्री जैसा रूप।

मजूमदार बाबू कहते थे — हमारे सेन साहब भी आदमी अच्छे हैं कराली बाबू, गरीब घर के लड़के हैं न, दूसरों का दुःख समझते हैं।

हाँ, तो उस बार सेन साहब ने सब को बचा लिया था।

घोपाल साहब के कमरे से लगा सेन साहब का कमरा था। सेन साहब ने अपने कमरे से निकलकर पूछा — आप लोग यहाँ क्या कर रहे हैं?

मजूमदार बाबू बोले — उसी रन-ओवर केस के सिलसिले में घोषाल साहब से मिलने आया था सर।

— आप कौन हैं?

मजूमदार बाबू ने कहा — मैं बालीगंज स्टेशन का स्टेशन मास्टर हूँ। यह हैं गड़ियाहाट लेवल-क्रासिंग का गेटमैन भूषण और यह हैं साउथ केबिन के केबिनमैन करालीभूषण सरकार। आप अगर घोषाल साहब से थोड़ा कह दें सर।

— आप लोग घोपाल साहब से मिल चुके?

मजूमदार बाबू बोले — कैसे मिलूं सर, उनके कमरे से कोई महिला निकल आयीं, शायद उनकी पी० ए० होंगी।

सेन साहब ने बात काटकर कहा — समझ गया, आप लोग जाइए। मैं कोशिश करके देखूंगा, क्या कर सकता हूँ। आप लोग घर जाइए।

हाँ, तो उस बार सेन साहब के कारण संकट टल गया था। सेन साहब के सवालों के जोर पर उस बार एन्क्वायरी से तीनों छुटकारा पा गये थे। बाहर निकलकर भूषण ने सेन साहब के पाँव पकड़ लिये थे।

कहा था — हुजूर, आप मेरे माँ-बाप हैं। आपका जरूर भला होगा हुजूर, भगवान आपको बहुत कुछ देगा हुजूर!

बड़ी मुश्किल से सेन साहब ने पाँव छुड़ा लिये थे। बोले थे — छोड़ो, पाँव छोड़ो भूषण। मैं कौन हूँ, मैं कुछ नहीं हूँ।

साहब की उम्र कोई अधिक नहीं, लेकिन है बाप का बेटा। सेन साहब के पास जो भी गया, जो भी उसको पकड़ पाया, वह कभी खाली हाथ नहीं लौटा। साहब हैं तो यही सेन साहब। लाइन भर में सेन साहब का गुण गाया जाता। उधर रानाघाट, बनगाँव, शिलिगुड़ी, ढाका, मैमनसिंह से स्यालदा के सब स्टाफ एक आवाज में सेन साहब की तारीफ करते नहीं अघाते। सच में सेन साहब की उम्र कम है, नौकरी भी अधिक दिन की नहीं है। मामूली क्लर्क होकर हेड आफिस में आया था। लेकिन देखते-देखते एक दिन डी० टी० आई० बन गया। रॉबिन्सन साहब का चहेता डी० टी० आई०। जहाँ भी रॉबिन्सन साहब जायगा, साथ में जायगा डी० टी० आई० सेन साहब। रॉबिन्सन साहब के जाने के बाद उस पोस्ट पर आया घोपाल साहब। लेकिन वह ज्यादा दिन टिक नहीं पाया।

कराली बाबू बोले — सुना है ?

मजूमदार बाबू बोले — सुना है।

— और सुना है कुछ .... उस औरत की करनी ? वही जो माँग में सिंदूर लगाये हुए थी ? वही गोरी-चिट्टी औरत, जिसने हम लोगों को भगा दिया था ? उसकी करतूत के बारे में कुछ सुना है ?

मजूमदार बाबू बोले — नहीं तो, कुछ तो नहीं सुना।

— अगर नहीं सुना है तो सुनने की जरूरत नहीं । बाद में सब कुछ सुन लेंगे, धीरे-धीरे सब कुछ जान जायेंगे । ऐसा कोई आज ही नहीं हुआ, ऐसा हमेशा होता रहा है । हमेशा ऐसा होता आ रहा है । लाइन के एक सिरे से दूसरे सिरे तक कई दिन इसी की चर्चा होती रही । लोहा-इंजन-केबिन-वैगन और लाइन क्लीयर के बीच चटपटे रोमान्स की खुशबू से क्लर्कों का जीवन भर गया । पान चबाते-चबाते मजा ले-लेकर लोग स्यालदा के कंट्रोल रूम, केबिन और प्लेटफार्म में यही चर्चा करने लगे । फिर उसकी गूँज पहुँच गयी गड़ियाहाट लेवल-क्रासिंग की गुमटी तक । उस समय भूषण सेकेंड नाइट ड्यूटी कर रहा था ।....

लेकिन वह सब अभी नहीं ।

हाँ, तो कहाँ गया वह घोपाल साहब, और कहाँ गये वे सब दिन । रॉबिन्सन साहब जा चुका है । घोपाल साहब जा चुका है । इतने दिन बाद उस जगह पर आया है सेन साहब । कुछ दिन के लिए सेन साहब का ढाका या शिलिगुडी, कहीं तबादला भी हुआ था । अब आया है डी० टी० एस० होकर । आखिर इतने दिन बाद ।

अचानक इतने दिन बाद उस सेन साहब को देखकर मजूमदार बाबू आगे बढ़ ये ।

बोले — कहिए सर, कोई उतर नहीं रहे हैं ?

सेन साहब बोले — नहीं, आज स्पेशल नहीं जायगी । जनरल मैनेजर की यत खराब है — 'अप' गाड़ी के लिए 'लाइन क्लीयर' देने को कहिए ।

अजीब बात हो गयी । रेलवे के इतिहास में ऐसी बात कभी नहीं हुई । स्पेशल लौट गयी । फिर ढीला-ढाला काम चलने लगा । टेलीफोन के जरिये लाइन भर में पहुँची । डायमंड हार्बर और लक्ष्मीकांतपुर, हर कहीं । ट्रेन 'कैन्सिल्ड' हो गयी नरल मैनेजर की तबीयत ठीक नहीं है । फिर थर्टी-थ्री अप आयी । फिर ट्वंटी- । फिर नाइण्टीन अप । डाउन ट्रेनें भी एक-एक कर आने लगीं । पहिया चलने गन और इंजन, लाइन क्लीयर और शंटिंग । मार्शलिंग यार्ड में शंटिंग इंजन ा शुरू हुआ ।

लेघाटा से केबिन में फोन आया — स्पेशल का क्या हुआ भई ?—छूटी ?

लीगंज से उतर आया — नहीं भाई, डाउन स्पेशल को लाइन क्लीयर देना

—क्यों ?

—स्पेशल कैन्सिल्ड !

—धत्तेरे की ! जाय चूल्हे-भाड़ में ।

कहकर घच्च से लीवर खींच दिया वदन की पूरी ताकत लगाकर ।

स्पेशल के गये काफी देर हो गयी । स्पेशल के साथ और भी सव गये । चीफ मेडिकल ऑफिसर, चीफ इंजीनियर — कोई बचा नहीं ।

अचानक मजूमदार वावू दंग रह गये ।

— सर, आप ? आप नहीं लौटे ?

सेन साहव मानो अचकचा गये । वालीगंज प्लैटफार्म के एकदम आखिरी छोर पर वे अकेले खड़े थे ।

वोले — नहीं, इधर एक काम था ।

मजूमदार वावू कुछ कहे विना चले गये । उसके बाद उनको नहीं मालूम कि क्या हुआ ? अपनी ड्यूटी खतम हो जाने पर वे घर चले गये थे । वाद में सारा किस्सा सुना । सुनकर चौंक पड़े ।

उस अँधेरे ढलवें प्लेटफार्म के छोर पर खड़े सेन साहव ने मानो उस समय अपने को छिपाना चाहा । कहीं कोई उनको देख न ले । झिर-झिर पानी वरस रहा है । उधर ढाकुरिया स्टेशन के फेंसिंग प्वाइंट के पास तेज रोशनी की कुछ बूंदें चमक रही थीं । अचानक वे लाइन पर चले गये । लगता नहीं कि व्रारह वर्ष वीत चुके हैं — मानो उस दिन की वात हो । जेव में हाथ डालकर देखा — चिट्ठी पड़ी है । चिट्ठी उनके साथ है । अचानक उनको लगा कि यह अभी हाल की घटना है । अभी उस दिन की । इतनी जल्दी सेन साहव इतने वड़े हो गये ! कहाँ थे सव ! कहाँ दुवककर छिपे थे सव ! उस तरफ एक लाइट इंजन गुर्रा-गुर्रा कर शंटिंग कर रहा था । आज उनको इस हालत में देखने पर ड्राइवर और फायरमैन आश्चर्य में पड़ जायेंगे । सेन साहव यहाँ ! वालीगंज स्टेशन यार्ड में इस अँधेरे में वे क्या करने आये हैं ! कोई विश्वास नहीं करेगा । कहने पर भी कोई समझ नहीं पायेगा । आखिर समझेगा कौन ? समझना भी किसने चाहा है ? संसार में कोई किसी को समझ नहीं पाता । सव उनको सेन साहव कहते थे । उनका नाम सेन साहव पड़ गया था । वह ईश्वर गांगुली लेन का दीपू आखिर सेन साहव हो गया ! हो-हो कर हँसने की इच्छा हुई सेन साहव को ।

एक कमीज के लिए माँ ने कितने दिन कितने लोगों की चिरौरी की थी । वही लक्ष्मी दी, वही किरण, वही निर्मल पालित, वही प्राणमथ वावू । वही विन्ती दी, वही दिप्टे और फोंटा — मानो सव भीड़ लगाकर उनकी आँखों के सामने खड़े हो गये । पानी जरा थमा है । स्लीपर सव भीगकर चिपचिपा हो गये हैं । न जाने क्या हो

गया। पता नहीं क्यों ऐसा हो गया। कब किस ईश्वर गांगुली लेन से एक वि
ट्रेन छूटी थी फिर बहुत कोयला और स्टीम खर्च कर वह आज यहाँ इतनी दू
पहुँची है। लेकिन अब हजार कोशिश के बाद भी वह गाड़ी नही चलेगी।
स्टेशन पर आकर लाइन-क्लीयर हाथ में लिये ही ड्राइवर रुक गया है। उस अँधे
मेन साहब के कदम आगे बढे।

—दीपू !

एक क्षण के लिए सेन साहब चौंक पड़े। मानो अचानक किसी ने उनको पुकारा
यही तो, यही तो लक्ष्मी दी है। आप लोगो के पास कितने रुपये हैं और कितने गहने
हम तो बहुत गरीब हैं। मेरी माँ दूसरे के घर खाना पकाती है। मेरा बाप नही है
मैं क्या आप लोगों से मिल-जुल सकता हूँ? उस कालीघाट के मंदिर से इस ईश्वर
गांगुली लेन तक जहाँ जितने मकान देखता हूँ, उन सब में रहने वालो से हम बहुत
गरीब हैं। मैं इसी लिए आप के पास आने से डरता हूँ लक्ष्मी दी। किरण भी डरता
है। कहीं आप लोग डाँट न दें। कहीं आप लोग हमसे घृणा न करें। आपको पता
है — मुझे बात बहुत लगती है। जिस दिन मुझे पेट भर भात नही मिलता, उस दिन
मैं वह किसी से नही कहता। किसी से मैं यह सब कह भी नही सकता। कहने में शरम
लगती है। उस दिन मैं हँसता हुआ स्कूल चला जाता हूँ। भूख से मेरा पेट जलने लगता
है। राखाल के बाप बड़े आदमी हैं। उसके घर से नौकर उसके लिए नाश्ता लाता है।
...ल के गिलास में गरम दूध ढँका हुआ और एक कटोरे में दो रसगुल्ले।

राखाल पूछता — अरे दीपू, खायेगा?

उसका नौकर मेरी तरफ घूर कर देखता।

मैं कहता — नहीं, मेरा पेट भरा है।

आप लोग नही जान पाते थे। मुहल्ले का कोई नहीं जान पाता था। सिर्फ
... मैं जानता था और जानती थी मेरी विधवा माँ। मुझे याद है उस बार की बात, जब
... प्रिन्स ऑव वेल्स कलकत्ते आया था, स्कूल के हर लड़के को एक संतरा और एक कदमा
दिया गया था। दिया गया था लाल कागज पर छपा यूनियन जैक। उस समय आप
लोग नही आये थे आप नही आयी थी लक्ष्मी दी, सती भी नहीं आयी थी। याद है मैं
उस संतरे और कदमे को खा नही पाया था। माँ को दिखाने के लिए छिपाकर घर ले
...ा रहा था। रास्ते में लक्ष्मण से भेंट हो गयी। अचानक थप्पड़ मारकर उसने दोनों
...जें मुझसे छीन ली।

बोला — ला, मुझे दे।

मैंने कहा — वाह रे। मैं माँ को दिखाने घर ले जा रहा हूँ।

लेकिन उसकी ताकत के सामने मैं ठहर नही पाया था। उसने दोनों चीजें
... ली थीं। मैं रोता हुआ घर लौटा था। माँ ने मेरे सिर पर हाथ फेरा था, सान्त्वना
...ी और समझाया था — संसार में सभी लक्ष्मण नही हैं, अच्छे लोग भी हैं।...

लोग भी हैं जो नहीं छीनते, वल्कि देते हैं। दिल खोलकर देते हैं। देने में ही जिनक सुख मिलता है। माँ ने समझाया था — वड़ा वनने की कोशिश करो तुम, सव तुम प्यार करेंगे और सव तुम्हारा आदर करेंगे। तभी तुमको सुख मिलेगा, शांति मिलेगी उस दिन से मैंने वड़ा वनने की कोशिश की है, अच्छा वनने की कोशिश की है लेकिन सुख ?

लेकिन माँ की वात एकदम झूठ नहीं हो सकती। वही लक्ष्मण एक दिन मेरे पास आया था। उस समय लक्ष्मण की उम्र काफी हो गयी थी। मेरे पास वह नौकरी के लिए आया था। मैंने उसे नौकरी दी थी। अव भी वह डिस्पैच सेक्शन में का कर रहा है। अव वह मेरी वड़ी खातिर करता है। मुझे सेन साहव कहता है।

उस अँधेरे में भीगे स्लीपरों पर चलते हुए दीपंकर को फिर सव याद पड़ लगा। इस वालीगंज स्टेशन में, इधर ढाकुरिया, सोनारपुर, कालीघाट और वजवज सव उसे सेन साहव के नाम से जानते हैं। जव लोग उसे सलाम करते हैं, नमस्क करते हैं, तव उसे हँसी आती है। एक दिन घोषाल वावू की तरह ईश्वर गांगुली के चंडी वावू ने भी उसे 'गेट आउट' कहकर भगा दिया था।

स्पेशल से उतरते समय अभयंकर ने पूछा था — अव इस वारिश में चले सेन ?

सचमुच इस वारिश ने न जाने कैसे सव गड़वड़ा दिया। मानो पल भ सव उलट-पलट गया। अभयंकर, राममूर्ति और सोम, सव स्पेशल ट्रेन से बेले लौट गये। उतर पड़ा सिर्फ सेन साहव। आज इतने दिन वाद वह कलकत्ते आया है। वही कलकत्ता, जिससे कभी उसका अंतरंग संपर्क था। इतने दिन वाद उसी कलकत्ते में लौट आया सेन साहव। सामने आउटर सिगनल की लाल रोशनी की बूँदें मानो टुकुर-टुकुर उसकी तरफ देख रही हैं। जैसे कुछ इशारा कर रही हैं। यह भी कैसा पागलपन है! एक टैक्सी लेकर सारा कलकत्ता घूम सकता था। पास में रुपये हैं। घ में काशी आज उसका इन्तजार नहीं करेगा। सव जानते हैं सेन साहव स्पेशल ट्रेन से डायमंड हार्वर गया है। वहाँ से लक्ष्मीकांतपुर जायेगा। अगली रात से पहले वह घ नहीं लौटेगा। फिर ? फिर क्यों वह इस अँधेरे में भीगे स्लीपरों पर चल रहा है कहाँ जा रहा है ?

जेव में हाथ डालकर सेन साहव ने फिर देख लिया। चिट्ठी है। चिट्ठी उस पास है।

दीपंकर सेन। डी० सेन। सेन साहव।

उसके कई नाम हैं। किस जमाने में प्रिंस ऑव वेल्स कलकत्ते आया था। उपलक्ष्य में संतरे और कदमे वँटे थे। लेकिन आज! मानो आज इतने दिन बाद फिर धीरे-धीरे उन पुराने दिनों में लौट चला है। सेन साहव एक क्षण में दीपंकर हो गया।

हेड मास्टर सुरेश बाबू क्लास में आये। उनके साथ आया एक बेयरा। उसके
थ में टोकरी थी। संतरों और कदमों से भरी टोकरी।

सुरेश बाबू एक कागज लेकर पढ़ने लगे।

— लक्ष्मणचन्द्र सरकार।

लक्ष्मणचन्द्र सरकार सामने था। खड़ा होते ही बेयरा ने उसके हाथ में एक
तरा और एक कदमा रखा, फिर सीने के पास जेब में यूनियन जैक लगा दिया।

उसके बाद पुकार हुई — निर्मलचन्द्र पालित।

फिर — चारुचन्द्र धर।

फिर — विमानचाँद मित्र।

ऐसे अनेक नाम पुकारे गये। जो फ़ीस देकर पढ़ते थे, उनके नाम पुकार लेने
बाद फ्री स्टूडेंटों की बारी आयी। फ्री स्टूडेंट सिर्फ दो थे। एक था किरण।

— किरणकुमार चट्टोपाध्याय।

किरण गया। उसने संतरा और कदमा लिया। फिर सीने पर यूनियन जैक
गा कर वह चला गया।

अब बचा एक।

— दीपंकर सेन।

सब लड़के हो-हो कर हँसे।

हेड मास्टर भारी आवाज में चिल्लाये — स्टॉप।

हाई बेंच के पाये में चप्पल फँस जाने से इन्फैण्ट क्लास का फ्री स्टूडेण्ट दीपंकर
न मुँह के बल गिर पड़ा था। उसका रोल नंबर था — एट्टीन।

हेड मास्टर सुरेश बाबू से बात करने का वही पहला मौका था।

सुरेश बाबू ने उसे उठाकर पूछा था — चोट लगी?

चोट लगी थी। लेकिन कहा — नहीं सर!

फिर हाथ बढ़ाकर संतरा और कदमा लेकर वह लौट आया। लेकिन रास्ते में
क्ष्मण ने वे दोनों छीन लिये।

अच्छा हुआ था उस दिन दीपंकर गिर पड़ा था। राजा का प्रसाद लेने जाकर
ी वह गिरा था। राजा का प्रसाद क्या सबको आसानी से मिल जाता है?

और वह नंबर टू। निर्मलचन्द्र पालित! क्लास का फर्स्ट बॉय।

निर्मलचन्द्र पालित हरीश मुखर्जी रोड का लड़का था। ठीक पुलिस थाने के
ामने उसका मकान था। बहुत बड़ा मकान। उसके बाप थे बैरिस्टर पालित। निर्मल
किसी की दोस्ती नहीं थी। स्कूल की छुट्टी के समय उसके घर से दरबान आकर
ाहर खड़ा रहता था। दरबान उसको हिफाजत से ले जाता था। दरबान उसे किसी
बात तक करने नहीं देता था। शाम को निर्मल बहनों के साथ मोटर में बैठा घूमने
कलता था। उसकी मोटर किले के मैदान की तरफ जाती थी या घुड़दौड़ के मैदान

सिल्फ। निर्मल को स्कूल में प्राइज भी मिलता था।

कितनी वार उससे दोस्ती करने की इच्छा हुई।

किरण कहता — वे लोग वहुत अमीर हैं, दीपू। एक दिन चलेगा उनके घर ?

दीपंकर कहता — अगर उसके वाप डाँट दें ?

किरण कहता — अगर डाँटें तो कहूँगा कि हम निर्मल के साथ एक क्लास में ते हैं।

कितने दिन शाम को घूमते-घामते दीपंकर किरण का हाथ पकड़कर निर्मल के कान के सामने फुटपाथ पर जा खड़ा होता रहा। देखता, मकान के सामने एक दरवान ठा है। खिड़की के शीशे के पलड़े के पीछे विजली वत्ती जल रही है। निर्मल के वाप उस कमरे में वैठकर पढ़ते या लिखते थे। दूसरी मंजिल से आर्गन वजाने की आवाज आती। कोई लड़की आर्गन के सुर से सुर मिलाकर गाती। दीपंकर को लगता, उन लोगों के पास वहुत रुपये हैं। वे वड़े सुखी हैं। फिर धीरे-धीरे दीपंकर किरण के साथ लौटता और पत्थरपट्टी से सीधे ईश्वर गांगुली लेन में चला आता।

क्लास में निर्मल से भेंट होती तो किरण कहता — अरे, कल तेरे मकान के सामने गया था। मेरे साथ दीपू था।

निर्मल पूछता — क्यों ? क्या करने गया था ?

किरण कहता — ऐसे ही, तेरे साथ मिलने।

फिर कहता — भेंट होती तो, तीनों एक साथ घूमते। हम दोनों रोज घूमते हैं। — घूमते-घूमते हम भवानीपुर के हरीश पार्क चले जाते हैं। वहाँ से पोड़ा-वाजार जाते हैं। तू एक दिन जायगा हमारे साथ ?

निर्मल कहता — नहीं भाई, पिता जी डाँटेंगे।

फिर कभी निर्मल से दोस्ती न हो सकी। सेवेन्थ क्लास में आकर वह साउथ सवर्वन में चला गया। फिर उससे भेंट भी नहीं हुई। सिर्फ खवर मिली कि वहाँ जाकर भी वह वरावर फर्स्ट आया है। फर्स्ट आने के अलावा वह जीवन में और कुछ नहीं आया। राजा का प्रसाद तो उसी की प्रतीक्षा कर रहा है। सव को यही विश्वा[illegible] था। स्कूल के छात्रों को यही विश्वास था और मास्टरों को भी, निर्मल के वाप को [illegible] यह विश्वास था और उसकी वहनों को भी।

लेकिन उसको राजा का प्रसाद कभी नहीं मिला !

वही निर्मल पालित एक दिन दीपंकर के जीवन में आयेगा, यह किसे मालूम [illegible] हाँ, वह वहुत वाद की वात है।

उस समय दीपू रेल का डी० टी० एस० हो गया था। घूम-घूमकर या[illegible] रहा था। दिन ढलने लगा था। टूवेंटी-वन अप आ गयी थी। प्लैटफार्म पर वहु[illegible] थी। तिल धरने की जगह नहीं। अचानक शोरगुल हुआ। हो-हल्ला, धक्कम-[illegible] आखिर मारपीट होने की नौवत आ गयी।

पास जाने पर देखा टिकट कलक्टर दत्त बाबू ने एक आदमी को पकड़ा है।
वह आयी दाढ़ी-मूँछों वाला एक आदमी। उसने टिकट नहीं लिया था।

सेन साहब को देखकर दत्त बाबू ने कहा — देखिए सर, रोज बिना टिकट
आयेगा और ऊपर से यह धौंस।

सेन साहब ने कहा — किस बात की धौंस ; जी० आर० पी० के हवाले कर
दीजिए।

दत्त बाबू ने कहा — देखिए न, भले घर का लड़का है। इसी तरह रोज आता
है। इतने दिन कुछ नहीं कहा, आज टिकट माँगा तो मारने दौड़ा।

सेन साहब ने एक बार उस आदमी की तरफ देखा।

कहा — आपने टिकट क्यों नहीं लिया? मालूम है न कि बिना टिकट ट्रेन में
ना जुर्म है?

वह आदमी चीखा — बड़ा नवाब आया है। सब की नवाबी मैंने ठीक कर
दी है, अब तेरी बारी आयी है। कुछ कहता नहीं, इसलिए इतना बोल रहा है। रुक
जा, लाट साहब से कहकर तुझे नौकरी से निकलवा दूँगा।

फिर उसने जेब से नोट-बुक निकाला।

पेन्सिल निकालकर कहा — बोल, क्या नाम है तेरा? कहाँ रहता है? कौन
सी नौकरी करता है? कितनी तनख्वाह पाता है? बाप का क्या नाम है?

सुनकर दीपंकर दंग रह गया।

फिर वह आदमी चिल्लाया — बोलता क्यों नहीं?

गुस्से में आकर दीपंकर शायद कुछ कर बैठता।

दत्त बाबू ने कहा — देख रहे हैं न? यों तो बहुत बड़े घर का लड़का है सर
रिस्टर पालित का लड़का।

बैरिस्टर पालित! कौन बैरिस्टर पालित। हरीश मुखर्जी रोड का बैरिस्टर
लित? दीपंकर सेन ने मानो अपने सामने भूत देख लिया हो।

दीपंकर ने पूछा — तुम बैरिस्टर पालित के लड़के हो? क्या तुम्हारा नाम
चंद्र पालित है? क्या हरीश मुखर्जी रोड पर तुम्हारा मकान था? क्या हो गया
हैं?

निर्मल की दोनों आँखें गुड़हल के फूल जैसी लाल थीं।

निर्मल पालित चिल्लाया — मजाक हो रहा है? क्या हो गया है मुझे? लाट
ी कहकर सबको बंद करवा दूँगा, जितने चोर यहाँ जुटे हैं। सुरेन बनर्जी को बंद
है, विपिन पाल को भी बंद करवाया है, अब तो सबको बंद करवाऊँगा —
नहीं छोड़ूँगा। उस कम्बख्त गाधी को भी बंद करवाऊँगा। बोल, तू अपना
—

हकर वह सुने नोट-बुक पर पेन्सिल ले गया।

दीपंकर कहता — लेकिन वे जो कुछ कहते हैं, उसके पीछे तर्क है ....

सती कहती — उनके साथ गृहस्थी करना कितना कठिन है, यह तुम नहीं समझोगे।

— लेकिन तुम्हें गृहस्थी करनी ही पड़ेगी।

सती कहती — मैंने बहुत पाप किया है दीपंकर, इसलिए उनके साथ मुझे इतने दिन निभाना पड़ा ....

— ऐसी बात न करो।

सती रोने लगी।

कहती — तुम से भी न कहूँ तो किससे कहूँ, यह तो बताओ ? कौन सुनेगा ?

बहुत दिन पहले जिस दिन ईश्वर की इस धरती पर दीपंकर ने पहली बार आँखें खोली थीं, उस दिन चारों तरफ उसे अभाव-अभियोग ही नजर आये थे। उसने देखा था, मनुष्यों की बड़ी-बड़ी शिकायतें और बड़ी-बड़ी माँगें मानो बहुत दिन से मुँह बाये खड़ी हैं। उसने सोचा था, शायद एक दिन सब की कामना-वासना पूरी होगी, सब के अभाव-अभियोग मिट जायेंगे। सोचा था, मनुष्यों के जो नेता हैं, जो उनके भाग्य-विधाता हैं, शायद वे एक दिन इसका प्रतिकार करेंगे। ये ही लोग राजा हैं, मंत्री हैं, जज हैं और मजिस्ट्रेट हैं। एक दिन इन्हीं के हाथ अपना भाग्य सौंपकर लोगों ने निश्चित होना चाहा था। उन पर निर्भर कर निश्चित होने के लिए लोगों ने उनको सिर पर बिठा रखा था। फिर एक के बाद दूसरा युग आता गया, जो बलवान थे, वे अधिक बलवान होते गये और जो दुर्बल हैं, वे अधिक दुर्बल हुए।

दीपंकर ने देखा है, सिर्फ उनका जनरल मैनेजर ही नहीं, चीफ मेडिकल आफिसर ही नहीं, चीफ इंजीनियर ही नहीं, मनुष्यों के जो भाग्य-विधाता हैं सिर्फ वे ही नहीं; सनातन बाबू, मजूमदार बाबू, लक्ष्मण सरकार, निर्मल पालित, बड़ी बाबू, अघोर नाना और हेड मास्टर से केबिन-मैन कराली सरकार, टिकट कलक्टर दत्त बाबू, गेटमैन भूषण तक — सब मानो कहीं न कहीं दोषी हैं। और क्या ये ही, और भी हैं। दिल्ली में जो साहब लोग सिंहासन पर बैठे हैं, गवर्नमेंट हाउस में जो लोग गद्दी पर बैठे हैं — वे भी अपराधी हैं। यदि एक आदमी भूखों मरता है, तो देश भर के लोग अपराधी हुए। सनातन बाबू के कहने से क्या होगा, इसीलिए जनरल मैनेजर के बीमार पड़ने पर स्पेशल ट्रेन कैन्सिल हो जाती है, इसीलिए पालतू कुत्ते को साँप काटने पर डी० टी० एस० अपने देश लौट जाता है, इसीलिए प्रिन्स ऑव वेल्स के आने पर बच्चों को संतरा और कदमा देकर फुसलाया जाता है, इसीलिए बैरिस्टर पालित का लड़का निर्मल पालित पागल हो जाता है और उन्हीं के लिए ....

सहसा दीपंकर न जाने कैसे सावधान हो गया।

अभी रात के कितने बजे होंगे ? सामने से कोई डाउन ट्रेन आ रही है न ? सेवेण्टीन डाउन तो नहीं है ? अभी रात के कितने बजे होंगे ? इतनी जल्दी सेवेण्टीन

डाउन नहीं आती। दीपंकर ने एक बार रिस्ट-वाच देखने की कोशिश की। लेकिन अँधेरे में कुछ सूझा नहीं। चारों तरफ ओर-छोरहीन अँधेरा। उस अँधेरे में दूर, बहुत दूर, इंजन का हेड-लाइट दिखाई पड़ रहा है। सेवेण्टीन डाउन ! आज इतनी जल्दी क्यों आ रही है ? इस ट्रेन को कल सवेरे छः बजे बालीगंज स्टेशन पहुँचना है, अचानक बारह घंटे पहले कैसे आ गयी ?

तमाशा देखकर दीपंकर दंग रह गया। धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल के इनफैंट क्लास का फ्री स्टूडेंट दीपंकर सेन, रोल नंबर एट्टीन। उस दिन भी वह ईश्वर गांगुली लेन से किरण के साथ पैदल यहाँ आया था। याद है, उन दिनों टालीगंज के उस लोहे के पुल पर खड़ा वह देखता था कि रेलगाड़ी कैसे चलती है। कैसे हेड-लाइट जलाकर रेलगाड़ी धड़धड़ाती आ जाती है। फिर कितनी बार उसने रेलगाड़ी देखी है, रेल की नौकरी की है। रेलगाड़ी में वह चढ़ा है, ब्रेकवैन और इंजन में चढ़ा है, कोई फर्क नहीं पड़ा। लेकिन आज यह सेवेण्टीन डाउन दूसरी तरह की है। लगा, वह उल्का-वेग से उसी की तरफ दौड़ी आ रही है। सन् उन्नीस सौ बारह ईसवी की अट्ठारह मार्च तारीख को यह सेवेण्टीन डाउन ईश्वर गांगुली लेन से छूटी थी और इतने दिन बाद इतनी रात यहाँ आ पहुँची। बड़ी लांछना, बड़ी अवज्ञा और बड़ी क्लांति पार कर यह आयी है — अनेक बाधाएँ और विपत्तियाँ झेलकर इतने दिन बाद यह यहाँ आ पहुँची है। लार्ड डलहौजी, लार्ड चेम्सफोर्ड, लार्ड लिटन, लार्ड रीडिंग को पीछे छोड़कर एकदम वर्तमान में। गाड़ियाहाट लेवल-क्रॉसिंग की गुमटी के ठीक दरवाजे के पास।

सहसा दीपंकर को लगा कि गुमटी की दीवार से टिककर कोई खड़ा है। अँधेरे में साफ दिखाई नहीं पड़ता। सिर्फ धुंधली आकृति समझ में आती है — मनुष्य की छाया-मूर्ति। ट्रेन की तरफ मुंह किये खड़ी है। सेवेण्टीन डाउन और भी पास आ गयी। और भी तेज आवाज हो रही है। इंजन और पहियों की आवाज। पाँवों के नीचे धरती काँपने लगी है। फिर सेवेण्टीन डाउन और — और पास आ गयी। और भी पास। रोशनी से वह जगह भर गयी। गुमटी की दीवार उस रोशनी में साफ दिखाई पड़ी। देखते-देखते छाया-मूर्ति दीवार से हटकर गिट्टियाँ पार कर लाइन पर आ गयी।

— कौन ?

एक क्षण में मानो आकाश में बिजली कौंधी।

— कौन ? कौन ?

हू-बहू सती की तरह शकल-सूरत। सती जैसी साड़ी पहनी हुई। अभी कुछ दिन पहले दीपंकर ने जो साड़ी खरीद दी थी। लेकिन सती क्यों यहाँ इतनी रात को आयेगी ? फिर क्या लक्ष्मी दी है ? लक्ष्मी दी भी क्यों इतने दिन बाद यहाँ आयेंगी ?

— वहाँ कौन है ? कौन ? हट जाओ .... हट जाओ ....

छाया-मूर्ति ने मुड़कर देखा। उसके मुड़ते ही दीपंकर को उसका चेहरा साफ

दिखाई पड़ा ।

—हट जाओ ! .... कौन है ? .... वहाँ कौन है ?

दीपंकर जान की बाजी लगाकर दौड़ने लगा । अब एक भी क्षण देर नहीं की जा सकती । ट्रेन एकदम सामने है । अब समय नहीं है । दीपंकर गिट्टियों पर से बेतहाशा दौड़ने लगा ।

— हट जाओ ! अरे हट जाओ !

देखते-देखते सेवेण्टीन डाउन हड़बड़ाकर आ पड़ी ।

साउथ केबिन में टेलीफ़ोन बज उठा ।

सेकड नाइट ड्यूटी में कराली बाबू थे । सेवेण्टीन डाउन चले जाने के बाद थोड़ी फुर्सत मिलती है । सोचा था कुर्सी से पीठ टिकाकर थोड़ी देर आँख बन्द कर लेंगे । रिसीवर उठाकर बोले — क्या हुआ ? परेशान कर दिया ....

उधर से भूषण ने कहा — हुज़ूर ऐक्सिडेन् ....

कराली बाबू उछल पड़े ।

— क्या ? ऐक्सिडेंट ? किसका ऐक्सिडेंट ? कैसा ऐक्सिडेंट ?

— हुज़ूर, सेवेण्टीन डाउन ....

उपन्यास

—नाम ?

नाम दरख्वास्त पर लिखा है, फिर भी उस सज्जन ने नाम पूछा ।

—दीपंकर सेन ।

—क्या नाम बताया ?

क्लर्क थोड़ा झुँझलाया । उसने एक बार सिर से पाँव तक देख लिया ।

मुड़कर बगल के किसी से कहा—सुना भई किस ढंग का नाम है, न आगे कुछ न पीछे, मानो शाह सिकंदर का नाती ! माँ-बाप को कोई और नाम नहीं मिला, ऐसा विचित्र नाम रख दिया—खैर, हिज्जे बताओ ।

—डी आई पी ए ....

—बस, अब बताना न पड़ेगा ।—कहकर सर्र-सर्र नाम लिख लिया ।

पूछा—पता ?

दीपंकर ने बताया—उन्नीस बटा एक, बी, ईश्वर गांगुली लेन । पोस्ट कालीघाट ....

उस आदमी ने लिख लिया । दफ्तर की खाना-पूरी नियम के मुताबिक करनी होगी ।

—उम्र क्या है ? मैट्रिक का सर्टिफिकेट है ?

उस आदमी के नखरे भी खूब थे । फिर भी नौकरी उसी दिन लगी । दीपंकर साफ कपड़े पहनकर आया था । पहला दिन था, इसलिए वह थोड़ा डर जरूर रहा था । बहुत बड़े लाल मकान की शकल देखकर वह गद्‌गद हो उठा था । फारम भर चुका था । फिर भी वह थोड़ी देर खड़ा था । अब सोचने पर हँसी आती है । एकदम सब से नीचेवाली नौकरी । तनख्वाह तैंतीस रुपये । बहुत रुपये ! सारा खर्च पूरा करने के बाद भी पाँच-सात रुपये बच जायेंगे । मकान का किराया नहीं लगता, यह बहुत बड़ी बात है ।

—आप किसके आदमी हैं ?

इतनी देर बाद उस सज्जन ने मानो घनिष्ठ होने की कोशिश की ।

—आप किसके आदमी हैं ? रॉबिन्सन साहब के ?

फिर वह सज्जन हँस पड़ा था, बड़ी सरल हँसी ।

—अरे सा'ब बताइए न, अब तो आप हमारे बीच आ ही गये हैं, अब बताने में क्या हर्ज है ? रॉबिन्सन साहब के आदमी होकर तैंतीस रुपये पर आये ? साहब से कहकर पचपन रुपये से स्टार्टिंग नहीं करा पाये ?

दीपंकर ने कहा था—जी नहीं, रॉबिन्सन साहब को मैं नहीं पहचानता। आप नृपेन बाबू को जानते हैं न ? उन्होंने मेरी नौकरी लगायी है ।

नृपेन बाबू । नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट के नृपेन बाबू । नृपेन्द्रनाथ चौधुरी । वे रोज दफ्तर जाते समय सड़क पर दिखाई पड़ते थे । जाड़े में काला गलाबंद कोट और फुल-पैण्ट पहनते थे और गरमी में सूती कमीज । हाथ में एल्युमिनियम का टिफिन का डब्बा होता था जरा तेज चलते थे । सीधे गली से निकलकर हाजरा रोड से कहाँ चले जाते थे, पता नहीं चलता था । कभी-कभार दिखाई पड़ते, बारिश में छाता लगाये पैदल चले आ रहे हैं । उस समय रात काफी होती ।

माँ ही एक दिन नृपेन बाबू के पास ले गयी थी ।

नृपेन बाबू ने पूछा था—बी० ए० पास कर लिया है ?

दीपंकर ने विनम्र भाव से कहा था—जी हाँ ।

माँ ने जल्दी-जल्दी कहा था—प्रणाम करो, प्रणाम करो उन्हें ।

माँ ने पहले से प्रणाम करने के लिए बता दिया था । लेकिन याद नहीं था । दीपंकर ने उनके पाँव छूकर हाथ सिर से लगाया । नृपेन बाबू के पाँव तख्त और टेबिल के बीच तंग जगह में थे । वे गमछा पहने तख्त पर बैठे तेल लगा रहे थे । उस तंग जगह में बड़ी मुश्किल से दीपंकर ने उनके पाँव छुए थे ।

उन्होंने कहा था—बस, बस ।

फिर बोले थे—उस दिन एक एम० ए० पास छोकरा मेरे पास नौकरी के लिए आया था । सुन रही हो न दीपू की माँ ? मैंने उससे कहा, भइया, तुमने एम० ए० तो पास कर लिया है, लेकिन तुम्हारी दरख्वास्त में अंग्रेजी की चार गलतियाँ हैं । मैंने गलतियाँ दिखा दीं । फिर वह छोकरा—अच्छा छोड़ो, सुराज-उराज तो नहीं करते न ?

माँ कुछ कहने जा रही थी, लेकिन उससे पहले नंगी पीठ पर तड़ातड़ दो हाथ तेल चुपड़कर वे बोले थे—रॉबिन्सन साहब को अगर पता चल गया तो आखिर मेरी नौकरी पर आ बीतेगी । स्वराज अच्छी चीज है, लेकिन गरीबों का वह-सब करने से पेट कैसे भरेगा ? क्या मेरा मन नहीं करता कि स्वराज करूँ ? खैर, वह सब उन्हीं लोगों को शोभा देता है जिनके घर खाने को है । जैसे वो ऐनी बेसण्ट हुईं । फिर तिलक, सी० आर० दास, मोतीलाल नेहरू जैसे लोग वह सब कर सकते हैं । वे हैं अमीर घर के । खैर, फिर वही बात रही ।

कहकर वे अन्दर जाने की तैयारी करने लगे।

माँ ने आगे बढ़कर कहा — फिर ....

नृपेन बाबू ने कहा — लायी हो ? लेकिन अभी तो हाथों में तेल लगा है।

माँ ने कहा — अन्दर जाकर भाभी को दे आऊँ ?

— नहीं, नहीं। हाँ, वहीं रखो। कहकर उन्होंने तखत दिखा दिया।

दीपंकर ने देखा, माँ ने दस रुपये के दो और पाँच रुपये का एक नोट तखत पर रख दिया।

नृपेन बाबू ने नोटों की तरफ देखकर कहा — कितना है ? पच्चीस ?

माँ ने कहा — जी हाँ, आपने तो पच्चीस के लिए कहा था।

— अब देखो। पच्चीस तो मैंने तुमसे पिछले साल कहा था। वह समय होता तो पच्चीस में काम चल जाता, अब तो सब चालाक हो गये हैं। पहले चपरासियों को दो रुपये देने से काम चल जाता था, अब सब ने रेट पाँच कर दिया है। मैं क्या कर सकता हूँ ?

माँ बोली — मैं तो और रुपया नहीं लायी भैया।

नृपेन बाबू बोले — देखो, एक जगह खाली है। अभी देती तो काम बन जाता। बाद में वैकेन्सी फिर कब होगी पता नहीं।

— और कितना देना पड़ेगा ?

नृपेन बाबू बोले — यही एक महीने की पूरी तनख्वाह, तैंतीस रुपये।

—तैंतीस रुपये ?

माँ मानो निराश हो गयी थी। कातर-दृष्टि से देर तक नृपेन बाबू की तरफ देखती रही।

नृपेन बाबू ने कहा — क्या तुम सोच रही हो, यह रुपया मैं ले रहा हूँ ?

माँ ने कहा — नहीं, नहीं, ऐसा क्यों सोचूंगी ?

नृपेन बाबू ने कहा — नहीं, तुम्हारा ढंग देखकर लग रहा है कि यह रुपया मैं अपनी जेब में भर रहा हूँ। बैठो, तुम्हें हिसाब समझा देता हूँ, दो चपरासी दस रुपये, एस्टैब्लिशमेंट क्लर्क पांच रुपये — कितना हुआ ? पन्द्रह। डाक्टर को दस, डाक्टर के चपरासी को तीन और कम्पाउंडर को पाँच। कितना हुआ जोड़ लो—पूरे तैंतीस।

माँ के मुँह से कोई आवाज नहीं निकली।

नृपेन बाबू कहते गये — फिर हमारे डिपार्टमेंट में चपरासी हैं, बाबू हैं। उन सब के पान-पत्ते में और तीन रुपये लग जायेंगे। खैर, ये तीन रुपये न हो मैं अपनी जेब से दूँगा। उसके लिए तुमको फिकर नहीं करना है।

तेल की कटोरी लेकर वे अन्दर जाने लगे।

माँ ने कहा — फिर भैया, मैं जितनी जल्दी हो सके रुपये का जुगाड़ करूंगी, आप जरा ध्यान रखिएगा कि जगह खाली रहे।

नृपेन बाबू मुस्कराये। बोले — कहना न पड़ेगा। तुम किस कष्ट से लड़के को पाल-पोस रही हो, क्या मैं नहीं जानता ? लेकिन मेरे जानने से क्या होगा, साहब के बच्चे तो नहीं समझेंगे।

लौटते समय माँ ने कहा था — फिर रुपया पूरा करके लाऊँगी।

— हाँ, लाना। तुमको तो हिसाब समझा दिया। उसी दिन तुम एक दरख्वास्त भी लेते आना।

दीपंकर ने कहा — जी मामा जी।

दीपंकर चलने को हुआ तो माँ ने इशारा किया। दीपंकर ने फिर तेल लगे पाँव छुए।

बाहर आकर माँ बहुत बिगड़ी थी।

कहा था — तुझे इतना समझा दिया था, लेकिन तू याद नहीं रखता। एक बूढ़े आदमी के पाँव छूने में कौन-सा अपमान होता है ? मैं जिन्दगी भर दूसरों के घर खाना बनाती रहूँ और तुम मौज करते रहो....

सिर्फ नृपेन बाबू ही नहीं। कहाँ-कहाँ किस-किसके पास माँ पहुँच जाती थी। कहाँ किस मुहल्ले में कौन पोर्ट कमिश्नर्स में नौकरी करता है, कौन राइटर्स बिल्डिंग में है, कौन मैकिनन मैकेंजी के दफ्तर में काम करता है, कौन मार्टिन बर्न के दफ्तर में है, ऐसे अनगिनत लोगों की खबर माँ रखती थी। स्कूल की पढ़ाई शुरू होने के साथ यह शुरू हुआ था। धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल में दीपंकर इसी तरह भर्ती हुआ था। फिर कालीघाट हाई स्कूल में। माँ के कहने-सुनने से उसे कहीं फीस नहीं देनी पड़ी। हर जगह वह फ्री स्टूडेंट रहा। अब नौकरी के लिए आकर हर जगह रुपये की बात सुनाई पड़ी।

दीपंकर कालीघाट स्कूल में सिर्फ एक साल था। उसके बाद धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल। धर्मदाम ट्रस्ट माडल स्कूल में ही कहना चाहिए उसका विद्यारंभ हुआ। माँ एक दिन वहाँ भी गयी थी।

हेड मास्टर प्राणमय बाबू ने पूछा था — क्या नाम है ?

उस समय कितनी उमर रही होगी ! किसे स्कूल कहा जाता है और किसे ऑफिस, किसे कालेज कहा जाता है और किसे नौकरी, किसे इंडिया कहते हैं और किसे बंगाल, उस समय यह सब दीपंकर नहीं जानता था।

माँ बगल में खड़ी थी। बोली — अपना नाम बोलो।

दीपंकर ने कहा था — श्रीमान् दीपंकर सेन।

— पिता का नाम ?

दीपंकर ने कहा था — ईश्वर[1] हरगोविन्द सेन।

---

१. बंगला में 'स्वर्गीय' के लिए 'ईश्वर' कहने का भी चलन है।

— घर कहाँ है?

दीपंकर ने कहा था — हुगली जिले के बैंटरा ग्राम में।

— यहाँ का पता क्या है?

दीपंकर ने कहा था — उन्नीस बटा एक, बी, ईश्वर गांगुली लेन, पोस्ट आफिस कालीघाट।

प्राणमथ बाबू की बात दीपंकर को बहुत दिनों तक याद थी। बूढ़े, बहुत बूढ़े। जीवन भर खद्दर पहनते रहे। पाँवों में शू-जूते। एड़ी के पास ऊपर का हिस्सा मोड़कर शू को चप्पल बनाकर वे पहनते थे। गोल-मटोल बदन, रूखे-बिखरे बाल, अस्त-व्यस्त पोशाक और चौबीस घंटे मुंह में पान।

याद है, बहुत बचपन में कभी-कभी स्कूल में छुट्टी हो जाती थी। क्यों छुट्टी हुई, समझ में नहीं आता था। सवेरे स्कूल जाने पर यतीन दफ्तरी कहता — आज स्कूल नहीं लगेगा, आज तुम लोगों की छुट्टी है।

स्कूल नहीं लगता था, लेकिन उसी वक्त लौटना संभव नहीं था।

छुट्टी दीपंकर के जीवन में अनेक बार आयी, लेकिन वैसा आनन्द कभी नहीं मिला।

यतीन दफ्तरी सनई लाकर एक-एक सब के हाथ में थमा देता। सब लड़के सनई लेकर कतार बनाकर खड़े होते थे। ड्रिल मास्टर रोहिणी बाबू स्कूल के बकसे से तिरंगे फ्लैग निकाल लाते। यतीन दफ्तरी सनई में एक-एक फ्लैग पहना देता। लड़के अलग-बगल दो कतारों में खड़े हो जाते।

रोहिणी बाबू चिल्लाकर कहते — सब रेडी हो गये न?

सब रेडी हो जाते।

फिर बुलंद आवाज में रोहिणी बाबू हाँक लगाते — अटेन्—शन् ....

सब के पांव सीधे हो जाते, सब सीना तान लेते।

— राइट टर्न।

सब दाहिने घूम जाते।

— लेफ्ट टर्न!

देर तक स्कूल के सामने आँगन में ड्रिल चलता। लेकिन किसी को तकलीफ महसूस नहीं होती। सब जानते थे कि थोड़ी देर में पुलिस आयेगी, दारोगा आयेगा, और उसके थोड़ी देर बाद सबको छुट्टी हो जायेगी।

सचमुच थोड़ी देर बाद सिपाही और दारोगा आ पहुँचते। वे सब जीने से ऊपर हेड मास्टर के कमरे की तरफ जाते। साथ ही साथ रोहिणी बाबू हाँक लगाते — फिरवर्ड मार्च!

लगभग डेढ़ सौ लड़के फ्लैग ऊपर उठाये दारोगा के पीछे-पीछे दूसरी मंजिल में पहुँच जाते।

यतीन दफ्तरी फूल-माला लेकर तैयार हो जाता।

रोहिणी बाबू चिल्लाते — वन्दे मातरम् ....

धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल के डेढ़ सौ लड़के एक साथ कहते — वन्दे मातरम्। एक-दो बार नहीं, कई बार। सारी इमारत गूँज उठती। कैसा वह आनन्द था। रोहिणी बाबू प्राणमय बाबू के गले में माला डाल देते थे।

तब हेड मास्टर कहते — वन्दे मातरम्।

सब लड़के एक साथ आवाज लगाते — वन्दे मातरम्।

उसके बाद दारोगा हेड मास्टर को बाहर ले जाते। वन्दे मातरम् का नारा उस समय भी लग रहा होता। उससे नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट काँप-काँप उठता।

तब स्कूल की छुट्टी होती। धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल उस दिन के लिए बन्द होता। फिर तीन-चार महीने प्राणमय बाबू स्कूल में दिखाई नहीं पड़ते थे।

शुरू-शुरू में माँ विश्वास नहीं करती थी। उस समय वह रसोईघर में बैठी भोजन पकाती थी। माँ को अकेले बहुत से लोगों का खाना बनाना पड़ता था?

पूछती — क्यों रे, तू इतनी जल्दी लौट आया? स्कूल नहीं लगा?

दीपंकर कहता — आज सिर्फ ड्रिल हुआ है।

— क्यों?

दीपंकर कहता — आज छुट्टी हो गयी। आज पुलिसवाले प्राणमय बाबू को पकड़ ले गये।

— क्यों? पुलिसवाले क्यों उनको पकड़ ले गये?

दीपंकर खुद नहीं जानता था तो क्या जवाब देता! वह समझ नहीं पाता था कि कभी-कभी पुलिसवाले हेड मास्टर को क्यों पकड़ ले जाते हैं और क्यों फिर छोड़ देते हैं। वह नहीं जानता था कि क्यों सनई में फ्लैग लगाकर मार्च करना और वन्दे मातरम् का नारा लगाना पड़ता है। वह यह भी नहीं जानता था कि हेड मास्टर को ले जाने पर छुट्टी क्यों होती है।

फिर किसी दिन दीपंकर देखता कि प्राणमय बाबू आ गये हैं। वे अपने कमरे में बैठे दफ्तर का काम-काज करते। वही गोल-मटोल बदन, वही रूखे-बिखरे बाल, वही अस्त-व्यस्त खद्दर की धोती और कुरता पाँवों में एड़ी का ऊपरी हिस्सा मुड़ा जूता। उनके मुँह में पान बराबर भरा रहता था।

दीपंकर स्कूल से निकलकर सीधे घर जाता। वह घर नहीं पहुँचता तो माँ बहुत परेशान होती। फिर भी जिस दिन घूमने को मन करता, उस दिन दीपंकर थोड़ा घूम आता। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट से निकलकर सीधे उत्तर में पत्थरपट्टी। उधर उसका घर नहीं था, कुछ नहीं था। फिर भी वहाँ बहुत लोग होते, बड़ी-बड़ी सड़कों पर खूब भीड़ होती। एक साथ बहुत से लोग देखना उसे बड़ा अच्छा लगता था। अचानक दिखाई प[illegible] और नाना रिक्शे से घर लौट रहे हैं।

—घर कहाँ है ?

दीपंकर ने कहा था—हुगली जिले के वैंटरा ग्राम में ।

—यहाँ का पता क्या है ?

दीपंकर ने कहा था—उन्नीस बटा एक, बी, ईश्वर गांगुली लेन, पोस्ट आफिस कालीघाट ।

प्राणमय वावू की वात दीपंकर को वहुत दिनों तक याद थी । बूढ़े, वहुत बूढ़े । जीवन भर खद्दर पहनते रहे । पाँवों में शू-जूते । एड़ी के पास ऊपर का हिस्सा मोड़कर शू को चप्पल वनाकर वे पहनते थे । गोल-मटोल वदन, रूखे-विखरे वाल, अंस्त-व्यस्त पोशाक और चौवीस घंटे मुँह में पान ।

याद है, वहुत वचपन में कभी-कभी स्कूल में छुट्टी हो जाती थी । क्यों छुट्टी हुई, समझ में नहीं आता था । सवेरे स्कूल जाने पर यतीन दफ्तरी कहता—आज स्कूल नहीं लगेगा, आज तुम लोगों की छुट्टी है ।

स्कूल नहीं लगता था, लेकिन उसी वक्त लौटना संभव नहीं था ।

छुट्टी दीपंकर के जीवन में अनेक वार आयी, लेकिन वैसा आनन्द कभी नहीं मिला ।

यतीन दफ्तरी सनई लाकर एक-एक सव के हाथ में थमा देता । सव लड़के सनई लेकर कतार वनाकर खड़े होते थे । ड्रिल मास्टर रोहिणी वावू स्कूल के वकसे से तिरंगे फ्लैग निकाल लाते । यतीन दफ्तरी सनई में एक-एक फ्लैग पहना देता । लड़के अगल-वगल दो कतारों में खड़े हो जाते ।

रोहिणी वावू चिल्लाकर कहते—सव रेडी हो गये न ?

सव रेडी हो जाते ।

फिर वुलंद आवाज में रोहिणी वावू हाँक लगाते—अटेन्—शन् ....

सव के पाँव सीधे हो जाते, सव सीना तान लेते ।

—राइट टर्न ।

सव दाहिने घूम जाते ।

—लेफ्ट टर्न !

देर तक स्कूल के सामने आँगन में ड्रिल चलता । लेकिन किसी को तकलीफ महसूस नहीं होती । सव जानते थे कि थोड़ी देर में पुलिस आयेगी, दारोगा आयेगा, और उसके थोड़ी देर वाद सवको छुट्टी हो जायेगी ।

सचमुच थोड़ी देर वाद सिपाही और दारोगा आ पहुँचते । वे सव जीने से ऊपर हेड मास्टर के कमरे की तरफ जाते । साथ ही साथ रोहिणी वावू हाँक लगाते—फिर मार्च !

लगभग डेढ़ सौ लड़के फ्लैग ऊपर उठाये दारोगा के पीछे-पीछे दूसरी मंजिल में पहुँच जाते ।

यतीन दफ्तरी फूल-माला लेकर तैयार हो जाता।

रोहिणी बाबू चिल्लाते — वन्दे मातरम् ....

धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल के हेढ सौ लड़के एक साथ कहते — वन्दे मातरम्। एक-दो बार नहीं, कई बार। सारी इमारत गूंज उठती। कैसा वह आनन्द था। रोहिणी बाबू प्राणमथ बाबू के गले में माला डाल देते थे।

तब हेड मास्टर कहते — वन्दे मातरम्।

सब लड़के एक साथ आवाज लगाते — वन्दे मातरम्।

उसके बाद दारोगा हेड मास्टर को बाहर ले जाते। वन्दे मातरम् का नारा उस समय भी लग रहा होता। उससे नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट काँप-काँप उठता।

तब स्कूल की छुट्टी होती। धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल उस दिन के लिए बन्द होता। फिर तीन-चार महीने प्राणमथ बाबू स्कूल में दिखाई नहीं पड़ते थे।

शुरू-शुरू में माँ विश्वास नहीं करती थी। उस समय वह रसोईघर में बैठी भोजन पकाती थी। माँ को अकेले बहुत से लोगों का खाना बनाना पड़ता था?

पूछती — क्यों रे, तू इतनी जल्दी लौट आया? स्कूल नहीं लगा?

दीपंकर कहता — आज सिर्फ ड्रिल हुआ है।

— क्यों?

दीपंकर कहता — आज छुट्टी हो गयी। आज पुलिसवाले प्राणमथ बाबू को पकड़ ले गये।

— क्यों? पुलिसवाले क्यों उनको पकड़ ले गये?

दीपंकर खुद नहीं जानता था तो क्या जवाब देता! वह समझ नहीं पाता था कि कभी-कभी पुलिसवाले हेड मास्टर को क्यों पकड़ ले जाते हैं और क्यों फिर छोड़ देते हैं। वह नहीं जानता था कि क्यों सनई में फ्लैग लगाकर मार्च करना और वन्दे मातरम् का नारा लगाना पड़ता है। वह यह भी नहीं जानता था कि हेड मास्टर को ले जाने पर छुट्टी क्यों होती है।

फिर किसी दिन दीपकर देखता कि प्राणमथ बाबू आ गये हैं। वे अपने कमरे में बैठे दफ्तर का काम-काज करते। वही गोल-मटोल बदन, वही रूखे-बिखरे बाल, वही अस्त-व्यस्त खद्दर की धोती और कुरता पाँवों में एड़ी का ऊपरी हिस्सा मुड़ा हुआ जूता। उनके मुंह में पान बराबर भरा रहता था।

दीपकर स्कूल से निकलकर सीधे घर जाता। वह घर नहीं पहुँचता तो माँ बहुत परेशान होती। फिर भी जिस दिन घूमने को मन करता, उस दिन दीपंकर थोड़ा घूम आता। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट से निकलकर सीधे उत्तर में पत्थरपट्टी। उधर उसका घर नहीं था, कुछ नहीं था। फिर भी वहाँ बहुत लोग होते, बड़ी-बड़ी सड़कों पर खूब भीड़ होती। एक साथ बहुत से लोग देखना उसे बड़ा अच्छा लगता था। अचानक दिखाई पड़ता, अघोर नाना रिक्शे से घर लौट रहे हैं।

अचानक दीपंकर पुकारता — अघोर नाना ....

— कौन है रे मुंहजला ?

— मैं दीपू हूँ, अघोर नाना ।

— रोक, रोक न मुंहजला रिक्शावाला । मुंहजला दौड़ रहा है तो बस दौड़ा ही जा रहा है । रोक भइया ।

अघोर नाना मकान-मालिक थे । अघोर भट्टाचार्य उस इलाके के पुराने वाशिंदे थे । बूढ़ा जर्जर शरीर । उम्र क्या है यह दीपंकर समझ नहीं पाता था । उन्नीस बटा एक, बी ईश्वर गांगुली लेन वाले मकान के मालिक । बंगला पंचांग के पन्ने पर बूढ़े का चित्र रहता है । उसके हाथ में लाठी, कंधे पर चद्दर और सिर पर चुटिया होती है । बगल में लिखा रहता है — दक्षिण हस्त में ऐश्वर्य, हृदय में सुख, वाम हस्त में मृतवत्, नेत्रद्वय में सुख, पादद्वय में पीड़ा ! इन लिखी बातों का मतलब दीपंकर समझता न था, लेकिन चित्र को देखते ही अनायास उसे अघोर नाना की याद आती थी । अघोर नाना की शकल चित्र के उस बूढ़े की शकल जैसी थी । अघोर नाना दिन भर रिक्शे पर बैठे यजमानों के घर-घर घूमा करते थे । कहाँ चावलपट्टी रोड और कहाँ ग्वाल-टोली, हर जगह अघोर नाना के यजमान थे । सभी यजमान बड़े लोग । कोई अघोर नाना के पाँवों पर दो मुहरें रखकर प्रणाम करता था तो कोई सिर्फ दो रुपये देता ।

अघोर नाना कहते — देख मुंहजले का काम । पहले बायाँ पैर छुआ । तुझसे कुछ न होगा ।

अघोर नाना भी हुगली जिले के थे । एक ही गाँव के । कब किस जमाने में, जब उनकी उम्र नौ या दस साल थी, तब सिर्फ एक धोती पहने, ताँबे के चौदह पैसे और एक गमछा लिये घर से निकल पड़े थे और अब सात बीघा जमीन पर मकान और अकूत पैसे के मालिक बन गये हैं । मकान पुराना हो गया है । ईंट, बालू, चूना झड़ने लगा है । घर-द्वार की मरम्मत नहीं होती । रात को कभी-कभी चमगादड़ घुस आता । फिर सारे मकान में उड़ता रहता । बत्ती बुझाने पर सर्र से निकल जाता । अघोर नाना कब आते हैं, कब जाते हैं, किसी को पता नहीं चलता । किसी-किसी दिन तीन बजे आते । आते ही चिल्लाने लगते — अरी बिटिया, कहाँ गयी ? कहाँ चले गये सब मुंहजले ?

अघोर नाना के लिए सब मुंहजले थे । रिक्शावाला भी मुंहजला, दीपू की माँ भी मुंहजली और दीपू भी मुंहजला । वह चन्नूनी भी मुंहजली थी । चन्नूनी अघोर नाना के घर काम-काज करती थी । अघोर नाना के लिए सब मुंहजले थे । छिटे, फोंटा, बिन्नी — अपने नाती-नतनी के लिए भी उनका यह संबोधन था । मानो दुनिया भर के सब लोगों का मुंह उन्होंने दाग दिया था ।

जितने दिन दीपंकर ने देखा है, अघोर नाना रिक्शे पर बैठे चले आ रहे हैं और न जाने किसके लिए 'मुंहजला-मुंहजला' बड़बड़ा रहे हैं । नींद में भी अघोर नाना

चिल्ला पड़ते थे — मुँहजला मरता नहीं। मुँहजला मर जाय तो मुझे शांति मिले।

अघोर नाना के सब दाँत न जाने कब टूट चुके थे। नया अपरिचित आदमी सहसा समझ नहीं पाता था कि बूढ़ा क्या कह रहा है।

कभी-कभी दीपकर जाकर अघोर नाना से कहता — अघोर नाना, एक सज्जन आपसे मिलने आये थे।

अघोर नाना चिल्लाते — कौन मिलने आया था? कौन है वह मुँहजला? क्या वह मकान किराये पर लेने आया था?

— यह तो नहीं जानता अघोर नाना।

— नहीं जानता तो कहने क्यों आया रे मुँहजला। मुँहजला मरता भी नहीं। यह मुँहजला मर जाय तो शांति मिले।

कहकर मोटी लाठी लिये अघोर नाना दौड़े हुए आते।

कहते — निकल, निकल जा मुँहजला!

कभी-कभी वे दीपकर को दुलारते भी थे। एक दिन उसे नहीं देखते तो पूछते — वह मुँहजला कहाँ गया? ओ बिटिया, वह मुँहजला कहाँ गया?

माँ खाना पका रही थी। भात पसाते हुए कहती — किसकी बात कर रहे हैं पिताजी? दीपू?

अघोर नाना कहते — और किस मुँहजले की बात करूँगा? वही चोट्टा मुँह-जला ....

दीपू खेलकर घर लौटता तो माँ कहती — अरे, तेरे अघोर नाना तुझे पूछ रहे थे। देख, क्या कह रहे हैं।

दीपंकर आँगन पार कर सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर जाता। पश्चिम की तरफ खुला बरामदा। फर्श पर सीमेंट निकल जाने से कहीं-कहीं गड्ढा बन गया था। बहुत दिन से दीवारों की सफेदी नहीं हुई थी। बरामदा पार कर दूसरी मंजिल के दक्षिण वाले हिस्से में जाते ही अघोर नाना को आहट मिल जाती। आहट पाते ही वे खफा हो जाते।

लाठी उठाकर दीपंकर के सिर पर ठक् से मार देते।

कहते — मुँहजला फिर आया है। मुँहजला चोरी करने आया है मेरे कमरे में क्या सोना-चाँदी धरा है रे मुँहजले? मेरे कमरे में क्या हीरे-जवाहरात हैं रे मुँहजले? निकल जा, निकल जा ....

फिर किसी दिन अघोर नाना आँगन की तरफ निकल आते और रसोईघर की तरफ देखकर पूछते — अरी बिटिया, वह मुँहजला कहाँ गया? कहाँ गया वह?

माँ कहती — दीपू अब आपके पास नहीं जायेगा पिताजी। आपने उसे लाठी से मारा है।

अघोर नाना पोपले मुँह से चिल्लाते — मैंने उस मुँहजले को मारा है? कब

कभी-कभी दीपू पूछता — यह कैसा संदूक है माँ ? इसमें क्या है ?

माँ बात को टाल जाती ।

कहती — वह हमारा नहीं है ।

— हमारा नहीं तो किसका है माँ ?

माँ कहती — वह तेरे अघोर नाना का है ।

अघोर नाना का संदूक क्यों उसके घर में पड़ा रहता है, यह दीपू समझ नहीं पाता था । बहुत दिन तक वह समझ नहीं पाया । संदूक एक किनारे पड़ा रहता था । उस पर दीपू की माँ हांड़ी और कड़ाही रखती थी । संदूक के सामने की तरफ लोहे का बहुत भारी ताला लटकता था । अन्दर जरूर कीमती चीज होगी, नहीं तो इतना बड़ा ताला क्यों है ! दीपू सोचता ।

पढ़ने बैठता तो दीपंकर उसी संदूक पर पीठ टिका देता । काला जंग-लगा लोहा । कितने ही दिन उसने देखा था कि माँ नहाकर, आँगन में आकर सूर्यप्रणाम करने के बाद उस संदूक को भी प्रणाम कर रही है । कभी-कभी अघोर नाना भी कमरे में आते थे । हाथ में नये गमछे की पोटली होती । पोटली में क्या है, दिखाई नहीं पड़ता । नाना के हाथ में चाभियों का भारी गुच्छा होता ।

अघोर नाना बाहर से पुकारते थे — अरी बिटिया, अरी मुँहजली ।

— आयी पिताजी । आप मुझे बुला रहे हैं ?

माँ घूंघट काढ़े कमरे के बाहर आती ।

अघोर नाना पूछते — मुँहजला क्या कर रहा है ?

माँ कहती — दीपू के बारे में पूछ रहे हैं ? दीपू स्कूल गया है ।

तब अघोर नाना कमरे में पहुँचकर कहते — तू देख लेना बिटिया, वह मुँहजला पढ़-लिख लेगा । तू जरा उसका ख्याल रखना । वह तेरा कायदे का बनेगा, मेरे छिटे-फोंटा की तरह मुँहजला न बनेगा ।

कहते हुए अघोर नाना संदूक के पास जाकर चाभी से उसका भारी ताला खोलते । दीपू की माँ काम के बहाने बाहर चली जातीं । अघोर नाना गमछे की पोटली खोलकर एक-एक रुपया संदूक में रखते ।

एक दिन ऐसे ही समय दीपंकर स्कूल से चला आया था । किताब-कापी रखने गया कमरे में गया तो उसके विस्मय का ठिकाना न रहा । अघोर नाना भी समझ नहीं पाये थे कि दीपू आया है । वे ठीक से सुन नहीं पाते थे, देख नहीं पाते थे । दीपंकर की निगाह उस संदूक में पड़ी । उसने देखा ढेर सारे रुपये, मुहरें और गहने उसमें हैं ।

दीपंकर बोल उठा — इतने रुपये अघोर नाना ?

उसकी बात कान में पड़ते ही अघोर नाना उछले ।

— कौन है रे मुँहजला ? तू आया और मुझे नहीं बताया मुँहजला ? निकल,

निकल यहाँ से — कहते हुए संदूक का ढक्कन जल्दी से बंद करने गये तो वह भा
से अघोर नाना के हाथ पर गिरा। साथ ही साथ वे चिल्लाये।

— मर गया रे, मर गया। मुँहजले ने क्या किया देख री बिटिया! देख तेरे
मुँहजले का काम।

माँ दौड़कर कमरे में गयी। आते ही माँ ने ढक्कन को उठाया। भारी ढक्कन
के नीचे अघोर नाना का हाथ पड़ गया था। माँ उनके हाथ पर लोटा-लोटा ठंडा
पानी डालने लगी।

अघोर नाना ने कहा — पहले मुँहजला ताला तो बंद कर दे बिटिया!

धीरे-धीरे हाथ फूल गया। कई दिन अघोर नाना घर से निकल नही पाये।
लेकिन दुमंजिले के बरामदे से वे दुनिया भर के मुँहजलों को गाली बकते रहे। किसी
को उन्होंने छोड़ा नहीं। उनकी गालियों से कोई बच नही पाया। दुनिया भर
के जिन रिक्शेवालों ने उनका पैसा लेकर गोलमाल किया था, जिन किरायेदारों ने
किराये को लेकर वादा-खिलाफी की थी, जिन नौकरानियों ने उनके घर काम किया था,
और जिन यजमानों ने मुहर न देकर रुपया दिया है, उन सब के लिए कई दिन तक
वे जहर उगलते रहे। उन कई दिनों छिटे, फोटा और बिन्ती को घर की चौहद्दी में भी
नहीं देखा गया। चन्नूनी के मुँह से भी आवाज नही निकली। सारा मकान कई दिनो
तक डरा-डरा-सा रहा।

दीपंकर शाम को अपनी पढ़ाई कर रहा था।

माँ बोली — चुपचाप पढ़ो बेटा, तुम्हारे नाना जी की तबीयत खराब है, देख
नहीं रहे हो?

दीपंकर ने पूछा — अघोर नाना के पास बहुत रुपये हैं न माँ?

माँ ने कहा — दूसरों के रुपये की तरफ नहीं देखना चाहिए बेटा ....

दीपंकर ने पूछा — अघोर नाना हमारे घर में क्यों रुपया रखते हैं माँ?

माँ बोली — यह घर भी तुम्हारे नाना जी का है न। वे अपना रुपया कहीं
रखें — हमें उससे क्या मतलब?

दीपंकर ने पूछा — तुम्हारे पास भी रुपया है माँ? तुम रुपया कहाँ रखती

माँ ने कहा — मेरे पास रुपया नहीं है बेटा। जब तुम बड़े हो जाओगे,
करोगे तब तुम खूब रुपया कमाओगे, वैसा सदूक बनाओगे, तब तुम्हारे रुपये
मेरा रुपया होगा।

दीपंकर पूछता — लेकिन तुम्हारे पास रुपया क्यों नहीं है माँ?

माँ बोली — तुम्हीं मेरे रुपये हो, तुम्हीं मेरे संदूक हो बेटे, तुम आदमी बनो
य नहीं चाहिए।

घोर नाना का मकान सात बीघा जमीन पर था। उसमें उत्तर तरफ का

हिस्सा किराये पर उठाया जाता था। कभी-कभी बाहर एक साइन-बोर्ड लटकता था। उसमें मोटे हरफों में लिखा रहता था — 'मकान किराये पर दिया जायेगा'। मकान किराये पर देने का साइन-बोर्ड देखकर अक्सर लोग आकर पूछते थे। जो मकान किराये पर लेता, वह ठेले में सामान लादकर एक दिन आता। कोई रहता चार महीने तो कोई साल भर। एक दिन वह मकान खाली कर देता। ज्यादातर किरायेदार चन्नूनी की चिल्लाहट और गाली-गलौज के मारे मकान खाली कर देते थे।

शायद दक्षिण तरफ के आँगन में जूठन गिरा है या कौए ने मछली का काँटा लाकर वहाँ गिरा दिया और बस चन्नूनी की चिल्लाहट शुरू हो गयी।

आँगन में खड़े होकर कमर में धोती लपेटे, आकाश की तरफ मुँह किये चन्नूनी झगड़ने लग जाती।

—अरे दईमारो, अरे हरामखोरो, सब की आँखें फूट जाय रे। मैं सब को केवड़ातल्ला ले जाऊंगी, सब को चिता पर चढ़ाऊंगी। डोम सबके मुँह में आग झोंकेगा। उस दईमारी के जाँगर में कीड़ा पड़ जाय जिसने बाभन के आँगन में मछली का काँटा फेंका। उसके गले में मछली का काँटा फंस जाय, काँटा फंसकर खून की कै करे दईमारी।

इसके बाद चन्नूनी जो कुछ कहती, सुना नहीं जा सकता था। कानों में पड़ता तो लोग कानों में उंगली डाल लेते। लेकिन दीपंकर उन बातों का न मतलब समझता था और न उनको लेकर सिर खपाता था। चन्नूनी के लड़ने का ढंग देखकर उसे बहुत हंसी आती थी। उसका हाथ हिलाना और आसमान की तरफ देखते हुए बात करना उसे अजीब लगता था। जब वह सिर हिलाती, आँचल उतार कर कमर में लपेट लेती, उंगलियाँ मटकाती और जमीन पर धम्म-धम्म पाँव पटकती, तब दीपू को और मजा आता था।

एक दिन पहले दीपंकर ने देखा था कि किरायेदार के छोटे बच्चे को गोद में लिये चन्नूनी प्यार कर रही है। वह प्यार भी क्या था! चुम्मा ले-लेकर बच्चे के गाल दुखाने लगी थी। उस समय वह एक मन से प्यार करने लगी थी।

—मेरा लाल, मेरा मुन्ना, मेरा चुन्ना, मेरा नन्हा, मेरा चन्दा, मेरा गोपाल ....

इतना प्यार करने लगी थी चन्नूनी कि लगता था उसका प्यार करना कभी खतम न होगा। वह जो कुछ बोल रही थी, उसका आधा भी कोई समझ नहीं पा रहा था। पान से होंठों को लाल कर, सारे मुहल्ले को सिर पर उठाकर वह प्यार जता रही थी।

झगड़े के बाद दूसरे दिन देखा जाता कि ठेले पर किरायेदार के तख्त, आलमारी, बर्तन आदि रखे जा रहे हैं और घोड़ागाड़ी की खिड़की की झिलमिली बंद कर उनकी बहू-बेटियाँ दूसरे मकान में जा रही हैं।

अब अघोर नाना के चिल्लाने की बारी आती।

वे चिल्लाते — मुँहजली औरत, हरामजादी! तूने मुँहजले किरायेदा भगाकर ही छोड़ा। अब तुझे झाड़ू मारकर निकाल बाहर करूँगा। मुँहजली किराये को भगानी है! मुँहजली मेरा खायेगी और मेरा ही सर्वनाश करेगी।

अघोर नाना का चिल्लाना शुरू होते ही चन्नूनी की आवाज बन्द हो जा उसके गले की सारी झार मिट जाती और वह मुँह बन्द किये आँगन बुहारने लगती उसके गले का सारा तेज एक क्षण में गायब हो जाता। उसी दम वह एक दूस औरत बन जाती।

अघोर नाना कहते — अब अगर उन मुँहजलों से लड़ेगी तो तुझे खतम क दूँगा या खुद खतम हो जाऊँगा।

मकान के सामने की दीवार पर फिर 'मकान किराये पर दिया जायेगा' वाला साइनबोर्ड लटकने लगता। दो-चार जन सज्जन आकर पूछताछ करते। अघोर नाना से बातचीत होती। एक दिन ठेले में लदकर खाट, अलमारी, बर्तन-भाँड़े दरवाजे के पास आकर रुकते। घोड़ागाड़ी की खिड़की की झिलमिली बंद किये किरायेदार के घर की बहू-बेटियाँ आतीं। और 'मकान किराये पर दिया जायेगा' वाला साइनबोर्ड उतार दिया जाता।

जिस दिन चन्नूनी की गाली-गलौज शुरू होती, उस दिन माँ दरवाजा-खिड़कियाँ बंद कर देती। दीपू से कहती — वह सब तुम मत सुनो, पढ़ने में मन लगाओ।

दीपंकर पूछता — चन्नूनी किससे लड़ती है माँ?

माँ कहती — यह सुनकर तुम क्या करोगे? तुमसे कहा न, तुम अपनी पढ़ाई ....

— दईमारी का माने क्या है माँ?

माँ कहती — छी! यह सब बात जबान पर नहीं लाते बेटे। जो छोटे लोग हैं, पढ़ना-लिखना नहीं जानते, वही यह सब कहते हैं। तुम लिखोगे-पढ़ोगे, बड़ा बनोगे, तुम्हारा आदर-सम्मान होगा, तुम कितना रुपया कमाओगे ....

दीपंकर पूछता — माँ, मैं भी अघोर नाना की तरह रुपया कमाऊँगा?

माँ कहती — हाँ बेटा, लेकिन अभी तुम वह सब न सोचो। पढ़ने-लिखने में मन लगाओ, वह सब अपने आप होगा। उस समय तुम्हारा मकान बनेगा और तुम सी गंदी जगह नहीं रहोगे ....

सचमुच माँ के मन में बड़ी आशा थी। बड़ी साध थी। माँ समझती थी कि ह मकान, यह कालीघाट और यह ईश्वर गांगुली लेन छोड़कर बहुत दूर जाने पर बेटा लायक बने। किसी तरह कालीघाट छोड़कर जाने पर सारे पाप और सारे क से छुटकारा मिल जायेगा। माँ सोचती थी कि अगर किसी तरह भवानीपुर जाता, अगर थोड़ा और बढ़कर बहूबाजार या श्यामबाजार में घर होता! माँ

समझती थी कि सारी दुनिया के बुरे लोग शायद इस कालीघाट में ही आकर बसे हैं। मानो और कहीं बुरे लोग नहीं हैं! मानो यहाँ सब उसके दीपू को बिगाड़ने पर उतारू हो गये हैं। यह जो कालीघाट के मंदिर को जानेवाला रास्ता है, यहाँ जो लोग अँधेरा होने पर लैंप जलाकर झुंड के झुंड बैठे रहते हैं, जो लोग मंदिर के आसपास घूमते हैं, वे सब मानो मेरे बेटे को तबाह करने में लगे हैं। माँ को क्या पता था कि संसार के सब मुहल्लों के सब लड़कों के लिए यही एक समस्या है। वहाँ भवानीपुर और श्यामबाजार में नहीं है क्या! माँ नहीं जानती थी कि केवल भारत नहीं, संसार के सारे लड़कों ने आज एकजुट होकर खराब होने का निश्चय किया है। कितनी माँएं कितने बेटों की रक्षा कर सकेंगी!

नहीं तो लक्ष्मी दी के मकान की खिड़की की संध से उस दिन दीपंकर ने क्यों झाँका था! क्यों उस दिन काफी रात को घर लौटते समय निर्जन शीतलातल्ले के पास उसने भूत देखा था!

● ● ●

उस दिन फिर दीपंकर ने देखा कि अघोर नाना रिक्शे पर बैठे कालीघाट की बड़ी सड़क से चले आ रहे हैं।

दीपंकर ने पुकारा — अघोर नाना ....

अघोर नाना चीखे — कौन है रे मुँहजला ?

फिर रिक्शेवाले ने कहा — रोक न मुँहजला, देख नहीं रहा है कि कोई मुँहजला बुला रहा है। कौन है रे मुँहजला ? कौन ?

दीपंकर बोला — मैं हूँ अघोर नाना, मैं हूँ दीपू।

मानो इतनी देर बाद अघोर नाना देख पाये।

बोले — अरे मुँहजला तू ? आ, बैठ जा।

फिर दीपंकर रिक्शे पर बैठ गया। अघोर नाना के पाँवों के पास नये गमछे की पोटली है। पोटली में से पक्के केले झाँक रहे हैं।

अघोर नाना ने कहा — मुँहजला, अपना नाम तो बतायेगा नहीं, मुझे क्या दिखाई

पड़ता है ? खरीदी कौड़ियों के मोल ।

दीपंकर बोला — आपको दिखाई नहीं पड़ता तो आप पूजा कैसे करते हैं अघोर नाना ?

अघोर नाना मुंह बनाकर चीखते — चुप रह मुंहजला, मैं कब पूजा करता हूँ ?

दीपंकर को बडा आश्चर्य लगा। अघोर नाना पूजा नहीं करते तो क्या करते हैं ?

अघोर नाना ने कहा — तुमसे झूठ कहकर क्यों पाप का भागी बनूं मुंहजले, पूजा मैं नही करता ....

दीपकर ने अघोर नाना के मुंह की तरफ देखा। नाना क्या कह रहे हैं !

अघोर नाना ने कहा — ठाकुर ही मैं देख नही पाता तो पूजा क्या करूंगा ? पूजा मैं नही करता।

दीपंकर को वे बातें रुलाई जैसी लगी। पता नही, अघोर नाना के गले का वह तेज कहाँ चला गया था ! क्या वे ठाकुर-पूजा के नाम पर यजमानों को ठगते है ?

दीपंकर ने पूछा — फिर आप क्या करते है ?

अघोर नाना ने कहा — क्या तू देखेगा कि मैं क्या करता हूँ ? देखेगा ?

दीपकर ने कहा — देखूंगा अघोर नाना।

अघोर नाना बोले — चल मुंहजले, आज तुझे दिखाऊँगा, चल।

रिक्शा उन्नीस बटा एक, बी ईश्वर गांगुली लेन वाले मकान के सामने आकर रुका। पहले दीपंकर उतरा। अघोर नाना ने टटोलकर नये गमछे की पोटली उठा ली। फिर दीपकर के हाथ का सहारा लेकर वे उतरे और मकान के अंदर गये।

पीछे से रिक्शावाला चिल्लाया — बाबू, पैसा।

अघोर नाना बिगड गये।

बोले — मर मुंहजले। मैं क्या तेरा पैसा लेकर अमीर बन जाऊंगा ? ले मुंहजले।

मकान के दरवाजे के पीछे से हाथ बढ़ाकर उन्होंने एक इकन्नी दी और अन्दर चले गये। दीपंकर उनके साथ अन्दर गया। अघोर नाना ने चिल्लाकर कहा — चन्नूनी, दरवाजे में अगड़ी लगा दे।

दीपकर ने सुना, बाहर रिक्शेवाले ने शोर मचाना शुरू कर दिया है। अघोर नाना दोपहर को निकले थे, फिर यजमानों के घर गये और शाम को लौटे। अब उन्होंने रिक्शेवाले को इकन्नी दी। मकान के अन्दर पहुँचकर आँगन था, फिर थोड़ा ऊँचा बरामदा। बरामदे पर चढ़कर दाहिने हाथ जीना था। अघोर नाना जीने से ऊपर चढ़ने लगे। दीपकर उनके पीछे चलने लगा।

अघोर नाना ने कहा — आ मुंहजला ....

दीपकर बोला — अघोर नाना, रिक्शावाला चिल्ला रहा है ....

अघोर नाना ने कहा — चुप रह मुँहजले, वह चिल्लाता है तो तेरा क्या तुझे क्या पड़ा है ?

दुमंजिले पर पहुँचकर बरामदा था। बड़े-बड़े कमरे। हर कमरे में ताला लगा था। दक्षिण तरफ के बरामदे में जाकर अघोर नाना ने कमरे का ताला खोला। फिर चाभी जनेऊ में गँठिया ली।

दीपंकर की तरफ एक बार देखा।

बोले — बोल मुँहजले, क्या पूछ रहा था ?

दीपंकर को याद आया।

बोला — मैं पूछ रहा था कि आपको दिखाई नहीं पड़ता तो आप पूजा कैसे करते हैं ?

अघोर नाना बोले — अरे मुँहजले, मैं क्या ठाकुर देख पाता हूँ कि पूजा करूँगा ? पूजा मैं नहीं करता !

— पूजा नहीं करते तो क्या करते हैं ?

अघोर नाना बोले — क्या करता हूँ, यही दिखाने तुझे यहाँ ले आया। देख मुँहजले ! देख !

अघोर नाना ने दरवाजे की सिकड़ी खोलकर दोनों पलड़े खोल दिये। सीलन की बदबू से दीपंकर का दम घुटन लगा। पहले तो कमरे में कुछ दिखाई न पड़ा। फिर धीरे-धीरे सब साफ दिखाई पड़ने लगा।

— देखा मुँहजले ? देख लिया न ?

दीपंकर के सामने मानो किसी ने जादू-नगरी का सिंहद्वार खोल दिया था। दीपंकर ने देखा, कमरे मे ढेर के ढेर सोने की सिल्लियाँ गँजी हुई हैं। वे सब जगमगा रही हैं, झलमला रही हैं। फिर और साफ दिखाई पड़ा। फूल के घड़े। घड़ों पर घड़े। सिर्फ घड़े नहीं। घड़े, गडुवे, थालियाँ, गिलास, कटोरे, दीवट, ये सब अघोर नाना को प्रणामी में मिले थे। ब्राह्मण को दिये गये दान थे। कुल-पुरोहित को दिये गये दान। सब एक पर एक धरे थे।

दीपंकर ने पूछा — इतने घड़े, इतने लोटे लेकर क्या करेंगे अघोर नाना ?

अघोर नाना ने मुँह बनाया।

बोले — हट, मुँहजला ! सामान लेकर लोग क्या करते हैं ? मैं यह सब बेचूँगा ! बहुत से बेच डाले हैं, इनको भी बेच डालूंगा, बेचकर बहुत रुपया मिलेगा....

रुपया ! दीपंकर को उसके घर में रखा संदूक याद आया उस में भी अघोर नाना का बहुत रुपया है। मुहरें हैं। उसने देखा था।

दीपंकर ने पूछा — इतने रुपये से क्या होगा अघोर नाना ? क्या करेंगे ?

अघोर नाना बिगड़ गये। गुस्से के मारे हकलाने लगे।

बोले — रुपये से क्या होता है रे ? बोल क्या होता है ? बड़ा होने पर

समझेगा। कौड़ियों से सब कुछ खरीदा जा सकता है, सब कुछ!

याद है, दीपंकर वहाँ से भाग चला था।

अघोर नाना ने चिल्लाकर बुला लिया — कहाँ चला रे मुँहजला, कहाँ जा रहा है?

दीपंकर लौटा।

बोला — यहीं हूँ नाना।

— प्रसाद नहीं खायेगा? नैवेद्य?

दीपंकर बोला — खाऊँगा। दीजिए!

कमरे के कोने में रखी नैवेद्य की थाली से अघोर नाना ने सन्देश उठाकर दिया दिया — यह ले!

दीपंकर सन्देश लेकर जा रहा था। सहसा नाना के मुख की तरफ देखकर अवाक् रह गया। नाना की आँखें न जाने कैसी दिखाई पड़ीं। क्या वे रो रहे हैं? नहीं, उनकी आँखें खराब हो चुकी हैं, शायद इसलिए ऐसा लगा।

— खा ले मुँहजले!

● ● ●

उस दिन वह प्रसाद दीपंकर मुँह से लगा नहीं पाया था। वह मुँह में डालने ही वाला था कि चौंक पड़ा। दौड़कर सीधे नीचे आ गया। माँ उस समय नीचे रसोईघर में भोजन बना रही थी। माँ को कई जनों का खाना पकाना पड़ता था। अघोर नाना खाते थे। उनके दो नाती छिटे और फोंटा खाते थे। और खाती थी अघोर नाना की नतनी किरणी। उतने बड़े मकान में किरणी कहाँ किस कोने में छिपी रहती थी कि कोई उसे देख नहीं पाता था। कभी आँगन में बैठी और लड़कियों की तरह धूप की तरफ पीठ किये वह बाल नहीं सुखाती थी। उस घर के कीचड़ भरे वातावरण में किरणी कमल की तरह सब की आँखों से दूर खिली हुई थी।

कभी-कभी किरणी दी दबे पाँव रसोईघर में चली आती थी।

पूछती — भात बन गया दीदी?

माँ पूछती — भूख लगी है न ?

विन्ती कहती — हाँ।

माँ कहती — क्यों नहीं लगेगी। सवेरे से पेट में कुछ पड़ा भी तो नहीं — आज सवेरे क्या खाया था ?

विन्ती कहती — तुमने भी तो कुछ नहीं खाया दीदी ....

माँ हँसती। कहती — मैं ठहरी विधवा, मैं क्या खाऊँगी ? लाई खाओगी ?

विन्ती कहती — मेरे पास पैसा नहीं है।

— मेरे पास है, मँगा देती हूँ।

दीपंकर उस समय पढ़ रहा था। माँ जल्दी-जल्दी कमरे में आयी। माँ का लकड़ी का टूटा बकसा ताखे पर रखा रहता था। उसमें माँ के पैसे रहते थे। आँचल में गँठियाई चाभी से बकसा खोलकर माँ ने कहा — बेटा, मोड़ की दूकान से एक पैसे की लाई तो ला दे।

दीपंकर पूछता — कौन खायेगा माँ ?

माँ कहती — हर बात नहीं पूछा करते। जो कहती हूँ, करो ....

दूकान से लाई लाकर देते समय वह देखता कि अघोर नाना की नतनी रसोई-घर की बगल में खड़ी है। माँ ने लाई का दोना विन्ती को दिया तो उस लड़की ने पूछा — थोड़ा-सा दीपू को दूँ दीदी ?

नहीं-नहीं, उसको मत दो। उसने पेट भर बासी भात खाया है।

दीपंकर कहता—अघोर नाना के कमरे में बहुत से सन्देश हैं, खाओगी विन्ती दी?

विन्ती दंग रह गयी। बोली — इसने कैसे देख लिया दीदी ?

दीपंकर बोला — मैंने देखा है। अघोर नाना ने मुझे दिखाया है। बहुत से घड़े हैं, लोटे, कटोरे और थालियाँ हैं। सब हैं। बहुत मिठाइयाँ हैं — देखो, इतनी मिठाइयाँ ....

बताया ? किसने सिखाया ? ? दीपू अब बड़ा सयाना हो गया है दीदी।

दीपकर ने कहा — हाँ, खरीदा जा सकता है।

इतने में अचानक बाहर अघोर नाना के खड़ाऊँ की आवाज सुनाई पड़ी।

— कहाँ गयी सब ? अरी बिटिया मुँहजली, तू भी बहरी हो गयी ? कहाँ गयी सब ? अरी बिटिया ....

अघोर नाना को देखते ही बिन्नी झट से कमरे में चली गयी।

माँ बोली — पिताजी, अपने कमरे की चाभी एक बार मुझे दीजिए तो, मैं उसकी सफाई करूँगी। मैं झाड़ू लेकर न जाऊँगी तो आपका वह कमरा कभी साफ न होगा। किसी दिन घर भर में कीड़े फैल जायेंगे।

कमरे की चाभी का नाम सुनते ही अघोर नाना जल गये।

बोले — हाँ, कमरे की चाभी मैं दे दूँ और मुँहजले छिटे और फाँटा सब लूट लें। उन मुँहजलों के मारे मैं चाभी जनेऊ में गँठियाकर भी चैन नहीं पाता। उन मुँहजलों ने ....

माँ बोली — आपने दीपू को जो सन्देश दिया था, उसमें कीड़े बिलबिला रहे थे ....

— कीड़े ! कीड़े क्यों बिलबिलायेंगे ? ऐसे ही कीड़े लग जायेंगे ?

माँ बोली — उतने सन्देश, उतने फल-फलारी आप किसके लिए बटोरकर रखते हैं पिताजी ? वह सब किस काम आयेगा ? कौन खायेगा ?

अघोर नाना मानो सहम गये। हमेशा ज्यादा बोलने वाले अघोर नाना बुरे फँसे। इतनी सीधी-सी बात इतने सीधे ढंग से सोचने की कभी जरूरत नहीं पड़ी। यजमान लोग जो कुछ देने आये, उसको उन्होंने बचाया, तभी न इतना बड़ा मकान बना है। यह जमीन, यह बाग, रुपये से भरा सन्दूक — सब हुआ है। न बचाते तो अब तक अघोर नाना भिखारी बन जाते। खड़े होने के लिए भी कोई ठिकाना न होता ! बचाया तभी तो आज उनका सीना तना हुआ है। यही तो, अब आँखें नहीं हैं, सब ठगना चाहते हैं, अगर रुपया न होता तो क्या होता ? क्या खाते ? यजमान अब क्या पहले जैसा देते हैं ? अब क्या पहले जैसी भक्ति-श्रद्धा रह गयी है ? लेकिन माँ की बात के जवाब में उन्होंने कुछ नहीं कहा। माँ की बात के आगे अचानक उनका सारा तर्क बेकार हो गया। मानो अचानक वे समझ गये कि सचमुच यह सब कौन खायेगा ? किसके लिए इतना किया जा रहा है ? इतनी बचत की जा रही है ? किसके लिए यजमान को धोखा देना पड़ा, रिश्तेवाले को धोखा देना पड़ा और तो और भगवान को भी न छोड़ा गया। अघोर नाना ने किसके लिए देवता का नैवेद्य चुराया ? उन्हें क्या लाभ हुआ ? कहाँ गयी पत्नी ? कहाँ गया पुत्र ? और कहाँ गयी पुत्री ? समझ में नहीं आता कि उन्होंने भगवान् को धोखा दिया या भगवान् ने उनको धोखे में रखा ? क्या सच है ? आज उनका कोई नहीं है। इतनी सम्पत्ति का मालिक बनकर उन्होंने क्या पाया ?

दीपंकर यह सब उस समय नहीं सोचता था। यह सब सोचने की उम्र भी उस समय नहीं थी। लेकिन उस दिन अघोर नाना एकदम दूसरे आदमी लगे थे। सदा के चालाक अघोर नाना उस दिन वेवकूफ जैसे दिखाई पड़े।

लेकिन वैसा सिर्फ एक क्षण के लिए।

उसके बाद अघोर नाना अचानक चिल्लाये — कीड़े लगे हैं, बहुत अच्छा है। तुम सब को क्या करना है मुंहजलो। और कीड़े लगें, और कीड़े बिलबिलायें, मैं किसी को खाने नहीं दूंगा। बता न, किसको खाने दूँ ? कौन है मेरा ? किसे खिलाऊँ ? वे सब क्या आदमी हैं ? क्या उनको तू आदमी समझती है ?

ऊपर जाने के लिए नाना खड़ाऊँ खटखटाते हुए जीना चढ़ने लगे।

वे कहते गये — मैं कीड़ों को खिलाऊँगा, लेकिन उनको खाने न दूँगा। मैं कालीघाट जाकर परचून की दूकानों में बेच आऊंगा, लेकिन उनको नहीं दूंगा। उनके खाने से मेरा क्या लाभ होगा रे मुंहजलो, बेचने से फिर भी रुपया मिलेगा। मैं परचून की दूकान में वह सब बेचकर रुपया बना लूंगा।

बहुत दिन बाद दीपंकर को ये बातें याद पड़ी हैं। अघोर नाना सीधे-सादे आदमी थे, इसलिए सबके सामने इस तरह की बातें करते थे। लेकिन दुनिया में चारों तरफ देखकर और सब को जानकर उसे बस अघोर नाना की बात याद आयी है। लगा है, सभी अघोर नाना हैं। कब किसने किसे खाने दिया है ? दूर अतीत के मुगल बादशाहों से शुरू कर अलीवर्दी खाँ, अलीवर्दी खाँ से सिराजुद्दौला, लार्ड क्लाइव, वारेन हेस्टिंग्स, लार्ड कर्जन, फिर लार्ड डलहौजी, लार्ड कारमाइकेल, लार्ड रीडिंग, कब किसने किसे खाने दिया है ? क्या हिन्दुओं ने मुसलमानों को खाने दिया है ? क्या मुसलमानों ने हिन्दुओं को खाने दिया है ? जब जिसके अच्छे दिन आये, तब वही अघोर नाना बन बैठा। उसी ने ठाकुर का नैवेद्य चुराया और लोहे के संदूक में छिपाकर रखा। सब ने ऐसा किया है और भी ऐसा करेंगे।

लेकिन किरण को बहुत-कुछ पता था। दीपंकर की तरह किरण भी फ्री स्टूडेंड था। लेकिन किरण खूब घूमता था। उस छोटी उम्र में वह अकेला भवानीपुर, लवका के मैदान, चेतला, खिदिरपुर और बेहाला तक पैदल जाता था। कहीं जाना उसको

दीपंकर पूछता — और प्राणमथ बाबू ?

किरण कहता — प्राणमथ बाबू भी बहुत बार जेल गये हैं। वे छोटे लाट ब... देख लेना।

उस दिन किरण दीपंकर को हरीश मुखर्जी रोड पर हरीश पार्क में खींच ... गया। वहीं मीटिंग होनेवाली थी। विलायती कपड़े जलाये जाने वाले थे। बहुत मज... होनेवाला था।

लेकिन माँ दीपंकर को किरण से मिलने-जुलने देना नहीं चाहती थी।

माँ कहती थी — तुमसे कहा है न, उससे दोस्ती मत करना ....

किरण के बाप को न जाने क्या रोग था। गले का रोग। इसलिए आखिरी दिनों में उसके गले से आवाज नहीं निकलती थी। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट की एक गली की बस्ती में किरण का घर था। किसी से कुछ कहे बगैर दीपंकर कभी-कभी उस बस्ती में चला जाता था। अघोर नाना का मकान भी पुराना था, लेकिन था सड़क पर। पक्का मकान। लेकिन किरण का मकान कच्चा था। गोलपत्ते से छाया। उसके मकान के आँगन में अमरूद का पेड़ था। अमरूद तोड़ने बहुत बार दीपंकर उसके घर गया था। देखा था — कच्चे बरामदे में चटाई पर किरण का बाप बैठा ऊँघ रहा है। उसके मुँह से न जाने कैसी घरघर आवाज निकल रही है। बगल में फटी गदी कथरी पड़ी है। जाड़े में जैसी कथरी ओढ़े चन्नूनी काम करती हैं, ठीक वैसी। चारों तरफ मक्खियाँ भिनभिना रही हैं। जब दीपंकर गणित का कोई सवाल लगा नहीं पाता था, तब किरण के बाप के पास जाता था। किरण का बाप स्कूल में गणित का मास्टर था। बड़ा नामी-गिरामी मास्टर। मुँह-जबानी बड़े-बड़े सवाल हल करता था।

किरण बाप के पास जाकर कहता — पिताजी, दीपू को यह सवाल बता दीजिए, ...ह समझ नहीं पा रहा है।

किरण गणित की किताब और स्लेट आगे कर देता।

बड़े-बड़े सवाल। उस समय दोनों लड़के कालीघाट स्कूल में पढ़ रहे थे। एल० ...० एम०, जी० सी० एम० और दिमाग लगाकर किये जाने वाले सवाल। उस समय ...ण के बाप का शरीर ज्यादा खराब हो चुका था। गला अधिक फूल आया था। ...की उँगलियाँ फूलकर छोटी लगने लगी थीं। थू-थू कर आँगन में चारों तरफ ... था। शायद तकलीफ ज्यादा थी। जब तकलीफ बहुत ज्यादा होती, तब बगल में ...थरी पर लेट जाता। मुँह से घर-घर आवाज और तेज निकलती। किरण की ...ास में थोड़ा गरम पानी लाकर देती। थोड़ा गरम पानी पी लेने पर आराम ...। तब वह दोनों हाथों से गला सहलाता। लेकिन मुँह से जरा भी बात नहीं ...। देख सकता था, सुन सकता था, खा सकता था, सिर्फ बोल नहीं सकता ...ल पाने में कितना भयानक कष्ट है, यह दीपंकर ने वहीं पहली बार देखा था। ... बार-बार मना कर देती — किरण के घर मत जाना बेटा।

दीपंकर कहता — नहीं माँ, तुम्हारे मना करने के बाद मैं कभी नहीं गया ....

— हाँ, मत जाना। रोगी के घर जाना ठीक नहीं है। अगर देखो कि किसी रोगी का थूक पड़ा है तो उस पर पाँव मत रखना। थूक पर पाँव पड़ने से बीमारी होती है।

लेकिन किरण के बाप के बारे में सोचना दीपंकर को बहुत अच्छा लगता था। कैसा गणित जानता है किरण का बाप, और कितना पढ़ना-लिखना। कितना ज्ञानी, कितना गुणी और कितना शिक्षित है। किसी-किसी दिन दीपंकर उस आदमी की तरफ एकटक देखा करता था। वे लोग भी गरीब हैं, किरण की माँ के पास रुपया नहीं है, लकड़ी के छोटे-से बकसे में दो-चार पैसे पड़े रहते हैं। फिर भी दीपंकर को किरण की तरह भीख नहीं माँगना पड़ता लेकिन किरण को कोई दुःख नहीं था।

किरण कहता था — देखना, हम भी बहुत बड़े आदमी बन जायेंगे। बाप की बीमारी भी ठीक हो जायेगी। मुझे भी भीख माँगनी नहीं पड़ेगी।

किरण और भी कहता था — देखना तू, मेरी बात सच निकलती है या नहीं ....

दीपंकर पूछता — कैसे ?

किरण कहता — मुझे बहुत बड़ी नौकरी मिलेगी, मोटी तनख्वाह मिलेगी ....

दीपंकर समझ नहीं पाता था। पूछता — पढ़े-लिखे बिना नौकरी पा जायेगा ?

किरण कहता — पढ़ना-लिखना सीखूंगा, लेकिन स्कूल में फीस नहीं लगेगी। स्वदेशी स्कूल होगा, हम वहीं पढ़ेंगे।

— फीस क्यों नहीं देनी पड़ेगी ?

किरण कहता — स्वराज हो जाने पर क्यों फीस लगेगी ? तू कुछ नहीं जानता। चौरंगी और अलीपुर में साहब-मेमों के जो मकान हैं, हम उन्हीं मकानों में रहेंगे। किराया भी नहीं लगेगा।

— फिर प्राणमय बाबू को पुलिस पकड़ेगी नहीं ?

किरण कहता — देख लेना, प्राणमय बाबू छोटा-मोटा लाट बन जायेगा और वही सब करेगा। हम धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल के लड़के उससे कहकर एक न एक नौकरी ले लेंगे।

इन बातों पर दीपंकर सचमुच उस समय विश्वास करने लगता था। सब अभाव, अभियोग और समस्याएं उस समय मिट जायेंगी। अघोर नाना के मकान के उत्तरी हिस्से में फिर किरायेदार आयेगा। तब चन्नूनी किरायेदारों से लड़ा नहीं करेगी और माँ को अघोर नाना के घर खाना नहीं पकाना पड़ेगा। माँ थोड़ा साफ कपड़ा पहने ज़रा देर आराम कर सकेगी। दीपंकर विश्वास करता था कि उस समय चन्नूनी भी अच्छी हो जायेगी और अघोर नाना भी अच्छी तरह देख पायेंगे। फिर वे पूजा के नाम पर ठाकुर का नैवेद्य लाकर घर में नहीं भरेंगे। प्रसाद में भी कीड़े नहीं लगेंगे।

उस समय छिटे भी रात को छिपकर घर नहीं लौटेगा और फोटा भी आज की
बाहर रात नहीं बितायेगा। और बिन्ती दी? बिन्ती दी को सवेरे से दोपहर तक भू
न रहनी पड़ेगी। किसी अच्छी जगह उसकी शादी हो जायेगी। माँग में सिन्दूर लग
कर, घोड़ागाड़ी में बैठी बनारसी साड़ी के आँचल में मुँह छिपाकर वह दुलहे के सा
ससुराल चली जायेगी। और प्राणमथ बाबू? वे तो कितनी बार जेल गये हैं। कई साल
जेल में रहे हैं। कितना कष्ट सहा है उन्होंने! किरण कहता है, वह तो छोटा लाट बन
जायेगा। किरण लोग अच्छे मकान में चले जायेंगे। किरण के बाप की बीमारी ठीक
हो जायेगी। गले की तकलीफ नहीं रहेगी। वह एकदम ठीक हो जायेगा। फिर
किरण की माँ को रुई से जनेऊ नहीं निकालना पड़ेगा। किरण को भीख नहीं माँगनी
पड़ेगी।

बचपन में दीपंकर विश्वास बहुत करता था। बचपन में विश्वास करना सरल
होता है। कितने दिन वह किरण के साथ बहुत दूर घूमने चला जाता था। भवानीपुर,
टालीगंज और कभी खिदिरपुर। उन जगहों पर भी कितने लोग थे। उसने देखा था,
वहाँ भी कितने लड़के और लड़कियाँ हैं। वहाँ भी ईश्वर गांगुली लेन जैसी गलियाँ
और मकान हैं। वहाँ भी छतों से साड़ियाँ लटकती रहती हैं। वहाँ भी कातिक के
महीने में छत पर बाँस में आकाशदीप जलता है। वहाँ भी सूरज निकलने पर धूप
होती है और शाम को सूरज डूबने पर अँधेरा। वहाँ भी नल के पानी के लिए सड़क
पर झगड़ा होता है और वहाँ भी कालीघाट की तरह भिखमंगे हाथ फैलाये भीख माँगते
हैं। टालीगंज के पुल पर जा खड़े होकर दीपंकर देखता था — उस दूर कालीघाट
स्टेशन की तरफ से एक रेलगाड़ी धड़धड़ाती आकर सामने से निकल गयी। उस रेल-
गाड़ी में बैठे लोग ठीक कालीघाट के लोगों की तरह हैं। उसी तरह के कोट, चद्दर, शर्ट
और कुरता पहने हुए। ठीक वैसे दाढ़ी बनाये हुए चेहरे और सब ठीक उसी तरह। कहाँ
से ये आये और कहाँ जायेंगे? संसार में न जाने कितने लोग हैं। कितने लोग, कितना
...रगुल, कितनी भीड़ और कितनी वीरानी! कितनी बड़ी है दुनिया! इतनी बड़ी कि
... बार में देखी नहीं जा सकती। टालीगंज के पुल से रासबाड़ी की चोटी दिखाई
...ी थी। उससे भी दूर था टालीगंज, और भी दूर टालीगंज से दक्षिण — क्या नाम
... जगह का? क्या नाम है उसका? जहाँ आसमान झुककर धरती से मिल गया
...हाँ पेड़ हैं, दूर-दूर पेड़ों की चोटियाँ और मकान।
... टालीगंज के पुल से उतरकर किरण कहता — दीपू, यहीं खड़ा रह, मैं भीख
....

...कुछ जनेऊ उस समय तक बिके न थे। दीपंकर थोड़ा हटकर खड़ा हो जाता
...ण आगे बढ़ जाता। उस समय काफी लोग दफ्तर से लौट रहे होते। किरण
...ें जनेऊ बढ़ा देता।
...हता — महाशयगण कृपा कर एक पैसे का जनेऊ खरीदते जाइए — महा-

उपकार हुआ करेगा ....

बड़े सुर में कविता पढ़ने के ढंग से किरण वहाँ खड़े होकर चिल्लाता। किरण की शक्ल-सूरत देखकर लोगों को दया आती थी। बदन पर फटी बनियाइन और पहनावे में हाफ़पैंट। सुर को करुण बनाकर वह लगन से चिल्लाता रहता। दीपंकर जानता था कि उस जनेऊ बेचने के पैसे से उन लोगों को चावल-दाल-नमक-तेल सब खरीदना पड़ता है। मकान का किराया दिया जाता है और बाप के लिए दवा खरीदी जाती है।

हाँ, तो कोई-कोई जनेऊ खरीदता था। जरूरत न रहने पर भी बहुत-से लोग खरीदते थे। गरीब बच्चे पर दया कर लोग खरीदते थे।

लेकिन उस दिन एक अजीब घटना हो गयी।

एक सज्जन ने किरण को सीधे एक दुअन्नी दे दी।

किरण ने पूछा — कितने जनेऊ लेंगे ?

उस सज्जन ने कहा — मैं जनेऊ नहीं लूंगा, मुझे जनेऊ की जरूरत नहीं है। मैं कायस्थ हूं। — तुम्हारा घर कहाँ है।

किरण बोला — नेपाल भट्टाचार्य लेन में ....

— तुम्हारे पिता क्या करते हैं ?

किरण ने कहा — मेरे पिता को कोढ़ हो गया है, जनेऊ बेचकर हमारा गुजर चलता है ....

कुछ कहे बिना वह सज्जन चला गया।

किरण बोला — आज और जनेऊ नहीं बेचूंगा, चल ....

दीपंकर उस समय किरण के पास आकर खड़ा हो गया था। बोला — देखूं, कितने पैसे हुए ?

किरण ने गिनकर देखा — कुल चार आने। कहा — अरे, आलू-चाप खायेगा ?

दीपंकर बोला — अगर तेरी माँ को पता चल जाय ?

किरण बोला — एक दुअन्नी तो है। दे दूँगा ....

फिर टालीगंज रोड से सीधे केवड़ातल्ला के पास एक जगह आकर किरण रुका।

बोला — इस दूकान में मैं रोज खाता हूँ।

किरण ने आलू-चाप खरीदा। गरमागरम आलू-चाप निकाले जा रहे थे। चोरी के पैसे से खरीदे गये आलू-चाप उस दिन दीपंकर की जबान पर अमृत जैसे लगे थे। जीवन में अनेक बार बहुत कुछ उसने खाया लेकिन वैसा स्वाद मानो उसे और कहीं नहीं मिला। उस समय ठीक से अंधेरा नहीं हुआ था। लोगों का आना-जाना लगा था। दीपंकर का शरीर धूल से भरा था। वह किरण के साथ बहुत दूर-दूर घूमता रहा था। लेकिन उन आलू-चापों ने मानो सारी थकावट हर ली।

दीपंकर ने किरण के चेहरे की तरफ देखा। किरण भी होंठ चाट रहा था।

किरण बोला — आलू-चाप बहुत बढ़िया है न ?

दीपंकर ने पूछा — माँ से जाकर तू आलू-चाप खाने की बात कहेगा ?

किरण ने कहा — हट, तकलीफ तो है ही, कुछ दिन और तकलीफ कर लें न, फिर अच्छे दिन आ रहे हैं। देख लेना, हमारे सब दुःख दूर हो जायेंगे।

दीपंकर ने पूछा — किसने कहा है तुमसे ?

किरण ने कहा — किसी से कहेगा तो नहीं ?

दीपंकर बोला — नहीं, किसी से नहीं कहूँगा।

किरण बोला — एक साधु ने कहा है। बता, किसने कहा है ? नहीं होती। सोने के कार्तिक वाले घाट पर वह साधु अब भी है, एक दिन तुझे ले जाऊँगा। बहुत अच्छा साधु है, पैसा नहीं लेता। जानता है, साधु की बात कभी झूठ

दीपंकर ने पूछा — और क्या बताया है ?

किरण बोला — साधु ने बताया है — हमारी हालत अच्छी हो जायेगी, हमारे पास बहुत रुपया होगा, मेरे बाप की बीमारी ठीक हो जायेगी ....

दीपंकर ने पूछा — क्या साधु ने दवा दी है ?

किरण बोला — हट, दवा क्यों देगा ? सिर्फ मेरा हाथ देखकर बताया है।

दीपंकर ने पूछा — एक दिन मुझे ले चलेगा ?

— किसी से कहेगा तो नहीं ? अगर किसी से नहीं कहेगा तो ले जाऊँगा। ...म हिमालय का असली साधु है ....

दीपंकर ने जानना चाहा — कब ले चलेगा ?

किरण बोला — कल स्कूल के बाद थोड़ा घूम-फिरकर फिर शाम हो जाने पर ...थ चलेंगे। उस समय भीड़ कम रहती है।

फिर वही बात तय रही। ये सब बचपन की बातें हैं। वह शहर भी इतने ...बदल गया है। वह मन भी बदल गया है। वह निगाह भी बदल गयी है। ...मानव की इस धरती को दीपंकर ने जिन आँखों से देखा था, उन आँखों की ...ाने कब कमजोर पड़ गयी और उन पर न जाने कौन-सा रंगीन चश्मा चढ़ ...न आज भी सब बातें दीपंकर को याद हैं। ईश्वर गांगुली लेन ...चौड़ी हो गयी है और उस लेन के भीतर-बाहर बहुत से नये लोग आ ...के बाद शहर धीरे-धीरे उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम में बढ़ता गया ...सब याद है। अब जो लोग उस गली में रहते हैं, वे दीपंकर को नहीं ...ी जानते कि एक दिन उस गली की धूल से एक जने का घनिष्ठ परिचय ...क जने ने उस शहर से प्यार किया था। उस शहर के लोगों से एकात्म ...म किया था कि सब का भला होगा। सोचा था, सबके सब रोग ठीक ... दरिद्रता दूर हो जायेगी, सबको ठिकाना मिल जायेगा और सबको ...किरण की तरह दीपंकर ने भी मन-प्राण से सोने के कार्तिक वाले घाट

के साधु की बातों पर विश्वास किया था। उसे विश्वास करने में बड़ा अच्छा लगा था। विश्वास करने से उसे संतोष मिला था। लेकिन न जाने क्यों उसका विश्वास बाद में टूट गया। क्यों इतने लोगों के, इतने महान् लोगों के इतने प्रयास, इतने त्याग और तप सब व्यर्थ हो गये ? इसके लिए वह किससे जवाब तलब करेगा ? यह जो सेवेंण्टीन डाउन इतने दिन बाद गाड़ियाहाट लेवल क्रॉसिंग पर आ पहुँची, क्या इसका सारा आयोजन सरासर झूठ है ? स्कूल की किताब में जिसकी जीवनी पढ़ी थी, उस जॉर्ज स्टीफेन्सन ने क्या रेलगाड़ी का आविष्कार इसीलिए किया था ? व्यासदेव ने क्या उतना मोटा महाकाव्य इसी उद्देश्य से लिखा था ? गैलिलियो ने क्या इसीलिए प्राण दिये थे ? शास्त्र-वचन क्या झूठ हैं ? एक दिन इसी शहर में कितने लोगों ने पार्कों में सभाएं की, वे जेल गये, वे अगर आज अचानक कैफियत माँग बैठें तो ? आज अगर वे एकाएक जिन्दा हो जायें तो ? और जिन्दा होकर कहें — अयमहम् भोः[1] ....

चलते-चलते दीपंकर घर के पास आ गया था। अब थोड़ा अलग रहना पड़ेगा, नहीं तो किरण के साथ उसे कोई देख लेगा। शायद अघोर नाना ही देख लें। या छन्नूनी देख ले। देखकर माँ से कह दे। किरण से उसका मिलना-जुलना मना है। किरण की परछाईं में भी पाप है। किरण के बाप को कठिन रोग है इसलिए किरण अछूत हो गया है।

दीपंकर को दाहिने जाना था और किरण को बायें। बायें हाथ की गली में किरण का मकान है। सहसा गली के नुक्कड़ पर आते ही आसमान को हिला देनेवाला आर्तनाद दोनों को सुनाई पड़ा।

किरण चौंक पड़ा। दीपंकर भी।

— क्या हुआ रे ?

मानो किरण के मुँह से आवाज नहीं निकल रही है ! मानो किरण का गला रुंध गया है। दीपंकर भी किसी अज्ञात भय से सिहरने लगा।

एकाएक किरण बोला — माँ रो रही है भाई !

— तेरी माँ ?

किरण की माँ का रोना सारे मुहल्ले को झकझोर रहा है। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट का वातावरण उस आर्तनाद से एकाएक सुन्न पड़ गया।

किरण बोला — मैं जाता हूँ भाई, शायद बाप मर गया है।

फिर वह मुड़कर खड़ा हो गया। उसका चेहरा उदास हो गया। उसने उँगली उठाकर कहा — अगर बाप मर गया होगा तो मैं उस साधु को देख लूँगा।

कहकर किरण दौड़ता हुआ अपने मकान की तरफ चला गया !

दीपंकर तब भी रास्ते के नुक्कड़ पर खड़ा रहा। मानो उसमें हिलने तक की

---

१. अरे, यह रहा मैं।

शक्ति नहीं रह गयी हो । मानो वह अचानक अचल हो गया हो । अगर वह भी
घर जा सकता तो कितना अच्छा होता । मृत्यु को आमने-सामने देखता । एकदम
कठोर वास्तव मृत्यु को देख लेता । अभी उस दिन उसने किरण के बाप को देख
चटाई पर सीधा बैठा था । मैले-कुचैले कपड़े बदन पर पड़े थे । आँखों में
न थी, दृष्टि में कोई उद्देश्य नहीं था । मानो सारे संसार के विधाता के विरुद्ध
आक्रोश उसके अन्दर उमड़-घुमड़कर गले से निकलना चाह रहा था । अब कितने
आक्रोश होगा ? अब कौन मापाहीन आक्रोश से उस विधाता को बेचैन कर देगा ?

एक बार दीपंकर के मन में आया कि दौड़कर किरण के घर जाये । उन सं
का अपना मकान होगा, उन लोगों की स्थिति में सुधार होगा और उन लोगों का मा
रोग मिट जायेगा — इन सब आश्वासनों का धुन में मिल जाना एक बार वह अप
आँखों से देख आये । कम से कम दीपंकर पास जाकर खड़ा हो जाये तो किरण के
थोड़ा भरोसा मिले ! लेकिन डर लगा — अगर माँ को पता चल गया तो ....

शाम हो चली थी । दीपंकर धीरे-धीरे ईश्वर गांगुली लेन की तरफ़ मुड़ गया ।
तीसरे पहर के बाद से यह मुहल्ला चहल-पहल से भर उठता है । मकानों के चबूतरों
पर लड़के जुटते हैं । तब बकू की दुकान में गरम बैगनी और आलू-चाप तलना शुरू
हो जाता है । एक-एक कर ग्राहकों का आना शुरू हो जाता है । तब कुल्फी बरफ वाले
रास्ते में चिल्ला-चिल्लाकर गुजरते हैं । तब हर मकान में चूल्हा जलाया जाता है ।
उन चूल्हों के धुएँ से सारा मुहल्ला ढँक जाता है ।

सहसा अघोर नाना के मकान के सामने पहुँचते ही दीपंकर आश्चर्य में पड़
गया ।

मकान के सामने तीन बैलगाड़ियाँ खड़ी थीं । उन गाड़ियों में सामान लदा
था । खाट, आलमारी, टेबिल-कुर्सी, बर्तन-भाँड़ा । दीपंकर का मन खुशी से खिल गया ।
अघोर नाना के मकान में किरायेदार आया है । फिर किरायेदार आया है । अब अघोर
नाना के चेहरे पर हँसी दिखाई पड़ेगी । लेकिन चन्नूनी अगर फिर आँगन में खड़ी
होकर पहले की तरह गाली-गलौज शुरू कर दे तो ?

दीपंकर ने देखा मकान के भीतर कमरों में फिर बत्तियाँ जल रही हैं । अन्दर
लोगों के चलने-फिरने की आवाज सुनाई पड़ रही है । अच्छा हुआ । इतने दिन मकान
न जाने कैसा अँधेरा-अँधेरा लगता था । दीया जलने के बाद जब वह आँगन के कोने
में मुँह धोने जाता था तब न जाने कैसा डर लगता था । अब डर नहीं लगेगा ।

थोड़ी देर दीपंकर खड़ा होकर देखता रहा ।

भारी-भारी आईने, बड़ी-बड़ी आलमारियाँ और पलंग । इस बार का किराये-
र बहुत अमीर होगा । इतना बढ़िया आईना अघोर नाना के पास नहीं है । अघोर
ा में भी अधिक रुपया इनके पास होगा । चार मुटिये सिर पर सामान धरे अन्दर
जा रहे थे ।

घर में पहुँचते ही माँ बोली — इतनी देर कहाँ था बेटा ?

दीपंकर बोला — हमारे मकान में फिर किरायेदार आया है माँ ? देखा ....

माँ बोली — वह तो देखा, लेकिन तू अब तक कहाँ था ?

दीपंकर बोला — इस बार का किरायेदार बहुत अमीर है माँ। कितने बड़े-बड़े पलंग, कितने बड़े-बड़े आईने और कैसी आलमारियाँ। ये लोग अघोर नाना से भी बड़े आदमी हैं। माँ, तुम चन्नूनी से मना कर दो कि वह इन लोगों से न लड़े।

दीया जलने के बाद पढ़ने बैठा तो दीपंकर आँगन की तरफ देखता रहा। देखा, मकान के उस हिस्से में बहुत-सी बत्तियाँ जल रही हैं। अनेक लोगों के बोलने की आवाज कानों में पड़ रही है। भोजन पकने की खुशबू उस तरफ से आ रही है। बड़ा अच्छा हुआ ! इतने दिन उधर का हिस्सा कितना अँधेरा लगता था। इतने दिन उधर देखने से डर लगता था। अब उस तरफ की रोशनी से इस तरफ के आँगन में उजाला रहेगा।

रात को बिस्तर पर लेटते ही दीपंकर एक आवाज सुनकर चौंक पड़ा। बड़ी अद्भुत आवाज। झुमुर-झुमुर-झुम-झुम-झुम।

दीपंकर ने पूछा — यह कैसी आवाज है माँ ?

दिन भर की कड़ी मेहनत के बाद तभी माँ की आँखें लगी थीं ; इसलिए बोली — क्या मालूम बेटा, कैसी आवाज है। .... अब तू सो जा।

थोड़ी देर बाद माँ शायद सो गयीं। लेकिन तब भी वह आवाज हो रही है। मानो घुंघरू बांधे कोई बगल के मकान में नाच रहा है। लेकिन इतनी रात को कौन नाच रहा है ? क्यों नाच रहा है ? लगा, किरायेवाले मकान के इकमंजिले के किसी कमरे से आवाज आ रही है। नाच के हर ताल पर रात का वायुमंडल भी झूमने लगा। माँ गहरी नींद सो रही है। मन में आया कि एक बार दौड़कर देख आऊँ। लेकिन अकेले अँधेरे में बिस्तर से उठने में डर लगा। लगा, रात बहुत हो गयी है — चारों तरफ मकानों की बत्तियाँ बुझने लगी हैं।

उसके बाद बहुत देर तक दीपंकर को नींद नहीं आयी। घुंघरुओं की स्वर-लहरी के संग वह भी लहराने लगा। फिर ईश्वर गांगुली लेन में और भी खामोशी छा गयी। तब घुंघरुओं की आवाज और साफ सुनाई पड़ने लगी। दीपंकर को लगा कि वह आवाज उसके एकदम पास आ गयी है — एकदम उसके बिस्तर के पास। एकदम उससे सटकर कोई पांवों में घुंघरू बांधे नाच रहा है। उसके बाद उसकी आँखों पर नींद उतर आयी। नींद से उसकी आँखें मुंद गयीं।

सहसा दक्षिण-पश्चिम कोने के केवड़ातल्ला मसान की तरफ से आये विकट चीत्कार से दीपंकर का सारा सपना चकनाचूर हो गया। वह चौंक पड़ा।

शायद किरण के बाप को वे लोग श्मशान की तरफ ले चले हैं !

अब तक दीपंकर को वह बात एकदम याद नहीं थी। कैसा आश्चर्य है ! उसे

लगा कि यह भी कैसा आश्चर्य है। इतनी देर तक क्या यह घुंघरुओं की आवाज नह
सुन रहा था ? क्या वह अब तक सपना देख रहा था ?

. . . .

●●●

बहुत दिन पहले की बात है। देखते ही देखते कितने दिन हो गये। फिर भी लगता है कि मानो कल की बात है। मानो कल ही उसकी नौकरी लगी। माँ नृपेन बाबू के हाथ पर तैंतीस रुपये रख आयी। फिर नौकरी की चिट्ठी आयी। फिर दीपंकर सेन एक दिन अचानक सेन साहब बन गया। पहले पहल कैसा अजीब लगता था। लेकिन उसके बाद सब बरदाश्त होता गया। उस-सब की आदत पड़ गयी। फिर वे तैंतीस रुपये कब और कैसे तेरह सौ हो गये, वह भी अपने में एक इतिहास है। हाँ, इतिहास ही तो है। मर्मान्तिक इतिहास। दीपंकर के साथ सारे देश का इतिहास बदल गया। ...ब कुछ नया हो गया। कब एक दिन अचानक उसके जीवन में लक्ष्मी दी आयी थी ...र वह लक्ष्मी दी उसके जीवन में चिरस्थायी बन गयी। फिर कब एक दिन उसके ...वन में सती आयी, और वह सती भी उसके जीवन में एकदम चिरस्मरणीय बन ...ी।

उसी ईश्वर गांगुली लेन से शुरू हुआ। वह इतिहास शायद गड़ियाहाट के ...निवल क्रासिंग पर आकर खत्म हुआ।

पहले दिन सचमुच दीपंकर कुछ समझ नहीं पाया था। उस दिन पहले तो वह ...ं में पड़ गया था। अघोर नाना के किराये पर दिये गये उस मकान में आती ...ं की झुम-झुम आवाज को उस दिन उसने सपना ही समझा था। वह रात उसने ...बिता दी थी। सवेरे माँ के पुकारने पर उसकी नींद खुली।

...माँ ने पुकारा — उठ, उठ जा दीपू .... दिन चढ़ आया है।

...दीपंकर ने आँखें खोलकर चारों तरफ देखा। वह तो अघोर नाना के उन्नीस ...बी ईश्वर गांगुली लेन के उसी मकान में सो रहा था। इसमें शक करने ...ा नहीं। बिस्तर छोड़कर वह आँगन में आकर खड़ा हो गया। उस समय ...ह, सभा पुरी थी। छिटे और फोटा सब पर आये हैं, सब सोये हैं, या आये

हो नहीं, सोये भी नहीं — इस सब की खबर कोई नहीं रखता। माँ रसोईघर में खाना पकाने लगी है। बरामदे में सिल-बट्टा रखा है। भोजन पकाते-पकाते एक-दो बार माँ को मसाला पीसना पड़ता है। एक-दो बार हँसिये से सब्जी काटनी पड़ती है। बीसवीं सदी के दूसरे-तीसरे दशक की बात है। दुनिया में बहुत बड़ी लड़ाई हो गयी है। मानव जीवन का घाव उस समय भी ठीक से सूखा नहीं। जो लोग लड़ाई में गये थे — उनमें से कुछ मेसोपोटामिया या फ्रांस से लौटे हैं। कुछ लौटे भी नहीं। जो लोग लौटे हैं, वे मुहल्ले के चबूतरे पर बैठे लड़ाई के किस्से सुनाते हैं। सब मुँह बाये उनको सुनते हैं। किसी-किसी को नौकरी मिल गयी है। पुलिस की नौकरी या रेलवे की नौकरी। अच्छी-अच्छी तनख्वाह की नौकरियाँ दी हैं ब्रिटिश सरकार ने। मुहल्ले में वे लोग सीना तानकर चलते हैं। बड़े भाग्य से वे लड़ाई में गये थे। अगर लड़ाई न रुकती तो और भी बहुत से लोग जाते। लड़ाई में बड़ा आराम था। मछली, मांस, अंडे और डबलरोटी रोज सुबह-शाम। फिर चाय। जितनी इच्छा हो चाय पियो। काम तो बस परेड करना। हाँ, भरपेट खाना मिले तो परेड करने में क्या हर्ज!

बूढ़े लोग कहते — अरे भाई, स्वराज-स्वराज कर रहे हो, स्वराज मिल जाने पर खाओगे क्या? अंग्रेज अगर चले जायँ तो तुम लोगों की खबर कौन लेगा? उस समय अगर जापान एक घुड़की दे तो 'बाप रे' कहकर भागने लगोगे। तुम लोगों की जवाँमर्दी देख चुके हैं।

नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट के मधुसूदन के चबूतरे पर रोज सवेरे मजमा जुटता है। फिर वह मजमा बारह बजे तक चलता रहता है। 'अमृतबाजार' में छपे समाचारों पर बहस चलती।

मधुसूदन का बड़ा भाई कहता — यह देखिए चाचा, सी० आर० दास क्या कह रहा है ....

दूनी चाचा कहता — अरे, कहना जितना आसान है, करना उतना आसान नहीं है। कहने में कोई खर्चा नहीं लगता। बंगालियों का सारा पराक्रम बस जबान पर, जबान चलाकर वे किला मार लेते हैं! बारीन घोष की तरह बम फेंकने से अगर स्वराज मिलता तो रोना किस बात का था। अंग्रेज हैं, इसलिए सबको खाना मिल रहा है — मैं तो साफ बोलना पसन्द करता हूँ।

उसके बाद बदन से शाल उतारकर एकाएक आक्रामक मुद्रा में उठ खड़ा होता।

कहता — अच्छा, रहने दे वह सब बात। अगर अंग्रेज बोरिया-बिस्तर बाँधकर चले जायें तो ये राइफल, बंदूक, और गोली कहाँ से मिलेगी? कहाँ से आयेगी मिलिटरी? यह सब कहाँ से मिलेगा, यही मुझे समझा दे!

इसी मजमे के सामने से दीपंकर स्कूल जाता है। जाते-जाते कभी शोरगुल सुनकर रुक भी जाता है। उन लोगों की बातें सुनता। बहुत सी बातें वह समझ नहीं सकता

है। फिर भी न जाने क्यों सुनने में मजा आता है। बड़े लोग बड़ी. बातों में सिर खपाते हैं। वह सोचता कि एक दिन मैं भी बड़ा हो जाऊँगा। शायद तब इनकी बातें समझ में आयेंगी।

शशांक बाबू उस दिन क्लास में नहीं आये। शशांक बाबू बंगला पढ़ाते हैं। दीपंकर आगे की बेंच पर बैठा है। अभी तक किसी से बात करने का मौका नहीं मिला।

फटिक बगल में बैठा है। दीपंकर ने फटिक से कहा — अरे, जानता है, किरण का बाप कल मर गया।

फटिक आश्चर्य में पड़ गया। बोला — तुझे कैसे मालूम ?

आगे बात न हो पायी। अचानक प्राणमय बाबू क्लास में आये। बहुत दिन बाद वे स्कूल में आये हैं। हमेशा की तरह उनके मुँह में पान भरा है, गद्दर की चादर जैसे-तैसे बदन पर पड़ी है, रूखे बाल बेतरतीब हैं और जूतों के पीछे के उठे हुए चमड़े मुड़कर चप्पल की शक्ल में आ गये हैं।

प्राणमय बाबू के क्लास में आते ही सब लड़के खामोश हो गये। पीछे की बेंचों पर बैठे जो लड़के शोर मचा रहे थे, वे चुप हो गये।

प्राणमय बाबू कुर्सी पर बैठकर बोले — आज तुम लोगों को क्या पढ़ना है ?

दीपंकर मानीटर है। उसने खड़े होकर किताब दी और कहा — बंगला व्याकरण सर।

— व्याकरण !

प्राणमय बाबू ने किताब ली। उसके बाद एक-दो पन्ने पलटकर उन्होंने किताब बन्द कर दी। फिर से पता नहीं, अपने मन में क्या सोचने और पान चबाने लगे। फिर बोले — आज शशांक बाबू की तबीयत ठीक नहीं है, इसलिए मैं आया हूँ। व्याकरण तुम लोग शशांक बाबू से पढ़ लेना। मैं तुम लोगों को एक दूसरी चीज पढ़ाऊँगा।

यह कहकर वे थोड़ी देर चुप रहे। फिर बोले — व्याकरण किसे कहते हैं ? बता सकते हो ? तुम ? .... तुम ? .... तुम ?

सामने के कई लड़कों से उन्होंने पूछा। सब मुँह ताकते रहे। कोई जवाब न दे सका।

प्राणमय बाबू के पढ़ाने का ढंग ही अलग है। जब भी वे कुछ कहते थे, सब चुप रहते थे। उनसे कितनी ही बातें जानने को मिलती थीं। वे देर तक बोलते थे, चुपचाप बोलते थे। दीपंकर को लगता कि कोई कहानी सुना रहा हो। प्राणमय बाबू का ढंग ही कहानी सुनाने की तरह था।

प्राणमय बाबू ने फिर पूछा — तुम सब दाँत साफ करते हो ?

सबने एक साथ उत्तर दिया — हाँ सर !

—तुम सब बालों में तेल लगाते हो ?

—हां सर।

—नाखून काटते हो ?

—हां सर।

प्राणमय बाबू कहने लगे—फिर तुम लोग समझ पाओगे कि क्यों मैंने यह सब पूछा। तुम ये सब क्यों करते हो ? इसलिए कि इससे शरीर स्वस्थ रहता है। इसी तरह कुछ नियम हैं, जिनका पालन करने से, भाषा शुद्ध होती है। वे ही नियम जिन किताबों में लिखे रहते हैं, उनका नाम व्याकरण है।

जो अब तक सबके लिए दुर्बोध था, इतने दिन बाद वह सरल हो गया।

थोड़ी देर चुप रहकर प्राणमय बाबू ने फिर पूछा—तुम सब सपने देखते हो न ?

सब ने एक साथ कहा—हां सर!

—अच्छा बताओ तो, तुमने कल क्या सपना देखा था ?

जरा देर सोचकर फटिक ने कहा—मैंने कल कोई सपना नहीं देखा सर!

—तुमने देखा है ?

अब मधुसूदन की बारी है। मधुसूदन ने खड़े होकर कहा—मैंने एक बुरा सपना देखा है सर!

—ठीक है, कैसा बुरा सुनूं तो ....

मधुसूदन ने कहा—सर, मैंने देखा कि मानो मैं माँ काली के मंदिर में प्रणाम करने गया हूं। अचानक मुझे लगा कि मां काली जिंदा होकर मेरी तरफ आयीं और उन्होंने मुझे अपने खड्ग से बोटी-बोटी काटना शुरू किया ....

—उसके बाद ?

—उसके बाद सर, मैं देखने लगा कि मेरे हाथ-पांव सब टुकड़े-टुकड़े होकर मेरे सामने गिरने लगे। मेरा धड़ गिरा। मेरा सिर भी गिरा। सारे मंदिर में खून ही खून हो गया और मैं आश्चर्य से उधर देखता रहा।

—उसके बाद क्या देखा ?

—उसके बाद मां काली ने कहा—अब मेरे साथ चल। मैं उनके साथ चलने लगा। चलते-चलते सोने के कार्तिक वाले घाट के पास गया। उसके बाद माँ काली पानी में उतर गयीं। लेकिन मैंने ज्यों ही पानी में पाँव डाला, ठंडक से पाँव झनझना गया और मेरी नींद खुल गयी।

प्राणमय बाबू ने कहा—इसकी भी व्याख्या है। स्वप्न का भी व्याकरण है। तुम सब बड़े होकर जब वे किताबें पढ़ोगे तब इन सपनों का मतलब समझ सकोगे।

उसके बाद प्राणमय बाबू ने दीपंकर की तरफ उंगली से इशारा किया और कहा—और तुम ?

दीपंकर अब तक यही सोच रहा था।

दीपंकर खड़ा हो गया। बोला — मैंने सर, सपने में देखा है कि मेरे ब... मकान में कोई नया किरायेदार आया है। अचानक मुझे उस मकान में अद्भुत ... सुनाई पड़ने लगी ....

— कैसी आवाज ?

दीपंकर ने कहा — घुंघरुओं की आवाज। लगा, पाँवों में घुंघरू बाँधे ... नाच रहा है। मैं देर तक कान लगाकर सुनता रहा, घुंघरुओं की आवाज बराबर ... लगी। बड़ी मीठी आवाज — सुनते-सुनते नींद आने लगी।

— उसके बाद ?

— उसके बाद सर, मुझसे रहा न गया। घुंघरुओं की आवाज मुझे खींच... लगी। मैं उतनी रात को बिस्तर छोड़ उठ पड़ा और उठकर आँगन पार कर उसी ... तरफ गया जिधर से घुंघरुओं की आवाज आ रही है। बगलवाले मकान की नीचे की ... मंजिल में एक खिड़की है। उसी खिड़की का पल्ला जरा-सा खोलकर खोरी से झाँककर ... देखा कि ....

— क्या देखा ?

— देखा कि सर, कमरे में बत्ती जल रही है और खूब सजधजकर एक भालू ... ठुमक-ठुमक कर नाच रहा है।

— भालू ?

— हाँ सर ! मैं आश्चर्य में पड़कर सोचने लगा कि यह भालू कहाँ से आ गया ? इतने में केवड़ातल्ला के मसान से बड़े जोर से 'हरि बोल' की आवाज आयी, और मेरी नींद खुल गयी।

प्राणमय बाबू ने कहा — इसका भी एक व्याकरण है। लेकिन अभी वह सब रहने दो, जब तुम लोग बड़े हो जाओगे, तब पढ़ोगे। लेकिन एक और तरह का भी सपना है, जिसके बारे में आज मैं तुम लोगों से कहूँगा। वैसा सपना तुम लोग नहीं देखते। संसार में जो महापुरुष पैदा हुए हैं, केवल वे वैसा सपना देखते हैं। सी० आर० दास, महात्मा गांधी, बाल गंगाधर तिलक, मोतीलाल नेहरू जैसे महापुरुष हैं। इन लोगों ने देश को स्वाधीन बनाने का सपना देखा है। जब तुम लोग बड़े हो जाओगे तब इनकी किताबें पढ़ना। इनमें से किसी का सपना सच भी निकला है और किसी का अभी तक सच नहीं निकला। लेकिन इनका सपना कभी झूठा नहीं होता। इनका सपना जरूर सच निकलना है। बड़े होकर जब तुम लोग इतिहास पढ़ोगे, तब देखोगे हमारे देश में उस सपने को सच्चा बनाने के लिए कितने लोगों ने अपनी जान दी ... कितने लोग अंग्रेजों के जेलखाने में सड़े हैं। सन् उन्नीस सौ उन्नीस ईस्वी में ... की तरह तोपों को जनरल ओ'डायर ने पंजाब में कैसे तीन सौ लोगों को ... बनाकर मार डाला था, सन् उन्नीस सौ इक्कीस ईस्वी में क्यों असहयोग ...

हुआ था और क्यों मलाबार में मोपला विद्रोह हुआ था, यह सब तुम लोग उसी समय समझ सकोगे। फिर यही जो आज हमारे बड़े लाट ....

इतने में किरण आता दिखाई पड़ा। वह दबे पाँव क्लास में आ रहा था।

किरण ? आश्चर्य है ! उसका तो बाप मर गया है, और वह स्कूल आया है।

बाहर ठन से घंटा बजा।

प्राणमथ बाबू ने पूछा — तुमने इतनी देर क्यों कर दी ?

किरण ने खड़े होकर कहा — मेरी तबीयत खराब हो गयी थी सर ....

— ठीक है, बैठो। प्राणमथ बाबू ने कहा। फिर दीपंकर को उसकी किताब देकर वे क्लास से निकल गये।

प्राणमथ बाबू के जाते ही दीपंकर किरण के पास जा खड़ा हो गया।

दीपंकर ने पूछा — क्यों रे, तेरा बाप नहीं मरा है ? मैं तो फटिक से तेरे बारे में कह रहा था ....

किरण ने कहा — भाई, मैंने झूठमूठ बिगड़कर साधु को गाली बक दी की थी। मेरा बाप मरा नहीं है।

— फिर तेरी माँ क्यों रो रही थीं ?

किरण बोला — बाप तो बोल नहीं सकता, एकदम सुन्न पड़ा था। नब्ज नहीं मिल रही थी। माँ ने सोचा, शायद मर गया है। आखिर वैद्य ने आकर देखा और कहा कि जिन्दा हैं।

उसके बाद हाथ नचाकर किरण ने कहा — अरे, मैं जानता था कि बाप अभी नहीं मरेगा। उसकी बीमारी कुछ दिन बाद ठीक हो जायेगी, उस समय हम लोगों की हालत सुधर जायेगी और हमारे पास बहुत रुपया हो जायेगा।

— तुझे कैसे मालूम हुआ ?

किरण बोला — उस साधु ने कहा है। बड़े सच्चे साधु हैं। तू तो नहीं जानता, कदम हिमालय के असली साधु हैं।

स्कूल की छुट्टी के बाद दीपंकर ने कहा — आज उस साधु के पास चलेगा ण ?

किरण ने कुछ सोचा, फिर कहा — आज नहीं। आज जनेऊ बेचना है। माँ स एक भी पैसा नहीं है। बाप की दवा लेने में सब खर्च हो गया है। कल जरूर ....

— चलेगा न ?

किरण ने पूछा — क्यों रे, तू क्यों साधु के पास जायेगा ? तुझे क्या जरूरत पड़

— ऐसे ही।

उस दिन दीपंकर ने किरण के सवाल को टाल दिया था। फिर यह भी तो

सच है कि आखिर वह साधु के पास क्यों जायेगा? क्या उस दिन वह कुछ भी नहीं जानना चाहता था? माँ का दुःख कब दूर होगा? कितने दिन और माँ को दूसरे के घर खाना पकाना पड़ेगा? इस तरह और भी कितने सवालों का जवाब वह चाहता था। कितने दिन बाद किन्ती दी की शादी अच्छे घर में अच्छे वर से होगी। कितने दिन बाद अघोर नाना को अपनी आँखों की रोशनी मिल जायेगी और तब उन्हें दिखाई न पड़ने के कारण ठाकुरजी का नैवेद्य चुराना नहीं पड़ेगा? एक बात और साधु से पूछने को मन करता है। क्या सब कुछ रुपये से खरीदा जा सकता है? सब कुछ रुपये के बदले में मिल जाता है? सब कुछ?

शाम को दीपंकर खूब मन लगाकर पढ़ने बैठा है। माँ अभी भी रसोईघर में खाना बना रही है। चन्नूनी बहुत देर से चिल्ला-चिल्लाकर पता नहीं किससे झगड़ रही थी, अब वह भी थककर चुप हो गयी है। दीया जलने के बाद अघोर नाना की आहट तक नहीं मिलती। उस समय वे अपने कमरे की बत्ती बुझाकर पता नहीं क्या करते हैं। धीरे-धीरे आसपास हवा के संग खिसकता धुआँ छँट जाता। तब ईश्वर गांगुली लेन भी ऊँघने लगता। कुलफी बरफ वाले की हाँक, घुघनी वाले की पुकार तब थम जाती है। तभी मन लगाकर पढ़ सकता है दीपंकर। ठीक उसी समय उसे लगा कि कलवाली आवाज फिर हो रही है — वही घुंघरुओं की आवाज।

न जाने कैसा अनमना हो गया दीपंकर।

प्राणमथ बाबू ने कहा था कि किसी-किसी का सपना सच निकलता है। किसी-किसी का सपना नहीं उतरता है!

दीपंकर ने एक बार सोचा कि माँ से जाकर पूछूं। लेकिन माँ उस समय रसोईघर में खाना पका रही है। दीपंकर कमरे के बाहर आया। अघोर नाना के मकान के उत्तरी हिस्से में किरायेदार रहता है। मकान के उस हिस्से की पहली मंजिल के सभी कमरों में बत्तियाँ जल रही हैं। घुंघरुओं की आवाज उसी पहली मंजिल के किसी कमरे से आ रही है। फिर तो यह सपना नहीं है? सच है?

धीरे-धीरे दीपंकर आँगन में उतर आया। दबे पाँव वह आँगन के आखिरी छोर पर पहुँचा। वहाँ अमड़े का एक पेड़ है। उस पेड़ के नीचे काफी अँधेरा है। उस अँधेरे में खड़े होने पर कोई नहीं देख सकेगा।

पहली मंजिल के कमरे में आवाज हो रही है! क्या भानु सचमुच नाच सकता है? क्या उन लोगों ने भानू पाल रखा है?

धीरे-धीरे दीपंकर खिड़की के पास गया। उसने खिड़की की झिलमिली की एक पटरी धीरे से उठा दी। फिर वह झाँककर देखने लगा।

दीपंकर ने हैरान होकर देखा — भानु नहीं, एक लड़की है।

उस लड़की ने साड़ी का आँचल कमर में कस लिया है। सिर का जूड़ा भी कसा-कसा है। दोनों पाँवों में घुँघरू बँधे हैं और वह अपनी धुन में हिलती-डोलती आगे-पीछे होती नाच रही है। उसके सामने एक शीशा है।

दीपंकर देर तक देखता रहा। लड़की अपनी धुन में शीशे के सामने नाचे जा रही है। किसी तरफ उसका ध्यान नहीं है। कभी वह हाथ हिला रही है, कभी सिर और कभी पाँव। पाँवों के ताल के साथ हाथ हिलाकर वह सहसा रुक जाती है, फिर दोबारा वैसा करने लगती है। विन्ती दी की उम्र की होगी। लेकिन विन्ती दी जैसी खूबसूरत नहीं। लेकिन यह खूब सजी है। विन्ती दी कभी इतना नहीं सजती।

— कौन ? कौन है रे ?

दीपंकर एकदम चौंक पड़ा। सीधा होकर उसने एक बार इस तरफ और एक बार उस तरफ देखा। मानो किसी ने कुछ कहा। लेकिन कहीं कोई दिखाई नहीं पड़ा। दीपंकर बुरी तरह डर गया।

लड़की तब भी नाचे जा रही है। अब दीपंकर ज्यादा देर वहाँ न रुका। अँधेरे में से निकलकर अमड़े के पेड़ के नीचे से आँगन पार कर वह अपने कमरे में आ गया। तब भी झुमुर-झुमुर झुम-झुम घुंघरुओं की आवाज उस मकान से सुनाई पड़ती रही।

● ● ●

लेकिन दूसरे दिन शाम को दीपंकर पकड़ा गया।

बड़ी लम्बी राह-कुराह पार करने के बाद दीपंकर के मन में आया कि ऐसा करने की क्या जरूरत पड़ी थी। वह भी तो और चार लोगों की तरह सहज साधारण जीवन व्यतीत कर सकता था। जैसा अभयंकर, रामूमर्ति और सोम ने किया। वे भी नौकरी कर रहे हैं। उन लोगों ने भी नौकरी में तरक्की की है, शादी की है, उन सबके भी बाल-बच्चे हुए हैं, सवेरे वे भी दफ्तर गये हैं, शाम को घर लौटकर गृहस्थी की देखभाल में लगे हैं और सिनेमा देखने गये हैं। उन लोगों को किसी बात का अभाव नहीं है। फिर दीपंकर को क्यों ऐसा हुआ ? वह भी एक दिन नौकरी करने लगा था। फिर और लोगों के साथ जैसा होता है, वैसा ही उसके साथ भी हुआ। नौकरी में उसने

ऐसी सरलता थी कि कोई सोच भी नहीं सकता था। लोग कहने लगे — सेन साहब !
लेकिन सेन साहब बनकर क्या हुआ ? सेन साहब बनकर भी बार-बार उसके मन में यही
ख्याल आया है कि अब मेरे अन्दर अपना कहने को कुछ बाकी नहीं रह गया। बाहर
की हवा और रोशनी से, बाहर के अन्न-जल से क्यों उसका ऐसा घनिष्ठ सम्पर्क हो
गया ! क्यों उसने उस दिन उस अमरूद के पेड़ के नीचे अँधेरे में खड़े होकर खिड़की
की झिलमिली की पटरी हटाकर झाँका था ? किस बात का आकर्षण था ? उस कम
उम्र में किसी और तरह का आकर्षण होना तो संभव नहीं था।

सचमुच दूसरे दिन शाम को दीपंकर पकड़ा गया था।

उस दिन भी किरण स्कूल आया था। स्कूल की छुट्टी के बाद दीपंकर ने
कहा — उस साधु के पास आज नहीं जायेगा ?

किरण बोला — साधु के पास शाम को जाऊँगा। उसके पहले चल मीटिंग
सुन आयें।

— कहाँ ?

— हरीश पार्क में।

हरीश पार्क में उस दिन बहुत बड़ी मीटिंग थी। पुलिसवालों से पूरी जगह
भरी थी। दीपंकर को न जाने क्यों शुरू में डर लगने लगा। खैर, वहाँ काफी लोग
जुटे थे।

किरण इस तरफ रोजाना अनेक बेचने आता है। उसको किसी बात का
डर नहीं है। बोला — चल, अन्दर चल।

अन्दर उस समय बहुत लोग जमीन पर बैठ गये हैं। कांग्रेस की मीटिंग है।
दो छोटी-छोटी मेजें। कार्बाइड गैस की बत्ती। अँधेरा हो जाने पर जलायी जायेगी।
दो भले आदमी कुर्सी पर बैठे हैं। आधे पार्क में लोग जमा हैं। बगल में दो-तीन और
कुर्सियाँ हैं। अखबार के लोग और पुलिस के रिपोर्टर कागज-पेन्सिल लिये बैठे हैं।

दीपंकर को याद है कि वह किसी का नाम नहीं जानता था। कौन प्रताप
गुहराय और ज्ञानांजन नियोगी और कौन सुभाष बोस यह सब वह कुछ नहीं जानता था।

दीपंकर ने पूछा — सुभाष बोस कौन है ?

किरण बोला — सुभाष बोस नहीं आया, ज्ञानांजन नियोगी आया है। देख
न, कैसा भाषण करेगा कि तू रोने लगेगा। लालटेन बायोस्कोप भी होगा।

सिर्फ भाषण नहीं, साथ में लालटेन बायोस्कोप भी दिखाया जाने लगा।
एक सफेद परदे पर तस्वीर दिखायी जाने लगी। एकदम असली बायोस्कोप
की तरह, लेकिन इतना ही फर्क है कि मानो बायोस्कोप की मशीन बिगड़ गयी है
और परदे पर एक ही तस्वीर दिखाई पड़ रही है। तस्वीर हिलती नहीं। लेकिन
भाषण सुनने पर सब समझ में आ जाता है। कैसे अंग्रेजों के सिपाहियों ने भारतवर्ष
पर कब्जा किया, कैसे अंग्रेजों ने बुनकरों की उँगलियाँ कटवा दीं, घर माइनर के

अन्याचार और वजवज में सिक्खों पर अत्याचार। सब तस्वीरें परदे पर दिखायी जा रही थीं और ज्ञानांजन नियोगी का भाषण चल रहा था। कैसा भाषण है। सब लोग चुपचाप सुन रहे हैं। एक के बाद एक अत्याचार। इसी तरह अत्याचारों का सिलसिला चलाकर अंग्रेजों ने भारतवर्ष पर अधिकार किया। अंग्रेज कितने दुष्ट हैं, बदमाश हैं, अत्याचारी हैं, यही एक के बाद एक तस्वीर में दिखाया जा रहा है।

ज्ञानांजन नियोगी ने कहा — हम मनुष्य हैं या पशु? हम पेड़-पौधे हैं या पत्थर? हम क्या हैं? हम मनुष्य भी नहीं हैं, पशु भी नहीं हैं। अगर पशु होते तो हम बिगड़कर खड़े हो जाते, विरोध करते, बदला लेते। अंग्रेजों ने हम पर गोलियाँ चलायी हैं, और हमने क्या किया? बताइए, हम लोगों ने क्या किया है?

किसी ने कहा — हमने उन लोगों की खुशामद की है।

ज्ञानांजन नियोगी ने कहा —नहीं, हमने अंग्रेजों के तलवे चाटे हैं।

बगल के किसी ने कहा — ठीक, ठीक कहा है।

ज्ञानांजन नियोगी का भाषण फिर चालू हुआ। वह क्वार का महीना था। मदारीपुर के रास्ते से मिस्टर कैटल जा रहे थे। साहब थे जूट मिल के मैनेजर। बगल में कालेज का छात्र सिर पर छाता लगाये चल रहा है। देखते ही साहब का नीला खून खौल उठा। इतनी बड़ी हिम्मत, कि साहब के सामने छाता लगाये चल रहा है। काला निगर, तेरी इतनी मजाल?

साहब ने कहा — छाता बन्द करो।

उस लड़के ने हैरान होकर पूछा — छाता क्यों बन्द करूँ?

साहब ने कहा — मेरा हुक्म है।

लड़के ने कहा — तुम कौन होते हो हुक्म देने वाले?

साहब ने कहा — देखोगे मैं कौन होता हूँ? देखो।

इतना कहकर उसने लड़के की पिटाई शुरू कर दी। बुरी तरह पिटाई। वह लड़का वहीं बेदम पड़ा रहा। साहब चला गया।

मामला कचहरी में पहुँचा। न्याय हुआ। जज ने राय दी — गलती लड़के की है। उसी ने साहब को उत्तेजित किया था। कैटल साहब का दोष नहीं है। उसके बाद स्टेपल्टन साहब खुद जाँच के लिए आये। जाँच के बाद उन्होंने कहा — अनन्त-मोहन दास और उसके तीन साथियों को मैजिस्ट्रेट के सामने पचीस बेंत लगायी जायेंगी। दोस्तो, अगर हम इन्सान होते तो हमारी पीठों पर उन बेतों के निशान बनते। हम लकड़ी और पत्थर हैं, इसलिए हम अंग्रेजों के तलवे चाटते हैं। और ये, जो हमारी बगल में बैठे इलिशियम रो के लिए रिपोर्ट लिख रहे हैं — इनके लिए क्या कहा जाय?

कहकर उन्होंने जूते पहने पाँव जमीन पर पटके।

इतने में अचानक कुछ पुलिसवाले, जो बाहर कहीं छिपे थे, लाठी घुमाते हुए

दौड़कर सभा में घुस पड़े। शोर मचा। जो लोग अब तक चुपचाप भाषण सुन रहे थे, दौड़ने लगे —

एकाएक किरण ने कहा — भाग दीपू। चल जल्दी भाग।

उसके बाद किधर गया किरण और किधर दीपकर। हरीन पार्क बहुत पीछे छूट गया। अँधेरा ज्यादा गहराया नहीं है। पता नहीं, वह किस गली में घुसा और कहाँ निकला। एकदम हाजरा रोड पर आ गया। उसके बाद थोड़ा और बढ़ने ही हाजी कासिम का मकान आया। बहुत बड़ा मकान। वहाँ से आगे चला तो वह रामधनी की पान की दुकान की बगल से हाजी कासिम के बाजार के पास आ गया। टीपू सुलतान का मकान जहाँ खत्म होता है वहाँ बरगद का विशाल पेड़ है। उस पेड़ के नीचे से सीधे चलकर आयुनगाकी के तालाब का चक्कर लगाते ही वह ईश्वर गांगुली लेन के शीतलातल्ला के पास पहुँच गया। अब जरा रुककर कुछ सोचने की हिम्मत पड़ी दीपंकर को। इधर किसी तरह का भागम-भाग नहीं है। दीपकर ने चारों तरफ अच्छी तरह देख लिया। अगल-बगल और आगे-पीछे कहीं कोई पुलिसवाला नहीं है। दौड़ते-दौड़ते वह हाँफने लगा है। इतनी देर बाद वह दम ले पाया। लेकिन किरण किधर गया? उसके साथ साधु के पास चलने की बात थी। वहाँ भी जाना नहीं हुआ। धीरे-धीरे वह ईश्वर गांगुली लेन की तरफ चलने लगा। बंकू की दुकान पर इस समय आलू चाप और पकौड़ों के खरीदार भीड़ करने लगे हैं। मधुसूदन के मकान के चबूतरे पर उस समय भी मजमा जुटा है।

मकान के अन्दर पहुँचकर आवाज लगायी — माँ!

उसे देखते ही माँ ने कहा — तू इतनी देर कहाँ था बेटा? मैं कब से बैठी सोच रही हूँ।

माँ तीसरे पहर के लिए लाई रख देती थी। सुबह-शाम नियम से लाई का नाश्ता मिलता था। गरमी में किसी दिन भीगा भात भी मिलता था। फिर उसके बाद निकलना मना था। दीया जलने के बाद पढ़ने बैठना पड़ता था। लेकिन पढ़ने बैठकर भी मन कहीं और लगा रहता है किरण अब क्या कर रहा होगा? शायद पुलिस की लाठी खाकर रास्ते में पड़ा है। नहीं तो लोग उसे अस्पताल ले गये हैं। ऐसी कितनी बातें मन में उठतीं।

माँ कहती — क्यों रे। तू किताब खोले क्या सोचे जा रहा है?

उसके बाद और ज्यादा अँधेरा होता तो माँ रसोईघर में चली जातीं। वहाँ वह खाना पकायेंगी। तब वह अकेला कमरे में अघोर नाना के सन्दूक से टिककर बैठा पढ़ने लगेगा।

उस दिन भी उसने ऐसा ही किया था। अचानक लगा कि झुमुर-झुम किर

घुंघरुओं की वही आवाज शुरू हो गयी। ठीक पहले दिन की तरह। बड़ा अजीव लगा। उसने तो सोचा था, भालू है। लेकिन भालू कैसे शहर में चला आयेगा ? और घुंघरुओं की आवाज क्यों होगी ? क्या कोई भालू पालता है ? लेकिन उस घर की लड़की क्यों नाचती है ? विन्ती दी तो नहीं नाचती ! अगल-वगल के किसी मकान में कोई लड़की नहीं नाचती। कितने ही लोगों के घर में लड़कियाँ हैं। ईश्वर गांगुली लेन, नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट, कालीघाट रोड, टालीगंज रोड, शाहनगर, कितनी जगह कितने लोग हैं, लेकिन किसी के घर कोई नहीं नाचता। उसने सोचा जरूर वे लोग हमारी तरह नहीं हैं। जरूर वे दूसरी तरह के लोग हैं। इसके पहले भी तो कितने लोग इस मकान में आये, लेकिन कोई ऐसे नहीं नाचा। अगर कोई नाचता तो जरूर पता चल जाता। पता नहीं, उतनी बड़ी लड़की नाचती कैसे है ? शरम नहीं लगती ?

रसोईघर के पास आकर दीपंकर खड़ा हो गया। माँ उस समय काम में जुटी है, चूल्हे पर सब्जी की कड़ाही चढ़ाई गयी है। कड़ाही चढ़ाकर माँ भात का माँड़ पसाने लगी है।

दीपंकर ने कहा — माँ !

माँ खीज गयी। वोली — पढ़ना छोड़कर यहाँ क्यों चला आया ? अव तेरी पढ़ाई हो चुकी। इसी तरह तू वड़ा होगा और आदमी वनेगा ?

अव कुछ पूछना न हो सका। दीपंकर ने सोचा था कि माँ से पूछूँगा कि वे लोग क्या हमारी तरह नहीं हैं ? अरे वही जो लोग नाच रहे हैं, वे क्या हमारी तरह नहीं हैं ? वे भी तो हमारी तरह वंगाली हैं, हमारी तरह कपड़े पहनते हैं और भात खाते हैं, फिर क्यों वे देखने में दूसरी तरह के लगते हैं ? क्या वे दूसरे के घर खाना नहीं पकाते ? क्या उनको कोई डाँट नहीं लगाता ?

याद है, दीपंकर उसी दिन समझ सका था कि कालीघाट के सव लोग एक तरह के हैं और वह किरायेदार दूसरी तरह का। शायद इसी लिए आकर्षण था। आसपास के सव लोग जो इस मुहल्ले और उस मुहल्ले में रहते हैं, वे इतने कीमती पलंग पर नहीं सोते, उनके पास इतनी अच्छी आलमारी नहीं है। दीपंकर को लगता था कि वे वहुत वड़े आदमी हैं और गलती से उन्नीस वटा एक वी ईश्वर गांगुली लेन वाला मकान उन लोगों ने किराये पर लिया है। उन लोगों का नौकर भी कैसा वावू लगता है। वह नौकर भी कैसे वाल संवारता है। हरीश मुखर्जी रोड की तरफ ऐसे लोग अच्छे लगते हैं। वैरिस्टर पालित के लड़के निर्मल पालित का परिवार उसी तरफ रहता है। लेकिन इतने अच्छे मुहल्ले में रहते-रहते, ये लोग इस मध्यमवर्गीय मुहल्ले में क्यों आ गये ? यहाँ किरण के घरवाले जैसे लोग, दीपंकर और उसकी माँ, चन्नूनी, मधुसूदन और प्राणमथ वावू ठीक लगते हैं। यहाँ अघोर नाना, छिटे, फोंटा और विन्ती दी ठीक हैं। वंकू की पकौड़ी की दुकान यहीं अच्छी लगती है।

मधुसूदन से ही दीपंकर को खबर मिल गयी थी।

मधुसूदन ने ही पहले कहा था। उसी ने पूछा था—तेरे मकान में कौन आया है रे दीपू?

दीपंकर ने कहा था—कब? मुझे तो नहीं मालूम।

मधुसूदन ने कहा था—हाँ, आया है। आते समय मैंने देखा है। बड़ी-बड़ी खाट और अलमारी तेरे मकान के सामने उतारी जा रही है और टैक्सी से गोरे-चिट्टे लोग उतर रहे हैं।

जरा रुककर मधुसूदन ने कहा था—सभी खूब गोरे हैं—एकदम अंग्रेजों की तरह।

मधुसूदन के चबूतरे पर जुटनेवाले मजमे में इसकी चर्चा हुई थी।

दुनी चाचा ने कहा था—अघोर भट्टाचार्य के मकान में ये सब कौन लोग आये? नये किरायेदार होंगे!

मधुसूदन के बड़े भाई ने कहा था—इस मुहल्ले में ऐसे लोग आये, आखिर बात क्या है? यह तो कौवों के बीच हंस वाली बात हो गयी!

सचमुच मुहल्ले भर में चर्चा होने लगी थी। इस मुहल्ले में कभी किसी जमाने में ऐसा किरायेदार नहीं आया। इस मुहल्ले के लोग पोई का साग खाते हैं और जरा सा प्याज मिल गया तो गरम मसाले का काम निकल गया। किसी मकान के सामने टैक्सी आकर खड़ी होती तो ये लोग हैरान हो जाते। पता लगाने लगते कि कौन आये हैं, और ये कितनी तनखाह पाते हैं। किसी को नयी धोती पहने देखा नहीं कि ये हाथ से उसकी जमीन परखने लगते और दाम पूछने। यह कालीघाट है, भवानीपुर या श्याम-बाजार नहीं है। आदिगंगा के पूरब किनारे का यह इलाका सिद्धिदायक बावन पीठों में से एक है। यहाँ तो ऐसे किरायेदार को नहीं आना चाहिए। इधर हरीश मुखर्जी रोड, उधर लैन्सडाउन रोड, और उससे भी उधर एलगिन रोड। फिर शम्भुनाथ पंडित स्ट्रीट है। ये सब बड़े लोगों के मुहल्ले हैं। उधर अघोर नाना के सब बड़े यजमान रहते हैं। उधर का ही कोई बड़ा आदमी सुप्रीम बटा एक की ईश्वर गांगुली लेन में आ गया।

दीपंकर ने फिर पुकारा—माँ!

कहना चाहकर भी दीपंकर वह बात कह न सका। माँ उस समय दाल छौंकने लगी थीं।

आँगन पार कर दीपंकर सोने के कमरे की तरफ आने लगा तो उसके कानों में वही झुमर-झुम आवाज पड़ी। रुक गया दीपंकर। फिर धीरे-धीरे अँधेरे की तरफ बढ़ा। अमड़े के पेड़ के नीचे जाकर थोड़ी देर वह सोचता रहा। बड़े लोगों का रंग-ढंग ही अलग है। वे लोग इस मुहल्ले में क्यों आये? उनके घर अगर कोई लड़का रहता तो बड़ा मजा आता। उसके साथ वह एक ही क्लास में पढ़ता। क्यों आये वे इस

मुहल्ले में ?

अचानक लगा कि घुंघरुओं की आवाज रुक गयी।

क्यों रुकी ?

एकाएक दीपंकर उस खिड़की के पास गया। उसने झिलमिली की पटरी को जरा-सा हटाकर अंदर झाँककर देखा —

— कौन ? कौन है रे वहाँ ?

चौंककर हटते ही एक आदमी ने दीपंकर का हाथ पकड़ लिया। उस अँधेरे में भी दीपंकर उस आदमी को पहचान गया। वही नौकर था —

नौकर उसका हाथ पकड़कर उसे घसीटता पीछे के दरवाजे से अन्दर ले गया। उसने हाथ छुड़ाने की कोशिश की। कहा — क्यों मुझे पकड़ा है ? वाह रे ! मैंने क्या किया है ?

अन्दर पहुँचकर नौकर ने कहा — चलो। रोज इस तरह झाँककर क्यों देखते हो ?

दीपंकर ने कहा — वाह रे, मैं रोज कहाँ देखता हूँ। घुंघरुओं की आवाज सुनी, इसलिए —

अन्दर किसी के बोलने की आवाज सुनाई पड़ी। कोई कह रहा था — पकड़ लाया रघु ? ले आ पकड़कर मेरे पास, मैं अभी बताता हूँ उसे —

बुरी तरह डर गया दीपंकर। उसने नौकर का हाथ छुड़ाकर भागना चाहा। लेकिन उस नौकर के बदन में बड़ी ताकत थी। उसने दोनों हाथों से पकड़ रखा थी। कहा — रोज-रोज झाँका करते हो। देखिए, दीदीमणि। भागना चाह रहा है।

अन्दर से दीदीमणि ने कहा — पकड़कर ला मेरे पास —

नौकर दीपंकर को घसीटता अन्दर ले गया। उस मकान में पीछे के हिस्से में लंबा और संकरा आँगन है। उसके बाद चबूतरा-सा। चढ़ने के लिए सीढ़ी बनी है। चबूतरे पर चढ़ते ही सामने कमरा है। कमरे में तेज रोशनी थी। दरवाजे पर कीमती परदा लटक रहा था। कई कमरों के आगे वैसा परदा लटक रहा था। नौकर उसे अन्दर ले गया तो उस लड़की ने कहा — अरे, यही है ? यह तो बहुत छोटा है। — कहाँ रहते हो ? क्या नाम है तुम्हारा ?

दीपंकर की आँखों में आँसू टपकने लगे। उसने कहा — मैंने कुछ नहीं किया है। मुझे ऐसे ही पकड़कर लाया है।

सिर उठाकर दीपंकर ने पास से देखा। शायद उस लड़की की आँखों में काजल है। खिड़की से झाँकते समय उसे साफ नहीं दिखाई पड़ा था। नाचने के लिए सिल्क की साड़ी कसो-कसी पहन रखी है। कानों में झुमके, जिनमें दो नग झलमला रहे हैं।

वह लड़की और पास आयी। उसने पूछा — क्या नाम है तुम्हारा ?

दीपंकर ने अब सीधे उसकी तरफ देखा। उसने उस लड़की की तरफ देखकर

अन्दाज लगाना चाहा कि कैसी सजा मिलेगी। उस लड़की के खूबसूरत चेहरे पर कहीं थोड़ी-सी रुखाई थी। इससे कोई आश्वासन नहीं मिलता और आतंक भी कम नहीं होता।

उस लड़की ने कहा—बताओ! तुम अपना नाम बताओ। जल्दी बताओ!

दीपंकर ने कहा—आप मेरी माँ से कह देंगी।

अब वह लड़की हँसी। उसके दाँत कितने सुन्दर थे। उसके हँसने से दीपंकर को थोड़ा आश्वासन मिला।

दीपंकर बोला—मेरी माँ को बता देने पर वे मुझे बहुत डाँटेंगी। अब मैं ऐसा नहीं करूँगा, मुझे छोड़ दीजिए—

—हाँ, हाँ, छोड़ देती हूँ, रघु तू बाहर जा—

रघु बाहर चला गया। अब वह लड़की रह गयी और दीपंकर रह गया।

लड़की ने कहा—बताओ, क्या नाम है तुम्हारा। तुम्हारी माँ से नहीं कहूँगी। तुम कहाँ रहते हो? छिपकर क्या देखते हो?

दीपंकर ने उस लड़की की तरफ देखकर कहा—सच कहता हूँ, मैं आपको देख रहा था, किसी और को नहीं।

वह लड़की जोर से हँस पड़ी। बोली—अरे, इतने से लड़के का शौक तो कम नहीं है! मुझे देख रहे थे? मुझमें देखने लायक क्या है? मैं बाघ हूँ या भालू?

दीपंकर ने कहा—मैंने सपना देखा था न—

—सपना? कैसा सपना? मुझे सपने में देखा था?

याद है दीपंकर को। उस दिन के अपने व्यवहार की बात याद कर वह अनेक बार हँसा था। बचपन में सचमुच बहुत बेवकूफ था वह। फिर पूरे कालीघाट मुहल्ले में उसने लक्ष्मी दी की तरह लड़की नहीं देखी थी। ईश्वर गांगुली लेन के आसपास जो लड़कियाँ थीं, उनमें लक्ष्मी दी की तरह कोई नहीं थी। वे लड़कियाँ जैसे साड़ी पहनती थीं, जैसे ब्लाउज पहनती थीं, वैसे साड़ी-ब्लाउज लक्ष्मी दी नहीं पहनती थी! न जाने कैसे लपेट-लपेटकर लक्ष्मी दी साड़ी पहनती थी, कि बहुत अच्छा लगता था।

लक्ष्मी दी ने पूछा था—तुम लोग कहाँ रहते हो?

दीपंकर ने कहा था—यहीं अघोर नाना है न, इन्हीं के मकान में हम रहते हैं। परसों मैंने सपना देखा था कि कोई घुँघरू बाँधे नाच रहा है और मैंने झाँककर देखा तो दिखाई पड़ा कि एक भालू पाँवों में घुँघरू बाँधे नाच रहा है—खूब नाच रहा है।

—लेकिन इतनी चीजें रहते, तुमने भालू का सपना क्यों देखा? क्या मैं भालू हूँ?

यह कहकर लक्ष्मी दी खूब हँसने लगी।

दीपंकर ने कहा—नहीं। प्राणमथ बाबू ने कहा था कि बड़े होकर दिखावे

पढ़ोगे तो समझ जाओगे। सपनों के अनेक माने होते हैं।

—प्राणमथ बाबू कौन हैं?

दीपंकर ने कहा—मैं जहाँ पढ़ता हूँ न, उसी धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल के हेड मास्टर हैं—उन्होंने कहा है कि जो बड़े लोग होते हैं, जैसे महात्मा गांधी, सी० आर० दास, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, उनके सपने सही निकलते हैं। इसलिए मैं भी देख रहा था कि मेरा सपना सही निकलता है या नहीं।

फिर जरा रुककर दीपंकर ने कहा—मुझे छोड़ दीजिए, अब मैं ऐसा नहीं करूंगा।

लक्ष्मी दी बोली—तुम्हें ऐसे नहीं छोड़ूंगी—

फिर आवाज लगायी—रघु—

रघु के आते ही लक्ष्मी दी ने कहा था—देख तो रघु, चाचाजी दफ्तर से लौटे हैं या नहीं।

कौन चाचाजी, कैसे हैं चाचाजी! उस समय यह सब कुछ भी नहीं जानता था दीपंकर। लेकिन उस समय उसे ऐसा लगा था कि शायद चाचाजी से कहकर यह लड़की मुझे पिटवायेगी। दीपंकर ने कहा था—मैं तुम्हारे पाँवों पड़ता हूँ, अब मैं ऐसा नहीं करूंगा। मेरी माँ को पता चल जायेगा तो वे मुझे बहुत डाँटेंगी।

रघु ने लौटकर बताया—चाचाजी घर पर हैं। चाय पी रहे हैं।

उस लड़की ने दीपंकर से कहा—चलो, चलो, ऊपर चलो।

दीपंकर ने कहा—मेरी माँ डाँटेंगी—

लड़की बोली—देखो तो मैं तुम्हारा क्या करती हूँ—अभी पता चलेगा!

इतना कहकर वह दीपंकर को खींचती अन्दरवाले चबूतरे से सीढ़ी चढ़कर ऊपर ले गयी। ऊपर का बरामदा भी खूब सजाया हुआ था। सभी कमरों के आगे परदा लटक रहा था।

उस लड़की ने दूर से आवाज लगायी—चाचाजी!

अन्दर से जवाब आया—क्या हुआ लक्ष्मी?

लड़की बोली—यह देखिए चाचाजी, चोर पकड़ लायी हूँ! यह देखिए—

यह कहती हुई वह लड़की दीपंकर को पकड़कर कमरे में ले गयी।

बोली—देखिए! बदन में ताकत खूब है—यह देखिए।

वह दीपंकर को घसीटती एकदम चाचाजी के सामने ले गयी।

दीपंकर ने देखा, एक सज्जन टेबिल के सामने बैठे चाय पी रहे थे। उनकी बगल में एक महिला बैठी थीं।

चाचाजी ने कहा—छोड़ दो, छोड़ दो लक्ष्मी। अरे, बेचारे को चोट लगेगी।

लक्ष्मी दी ने दीपंकर को छोड़ दिया और कहा—ऐसा दुष्ट लड़का है चाचाजी, कि क्या बताऊं। मुझे भालू कहता है।

चाचाजी ने कहा — अरे ! तुमने लक्ष्मी को कहा है ?

उस महिला ने कहा — देखिए तमाशा ! मैंने तभी आपसे कहा था, लेकिन आपने इतने मुहल्ले रहते यही मकान लिया —

चाचाजी ने दीपंकर की तरफ देखकर पूछा — तुमने लक्ष्मी को भानू कहा है ?

दीपंकर बोला — मैंने भानू नहीं कहा, कब मैंने इनको भानू कहा ?

चाचाजी ने पूछा — तुम्हीं भाँका करते थे ?

इतनी देर बाद लक्ष्मी दी एक कुर्सी पर बैठी। दीपंकर ने हैरान होकर चारों तरफ देखा। कितना बढ़िया सजाया हुआ कमरा था। इसके पहले जो किरायेदार थे, वे लोग घर को इतना सजाकर नहीं रखते थे।

लक्ष्मी दी बोलीं — मैंने कल ही रघु से कह दिया था चाचाजी, कि आज यह तैयार रहे। और जैसा मैंने सोचा था — आज भी यह आ गया।

चाचाजी के चेहरे की तरफ देखकर न जाने क्यों दीपंकर का डर कम होने लगा। देखने में चाचाजी कितने अच्छे लगते थे।

चाचाजी की पत्नी, चाचीजी भी चाय पी रही थी। बोलीं — मैंने तभी कहा था कि इस मुहल्ले में मकान न लीजिए। लेकिन आपने मेरी बात नहीं मानी।

दीपंकर ने कहा — मुझे छोड़ दीजिए, अब मैं ऐसा नहीं करूँगा।

चाचाजी ने कहा — वाह रे ! हम लोगों ने तुम्हें मारा है या पीटा है कि तुम ऐसा कह रहे हो ? क्या नाम है तुम्हारा ?

दीपंकर ने कहा — मेरा नाम है दीपंकर सेन। मैं अघोर नाना के घर रहता हूँ।

— अच्छा, अघोर भट्टाचार्य। वे तुम्हारे कौन हैं ?

— वे मेरे कोई नहीं हैं। वे हमारे गाँव के हैं। उन्होंने मुझे और मेरी माँ को अपने घर में रहने दिया है। वे मुझे कपड़े देते हैं और मुझे खूब प्यार करते हैं।

चाचाजी ने कहा — यह तो अच्छी बात है। खैर, मैंने सुना था कि वे बड़े कृपण हैं। लेकिन तुम रोज भाँका क्यों करते हो ?

दीपंकर बोला — मैंने परसों सपना देखा था कि कोई हमारे बगलवाले मकान में खूब नाच रहा है और भुमुर-भुम घुँघरुओं की आवाज आ रही है। उसके बाद कल स्कूल में हमारे हेड मास्टर प्राणमथ बाबू ने सब से पूछा — तुम लोगों ने क्या-क्या सपना देखा है ? मैंने जो देखा था, बताया।

— फिर क्या हुआ ? रुके क्यों, बताओ ?

दीपंकर ने कहा — कहूँगा तो आप नाराज होंगे।

चाचाजी ने कहा — नहीं, नहीं, नाराज क्यों हूँगा ? बताओ न, तुमने क्या सपना देखा था।

दीपंकर ने कहा — घुँघरुओं की आवाज सुनकर न जाने क्यों बड़ी इच्छा

हुई कि देख आऊँ, कौन नाच रहा है। फिर ऐसा लगा कि मैं उठकर आँगन पार कर आपके मकान के पास आया। वहाँ आकर लगा कि घुंघरुओं की आवाज नीचे की मंजिल के कमरे से आ रही है। मन में हुआ कि झाँककर देखूं कौन नाच रहा है। उसके वाद धीरे से खिड़की की झिलमिली की पटरी हटाकर देखा कि—

—क्यों रुक गये ? वताओ। क्या देखा ?

दीपंकर वोला—देखा एक भालू—

—भालू ? भालू नाच रहा है ?

कहते-कहते चाचाजी हो-होकर हँसने लगे। चाचीजी भी हँसने लगीं।

चाचाजी ने कहा—क्या कहते हो तुम ? लक्ष्मी भालू जैसी दिखाई पड़ी ?

चचीजी हंसती हुई वोलीं—क्या कहता है रे ? इतनी खूवसूरत लड़की, और तू उसे भालू कह रहा है ?

दीपंकर ने कहा—वह तो सपना था। सपना क्या सच होता है ? लेकिन सपना सच होता है या नहीं, यही देखने के लिए आज झाँका था। देखा कि मेरा सपना सही नहीं निकला। प्राणमथ वावू ने कहा है—जो महापुरुष होते हैं, उन्हीं के सपने सही होते हैं। मैं तो गरीव का लड़का हूँ, मेरा सपना क्यों सही निकलेगा ?

चाचाजी ने कहा—खूव मन लगाकर पढ़ना-लिखना। याद रहेगा न इस ? वार कैसा रेजल्ट हुआ था ?

दीपंकर वोला—मुझे हर वार पोजीशन मिलता है।

—वाह ! वेरी गुड। कौन तुम्हें पढ़ाते हैं ?

दीपंकर वोला—मैं खुद पढ़ता हूँ। गणित किरण के पिताजी से समझ लेता हूँ। किरण के पिताजी वहुत वढ़िया गणित जानते हैं।

—तुम लक्ष्मी से गणित और अंग्रेजी पढ़ लिया करना। सुनो, लक्ष्मी तुम्हें खूव वढ़िया अंग्रेजी सिखा देगी। लक्ष्मी वहुत अच्छी अंग्रेजी जानती है।

लक्ष्मी दी वोली—वाह चाचाजी, आप भी खूव हैं ! मेरे पास टाइम कहाँ है ? मेरी अपनी पढ़ाई पूरी नहीं होती, फिर सिलाई है, नाच है—

चाचाजी ने कहा—ठीक है वेटा, गरीव का लड़का है। थोड़ा-वहुत वता देना—

मानो एकाएक दीपंकर की हिम्मत वढ़ गयी। उसने कहा—पहले गाँव में रहते समय हम लोगों की हालत वहुत अच्छी थी। मेरे पिताजी को डाकुओं ने मार डाला था, तभी से मेरी माँ कलकत्ते आकर अघोर नाना के घर खाना वनाती हैं। अगर अघोर नाना हमारी मदद न करते तो हम कभी के मर गये होते।

चाचाजी ने कहा—ठीक है, तुम आना। लक्ष्मी तुम्हें पढ़ा दिया करेगी।

लक्ष्मी दी ने कहा—तव तो मेरी अपनी पढ़ाई नहीं हो पायेगी चाचाजी !

चाचाजी ने कहा — सती भी तो कलकत्ते आ रही है। वह आयेगी तो तुम्हीं उसे पढ़ाओगी। उसके साथ इसे भी पढ़ा देना।

दीपंकर बोला — अंग्रेजी ही कठिन लगती है। गणित तो मैं किरण के पिताजी से पूछ लूँगा।

चाचाजी ने कहा — अंग्रेजी, गणित और बंगला, सब तुम्हें लक्ष्मी पढ़ा देगी। लक्ष्मी बहुत अच्छी स्टूडेंट है। वह मुझे भी पढ़ा सकती है। है न लक्ष्मी? इस बार उसे दस रुपये स्कॉलरशिप मिला है।

फिर चाचाजी ने लक्ष्मी से कहा — तुम्हारे रिजल्ट की खबर जानकर तुम्हारे पिताजी बहुत खुश हुए हैं लक्ष्मी। उन्होंने लिखा है कि सती को भी यहीं भेज देंगे। एक साथ दोनों बहनें यहीं पढ़ेंगी।

लक्ष्मी दी ने कहा — एक साथ कैसी पढ़ाई होगी, यह मैं समझ रही हूँ। सती को तो आपने नहीं देखा चाचाजी!

चाचीजी ने कहा — सती जब बहुत छोटी थी, तब उसे देखा था। खूब याद है। तेरी तरह गोरी है न?

लक्ष्मी दी ने कहा — सती अब ऐसी हो गयी है कि उसे देखकर आप पहचान नहीं सकेंगी चाचीजी। एकदम मेरे बराबर बड़ी हो गयी है।

इतने में एक आदमी कमरे के दरवाजे के पास आकर खड़ा हो गया।

चाचीजी ने पूछा — क्या है ठाकुर? कुछ कहोगे?

रसोइये ने कहा — खाना तैयार हो गया है माँ — लगा दूँ?

चाचीजी बोलीं — क्या कहते हो ठाकुर, अभी तो चाय पी है, अभी खाना खा लें? तुम तो अपना काम जल्दी-जल्दी निपटा लेना चाहते कि छुट्टी मिल जाय। हम थोड़ी देर बाद खायेंगे। तुम्हें बुला लूँगी।

दीपंकर ने कहा — मेरी माँ घबड़ा रही होंगी। अब मैं जाऊँ —

चाचाजी ने कहा — अच्छा, जाओ। रात हो गयी है — जाओ पढ़ो।

न जाने दीपंकर को क्या हो गया। अचानक उसका मन कृतज्ञता से भर उठा। उसे ऐसा लगा कि इतना स्नेह, इतना प्यार और इतनी सहानुभूति उसे जीवन में कहीं नहीं मिली। उसने अचानक चाचाजी के पाँवों के पास झुककर उनके पाँव छुए और हाथ सिर से लगाया। उसके बाद उसने चाचीजी को भी प्रणाम किया।

इतने दिन बाद उन दिनों के बारे में सोचना न जाने क्यों दीपंकर को अजीब लगता है। उन लोगों से उसका कोई सम्पर्क नहीं था, कभी भी नहीं था। उसने पहले कभी उन लोगों को देखा नहीं था। लेकिन उस दिन उसे बड़ा अच्छा लगा था। सिर्फ स्नेह का थोड़ा स्पर्श पाना ही अच्छा नहीं लगा वरन् उस दिन उस घटना के सिलसिले में उन लोगों से उसका परिचय भी हो गया था। जब दूसरों की दया पर निर्भर रहना उसके जीवन का एकमात्र अवलम्बन था, उस समय उसने क्यों उन

लोगों से घनिष्ठता बढ़ा ली थी, यह कोई नहीं जानता। अगर ऐसा न होता तो क्या जीवन को वह इस तरह जान पाता? क्या वह दुनिया को इस तरह समझ सकता? क्या वह महसूस कर पाता कि जीवन सिर्फ जीवन ही नहीं है, दुःख सिर्फ दुःख ही नहीं है और सुख सिर्फ भी सुख नहीं है — जीवन का एक दूसरा अर्थ भी है, दुःख की एक दूसरी व्याख्या भी है और सुख का एक दूसरा अभिप्राय भी है।

और लक्ष्मी दी?

हाँ, यह भी सच है कि लक्ष्मी दी आयी थी, तभी तो सती आयी।

और सती आयी थी, तभी तो दीपंकर समझ सका था कि जीवन का एक दूसरा अर्थ भी है, दुःख की एक दूसरी भी व्याख्या है और सुख का एक दूसरा उद्देश्य भी है।

कमरे से निकलकर सीढ़ी से उतर रहा था दीपंकर। नये किरायेदार आने के बाद उसने देखा कि सचमुच मकान की शक्ल ही बदल गयी थी। अन्दर से इतना बदल गया है, यह तो बाहर से पता ही नहीं चलता था। अघोर नाना मकान के जिस हिस्से को किराये पर उठाते हैं इन लोगों ने रातों रात उसका रूप अंदर ही अंदर बदल दिया था। खिड़कियों पर फूलों के गमले थे और दरवाजों पर परदा। मेज, कुर्सी, कोच, सोफा, अलमारी, आईना — किसी चीज की कमी नहीं थी। दीपंकर धीरे-धीरे सीढ़ी उतर रहा था। शायद अब तक माँ सोचने लगी हो। हो सकता है — ढूँढ़ने लगी हो कि दीपू कहाँ चला गया —

सीढ़ी से नीचे उतरते ही किसी ने पीछे से उसे पुकारा।

— अरे लड़के, सुन!

दीपंकर ने पीछे मुड़कर देखा। वही लड़की है। लक्ष्मी।

उसने कहा — मुझे बुला रही हैं?

वह लड़की खटाखट सीढ़ी से नीचे उतर आयी और सामने आकर दीपंकर से सटकर खड़ी हो गयी।

दीपंकर ने उस लड़की की तरफ देखा तो उसकी आँखें देखकर डर गया। उन आँखों में तो अब तक ऐसी दृष्टि नहीं थी।

उसने कहा — आप मुझसे कुछ कहेंगी?

वह लड़की बोली — फिर कभी मेरे घर आयेगा तो तेरी टाँग तोड़ दूँगी।

— वाह रे, मैंने क्या किया है?

अचानक उस लड़की ने उसका कान पकड़ लिया, फिर कहा — जबान चला रहा है?

उस लड़की ने कसकर कान पकड़ रखा था।

दीपंकर ने कहा — मैं कहाँ जबान चला रहा हूँ?

— फिर जबान चला रहा है? तू फिर कभी इस मकान में मत आना, यही

बता दिया —

दीपंकर ने कहा — चाचाजी ने तो आने के लिए कहा है !

— चाचाजी ने कहा तो क्या हुआ । मैं कह रही हूँ — मत आना !

उस लड़की का रंग-ढंग देखकर दीपंकर अब डर गया ।

उसने कहा — नहीं, अब नहीं आऊँगा ।

— हाँ, अब मत आना ।

यह कहकर उसने दीपंकर को धकेल दिया और दीपंकर सीढ़ी के नीचे मुँह के बल गिरा । गिरते ही लगा कि सिर में काफी चोट आयी है । उठकर खड़ा हुआ तो उसने देखा कि लड़की उसी की तरफ आ रही है ।

डरते हुए दीपंकर ने कहा — मैं नहीं आऊँगा, नहीं आऊँगा लक्ष्मी दी । मैं अब कभी नहीं आऊँगा ।

अचानक वह लड़की हँस पड़ी । उसने पास आकर दीपंकर के सिर पर हाथ फेरा ।

पूछा — चोट लगी है ? ज्यादा चोट लगी है ।

दीपंकर ने कहा —आपने मुझे धकेलकर गिरा क्यों दिया ? मैंने क्या किया कि आप मुझे धकेल देंगी ?

लड़की बोली — मैं देखना चाहती थी कि तू डरता है या नहीं ।

दीपंकर बोला — अब मैं कभी आप लोगों के घर नहीं आऊँगा — चाचाजी के कहने पर भी नहीं । मुझे छोड़ दीजिए ।

अब वह लड़की प्यार करने लगी, कहने लगी — नहीं रे, मैं देख रही थी कि कि तू डरता है या नहीं । कल तू जरूर आना । समझ गया न, जरूर आना !

कहकर लक्ष्मी दी चली गयी । दीपंकर अवाक् उसी तरफ देर तक देखता खड़ा रहा । उसके बाद पीछे के दरवाजे से वह आँगन की तरफ बढ़ा । उस समय भी उसके सिर में दर्द हो रहा था ।

● ● ●

किरण ने पूछा — कल तू उसके बाद कहाँ गया ? मैं देर तक तुझे ढूँढ़ता रहा ।

दीपंकर ने कहा — मैं हाजी कासिम के बाजार की तरफ भागा था, उसके बाद आगुनखाकी तालाब का चक्कर लगाकर टीपू सुलतान के मकान के बगल से शीतलातल्ला होकर घर लौटा ।

सचमुच उन दिनों का बालीगंज अब पहचानने में नहीं आता । उन दिनों रासबिहारी एवेन्यू के मोड़ पर हाजी कासिम का बाजार था । उसके बाद उस मोड़ के दक्खिन-पूरब कोने में टीपू सुलतान का खंडहर-सा मकान । अब वहाँ कतारों में दुकानें बन गयी हैं । दिन रात ट्राम-बस के चलने से काफी चहलपहल रहती है । लेकिन उस समय ? उस समय कालीघाट भी ऐसा नहीं था, बालीगंज भी आज की तरह नहीं था । टीपू सुलतान का मकान भुतहा महल की तरह इधर इस मोड़ से उधर आगुनखाकी तालाब के किनारे तक भायँ-भायँ करता था । उस खंडहर जैसे मकान पर बहुत बड़ा बरगद का पेड़ उग आया था, जिससे वहाँ जाते दिन में भी डर लगता था । दोपहर को हवा चलती थी तो बरगद की पत्तियों से सर-सर आवाज होती थी । उस समय कभी-कभी एक तक्षक कटर-कट आवाज करता था जिससे वहाँ का माहौल डरावना बन जाता था । मोड़ के पश्चिम-दक्खिन कोने में टिकियापाड़ा था । टिकिया बनानेवाले सड़क पर लंबे-लंबे पटरे बिछाकर उन पर टिकिया सुखाते थे । उससे उत्तर में आशु तेली की सरसों के तेल की दुकान थी । कितने दिन दोपहर में माँ ने उसे वहाँ तेल खरीदने के लिए भेजा है । वह तेल खरीदने जाता तो घानी के पटरे पर जरूर बैठता था । घानी घूमती थी, और बैल उसे घुमाने के लिए बराबर उसके संग गोलाई में घूमता था । बैल की दोनों आँखें ढँकी रहती थीं । किसी-किसी दिन दीपंकर घानी के पटरे पर दो दो, तीन-तीन घंटे बैठा रहता था । सरसों का तेल खरीद चुका है, यह वह भूल जाता था । उसके बाद जब तेल लेकर घर लौटता था, तब माँ से डाँट खानी पड़ती थी । उसी आशु तेली की दुकान से उत्तर में हाजी कासिम का बहुत बड़ा मकान था । उस मकान के पीछे बहुत बड़ा बगीचा था । कितनी बार दीपंकर ने उस बगीचे को पास से और दूर से देखा था । लोग कहते थे, बहुत साँप हैं उस बगीचे में । चिड़ियाँ तो अनगिनत थीं । लेकिन वे सब कहाँ गये ! उसी बगीचे को तोड़कर सदानन्द रोड निकला । फिर आसपास कितने मकान बने । फिर उस मुहल्ले की शकल एकदम बदल गयी । उधर, और उधर आगुनखाकी तालाब के उस पार धान के खेत दिखाई पड़ते थे । हवा चलने पर धान की बालियाँ हिलती थीं । दीपंकर को लगता था कि वह ईश्वर गांगुली लेन छोड़कर कितनी दूर चला आया है । तब क्या सिर्फ धान के खेत थे ?

क्या सिर्फ टीपू सुलतान का ही मकान था। क्या सिर्फ टिकियापाड़ा और आशु तेली की दुकान थी ? कितना बड़ा संसार था उस समय दीपंकर का। अब लगता है, बड़े होने के साथ उसका संसार भी कितना छोटा हो गया है। कहाँ गया वह आहूदग नवर का बगीचा ? किरण के साथ कितनी ही बार वह उस बगीचे में गया था। किसका बगीचा है, और कौन मालिक है, वह कुछ नहीं जानता था। सिर्फ जानता था कि बगीचे के बीच एक तालाब है और तालाब के किनारे जामरुल का पेड़ है। उस पेड़ में बड़े-बड़े जामरुल लगते थे। उन जामरुलों का किनारा सिन्दूर जैसा लाल था और वे खाने में गुड़ जैसे मीठे थे। उस बगीचे के बाद महाराज सूर्यकान्त का बगीचा था। उस बगीचे में लीची का पेड़ था। बड़ी-बड़ी लीचियाँ, पकने पर गुलगुला हो जाती थीं। कितने ही दिन उस पेड़ पर चढ़कर लीचियाँ खाते हुए वह दूर तक देखा करता था। वहीं से रेलगाड़ी की आवाज आती थी—पूं-ऊं-ऊं-झिक-झिक ! दोपहर में वह आवाज कितनी मीठी लगती थी। पके जामरुल और पकी लीची से भी मीठी थी वह आवाज ! उस समय वह क्या जानता था कि एक दिन उसी रेल को लेकर उसके दिन कटेंगे। उसी रेल लाइन के एक लेवल क्रासिंग में उसके जीवन की रेलगाड़ी इस तरह धड़धड़ाती हुई आयेगी। वही रेलगाड़ी एक दिन उसके जीवन की सारी समस्याएँ मिटा देगी।

एक दिन कालीघाट स्कूल की इन्फैंट क्लास में दीपंकर भरती हुआ था।

वही पहला स्कूल था। जीवन में वहीं उसका पहली बार स्कूल जाना था। उसी स्कूल से एक दिन वह संतरा और कदमा लेकर लौटा था। वहीं उसने छाती पर यूनियन जैक लगवाया था। बहुत दिन तक वही एक घटना उसे याद रही। वहीं के छात्र लक्ष्मण सरकार, चारुचन्द्र धर, विमान चौद मित्र और किरणकुमार चट्टोपाध्याय थे। फिर निर्मल चन्द्र पालित भी था। और था दीपंकर सेन, रोल नम्बर अठारह।

उसके कुछ दिन बाद नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट में धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल खुला।

माँ ने कहा—वह स्कूल बहुत दूर है, पास के स्कूल में तुझे भरती करा दूँगी—

धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल जाना दीपंकर को बहुत बुरा नहीं लगा। किरण भी उसके साथ नये स्कूल में चला आया। बड़ा अच्छा हुआ कि लक्ष्मणचन्द्र सरकार नहीं आया। वह पुराने स्कूल में ही रहा। सड़क पर लक्ष्मण को देखते ही बड़ा डर लगता था। कहीं कोई बात नहीं, दीपंकर को देखते ही लक्ष्मण उसके सिर पर चाँटा लगा देता। पता नहीं दीपंकर ने क्या किया था ! वह बहुत सोचा करता था, लेकिन समझ नहीं पाता था कि क्यों लक्ष्मण उससे इतना चिढ़ा रहता था। कितनी बार आँखों में आँसू आये थे। लेकिन रोना मुश्किल था। कहीं माँ न पूछ बैठे कि किसने तुझे मारा है, क्यों तुझे मारा है ? फिर क्या जवाब देगा दीपंकर ? कभी वह सोचता था कि बाल ठीक से काटे नहीं गये शायद इसी लिए लक्ष्मण मारता है, कभी सोचता था कि शायद

कपड़ा पहनकर आया हूँ शायद इसी लिए मारता है। लेकिन नहीं, बाल ठीक से काटे जाने पर भी लक्ष्मण ने मारा, कपड़े साफ होने पर भी लक्ष्मण ने मारा। बाद में वह इसी निष्कर्ष पर पहुँचा था कि चाँटा लगाने में लक्ष्मण को मजा आता है और इसी लिए वह चाँटा लगाता है, किसी गलती के लिए नहीं। उसके बाद दीपंकर स्कूल छोड़-कर कालेज में पहुँचा है, कालेज से निकलकर ऑफिस में आया है। लेकिन तब भी लक्ष्मण जैसों ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। सारे संसार में वही एक लक्ष्मण अनेक होकर अनेक रूपों में फैल गया है। इन लक्ष्मणों के हाथ से मानों इन्सान को कभी छुटकारा नहीं मिलेगा।

उस दिन नेपाल भट्टाचार्य लेन के मोड़ के पास आते ही दीपंकर ने देखा कि सामने से लक्ष्मण आ रहा है। शाम हो चली थी। सड़क पर पानी छिड़का जा रहा था। लक्ष्मण को देखते ही न जाने क्यों दीपंकर का दिल धड़कने लगा। कहीं फिर न लक्ष्मण मारने लगे।

दीपंकर एक किनारे हट गया। लेकिन लक्ष्मण को न जाने क्या सूझा, वह दीपंकर की तरफ बढ़ा।

सामने आकर लक्ष्मण ने पूछा — क्यों रे, हमारा स्कूल छोड़ क्यों दिया? मेरे डर से।

दीपंकर ने कोई जवाब नहीं दिया। वह डरता रहा और लक्ष्मण की आँखों की तरफ देखता रहा।

लक्ष्मण ने उधर ध्यान नहीं दिया। उसने इतना कहकर एक चाँटा लगा दिया —

चाँटा खाते-खाते दीपंकर का भी साहस बढ़ गया था।

दीपंकर ने कहा — तू मुझे क्यों मारता है? क्यों रोज मारता है? मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है?

दीपंकर से अचानक इस तरह के विरोध की आशा लक्ष्मण को नहीं थी। वह जल-भुन गया। बोला — ठीक करूँगा, मारूँगा। मेरी खुशी है, मारूँगा। ले, फिर मार रहा हूँ — क्या करेगा तू?

कहकर सचमुच उसने दीपंकर के सिर पर एक चाँटा और लगा दिया। इस बार जोर से लगाया।

दीपंकर ने सिर हटा लिया था, फिर भी जोर से लगा। सिर झनझना गया। उसने कहा — मैं कुछ नहीं कहता, इसी लिए न!

लक्ष्मण आगे बढ़कर दीपंकर की छाती से पास आ गया। बोला — बहुत हिम्मत बढ़ गयी है तेरी, है न?

यह कहकर लक्ष्मण ने दीपंकर के सिर पर फिर चाँटा लगाया। उसके बालों की लट पकड़कर खींची।

लक्ष्मण बोला — एक घूंसा जमा दूंगा तेरी नाक पर। तब तेरी सारी बदमाशी निकल जायेगी।

लक्ष्मण ने दीपंकर के सिर पर मुक्के जमाना शुरू किया।

— फिर, फिर बदमाशी हो रही है ? फिर बदमाशी हो रही है ?

लक्ष्मण यह कहता जा रहा था और मारता जा रहा था। दीपंकर को वह सिर ही नहीं उठाने दे रहा था। दाहिने, बायें, आगे, पीछे, दीपंकर के मुंह पर ही वह मारे जा रहा था। दीपंकर की आंखों के आगे अंधेरा छा गया। उसका सिर चकराने लगा।

लक्ष्मण मारे जा रहा था और कहे जा रहा था — बदमाशी बहुत बढ़ गयी है न ? अभी मैं तेरी बदमाशी निकाल देता हूँ।

सिर को बचाने के फेर में दीपंकर एक किनारे हटने लगा तो वह धम से जमीन पर गिर पड़ा। इससे लक्ष्मण को और मौका मिल गया। वह दीपंकर के कान, मुंह और सिर पर तड़ातड़ मुक्का और थप्पड़ मारे जा रहा था। दीपंकर को लगा कि अब वह बचेगा नहीं। मानो लक्ष्मण उसे मार कर ही दम लेगा। अगर लक्ष्मण के अत्याचार से वह उस दिन मर जाता तो संसार का बहुत-कुछ उसे अपनी दोनों आंखों से देखना न पड़ता, शायद बहुत-से मर्मान्तिक अनुभवों से वह बचता और अनेक यंत्रणाओं के हाथ से छुटकारा पा जाता। लेकिन उस हालत में वह सती को नहीं देख पाता। सती को न देख पाने पर उसके जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा निरर्थक हो जाता।

लक्ष्मण के हाथों मार खाते-खाते जब वह एकदम निढाल हो चला था तभी वह बात हुई।

उसे लगा कि कोई बगल में आकर खड़ा हो गया है।

उसने किसी तरह आंखें खोल कर देखा कि लक्ष्मी दी है।

स्कूल की गाड़ी से उतर कर लक्ष्मी दी गली में आ गयी थी। आते ही उसने यह सब देखा। देखते ही उसने लक्ष्मण के बाल पकड़कर खींचे। फिर बिना कुछ पूछे उसने तड़ से एक थप्पड़ जड़ दिया।

लक्ष्मण बुरी तरह डर गया। थप्पड़ पड़ते ही वह जमीन पर गिर पड़ा। लेकिन लक्ष्मी दीदी कब छोड़ने वाली थी। वह तड़ातड़ लक्ष्मण के कान, मुंह और पीठ पर मुक्के जमाने लगी। लक्ष्मण भाग भी नहीं पा रहा था और मार भी नहीं पा रहा था। इस तरह अचानक मार खाकर मानो उसने होश-हवास ही खो दिया। दीपंकर खड़ा होकर दूर से तमाशा देखने लगा। उसे लगा — बहुत अच्छा हो रहा है, बहुत अच्छा हो रहा है। इतने दिन बाद लक्ष्मण का होश ठिकाने लगा है। मुझे मुझे मारता था, अब उसका नतीजा मिल गया।

अच्छी तरह पिटाई करने के बाद लक्ष्मी दी ने लक्ष्मण से कहा — अगर फिर

कभी तूने उसे मारा तो तेरी आँख फोड़ दूँगी। भाग यहाँ से—

अब दीपंकर का साहस लौट आया था।

लक्ष्मण मुँह लटकाये बदन से धूल झाड़ता दूसरी तरफ चला गया।

लक्ष्मी दी ने तब जमीन पर से अपनी किताब-कापी उठा ली।

दीपंकर ने लक्ष्मी दी के पास जाकर कहा—वह मुझे रोज पीटता है लक्ष्मी दी। रोज मुझे इसी तरह पीटता है। मैंने कुछ नहीं किया, फिर भी मुझे पीटता है।

लक्ष्मी दी का चेहरा गंभीर दीख पड़ा।

दीपंकर कहने लगा—आपने बहुत अच्छा किया लक्ष्मी दी, कि उसे पीटा। मैं कुछ नहीं करता, फिर भी वह मुझे पीटता है।

अचानक लक्ष्मी दी ने दीपंकर का कान पकड़कर उसके सिर पर चाँटा लगाना शुरू किया।

बोली—बेवकूफ कहीं का! रोज तुझे पीटता है और तू पिटता जाता है। तू उसे पीट नहीं सकता? तेरे बदन में ताकत नहीं है? बेवकूफ गधा कहीं का! बेवकूफ की तरह कह रहा है कि रोज वह पीटता है। अब मैं तुझे पीटूँगी।

कहकर लक्ष्मी दी ने फिर पीटना शुरू किया।

अब दीपंकर की आँखों से सचमुच आँसू बहने लगे। अब तक लक्ष्मण के हाथों पिटने से उसे जितनी तकलीफ हुई थी, उससे दुगुनी तकलीफ हुई लक्ष्मी दी के हाथों पिटने से।

दीपंकर दोनों हाथों में सिर छिपाकर कहने लगा—अब मत मारिए लक्ष्मी दी, अब मैं ऐसा नहीं करूँगा। अब मुझे मत मारिए।

लेकिन उस समय लक्ष्मी दी पर गुस्सा सवार था। वह जोर-जोर से मारने लगी।

बोली—तेरा सिर तोड़ दूँगी बेवकूफ कहीं का! दूसरा तुझे पीटकर चला जायेगा और तू बैठा रोया करेगा। तुझे शरम नहीं आती रोते हुए—फिर, तू रो रहा है?

उसके बाद घर के पास आकर लक्ष्मी दी ने कहा—जा, घर जा, अब कभी मत रोना, समझ गया न? अगर रोना ही था तो लड़का किसलिए हुआ?

यह कहकर लक्ष्मी दी ने दीपंकर को धक्का-सा दिया और वह खुद उछलती अपने घर में चली गयी।

रात को पढ़ने बैठा तो किसी तरह दीपंकर का मन पढ़ने में नहीं लग रहा था। अघोर नाना के संदूक से टिककर सामने इतिहास की किताब खोले देर तक उसने पढ़ने

की कोशिश की। लेकिन नींद के मारे आँखें झपकने लगीं। उसके मन में आया — क्यों ये लोग इस मकान में आये! 'ये लोग' का मतलब थे किरायेदार। यह लड़की तो बात-बात पर पीटने लगती है। पहले के किरायेदार अच्छे थे। दीपंकर और उसकी माँ की तरफ देखते भी नहीं थे। चन्नूनी उन लोगों को गाली बकती थी, ठीक करती थी। इन लोगों को भी वह गाली देती तो अच्छा होता। फिर तो ये लोग भी यहाँ नहीं रहते, किसी दूसरे मकान में चले जाते। ये लोग चले जायें तो अच्छा हो। क्या नाचती है यह लड़की, वैसा तो मैं भी नाच सकता हूँ। शीशे के सामने खड़े होकर धम-धम कोई भी नाच सकता है। सपना ही सही था — भालू वाला सपना ही सही था। क्या नाचती है कि जैसे भालू नाच रहा हो! पत्थरपट्टी की सड़क पर अक्सर भालू नचाने-वाला आता है। नचानेवाला डुगडुगी बजाता है और भालू नाचता है। और शकल? शकल भी कौन बढ़िया है? बड़ी आयी खूबसूरत! विन्ती दी उससे बहुत ज्यादा खूबसूरत है। लेकिन विन्ती दी कभी मुझे पकड़कर नहीं पीटती। रहा पढ़ना-लिखना, वैसा तो सभी पढ़-लिख सकते हैं। हाँ, दस रुपये वजीफा मिला है। मेम साहब के बढ़िया स्कूल में पढ़ती तो विन्ती दी भी वजीफा पाती।

किसी काम से माँ कमरे में आयी।

दीपंकर ने कहा — माँ!

माँ ने कहा — क्या है?

दीपंकर ने पूछा — आजकल चन्नूनी गाली क्यों नहीं बकती है माँ?

शायद माँ जल्दी में थी। बेतुके सवाल पर झिड़का। बोली — तेरे दिमाग में पता नहीं कैसी बातें आती हैं। क्यों बेमतलब गाली देगी? किसको गाली देगी?

दीपंकर ने कहा — ये जो नये किरायेदार आये हैं, इनको चन्नूनी क्यों नहीं गाली देती? इनको भी गाली दे तो ये मकान छोड़ दें।

— तेरे संग मैं बक-बक नहीं कर सकती।

कहकर माँ चली गयी। दीपंकर फिर इतिहास की किताब में मन लगाने लगा। कहाँ के किस सिकन्दर ने कहाँ के किस पुरु को बन्दी बनाया था, उसके बारे में पढ़कर क्या फायदा होगा कौन जाने! उस दिन सनातन बाबू की क्लास में कोई लड़का सवाल का जवाब नहीं दे पाया था। सनातन बाबू थोड़ा गम्भीर प्रकृति के थे। वे प्राणमथ बाबू की तरह नहीं थे। प्राणमथ बाबू की क्लास ही दीपंकर को मन से अच्छी लगती थी।

प्राणमथ बाबू क्लास में कैसी कहानी सुनाया करते हैं!

उस दिन प्राणमथ बाबू ने क्लास में आकर पूछा — आज तुम लोगों को क्या पढ़ना है, बताओ —

मॉनीटर दीपंकर ने खड़े होकर कहा — सिकन्दर और पुरु, सर!

प्राणमथ बाबू ने किताब बन्द कर एक तरफ रख दी और पूछा, बताओ तुम

कौन है ?

फटिक ने कहा — एक राजा था, सर !

प्राणमथ वाबू ने कहा — ठीक है। लेकिन राजा का क्या मतलब होता है ? तुम वता सकते हो ?

उन्होंने किरण की तरफ उंगली से इशारा किया।

फिर वे पूछते गये — तुम ? तुम ? तुम ?

एक-एक कर उन्होंने कइयों से पूछा। लेकिन उस दिन कोई जवाव न दे सका। राजा का मतलव है राजा। राजा का और क्या मतलब हो सकता है ! उस दिन कोई भी इस मामूली सवाल का जवाव नहीं दे पाया था। सव मुंह बाये प्राणमथ बाबू की तरफ देखने लगे थे।

प्राणमथ वाबू ने कहा — राजा शब्द का माने नहीं जानते, इसलिए शरमाने को कोई वात नहीं है। इस शब्द का अर्थ वहुत लोग नहीं जानते — यहाँ तक कि वहुत से राजा भी नहीं। फिर सुनो —

डिब्बे से एक वीड़ा पान निकालकर मुंह में डालकर प्राणमथ बाबू कहने लगे— एक समय था जव इस संसार में राजा नहीं था, राज्य नहीं था, दंड नहीं था, दंड देने-वाला नहीं था। इसका मतलव है सव एक दूसरे से प्यार करते थे। सब लोग अगर सव लोगों से प्यार करें तो सजा और सजा देनेवाले की जरूरत नहीं रहती। लेकिन ऐसी स्थिति ज्यादा दिन नहीं रही, धीरे-धीरे मोह आया, याने संसार से धर्म का लोप हो गया। जव धर्म का लोप हो गया तव देवता डर गये। अब कोई यज्ञ नहीं करता — यज्ञ में आहुति न देने पर देवता खायेंगे क्या ? वे दौड़े हुए ब्रह्मा के पास गये। उन लोगों ने ब्रह्मा से पूछा कि अव क्या होगा ? तब ब्रह्मा ने ऋषियों से कहकर एक जने को राजा वना दिया। उस एक जने का नाम था पृथु। वही पृथु इस संसार के राजा वने। वे थे विष्णु के अवतार। जव वे राजा बने तब फिर याग-यज्ञ होने लगे, धर्म का उदय हुआ। वे प्रजा का रंजन कर सकते थे याने वे प्रजा को प्रसन्न और सुखी कर सकते थे, इसलिए सव लोग उन्हें धन्य-धन्य करने लगे। उसी रंजन शब्द से राजा शब्द वना।

उसके वाद जरा सीधे होकर वैठे प्राणमथ वावू। फिर वोले — अब तो समझ गये कि राजा किसे कहते हैं ?

सव ने एक साथ उत्तर दिया — समझ गया, सर !

लेकिन सभी राजा पृथु राजा के समान अच्छे राजा नहीं होते। ऐसे भी राजा हैं, जो प्रजा-रंजन नहीं करते, प्रजा को खाने और पहनने नहीं देते — हमारे देश के महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर का नाम तुम लोगों ने सुना है ?

सव ने मुंह वाये प्राणमथ वावू की तरफ देखा।

अचानक किरण ने वीच में कह दिया — सर, जव सी० आर० दास राजा

कौन है ?

फटिक ने कहा — एक राजा था, सर !

प्राणमथ वावू ने कहा — ठीक है। लेकिन राजा का क्या मतलव होता है ? तुम वता सकते हो ?

उन्होंने किरण की तरफ उंगली से इशारा किया।

फिर वे पूछते गये — तुम ? तुम ? तुम ?

एक-एक कर उन्होंने कइयों से पूछा। लेकिन उस दिन कोई जवाव न दे सका। राजा का मतलव है राजा। राजा का और क्या मतलव हो सकता है ! उस दिन कोई भी इस मामूली सवाल का जवाव नहीं दे पाया था। सव मुंह वाये प्राणमथ वावू की तरफ देखने लगे थे।

प्राणमथ वावू ने कहा — राजा शब्द का माने नहीं जानते, इसलिए शरमाने की कोई वात नहीं है। इस शब्द का अर्थ वहुत लोग नहीं जानते — यहाँ तक कि वहुत से राजा भी नहीं। फिर सुनो —

डिव्वे से एक वीड़ा पान निकालकर मुंह में डालकर प्राणमथ वावू कहने लगे — एक समय था जव इस संसार में राजा नहीं था, राज्य नहीं था, दंड नहीं था, दंड देने-वाला नहीं था। इसका मतलव है सव एक दूसरे से प्यार करते थे। सव लोग अगर सव लोगों से प्यार करें तो सजा और सजा देनेवाले की जरूरत नहीं रहती। लेकिन ऐसी स्थिति ज्यादा दिन नहीं रही, धीरे-धीरे मोह आया, याने संसार से धर्म का लोप हो गया। जव धर्म का लोप हो गया तव देवता डर गये। अव कोई यज्ञ नहीं करता — यज्ञ में आहुति न देने पर देवता खायेंगे क्या ? वे दौड़े हुए व्रह्मा के पास गये। उन लोगों ने व्रह्मा से पूछा कि अव क्या होगा ? तव व्रह्मा ने ऋषियों से कहकर एक जने को राजा वना दिया। उस एक जने का नाम था पृथु। वही पृथु इस संसार के राजा वने। वे थे विष्णु के अवतार। जव वे राजा वने तव फिर याग-यज्ञ होने लगे, धर्म का उदय हुआ। वे प्रजा का रंजन कर सकते थे याने वे प्रजा को प्रसन्न और सुखी कर सकते थे, इसलिए सव लोग उन्हें धन्य-धन्य करने लगे। उसी रंजन शब्द से राजा शब्द वना।

उसके वाद जरा सीधे होकर वैठे प्राणमथ वावू। फिर वोले — अव तो समझ गये कि राजा किसे कहते हैं ?

सव ने एक साथ उत्तर दिया — समझ गया, सर !

लेकिन सभी राजा पृथु राजा के समान अच्छे राजा नहीं होते। ऐसे भी राजा हैं, जो प्रजा-रंजन नहीं करते, प्रजा को खाने और पहनने नहीं देते — हमारे देश के महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर का नाम तुम लोगों ने सुना है ?

सव ने मुंह वाये प्राणमथ वावू की तरफ देखा।

अचानक किरण ने वीच में कह दिया — सर, जव सी० आर० दास राजा

होंगे, तब वे अच्छे राजा होंगे न ?

— सी० आर० दास राजा होंगे ?

प्राणमथ बाबू ने आश्चर्य से किरण की तरफ देखा।

पूछा — किसने कहा ?

किरण ने कहा — एक साधु ने बताया है सर!

— कौन साधु ?

— सच्चे साधु हैं, सर! हिमालय के असली साधु। उन्होंने बताया है कि देश स्वाधीन होने पर सी० आर० दास राजा होंगे, मेरे पिताजी की बीमारी ठीक हो जायेगी, हमारे देश के सभी लोगों की दशा सुधरेगी और हम बढ़िया-बढ़िया चीजें खा सकेंगे — दही, रबड़ी, सन्देश और राजभोग —

प्राणमथ बाबू जरा मुस्कराये। हलकी मुस्कराहट उनके होंठों पर दिखाई पड़ी। वे बोले — देश स्वतन्त्र होने पर देशवासियों की दशा सुधरेगी, यह बताने के लिए साधु की जरूरत नहीं पड़ती। खैर, मैं जो कह रहा था — रवीन्द्रनाथ ठाकुर की एक किताब है, जिसका नाम है 'राजा-रानी'। बड़े होकर तुम लोग वह किताब पढ़ना। रवीन्द्रनाथ ठाकुर इस संसार के बहुत बड़े कवि हैं, एक दिन तुम लोग देखोगे कि घर-घर उनका चित्र टँगा हुआ है। तुम लोगों ने उन्हीं का नाम नहीं सुना ?

दीपंकर ने सहसा खड़े होकर कहा था — मैंने रवि ठाकुर को देखा है सर!

— तुमने उनको देखा है ? कहाँ देखा ?

दीपंकर ने कहा — काली मंदिर में, सर!

— काली मंदिर में ?

— हाँ सर! मंदिर में बकरा बलि बन्द कराने —

दीपंकर को ठीक याद है। वह रोज सवेरे मुहल्ले भर से फूल बटोरकर मंदिर में चढ़ा आता था। कुछ पोखर की बगल से माँ काली, भुवनेश्वरी, गणेश आदि जितने देवताओं के मंदिर थे, सभी में वह फूल चढ़ाता था। किसी-किसी दिन माँ भी साथ होती थीं। माँ प्रणाम करती थीं तो देखा-देखी दीपंकर भी प्रणाम करता था। प्रणाम करने से क्या लाभ है और न करने से क्या हानि, यह सब वह उस समय नहीं समझता था। सिर्फ प्रणाम करने की आदत पड़ गयी थी। एक दिन माँ ने अचानक कहा — वह देख। ये कौन हैं बता तो ?

दीपंकर ने देखा था, सफेद दाढ़ी वाले एक सज्जन नाटमंदिर और माँ के मंदिर के बीच वाले रास्ते में खड़े होकर एकटक प्रतिमा की तरफ देख रहे हैं। उनके सीने के पास एक हाथ पर दूसरा हाथ रखा था। उनकी दोनों आँखों से पानी बह रहा था।

— ये कौन हैं माँ ?

किसी तरफ उनका ध्यान नहीं था। उनके साथ दो-चार लड़के-लड़कियाँ

थे। वे भी काली की तरफ देख रहे थे। वे सब देखने में कितने खूबसूरत थे! उनके कपड़े कितने अच्छे थे! देखने में वे-गुड्डे-गुड़िया लग रहे थे।

माँ उन्हीं की तरफ देख रही थी।

—वे कौन हैं माँ?

माँ ने कहा — उनका नाम रवि ठाकुर है।

—रवि ठाकुर कौन हैं माँ?

—वे बहुत अच्छी कविता लिखते हैं।

सवेरे का समय। उस समय मंदिर में भीड़ नहीं थी। लेकिन उस दिन शायद कोई और रवीन्द्रनाथ को पहचान न सका था। लेकिन माँ ने पहचान लिया था। माँ की बड़ी बुद्धि थी। अगर पिताजी न मर गये तो माँ और बहुत कुछ जान जातीं। फिर माँ को अघोर नाना के घर सुबह-शाम खाना न बनाना पड़ता। हाँ, तो उस दिन माँ के संग दीपंकर भी एकटक उधर देखता रह गया था। अचानक —

—दीपू बाबू!

अचानक अपना नाम सुनाई पड़ते ही दीपंकर चौंका। इतिहास की किताब रखकर कमरे के बाहर आते ही वह आश्चर्य में पड़ गया। रघु — लक्ष्मी दी का नौकर।

रघु ने कहा — दीपू बाबू, आपको चाचा जी बुला रहे हैं।

दीपंकर और भी आश्चर्य में पड़ गया।

पूछा — मुझे? मुझे क्यों बुला रहे हैं?

रघु ने कहा — चाचा जी अभी दफ्तर से आये हैं। लक्ष्मी दी ने मुझसे कहा कि बगलवाले मकान से दीपू बाबू को बुला ला।

दीपंकर ने कुछ सोच लिया। —मुझे क्यों बुलायेगी लक्ष्मी दी? क्या फिर पीटेगी? मैंने कौन-सा दोष किया है? दोष तो लक्ष्मी दी का है। लक्ष्मी दी ने मुझे पीटा है। लगातार दो दिन पीटा है। लेकिन मैंने कुछ नहीं कहा। मैं कुछ कहूँगा भी नहीं। चौदह बरस मैं किसी से कुछ नहीं कहूँगा। बस चौदह बरस! लेकिन चौदह बरसों में सिर्फ एक बरस बीता है।

प्राणमय बाबू ने कहा था — अगर तुम लोग चौदह बरस बराबर सच बोला करो तो एक दिन ऐसा आयेगा जब तुम जो बोलोगे वही सच निकलेगा। एक बात भी झूठ न होगी।

मधुसूदन ने पूछा था — सर, अगर मैं कहूँ कि राजा बनूँगा?

प्राणमय बाबू ने कहा था — बनोगे। राजा ही बनोगे। लेकिन चौदह बरस बराबर सच बोलना पड़ेगा — एक भी झूठ नहीं बोल सकते।

किरण ने कहा था — सर, अगर मैं कहूँ कि मेरे पिताजी की बीमारी ठीक हो जाय —

— हाँ, वही होगा !

— पर, अगर कहूँ कि हमारा महल बने —

— बनेगा । जो भी चाहोगे, होगा ।

उस दिन से किरन और दीपंकर ने तय किया था कि हम चौदह बरस बराबर सच बोलेंगे । एक बार के लिए भी झूठ नहीं बोलेंगे । लेकिन किरन अपना वचन निभा नहीं पाया था । भीख में मिले पैसे चुराकर उसने कई दिन बकु की दुकान से आलू चाप और बैंगनी खरीदकर खाया था, लेकिन घर में बताया नहीं था ।

रघु ने कहा — चलो दीपू बाबू ।

दीपंकर सोच रहा था कि माँ से पूछकर जाऊँ या नहीं । आँगन में रसोईघर की तरफ वह गया भी माँ से पूछने, लेकिन बाद में सोचा कि कोई जरूरत नहीं । शायद माँ बहुत कुछ पूछ बैठें । इससे अच्छा होगा, लौटकर उन्हें सब बता देना ।

— क्यों बुला रहे हैं, तुम जानते हो ? दीपंकर ने पूछा ।

रघु ने कहा — यह मैं नहीं जानता ।

आँगन पार कर बाहरवाले रास्ते से उस मकान में जाने का सदर दरवाजा है । रघु आगे-आगे चला । दीपंकर उसके पीछे-पीछे मकान के भीतर गया । उस मकान में आँगन के बाद एक चबूतरा-सा है । वहीं सीढ़ी है । सीढ़ी से ऊपर पहुँचते ही दाहिने हाथ बैठने का कमरा है । उस कमरे में एक तरफ चाचाजी बैठे थे और उनकी बगल में लक्ष्मी दी । दूसरी तरफ चाचीजी थीं ।

— आओ दीपू बाबू । आज रास्ते में क्या हुआ था ?

दीपंकर ने एक बार लक्ष्मी दी की तरफ देखा । लक्ष्मी दी उस समय मुँह दबाये हँस रही थीं ।

— बैठो, पहले तुम उस कुर्सी पर बैठो । अब बताओ कि क्या हुआ था । सच बताना, झूठ न बोलना ।

दीपंकर ने गंभीर होकर कहा — मैं झूठ नहीं बोलता । एक बरस से मैं सच के अलावा झूठ नहीं बोलता ।

— एक बरस से सच बोल रहे हो ? झूठ एकदम नहीं बोलते ?

— जी नहीं । और तेरह बरस मैं बराबर सच बोलूँगा ।

चाचाजी दीपंकर का जवाब सुनकर आश्चर्य में पड़ गये । चाचीजी ने हँसकर चाचाजी की तरफ देखा ।

— अरे, तब तो बड़ा अच्छा लड़का है । चाचीजी बोलीं ।

लक्ष्मी दी ने मजाक किया — एकदम सत्यवादी युधिष्ठिर है ।

चाचीजी ने लक्ष्मी दी को चुप करा दिया । कहा — तुम मत बोलो लक्ष्मी ।

फिर दीपंकर से पूछा — लेकिन तेरह बरस क्यों बराबर सच बोलोगे ?

दीपंकर बोला — हमारे हेड मास्टर ने कहा है कि अगर कोई चौदह बरस

बराबर सच बोले तो बाद में वह जो कुछ कहेगा सब सही निकलेगा।

यह सुनकर चाचाजी ने हंस दिया। चाचीजी भी हंसीं और लक्ष्मी दी भी।

चाचीजी ने कहा — और तुमने वही सच मान लिया ?

कितना सरल, कितना सीधा और कितना स्वाभाविक था दीपंकर। कभी-कभी दीपंकर को लगा है कि शायद वही दिन अच्छे थे। उन दिनों जिसने जो कुछ कहा, दीपंकर उसी पर विश्वास कर लिया करता था। उसने विश्वास कर लिया था कि एक दिन किरण के बाप की बीमारी दूर होगी, विश्वास किया था कि कौड़ी देकर सब कुछ खरीदा जा सकता है, विश्वास किया था कि सी० आर० दास एक दिन इस देश का राजा बनेगा और विश्वास किया था कि चौदह बरस सच बोलने के बाद जो भी कहा जायेगा, सच निकलेगा। इसी तरह उसने न जाने कितनी बातों पर विश्वास कर लिया था। आज इतने दिन बाद उसे लगा कि संसार में विश्वास करना ही अच्छा होता है, और क्या विश्वास करने से उसे अन्त तक कुछ भी नहीं मिला ? क्या उसने विश्वास किया था और इसी लिए उसका सब कुछ खो गया ?

चाचीजी ने पूछा — सड़क पर जो लड़का तुम्हें पीटता है, वह कौन है ?

दीपंकर ने कहा — वह पहले हमारे स्कूल में पढ़ता था।

— वह क्यों तुम्हें पीटता है ?

— यह मैं नहीं जानता। मेरे पास जो कुछ रहेगा, वह छीन लेगा। कुछ न कहने पर भी मुझे पीटेगा।

लक्ष्मी दी बोली — इसी लिए आज मैंने इसे खूब पीटा है चाचाजी, यह चुप-चाप क्यों मार खाता रहेगा ? क्या यह नहीं मार सकता ? क्या इसके बदन में ताकत नहीं है ?

दीपंकर बोला — अभी जितना चाहे मार ले, एक दिन मैं उसका मारना निकाल दूंगा।

चाचाजी ने पूछा — कैसे ?

दीपंकर ने कहा — मैं गरीब हूं, इसलिए वह पीटता है। जब मैं अमीर बन जाऊंगा, तब वह नहीं पीटेगा। जब मेरे पास बहुत रुपया हो जायेगा, तब वह मुझे कभी नहीं पीटेगा।

— क्यों ?

दीपंकर बोला — अघोर नाना ने कहा है कि रुपये से सब कुछ खरीदा जा सकता है। रुपये के मोल सब कुछ मिलता है।

चाचीजी ने कहा — लड़के की बुद्धि बड़ी तेज है।

दीपंकर बोला — अघोर नाना ने मुझसे कहा है कि मेरे पास रुपया होने से मैं अपनी खुशी से सब कुछ खरीद सकूंगा और तब वह लक्ष्मण मेरी इज्जत करेगा।

चाचाजी अब तक हंस रहे थे, अब बोले — गलत है दीपू बाबू, अघोर नाना

ने तुमसे यह सब गलत बताया है। रुपया होने से ही संसार में सब कुछ नहीं खरीदा जा सकता। जब बड़े होगे तब समझोगे कि रुपया ही सब कुछ नहीं है —

— लेकिन अघोर नाना ने तो कहा है? अघोर नाना तो बहुत बड़े हैं।

चाचाजी ने कहा — बूढ़े होने से क्या कोई बड़ा होता है? बहुत से लोग बुढ़ापे में भी बच्चे रह जाते हैं। तुम्हारे अघोर नाना भी शायद वैसे ही हैं। असल में हो, नौकरी में लगने से पहले मेरी भी ऐसी धारणा थी। अरे भुवन बाबू की ही बात लो न। सती के पिताजी भुवन बाबू ने मुझसे कहा था कि वे एक दिन बर्मा की सड़कों की खाक छानते रहे थे। जेब में पैसा नहीं, जान-पहचान का कोई आदमी नहीं, सिर्फ भाग्य बदलने के लिए घर से निकल पड़े थे —

बाद में दीपंकर ने यह कहानी सुनी थी।

सती ने एक दिन बताया था। हावड़ा जिले के किसी गंवई गाँव का लड़का। नाम भुवनेश्वर मित्र। माँ-बाप का इकलौता बेटा। पैसे के अभाव में पढ़ाई-लिखाई नहीं हो पायी। दिन भर इनके बगीचे में और उनके तालाब पर जाकर बैठा रहता। उसके बाद क्या सूझा, एक दिन वह घर से भागा। कहाँ भागा, किसी को नहीं मालूम। उसके पास एक भी पैसा नहीं था। कोई सबल नहीं। खिदिरपुर का डॉक उस समय बन रहा था। बराबर जहाज और स्टीमरों की भीड़ लगी रहती थी। वहीं शायद किसी खलासी से उसकी जान-पहचान हो गयी और वह सीधे बर्मा पहुँच गया। बर्मा उन दिनों डाकुओं और लुटेरों का मुल्क समझा जाता था।

चाचाजी ने कहा — मैं जब पहले-पहल नौकरी करने लगा तब बर्मा जाना पड़ा। मैं कभी बर्मा नहीं गया था। मेरे लिए वह एकदम नया देश था। वहीं बंगाली की शकल नहीं देख पाता था। उसी समय एक दिन अचानक भुवनेश्वर बाबू से भेंट हो गयी। एक दिन देखा, शहर से सात मील दूर जंगल में लकड़ी का एक गोदाम है। बड़ी-बड़ी आरा-मशीनें लगी हैं और बराबर काम हो रहा है। बहुत से बर्मी कुली काम कर रहे हैं। सोचा, किसी साहब की कम्पनी होगी। साहब न सही तो कोई पंजाबी या मद्रासी होगा। लेकिन साइनबोर्ड पढ़कर दंग रह गया। देखा, मोटे-मोटे हरफों में लिखा था — प्रोप्राइटर बी० मित्र। बंगाली और इतनी दूर इस मुल्क में।

उस समय भुवन बाबू से जान-पहचान नहीं थी। बंगाली जानकर जान-पहचान करने की इच्छा हुई।

मुझे देखकर वे भी आश्चर्य में पड़ गये। मैं भी उनको देखकर आश्चर्य में पड़ गया।

भुवनेश्वर बाबू ने कहा — शादी कर लीजिए श्रीमान् जी। देश छोड़कर इतनी दूर आये हैं, कम-से-कम पत्नी को साथ तो लाना चाहिए था।

मैंने कहा — पन्द्रह रुपये तनख्वाह और पाँच रुपये ओवरटाइम अलाउन्स। इतने थोड़े रुपये में खर्च कैसे चलाऊँगा?

भुवनेश्वर बाबू ने कहा — उसी में घूस के रुपये भी जोड़ लीजिए। फिर देखेंगे, मजे में चल रहा है।

उसके बाद तुम्हारी चाचीजी को ले गया।

लक्ष्मी ने पूछा — मैं उस समय पैदा हुई थी चाचाजी ?

चाचाजी ने कहा — उस समय तुम बहुत छोटी गुड़िया-सी थी और मैं तुम्हें गोद में लिये घूमा करता था।

— और सती ?

— सती उस समय कहाँ थी ? वह तो बहुत बाद में हुई। बारिश का मौसम था, झमझम पानी बरस रहा था। मैं दफ्तर का काम निबटाकर घर लौटा तो रात के ग्यारह बज चुके थे। एक एन्क्वायरी का काम पूरा करते-करते रात हो गयी थी। घर लौटकर, बत्ती बुझाकर लेटा ही था कि टेलीफोन की घंटी बजी। सोचा, इतनी रात को अब कौन टेलीफोन कर रहा है। रिसीवर कान में लगाते ही समझ गया कि भुवनेश्वर बाबू हैं।

पूछा — क्या बात है भैया ? इतनी रात को ?

दूसरी तरफ से भुवनेश्वर बाबू ने कहा — सोचा, तुमको खबर दे दूँ। मेरे लड़की हुई है।

मैं तो उछल पड़ा। पूछा — कब ?

— बस, अभी।

बोला — फिर मिठाई खिलाइए भैया। एकदम एक नहीं, दो-दो लड़कियाँ। इसका नाम सती रखिए। बड़ी का नाम लक्ष्मी और छोटी का नाम सती। दोनों सती-लक्ष्मी होकर फूलें-फलें।

चाचीजी की तरफ देखकर चाचाजी ने पूछा — क्यों जी, तुम्हें वह सब बातें याद हैं ?

चाचीजी ने कहा — याद क्यों नहीं हैं ? खूब हैं। आप उसी रात गये।

चाचाजी ने कहा — हाँ, जो कह रहा था — नौकरी करने से पहले तक यही समझता था कि पैसा होने पर सब कुछ खरीदा जा सकता है, लेकिन भुवनेश्वर बाबू से जान-पहचान होने के बाद वह धारणा बदल गयी। उस समय बस तुम्हारी चाचीजी को ले गया था, तभी मुझे अचानक प्लेग हो गया। कैसा भयानक रोग था ! घर के नौकर-चाकर भाग गये। देखभाल करनेवाला कोई नहीं, तुम्हारी चाचीजी वहाँ नयी थीं, किसी को पहचानतीं नहीं और मैं बेहोश पड़ा था कि अब मरा, तब मरा। मैंने सोच लिया था कि अब उस विदेश में ही मुझे मरना होगा।

लेकिन कहाँ के कौन भुवनेश्वर बाबू, मेरे संबंधी नहीं और लखपति आदमी, मेरी बीमारी की खबर पाते ही दौड़े हुए आये। उसके बाद कहाँ से डाक्टर और कहाँ से दवा का इन्तजाम हुआ, यह सब मुझे सोचना न पड़ा। मैं जब बेहोश पड़ा था, तब

वे आते थे और जब तक मैं भला-चंगा न हो गया, वे मेरे पास पड़े रहे। वह सज्जन आदमी अपना कारोबार भूलकर मेरी देखभाल में लग गये। इतना कौन करता है? मेरी बीमारी ठीक करने में उनका क्या स्वार्थ था? क्या सम्बन्ध था उनसे मेरा? मैं उनका कौन था कि उन्होंने मेरे लिए इतना किया? अपने पैसे खर्च कर, अपना समय देकर और अपने नौकर-चाकरों की मदद से उन्होंने मुझे चंगा किया था। लेकिन उन्होंने ऐसा क्यों किया था?

उसके बाद दीपंकर की तरफ देखकर चाचाजी ने कहा — अब समझ लो। रुपये से संसार में बहुत कुछ मिल सकता है, लेकिन भुवनेश्वर बाबू का स्नेह क्या रुपये से मिल सकता है?

लक्ष्मी दी कुछ बोलीं नहीं और चाचीजी भी चुप रहीं। दीपंकर भी चुप रहा।

चाचाजी कहने लगे — जैसे बाप, वैसी बेटी। मैंने भुवनेश्वर बाबू से कहा था, लड़की है तो क्या हुआ, पढ़-लिख लेने पर लड़कियाँ आपके लिए लड़कों से बढ़कर होंगी। — फिर उन्होंने लक्ष्मी से कहा — जानती हो लक्ष्मी, भुवनेश्वर बाबू का पत्र आया है, वे तुम्हारे रेजल्ट के बारे में जानकर बहुत खुश हुए हैं। उन्होंने लिखा है कि सती को भी यहीं भेज दूँगा। वहाँ रहने पर उसकी पढ़ाई ठीक से नहीं होगी।

अब रुककर चाचाजी ने चाचीजी से कहा — हाँ, खूब याद आया, मैं तो बताना ही भूल गया था। रसोइये से कह देना कि कल मैं बहुत सवेरे निकल जाऊँगा।

चाचीजी ने पूछा — कल बहुत सवेरे क्यों?

— नौकरी का मामला है, एकदम परेशान कर डाला। यही देखो न, बर्मा में था। वहाँ बड़ा आराम था। वहाँ जैसी महँगाई यहाँ नहीं थी। अचानक तबादले का आर्डर आया और इतने दिन रहने के बाद वहाँ से चले आना पड़ा। हुक्म मानने का नाम ही नौकरी है। यह अगर दासता नहीं है तो और क्या है! अब शायद एक दिन पटने में बदली कर देगा, हुक्म होने में क्या देर लगती है!

दीपंकर उठा।

चाचाजी भी उठे। बोले — जो कह दिया, याद रहेगा न दीपू बाबू, मतलब अगर तुमसे पीटता तो है तुम बरदाश्त मत करना, तुम भी उसे पीटना। पिटाई का प्रतिकार पिटाई है। इस संसार में आँसू की कोई कीमत नहीं है। कष्ट की भी कोई कीमत नहीं देता।

— लेकिन उसके बदन में बड़ी ताकत है।

चाचाजी ने कहा — फिर तुम मुझसे आकर कह देना।

लक्ष्मी दी बोलीं — लक्ष्मण अब शायद इसे पीटने की हिम्मत नहीं करेगा चाचाजी। मैंने बहुत पीटा है उसे।

चाचाजी ने कहा — बहुत अच्छा किया है। इस संसार में पिटाई की दवा पिटाई है। गांधीजी चाहे जो कहें —

उस दिन दीपंकर वहाँ ज्यादा देर नहीं रहा। उसने सोचा कि शायद माँ घबड़ा रही होंगी कि बेटा कहाँ गया। लेकिन चाचाजी की बात सुनकर उस दिन उसके मन में बड़ा द्वन्द्व मच गया था। फिर किसकी बात सही है? अघोर नाना की या चाचाजी की? या प्राणमथ बाबू की बात सही है? या किरण के मुँह से सुनी सोने के कार्तिक-वाले घाट के हिमालय वाले उस साधु की बात सही है? किसकी बात अधिक सही है। एक बार लगा कि चाचाजी की बात सही है। रुपया-पैसा रहने पर भी उस दिन चाचाजी प्लेग से मरने लगे थे। लेकिन भुवनेश्वर बाबू ने उनको क्यों बचा लिया, किस लालच में उन्होंने चाचाजी की उतनी सेवा-टहल की? लेकिन दूसरे ही क्षण उसके मन में आया कि अगर रुपया-पैसा होता तो इतने दिन किरण का बाप बीमार न रहता। अब तक वह ठीक होकर स्कूल में गणित पढ़ा सकता था। लेकिन चाचाजी की भी उमर हुई है, उन्होंने भी दुनिया देखी है। फिर क्या चाचाजी का देखना गलत है?

दीपंकर रोज देखता था कि चाचाजी कोट-पतलून पहने दफ्तर जा रहे हैं। ईश्वर गांगुली लेन से निकलकर वे सीधे कुंडु पोखर के पास पहुँचते थे। वहाँ से उनको ट्राम या बस मिल जाती थी। ईश्वर गांगुली लेन के बहुत से लोग दफ्तर जाते थे, लेकिन चाचाजी का दफ्तर जाना दूसरी तरह का था। उनके लिए समय की पाबंदी नहीं है। किसी-किसी दिन वे तड़के निकल जाते थे और काफी रात को लौटते थे। उस समय इस मकान का सदर दरवाजा बन्द हो जाता था। केवड़ातल्ला की तरफ से 'हरि बोल' की आवाज और साफ सुनाई पड़ती थी और आँगन में खड़े होने पर सुनाई पड़ता था हाजी कासिम के बगीचे की तरफ झुंड के झुंड सियार बोल रहे हैं। उस समय सब लोग सो जाते थे। कालीघाट, मन्दिर, पथरपट्टी और नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट में कोई उस समय जागता न था। अघोर नाना भी उस समय घड़े-लोटे-गड़ुए के पास शरीर ढीला छोड़कर थोड़ी देर के लिए बेहोश-से हो जाते थे। लेकिन उस मकान में — लक्ष्मी दी के मकान में उस समय भी किसी-किसी दिन बत्ती जलती थी। उस समय भी रसोइये और नौकर की आवाज सुनाई पड़ती थी। शायद उस दिन उस समय चाचाजी दफ्तर से लौटते थे। पता नहीं कैसा दफ्तर था चाचाजी का! वह कैसा दफ्तर है कि वहाँ इतनी रात तक काम होता है। चाचाजी किस दफ्तर में काम करते हैं? कैसा काम करते हैं?

लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि उन लोगों के आने के बाद चन्नूनी न जाने क्यों शांत हो गयी। वह चिल्लाती जरूर है, लेकिन वैसी भयानक चिल्लाहट नहीं। शायद उसने उन लोगों के घर जाकर उनसे दोस्ती कर ली है। उस दिन दोपहर में गमछे से ढककर वह एक थाली भात ला रही थी।

आँगन में आते ही चन्नूनी का चिल्लाना शुरू हो गया — अरे मुंहझौंसियो! तुम सब के मुंह में आग दूं। तीसरे पहर दो मुट्ठी भात मुंह में डालूंगी, वह भी तुम सब

से बरदाश्त नहीं होता।

दीपंकर ने पूछा — किसको गाली दे रही हो पन्नूनी ?

— देखो न बेटा, इन मरभुक्खियों को। दूर से इन ओंगर-चोट्टियों की गंध मिल गयी है।

दीपंकर ने देखा पन्नूनी की दोनों पालतू बिल्लियाँ मुँह ऊपर किये उसके पाँवों में लपटती चली आ रही हैं।

दीपंकर ने पूछा — तुम उन लोगों को क्यों नहीं गाली बकती पन्नूनी ? उन नये किरायेदारों को ? क्या तुम उन लोगों को ओंगरचोट्टिन कहकर गाली नहीं बक सकतीं ? उस घर की लड़की मुझे बहुत पीटती है।

इसके जवाब में पन्नूनी ने कहा — हाय-हाय ! बेचारी की माँ नहीं है, बाप को परदेश में छोड़कर वह यहाँ रह रही है, उसको क्यों गाली बकूँगी बेटा ? उन लोगों को गाली देने से मेरा धरम रह सकेगा भइया ?

पन्नूनी की थाली में गमछे से ढका महीन चावल का भात है, मछली के दो बड़े-बड़े टुकड़े हैं और अलग से दाल व सब्जी। अब पन्नूनी पहले की पन्नूनी नहीं है। उन लोगों ने मानो पन्नूनी को कौड़ियों के मोल खरीद लिया है। पन्नूनी मानो उन लोगों की खरीदी हुई बाँदी है। अघोर नाना की बात ही सही है। अघोर नाना ने सही कहा है। पैसे से सब कुछ खरीदा जा सकता है। पैसे से लछमन को भी खरीदा जा सकता है। दीपंकर के पास पैसा होगा तो लछमन उसे कभी नहीं पीटेगा।

ऊपर से उतरकर पीछे वाले दरवाजे के पास आते ही अचानक किसी ने पीछे से बुलाया।

अरे सुन !

दबी आवाज में पुकार। पीछे मुड़कर देखते ही दीपंकर को बड़ा आश्चर्य हुआ।

लक्ष्मी दी ! उस जगह चारों अँधेरा है। अमड़े के पेड़ के नीचे पीछे वाले दरवाजे के पास एकदम दीपंकर से सटी खड़ी हो गयी लक्ष्मी दी।

लक्ष्मी दी मानो और पास आ गयीं — एकदम आमने-सामने।

बोलीं — दीपू मेरा बड़ा अच्छा है। एक काम कर देगा मेरा ?

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया। लक्ष्मी दी क्यों मुझसे इस तरह प्यार से बात कर रही हैं।

पूछा — क्या काम ?

— यह चिट्ठी एक जने को दे आयेगा ?

लक्ष्मी दी के हाथ में एक लिफाफा है, जिसमें वह चिट्ठी है।

दीपंकर ने पूछा — किसको देना है ?

— बता, तू दे देगा न ?

—जरूर दे दूँगा, आप दीजिए तो —

—किसी से कहेगा तो नहीं ?

लक्ष्मी दी ने कभी इस तरह उससे वात नहीं की । मानो लक्ष्मी दी को इतना ही कहने में पसीना आ गया ।

—नहीं, मैं किसी से नहीं कहूँगा, आप चिट्ठी दीजिए, देकर ही देखिए न !

—फिर एक काम कर ।

कहकर लक्ष्मी दी ने चिट्ठी दीपंकर की कमीज की जेव में रख दी ।

वोली — कोई देखेगा तो नहीं ? तेरी माँ तो नहीं न देखेंगी ?

दीपंकर ने कहा — मैं छिपाकर रखूँगा, किसी को देखने नहीं दूँगा — वताइए किसको देना है ?

लक्ष्मी दी ने वहुत धीरे-धीरे कहा — कुंड पोखर के किनारे मंदिर के पश्चिम तरफ के दरवाजे के पास एक लड़का खड़ा मिलेगा — उसके हाथ में देना ।

—देखने में कैसा है ?

—देखना सफेद पैंट और सफेद शर्ट, पाँवों में सफेद शू और पीले रंग का कोट पहना है । कोट के वटन-होल में गुलाव का फूल है — पहचान पायेगा न ?

—किस समय मिलेगा ?

लक्ष्मी दी ने कहा — कल ठीक सवेरे सात वजे ।

दीपंकर ने कहा — ठीक है । उस समय मैं रोज मन्दिर में फूल चढ़ाने जाता हूँ । आप घवड़ाइए नहीं, मैं दे दूँगा । कुछ कहना होगा ?

लक्ष्मी दी ने कहा — नहीं ।

अव दीपंकर लौटने लगा, लेकिन लक्ष्मी दी ने फिर वुलाया ।

—जरा सुन ।

दीपंकर फिर पास गया तो लक्ष्मी दी ने कहा — यह ले, खा लेना ।

उस अँधेरे में दीपंकर ने देखा, मुट्ठी भर चाकलेट हैं । लक्ष्मी दी ने चाकलेट उसके हाथ में दिया । चाकलेट देकर लक्ष्मी दी चली गयी । दीपंकर पीछेवाला दरवाजा ओढ़काकर आँगन में आकर खड़ा हुआ । उसने फिर मुट्ठी खोलकर देखा । कई चाकलेट हैं । विसातखाने की दुकान में शीशे के डव्वे में जैसा चाकलेट रहता है, वैसा नहीं । उससे अच्छा । पन्नी में लिपटा चौकोर — चौकोर चाकलेट । तुरंत एक मुँह में रख लेने का मन हुआ । लेकिन अचानक न जाने क्या सोचा । छोड़ो, वाद में खाया जायेगा ।

उस समय ठीक से दिन की रोशनी नहीं निकली थी । माँ वहुत पहले वुला चुकी थी । दीपंकर ने मुँह-हाथ धोकर कमीज पहन ली । उसके वाद लक्ष्मी दी की चिट्ठी

जेब में रख ली। हाजी कासिम के मकान के बगलवाले बगीचे में फूल फूलता होगा। बगीचे के एक किनारे दीवार टूटी है। वहीं से अन्दर जाने पर बहुत से पेड़ हैं — गंधराज, स्थलकमल और गुड़हल आदि के। फूल की कलियाँ ही किसी-किसी दिन भर जाती हैं। वह सब फूल वह मन्दिर में चढ़ा आता है। पहले काली जी के, फिर मधुसूदन के मन्दिर में। उसके बाद सत्यनारायण, गणेश, जगन्नाथ, षष्ठी और सब के बाद नकुलेश्वर और गाँव के कार्तिक के मन्दिर में। सभी मन्दिरों में वह फूल चढ़ाता है। सब पुजारी दीपंकर को पहचानते हैं। दीपंकर को देखते ही वे हाथ बढ़ा देते — लाओ बेटा, इधर लाओ।

फूल चढ़ाकर दीपंकर प्रणाम करता है।

माँ ने बता दिया था कि कहना — हे ठाकुर, मेरी पढ़ाई-लिखाई हो। मेरा भला हो, मंगल हो।

बहुत दिन बाद दीपंकर जब रेलवे में डी० टी० आई० हुआ था, तब गड़ियाहाट लेवल क्रासिंग के गेटमैन भूपत ने उसके पाँवों पर माथा टेककर यही कहा था — हुजूर, आप मेरे माँ-बाप हैं। हुजूर का मंगल होगा। भगवान हुजूर को बहुत सुख देंगे।

उस दिन दीपंकर को हँसी आयी थी। अनेक तरह से उसकी मंगल-कामना की है। लाइन-भर के लोगों ने उसके लिए शुभकामना की थी। छोटे से बड़े तक सब उसे सेन साहब के नाम से जान गये थे। बालीगंज स्टेशन का मजूमदार बाबू। साउथ केबिन का करानी बाबू। फिर कौन नहीं! दफ्तर का चपरासी द्विजपद भी उसे कितना चाहता था, उसका कितना आदर करता था। द्विजपद अपने गाँव से कोई बढ़िया चीज लाता था तो पहले सेन साहब को खिलाकर ही खुद खाता था। लेकिन उससे क्या हुआ? क्या फ़ायदा हुआ उससे उसका। और वे चार नोट! जो चार नोट लक्ष्मी दी ने उसके हाथ में दिये थे वह भी तो एक तरह की घूस ही थी। घूस देकर लक्ष्मी दी ने उसे खरीदना चाहा था। कौड़ियों के बल पर उसने दीपंकर का मुँह बन्द करना चाहा था। लेकिन वह मुँह बन्द होना क्या सम्भव है?

— अरे!

अचानक पीछे मुड़कर दीपंकर अवाक् हो गया था। तड़के लक्ष्मी दी आकर पीछेवाले दरवाजे की आड़ में खड़ी हो गयी थी।

धीमी आवाज में कहा था — चिट्ठी ले ली है न? भूला तो नहीं?

दीपंकर ने कहा था — नहीं। यह देखिए न, मेरी जेब में है।

— ठीक है, दिखाने की जरूरत नहीं। तेरी माँ ने तो नहीं देख ली?

— नहीं।

— ठीक कह रहा है न?

दीपंकर बोला था — मैं झूठ नहीं बोलता। चौदह बरस से झूठ नहीं बोला।

लक्ष्मी दी ने फिर कहा था — उसे पहचाना लेगा न ? सफेद पैंट, सफेद शर्ट, सफेद शू, पीला कोट और कोट के वटन-होल में गुलाव का फूल —

— याद है।

कहकर दीपंकर फूल की डलिया लिये वाहर चला गया था।

• • •

सचमुच पूरे कालीघाट में जितने लोग थे, उन सव से अलग थे चाचाजी। दीपंकर ने कितने ही लोगों को देखा था। वचपन में वह कितने ही घरों में गया था। एकदम घर के अन्दर। किरण के घर में, लक्ष्मण के घर में। विमान, फटिक और राखाल आदि सवके घर में। लेकिन चाचाजी के घर से किसी घर का मेल नहीं वैठता था। कालीघाट में किसी के घर में वैसा रसोइया और नौकर नहीं था। किरण लोगों की जीविका भीख माँगकर चलती थी। जनेऊ वेचकर वे चावल, दाल और आलू खरीदते थे। सिर्फ यही नहीं, मधुसूदन के घर जाकर दीपंकर ने देखा कि मधुसूदन और उसके भाई-वहन सव एक साथ भात खाने वैठे हैं। एक थाली में मधुसूदन की माँ ने ढेर सारा भात दाल में सानकर रख दिया है और सव भाई-वहन उस थाली को घेरकर बैठ गये हैं। मधुसूदन की माँ वारी-वारी से सव को खिला रही है। फटिक रहता था पथरपट्टी की गली में। फटिक की माँ लाई वनाती थी। लाई वनाकर सड़क की दुकान में दे आती थीं। उसी पैसे से उन लोगों का खर्च चलता था। ईश्वर गांगुली लेन से निकलकर काली लेन में हालदार लोगों का मकान था। उस मकान में यजमान आते थे, कुमारी पूजा होती थी, भोग और प्रसाद आते थे। काली पूजा से समय वह कितनी वार उस मकान में अपनी माँ के संग गया था। उस मकान के लड़के-लड़कियों को उसने देखा था। लेकिन वह परिवार भी ऐसा नहीं था। वचे अघोर नाना! अघोर नाना के पास भी वहुत पैसा था। अघोर नाना ही नहीं जानते थे कि उनके पास कितना पैसा है। फिर भी अघोर नाना का परिवार कैसा टूटा-विखरा था। उनको देखते ही पंचांग में छपे वूढ़े का चित्र याद आता था। उनके परिवार में सिर्फ विन्ती दी में ही सौम्यता थी।

दिन भर में एक वार भी विन्ती दी की आवाज सुनाई नहीं पड़ती थी।

मां कहती — यह कैसी साड़ी पहनी है तुमने बिटिया ? आज साल भर का त्योहार है । आज कोई बढ़िया साड़ी पहन लो न ।

बिन्नी की मुंह दाबे हंसती ।

मां कहती — क्यों, साड़ी नहीं है क्या ? लाल किनारे की साड़ियों का अम्बार लगा है, वह सब क्या हलवाई की दुकान में जलेबी लपेटने के लिए ? पता नहीं पिताजी की कैसी अक्ल है ?

बिन्नी डर जाती । कहती — आप नाना को कुछ मत कहिए नहीं तो वे समझेंगे कि मैंने ही आप से कहा है ।

मां कहती — तुम्हारा भाग्य है बिटिया — नहीं तो तुम्हारा भाग्य ऐसे क्यों जलेगा ?

उस दिन अघोर नाना घर लौटे तो मां ने बात छेड़ दी ।

कहा — पिताजी, आपसे एक बात कहनी है ।

— क्या, रुपये की ?

अघोर नाना के एक हाथ में नये गमछे की पोटली है और दूसरे में लाठी । माथे पर चन्दन है । सिर पर गेंदे की एक-दो पंखुड़ियां । पांवों में खड़ाऊं । थोड़ी देर पहले वे रिक्शेवाले से पैसे को लेकर झगड़ चुके थे । अब घर में घुसते ही वे अचानक डर गये और उनके कदम पीछे हटे । अब यहां भी पैसा !

बोले — रुपया ? मुंहजला रुपया अभी मैं कहां से लाऊं बिटिया ? तुमने क्या मेरे पास रुपये का पेड़ देखा है ?

मां बोली — मैं आप से रुपये की बात नहीं कह रही हूं । आपका रुपया आपके पास रहे । लेकिन नतनी की शादी करेंगे या नहीं ?

अघोर नाना अब कुछ आश्वस्त हुए । बोले — शादी ! लेकिन उस मुंहजली की शादी में तो रुपया लगेगा । यह तो बताओ कि मैं रुपया कहां से लाऊं ?

— रुपया लगेगा, इसलिए क्या आप उसकी शादी नहीं करेंगे ? फिर आप कैसे उसके नाना हैं ? आप इतना धरम करते हैं, यह भी तो एक धरम का ही काम है । परलोक में आप ही को इसके लिए जवाब देना पड़ेगा । अगर आप उसकी शादी नहीं कर सकते तो उस छोकरी के गले में घड़ा बांध कर गंगा में डुबो दीजिए, झंझट खत्म हो जाय ।

अघोर नाना धोती सहेजकर खड़े हो गये ।

मां बोली — आप उस लड़की की तरफ एक बार देखते भी नहीं । उसकी उम्र हो गयी है । यह भी आप नहीं देखते । लेकिन आप नहीं देखेंगे तो कौन देखेगा ?

अब अघोर नाना बिगड़ गये । बोले — मैं ? मैं क्यों उस मुंहजली को देखूं ? मैं कौन होता हूं ? उस मुंहजली ने मां को खाया है, अपने बाप को खाया है, अब वह मुंहजली क्या मुझे खायेगी ? मुझसे वह सब नहीं होगा !

—आपसे नहीं होगा तो फिर किससे होगा ?

—लेकिन मैं मुंहजला क्या करूँ ? मैं उसका क्या करूँ ? मैं क्या उसका बाप हूँ या उसकी माँ ? मैं उसका कोई नहीं हूँ।

यह कहते हुए अघोर नाना खटाखट सीढ़ी से ऊपर चले गये। ऊपर जाकर भी वे बड़बड़ाते रहे—इन मुँहजलों ने मेरा रुपया देखा है; मेरे पास बहुत रुपया है न ? मैं इन मुँहजलों को घर से निकाल बाहर करूंगा। निकल जाओ मेरे घर से मुँहजलो, निकल जाओ मेरे घर से, निकलो !

बड़बड़ाना किसी तरह नहीं रुकता।

अघोर नाना के ऊपर जाते ही विन्ती दी आयी। वह माँ के पास खड़ी थरथर काँपने लगी।

—दीदी !

माँ बोली—तू चुप रह बहन ! इतना डरने से काम नहीं चलता। औरत बनके पैदा हुई है तो यह सब बरदाश्त करना होगा। अगर बरदाश्त न करेगी तो तू तकलीफ उठायेगी और कोई तेरे लिए कुछ नहीं करेगा। अब तुझे थोड़ा कड़ा होना पड़ेगा—

उसके बाद माँ कहने लगी—ऐसा मैंने बहुत देखा है। एक धोती पहने इतने छोटे बच्चे को लिये मैं अकेली विधवा गाँव छोड़कर भाग आयी थी। मेरे नाते-रिश्ते के लोगों ने मुझे कितना डराया था, लेकिन मैं तेरी तरह डरी नहीं। अगर मैं डरती तो इस लड़के की परवरिश कैसे करती—

सचमुच माँ ने न जाने कितनी तकलीफ उठाकर दीपंकर की परवरिश की थी। दूसरे के घर खिदमत करके माँ ने न जाने और क्या-क्या किया है ? जब जरूरत पड़ी, माँ खुद हेड मास्टर के पास गयी दीपंकर की फीस माफ कराने। माँ अपने संग उसे चिड़ियाखाने ले गयी बाघ, शेर और हाथी दिखाने। माँ ने अपने हाथ से बन्दर को चना खिलाया है। इस तरह उसने अपने बेटे को बहुत कुछ सिखाया है। वही उसे कालीघाट व्यायाम समिति में भरती करा आयी थी।—आज अगर वह जिन्दा होती।

कभी-कभी दीपंकर सोचता था कि आज अगर माँ होती तो न जाने बेटे की तरक्की देखकर कितनी खुश होती ! क्या माँ उसकी तरक्की से खुश होती ! क्या माँ ने उसका सेन साहब बनना ही चाहा था ? माँ ने अपने बेटे को इन्सान बनाना चाहा था। लेकिन वह क्या इन्सान बन सका ? क्या इसी को इन्सान बनना कहते हैं ? क्या नौकरी में तरक्की पाना ही सब कुछ है ? यही डी० टी० आई० और डी० टी० एस० बनना ?

याद है, एक बार एक घटी घटना थी। उस समय वह कालीघाट स्कूल का छात्र था। कालीघाट स्कूल का फ्री स्टुडेंट। लड़कों का थियेटर होगा। दीपंकर माँ से कहकर गया था कि लौटने में रात हो जायेगी। थियेटर हुआ 'विसर्जन' शाम के

नंगा। उसके साथ एक सौ ऊँट, पचास घोड़े और तीस हाथी थे। उसे देखने कालीघाट के सारे लोग उमड़ पड़े थे। माँ के साथ दीपंकर भी गया था। बाबा के मंदिर के चबूतरे के सामने, बाहर वाले कमरे के ठीक दाहिने हाथ जहाँ पशुवलि देने का खाँचा गड़ा था, वहीं आकर साधु खड़ा हो गया था।

एक-एक कर वकरा लाकर उस खाँचे में फँसाकर काटा जा रहा था।

कितने लोग उस खाँचे से माथा छुआकर प्रणाम कर रहे थे। नीचे की रक्त-रंजित भूमि पर उँगली रखकर उसे जीभ से छुआ रहे थे।

एक वकरा लाकर ज्यों ही लुहार वलि देने चला, त्यों ही साधु ने उसे हाथ उठाकर मना किया। साधु मौन था। फिर उसने अपनी गर्दन उस खाँचे में लगाकर न जाने क्या इशारा किया।

फिर तहलका मच गया। लोगों के फुसफुसाने से चारों तरफ एक गूँज-सी उठने लगी। दीपंकर डर गया था। अगर सचमुच साधु की गर्दन काट दी जाय! यदि सच-मुच उसकी वलि चढ़ा दी जाय? अचानक कहाँ से पुलिसवाले आ गये, दारोगा आ गया। उन लोगों ने आकर क्या कहा, समझ में नहीं आया। भीड़ की ठेलाठेली में कुछ सुनाई न पड़ा। खचाखच भीड़ थी। उस; हो-हल्ले में माँ ने दीपंकर का हाथ कसकर थाम लिया।

दीपंकर ने माँ से पूछा था — सिपाहियों ने क्या कहा माँ?

माँ ने कहा था — पुलिस वकरे की वलि वन्द कर देगी।

— क्यों?

माँ ने कहा था — उनके भी तो प्राण हैं, उनको भी कष्ट होता है।

— लेकिन माँ काली तो वकरा खाती हैं। वे क्या खायेंगी?

माँ ने कहा था — माँ काली भगवान है। भगवान को खाने की जरूरत नहीं पड़ती।

माँ नहीं जानती थी। वह नहीं जानती थी कि भगवान का नाम लेकर जो दूसरों को ठगते हैं, वे भगवान का नाम लिये विना भी वैसा कर सकते हैं। जो अत्याचार करना जानते हैं, उनके लिए वहानों की कमी नहीं है। कोई भगवान के नाम पर अन्याय करता है, तो कोई राजा के नाम पर, कोई देश के नाम पर! वात एक ही है। भगवान हो, या राजा, या देश। असल में वह वहाना है। वकरा वेजुवान है, कुछ बोल नहीं सकता। लेकिन मनुष्य भी क्या वेजुवान है? अघोर नाना भगवान के नाम पर लोगों को ठगते हैं, लेकिन कभी किसी यजमान ने इसका विरोध नहीं किया।

एक दिन दीपंकर ने अघोर नाना से पूछा था — अघोर नाना, आप तो यज-मानों को ठगते हैं, वे कुछ नहीं कहते?

अघोर नाना को शायद उस दिन प्रणामी में अच्छी रकम मिली थी। उनका मिजाज खुश था। कहा — हट मुँहजले, क्यों कहेंगे? वे भी तो ठगते हैं!

— वे किसको ठगते हैं ? देवताओं को ?

— तू बड़ा बेवकूफ है ! मेरे वकील यजमान ठगते हैं मुवक्किलों को, डाक्टर यजमान ठगते हैं रोगियों को।

— और मुवक्किल किसको ठगते हैं ? रोगी किसको ठगते हैं ?

अघोर नाना की बात देखकर उस दिन दीपंकर हैरान रह गया था। लगता था, नाना सब जानते हैं। माँ से ज्यादा जानते हैं। पापा जी से ज्यादा जानते हैं। शायद प्राणमथ बाबू से भी ज्यादा जानते हैं। वे आँखों से देख नहीं पाते, कानों से सुन नहीं पाते, फिर भी आश्चर्य है कि सब कुछ जानते हैं !

दीपंकर ने कहा था — फिर तो दुनिया में सबको सब ठगते हैं ? है न ?

अघोर नाना ने कहा था — हाँ रे मुँहजले, सबको सब ठगते हैं। मैं ठगता हूँ बिन्ती को, बिन्ती ठगती है छिटे को और छिटे ठगता है फोटा को।

दीपंकर ने कहा था — लेकिन मैं कभी किसी को नहीं ठगूँगा अघोर नाना !

अघोर नाना बोले थे — क्यों नहीं रे मुँहजले ? तू ठगेगा अपनी माँ को, तेरी माँ ठगेगी मुझे ....

दीपंकर ने कहा था — नहीं अघोर नाना, मैं कभी किसी को नहीं ठगूँगा।

अघोर नाना चिढ़ गये थे। उन्होंने झिड़का था — जा मर मुँहजले ! अगर नहीं ठगेगा तो तू खुद पछतायेगा, खुद तकलीफ उठायेगा, मेरा क्या ? मेरा ठेंगा ! मुझे क्या करना है।

लेकिन कितना आश्चर्य है ! अघोर नाना की बात दीपंकर के जीवन में इस तरह सच निकलेगी, यह किसने सोचा था ! क्या अकेले लक्ष्मण ने ही उस पर ज्यादती की थी ? क्या लक्ष्मण ने ही राजा का प्रसाद मठरा और बदला चाँदा था ? क्या लक्ष्मण संसार में एक ही है ? इतने दिन इस संसार में रहता रहा दीपंकर, सब कुछ देख-सुनकर आज वह सद्धियाहाट लेवल क्रासिंग तक पहुँचा है, लेकिन अब तक क्या उसे एक ही लक्ष्मण मिला है ?

एक दिन सती ने कहा था — तुम इन्सान नहीं हो दीपू ! अगर तुम इन्सान होते ....

दीपंकर ने कहा था — मैं देवता भी नहीं हूँ सती ....

सती ने पूछा था — फिर तुम क्या हो ?

दीपंकर ने कहा था — आखिर मैं क्या हूँ, तुम्हीं बताओ न ....

सती ने कहा था — तुम पशु हो, तुम जानवर हो दीपू ! तुम्हारा मुँह देखने पर पाप लगता है। अब तुम मुझे तंग न करो, चले जाओ यहाँ से — निकल जाओ !

कहकर सती जार-जार से रोने लगी थी। दीपंकर ने उस दिन सती को सान्त्वना नहीं दी थी, आश्वासन नहीं दिया था। सती को वहाँ, उसी हालत में छोड़कर वह चला आया था।

लेकिन यही सती जिस दिन पहले-पहल कलकत्ते आयी थी उस दिन कैसा प्रलय मचा था ! प्रकृति ने कैसा रुद्र रूप धारण किया था ! फिर भी दीपंकर को सती अच्छी लगी थी। भवरे-भवरे बाल। जूड़ा नहीं बनाती थी सती। घुँघराले बाल उसके कंधों पर फैले रहते थे। साड़ी का आँचल कंधे से पीठ पर लहराता था। उस सज्जा में वह बड़ी अच्छी लगती थी। भवरे बाल लिये वह स्कूल जाती थी। कालेज में पढ़ते समय वही बाल देखने के लिए कितनी बार दीपंकर मुड़कर सती को देखा करता था। बाल भी इतने खूबसूरत होते हैं, दीपंकर पहले नहीं जानता था। विन्ती दीदी के सिर में बहुत कम बाल थे। फिर भी माँ जूड़ा बना देती थी। लेकिन सती का सारा सौन्दर्य मानो उसके बालों में घर कर चुका था। लक्ष्मी दी तो सती की ही बहन थी — सगी बहन, लेकिन लक्ष्मी दी के सिर में उतने बाल कहाँ थे ? दोनों की शक्ल मिलती थी, लेकिन बालों की सुन्दरता में अंतर था।

एक दिन दीपंकर को अकेले में पाकर लक्ष्मी दी ने उसे बुलाया था। उस दिन स्कूल में छुट्टी थी। अमड़े के पेड़ पर बैठा कौआ काफी देर से काँव-काँव कर रहा था।

उस कौए की तरफ देखते ही लक्ष्मी दी पर निगाह पड़ी। पीछे वाले दरवाजे पर खड़ी वह दीपंकर को हाथ के इशारे से बुला रही थी।

दीपंकर दौड़कर गया था।

लक्ष्मी दीदी ने कहा — अन्दर आ।

दीपंकर अन्दर गया तो लक्ष्मी दी ने दरवाजा बन्द कर लिया। लक्ष्मी दी ने शायद बालों में खुशबूदार तेल लगाया था, उसकी तेज खुशबू आ रही थी। दीपंकर ने सीधे लक्ष्मी दी की तरफ देखा। उसने सोचा — क्या मुझसे कोई गलती हो गयी है ? लक्ष्मी दी का चेहरा गंभीर क्यों है ?

लक्ष्मी दीदी ने कहा — कल तूने चिट्ठी नहीं दी थी ?

— क्या ?

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया। नहीं दी — क्या मतलब ? सही आदमी को ही वह बराबर चिट्ठी देता आया था। कहा — क्यों ? रोज जिसको चिट्ठी देता हूँ, कल भी उसी को दी थी।

लक्ष्मी दी बोली — फिर उसे चिट्ठी क्यों नहीं मिली ? उसने लिखा है ....

दीपंकर बोला — वाह ! मैंने इतने दिन आपकी इतनी चिट्ठियाँ उसे दीं और कलवाली चिट्ठी ही उसे नहीं दी ? आप क्या कहती हैं ?

— फिर उसे क्यों नहीं मिली ? क्या किया उस चिट्ठी का ?

लक्ष्मी दी की आँखों में गुस्से की झलक दिखाई पड़ी। बहुत दिन हो गये लक्ष्मी दी ऐसी नाराज नहीं हुई थी !

— बताता क्यों नहीं वह चिट्ठी कहाँ फेंक दी ? कहाँ रख दी ?

दीपंकर बोला — वाह रे ! आप बेकार नाराज हो रही हैं। मैं आपकी चिट्ठी

इतना कहकर दीपंकर लौटने लगा था कि लक्ष्मी दी ने फिर बुला लिया — सुन दीपू !

दीपंकर रुक गया ।

लक्ष्मी दी बोली — रुक, मैं अभी आती हूँ ।

झटपट लक्ष्मी दी सीढ़ी से ऊपर गयी । थोड़ी देर बाद नीचे आयी । जल्दी-जल्दी सीढ़ी चढ़ने-उतरने से वह हाँफने लगी थी ।

बोली — यह ले !

दीपंकर को देने के लिए लक्ष्मी दी चाकलेट लायी थी ।

हाथ पीछे कर दीपंकर ने कहा — क्या ?

लक्ष्मी दी बोली — उस दिन जो दिया था ।

दीपंकर बोला — मैं चाकलेट नहीं लूंगा ।

लक्ष्मी दी मानों चौंकी । बोली — क्यों ? क्यों नहीं लेगा ? तू चाकलेट नहीं खाता ?

दीपंकर बोला — खाता हूँ । लेकिन मैं आपसे नहीं लूंगा ।

— मैंने क्या गलती की ?

दीपंकर बोला — मैंने आपका उस दिन का दिया चाकलेट भी नहीं खाया — ज्यों का त्यों रखा है । आप मुझे चाकलेट न दीजिए लक्ष्मी दी !

— क्यों, क्या हुआ ?

दीपंकर बोला — आप चाकलेट नहीं देंगी, तो भी मैं आपकी चिट्ठी पहुँचा दूंगा । आप जितनी बार कहेंगी, मैं आपकी चिट्ठी पहुँचा दूंगा । आप जो काम करने को कहेंगी, मैं कर दूंगा । लेकिन आप चाकलेट न दिया कीजिए । मैं आपके पाँवोंपडता हूँ ।

लक्ष्मी दी बोली — आखिर क्या हुआ, बता न ?

दीपंकर बोला — आप समझती हैं कि चाकलेट न देने पर मैं आपकी चिट्ठी नहीं पहुँचाऊंगा ।

लक्ष्मी दी बोली — ठीक है, चिट्ठी पहुँचा देना लेकिन चाकलेट लेने में क्या है ?

दीपंकर बोला — चाकलेट दिये विना भी देखिए न, चिट्ठी पहुँचाता हूँ कि नहीं ?

लक्ष्मी दी हँसकर पास आयी, दोनों हाथों में दीपंकर का चेहरा लेकर प्यार करने लगी और बोली — क्यों रे ? तू मेरा इतना काम क्यों करना चाहता है ?

सिर झुकाये दीपंकर ने कहा — ऐसे ही ....

— लेकिन मैं तो तुझे पीटती हूँ ? फिर भी तू मुझपर नाराज नहीं होता ?

दीपंकर ने कोई जवाब नहीं दिया । लक्ष्मी दी की छाती में मुँह छिपाये रहना उसे बड़ा अच्छा लग रहा था । लक्ष्मी दी के वदन से न जाने कैसी खुशबू आ रही थी ।

लक्ष्मी दी कहने लगी — अब मैं तुझे कभी नहीं पीटूंगी ....

इतना कहकर लक्ष्मी दी ने दीपंकर की मुट्ठी में चाकलेट ठूंस दिया ।

बोली — मैं कहती हूँ, चाकलेट ले ले। मैं दे रही हूँ, इसलिए लेना चाहिए। तू तो बड़ा अच्छा लड़का है, तुझे ऐसा नहीं करना चाहिए।

दीपंकर ने चाकलेट लिया। अब उसने कोई आपत्ति नहीं की।

लक्ष्मी दी बोली — पग्गो सवेरे चिट्ठी दे आयेगा न ?

— दे आऊँगा।

लक्ष्मी दी ने कहा — अब तू जा।

फिर जरा रुककर वह बोली — याद रहेगा न, पग्गो सवेरे ...

लक्ष्मी दी ऊपर चली गयी। दीपंकर दरवाजे के बाहर आकर खड़ा हुआ। आँगन में तेज धूप थी। कौआ उस समय भी बेमतलब काँव-काँव किये जा रहा था। लू भी रही थी। अमरूद के पेड़ के नीचे छाँह में कुछ देर खड़ा रहा दीपंकर।

कुछ देर नहीं, काफी देर खड़ा रहा। गर्मी की दोपहरी में दरवाजा बंद कर सब सो रहे थे। अघोर नाना शायद उस दिन निकले नहीं थे। चन्नुनी भी जल्दी-जल्दी सब काम निपटाकर अपने कमरे में दरवाजा बन्द कर ऊँघ रही थी। किरणी दी पता नहीं अपने कमरे में क्या कर रही थी। छिटे और फोटा खाना खाकर कहीं दम लगाने चले गये थे — शायद पतपतट्टी में किसी पानवाले की दुकान में, नहीं तो और दूर बाजार के उत्तर में बस्ती में किसी ठिकाने पर थे। दोपहर में ईश्वर गांगुली लेन का रूप और ही रूप रहता था। यहाँ-वहाँ गलियों के छज्जों पर। बहुत दूर नीले आसमान में कई चीलें गोलाई में उड़ रही हैं। दीपंकर के मकान की छत पर बाँस में टँगी एक पतंग फड़फड़ा रही है। अब थोड़ी देर में कलेवा के भोंपू बजाते हुए सड़क से गुजरेंगे। उसके बाद सीक में फँसाकर बर्फ का गोला बेचनेवाला आयेगा। फिर सड़क पर पानी छिड़कनेवाली गाड़ी आयेगी। उसके बाद धर्मदास ट्रस्ट मॉडल स्कूल में छुट्टी की घंटी बजेगी। उसके साथ कालीघाट में शाम होने लगेगी।

देर तक अमरूद के पेड़ के नीचे खड़े रहकर भी दीपंकर तय नहीं कर पाया कि क्या किया जाय। क्या लक्ष्मी दी ने आज उसे इतना प्यार किया ? उसके चेहरे पर हाथ फेरकर और उसकी ठुड्डी पकड़कर लक्ष्मी दी ने कितना प्यार किया ! उस समय भी मानो हवा में लक्ष्मी दी के बदन की मीठी खुशबू उड़ रही थी। सहसा दीपंकर को लगा कि आज की दोपहरी और दिनों की तरह नहीं है। आज की दोपहरी कुछ अधिक मीठी है। कौए का काँव-काँव भी उतना कर्कश नहीं। दूर नीले आसमान में सिर के ऊपर जो चीलें चक्कर काट रही थीं, वे मानो चीलें नहीं — दीपंकर के मन की इच्छाएँ थीं। उसके मन की इच्छाएँ चील के रूप में आसमान में उड़ रही थीं। गर्मी की यह दोपहर दीपंकर को बड़ी अच्छी लगी। ऐसा तो कभी नहीं होता। कभी भी नहीं होता। चारों तरफ धूप। उसने अमरूद के पेड़ की छाया में खड़े दीपंकर को लगा बड़ा आराम मिला। उसने पेड़ की तरफ देखा तो लगा कि वह कौआ टकटकी लगाकर उसी को ताक रहा है। इतनी देर तो वह काँव-काँव कर रहा था, लेकिन अब चुप है। मानो वह कौआ

दीपंकर को देखकर मन में कुछ सोच रहा है। दीपंकर को अपनी तरह वह कौआ भी वड़ा अकेला लगा।

—अरे, आ, आ ....

हाथ वढ़ाकर दीपंकर उसे वुलाने लगा।

कौआ पहले कुछ चौंका। भागने के लिए उसने पंख फड़फड़ाये। फिर न जाने क्या सोचकर रुक गया और एकटक दीपंकर की तरफ देखने लगा।

दीपंकर को याद आया कि यही कौआ उस दिन उसकी थाली से चावल खाने के लिए झपटा था। यही कौआ रोज अघोर नाना के कमरे में घुसकर चावल, केला और मिठाई खाता है। हाजी कासिम के वाग के कोने में नारियल के कई पेड़ हैं। शायद वहीं किसी पेड़ में यह कौआ रहता है। उस दिन शायद इसी कौए ने छतवाले कमरे के रोशनदान से कवूतर का अंडा खाकर नीचे गिराया था। वड़ा दुष्ट है यह! कितनी वार दीपंकर ने इसके साथ एक वच्चा कौआ भी देखा था। उसके रोएँ भी ठीक से उगे नहीं थे। वह सिर्फ मुँह वाये तुतली वोली में काँव-काँव करता था और यह कौआ न जाने कहाँ से मुँह में क्या-क्या लाकर उसके मुँह में ठूँसता था। वच्चे के मुँह के अन्दर का हिस्सा सुर्ख लाल था। शायद वह वहुत छोटा था। उसके वाद एक दिन सवेरे फूल लेने के लिए वगीचे में जाकर दीपंकर ने देखा कि वहुत सारे कौए वहाँ काँव-काँव कर रहे थे। उस काँव-काँव से वहाँ खड़ा होना मुश्किल था। सौ, दो सौ, हो सकता है तीन सौ कौए वहाँ जुटे हों। दीपंकर डर गया था। तड़के ही कौओं का यह जमघटा क्यों? सभी कौए पेड़ों की नीचे की डालियों पर वैठे काँव-काँव कर रहे थे। वे एक वार उड़कर इस पेड़ पर आ रहे थे तो एक वार उस पेड़ पर जा रहे थे। उनकी भाग-दौड़ का अंत नहीं था।

पहले दीपंकर समझ नहीं पाया। लेकिन थोड़ा आगे वढ़कर उसने देखा कि एक वच्चा कौआ नीचे कीचड़ में मरा पड़ा है। उसके रोएँ विखरे पड़े हैं। उसकी एक आंख निकल आयी है! अरे, इस वच्चे को किसने मारा? क्या किसी वाज ने?

उसके वाद उस वच्चे कौए को दीपंकर ने नहीं देखा। अव यही कौआ अकेला अमड़े के पेड़ पर वैठा चिल्लाता है। यही अघोर नाना के कमरे में घुसकर चावल, केले और मिठाई पर झपट्टा मारने की कोशिश करता है। यही माँ की रसोई में घुसकर जूठन खाता है। यही भात की थाली और मछली की चोइंयों पर झपट्टा मारता है। इसे देखते ही माँ हाथ उठाकर दुरदुराती है, भाग-भाग यहाँ से। लेकिन यह वहुत दूर नहीं भागता, इसी अमड़े के पेड़ की किसी और डाली में छिपकर वैठा रहता है। फिर इधर-उधर देखकर काँव-काँव करता है।

दीपंकर ने फिर उस कौए को वुलाया — आ! आ!

कौए का संदेह मिटा नहीं। वह गर्दन टेढ़ी कर देखने लगा। दीपंकर को ही देखने लगा।

दीपंकर ने उस कौए के सामने आँगन में पावरोटी बिखेर दिया।
—खा ले तू! सब तू खा ले! मैंने तुझे सब दे दिया। यह सब तेरा है। खाकर पेट भर ले। अब से लक्ष्मी दी जितना पावरोटी देगी, मैं सब तुझे ही दूँगा। आ! आ!

कौआ डरता हुआ नीचे आँगन में आ गया।

—मुझे पावरोटी की जरूरत नहीं है रे! मैं लक्ष्मी दी की चिट्ठी तो ही पहुँचा दूँगा। पावरोटी देने पर भी दूँगा, न देने पर भी। लक्ष्मी दी मुझे बड़ी अच्छी लगती है! ले, तू सब खा ले। यह सब तेरा है।

• • •

तड़के उठते ही माँ ने कहा—इतने सबेरे तू कहाँ जा रहा है? आज कहीं मत जा।

दीपंकर ने कहा—मैं दौड़कर जाऊँगा और जल्दी चला आऊँगा माँ। एकदम भागते दौड़कर चला आऊँगा।

माँ बोली—लेकिन बादल घिर आया है। अभी पानी बरसना शुरू हो जायेगा, देख लेना...

दीपंकर ने आसमान की तरफ देखा। रात के चार बजे से ही ऐसा अँधेरा। मंदिर में घंटा बजने की आवाज सुनाई पड़ी। शायद बड़े बाबू के मंदिर में पूजा हो रही है। बड़े बाबू के घर में राधाकृष्ण की मूर्तियाँ हैं। और समय कोई खास धूम-धाम नहीं होती, लेकिन जन्माष्टमी पर होती है। किरण और दीपंकर ने कितनी ही बार जन्माष्टमी के दिन वहाँ जाकर बताशे खाये थे। उस दिन वहाँ जो जाता था, उसी को बताशों का प्रसाद मिलता था।

जिस दिन दीपंकर कालीघाट स्कूल से 'विसर्जन' थियेटर देखकर लौट आया था, उस दिन काफी रात हो गयी थी। बहुत देर में थियेटर खत्म हुआ था। उस दिन इसी बड़े बाबू के मकान के पास दीपंकर ने भूत देखा था।

सोता-जागता असली भूत।

बड़े होकर, इस संसार में अनेक बार अनेक भूत दीपंकर ने देखे। लेकिन उस

दिन उसने जो भूत देखा था, उसकी तुलना किसी से नहीं हो सकती।

उस समय भी 'विसर्जन' नाटक के संवाद दीपंकर के कानों में गूँज रहे थे। प्राणमय बाबू की वह कहानी उसे याद आ रही थी। सतयुग से भी पहले किसी जमाने में इस दुनिया में राजा नहीं था, सजा नहीं थी और धर्म की शरण में रहकर सब एक दूसरे की रक्षा करते थे। उसके बाद एक दिन मोह जगा, लोभ आया और क्रोध। फिर उससे पैदा हुई आसक्ति। लोगों ने अपना विवेक खो दिया। वेद का लोप हो चला। कोई याग-यज्ञ नहीं करता। देवता यज्ञ का नैवेद्य खाकर जिन्दा रहते हैं। वे भूखों मरने लगे।

तब सब देवता ब्रह्मा के पास पहुँचे।

ब्रह्मा ने उनसे कहा — तुम लोग विष्णु के पास जाओ। वे ही इसका उपाय करेंगे।

सब देवता विष्णु के पास गये।

विष्णु से उन्होंने कहा — अब पृथ्वी पर कोई यज्ञ नहीं करता, वेद नहीं पढ़ता, बताइए हम क्या खाकर जिन्दा रहें? आप कोई उपाय कीजिए।

विष्णु ने कहा — तुम सब अपने घर जाओ। मैं इसका उपाय करूँगा।

अंत में उपाय किया गया। वह कौन-सा उपाय था? विष्णु ने पृथ्वी पर राजा का सर्जन किया।

विष्णु ने कहा कि अब कोई डर नहीं। यही राजा दुनिया के लोगों पर शासन करेगा। जो दुष्ट हैं उनका दमन करेगा और जो शिष्ट हैं उनका पालन।

इसी तरह पृथु राजा संसार में आया। संसार में शांति लौट आयी। आनन्द लौट आया। धर्म लौट आया। धीरे-धीरे सब अच्छाइयाँ लौट आयीं। संसार के लोग आराम से अपनी जिन्दगी बिताने लगे।

लेकिन अचानक एक बात हो गयी।

किरण भी थियेटर देखकर दीपंकर के साथ लौट रहा था।

उसने कहा — तुझे पता है दीपू, ये अंग्रेज ही हमारे सब से बड़े दुश्मन हैं। जब ये चले जायेंगे, तब देखना कि हम आराम से रहेंगे और तब कुछ भी पैसा देकर खरीदना नहीं पड़ेगा।

दीपंकर ने पूछा — यह तुझसे किसने कहा?

किरण बोला — मैं मीटिंग में गया था, वहीं लेक्चर सुना है। उस दिन एक आदमी ने कहा कि हमारे देश के चारों तरफ जो समुद्र है, हम उसी के पानी से नमक बनाकर खायेंगे। तब आज की तरह पैसा देकर नमक नहीं खरीदना पड़ेगा।

दीपंकर ने कहा — लेकिन उतने नमक से क्या होगा?

किरण बोला — नमक ही तो असली चीज है रे! मैं कभी-कभी सिर्फ नमक से भात खाकर स्कूल जाता हूँ। सिर्फ नमक और भात! जिस दिन नमक नहीं रहता, उस

दिन भात भी नहीं खाया जाता।

दीपंकर ने पूछा — तेरा बाप अभी तक ठीक नहीं हुआ ?

किरण बोला — अभी कैसे होगा ? पहले स्वराज हो जाने दे। लेकिन अब उसमें ज्यादा देर नहीं है।

कब कैसे स्वराज होगा, यह किरण नहीं जानता था। वह सिर्फ पार्क में जाकर भाषण सुनता था और दीपंकर को आकर बताता था। भाषण सुनकर लौटने के बाद वह मस्त हो उठता था। मानो उसका खून खौलने लगता था। वह कई दिन तक छटपटाता रहता था। कई दिन तक वह दूसरी कोई बात नहीं करता था। गुस्सा होने पर उसका चेहरा लाल हो जाता था। उसका रंग काफी गोरा था। लेकिन गंदे कपड़ों में उसका रंग दबा रहता था। कभी वह साफ कपड़ा पहनता था तो उसका चेहरा खिल उठता था।

थियेटर देखकर दोनों काली मंदिर लेन से अंधेरे में लौट रहे थे। काली मंदिर लेन के बाद ईश्वर गांगुली फर्स्ट लेन है। वहीं से किरण दूसरी तरफ चला जायेगा और दीपंकर अपने घर की तरफ आयेगा। गली सुनसान हो चुकी थी। कहीं कोई दिखाई नहीं पड़ा।

किरण एक बार रुका।

बोला — अब तू घर पहुँच जायेगा न दीपू ?

दीपंकर बोला — हाँ, पहुँच जाऊँगा।

— डरेगा तो नहीं ?

दीपंकर ने कहा — नहीं, डर किस बात का ?

— फिर तू जा, मैं चला।

किरण चला गया। दीपंकर ने एक बार सामने की तरफ देखा। जहाँ गली मुड़ी है वहीं गैस बत्ती टिमटिमा रही है। उस गैस बत्ती के बाद ही दीपंकर का मकान है। उन्नीस बटा एक बी ईश्वर गांगुली लेन। दीपंकर को फिर नाटक का वही संवाद याद आया वह मन ही मन उसे दोहराने लगा। मानो वही इस दुनिया में असली है। उसने दोहराया —

माँ, तुमने सोचा है
दरिद्र का धन ! राजा यदि चोरी
करता है तो उस पर इस संसार
का राजा है। लेकिन तुम यदि
चोरी करती हो तो कौन न्याय करेगा ?

दीपंकर को ठीक से संवाद याद नहीं था। फिर भी इतना याद था कि राजा के ऊपर भी राजा है। इस संसार का राजा। वही सब अपराधियों को दंड देता। वही दंड देता है और वही क्षमा करता है। लेकिन संसार का राजा अगर अन्याय करता है

तो कौन न्याय करेगा ?

एकाएक दीपंकर को लगा कि चंडी बाबू के मकान के बगलवाले बगीचे में कुछ हिला।

— क्या है ? वह क्या है ?

वहाँ काफी अँधेरा था। उस बगीचे के पास अँधेरा और ज्यादा था। थोड़ा और बढ़ने पर दीपंकर दौड़कर घर पहुँच सकता है। लेकिन आगे बढ़ना चाहने पर भी वह बढ़ न सका। मानो उसके दोनों पाँव रुक गये। सारे बदन में झुनझुनी दौड़ गयी। पाँव थर-थर काँपने लगे।

— वह क्या है ? क्या है वह ?

दीपंकर को लगा कि एक भूत दाँत निकालकर उसकी तरफ देख रहा था। वह देख रहा था और सिर हिलाता हुआ हँस रहा था। उस खामोश हँसी से मानों गली गूँज उठी। पल भर में दीपंकर का सारा शरीर बर्फ जैसा ठंढा हो गया। उसने सारा बल लगाकर जोर से चीखना चाहा, लेकिन उसी वक्त उस अँधेरे में वह छायामूर्ति और जोर से हँस पड़ी। कितनी भयानक हँसी ! उस नीरव हँसी की गूँज से ईश्वर गांगुली लेन पर तनी अँधेरे की घनी काली चादर चिथड़ा-चिथड़ा हो गयी !

माँ जग रही थी। आहट मिलते ही उसने दरवाजा खोल दिया।

— कौन ? दीपू आया है ? बड़ी रात कर दी ?

लेकिन दीपंकर के चेहरे की तरफ देखकर माँ घबड़ा गयी। दीपंकर मानो गूँगा बन गया है। उसका बदन पसीने से तर हो रहा है। घर में घुसते ही वह माँ से लिपट गया।

— अरे ! क्या हो गया है रे तुझे ?

दीपंकर बोला — माँ, मैंने भूत देखा है।

— भूत ?

माँ अवाक् हो गयी। दीपंकर को तख्त पर बिठाकर वह पंखा झलने लगी। थियेटर देखने गया था लड़का, लेकिन एकाएक यह क्या हो गया ?

माँ ने पूछा — थियेटर देखा है ?

हाँफता हुआ दीपंकर बोला — थियेटर देखकर लौट रहा था कि चंडी बाबू के मकान के कोने में देखा कि एक भूत मेरी तरफ देखकर हँस रहा है।

माँ हँसी। बोली — हट ! क्या देखते तूने क्या देख लिया है। भूत मनगढ़ंत होता है। भूत नाम को कोई चीज नहीं है। तू इतना बड़ा हो गया है लेकिन अब भी भूत के नाम से डरता है।

दीपंकर बोला — नहीं माँ। मैंने अपनी आँखों से देखा है। वह मेरी तरफ देखकर हँस रहा था। तुम चलो तो तुम्हें भी दिखा दूँ।

— चल तो, देखूँ कहाँ है तेरा भूत ?

माँ दीपंकर को साथ लिये हुए वहाँ गयी थी । उस समय रात के अन्दर बारह बजे थे । एक भी हो सकता था । उस समय कालीघाट के सब लोग सो रहे थे । चारों तरफ सन्नाटा था । कहीं कोई दिखाई नहीं पड़ रहा था । घोषाल बाबू के मकान का नम्बर तीस था । तीस नम्बर ईश्वर गांगुली लेन । तीन हिस्सों में बँटा बहुत बड़ा मकान । उस मकान में वह जन्माष्टमी की झाँकी देखने बहुत बार माँ के साथ गया था । बहुत बड़ा मकान, लेकिन बाहर से पता नहीं चलता । रासलीला अन्दर पूजामण्डप वाले आँगन में होती है । सखियों के हाथों में तार-जड़ित-रंग के कुसुम रहते हैं । विशाखा, रुक्मिणी आदि आठों सखियाँ और ललिते ही देव-देवियाँ । उस दिन सड़क पर खोंचे और पापड़ की दुकान लगती है । पूजामण्डप का आँगन लोगों से खचाखच भर जाता है । आँगन में चारों तरफ कृष्णलीला की मूर्तियाँ होती हैं । कालियदमन, वस्त्रहरण, बकवध, पूतनावध आदि कितनी ही मूर्तियाँ । उन मूर्तियों को देखता हुआ दीपंकर रासमंच के पास जाता था । बिजली से चलने वाले झूले में राधाकृष्ण झूलते हैं । सारे बच्चों को एक-एक बताशा प्रसाद में मिलता था ।

उस समय घोषाल बाबू के मकान में बड़ी भीड़ होती है । लेकिन दूसरे समय रासलीला वाले मकान में अँधेरा रहता है । लोग वहाँ जाते भी नहीं । शाम को वहाँ आँगन में घर के इक्का-दुक्का बच्चे खेलते हैं ।

एक बार घोषाल बाबू ने दीपंकर को भगा दिया था ।

दीपंकर उस समय और छोटा था । धर्मदास ट्रस्ट मॉडल स्कूल में पढ़ता था । भवानीपुर में उस समय न जाने कुछ हो गया था । शाम के छः बजे थे । किरण के साथ दीपंकर हरीश पार्क से आगे काफी दूर निकल गया था । दोनों चौड़ा बाजार के पास पहुँच गये थे । मैदान में फुटबाल का खेल हो रहा था । वहीं देखकर दोनों हरीश मुखर्जी रोड से लौटने लगे । उसी समय अचानक भयानक धमाका हुआ । मानो कहीं बम फटा हो ।

उस आवाज से मानो कान बहरे हो गये । दीपंकर चौंका । सड़क पर जो लोग थे, सब चौंके । सब ने इधर-उधर भागना शुरू किया ।

किरण बोला — भाग चल दीपू !

कहकर किरण दौड़ने लगा ।

दीपंकर भी उसके साथ दौड़ पड़ा ।

सब लोग भागने लगे । उसके बाद एक और बम फटा । दीपंकर ने देखा कि पुलिस का एक आदमी जो साइकिल से वहीं आ रहा था, धड़ाम से गिर पड़ा । उसके पीछे एक और आदमी साइकिल से आ रहा था । उसे भी किसी ने गोली मार दी । वह भी उसी तरह गिर पड़ा । वह तो एकदम दीपंकर के सामने गिरा । उसके शरीर से भल-भल खून बहने लगा । यह देखकर दोनों बच्चों के होश-हवास उड़ गये । वे बेतहाशा भागने लगे ।

शंभुनाथ पंडित स्ट्रीट से दौड़ना शुरू कर दोनों हाजरा रोड के मोड़ पर आकर रुके। रुककर हाँफने लगे। उस समय भी हल्ला हो रहा था।

दौड़ता हुआ कोई आया। उसने किसी से कहा — वसंत चटर्जी को मार डाला है।

— किसने मारा है ?

— स्वराजियों ने।

वस इतना ही दोनों वच्चों ने सुना। वसंत चटर्जी कौन है, किसने उसे मारा है, यह सब सुनने का मौका नहीं मिला। उस समय तो जो जिधर पा रहा था, भाग रहा था। दोनों लड़के फिर भागने लगे। ईश्वर गांगुली लेन में आकर दोनों ने दम लिया। उसी समय उनको लगा कि उधर से कोई साइकिल से आ रहा है। उसे देखते ही दोनों लड़के घवड़ा गये। कहीं यह उनको पकड़ न ले !

एकाएक किरण ने कहा — भाग चल दीपू ....

सामने चंडी वावू के रासलीला वाले मकान का लोहे का फाटक खुला है। किरण उसी फाटक से अन्दर चला गया। उसके साथ दीपंकर भी गया। उस समय तक सारे कलकत्ते में खवर फैल चुकी थी कि स्वराजियों ने पुलिस के डिप्टी कमिश्नर वसंत चटर्जी को गोली मार दी है। चंडी वावू बूढ़े हैं। आँगन में कुर्सी पर बैठे वे फर्शी हुक्का पी रहे थे।

चंडी वावू ने झटपट खड़े होकर आवाज लगायी — रामधनी, गेट बन्द कर दे।

पता नहीं, रामधनी कहाँ था। वह दौड़ा हुआ आकर गेट बन्द करने लगा। लेकिन उसके पहले ही दोनों लड़के अंदर पहुँच चुके थे।

लड़कों को देखते ही चंडी वावू कुर्सी छोड़कर आये।

वोले — गैट आउट, गैट आउट ....

याद है, चंडी वावू को देखकर उस दिन किरण और दीपंकर निरापद आश्रय छोड़कर शाम के झुरमुटे में वाहर गली में निकल आये थे। दो छोटे वच्चों को उस दिन चंडी वावू ने शरण नहीं दी थी। भाग्य के भरोसे उन दो वच्चों को छोड़कर चंडी वावू ने स्वयं निश्चिंत होना चाहा था। लेकिन विधाता ने अंत तक उन्हें निश्चिंत होने नहीं दिया।

लेकिन वह वहुत वाद की वात है।

फिर उसी चंडी वावू के घर जाना है। गली में एक-दो लोग दिखाई पड़े। दीपंकर को साथ लिये माँ उसी वक्त चली। शीतलातल्ले के वाद मोड़ घूमते ही चंडी वावू का मकान है। मकान के दाहिने हाथ वगीचा है। चारों तरफ देखकर दीपंकर उस समय भी डरने लगा।

माँ वोली — डर मत ! मैं तो हूँ। वता कहाँ है तेरा भूत ?

अब दीपकर आँख मीचकर सामने ताक गया। अँधेरा उसी तरह है। अँधेरे में धूप उसी तरह हँस रहा है — दाँत निकालकर एकदम पहले की तरह।

दीपकर बोला — वह देखो। वहीं तो है।

माँ देर तक उस तरफ देखती रही। उसने अगल-बगल चारों तरफ अच्छी तरह निगाह दौड़ायी।

दीपकर ने कहा — अब देख लिया न? मैंने कहा था ...

माँ बोली — अच्छा, इधर आ ....

इतना कहकर माँ घोष बाबू के मकान के फाटक के पास गयी। फाटक के बगल में दरबान का कमरा है। उस कमरे में सब लोग सो चुके हैं। सिर्फ फाटक पर गैस बत्ती जल रही है। कमरे का दरवाजा बंद है। सब नींद में बेहोश हैं। इतनी रात को भला कौन जागता रहेगा?

माँ ने आवाज दी — रामधनी, ओ रामधनी!

माँ ने कहा — रामधनी! बेटा, जरा सुनना तो ..

रामधनी बाहर आया। बाहर आकर उसने कहा — कौन?

माँ बोली — बेटा, मैं दीपू की माँ हूँ। जरा बगीचे की तरफ की बत्ती जला दोगे? एक बार उस बत्ती को जलाओ न।

रामधनी पुराना आदमी है। माँ भी पुरानी है। रामधनी ने उस अँधेरे में माँ को पहचान लिया।

बोला — कौन? दीपू की माँ? क्या कह रही हो दीपू की माँ?

माँ बोली — बगीचेवाली बत्ती एक बार जला दो न रामधनी। बस, एक बार जला दो।

रामधनी ने स्विच दबाया तो बगीचे में रोशनी फैल गयी। माँ ने देखा और दीपकर ने भी। बगीचे में लोहे की सलाख की [illegible] के ऊपर एक बाँस में [illegible] हंडा लगाया गया है। सामने की तरफ मिट्टी की हाँडी टँगी है। उस बाँस में एक फटी कमीज भी पहना दी गयी है। बन्दर भगाने के लिए बाँस को एक आदमी का रूप दिया गया है। हवा चलने से कमीज का छोर धीरे-धीरे हिल रहा है। कमीज फटी-[illegible]र है। आश्चर्य है! दीपकर कितनी ही बार दिन में उधर से गया है, लेकिन कभी उसने उसे देखा नहीं।

माँ ने रामधनी से कहा — अब बत्ती बुझा दो रामधनी।

फिर माँ ने दीपकर से कहा — देख लिया न कैसा भूत है!

उस दिन उतनी रात को माँ ने आँखों के आगे सबूत दे दिया था कि संसार में [भूत] नाम का कुछ नहीं है। भूत से लोग जो कुछ समझते हैं, वह उनके [illegible] ता कहता है। लेकिन दीपकर ज्यों-ज्यों बड़ा होता गया, समझता गया कि माँ [illegible] अनिश्चित मालूम नहीं थी। किसी जमाने में शायद भूत नाम का कुछ नहीं था,

लेकिन अब है। बाद में भूतों ने पृथ्वी पर जन्म लिया है। मनुष्यों के इस संसार में अनगिनत भूत पैदा हो गये हैं। उनकी शकल-सूरत और साज-पोशाक सब सामान्य मनुष्य की तरह है, लेकिन वे मनुष्य नहीं हैं। वे भूत हैं। मनुष्य का परिचय लेकर वे समाज में घुले-मिले रहते हैं। लेकिन जब जरूरत पड़ती है, तब वे दूसरों को डराते हैं। जरूरत पड़ने पर वे कल्पना के भूत के समान ओझल भी हो जाते हैं। दीपंकर के लिए यह विचित्र अनुभव है।

उस दिन दीपंकर हाजी कासिम के बगीचे से झटपट फूल लेकर दौड़ता हुआ मंदिर की तरफ गया था। पहले काली माँ का मन्दिर। माँ के मंदिर में गुड़हल के फूल चढ़ाने पड़ते हैं। उसके बाद सत्यनारायण, गणेश, जगन्नाथ, षष्ठी और भुवनेश्वरी के मंदिर हैं।

दीपंकर बोला — जरा जल्दी कीजिए पंडित जी। तेज पानी आ रहा है।

सचमुच आसमान में बादल छाया था। मंदिर की छत के ऊपर बादल और काला लग रहा था। चबूतरे पर सिर नवाकर मंदिर की प्रदक्षिणा करते हुए कुंडुपोखर वाले दरवाजे की तरफ जाने का रास्ता है। उस तरफ जूता रखने की जगह है। पेड़े की दुकान है। पेड़ा अन्दर बनता है। उसके बाद पूरब तरफ वाला दरवाजा है।

तब तक मंदिर में भीड़ होने लगी थी। बड़ी-बड़ी गाड़ियाँ आकर खड़ी हो रही थी। उन गाड़ियों से गोरे-गोरे मारवाड़ी औरत-मर्द नंगे पाँव उतर रहे थे। उनको देखते ही भिखारियों का दल उनके पीछे लगा था। उजले महीन कपड़े, गोरा-चिट्टा रंग। उनमें भक्ति अधिक होती है। वे पंडों को अच्छी दक्षिणा देते हैं। लेकिन दीपंकर तो एक पैसा भी प्रणामी नहीं देता। सिर्फ फूल खाकर क्या माँ काली का पेट भरता है?

सहसा बदन पर दो एक बूँद पानी गिरा।

दीपंकर मेहराब के नीचे आकर खड़ा हो गया। यहाँ खड़ा होने पर सिर नहीं भीगेगा। चिट्ठी भी नहीं भीगेगी। लक्ष्मी दीदी की चिट्ठी जेब में है। यहाँ से जितनी दूर देखा जा सकता है, वह देखने लगा। पानी बरसता रहा। शायद पानी की वजह से वह नहीं आ रहा है। या, आसमान में बादल होने से समय का सही अंदाज नहीं मिल रहा है। क्या आज मैं कुछ जल्दी आ गया? दीपंकर ने सोचा। सात बजे हैं क्या? उधर पेड़े की दुकान में दीवाल घड़ी है। घड़ी देख ली जाय तो अच्छा हो।

सिर बचाकर दुकान के सामने आकर दीपंकर ने घड़ी देखी। सात बजकर बीस मिनट हो चुके हैं। आज दूसरे दिनों से देर हो रही है अब तक उसे आ जाना चाहिए था! इसी समय तो वह आता है। देखने में यह कितना सुन्दर है।

किसी-किसी दिन वही पहले आकर इंतजार करता है।

दीपंकर के पास आते ही उसके चेहरे पर मुस्कान छा जाती है।

वह कहता — आ गये ?

दीपंकर जेब से चिट्ठी निकालकर देते हुए कहता — यह लीजिए।

दीपंकर के हाथ से लिफाफा लेकर वह उसे फाड़कर चिट्ठी पढ़ने लगता है। दीपंकर उसे देखता रहता है। कभी-कभी उसका चेहरा लाल हो जाता है। उसका रंग बहुत गोरा है। ज्यादातर वह सिल्क का [illegible] कोट-पैंट पहनता है। सवेरे [illegible] यह खूब सजधजकर आता है। चिट्ठी पढ़ता हुआ वह जेब से सिगरेट का टिन निकालता है। फिर माचिस से सिगरेट जलाता है। उसके बाद मुँह से ढेर-सा धुआँ छोड़ता है। एक बार पढ़ लेने के बाद वह दोबारा चिट्ठी को पढ़ता है। कभी-कभी फिर पढ़ता है। पता नहीं इतनी क्या बातें लक्ष्मी दी की चिट्ठी में रहती हैं। कभी देर हो जाने पर वह टैक्सी से आता है। टैक्सी से उतरकर सीधे दीपंकर के पास आता है। कई-कई बार चिट्ठी को पढ़कर वह उसे जेब में रखता है। कभी-कभी वह फिर उसे निकालकर पढ़ता है। पता नहीं, वह कितनी बार उसे पढ़ता है।

फूल की डलिया लिये दीपंकर चुपचाप खड़ा रहता है।

आखिरी बार के लिए सिगरेट का कश खींचकर वह कहता है — गुड बाय!

फिर वह पूरब की तरफ चल देता है।

दीपंकर धीरे-धीरे [illegible] के दक्षिण किनारे से ईश्वर गांगुली लेन में घुसता है। जितनी देर चिट्ठी देने में लगती है, उतनी देर उसे बड़ा अच्छा लगता है। वह आदमी साफ बंगला नहीं बोल पाता। पता नहीं किस जात का है! लेकिन वह कुछ अजीब-सा है। किसी से उसका मेल नहीं बैठता। कालीघाट के किसी की तरह वह नहीं है। मधुसूदन के चबूतरे पर जो लोग गप्प लड़ाते हैं — जैसे मधुसूदन का बड़ा भाई या दुखी चाचा — उनकी तरह भी नहीं। [illegible] ट्रस्ट स्कूल के प्राणमथ बाबू या रोहिणी बाबू जैसा भी नहीं। हरीश पार्क में लेक्चर सुनने जाकर दीपंकर जिन लोगों को देखता है, उनमें से किसी की तरह भी वह नहीं है। वह साहब जैसा लगता है। अलीपुर या उधर चिड़ियाखाने की तरफ साहबों के बड़े-बड़े मकान हैं। उसी तरफ का वह लगता है। [illegible] बाबू भी बड़े आदमी हैं। उनके पास भी दरबान, ड्राइवर और गुमाश्ता हैं, लेकिन उनके लड़के भी देखने में ऐसे नहीं लगते। भवानीपुर में कुछ ऐसे लोग हैं। घोड़ाबाजार में घुड़दौड़ का खेल देखने जाकर दीपंकर ने ऐसे लोगों को देखा है। जिस दिन पुलिस का डिप्टी कमिश्नर [illegible] मारा गया था उस दिन भी [illegible] ने बैठे दो आदमियों को देखा था। कोट-पैंट नहीं, वे [illegible] का कुर्ता और धोती [illegible]हने हुए थे। बदन का रंग काफी गोरा था। [illegible] और हाथ में [illegible] पीते सिगरेट। दो बार धाँय-धाँय होने के बाद वे दोनों [illegible] की तरफ [illegible] गये थे।

याद है, दीपंकर उस दिन लक्ष्मी दी की चिट्ठी देकर लौट रहा था कि अचानक [illegible]ने से दौड़ता हुआ आता किरण दिख गया।

पास आकर किरण ने हाँफते हुए कहा — सर्वनाश हो गया है दीपू ....

जरूर किरण का बाप मर गया है। दीपंकर मुँह बाये किरण की तरफ देखता रहा।

— क्यों, क्या हुआ ?

किरण की आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगा।

दीपंकर ने पूछा — क्या तेरा बाप मर गया ? कब ?

किरण बोला — नहीं। अखबार में छपा है रे, सी० आर० दास मर गया है। अब क्या होगा ?

सी० आर० दास मर गया है ? अब क्या होगा ? किरण को बहुत बड़ी आशा थी। उसे आशा थी कि सी० आर० दास राजा होगा। अब क्या होगा ? किरण का चेहरा सूखा हुआ था। गूँगा बना किरण दीपंकर की तरफ देखता रहा।

किरण बोला — उस साधु ने कहा था कि सी० आर० दास देश का राजा बनेगा।

दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या जवाब दिया जाय। वह भी मुँह बाये किरण की तरफ देखता रहा। किरण की आँखों के आगे मानो सारी दुनिया खाली हो चुकी है। अगर राजा ही मर गया तो कैसे लोगों का भला होगा ? कैसे किरण के बाप की हालत सुधरेगी ? फिर क्या जिन्दगी भर किरण को जनेऊ बेचना पड़ेगा ? जीवन भर भीख माँगनी होगी ? फिर उन लोगों का मकान कैसे बनेगा ? स्वराज कैसे आयेगा ? इन सारे सवालों का जवाब न पाकर उस दिन किरण एकदम निराश हो गया था।

काफी देर तक चुप रहने के बाद दीपंकर ने पूछा था — आज स्कूल नहीं जायेगा ?

किरण ने कहा था — आज स्कूल बंद है — कल भी रहेगा।

उसके बाद थोड़ा रुककर किरण ने कहा था — कल सी० आर० दास को केवड़ातल्ले लाया जायेगा। तू चलेगा देखने ?

दीपंकर बोला — हाँ, दोनों जने चलेंगे।

किरण बोला — जल्दी चलेंगे, नहीं तो वहाँ बड़ी भीड़ हो जायेगी।

उस दिन घर आकर दीपंकर पहले लक्ष्मी दी के पास गया था। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट के मोड़ पर मधुसूदन के चबूतरे में उस समय बड़ा मजमा जुटा था। अखबार जमीन पर लोट रहा था। सब उसे पढ़ चुके थे। अब सब बहस में जुटे थे।

दीपंकर वहाँ एक मिनट रुका। कई उम्र के लोग। दूनी चाचा ही सब से निराला है।

दूनी चाचा कह रहा है — मर गया है, बहुत अच्छा हुआ है। बताओ, यह सब चरखे-वरखे से क्या फायदा होता ? क्या चरखा चलाकर आयरलैंड आजाद हुआ है ? क्या चरखे के बल पर अमरीका स्वतंत्र हुआ है ? बोलो, मुझे समझा दो।

मधुसूदन के बड़े भाई ने कहा — इसके दूनी चाचा, प्रमदा चाची को हुआ। अब विरोध करने वाला कोई नहीं रह गया।

पंचू दा खड़ा था। उसने कहा — नहीं, यह सब चाची-ओची का काम नहीं है। एक बगानी था, वह भी चला गया। अभी आप लोग समझ नहीं पा रहे हैं, बाद में समझेंगे। दोस्त रहते कोई दोस्त की कदर नहीं करता।

पोंने दा एक तरफ खड़ा था। बोला — अब तक उस जे० एन० सेनगुप्त का भरोसा है। हम लोगों का वही एक सहारा है।

पचू दा ने बात लोक ली। कहा — अरे रहने दो। किसने किसका मुकाबला कर रहे हो! बड़े-बड़े बहादुर चले गये अब यह . .

मधुसूदन के बड़े भाई ने मौका पाकर कहा — देखो भाई, यह सुभाष बोस क्या करता है।

दूनी चाचा बहुत खूब जानता है। उसकी दलील के आगे बड़े-बड़े दिग्गज चारों खाने चित हो जाते हैं। दूनी चाचा सारी दुनिया को चुटकी में उड़ाने वाला बोस है। सिर्फ अंग्रेज सरकार को वह नहीं छेड़ता। उसी दूनी चाचा ने कहा — जिसका नाम बोस है उसी का नाम सुभाष। अब सुभाष बोस का नाम लो या जे० एन० सेनगुप्त का — सब एक साल में चित हो जायेगा।

दीपंकर इन बातों का मतलब समझ नहीं रहा था। ऐसा बखेड़ा पहले भी होता था, अब भी होता है। यह तो हमेशा लगा है। लेकिन सी० आर० दास मर गया है, लेकिन कोई रो तो नहीं रहा है! किरण की तरह कोई शोक से व्याकुल नहीं हो उठा। न जाने क्यों उस दिन दीपंकर को बड़ा आश्चर्य हुआ था।

चला ही जा रहा था वहां से दीपंकर। एकाएक पोंने दा ने उसे बुलाया — अरे दीपू, जरा सुन। जरा इधर आ।

दीपंकर पास जाते ही पोंने दा ने पूछा — अरे, तेरे मकान में कौन किरायेदार आया है?

दीपंकर बोला — लक्ष्मी दी के चाचाजी —

— लक्ष्मी दी! अरे, वही जो लड़की बस में बैठी स्कूल जाती है? युनाइटेड [मिश]नरी में पढ़ती है? हां, देखा है, बस जाती है। उसका बाप क्या करता है? सधीन [बा]बू क्या करता है?

दीपंकर बोला — सधीन बाबू लक्ष्मी दी के बाप नहीं, चाचा हैं। उनके बाप [..]ों में लकड़ी का कारोबार करते हैं। वे बड़े अमीर हैं।

— हां, तो उसका चाचा क्या करता है?

दीपंकर बोला — दफ्तर में काम करते हैं।

पोंने दा ने पूछा — किस दफ्तर में?

दीपंकर ने कहा — मुझे नहीं मालूम ...

दूनी चाचा ने छोने दा से पूछा — तुझे ठीक से मालूम है ?

छोने दा ने कहा — मैंने देखा है। मैंने अपनी आँखों से देखा है दूनी चाचा।

फिर दूनी चाचा की बात पर सब लोग आपस में न जाने क्या धीरे-धीरे बतियाने लगे। दीपंकर कुछ समझ नहीं पाया। उसे बस यही लगा कि सी० आर० दास के मरने पर कोई परेशान नहीं है। हमेशा की तरह सब इधर-उधर की बातों में लगे हैं। कहीं कोई बदलाव नहीं आया।

दीपंकर सीधे लक्ष्मी दी के घर गया। नीचे बरामदे में चाची सब्जी काट रही हैं। वे नहा चुकी हैं। पीठ पर भीगे बाल फैले हैं। दीपंकर ने उनके पास जाकर पूछा — चाचीजी, लक्ष्मी दी कहाँ हैं ?

चाचीजी ने कहा — ऊपर पढ़ रही है। चले जाओ....

— आपने सुना है चाची जी, सी० आर० दास मर गये हैं ?

— कहाँ ? अनमने होकर चाची जी ने पूछा।

दीपंकर बोला — दार्जिलिंग में। बाप रे, कल केवड़ातल्ले में बड़ी भीड़ होगी।

चाची जी जिस तरह सब्जी काट रही थीं, उसी तरह काटती रहीं। दीपंकर ने कितना कुछ कहा, लेकिन एक बात भी शायद उनके कान में न पहुँची। सालन में कितने आलू पड़ेंगे, यही वे रसोइये को समझाने लगीं। आश्चर्य है ! ये लोग जरा भी नहीं समझ रहे हैं कि बंगालियों का कितना बड़ा सर्वनाश हो गया ! आश्चर्य है ! सचमुच आश्चर्य है। दीपंकर सीधे सीढ़ी से ऊपर गया। ऊपर कोनेवाले कमरे में चाचाजी अखबार पढ़ रहे हैं। खूब मन लगाकर पढ़ रहे हैं। दीपंकर के आने की आहट वे सुन नहीं पाये। दीपंकर ने उनके सामने जाकर कहा — चाचाजी !

चाचाजी ने सिर उठाकर देखा। कहा — अरे, दीपू बाबू !

कहकर वे फिर अखबार पढ़ने लगे।

दीपंकर बोला — सी० आर० दास मर गये हैं। अब क्या होगा चाचाजी ?

अखबार पढ़ते हुए उन्होंने पूछा — क्या कहा ?

दीपंकर ने फिर कहा — सी० आर० दास मर गये हैं। अब क्या होगा चाचाजी ?

चाचाजी ने अखबार पर से निगाह हटाये बिना कहा — क्या होगा ? कुछ नहीं !

— कुछ नहीं होगा ?

चाचाजी ने इस सवाल का कोई जवाब नहीं दिया। दीपंकर थोड़ी देर वहाँ खड़ा रहा। उसने देखा, अखबार में बड़े-बड़े हरफों में छपा है—

DESHBANDHU PASSES AWAY

A Bolt from the Blue

लिफाफा फाड़कर लक्ष्मी दी मानो साँस रोके चिट्ठी पढ़ने लगी। लक्ष्मी दी वड़ी खूवसूरत लग रही हैं। न जाने क्यों एकाएक लक्ष्मी दी वड़ी सुन्दर लगी। नहाने के वाद वह पढ़ने वैठी है। उसने लाल रंग की साड़ी पहन रखी है। गले में सोने का हार झिलमिला रहा है। गले का काफी हिस्सा खुला है। गोरी चिकनी गर्दन—कहीं कोई शिकन नहीं! विन्ती दी ऐसे गला खुला नहीं रखती। शेमिज से उसके गले का हिस्सा ढँका रहता है। लेकिन लक्ष्मी दी का व्लाउज और तरह का है। लक्ष्मी दी देर तक मन लगाये चिट्ठी पढ़ती रही। पता नहीं, इतना क्या चिट्ठी में लिखा रहता है। लक्ष्मी दी भी रोज़ चिट्ठी में इतना क्या लिखती रहती है! वह आदमी सारा काम छोड़कर एक चिट्ठी के लिए रोज सवेरे कुंडुपोखर के पास क्यों आता है? चिट्ठी पढ़ते समय वह इतना खुश क्यों नजर आता है? क्यों उसके कान लाल हो जाते हैं? क्यों वह वार-वार सिगरेट का धुआँ छोड़ता है? क्यों वारवार एक ही चिट्ठी को पढ़ता है?

लक्ष्मी दी ने चिट्ठी पर से निगाह हटाये विना मानो अपने आप से कहा—कल तो नहीं जा सकती।

दीपंकर ने पूछा—कहाँ नहीं जा सकतीं लक्ष्मी दी?

—नहीं, तुमसे नहीं कहा।

फिर दीपंकर की तरफ देखकर कहा—वोल, अव मैं क्या करूँ? कल मैं नहीं जा सकती।

दीपंकर ने पूछा—क्या आपको कहीं चलने के लिए लिखा है?

लक्ष्मी दी वोली—यह तू समझ नहीं पायेगा। वह एक जगह है। लेकिन कल सती आ रही है।

—सती! सती आ रही है?

लक्ष्मी दी वोली—कल सती को लेने के लिए जाना है। वह कल आ रही है न। पिताजी ने लिखा है—कल शाम के पाँच वजे सती का जहाज यहाँ पहुँच जायेगा।

सती! सती के वारे में दीपंकर ने इतना सुना था कि मानो उसका देखना हो गया था। मानो सती को देखना उसके लिए वाकी नहीं था। कभी-कभी उसने सती को मानो अपनी आँखों के आगे देखा भी। उसके वारे में उसने चाचाजी, चाचीजी और लक्ष्मी दी से इतना सुना था कि वह उसके लिए अपरिचित नहीं थी। लक्ष्मी दी की तरह सती भी उसके लिए जानी-पहचानी हो गयी थी।

दीपंकर ने कहा—कल सती आयेगी, लेकिन आपने वताया तक नहीं।

लक्ष्मी दी वोली—आज ही पिताजी का टेलीग्राम मिला।

—लेकिन किसके संग आयेगी? सती अकेली आ जायेगी?

लक्ष्मी दी ने कहा—वर्मा से एक परिवार कलकत्ते आ रहा है। उसी के

दीपंकर अन्दर नहीं जा सकता। माँ ने मना जो कर रखा है। तब तक पार्क लोगों से खचाखच भर गया था। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट से पार्क में जानेवाले रास्ते में बड़ी भीड़ थी। रेलिंग तक लोग ठसाठस भरे थे। सवेरे साढ़े छः बजे ट्रेन के स्यालदा पहुँचने की बात है। उसके बाद वहाँ से अरथी हाजरा रोड से काली घाट रोड होकर टालीगंज रोड पहुँचेगी। लोग अभी से पेड़ों पर बैठ गये हैं। छोटे-बड़े सभी पेड़ों पर लोग बैठे हैं। दिन के बारह बजे, एक बजा — फिर भी पता नहीं।

अचानक भीड़ में किरण दिखाई पड़ा।

— अरे किरण! तू यहाँ? मैं तेरे घर गया था।

किरण बोला — तेरे लिए मैं बहुत देर तक इंतजार करता रहा। उसके बाद आया। आ, यहाँ खड़ा हो जा। यहाँ खड़े होने पर ठीक से देख पायेगा।

आखिर ढाई बजे ऐसा लगा कि लोगों की बहुत बड़ी लहर सामने से आयी। उस लहर के आते ही मानो सबकी आशा-आकांक्षा एक क्षण के लिए उमड़ पड़ी। विशाल जन-समुद्र की लहर सबकी व्यथा-कातर दृष्टि को आच्छन्न कर एक क्षण में उमड़ पड़ी। आर्त चीत्कार के साथ सबकी प्रतीक्षा का अंत हो गया। लगा, अब कहीं कोई नहीं है। कहीं से किसी की आहट नहीं मिलती। पूरा कलकत्ता शहर मानों क्षण भर में वीरान और सुनसान हो गया। दीपंकर को लगा कि उस नीरवता का प्राचीर तोड़कर फूलों का पहाड़ उसकी तरफ बढ़ रहा है। सिर्फ फूल और फूल इतने फूल भी हैं संसार में! दीपंकर की आत्मा मानों हाहाकार कर उठी। उसे लगा कि एक बार जी भर कर चीख लेने पर ही शांति मिलेगी, सांत्वना मिल जायेगी।

फूलों का पहाड़ सामने से चला गया। उस समय दीपंकर को होश नहीं था।

किरण के कंठस्वर से दीपंकर होश में आया।

किरण ने कहा — वह देख प्राणमथ बाबू हैं।

वही रूखे-बिखरे बाल, खद्दर की अस्त-व्यस्त पोशाक और मुड़ी एड़ियोंवाला जूता! पान भी उस तरह चबा रहे हैं।

किरण ने कहा — वह देख, महात्मा गांधी हैं।

एक-एक कर किरण ने बहुतों के नाम बताये। किरण सबको जानता है। उसने सबको सभाओं में देखा है।

दीपंकर ने कहा — वह देख अघोर नाना हैं।

अघोर नाना जैसे आदमी भी फुटपाथ पर आकर खड़े हो गये हैं। उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता, फिर भी पता नहीं क्या देख रहे हैं! बैरिस्टर पालित का लड़का निर्मल पालित दिखाई पड़ा। वह भी आया है। बेवकूफ की तरह खड़ा है। खड़े-खड़े संतरा खा रहा है। उसके साथ दरबान है। फटिक दिखाई पड़ा — लक्ष्मण भी। लक्ष्मणचन्द्र सरकार। वह भी आया है। घर लौटकर दीपंकर ने सुना था कि माँ भी छिन्नी दी को साथ लिये आयी थी। दुनी चाचा भी बनियाइन पहने आया था। छोने

रहेगा न ?

—क्यों ?

—क्यों क्या ? इससे साधु खुश होगा। प्रणाम करने पर कौन नहीं खुश होता ? वे भी तो आदमी हैं। फिर प्रणाम करने से तेरा क्या बिगड़ेगा ? उसके लिए पैसा नहीं लगेगा।

जरा रुककर किरण बोला—पैसा ही असली चीज है दीपू। चाहे साधु हो या न हो।

—लेकिन मेरे पास तो पैसा नहीं है।

किरण बोला—पैसा मेरे पास भी नहीं है। अगर पैसा दे सकता तो साधु के पास क्यों आता ? पैसा नहीं देना पड़ता, तभी तो साधु के पास आता हूँ।

—फिर ? फिर वे क्या खायेंगे ? क्या खाकर जिंदा रहेंगे ?

किरण बोला—पैसा देनेवाले बहुत हैं। साधुओं को खिला सकने पर वे अपने को भाग्यवान समझते हैं। लेकिन यह साधु वैसा नहीं है। यह सिर्फ गाँजा पीता है। हिमालय का साधु है न। यह कुछ नहीं खाता।

लेकिन घाट के सामने जाकर किरण रुक गया। कुछ देर वह कुछ बोल नहीं पाया।

बोला—अरे! फिर शायद हिमालय चला गया है।

—फिर ?

किरण बोला—छोड़, हमारा भाग्य खराब है। इधर कई दिन भवानीपुर की तरफ जनेऊ बेचने निकल गया था, इधर आ नहीं पाया—नहीं तो पता चल जाता।

लौटना पड़ा। पथरपट्टी होकर घर की तरफ चलना होगा। किरण नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट चला गया और दीपंकर सीधे लक्ष्मी दी के घर पहुँचा। क्या सती आ गयी है ? सती के आने की बात है न! लक्ष्मी दी की बहन सती। आज ही तो उसके आने की बात है। लक्ष्मी दी ने कहा था। रसोईघर में चूल्हा जलाया गया है। रसोइया आटा सान रहा है। रघु कमरे में झाड़ू लगा रहा है।

दीपंकर सीढ़ी से ऊपर गया। सती के लिए नया पलंग बिछा है। सती और लक्ष्मी दी एक ही कमरे में सोयेंगी।

सीढ़ी से ऊपर पहुँचते ही सामने लक्ष्मी दी मिल गयी। वह नीचे आ रही थी। दीपंकर को देखते ही उसने कहा—क्या हुआ दीपू ? यह कैसी शकल बना ली है ?

दीपंकर बोला—श्मशान गया था। सी० आर० दास मर गये हैं न।

—अच्छा। हम भी अभी आये।

—कहाँ से ?

लक्ष्मी दी बोली—सती को लेने गये थे।

दीपंकर की छाती में मानो हलचल मची।

उस बारिश में दीपंकर सड़क पर आ गया। काली जी के मंदिर से ईश्वर गांगुली लेन काफी दूर है। कमीज-पैंट सब भींग गये। वह दौड़ने लगा। दौड़ता हुआ जब वह लक्ष्मी दी के दरवाजे पर पहुँचा तब एकदम तर हो चुका था। दरवाजा खुला था। सीधे अन्दर जाकर लक्ष्मी दी को चिट्ठी देनी होगी। कहना होगा, वह सज्जन नहीं आये। शायद लक्ष्मी दी नाराज होगी। वह बहुत जल्दी नाराज होती है। लेकिन दीपंकर का क्या दोष है? अगर वह न आये तो दीपंकर क्या कर सकता है?

नीचे सीढ़ी के पास चाचीजी की आवाज सुनाई पड़ी। रघु नल के पास एक थाली में चावल धो रहा है।

दीपंकर सीधे सीढ़ी से ऊपर चला गया। ऊपर बरामदे में कोई नहीं है। दाहिने हाथ अगलबगल सोने और पढ़ने के कमरे।

दीपंकर ने अन्दर झाँककर देखा।

—लक्ष्मी दी!

वहाँ भी किसी की आवाज नहीं मिली। बगलवाले कमरे में भी कोई नहीं है। दूसरी मंजिल एकदम सूनी लगी। वहाँ कोई नहीं है। दीपंकर की कमीज से पानी टपक रहा है। उसने सब कमरों में झाँककर देख लिया। कहाँ गयी लक्ष्मी दी! चाचाजी भी कहाँ चले गये? और दिन तो वे इसी बरामदे में बैठ अखबार पढ़ते हैं। जिस दिन सी० आर० दास मरे थे, उस दिन भी वे वहीं बैठे अखबार पढ़ रहे थे। लक्ष्मी दी के कमरे में सती का पलंग लगा है। दोनों तरफ की दीवार से सटे दो छोटे पलंग। बिस्तर साफ-सुथरे और चमचमाते। सिर्फ छोटी मेज पर चाय की तीन-चार खाली प्यालियाँ और तश्तरियाँ रखी हैं।

—लक्ष्मी दी!

दीपंकर ने फिर आवाज लगायी।

उसके बाद वह सीढ़ी से तीसरी मंजिल में छत पर पहुँच गया। तीसरी मंजिल में एक कमरा है। उसमें चाचाजी सोते हैं। उस कमरे में जाने पर पूरा कालीघाट एक चित्र की भांति दिखाई पड़ता है। छोटे-छोटे मकान, बस्ती, पुआल के छप्पर, काली जी का मन्दिर और हालदार परिवार का मकान। चंडी बाबू की बारादरी की छत उससे कुछ दूर है। वहाँ से बहुत कुछ दिखाई पड़ता है। फिर उस तरफ टीपू सुलतान का भुतहा मकान है। दूसरी तरफ आगुनखाकी का पोखर है। उसके बाद दूर तक फैला धान का खेत। धान का खेत सीधे दक्षिण में रेल लाइन तक चला गया है।

छत पर आते ही दीपंकर ने चाचाजी के कमरे की तरफ देखा। कमरे का दरवाजा खुला है। और दिन चाचाजी के न रहने पर वह कमरा ताला बंद रहता है। उस कमरे में भी लक्ष्मी दी नहीं है। दरवाजे का पल्ला पकड़कर उसने अन्दर झाँका। खाट पर अखबार उलटा पड़ा है। लगा, थोड़ी देर पहले कमरे में कोई था। शेलफ में बहुत सारी किताबें हैं। अखबारों के कई बंडल हैं। एक ट्रंक है। ट्रंक में छोटा-सा ताला लगा

है। सुबह की धूप कमरे के फर्श, बिस्तर की चादर और दीवार के ताखे पर पड़ रही है।

लेकिन लक्ष्मी दी कहाँ गयीं ?

क्या फिर नीचे जाकर चाचीजी से पूछना पड़ेगा ? इतने सबेरे चाचाजी कहाँ गये ? लक्ष्मी दी कहाँ गयीं ?

अचानक दीपंकर को लगा कि छत के उत्तर-पूरब कोने में लक्ष्मी दी खड़ी हैं ! दीपंकर की तरफ उनकी पीठ है। चाचाजी की दूरबीन आँखों से लगाये वह पता नहीं बहुत दूर क्या देख रही हैं। उन्होंने दीपंकर को नहीं देखा।

धीरे-धीरे दीपंकर उनके पास गया।

वह उस समय आँखों से दूरबीन लगाये एकटक कुछ देख रही हैं।

दीपंकर ने बुलाया — लक्ष्मी दी !!

लक्ष्मी दी चौंकीं। चौंककर मुड़ते ही बगल में दीपंकर को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गयीं।

— तू ? तू कब आया ?

दीपंकर बोला — मैं बहुत देर पहले आया हूँ। मैंने हर जगह आपको ढूँढ़ा।

— चिट्ठी दे दी ?

— नहीं, वे नहीं आये।

— नहीं आये ? कैसे नहीं आये ? फिर चिट्ठी किसको दे दी ?

दीपंकर बोला — किसी को नहीं दी। यह लीजिए।

चिट्ठी लेकर लक्ष्मी दी ने उसे एक बार देखा, फिर टुकड़े-टुकड़े कर छत पर फेंक दिया।

दीपंकर बोला — मैं चिट्ठी देने के लिए आठ बजे तक खड़ा रहा, लेकिन वे नहीं आये।

— और कुछ देर रुक जाता ? आयेगा नहीं तो कहाँ जायेगा ?

— मैं देर तक खड़ा रहा। उसके बाद ऐसा पानी बरसना शुरू हुआ कि देखिए न, कैसा भीग गया हूँ।

लक्ष्मी दी ने देखा कि दीपंकर सचमुच भीग गया है।

बोलीं — पानी तो थोड़ी देर बाद रुक गया, उसके बाद धूप भी निकल आयी, तू थोड़ी देर और रुक जाता।

दीपंकर बोला — आप उनको कह दीजिएगा लक्ष्मी दी कि वे ठीक समय पर आ जाया करें। खड़े-खड़े मेरे पाँव दुखने लगते हैं।

लक्ष्मी दी बोलीं — बहुत दूर से आना पड़ता है न, इसीलिए देर हो जाती है। ठीक है, मैं कह दूँगी, अब देर नहीं करेगा।

दीपंकर ने एक साँस रुककर पूछा — दूरबीन है न लक्ष्मी दी ?

— हाँ, बाइनोकुलर है।

—उससे देखा जा सकता है ?

—देखेगा ?

लक्ष्मी दी ने दीपंकर की आँखों से बाइनोकुलर लगा दिया। उसके बाद पूछा —दिखाई पड़ा रहा है ?

दीपंकर ने देखा। बहुत दूर की चीज मानो हाथ के पास दिखाई पड़ने लगी। मानो उसे हाथ से छुआ जा सकता है। काली जी का मंदिर, नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट, किरण का टीनवाला छप्पर, पथरपट्टी में फटिक का मकान, मधुसूदन का मकान, धर्मदास ट्रस्ट मॉडल स्कूल आदि उसे साफ दिखाई पड़ने लगे।

सहसा दीपंकर ने दूरवीन लक्ष्मी दी की तरफ फेरी। लक्ष्मी दी को वह इतने दिन अपने सामने देख रहा है, अब दूरवीन से कैसी दिखाई पड़ती है, यही उसे देखने की इच्छा हुई।

—क्यों रे ? मुझे देख रहा है ?

दीपंकर को सब कुछ धुंधला दिखाई पड़ा।

उसने पूछा —आप क्यों नहीं साफ दिखाई पड़तीं लक्ष्मी दी ? कुछ भी नहीं देख पा रहा हूँ।

लक्ष्मी दी हँसी। बोली —मैं तेरे सामने हूँ न !

—तो क्या सामनेवाला आदमी साफ दिखाई नहीं पड़ता ? मैं आपको दूरवीन से नहीं देखूंगा। दीपंकर ने आँखों से दूरवीन हटा ली।

—क्यों ?

—नहीं, नहीं, आप एकदम अच्छी नहीं लगतीं, आप पहचानी नहीं जातीं।

—ऐसा तो होगा ही। दूरवीन से दूर का आदमी देखा जाता है। पास का आदमी देखने के लिए इसकी जरूरत नहीं पड़ती।

यह सुनकर उसी कम उम्र में दीपंकर न जाने क्यों आश्चर्य में पड़ गया था। सच में लक्ष्मी दी उसके पास है। एकदम मन के पास। अगर लक्ष्मी दी इतने पास न होतीं तो क्या उससे अपनी चिट्ठी भेजती ! उस पर इतना विश्वास करती ! फिर पास के आदमी को दूरवीन से देखने की कोशिश करने पर गड़बड़ हो जाती है। वह एकदम धुंधला दिखाई पड़ता है ! लगता है, मानों बहुत दूर हो। लक्ष्मी दी भी जब दूर चली गयी थी —जब एकदम पहुँच के बाहर चली गयी थी, तभी उसे लगा था कि लक्ष्मी दी मेरे बहुत पास आ गयी है, उसे साफ देख रहा हूँ और आसानी से समझ रहा हूँ।

दीपंकर ने दूरवीन लक्ष्मी दी के हाथ में दे दी।

कहा —आप मुझे दूरवीन से मत देखिए लक्ष्मी दी।

लक्ष्मी दी हँसी। बोली —क्यों ?

—नहीं, मैं धुंधला दिखाई पड़ूंगा ....

—अगर धुंधला दिखाई पड़ेगा तो मैं धुंधला ही देखूंगी। तेरा क्या जाता है ?

कुछ कहे बिना दीपंकर ने विस्तर कंधे पर रख लिया।

उस सज्जन ने पूछा — ले जा पायेगा न ?

दीपंकर ने कंधे पर विस्तर रखकर सूटकेस हाथ में लटका लिया और कहा — ले जाऊँगा।

— देखना। ऐसा दुवला-पतला है तू कि डर लगता है। गिरा मत देना।

दीपंकर चला। उसके पीछे वह सज्जन और सब के पीछे वह लड़की। दीपंकर सोचता रहा कि यह सब क्या हो गया! एकाएक सब कुछ हो गया और बड़ी जल्दीवाजी में! कुछ सोचने या कहने का मौका ही नहीं मिला।

चाचाजी के मकान का दरवाजा खुला था।

— यही मकान है ?

दीपंकर ने कंधे से सामान उतारकर कहा — जी हाँ।

उस लड़की ने पूछा — कितना लेगा तू ?

दीपंकर अवाक् देखता रहा। उसने एक वार उस लड़की के चेहरे की तरफ देखा। इतने दिन इसी के वारे में लक्ष्मी दी से सुनता आया! यही सती है ? जैसा सुना था, शकल तो वैसी है। वैसी ही गोरी और वैसे ही घुँघराले वाल।

उस सज्जन ने कहा — उसे एक आना दे दो।

दीपंकर ने कहा — पैसे की जरूरत नहीं है ....

उस सज्जन ने कहा — क्यों ? दो हलके सामान ले आया, उसके लिए चार पैसे कम हैं ? कम से कम पाँच फुट मिट्टी खोदने पर चार पैसे मिलते हैं। सब नवाब वन गये हैं! वह तो मैं भी ला सकता था।

लड़की ने कहा — चार पैसे से ज्यादा नहीं दूँगी। ले ....

हाथ वढ़ाकर वह चार पैसे देने लगी।

दीपंकर ने कहा — नहीं ....

उस सज्जन ने कहा — इसीलिए वंगालियों का कुछ नहीं होता। दो हलकी चीजें, उसके लिए क्या दो आने देने पड़ेंगे ? नहीं लेता है तो न ले। जाने दे।

उस लड़की ने कहा — लेना है तो ले ले ....

दीपंकर वोला — नहीं।

सज्जन वोले — तुम उसकी खुशामद न करो सती। रहने दो। उसे पता चलने दो कि चार पैसे कैसे कमाये जाते हैं।

दीपंकर धीरे-धीरे गली में आ गया। अगर वह थोड़ी देर और रुकता तो वे वे लोग देख लेते। भीगी कमीज की आस्तीन से उसने आँखें पोंछ लीं।

अचानक दीपंकर के वदन में कुछ आकर लगा। पीछे मुड़ते ही उसने देखा उस सज्जन ने चार पैसे उसकी तरफ फेंके हैं। वे चार पैसे उसके वदन में लगकर जमीन पर झनझनाकर गिरे। उसे लगा कि उसकी अन्तरात्मा चीख पड़ी हो। फिर

कहीं चला जाता है। शायद इस दुनिया में उसका कोई नहीं है। किसी का दुनिया में कोई न होना सचमुच बड़ा कष्ट है। उस दिन उसने लक्ष्मी दीदी का दिया चाकलेट उस कौए को खिलाया था। उसने गपागप सब चाकलेट खा लिया था। नहीं, वह मजे में है! उसे न लज्जा है, न अभिमान। वह सचमुच मजे में है।

दीपंकर ने उसे बुलाया है — आ। आ। आ।

कौआ तिरछी निगाह से दीपंकर की तरफ देखता है। गरदन टेढ़ी कर देखता है कि सचमुच उसके हाथ में खाने की कोई चीज है या नहीं। वह सच में कुछ खिलाना चाहता है या यों ही पुचकार रहा है।

एक दिन दोपहर को माँ दीपंकर को साथ लिए प्राणमथ वावू के घर गयी छुट्टी का दिन था। माँ ने साफ कपड़ा पहना था। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट के आखिरी छोर पर प्राणमथ वावू का मकान है। किसी जमाने में प्राणमथ वावू के पूर्वजों की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। अव धीरे-धीरे सव समाप्त हो गया है।

माँ वोली — मैंने भाभी से कह रखा है, तुझे कुछ सोचना नहीं पड़ेगा ....

दीपंकर ने कहा — लेकिन मैं नौकरी नहीं करूँगा माँ।

माँ ने कहा था — नौकरी नहीं करेगा तो क्या करेगा, वता! वैठे-वैठे खाया करेगा?

दीपंकर वोला — मैं पढ़ूँगा ....

माँ विगड़ गयी थी। वोली थी — पढ़ेगा तो फीस नहीं देनी पड़ेगी? मैं कहाँ से फीस के पैसे लाऊँगी? अघोर नाना कव तक दोनों को खिलाते रहेंगे? मैं तुम्हारी फीस नहीं दे सकती। यह मैंने वता दिया। अव मेरा शरीर नहीं चलता।

प्राणमथ वावू उस समय मकान में नंगे वदन वैठे चरखा चला रहे थे। चारों तरफ आलमारियाँ। आलमारियों में कितावें।

उन्होंने कहा — नहीं दीपू की माँ, जव वह पढ़ना चाहता है, तव तुम उसे पढ़ाओ।

माँ वोली — लेकिन भैया, आप तो मेरी हालत जानते हैं। कहाँ से मैं फीस जुटाऊँगी। जव वह एक महीने का था, तव मेरा भाग्य फूटा और तव से मैंने उसे पाल-पोस कर इतना वड़ा किया। अव मेरा शरीर नहीं चलता। उसका कोई ठिकाना लग जाय तो मैं निश्चिंत होकर आँखें वंद करूँ।

प्राणमथ वावू पान चला रहे थे। वोले — तुम उसे कालेज में भरती कर दो, फीस के लिए सोचना न पड़ेगा ....

सचमुच माँ को फीस के लिए सोचना नहीं पड़ा। दीपंकर कालेज में पढ़ने लगा तो प्राणमथ वावू उसकी फीस देने लगे। हर महीने के शुरू में दीपंकर पहुँच जाता

—नहीं सर।

प्राणमथ वावू ने कहा—अकेले तुम्हीं को रुपया नहीं मिलता, वहुतों को मिलता है। सभी आकर ले जाते हैं, लेकिन तुम्हारी तरह कोई नहीं कहता कि रुपये की जरूरत नहीं है। आज पहली वार तुमने कहा और मैंने सुना ....

क्या जवाव दिया जाय, समझ न पाकर दीपंकर चुप रहा।

प्राणमथ वावू ने कहा—असल में यह रुपया मैं अपनी जेव से नहीं देता। मेरे पास इतने रुपये हैं भी नहीं। कलकत्ते के कुछ वड़े लोग गरीवों की सहायता के लिए मुझे कुछ रुपये देते हैं। वही रुपये मैं तुम लोगों को देता हूँ। फिर मुझसे रुपये लेने में शर्म की कोई वात नहीं। जव तक तुम्हें जरूरत पड़े, तुम लेते जाना। जव जरूरत नहीं रहेगी, तव मत लेना।

दीपंकर ने अव भी कोई जवाव नहीं दिया। वह चुपचाप खड़ा रहा।

प्राणमथ वावू ने सहसा गंभीर आवाज में कहा—अव जाओ।

एक क्षण देर किये विना दीपंकर वाहर आ गया। प्राणमथ वावू के सामने अधिक देर रुकने में उसे शर्म लगती है। ये भी तो एक आदमी हैं। संसार के करोड़ों लोगों में प्राणमथ वावू भी एक मामूली आदमी के अलावा और क्या हैं? लेकिन ऐसे मामूली आदमी भी दुनिया में कितने हैं? दीपंकर को लगा कि ऐसे आदमी को प्रणाम करना भी उनका अनादर करना है। प्राणमथ वावू मानों शिष्टता-अशिष्टता, नियम-कानून और आचार-व्यवहार से ऊपर हैं। जो लोग चाकलेट, पैसे और मिठाई देते हैं, जैसे लक्ष्मी दीदी, सती और अघोर नाना—वैसे लोगों की तरह वे नहीं हैं। लेकिन वे देवता भी नहीं हैं। वे मामूली, वहुत मामूली, कालीघाट के नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट के रहने वाले हैं। लेकिन उन्होंने औरों की तरह रुपये-पैसे और घूस देकर दीपंकर को खरीदना नहीं चाहा। उसे रुपये देकर वे उससे आदर, लज्जा, विनय-और कृतज्ञता सव वसूल सकते थे। लेकिन उन्होंने वैसा नहीं किया।

याद है जिस दिन माँ दीपंकर को प्राणमथ वावू के घर ले गयी थी, उस दिन प्राणमथ वावू ने एक वात कही थी।

चरखा चलाते हुए उन्होंने पूछा था—महाभारत पढ़ा है?

दीपंकर ने कहा था—माँ से महाभारत की कहानी सुनी है, पढ़ा नहीं ....

प्राणमथ वावू ने पूछा था—अच्छा, वताओ तो इस संसार से वड़ा क्या है?

सवाल सुनकर दीपंकर थोड़ा घवड़ा गया था। इस संसार से, इस ब्रह्मांड से वड़ा और क्या हो सकता है? अगर वह संसार से वड़ा होगा तो संसार में रहेगा कैसे? कटोरा जितना वड़ा होगा, उसमें उतना ही तेल आयेगा। एक सेर के कटोरे में दो सेर तेल नहीं आ सकता!

प्राणमथ वावू नियम से रोजाना सूत कातते थे। उस सूत से वे अपने लिए कपड़े वनवाते थे। उनकी पत्नी भी चरखा चलाती थी। पति-पत्नी दोनों विचित्र थे।

जरा रुककर वे कहने लगे — इनके अलावा भी एक और माँ हैं तुम्हारी। क्या तुमने उनके बारे में सोचा है ?

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया। बोला — एक और माँ ?

प्राणमय बाबू बोले — हाँ, एक और माँ। वह हैं तुम्हारी जननी जन्मभूमि ....

यह कहते हुए मानों प्राणमय बाबू का गला रुंध गया। — उत्तर में हिमालय से दक्षिण में कन्याकुमारी तक जन्मभूमि माँ तुम्हारे पाँव के नीचे पड़ी है। मातृभूमि तुम्हें क्षुधा का अन्न देती है, रोग की औषधि देती है, वस्त्र और आश्रय देती है। शीत, ग्रीष्म, वर्षा, शरत्, हेमंत, वसंत में जो तुम्हारा पालन करती है, वह जन्मभूमि माँ सारे संसार से बड़ी है ! उसके समान इस दुनिया में और क्या है ?

इतना कहकर प्राणमय बाबू चुप हुए और चरखा चलाने लगे।

अन्दर से माँ ने आवाज दी — बेटा ....

दीपंकर ने माँ की तरफ देखा।

माँ बोली — अन्दर आओ, मामी जी को प्रणाम करो।

दीपंकर उठकर अन्दर गया। उसने देखा कि प्राणमथ बाबू की पत्नी खड़ी हैं।

दीपंकर ने उनके पाँव छूकर प्रणाम किया।

प्राणमय बाबू की पत्नी ने आशीर्वाद किया — खूब नाम कमाओ बेटा, माँ का नाम रोशन करो।

इसके बाद हर महीने दीपंकर को प्राणमथ बाबू के पास जाना पड़ता था। प्राणमय बाबू के पास जाने पर वह मानो दूसरी तरह का हो जाता था।

प्राणमय बाबू कहते — मेरे पास बहुत सी किताबें हैं। पढ़ने की इच्छा हो तो चले आया करो। यहाँ आकर पढ़ना। देखोगे किताब से बढ़कर कोई दोस्त इस दुनिया में नहीं है। किताब कभी धोखा नहीं देती।

याद है कि प्राणमथ बाबू के मकान से निकलकर माँ घर की तरफ गयी थी। दीपंकर को कालेज जाना था। भरती होने के लिए फार्म लाकर भरना होगा और रुपया जमा करना पड़ेगा। माँ कब से एक-दो करके रुपये जमा कर रही थी। एक भी पैसा उसके लिए बड़ा कीमती था। लकड़ी के उस बक्से में एक-एक पैसा जमा कर माँ उसके रुपये करती थी।

यदि दीपंकर कहता — माँ, एक पैसा दोगी ?

तो माँ पूछती — पैसा क्या करेगा ?

दीपंकर कहता — मूंगफली खाऊँगा।

माँ कहती — बड़े होकर बहुत मूंगफली खाओगे बेटा, बहुत घुघनी खाओगे। यह पैसा मैं तुम्हारे ही लिए इकट्ठा कर रही हूँ। तुम्हारे लिए कितना रुपया खर्च होगा, तुम नहीं जानते। मैं यह पैसा अपने साथ नहीं ले जाऊँगी।

माँ विचित्र ढंग से पैसा कमाती थी। मुहल्ले के किसी बड़े आदमी की बहू के

लड़के घर से पैसा लाते थे, वे फाटक से वाहर हाथ निकालकर आलूकवली, घुघनी और अमावट खरीदते थे। लाटरी का विस्कुट भी था। नम्वर लगी थाली पर काँटा घुमाना पड़ता था। काँटा जिस नम्वर के सामने रुकता था, उतने विस्कूट एक पैसे में मिलते थे। टिफिन का घंटा वजने से पहले रामधनी आकर दूध का गिलास लिये एक जगह खड़ा हो जाता था। वह जगह छायादार थी। माधवी लता से गेट का ऊपरी हिस्सा ढँका था। जड़ के पास वह लता पीपल के पेड़ के समान मोटी हो गयी थी।

रामधनी पुकारता था — ओ दादा वावू ! दादा वावू ?

राखाल मोटा-तगड़ा गोल-मटोल लड़का था। हाफ पैंट और शर्ट पहनकर वह क्लास में वैठता था। टिफिन के समय लड़के स्कूल के मैदान में लट्टू नचाने में मशगूल रहते थे। कुछ लड़के चोर-पुलिस खेलते थे। चोर-पुलिस खेल वच्चों को विशेष प्रिय था। एक लड़का चोर वनता था और सव लड़के सिपाही वनकर उसे ढूँढ़ते थे। फिर घिरनीफल का खेल था। यह खेल भी मजेदार था।

रामधनी फिर गेट के उधर से पुकारता था — ओ दादा वावू ! दादा वावू ! दूध पी लो।

राखाल जव किसी तरह दूध नहीं पीता था, तव रामधनी असिस्टेंट हेड मास्टर से जाकर कहता था। असिस्टेंट हेड मास्टर थे रामरतन वावू। वड़े कड़े आदमी थे। काँख के नीचे से चद्दर लाकर छाती में लपेट लेते थे। रामधनी की वात सुनते ही वे दौड़कर आते थे। आते ही वे हाँक लगाते थे — अरे स्टुपिड !

खेल वन्द कर राखाल डरता हुआ उनके सामने जाकर खड़ा हो जाता था।

रामरतन वावू कहते थे — दूध क्यों नहीं पी रहे हो ? पी लो।

राखाल रामधनी के हाथ से गिलास लेकर गटागट एक साँस में सव दूध पी जाता था। उसके वाद एक-एक कर चारों रसगुल्ले मुँह में भर लेता था। रसगुल्ले चवाते समय मानों उसका दम घुटने लगता था दीपंकर, किरण, फटिक, विमान, लक्ष्मण सरकार — सव टुकुर-टुकुर उसका रसगुल्ले खाना देखते थे। वह रसगुल्ले ऐसे चवाता था कि देखनेवाला यही समझता कि नीम के पत्ते चवाये जा रहे हैं।

जव राखाल सव कुछ खा लेता था तव रामरतन वावू कहते थे — फिर कभी तुम्हारे खिलाफ शिकायत न सुननी पड़े — समझ गये ?

राखाल सिर नीचा किये गर्दन हिलाता था।

रामरतन वावू फिर कहते थे — तुम दूध पीने के लिए इतना झमेला क्यों करते हो, समझ में नहीं आता। जानते हो कि दूध कितना पौष्टिक पदार्थ है। दूध पीने से शरीर स्वस्थ रहता है और शरीर स्वस्थ रहने से व्रेन ठीक रहता है। व्रेन ठीक रहेगा, तभी न पढ़-लिख पाओगे ? ठीक है। जाओ।

इतना कहकर रामरतन वावू चले जाते थे।

उनके जाते ही राखाल अपना रूप वदलता था। रामधनी से कहता — रुक

नहीं आता। उस अँधेरे सीलन भरे कमरे में जाकर बैठने की किसे गरज थी ? सब उस समय पार्क में फुटवाल खेलने जाते थे या हरीश पार्क में घूमने, नहीं तो सड़क पर पतंग उड़ाते। उस समय किरण ही अकेले लाइब्रेरी में रहता था। वही लाइब्रेरी में झाड़ू लगाता था, किताबें झाड़ता था, उनपर नंबर लगाता था और एक कापी में किताबों के नाम लिखकर कैटलाग बनाता था। कोई एक ही काम तो नहीं था।

किरण बोला — बैठ, तुझसे सलाह करनी है।

दीपंकर ने पूछा — कैसी सलाह ?

— हमारी लाइब्रेरी का एक नाम रखना होगा। मैंने एक नाम सोचा है। बता, यह नाम कैसा रहेगा — दि कालीघाट बॉयज़ लाइब्रेरी।

दीपंकर बोला — बढ़िया नाम है।

किरण बोला — साइनबोर्ड लगाना पड़ेगा। कोई टीन दे सकता है ? चौकोर सा — मैं उस पर रंग से नाम लिखवा लूंगा।

अंत में टीन मिल गया था। अघोर नाना के आँगन में एक कनस्टर बहुत दिन से पड़ा था। उसी को पीटकर सीधा किया गया। फिर बकसा रँगने की दुकान से रंग लाकर अंग्रेजी में वह साइनबोर्ड बनाया गया। सिर्फ साइनबोर्ड नहीं, किरण रबर स्टैम्प भी बनवा लाया। दीपंकर प्रेसीडेंट और किरण सेक्रेटरी बना।

किरण ही घूम-घूमकर चंदा इकट्ठा करता था। क्लास के सब लड़कों से चंदा वसूला गया। उसके बाद क्लास के बाहर से। मधुसूदन के बड़े भाई ने दो आने दिये और दूनी चाचा ने भी।

दूनी चाचा ने कहा — अब लाइब्रेरी क्यों रे बाबा, लाइब्रेरी करके क्या होगा ? मन लगाकर पढ़ता-लिखता है ?

किरण बोला — आउट बुक पढ़ूंगा।

— कौन सी आउट बुक पढ़ेगा ? आउट बुक का मतलब समझता है ? उसका मतलब तो पहले बता ! आउट बुक का हिज्जे जानता है ?

दीपंकर डर गया था। किरण बोला — बाहरी किताबें न पढ़ने से नॉलेज नहीं होता।

— बाप रे। नॉलेज भी सीख लिया है ? नॉलेज का हिज्जे बता सकता है छोकरा ? नॉलेज लेकर क्या करेगा ? ईश्वरचन्द्र विद्यासागर बनेगा ?

छोने दा ने कहा — अरे दो आने पैसे ही तो माँग रहे हैं, दे दो न दूनी चाचा।

दूनी चाचा बिगड़ गया। बोला — अरे तू समझता नहीं। देख रहा है कि मुहल्ले में सी० आई० डी० घूम रहा है, अगर ये छोकरे स्वदेशी किताब रख लें तो किसी दिन मुसीबत आ जायेगी। अगर टेगर्ट साहब को खबर मिल गयी तो वह सबका कचूमर निकाल लेगा। टेगर्ट सा[illegible] नहीं जानता ....

[illegible] चा[illegible] की जेब से दुअन्नी निकलकर दे ही दी थी।

देशबंधु की अरथी निकली थी, उस दिन वह सड़क पर दरवान के साथ दिखाई पड़ा था। देशबंधु भी तो बैरिस्टर थे। बैरिस्टर पालित से बड़े बैरिस्टर। शायद इसी लिए निर्मल उनकी शवयात्रा देखने गया था।

याद है, दीपंकर न जाने क्यों निर्मल पालित के घर जाते वक्त डर रहा था। कोई-कोई मकान ऐसा होता है, जिसके सामने पहुँचते ही डर लगने लगता है। निर्मल पालित का मकान भी वैसा ही था। सामने के हिस्से में कुछ पेड़-पौधे थे। वहीं एक दरवान बैठा रहता था। कभी-कभी उसके सामने एक कुत्ता बैठा रहता था।

किरण बोला — चल, डर किस बात का ? हम तो चोर नहीं हैं चल अंदर।

● ● ●

और भी पहले की बात याद है। किरण की लाइब्रेरी उस समय शुरू ही हुई थी। चंदे के लिए किरण सबके पास हाथ फैला रहा था। वह अकेले दम पर लाइब्रेरी बनाना चाहता था। और किसी तरफ उसका ध्यान नहीं था। यह उसी समय की बातें हैं।

मकान के सामने जाकर उस दिन भी दीपंकर रुक गया था।

किरण ने उसे अभय दिया था। कहा था — डर किस बात का .... चल !

दीपंकर ने कहा था — डर लग रहा है, अगर भगा दे ....

— कौन भगा देगा, मैं तो चल रहा हूँ। तू तो मेरे साथ चलेगा।

इतना कहकर किरण आगे बढ़ा कि कहीं से दरवान आ गया। उसने पूछा — कौन है ? क्या मांगता हैं ?

डरकर दीपंकर भागने लगा था। किरण भी जरा घबड़ा गया था। लेकिन उसने अपने को सँभाल लिया। उसने दरवान के सामने सीधे खड़े होकर कहा — निर्मल बाबू है ? हम निर्मल से मिलने आये हैं —

— लल्ला बाबू ?

किरण बोला — हाँ, लल्ला बाबू। हम लल्ला बाबू के साथ एक स्कूल में पढ़ते हैं। हम लल्ला बाबू के क्लास फ्रेंड हैं।

कमी रह गयी थी। दीपंकर को लगा, सब कुछ रहते हुए भी मानो कुछ नहीं है। उसे उस मकान में सब कुछ पाकर भी सब कुछ खो देने की कहानी लिखी मिली। मानो उस सिर-फुलाये काकातुआ की भारी-भरकम आकृति में उस मकान का राज छिपा था।

किरण ने उस दिन कहा था — ठीक है। देख लेना, मैं चन्दा लेकर ही मानूंगा। चन्दा दिये बिना वह जायेगा कहाँ ?

हाँ, इतने दिन बाद किरण से निर्मल पालित का नाम सुनकर दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया।

किरण बोला — जानता है, निर्मल को मेम्बर बनाया है। उसने कहा है कि महीने में एक रुपया चन्द दूँगा। निर्मल ने मुझे बुलाया है। आज चलेगा ?

दीपंकर बोला — अगर उसका बाप भगा दे ?

— हट। इस सब से डरने पर लाइब्रेरी नहीं चलायी जा सकती! उस तरह कितने लोग भगा देंगे, गाली देंगे, अगर उससे डरा जाय तो कोई काम नहीं हो सकता।

दीपंकर ने पूछा — क्या तेरा बाप जानता है कि तू फेल हो गया है ?

किरण बोला — जानकर भी क्या करेगा, बोल तो सकता नहीं। गला और फूल गया है।

— लेकिन तू क्या करेगा ? फिर पढ़ेगा ?

किरण बोला — अब पढ़ूंगा तो फीस लगेगी। अब तो फ्री पढ़ने को नहीं मिलेगा। फिर पढ़कर करूँगा क्या! संस्कृत धातुरूप और अंग्रेजी ट्रान्स्लेशन से क्या होगा ? लाइब्रेरी में बैठकर मैंने बहुत-सी किताबें पढ़ ली हैं।

— कौन सी किताबें ?

किरण बोला — मैकस्विनी, मैटसिनी और गैरिबाल्डी आदि की जीवनियाँ मैंने पढ़ ली हैं। सुन ले, मैं और पढ़ूंगा। यह सब पढ़कर मेरा ज्ञान खूब बढ़ गया है तू सब कालेज में पढ़, नौकरी-चाकरी कर, मुझसे वह सब नहीं होगा। मुझे कोई नौकरी देगा भी नहीं — मैं पढ़कर क्या करूँगा ? किसके लिए पढ़ूंगा ? इतना मैं जान गया हूँ कि रुपया कभी मेरे पास नहीं होगा ?

— क्यों ?

किरण बोला — अब छोड़ ये सब बातें! बस मैं जान गया हूँ। जबर्दस्ती छीने बिना किसी के पास रुपया आ नहीं सकता। यह दुनिया जबर्दस्त के आगे झुकती है! बिना छीने रुपया नहीं आता, स्वराज भी नहीं मिलता — कोई तेरा मुंह देखकर रुपया नहीं देगा। दुनिया ऐसी जगह नहीं है।

किरण की बात सुनकर दीपंकर उस दिन आश्चर्य में पड़ गया था। इस किरण ने भी एक दिन कितना सपना देखा था, कितनी आशा की थी और कितना प्यार

आज किरण को डर नहीं है। इन कई दिनों में किरण मानो दूसरा आदमी वन गया है। मैट्रिक की परीक्षा में फेल होने के वाद वह मानो सचमुच वहुत कुछ सीख चुका है। एक दिन में वह मानो एकाएक वयस्क वन गया है। लेकिन उसी के साथ कितने दिन दीपंकर सड़कों पर घूमा था। उस समय वह कैसा जिगरी यार था। लगता था कि किरण और दीपंकर एक हैं। उन दोनों की समस्या एक है और उन दोनों का भाग्य भी एक। लेकिन भाग्यविधाता ने उसे मैट्रिक में फेल कराकर कितना वड़ा वना दिया है। वहुत वड़ा ज्ञानी और गुणी। दीपंकर उसके आगे वहुत छोटा हो गया है।

किरण सामनेवाला गेट खोलकर दनदनाता सीधे अन्दर चला गया। गजव हो गया। ऐसा हिम्मती वह पहले नहीं था। इतनी हिम्मत उसमें कहाँ से आ गयी !

उस दिन वाला वही दरवान ठीक उसी तरह वैठा था।

किरण ने उससे कहा — लल्ला वावू हैं ?

दरवान खड़ा हो गया। वोला — ठहरिए।

वह सीधे अन्दर चला गया। किरण ने दीपंकर से कहा — देखा ! यही ससुरा उस दिन कैसा रंग जमा रहा था। याद है न ?

सचमुच दीपंकर दरवान के व्यवहार से विस्मित हो गया। यह क्या हुआ ? ऐसी आशा उसने नहीं की थी। थोड़ी देर वाद निर्मल आया। पाजामा पहना हुआ। वहुत दिन वाद दीपंकर ने निर्मल को देखा। चेहरे पर मसें भीगने लगी हैं। आवाज भी कुछ भारी हो गयी है। वही निर्मल पालित ! मानो पहचाना नहीं जाता। काफी वदल चुका है। शर्ट भी पहने हुए था। वाल विखरे-विखरे।

निर्मल हँसा। वोला — अरे दीपू ! तू कितना वड़ा हो गया है रे ? तू तो पहचाना नहीं जाता।

दीपंकर को एकाएक ख्याल आया कि फिर निर्मल ही नहीं, वह भी वदल चुका है। वह खुद भी वड़ा हो गया है।

निर्मल वोला — मैं तो पहले तुझे पहचान नहीं पाया ....

दीपंकर वोला — तू फर्स्ट आया है ?

निर्मल वोला — मेरे लिए छः मास्टर लगे थे। तेरा क्या हुआ ?

दीपंकर वोला — मैं भी किसी तरह फर्स्ट डिवीजन में पास हुआ।

किरण ने टोककर कहा — तुम दोनों अपनी वातें रहने दे। वता, मेरे चंदे का क्या हुआ ? नहीं देगा ?

दीपंकर सोच रहा था — क्या यह वही निर्मल पालित है। उसने मुझे पहचान लिया और मुझसे वात भी कीं ! मेरे जैसे गरीव लड़के से वात करना ही वहुत है। तिस पर इतनी खातिरदारी। उसके पास क्या मामूली रुपया है। उसकी क्या मामूली प्रतिष्ठा है। नाम लेने पर कलकत्ते के सव लोग उसके वाप को पहचान जायेंगे। ऐसे

एकाएक किरण वोला — हट, हम चाय-ओय नहीं पीयेंगे। चाय तो कुलियों का खून है!

सुनकर निर्मल हक्का-बक्का हो गया। वोला — कुलियों का खून ?

किरण वोला — हाँ, चायवगान के साहव लोग कुलियों के पेट में वूट की ठोकरें मारकर उनकी तिल्ली चीर देते हैं, तव चाय वनती है। वही चाय पीना और कुलियों का खून पीना वरावर है।

निर्मल ने वहुत-सी कितावें पढ़ी थीं, लेकिन ऐसी वात उसनें किसी किताव में नहीं पढ़ी थी। वह आश्चर्य से किरण की तरफ देखता रहा। मानो वह अपने को अपराधी महसूस करने लगा। उसके वाद वोला — लेकिन चाय तो हम रोज पीते हैं।

किरण वोला — पिया कर! हम नहीं पियेंगे। मैं नहीं पीता, दीपू भी नहीं पीता। हम कभी पियेंगे भी नहीं। देखा नहीं, अखवार में निकला था कि असम में एक साहव ने वूट की ठोकर मारकर एक कुली की तिल्ली फाड़ दी है।

निर्मल वोला — अव मैं चला भाई, टी-टाइम हो गया है। दीदी वैठी हुई हैं। अभी दीदी की सहेलियाँ आ जायेंगी ....

कहकर निर्मल अन्दर चला गया। किरण दीपू को लिये वाहर आने लगा।

दीपंकर ने पूछा — तूने चाय क्यों नहीं पी ? पीकर देखता, कैसा लगता है!

किरण वोला — अरे वेकार है! ललछौंहा रंग-गरम पानी की तरह, मैंने एक वार पिया था।

निर्मल के चले जाते ही दीपंकर और किरण फाटक की तरफ वढ़े। इतने में देखा कि एक घोड़ागाड़ी मकान के सामने आकर रुकी। गाड़ी को देखते ही दरवान ने उछलकर फाटक खोला और अदव से सलाम किया। गाड़ी वरसाती के नीचे आ गयी।

गाड़ी निर्मल के वाप की थी। एकाएक दीपंकर डर गया। अगर गाड़ी में निर्मल का वाप हो और उनको देखकर उस दिन की तरह डाँटने लगे तो ....

दीपंकर वोला — चल किरण — शायद निर्मल का वाप आ गया है। फिर डाँटेगा।

लेकिन नहीं। दीपंकर देखकर अवाक् हो गया। निर्मल पालित का वाप नहीं था। गाड़ी से लक्ष्मी दी और सती उतरीं। उनके उतरते ही दरवान ने फिर अटेन्शन की मुद्रा में सलाम किया।

लक्ष्मी दी ने पहले देखा नहीं था। उसके पीछे सती थी। झवरे वालोंवाली वही लड़की। दोनों ने एक तरह की साड़ी पहनी है। लक्ष्मी दी की चोटी पीठ पर लटक रही है। दोनों दीपंकर की तरफ पीठ किये खड़ी हैं। दीपंकर और किरण को उन्होंने नहीं देखा।

दीपंकर वोला — चल किरण, नहीं तो अभी देख लेगी।

लक्ष्मी दी भी अचंभे में पड़ गयी। वोली — अरे, क्या तू इसे पहचानती है? तूने इसे कैसे पहचान लिया?

सती वोली — मैं समझ नहीं पायी थी लक्ष्मी दी, मैं एकदम समझ नहीं पायी थी। मैंने समझा था ....

दीपंकर वोला — मुझे नौकर समझ लिया था तो क्या हुआ? मैंने जरा भी वुरा नहीं माना ....

कहकर दीपंकर जरा रुका।

सती वोली — सचमुच मुझसे वड़ी गलती हो गयी थी। जानती हो लक्ष्मी दी, उस दिन मैंने इसी से अपना सामान ढुलवाया था ....

दीपंकर वोला — और चार पैसे दिये भी थे ....

सती हंस पड़ी। वोली — तुमने चार पैसे नहीं लिये तो मैंने समझा कि कम दिया है इसलिए नहीं ले रहे हो। सच वताओ, मैं कैसे समझती? मैं तो पहचानती न थी। उसी दिन पहले-पहल कलकत्ते आयी थी।

लक्ष्मी दी वोली — अरे, तुम दोनों में इतना कुछ हो गया है, और मैं कुछ भी नहीं जानती? शायद इसीलिए दीपू, तू मेरे घर नहीं आता, मैं घवड़ा रही थी कि दीपू क्यों नहीं आता ....

दीपंकर वोला — नहीं लक्ष्मी दी, उसके लिए नहीं। तुम्हारा कोई काम कर देता हूं तो मुझे खुशी होती है ....

लक्ष्मी दी वोली — सचमुच सती, दीपू मेरा वहुत काम कर देता है, लेकिन कभी वुरा नहीं मानता।

सती सचमुच वहुत लज्जित हुई। वोली — नहीं, नहीं, मैं तुमसे कोई काम नहीं कराऊँगी तुम्हें मेरा कोई काम करना नहीं पड़ेगा।

लक्ष्मी दी वोली,— नहीं र, तू उससे काम कराना, नहीं तो वह झांका करेगा।

कहकर लक्ष्मी दी हँसी। दीपंकर ने लज्जा से सिर झुका लिया।

सती वोली — छी छी, मुझे वहुत शरम लग रही है ....

लक्ष्मी दी वोली — उससे क्या शरमाना! उसे मैंने पहले कितना पीटा है। मैं उससे एकदम नहीं शरमाती। हाँ दीपू, अव तो तू हमारे घर आयेगा न? वोल कव आयेगा? कल? तुझसे जरूरी वात है।

सती उस समय भी दीपंकर को देखती जा रही है। वोली — सचमुच मुझे वहुत शरम लग रही है। छी!

लक्ष्मी दी ने सती का हाथ पकड़कर खींचा। कहा — रहने दे, अव उससे शरमाने की जरूरत नहीं है। आदमी है कितना वड़ा कि उससे शरमाना पड़ेगा ....

कहकर लक्ष्मी दी सती का हाथ पकड़कर चली गयी।

उसे संकोच होने लगा था। सुवह-शाम वस अमड़े के पेड़ के नीचे चक्कर लगाता रहा।

माँ ने पूछा है — अरे, वहाँ क्यों चक्कर लगा रहा है? वहाँ क्या है?

खिड़की में लटकते परदे के पीछे एक चेहरे को देखने के लिए वार-वार दीपंकर आँगन में जाता है। लेकिन कोई इधर नहीं देखता। इस मकान की तरफ देखने की किसे गरज थी? जोर से खाँसने पर भी कोई इधर नहीं झाँकता।

माँ ने कहा था — ठंढ लग जायेगी तो सर्दी-जुकाम होगा — वुखार होगा, तव तो मुझे ही भोगना पड़ेगा।

उस समय मैट्रिक का रेजल्ट निकल चुका था। माँ वहुत-कुछ सोचने लगी थी। किस कालेज में वेटा पढ़ेगा, कौन खर्च चलायेगा और कहाँ से कितावें आयेंगी। उस समय यही सव चिंताएँ माँ को घेरे हुए थीं। किसको पकड़कर किससे भीख माँगकर वेटे की पढ़ाई का खर्च चलायेगी, यही सोच-सोचकर माँ परेशान हो रही थी। फिर पढ़ाई छोड़कर वेटा नौकरी में लग जाय तो कैसा हो? लेकिन नौकरी कौन दिलायेगा? माँ यह सव भी सोच रही थी। दोपहर को माँ कमरे में ताला लगाकर निकल जाती थी। लड़के के भविष्य के लिए माँ कभी इस घर की तो कभी उस घर की मालकिन की खुशामद करने जाती थी। शायद कोई अपने पति से कहकर दीपू को किसी दफ्तर में रखवा दे। दीपू उस समय उस मकान की खिड़की के पास जाकर खड़ा होता था, ताकि लक्ष्मी दी वुलायें। वस, एक वार वुलायें। सती एक वार दिखाई पड़ जाय!

लेकिन उतनी कोशिश और मेहनत के वाद भी जो काम नहीं वना, वही निर्मल के घर चन्दा माँगने आकर वन गया। वड़े भाग्य से वह किरण के साथ आया था, नहीं तो लक्ष्मी दी से यों भेंट न होती।

साथ चलते-चलते किरण ने फिर कहा—ठीक है, एक-एक रुपया करके न दे तो आठ आने को कह देना। आठ-आठ आने में दोनों को मेम्वर वना लिया जायेगा। ठीक है न?

. . .

उन दिनों किरण लाइब्रेरी के अलावा और कुछ नहीं सोचता था। दीपंकर, फटिक और मधुसूदन सव कालेज में दाखिल हुए। सवेरे खाना खाकर तीन-चार जने झुंड वनाकर कालेज जाते थे। और किरण? किरण से भेंट होती तो वह वस लाइब्रेरी की वात करता।

किरण कहता — तुम सव लाइब्रेरी में नहीं आओगे तो मैं अकेले कैसे संभालूंगा?

दीपंकर पूछता — अव तक कितने मेम्वर हुए?

हालांकि मेम्वर तो काफी थे, लेकिन सव चंदा देनेवाले। घर-घर जाकर वार-वार तगादा कर किरण चन्दा वसूल लाता था। कोई दो आने, कोई एक आना, कोई सिर्फ एक पैसा देता था। छोटे वच्चों ने एक धेला भी दिया।

किरण सड़क पर भीख भी माँगता था। ट्रामवाली सड़क के मोड़ पर ख

किरण बिगड़ जाता। कहता — वह क्या तुम्हारा पैसा है ? वह तो मेरा पैसा है ....

— तेरे पैसा कहाँ से आया ? क्या तू कमाने लगा है ?

— कमाने नहीं लगा तो क्या मेरे पास पैसा नहीं हो सकता ? उस पैसे को तुम हाथ न लगाना ....

किरण की माँ किरण की जेब में हाथ डालने लगी थी।

किरण उछल पड़ा।

— खबरदार, उस पैसे को मत छूओ।

— लेकिन कहाँ से इतना पैसा आया, यह तो बतायेगा। देख रहा है कि मैं एक-एक पैसे के लिए मर रही हूँ और पास पैसा रहते भी तू मुझे नहीं देगा ? क्या वह पैसा मैं अपने पेट में भर लूँगी ? क्या मैं अपने लिए पैसा-पैसा चिल्लाती हूँ ? तेरे ही लिए पैसे की रट लगाती हूँ। जनेऊ बेचकर कितने पैसे मिलते हैं, तू नहीं देखता ?

— फिर किरण की तरफ देखकर बोली — अब कहाँ चला ?

किरण इसका जवाब दिये बिना बाहर जाने लगा।

माँ ने पुकारा — अरे, तेरा पैसा लेकर स्वर्ग में नहीं जाऊँगी, तेरा पैसा तेरे लिए रहेगा। आज चावल नहीं है। इसलिए भात नहीं बना सकी।

किरण ने मुँह फेरकर कहा — भात नहीं बना है तो नहीं खाऊँगा। मैं रात को लौटूँगा ....

— तेरे पास तो पैसा है, दे न। या एक सेर चावल ला दे ....

किरण तब तक गुस्से से लाल हो गया था। बोला — ये मेरा अपना पैसा नहीं हैं कि इससे चावल लाऊँगा। अब मैं तुमसे बड़बड़ा नहीं सकता।

— अगर तेरा पैसा नहीं है, तो तेरी जेब में क्यों है ?

किरण बोला — तुम एक औरत हो, तुम यह सब कैसे समझोगी ? लाइब्रेरी का चंदा मेरी जेब में नहीं रहेगा तो किसकी जेब में रहेगा। ये गिने-गिनाये चंदे का पैसा हैं, मेम्बरों का पैसा, यह मैं कैसे ले सकता हूँ ?

अब तक किरण का बाप बरामदे में छाती के नीचे तकिया दबाये लेटा-लेटा सब सुन रहा था। अचानक कुछ कहने के लिए बेचैन होने लगा। दोनों हाथ हिलाकर कुछ कहना भी चाहा। गले से न जाने कैसी घर-घर आवाज निकली। उसके बाद छाती के नीचे रखा तकिया आँगन की धूल में गिर गया। तुरंत किरण की माँ दौड़ी हुई आयी।

पास आकर बोली — पानी पियोगे ? पानी गरम कर दूँ ?

किरण का बाप कुछ बोल नहीं पाया। कैसी घर-घर आवाज करने लगा। उधर किरण झटपट धड़ से दरवाजा बंद कर बाहर निकल गया।

दीपंकर अब तक बाहर खड़ा सब देख रहा था, सुन रहा था। अंदर जाना

डाभ खाता हूँ। डाभ खाने से बदन में फुर्ती आती है।

दीपंकर ने पूछा — कोई कुछ नहीं कहता ?

किरण बोला — कौन क्या कहेगा ? यह सब तो कूड़ा ढोनेवाली गाड़ी से धापा चला जायेगा। वहीं तो सारा कूड़ा फेंका जाता है। सिर्फ दाब मिलने में दिक्कत होती है। कोई ससुरा देना नहीं चाहता। कहता है, धार खराब हो जायेगी। एक दाब खरीद लूं तो काम बने ....

यह खाना जिस दिन पहली बार दीपंकर ने देखा था, उस दिन वह अचंभे में पड़ गया था।

पूछा था — तू रोज खाता है ?

किरण बोला था — भूख लगते ही डाभ की दुकान में चला आता हूँ और मजे से हरी गरी खाता हूँ। रोज तो हमारे घर में भात नहीं बनता।

उसके बाद रुककर कहा था — खाने का इंतजाम तो कर लिया है, अब पहनने का कोई इंतजाम हो जाय तो फिक्र किस बात की। अब उसका भी इंतजाम जल्दी हो जायेगा।

मुंह पोंछकर किरण ने कहा — चल।

उसका चेहरा निश्चिंत, निर्विकार था। एक जेब में कुछ जनेऊ थे और दूसरी में लाइब्रेरी की रसीद की किताब। हाथ में मेम्बरों की सूची वाली कापी। कहाँ-कहाँ दूर-दूर घूमता था किरण। पहले वह सिर्फ जनेऊ बेचने जाता था। अब जनेऊ भी बेचता था और लाइब्रेरी के लिए मेम्बर बनाता भी था।

किरण कहता — मेरे साथ तुझे भी चलना चाहिए। तू रहता है तो काम बनता है। असल में तू प्रेसीडेंट है और मैं तो सिर्फ सेक्रेटरी। कोई-कोई कहता है — प्रेसीडेंट क्यों नहीं आया ?

कभी-कभी किरण पैदल उसे बहुत दूर ले जाता था। किसी दिन खिदिरपुर तो किसी दिन टालीगंज और किसी दिन पोड़ाबाजार। क्लास के सब जान-पहचान के लड़कों को किरण ने मेम्बर बना लिया था। राखाल, निर्मल पालित, बिमान मित्र सब। दूनो चाचा, पंचू दा और मधुसूदन भी। अंत में प्राणमथ बाबू को भी मेम्बर बना लिया था।

आख़िर एक दिन किरण ने कहा — अरे, तेरे अघोर नाना को मेम्बर नहीं बनाया जा सकता ?

दीपंकर बोला — हट !

— क्यों, हर्ज क्या है ?

— नहीं भाई, डंडे से पीटेगा और मुंहजला कहकर गाली देगा।

किरण बोला — तू इतना डरपोक क्यों है ? इतना डरने से क्या प्रेसीडेंट बना जाता है ? उसके पास बहुत पैसा है — महीने में दो आने दे दिया करे।

चल, दूसरे मोड़ पर चला जाय। यहाँ के लोग बड़े बदमाश हैं!

एक-एक दिन एक-एक मुहल्ले में जाता था किरण। इसी तरह एक दिन खिदिरपुर के मोड़ पर गया। कालेज के फाटक के सामने ही वह खड़ा था। दीपंकर के वाहर आते ही किरण ने कहा — आज इतनी देर हुई?

दीपंकर वोला — हिस्ट्री का क्लास था।

किरण ने पूछा — आज किसी को मेम्बर वनाया?

दीपंकर वोला — कोई मेम्बर वनना ही नहीं चाहता ....

— तू ठीक से समझा नहीं पाता, तू प्रेसीडेंट है न? खैर, जो नहीं वनना चाहेगा, उसे हमारी लाइब्रेरी में ले आना, देखना मैं समझा-बुझाकर वना लूँगा। तू पास तो हो गया है, लेकिन अपनी अकल नहीं लगा सकता।

पास न होने के लिए किरण को कोई अफसोस नहीं था। पास तो गधा भी होता है! किरण सोचता था —मेरा भले ही कुछ न हुआ हो, लेकिन इस कलकत्ते में कितने लड़के हैं जो पैसे के अभाव पढ़ नहीं सकते। वे कालेज की फीस, इम्तहान की फीस कुछ नहीं दे सकते। उन्हीं के लिए तो यह लाइब्रेरी है। लाइब्रेरी से किताव लेकर पढ़कर वे एक दिन पास हो जायेंगे। फिर लाइब्रेरी क्या ऐसी रहेगी? छोटी लाइब्रेरी एक दिन बड़ी वनेगी। लाइब्रेरी के साथ रहेगा खेल का मैदान और व्यायाम-शाला। इससे मन के साथ शरीर की भी उन्नति हो सकेगी। शरीर की वात भूलने से काम न चलेगा। शरीर भी तो चाहिए। जरूरत पड़ने पर सिपाहियों को पीटना पड़ेगा।

फिर फुसफुसाकर कहता — किसी से मत कहना, सिर्फ तुझसे कह रहा हूँ। जरूरत पड़ने पर हमारे क्लव में लाठी और चाकू चलाना, जुजुत्सु वगैरह सव सिखाया जायेगा। फिर रिवाल्वर और पिस्तौल····खैर, वह वाद में देखा जायेगा।

— रिवाल्वर, पिस्तौल? वह सव कौन देगा?

किरण मुस्कराता। कहता — यह सव तुझे नहीं सोचना पड़ेगा, सव भोजू दा देगा। हिमालय पर सव तैयार हो रहा है।

—भोजू दा? भोजू दा कौन है रे?

किरण कहता — एक दिन तुझे भोजू दा के पास ले चलूँगा। देखना कितना लर्नेड आदमी है। सव जवानी याद है। जर्मन, फ्रेंच, नेपाली, वर्मीज सव भाषाएं भोजू दा ने घोलकर पी ली हैं। तू तो मैट्रिक पास हो गया है, लेकिन तुझे भी वह अंग्रेजी सिखा सकता है।

उसी दिन पहले-पहल दीपंकर ने भोजू दा का नाम सुना। उसने भोजू दा को देखा नहीं था। कहाँ रहता है, क्या करता है और उसने इतनी भाषाएं कैसे सीख लीं, यह सव वह जानता नहीं था। फिर भी किरण से उसकी कीर्ति-कहानी सुनकर वह डर जाता था —उसके रोंगटे खड़े हो जाते थे। प्राणमथ वावू तो

चल, दूसरे मोड़ पर चला जाय। यहाँ के लोग बड़े बदमाश हैं!

एक-एक दिन एक-एक मुहल्ले में जाता था किरण। इसी तरह एक दिन खिदिरपुर के मोड़ पर गया। कालेज के फाटक के सामने ही वह खड़ा था। दीपंकर के बाहर आते ही किरण ने कहा — आज इतनी देर हुई ?

दीपंकर बोला — हिस्ट्री का क्लास था।

किरण ने पूछा — आज किसी को मेम्बर बनाया ?

दीपंकर बोला — कोई मेम्बर बनना ही नहीं चाहता ....

— तू ठीक से समझा नहीं पाता, तू प्रेसीडेंट है न ? खैर, जो नहीं बनना चाहेगा, उसे हमारी लाइब्रेरी में ले आना, देखना मैं समझा-बुझाकर बना लूँगा। तू पास तो हो गया है, लेकिन अपनी अकल नहीं लगा सकता।

पास न होने के लिए किरण को कोई अफसोस नहीं था। पास तो गधा भी होता है! किरण सोचता था — मेरा भले ही कुछ न हुआ हो, लेकिन इस कलकत्ते में कितने लड़के हैं जो पैसे के अभाव पढ़ नहीं सकते। वे कालेज की फीस, इम्तहान की फीस कुछ नहीं दे सकते। उन्हीं के लिए तो यह लाइब्रेरी है। लाइब्रेरी से किताब लेकर पढ़कर वे एक दिन पास हो जायेंगे। फिर लाइब्रेरी क्या ऐसी रहेगी ? छोटी लाइब्रेरी एक दिन बड़ी बनेगी। लाइब्रेरी के साथ रहेगा खेल का मैदान और व्यायाम-शाला। इससे मन के साथ शरीर की भी उन्नति हो सकेगी। शरीर की बात भूलने से काम न चलेगा। शरीर भी तो चाहिए। जरूरत पड़ने पर सिपाहियों को पीटना पड़ेगा।

फिर फुसफुसाकर कहता — किसी से मत कहना, सिर्फ तुझसे कह रहा हूँ। जरूरत पड़ने पर हमारे क्लब में लाठी और चाकू चलाना, जुजुत्सु वगैरह सब सिखाया जायेगा। फिर रिवाल्वर और पिस्तौल.... खैर, वह बाद में देखा जायेगा।

— रिवाल्वर, पिस्तौल ? वह सब कौन देगा ?

किरण मुस्कराता। कहता — यह सब तुझे नहीं सोचना पड़ेगा, सब भोजू दा देगा। हिमालय पर सब तैयार हो रहा है।

— भोजू दा ? भोजू दा कौन है रे ?

किरण कहता — एक दिन तुझे भोजू दा के पास ले चलूँगा। देखना, कितना लर्नेड आदमी है। सब जबानी याद है। जर्मन, फ्रेंच, नेपाली, बर्मीज सभी भाषाएं भोजू दा ने घोलकर पी ली हैं। तू तो मैट्रिक पास हो गया है, लेकिन तुझे भी वह अंग्रेजी सिखा सकता है।

उसी दिन पहले-पहल दीपंकर ने भोजू दा का नाम सुना। उसने भोजू दा को देखा नहीं था। कहाँ रहता है, क्या करता है और उसने इतनी भाषाएँ कहाँ से सीख लीं, यह सब वह जानता नहीं था। फिर भी किरण से उसकी कीर्ति-कहानी सुनकर वह डर जाता था — उसके रोंगटे खड़े हो जाते थे। प्राणमथ बाबू तो सिर्फ

पुर की तरफ जा रही थीं और कई कालीघाट की तरफ। जूते की कई दुकानें थीं। मुसलमानों का एक होटल भी था जहाँ रोटी और सालन विकते हैं। सींक में फँसाया गाय का मांस कतार में लटक रहा था। वहुत वड़े चूल्हे के सामने वैठा एक आदमी मोटी-मोटी रोटियाँ हाथ से वना रहा था। दीपंकर को भूख लगने लगी। वहुत दिन हो गये उसने मांस नहीं खाया था। मांस खाने में वड़ा अच्छा लगता है। जिस दिन मांस वना, उसी दिन उसने माँग-माँगकर भात खाया। लेकिन अघोर नाना के घर मांस भी कव वनता है? अगर कभी कोई यजमान प्रसाद भेज देता है तो वनता है। इसलिए उस घर में मांस कभी-कभार ही वनता है।

उधर किरण आवाज को करुण वनाकर खास लहजे में कहने लगा — वावू लोग, दया करके जनेऊ खरीदते जाइए। वावू लोग ....

अचानक अंचभे में पड़ गया दीपंकर।

— अरे, चाचाजी हैं न?

सड़क के उस पार चाचाजी जैसा एक आदमी दिखाई पड़ा। उनके साथ कई और लोग हैं। लेकिन चाचाजी ने यह कैसी शकल वना रखी है! कोट-पैंट कहाँ गया? आज वे एकदम दूसरी तरह के लगे। सिर के वाल विखरे, गंदी धोती पहने हुए और वदन पर छींट की कमीज। एकदम पहचाने नहीं जाते। इसी खिदिरपुर में चाचाजी का दफ्तर है? लेकिन ऐसी पोशाक में चाचाजी कभी नहीं देखे गये।

— चाचाजी!

इस फुटपाथ से उस फुटपाथ को जाते हुए दीपंकर ने पीछे से वुलाया।

— चाचाजी!

चाचाजी मुड़े। उनके साथ के लोगों ने भी मुड़कर देखा।

— चाचाजी, आप यहाँ? मैं तो आपको एकदम पहचान नहीं पाया था। ऐसे कपड़ों में आपको पहले कभी नहीं देखा! क्या इधर आपका दफ्तर है?

पता नहीं क्या हो गया है? दीपंकर को लगा, चाचाजी का चेहरा और दिनों से दुःखी है। दीपंकर की तरफ देखकर वे पहले की तरह हँसे भी नहीं। पहले तो मानो वे पहचान नहीं पाये। दीपंकर पास गया, फिर भी उनकी आँखों में खुशी नहीं झलकी। फिर क्या ये चाचाजी नहीं हैं? फिर क्या दीपंकर से गलती हो गयी है?

— चाचाजी, मैं दीपू हूँ। अघोर वावू के मकान में रहता हूँ। अव कालेज से लौट रहा हूँ ....

मानो अव पहचान सके!

वोले — तुम? दीपू वावू? यहाँ क्या कर रहे हो?

उस वात का जवाव दिये विना दीपंकर ने कहा — आपको मैं पहचान ही नहीं पाया चाचाजी! आपके कपड़े ऐसे क्यों हैं?

चाचाजी वोले — यों ही .... अच्छा, अभी मैं एक काम से जा रहा हूँ दीपू

—लेकिन लाइब्रेरी के चंदे का पैसा तो है, उसी से एक पैसा ले लिया जाय तो क्या होगा ?

किरण वोला—ऐसा नहीं हो सकता। वह मेरा नहीं है। माँ को भी वह पैसा छूने नहीं देता। वह पैसा खर्च नहीं कर सकता—वह लाइब्रेरी का पैसा है, पब्लिक का, उसे मैं हाथ नहीं लगा सकता।

—फिर ?

जीवन में जव कभी कोई सहारा नहीं रहता, तव कभी-कभी डूवते को भी किनारा मिल जाता है। उस दिन दीपंकर के साथ भी वही हुआ। ऐसा होगा, वह सोच भी नहीं पाया था। ऐसे अचानक भेंट हो जायेगी, यह उसने सपने में भी सोचा नहीं था। वह भी हक्का-वक्का रह गया था। फिर किरण को भी कम आश्चर्य नहीं हुआ था।

खिदिरपुर की सड़क के मोड़ पर अचानक उस सज्जन से भेंट हो गयी। वही सूट पहना हुआ सज्जन। वही टिप-टिप पोशाक। वही गोरा-चिट्टा रंग और लम्बा-तगड़ा वदन। जल्दी-जल्दी कहीं जा रहा था। पहले दीपंकर ने भी नहीं देखा था। किरण दौड़कर उसके सामने पहुँच गया। वोला—हमारी लाइब्रेरी के मेम्वर वनेंगे सर ?

—लाइब्रेरी ? कौन-सी लाइब्रेरी ?

—'दी कालीघाट वॉयज लाइब्रेरी।' हमारे पास पाँच सौ कितावें हो गयी हैं। अभी और भी कितावें खरीदनी हैं। अगर कुछ सहायता करें। कहकर किरण ने छपी रसीद की किताव खोल दी।

वोला—यह देखिए, वहुतों ने चंदा दिया है। चंदा कलेक्ट कर हम वहुत वड़ी लाइब्रेरी वनायेंगे। यह देखिए, एक सज्जन ने एक रुपया दिया है और एक सज्जन ने आठ आने।

—कालीघाट ? कालीघाट में कहाँ है तुम लोगों की लाइब्रेरी ?

—नेपाल भट्टाचार्य लेन में। फिलहाल एक छोटे कमरे में है, वाद में वड़ा कमरा किराये पर लेंगे।

—कालीघाट में ईश्वर गांगुली लेन जानते हो ?

अव किरण की हिम्मत वढ़ गयी। वोला—ईश्वर गांगुली लेन ? ईश्वर गांगुली लेन में ही तो हमारा प्रेसीडेंट रहता है।—वही तो हमारा प्रेसीडेंट है, दीपंकर सेन, उन्नीस वटा एक, वी ईश्वर गांगुली लेन में वह रहता है।

उन्नीस वटा एक, वी ! नम्वर सुनकर वह सज्जन न जाने कैसा वेचैन हो उठा। उसने प्रेसीडेंट की तरफ देखा। दीपंकर दूर से किरण का तमाशा देख रहा था। हलका अँधेरा हो गया है। दूर खड़ा आदमी ठीक से दिखाई नहीं पड़ता। तव वह सज्जन एकदम दीपंकर के सामने आ गया। वोला—गुड, गुड, तुम ? दीपू ?

किरण की तरफ देखकर मिस्टर दातार ने पूछा — औ

किरण ने सिर हिला दिया — हाँ !

— तुम ?

दीपंकर बोला — जी नहीं ।

— शरमा रहे हो ? शरमाओ मत । पेट भरकर खाओ

किरण बोला — मैं नहीं शरमाता । आप जितना खि

चार दिन से मैं डाभ खा रहा हूँ ....

डाभ !

किरण बोला — जी हाँ । आज दस डाभ खाये हैं, कल बीस खाये थे ।

दीपंकर ने उसे रोक दिया । बोला — इसके पिताजी बीमार हैं, रोज खा नहीं पाता, इसलिए हरे नारियल की गरी खाता है ....

सुनकर मिस्टर दातार आश्चर्य में पड़ गये । उन्होंने बहुत कुछ पूछा । किरण क्या करता है । दीपंकर क्या करता है । उन दोनों के घर की हालत कैसी है । कैसे दोनों पढ़ाई का खर्च चलाते रहे । उसके बाद पैसा न होने से किरण की पढ़ाई कैसे रुक गयी । कैसे प्राणमथ बाबू दीपंकर की हर महीने रुपया देकर मदद करते हैं । हर महीने कितने रुपये की मदद उसे मिलती है, यह सब मिस्टर दातार ने जान लिया ।

किरण बोला — मुझे अपने लिए सहायता की जरूरत नहीं है, आप हमारी लाइब्रेरी के मेम्बर बन जाइए और हर महीने एक रुपया दीजिए — और कुछ नहीं चाहिए ।

मिस्टर दातार बोले — महीने में एक रुपया नहीं ....

— फिर आठ आने दीजिए ? लेकिन आठ आने से कम आपसे नही लिया जा सकता ।

—नहीं, आठ आने भी नहीं । दो रुपये, मैं दो रुपये दिया करूँगा —

किरण आश्चर्यचकित हो गया । थोड़ी देर के लिए उसके मुँह से कोई बात नहीं निकली । दीपंकर भी कम विस्मित नहीं हुआ । कितनी थोड़ी जान-पहचान और कितना थोड़ा परिचय ! बस, वहीं लक्ष्मी दी की चिट्ठी पहुँचाते समय जो जान-पहचान हुई थी । दीपंकर ने कभी उनका नाम भी नहीं पूछा । कभी उसने अनावश्यक कौतूहल भी नहीं दिखाया । सिर्फ कभी-कभी उसके मन में सवाल उठा है कि आखिर यह सज्जन कौन है ? क्यों लक्ष्मी दी इसे खत लिखती है ? क्यों लक्ष्मी दी के घर यह नहीं आता ? क्यों यह लुकाछिपी का खेल है ? क्यों लक्ष्मी दी ने अपनी चिट्ठी के बारे में किसी से कुछ बताने को मना कर दिया है ? अगर कोई जान लेता है तो क्या हर्ज है ? तो क्या लक्ष्मी दी कोई गलत काम कर रही है ? दूसरों से छिपाकर खत लिखना गलत काम तो है ही ! विन्ती दी कभी किसी को खत नहीं लिखती, विन्ती दी को भी कोई खत नहीं भेजता ! विन्ती दी तो किसी के सामने आती भी नहीं । लक्ष्मी दी क्यों विन्ती

वह भी नहीं मिला। लेकिन मैं निराश नहीं हुआ। अव मुझे सव कुछ मिला है। लोग जो कुछ चाहते हैं, मुझे सब मिल गया है। लोग जो कुछ नहीं चाहते, वह भी मिल गया है।

किरण वोला — आप भोजू दा को जानते हैं ?

— भोजू दा ? हू इज़ ही ? वे कौन हैं ?

किरण वोला — भोजू दा भी अनेक देश घूमे हैं। वे सात भाषाएँ जानते हैं — नेपाली, वर्मीज, फ्रेंच वगैरह कितनी भाषाएँ। भोजू दा ने भी मुझसे कहा है कि कष्ट हमेशा नहीं रहता, कष्ट भी एक दिन खत्म होता है। उन्होंने कहा है कि सब कुछ ठीक हो जायेगा, हमें स्वराज मिलेगा, अंग्रेज चले जायेंगे और हमारे देश का आदमी ही राजा वनेगा। जव मैं छोटा था, तव कालीघाट के सोने के कार्तिक के घाट के एक साधु ने मुझसे यही कहा था ....

सव सुनकर मिस्टर दातार ने कहा — ठीक, ठीक। वर्मा में वहुत वड़े टिम्वर मर्चेंट हैं मिस्टर वी० मित्र। उनकी भी लाइफ हिस्ट्री यही है। अव वे वहुत वड़े आदमी हैं, प्रोम में उतना वड़ा विजनेस किसी का नहीं है ....

दीपंकर ने अचानक कहा — लक्ष्मी दी के पिता ?

मिस्टर दातार वोले — हाँ।

दीपंकर वोला — लक्ष्मी दी की वहन सती भी कलकत्ते आयी है ....

मिस्टर दातार वोले — आयी है ?

कहकर न जाने क्या सोचते रहे मिस्टर दातार। फिर खड़े हुए। वोले — अव मैं जा रहा हूँ। तुम लोग घर जाओ, लेकिन मेरे दफ्तर में आना जरूर ....

मिस्टर दातार ने लूची-मिठाई का दाम चुकाया। दोनों को खिलाने में उनके कई रुपये खर्च हो गये।

जाते समय उन्होंने दीपंकर को अलग वुलाया। कहा — सुनो ....

दीपंकर उनके पास गया।

मिस्टर दातार वोले — आज लक्ष्मी दी से तुम्हारी भेंट होगी ?

— जी हाँ, वोलिए क्या कहना होगा ....

— कह देना कल मुझसे वहीं मिल ले ....

दीपंकर समझ नहीं पाया। पूछा — वहीं कहाँ ?

— वस, इतना कहने से तुम्हारी लक्ष्मी दी समझ जायेगी — और कुछ कहना नहीं पड़ेगा। याद रहेगा न — कल ! कल सवेरे ....

कहकर वे चले गये।

किरण ने वहुत दिन वाद भरपेट खाया। उसे पाँच रुपये भी मिले। इतना चन्दा आज तक किसी ने नहीं दिया था। चंडी वावू इतने वड़े आदमी हैं, उनके घर के लड़के राखाल ने भी नहीं। वैरिस्टर पालित के लड़के निर्मल ने भी नहीं दिया।

दीपंकर की माँ उस समय खाना वना रही थी। शाम को उसे कुछ फुरसत मिलती है। उस समय दीपू कालेज में रहता है। अव लड़का वड़ा हो गया है, कुछ वताकर भी नहीं जाता। पता नहीं, कहाँ-कहाँ जाता है! जव दीया जलने को होता है, तव घर लौटता है। उसके वाद लालटेन जलाकर पढ़ने वैठता है।

—ओ विटिया, विटिया ...

अचानक एक दिन अघोर नाना दुमंजिले से नीचे उतर आये। उस समय अघोर नाना को ठीक से दिखाई नहीं पड़ता। लेकिन दीवार पकड़ते हुए वे वाहर आकर खड़े हो गये।

वोले—ओ विटिया, विटिया .... मुँहजली सुनती भी नहीं ....

—क्या है पिताजी? माँ सामने आकर खड़ी हो गयी। वोली—अभी आप क्यों आये पिताजी? भोजन करेंगे?

—वह मुँहजला कहाँ है? कहाँ गया वह मुंहजला?

माँ समझ नहीं पायी। पूछा—कौन पिताजी? किसकी वात कर रहे हैं?

—किसकी वात करूँगा? इस घर में मुँहजला और कौन है?

—छिटे को पूछ रहे हैं? या फोंटा को?

अघोर नाना विगड़ गये। वोले—अरे, वे सव क्या मुँहजले हैं? वे सव तो हरामजादे हैं ....

—फिर किसकी वात कर रहे हैं? दीपू?

—हाँ री विटिया, वही तो असली मुंहजला है! पास हो गया मुंहजला और उसने मुझे प्रणाम तक नहीं किया। उसने समझा क्या है? क्या उसका दिमाग आसमान पर चढ़ गया है? मुंहजले ने क्या....अघोर नाना की वात पोपले मुंह में अटककर रह गयी।

—अरे! क्या गजव हो गया? अरे दीपू ....

दीपू पढ़ रहा था, आ गया। माँ वोली—तूने नानाजी को प्रणाम नहीं किया? वह तो वहुत दिन हुए पास हुआ है, अभी कालेज में पढ़ रहा है। आपने उसकी किताव के लिए पैसे दिये, उसके कपड़े वनवा दिये ....

दीपंकर ने अघोर नाना के पाँवों के पास सिर टेककर प्रणाम किया।

अघोर नाना लाठी सँभालकर चिल्लाने लगे।

निकल जा मुंहजले, निकल जा! मैं कुछ भी नहीं, मैं. तेरा कोई नहीं? मेरा इतना अनादर?

यह कहते हुए एक कदम पीछे हटकर अघोर नाना फिर लाठी सँभालने लगे।

माँ वोली—गलती मेरी है पिताजी। मैं उसे कैसे पढ़ाऊँगी, कहाँ से रुपया लाऊँगी, इसी चिंता में परेशान थी और आपसे वता न सकी।

उसने वड़ी गलती की है। जब वह छोटी थी, तब इतना समझती न थी। इस काली-घाट के और दस लड़के-लड़कियों की तरह खुले आसमान और टूटी छत के नीचे वह भी वड़ी होती रही। उसने अपने बूढ़े जर्जर और संसार से उदासीन नाना और दो भाइयों को देखा। उसके दोनों भाई न जाने कब एक-एक कर घर के बाहर की दुनिया में खो गये। कब वह एकदम अकेली हो गयी, इसका भी उसे होश नहीं था। उसके बाद एक दिन वड़ी खामोशी से दबे पाँव जब उसकी जवानी आयी, तब उसने डरकर अपने को एकदम घर के भीतर छिपा लिया। उसकी बंदी दशा की किसी को खबर नहीं थी, खबर रखने की किसी ने जरूरत भी नहीं महसूस की। सिर्फ एक जना खबर रखता था — वह है चन्नूनी। बचपन से वही चन्नूनी उसके लिए सब कुछ थी। चन्नूनी ने खाना बनाया, खिलाया, सब्जी लायी और आँगन साफ किया। चन्नूनी उसके लिए माँ के समान थी। लेकिन चन्नूनी एक दिन बूढ़ी हो गयी। उसकी आँखों में मोतियाबिंद हो गया। वह भी उस लड़की के मन की बात समझ नहीं पायी। तब दीपू की माँ आयी। तब उस लड़की को मानो एक ठौर मिला। अचानक उसे मानो आश्वासन मिला।

वह दीपू की माँ को पुकारती — दीदी।

सब्जी काटती हुई माँ पूछती — क्या है री, कुछ कहेगी ?

विन्ती की आवाज सुनाई नहीं पड़ती। उसकी जबान पर मानो ताला लग जाता।

माँ फिर पूछती — क्या कह रही है, बोल न ?

— तुम चली जाओगी दीदी ?

— अरी ! तू डर गयी ? मैं कहाँ जा सकती हूँ बहन ? एक उस ठिकाने के अलावा, भगवान ने मेरा और कौन ठिकाना रख छोड़ा है। मेरा दीपू लायक बनेगा, क्या यह मैं देख सकूँगी ! तू भी पगली है।

तब भी विन्ती की जबान बन्द रहती।

माँ कहती — तू मत सोचा कर बहन, तेरा एक सहारा करके ही कहीं जाऊँगी, देख लेना ....

विन्ती को माँ की बातों से संतोष मिलता। लेकिन कैसा संतोष और कैसी सान्त्वना यह वह स्वयं नहीं जानती थी, उसे प्रकट भी नहीं कर सकती थी। फिर भी लगता कि माँ की बातों से उसे अभय मिला है और वह आश्वस्त हुई है। फिर वह अपने कमरे के दरवाजे पर बैठी माँ का खाना पकाना देखती।

जब रात काफी हो जाती तब माँ विन्ती के कमरे में जाकर कहती — दरवाजा बन्द करके लेटना बहन — अगड़ी लगा देना। अगर जरूरत पड़े तो मुझे बुला लेना ....

कभी-कभी माँ छिटे के आगे खाना परोसकर कहती — बेटा, तुम सब लायक

उसने वड़ी गलती की है। जब वह छोटी थी, तब इतना समझती न थी। इस काली-घाट के और दस लड़के-लड़कियों की तरह खुले आसमान और टूटी छत के नीचे वह भी वड़ी होती रही। उसने अपने बूढ़े जर्जर और संसार से उदासीन नाना और दो भाइयों को देखा। उसके दोनों भाई न जाने कब एक-एक कर घर के बाहर की दुनिया में खो गये। कब वह एकदम अकेली हो गयी, इसका भी उसे होश नहीं था। उसके बाद एक दिन वड़ी खामोशी से दवे पाँव जब उसकी जवानी आयी, तब उसने डरकर अपने को एकदम घर के भीतर छिपा लिया। उसकी बंदी दशा की किसी को खबर नहीं थी, खबर रखने की किसी ने जरूरत भी नहीं महसूस की। सिर्फ एक जना खबर रखता था — वह है चन्नूनी। वचपन से वही चन्नूनी उसके लिए सब कुछ थी। चन्नूनी ने खाना बनाया, खिलाया, सब्जी लायी और आँगन साफ किया। चन्नूनी उसके लिए माँ के समान थी। लेकिन चन्नूनी एक दिन बूढ़ी हो गयी। उसकी आँखों में मोतियाबिंद हो गया। वह भी उस लड़की के मन की बात समझ नहीं पायी। तब दीपू की माँ आयी। तब उस लड़की को मानो एक ठौर मिला। अचानक उसे मानो आश्वासन मिला।

वह दीपू की माँ को पुकारती — दीदी।

सब्जी काटती हुई माँ पूछती — क्या है री, कुछ कहेगी?

विन्ती की आवाज सुनाई नहीं पड़ती। उसकी जवान पर मानो ताला लग जाता।

माँ फिर पूछती — क्या कह रही है, बोल न?

— तुम चली जाओगी दीदी?

— अरी! तू डर गयी? मैं कहाँ जा सकती हूँ वहन? एक उस ठिकाने के अलावा, भगवान ने मेरा और कौन ठिकाना रख छोड़ा है। मेरा दीपू लायक बनेगा क्या यह मैं देख सकूँगी! तू भी पगली है।

तब भी विन्ती की जवान वन्द रहती।

माँ कहती — तू मत सोचा कर वहन, तेरा एक सहारा करके ही कहीं जाऊँगी, देख लेना ....

विन्ती को माँ की बातों से संतोष मिलता। लेकिन कैसा संतोष और कैसी सान्त्वना यह वह स्वयं नहीं जानती थी, उसे प्रकट भी नहीं कर सकती थी। फिर भी लगता कि माँ की बातों से उसे अभय मिला है और वह आश्वस्त हुई है। फिर वह अपने कमरे के दरवाजे पर बैठी माँ का खाना पकाना देखती।

जब रात काफी हो जाती तब माँ विन्ती के कमरे में जाकर कहती — दरवाजा वन्द करके लेटना वहन — अगड़ी लगा देना। अगर जरूरत पड़े तो मुझे बुला लेना ....

कभी-कभी माँ छिटे के आगे खाना परोसकर कहती — वेटा, तुम सब लाय

हम लोगों का भात तो तुम उतारती हो ?

माँ वोली — तुम लोग मेरे वेटे-वेटी के समान हो । चन्नूनो के हाथ का खाना खाकर तुम वड़ी हुई हो, इसलिए मेरा छूआ खाने में तुम्हें हर्ज नहीं !

हाँ, तो ऐसे ही धीरे-धीरे दीपू की माँ ने अघोर नाना की गिरस्ती का सारा भार अपने ऊपर ले लिया था । खाना पकाना, वाजार से सामान लाना, पैसे-कौड़ी का हिसाव रखना, अघोर नाना के नाती-नतिनी की देखभाल करना आदि सव दीपू की माँ को करना पड़ता था । अघोर नाना ने कभी पैसा दिया है और कभी नहीं । कभी माँ को इसके लिए झगड़ना पड़ा है । कभी वहस करनी पड़ी है । जिस तरह त्रिन्ती की साड़ी और शेमिज खरीदने के लिए पैसा अघोर नाना से लड़-झगड़कर लेना पड़ा है, उसी तरह मकान की मरम्मत के लिए रुपया । अघोर नाना कभी रुपया खर्च करना नहीं चाहते थे । उनको वरावर यही लगता था कि सारी दुनिया उनके रुपये पर ललचायी दृष्टि डाल रही है । उनको संसार का हर आदमी लोभी लगता था । शायद वे स्वयं ऐसे थे ।

वही अघोर नाना एक दिन समझ गये थे कि दुनिया में दूसरी तरह के लोग भी हैं । एक रात अचानक चंडी वावू के घर चोरी हो गयी । चंडी वावू के घर से राधा-कृष्ण की मूर्तियों के गहने चोर उठा ले गये । रामधनी फाटक के वगलवाले कमरे में सोता था, उसे कुछ पता न चला । पिछले दिन शाम को पुरोहित आकर पूजा कर गये थे, आरती हुई थी — भोग हुआ था, ठाकुर की सेवा हुई थी, धूप-धूना जले थे और झाँझ-घंटे वजे थे । जैसा रोज होता है, वैसा हुआ था । लेकिन दूसरे दिन सवेरे देखा गया कि ठाकुरद्वारे के दरवाजे का ताला टूटा है । मूर्ति के गले में पचास तोले सोने का हार और सिर पर सोने का मुकुट नहीं है । चंडी वावू वड़े आदमी थे । उन्होंने नुकसान वर्दाश्त कर लिया । लेकिन उसी दिन से अघोर नाना की रात की नींद और दिन का आराम हराम हो गया । आसपास कहीं कोई खटका होता तो वे चिल्ला पड़ते — कौन ? कौन है रे ? कौन है रे मुँहजला ?

दीपंकर की माँ जव कालीघाट आयी थी, तव कालीघाट ऐसा नहीं था । पुआल के छोटे-छोटे छप्पर और तंग गलियाँ । गलियों से एक मिनट में मंदिर पहुँचा जा सकता था । किसी घर की चहारदिवारी और किसी का आँगन पार कर कुछ ही समय में भवानीपुर जाया जा सकता था । अघोर नाना के मकान की छत पर चढ़ने से इधर-उधर कितने ही पेड़ दिखाई पड़ते थे । रात को एकाएक नींद खुल जाती थी तो कमरे की खिड़की से दीपंकर देखता था कि आसमान के सहारे खड़े होकर कई दैत्य इधर-उधर सिर की जटाएँ हिला रहे हैं । दिन में जो नारियल के पेड़ होते थे, रात को वही दैत्य वन जाते थे । लेकिन दीपंकर को उस समय यह याद नहीं रहता था ।

ओ त्रिटिया, त्रिटिया, मुँहजली सुनती भी नहीं ....

आधी रात । खड़ाऊँ पहने अघोर नाना ने दीपू के सामने आकर पुकारना शुरू

माँ कहती थी — लेकिन मेरा दीपू भी तो कभी बड़ा होगा, तब अगर वही सन्दूक तोड़ डाले ?

अघोर नाना कहते थे — यह सोच ले बिटिया, लड़का बड़ा है या रुपया ? तेरे लिए रुपये से बड़ा बेटा हो गया ? होशियार रहना बिटिया, बेटे पर कभी विश्वास मत करना, मुँहजला बेटा सब कर सकता है। वही तेरी गर्दन पर चाकू फेर सकता है ! बेटा-बेटी, नाती-नतिनी, दामाद-भानजा, किसी मुँहजले पर विश्वास मत करना !

— फिर क्या रुपये पर विश्वास करूँगी ?

— रुपये ही तो सब कुछ हैं री मुँहजली। रुपया है तभी तो मैं मुँहजला जिंदा हूँ और तभी तो खाने को मिल रहा है ! रुपया ही धर्म है, रुपया ही जप-तप और रुपया ही भगवान ....

दीपंकर बचपन से अघोर नाना की ऐसी बातें सुनता आ रहा था। माँ शायद उनकी बातों पर विश्वास करती थी, या हो सकता है नहीं करती थी। लेकिन रुपये के लिए ही माँ को अपना गाँव छोड़ना पड़ा था, श्वसुर का घर छोड़ना पड़ा था। इसी रुपये के कारण आधीरात को वह दीपू को गोद में बैंटरा से यहाँ भाग आयी थी। रुपये के लिए डाकुओं ने दीपू के पिता की जान ली थी। कभी-कभी दोपहर को दीपंकर माँ को अकारण रोते देखता था। कहीं कोई बात नहीं — माँ आँचल से आँसू पोंछ लेती। पहले दीपंकर कुछ समझ नहीं पाता था।

चन्नूनी बाजार से कुछ खरीद लाती थी तो माँ उससे एक-एक पैसे का हिसाब लेती थी। दाम सुनकर कभी-कभी माँ लम्बी साँस छोड़ती थी। कहती थी — एक कच्चा आम — वह भी पैसा देकर खरीदना पड़ रहा है !

माँ कहती थी — इसी दीपू के बगीचे में टोकरी लेकर चली जाओ और जितना चाहो आम बटोर लो। कोई खानेवाला भी नहीं है।

दीपू कहता था — वहीं चलो न माँ ....

माँ चुप हो जाती थी। कहती थी — भगवान वह दिन दिखा दे तो तू जरूर जायेगा, लेकिन मैं वहाँ नहीं जा सकती ....

वह मर्मान्तिक कहानी एक दिन दीपू ने माँ से सुनी थी। सवेरे पिताजी कचहरी गये हैं। जमीन को लेकर चचेरे भाइयों से मुकदमा चल रहा है। दो साल से मुकदमा चल रहा है। मुकदमे के सिलसिले में वकील-मुहर्रिर के पास आये दिन जाना पड़ रहा है। बस कचहरी और घर, आना-जाना लगा है।

माँ कहती है — जमीन के पीछे इतने हलाकान होने की क्या जरूरत ? आप उन लोगों को जमीन दे दीजिए। जमीन बड़ी बुरी चीज है।

बाप कहते हैं — अपनी जमीन यों ही छोड़ दूँ ? दीपू जब बड़ा होगा तब मुझे दोष नहीं देगा ?

हाय रे ! वही दीपू कभी बड़ा होगा, क्या यह माँ ने सोचा था ? दीपू के ही

कहते-कहते माँ रोने लगी थी। फिर बोली थी—आखिर वह पहचाना तक नहीं गया। हत्यारे ने उसे टुकड़े-टुकड़े कर काट डाला था। उँगलियों में चार अँगूठियाँ थीं, वही देखकर सबने पहचाना ....

उसके बाद दो रात भी नहीं बीती। पुलिस-प्यादे गाँव छोड़कर चले गये तो फिर शुरू हो गया। रातदिन मैं दरवाजा बंद कर पड़ी रहती थी और भगवान को पुकारती थी। लेकिन बड़ा डर लगने लगा था। गाँव में किसी पर विश्वास नहीं कर सकती थी। लगता था, गाँव भर के लोगों ने जेठ से रुपया खाया है। रुपया ऐसी चीज है दीपू, जायदाद ऐसी ही बला है! अगर जमीन-जायदाद न रहती तो वह सब न होता। तेरे बाप को उस तरह मरना नहीं पड़ता और मुझे दूसरे के घर हाथ जलाकर खाना न बनाना पड़ता ...

यह सब बहुत दिन पहले की बात है। बहुत दिन पहले दीपंकर ने यह सब कहानी सुनी थी। किरण, प्राणमथ बाबू, अघोर नाना, चन्नूनी, बिन्ती दीदी, छिटे और फोंटा की कहानियाँ भी दीपंकर की अन्तरात्मा में घुलमिल गयी थीं। जन्म के साथ जो दुर्भाग्य उसका साथी बन गया था, उससे छुटकारा पाने का सपना देखा करता था दीपंकर। लेकिन किरण की तरह हर बात पर विश्वास करने से वह घबड़ाता था। वह बड़ा डरपोक था। किसी को ठेस पहुँचाने से वह घबड़ाता था और किसी से प्यार करने से भी। वह सोचता था कि किसी को छेड़ने की क्या जरूरत है और किसी को उकसाने से क्या लाभ? जो जैसा है, वह उसी तरह रहे। किसी को कोई नुकसान न हो, कहीं किसी बात का व्यतिक्रम न हो। भले ही अघोर नाना कृपण हों, लेकिन दीपंकर कभी उसके विश्वास का अनादर करना नहीं चाहता था। अविश्वास को भी वह यथोचित मूल्य देता था। लक्ष्मण सरकार अगर मुझे चाँटा लगाकर खुश होता है तो हुआ करे, उससे मेरा क्या बिगड़ता है! थोड़ा सहना पड़ेगा, मुँह बन्द किये रहना पड़ेगा, बस यही न। लेकिन दीपंकर स्वयं कुछ ऐसा करना नहीं चाहता था जिससे कालीघाट की नियमित जीवन-यात्रा में बाधा आये। अघोर नाना आज जिस तरह यजमानों को ठगते हैं, उसी तरह हमेशा ठगते रहेंगे। मधुसूदन के चबूतरे पर बैठे दूनी चाचा जैसे लोग जिस तरह दूसरों की निन्दा करते हैं, वे उसी तरह हमेशा करते रहेंगे। अगर प्राणमथ बाबू जेल जाकर देशसेवा करना चाहते हैं तो करें। किरण अगर समझता है कि लाइब्रेरी होने से स्वराज मिल जायेगा तो समझा करे। फिर भी जो होना है, वह होकर रहेगा! दीपंकर काफी सोच-विचार के बाद इस निर्णय पर पहुँचा था कि किसी की इच्छा या अनिच्छा से दुनिया अपना रास्ता नहीं बदलेगी। वह अपने रास्ते चलती चली आयेगी। वह हमेशा जिस तरह चलती चली आयी है, उसी तरह चलती रहेगी। अमरूद के पेड़ पर जो कौआ दिन भर खाने की प्रतीक्षा में बैठा रहता है, वह उसी तरह

जो संकेत था, वह रुचिकर न था।

दीपंकर बोला — अब उनसे मेरी दोस्ती नहीं है।

किरण ने पूछा — क्यों, क्या हुआ ?

दीपंकर ने कहा — वे बड़े आदमी हैं।

असल में बड़ा आदमी होना उनका बड़ा अपराध नहीं था। दीपंकर जानता था कि वह उन लोगों से अपने कालेज की फीस या किताब खरीदने का पैसा माँगने नहीं जा रहा है। कभी जायेगा भी नहीं। वे लोग अपना रुपया लेकर रहें। जब तक प्राणमय बाबू हैं तब तक वही देंगे। लेकिन जो लोग दीपंकर को छोटा समझते हैं उनसे दीपंकर कैसे घुल मिल-सकता है ? दीपंकर बस यही सोचता था कि वह हर बात में उनसे छोटा है। सिर्फ रुपये के मामले में ही नहीं, योग्यता में भी। फिर योग्यता ही नहीं, आचार-विचार में भी। रुपये के पैमाने से जो लोग हर चीज को नापते हैं, उनके लिए दीपंकर की क्या कीमत है ! वे भी तो अघोर नाना जैसे हैं ! वे दीपंकर पर दया करते हैं। दीपंकर गरीब है, इसलिए वे हमदर्दी दिखाते हैं। दीपंकर सोचता था कि वे लोग उसे आदमी ही नहीं समझते ! अगर वे उसे आदमी समझते तो क्या लक्ष्मी दी उससे चिट्ठी भिजवाती ! लक्ष्मी दी उस पर इसलिए विश्वास करती है कि वह जानती है कि उसमें विश्वासघात करने की क्षमता ही नहीं है।

किरण ने कहा था — वे अमीर हैं, इसीलिए कह रहा हूँ। भोजू दा ने कहा है कि अमीरों को फुसलाकर और समझा-बुझाकर उनसे रुपये लेने में कोई हर्ज नहीं है। तू एक बार चला जा। देख, वे क्या कहती हैं।

उस दिन काफी सोच-विचार के बाद दीपंकर गया था। कहना चाहिए कि किरण ने उसे जबर्दस्ती भेजा था।

सती उस समय घर में नहीं थी। दीपंकर जानता था कि इस समय सती घर में नहीं रहती। गुरुवार को छोटी लड़की देर करके लौटती है। लक्ष्मी दी के कालेज की गाड़ी ने गली के मोड़ पर आकर हार्न बजाया। दीपंकर तैयार था। लक्ष्मी दी मकान के अन्दर जा रही थी कि वह पीछे जाकर खड़ा हो गया।

पुकारा — लक्ष्मी दी !

लक्ष्मी दीदी मुड़ी। बोली — दीपू ! क्या है रे ?

— आपसे एक बात कहनी है लक्ष्मी दी !

— बात कहनी है तो अन्दर आ जा।

दीपंकर बोला — तुमसे अकेले में कहूँगा, किसी और के सामने नहीं।

लक्ष्मी दी हँसी। बोली — क्यों ? बड़ी गुप्त बात है ?

— नहीं। आपकी बहन के सामने नहीं कहना चाहता।

— क्यों ? सती ने क्या किया ?

— आपकी छोटी बहन मुझे देख नहीं सकती।

रघु आश्चर्य में पड़ गया। बोला — दीपू बाबू, तुम चाय पीते हो ?

दीपंकर बोला — मैं नहीं पीता, लेकिन आज पियूँगा।

लक्ष्मी दी बोली — मेरे कहने पर पी रहा है।

रघु चाय दे गया। किरण ने कहा था कि चाय कुलियों का खून है। हुआ करे कुलियों का खून। फिर भी किरण सुनेगा तो नाराज होगा। दि कालीघाट बॉयज लाइब्रेरी का प्रेसीडेंट होकर तूने चाय पी! लेकिन उस दिन लक्ष्मी दी के साथ एक टेबल के सामने अगल-बगल बैठकर चाय पीने में उसे बड़ा मजा आया था! जीवन में पहली बार इस चाय पीने की बात उसे बाद में कितनी बार याद आयी है। लक्ष्मी दी के प्यार के लिए वह चाय पीना कैसा स्मरणीय बन गया था! फिर भी एक समय आया जब दीपंकर ने सोचा कि उस दिन उसने चाय नहीं, जहर पिया था। सुकरात की तरह उसने हेमलक पिया था, लेकिन सुकरात की तरह वह कह न सका था — Be hopeful then, gentlemen of the jury, as to death, and this one thing hold fast, that to a good man, whether alive or dead, no evil can happen, nor are the gods indifferent to his well-being.

अचानक लक्ष्मी दी ने पूछा — चाय तुझे कैसी लगी दीपू ?

दीपंकर बोला — बड़ी अच्छी है, लक्ष्मी दी!

— फिर क्यों तू चाय नहीं पीता ?

दीपंकर बोला — तुम्हारे साथ बैठकर पो रहा हूँ शायद इसलिए अच्छी लग रही है — किसी और के साथ बैठकर पीता तो शायद इतनी अच्छी न लगती।

लक्ष्मी दी खिलखिलाकर हँसी। बोली — अब तू खूब बात करना सीख गया है — When my Daisy sits by me I need no sugar in my tea. — है न ?

एक दिन लक्ष्मी दी ने चाकलेट दिया था। वह बहुत दिन पहले को बात है। लेकिन उस दिन दीपंकर ने चाकलेट नहीं खाया या उसे शक हुआ था! उसके बाद अनेक बार उसने लक्ष्मी दी को देखा है, अनेक बार वह उसके निकट सम्पर्क में आया है और अब कोई संदेह नहीं होता। दीपंकर ने चाय की आखिरी बूंद तक पी ली।

उसके बाद पूछा — आपकी छोटी बहन अभी आ जायेगी न ?

— सती से तू क्यों इतना डरता है ?

दीपंकर बोला — डरता नहीं। न जाने क्यों वह मुझे पसंद नहीं करती।

— उसने तुझसे कुछ कहा है ?

दीपंकर बोला — कुछ नहीं कहा। लेकिन वह मेरी तरफ उस तरह देखती क्यों है ? उस दिन बैरिस्टर पालित के घर भी मुझे यही लगा....

लक्ष्मी दी एकाएक गंभीर हो गयी। बोली — समझ गयी, मेरे कारण....

— तुम्हारे कारण ? तुम्हारे कारण क्यों वह मुझसे खिंची रहेगी ?

चिल्लाना, हाजी कासिम का उजड़ा वगीचा, आगुनखाकी का पोखर और उसके किनारे धान का खेत क्यों इतने दिन उसे अपनी तरफ खींचते रहे ? शायद उसके विधाता की इच्छा कुछ और है। शायद इसी लिए उसे मनुष्य से इतना आघात मिला। शायद इसीलिए उसे प्यार भी मिला। आघात और प्यार, घृणा और आदर, मान और अपमान — इसी से दीपंकर वना है। किसने उसका यह नाम रखा था, क्या पता ? उसके नाम के साथ उसकी प्रकृति का यह पहलू भी कौन देख सका था ?

वड़ा होकर दीपंकर ने एक वार माँ से पूछा था — मेरा यह नाम किसने रखा था माँ ?

माँ वोली थी — मैंने रखा था। और कौन रखेगा ?

— इतने नाम रहते तुमने मेरा दीपंकर नाम क्यों चुना ?

माँ ने कहा था — उस वार वैंटरा के मल्लिक वावू के छोटे पट्टीदार के घर नाती पैदा हुआ और उन लोगों ने उसका नाम दीपंकर रखा। मैं उस नाम का मतलब नहीं समझती थी, लेकिन वह अच्छा लगा था। इसलिए जव तू पैदा हुआ तव तेरा वही नाम रखा !

दीपंकर के नाम का संक्षिप्त इतिहास ! लेकिन उस दिन वेटे का यह नाम रखते समय शायद माँ ने सोचा भी न था कि दीपंकर जिन्दगी भर अपने नाम को सार्थक वनाता रहेगा। वह सिर्फ दूसरों के लिए दीप जलाता जायेगा, लेकिन अपने अँधेरे को दूर करने के लिए कोई रोशनी नहीं दिखायेगा।

दीपंकर लक्ष्मी दी के पास से चला आ रहा था, लेकिन लक्ष्मी दी ने वुला लिया — सुन ....

दीपंकर ने कहा — क्या ?

— किसी से कहना मत, समझ गया ? तुझसे प्यार करती हूँ इसलिए सव कह दिया। सती को किसी तरह मालूम न हो।

— लेकिन आपने तो मुझसे कुछ नहीं कहा।

लक्ष्मी दी वोली — अगर तुझसे कह सकती तो अच्छा होता, शायद कुछ शांति मिलती। जानता है, तू न होता तो मैं इस तरफ जिन्दा न रहती ....

— आपको क्या कष्ट है लक्ष्मी दी ?

लक्ष्मी दी सीधी हो सँभलकर वैठ गयी। वोली — शम्भु को तो तूने देखा है !

— शंभु ? शंभु कौन है लक्ष्मी दी ?

— वही, जिससे खिदिरपुर में तेरी मुलाकात हुई थी। शंभु मुझसे कह रहा था ....

— मिस्टर दातार ?

— हाँ, जिसको तू मेरी चिट्ठी दे आता है। जानता है, वह मेरे लिए सव

लेकिन जल्दी छुट्टी हो गयी। बस से घर चली आयी, इसलिए मिल न...
रात भर मुझे नींद नहीं आयी। मैं जानती हूँ, उसे भी न आयी होगी ...

दीपंकर ने पूछा — आपको कैसे मालूम है कि उन्हें नींद नहीं आ...

लक्ष्मी दी बोली — तू नहीं समझेगा — पता चल जाता है।

कुछ सोचकर दीपंकर ने कहा — लेकिन यह काम क्या आप ठीक ...
हैं लक्ष्मी दी?

लक्ष्मी दी बोली — यह मैं कब कह रही हूँ? मैं जानती हूँ कि यह ...
है। इसीलिए चोरी से उसे चिट्ठी भेजती हूँ, चोरी से उससे मुलाकात करती हूँ...

दीपंकर बोला — फिर आप चिट्ठी मत भेजा कीजिए। क्या जरूरत ...
मन को कष्ट पहुँचाने की? आपके पिताजी सुनेंगे तो दुःखी होंगे, चाचा-चा...
दुःखी होंगे। आपको भी सुख नहीं मिलेगा। फिर आपका कष्ट देखकर हम सब को ...
होगा।

लक्ष्मी दी कुछ उदास हो गयी। बोली — नहीं रे, चिट्ठी नहीं लिखूंगी ...
नहीं करूंगी तो मैं एक दिन भी जिन्दा न रह सकूंगी ....

दीपंकर लक्ष्मी दी की बात सुनकर आश्चर्य में पड़ गया। वह किसी त...
समझ नहीं पाया कि यह क्या मामला है!

पूछा — इतने दिन पिताजी से आपकी भेंट नहीं हुई, इसके लिए आपको ...
तकलीफ नहीं होती?

लक्ष्मी दी बोली — हट! तू समझ नहीं पायेगा। पिताजी से भेंट न होने पर ...
क्यों तकलीफ होगी?

दीपंकर बोला — लेकिन माँ के लिए मुझे सचमुच बड़ा कष्ट होता है। लगता ...
है, एक दिन भी माँ को देख नहीं पाऊंगा तो मर जाऊंगा ....

लक्ष्मी दी बोली — वह दूसरी तरह का कष्ट है और यह दूसरी तरह का।
इसमें सुख भी है ....

कष्ट में भी सुख है! दीपंकर समझ नहीं पाया। लेकिन बात बड़ी अच्छी
लगी।

लक्ष्मी दी बोली — अब तू जा दीपू, सती अभी आ जायेगी ....

दीपंकर जाने लगा।

लक्ष्मी दी बोली — तुझसे सारी बातें कह दी हैं दीपू, — किसी से मत कहना,
नहीं तो मेरा सर्वनाश हो जायेगा। किसी से कहेगा तो नहीं?

लक्ष्मी दी की बात दीपंकर के कानों में नहीं पहुँची। बोला — अच्छा लक्ष्मी
दी, चिट्ठी में क्या लिखती हैं?

लक्ष्मी दी बोली — क्यों, तू पढ़ता है क्या?

— नहीं। मैं क्यों पढ़ूंगा?

—शायद सती आयी है।

लक्ष्मी दी उठकर देखने गयी। फिर वह कुर्सी पर आकर बैठी। बोली — नहीं, अभी नहीं आयी ....

दीपंकर ने पूछा — लक्ष्मी दी, आप सती से डरती हैं ?

— क्यों डरूँगी ? वह सब कुछ जानती है। इसीलिए पिताजी ने उसे यहाँ भेजा है।

दीपंकर बोला — फिर मैं आपके घर नहीं आऊँगा लक्ष्मी दी, सती मुझ पर शक करेगी।

— नहीं, तुझ पर शक नहीं करेगी। तू उससे दोस्ती कर लेना — फिर वह कभी शक नहीं करेगी ....

— अगर उसे पता चल जाय कि मैं तुम्हारी चिट्ठी पहुँचाता हूँ तो ?

— कैसे पता चलेगा ? तू अगर नहीं बतायेगा तो वह कैसे जानेगी ?

— अगर वह मुझसे पूछेगी तो ?

— तू बता देना कि मैं कुछ नहीं जानता।

— फिर तो झूठ बोलना हो जायेगा ....

लक्ष्मी दी बोली — झूठ बोलेगा। मेरे लिए एक बार झूठ भी नहीं बोल सकता ?

दीपंकर बोला — लेकिन झूठ बोलना क्या ठीक है ? आप ही बताइए ....

लक्ष्मी दी बोली — यही तू मुझसे प्यार करता है ? यही तेरा प्यार है ? देखता नहीं, मिस्टर दातार ने मेरे लिए सब कुछ छोड़ा है ....

— लेकिन मैंने झूठ न बोलने की प्रतिज्ञा की है ....

— झूठ बोलने में क्या हर्ज है ? किसी को पता नहीं चलेगा ....

— लेकिन चौदह साल झूठ न बोलने से बाद में बड़ा फायदा है, जो कुछ कहूँगा, वह सच निकलेगा ....

लक्ष्मी दी बोली — यह सब बेकार की बात है। बचपन में तेरे स्कूल के मास्टर ने तुझे गलत बताया है। अब तू बड़ा हो गया है, वह सब भूल जा। अब तुझे घर-गिरस्ती करनी होगी, तरह-तरह के लोगों से मिलना-जुलना होगा, लोग तरह-तरह की बातें करेंगे — झूठ न बोलेगा तो कैसे चलेगा ?

बहुत दिन बाद भी जब उस दिन की बात याद आयी, तब दीपंकर को यही लगा कि लक्ष्मी दी ने उस दिन उसे प्यार से जिन्दगी में पहली बार चाय नहीं पिलायी थी, बल्कि जहर पिलाया था। सुकरात का हेमलक नहीं — असली जहर ! शायद उसी दिन से वह लक्ष्मी दी से प्यार करने लगा था — और तभी तो वह जहर पी सका था !

फिर कैसी उथल-पुथल मच गयी थी ! एक तरफ उसके जीवन की प्रतिज्ञा और दूसरी तरफ लक्ष्मी दी !

इसीलिए तुझसे चिट्ठी भिजवाती थी, तुझसे सब बातें कहीं, तेरे आगे मुझे कोई शरम नहीं है। अब चुप हो जा मेरा अच्छा भाई!

आँचल से दीपंकर का मुँह अच्छी तरह पोंछ कर लक्ष्मी दी ने कहा — तू नहीं जानता कि जीवन में मुझे कितना कष्ट मिला है। माँ नहीं है कि उसके आगे मन की बात कहूँगी। बचपन से मैं विचित्र सूनेपन में पली, पिताजी रहते हुए भी नहीं थे। वे दिन भर अपने कारोबार में लगे रहते थे। सिर्फ वही मिल गया था, लेकिन सबने सोचा कि उसे मुझसे छीन लेंगे! जानता है, मैंने कितनी बार आत्महत्या करने की सोची? मरने में मुझे जरा भी कष्ट नहीं है, लेकिन उसी के बारे में सोचकर मैं मर नहीं सकती। अगर मैं मर गयी तो उसे बड़ा कष्ट होगा — वह जिन्दा नहीं रहेगा।

दीपंकर अब कुछ शांत हुआ।

लक्ष्मी दी बोली — अब मेरी बात याद रहेगी न? किसी से कहेगा तो नहीं?

दीपंकर बोला — नहीं ....

.... यही तो भले लड़के की तरह बात हुई!

लक्ष्मी दी ने दीपंकर के गालों को सहलाकर प्यार किया।

कहा — सती के पूछने पर तू झूठ बोलेगा न?

— हाँ!

दीपंकर धीरे-धीरे लौटने लगा। उसे लगा कि मानो नशा हो गया है। दुर्गा-पूजा के समय भांग खाने पर जैसा नशा होता है, वैसा ही। उसे लगा कि कदम लड़खड़ा रहे हैं। लेकिन क्यों ऐसा हुआ? उसे कुछ हो तो नहीं गया? उसने कुछ खाया तो नहीं! सिर्फ एक कप चाय पी है उसने! क्या चाय में कुछ था? नशे की कोई चीज़? हो सकता है कि चाय पीने पर भी आदमी इस तरह लड़खड़ाता है!

लक्ष्मी दी ने उसे प्यार से जहर पिला दिया। हेमलक नहीं — असली जहर! प्राणमथ बाबू ने उसे क्लास में जो कुछ सिखाया था, वह सब वह भूल गया। अब उसे वह सब याद नहीं पड़ेगा।

पास आकर लक्ष्मी दी ने उसके कंधे पर हाथ रखा। कहा — क्या हो गया तुझे?

लक्ष्मी दी ने झकझोरा तो उसे एक बात याद आ गयी। वह बोला — लक्ष्मी दी ....

— क्या?

— चाचाजी कहाँ नौकरी करते हैं?

— चाचाजी? क्यों? यह क्यों पूछ रहा है?

दीपंकर बोला — मुझसे लोग पूछते हैं। दूनो चाचा, छोने दा, पंचू दा, मधुसूदन का बड़ा भाई, सभी पूछते हैं ....

— क्या यही पूछने तू आया था?

दीपंकर बोला — मैंने कुछ कहा नहीं ....

— कुछ नहीं कहा ! चन्दा कितना दिया ? रसीद की किताब देखूं ....

अब दीपंकर को रसीद की किताब याद आयी। उसने जेब से किताब निकाली तो किरण झट से लेकर पन्ना पलटने लगा। अंतिम पन्ने पर आकर वह रुका और बोला — यह क्या ! कुछ भी नहीं दिया ?

दीपंकर बोला — मैंने कहा नहीं। चंदे के बारे में मैं कहना भूल गया ....

— बड़ा अच्छा किया ! चंदे के लिए तू उस लड़की के पीछे-पीछे गया और असली बात भूल बैठा ! फिर दो घंटे तक क्या कर रहा था ? गपशप ?

दीपंकर की तरफ हिकारत की निगाह से देखकर किरण बोला — नहीं। तुझसे कुछ न होगा। अब तुझे प्रेसीडेंट नहीं रहने दूँगा। अब इलेक्शन कराकर मैं सेक्रेटरी और प्रेसीडेंट दोनों बन जाऊंगा — एक मामूली काम तुझसे नहीं होता ! मैं सड़क पर घूम-घूमकर चंदा इकट्ठा कर लाइब्रेरी बनाऊंगा और तू नाम के वास्ते प्रेसीडेंट बना रहेगा, यह न होगा ....

थोड़ा रुककर किरण बोला — फिर तू इतनी देर उससे क्या बात कर रहा था ?

दीपंकर बोला — वह दूसरी बात है ....

— दूसरी बात का मतलब ? दूसरी बात क्या है रे ? उस लड़की से तेरी दूसरी बात क्या हो सकती है ? वे अमीर हैं और हम गरीब। गरीब लड़के से अमीर की लड़की की कौन-सी बात हो सकती है ?

दीपंकर बोला — लक्ष्मी दी बड़ी अच्छी लड़की है, वह अमीर नहीं है ....

— अमीर नहीं है ! अमीर नहीं है तो उसके पास इतना रुपया क्यों है ? सब अमीर एक समान होते हैं। यह मैंने खूब देखा है ! भोजू दा कहता है — अंगरेजों और अमीरों में कोई फर्क नहीं है ! जब से अंगरेज यहाँ आये हैं, बराबर अमीरों को शिखंडी बनाकर वे गरीबों को लूट रहे हैं। भोजू दा झूठ नहीं बोलेगा, भोजू दा जैसा लर्नेड आदमी झूठ नहीं बोल सकता। उसे सब कुछ मालूम है। अंगरेजी, जर्मन, फ्रेंच, नेपाली, बर्मीज — सब भाषाएं वह जानता है।

दीपंकर के कानों में किरण की बात नहीं पहुँची।

बोला — नहीं रे, तू नहीं जानता लक्ष्मी दी को बड़ा कष्ट है ....

— कैसा कष्ट ? इतना रुपया है, फिर भी कष्ट ?

— हाँ भाई, बड़ा कष्ट है। लक्ष्मी दी का कष्ट देखकर मेरा मन भी पसीज गया।

किरण बोला — कष्ट है खाक ! मुझे देख न, मुझसे बढ़कर कष्ट किसे हो सकता है ?

दीपंकर बोला — पहले मैं भी यही सोचता था, लेकिन लक्ष्मी दी का जीवन हमसे भी ज्यादा दुःखी है, बाहर से समझा नहीं जा सकता। बाहर से वह बढ़िया रंगीन

कालीघाट में किताब की दुकान नहीं थी। किताब खरीदने काफी दूर जाना पड़ता था — पूर्ण थियेटर के सामने चावलपट्टी में। रायचौधुरी कम्पनी की दुकान से किताब खरीदनी पड़ती थी। नयी किताबें खास नहीं थीं। फिर भी किरण ने एक-दो खरीदी थीं — विनय सरकार का 'वर्तमान जगत्', 'बुकर टी० वाशिंगटन की जीवनी', 'नीग्रो जाति का कर्मवीर', जोनाथन स्विफ्ट की 'गुलिवर्स ट्रैवेल्स'। 'राबिन्सन क्रूसो' था, और थी तारकनाथ दास की 'India in world politics', J. T. Sanderland की 'India in Bondage', ढेर सारे रेलवे टाइम-टेबल और ह्वाइटवे लेडलॉ का कैटलाग। कितनी किताबें और थीं जिनका नाम दीपंकर ने सुना नहीं था। जहाँ जो किताब मिली थी, किरण ले आया था। लाइब्रेरी में चटाई पर लेटा वह सपना देखा करता था। वह कहता था — जानता है दीपू, भोजू दा ने कहा है, किताब पढ़ने से नॉलेज बढ़ता है — जितनी किताबें पढ़ेगा, उतना नॉलेज बढ़ेगा।

किरण उन दिनों किताबें खूब पढ़ता था और उसी के बारे में बात करता था। आयरलैंड, इटली और रूस के इतिहास, फ्रांसीसी क्रांति का इतिहास कोई किताब उसे अच्छी लगती तो वह फौरन दीपंकर के पास आता।

एकदम उछलता-कूदता हुआ आता।

दीपंकर किरण को देखकर विस्मित हो जाता था। कहता — क्यों रे, अचानक इतनी खुशी क्यों? क्या हो गया तुझे?

किरण का बाप ठीक हो गया? किरण का मकान बना? किरण की नौकरी लगी? नहीं, वह सब कुछ भी नहीं हुआ।

कहता — नहीं रे! लेकिन यार एक बढ़िया किताब पढ़ रहा हूँ। तू पढ़ेगा तो चौंक जायेगा।

— कौन-सी किताब?

किरण ने किताब दिखायी। कहा — भोजू दा ने मुझे पढ़ने को दी है — यह देख!

कौन-सी किताब, क्या नाम और कौन लेखक, यह सब आज दीपंकर को याद नहीं है। कोई फ्रांसीसी लेखक था, उसी की जीवनी। जहाँ तक याद पड़ता है Baleuf की जीवनी थी! किरण को भोजू दा कैसी-कैसी किताबें पढ़ने को देता था! आजकल वे सब किताबें दिखाई भी नहीं पड़तीं।

किरण बोला — यहाँ पढ़कर देख — कितना बढ़िया लिखा है।

बीते जमाने की बात है। सन् १७८९ ई० में फ्रांस की हालत भारत जैसी ही थी। अठारहवीं सदी में विश्व में यांत्रिक सभ्यता के उदय के साथ फ्रांस में एक नयी सभ्यता का विकास हुआ। उस समय वहाँ की हालत यहाँ की तरह ही थी। वहाँ अघोर नाना जैसे लोग इसी तरह देवता के नैवेद्य चुराकर यजमानों को ठगते थे। वहाँ चन्नूनी जैसी औरतें शिक्षा के अभाव में, कुशिक्षा और अशिक्षा के अंधेरे में गंदी-गंदी गालियाँ

एक जगह लाइन खिची थी। लाल पेन्सिल से।

दीपंकर ने पूछा — यह लकीर किसने खींची है ?

किरण बोला — भोजू दा ने। पढ़कर देख —

दीपंकर पढ़ने लगा। Baleuf ने कहा है —

When I see the poor without the 'clothing and without the shoes which they themselves are engaged in making, and contem-plate the small minority who do not work and yet want for nothing, I am convinced that government is still the old conspiracy of the few against the many, only it takes a new form ....

— कितना बढ़िया है, है न ?

उसके बाद जरा सोचकर पूछा — conspiracy का क्या मतलब है ?

दीपंकर बोला — षड्यंत्र !

किरण बोला — सही कहा है। ये जो बड़े-बड़े भाषण झाड़े जाते हैं, वह सिर्फ लोगों को दिखाने के लिए — असल में सब बड़े लोग एक तरह के हैं, सब एक थैले के चट्टे-बट्टे। है न ?

दीपंकर कहता — लेकिन लक्ष्मी दी के घरवाले दूसरी तरह के हैं ....

किरण कहता — हट ! यह सब भी उनका षड्यंत्र है। जैसे तेरी लक्ष्मी दी के घरवाले, वैसे ये पालित लोग। गोरा चेहरा देखकर तू भूल रहा है। देख लेना, तेरा चाचाजी, कभी चंदा नहीं देगा ....

लेकिन नहीं, उस दिन अचानक मुहल्ले में ही चाचाजी से भेंट हो गयी। शाम को वे दफ्तर से लौट रहे थे। उस दिन वे साफ-सुथरे कपड़े पहने हुए थे। कोट-पैंट और सिर पर सोला हैट। बोले — अरे, दीपू बाबू ....

दीपंकर उनके पास गया। बोला — आज आप जल्दी लौट रहे हैं ?

— काम नहीं था, इसलिए जल्दी चला आया ....

एक बार दीपंकर को याद आया कि चाचाजी किस दफ्तर में काम करते हैं, पूछा जाय। लेकिन तभी उसे चंदे की बात याद आयी। बोला — चाचाजी, चंदा देंगे ?

— चंदा ? किसका चंदा ?

— हमारी लाइब्रेरी का।

— क्या तुम लोगों ने लाइब्रेरी खोली है ? बड़ी अच्छी बात है।

चाचाजी ने उत्साह दिया। बात कर रहा था दीपंकर और किरण एक किनारे खड़ा था। चाचाजी ने दिलचस्पी दिखायी तो किरण से रहा नहीं गया। बोला — चाचाजी, मैं लाइब्रेरी का सेक्रेटरी हूँ और दीपू प्रेसीडेंट ....

— अच्छा ? बड़ी अच्छी बात है। कहाँ तुम लोगों की लाइब्रेरी है ?

चाचाजी ने बहुत कुछ पूछा। कहा — किताब पढ़ना अच्छा है। दुनिया में

इतने दिन बाद दीपंकर को उस दिन की घटना याद आयी। शरम भी लगती है और हंसी भी आती है। दुःख भी होता है। लेकिन उस दिन दीपंकर को पता नहीं था कि क्यों वह चाचाजी को बड़े आग्रह से अपनी लाइब्रेरी दिखाने ले गया था। दफ्तर से थके-मारे लौटकर भी क्यों वे उस गंदी बस्ती में पहुँच गये थे! यह बहुत दिन पहले की बात है। उस समय कौन जानता था कि किरण का लाइब्रेरी दिखाना ही मुसीबत का कारण बनेगा! वही लाइब्रेरी एक दिन किरण के जीवन में संकट लायेगी।

चाचाजी बोले — वाह! बड़ी अच्छी लाइब्रेरी है। क्या तुम्हीं ने इसे शुरू किया है?

किरण चटपट बोला — जी हाँ, मैं सेक्रेटरी हूँ और दीपू प्रेसीडेंट ....

लालटेन की रोशनी में खड़े होकर चाचाजी एक-एक किताब उठाकर पन्ने पलटने लगे। फर्श पर फटी चटाई बिछी थी। मिट्टी की दीवार और नाली की बदबू उस दिन उस गंदे माहौल और लालटेन की धुंधली रोशनी में दीपंकर और किरण चाचाजी का उत्साह देखकर विस्मित हो गये थे। बहुतों ने चन्दा दिया था और बहुतों ने जबानी हमदर्दी जाहिर की थी। बहुतों ने किरण को निरुत्साहित किया था, और बहुतों ने उत्साहित लेकिन चाचाजी की तरह किसी ने उत्साह नहीं दिखाया था। वे खुद लाइब्रेरी में गये थे। कृतज्ञता से किरण गद्‌गद हो गया था।

किरण बोला — चाचाजी, आप हमारे प्रेसीडेंट बन जाइए। आप प्रेसीडेंट बनेंगे तो हमारा काम आसान होगा ....

चाचाजी ने पूछा — इसके कौन मेम्बर हैं?

किरण बोला — सबको मेम्बर बनाया है चाचाजी, दूनी चाचा, पंचू दा, छोने दा और अपने क्लास के लड़कों को। बैरिस्टर पालित के लड़के निर्मल पालित और चंडी बाबू के नाती राखाल को भी मेम्बर बनाया है।

चाचाजी ने पूछा — अघोर भट्टाचार्य को?

दीपंकर बोला — वे तो देख नहीं पाते ....

किरण बोला — मैं अघोर नाना के पास गया था तो वे लाठी लेकर मारने दौड़े ....

चाचाजी ने पूछा — मेम्बर लोग यहाँ आते हैं?

किरण बोला — कोई आता नहीं चाचाजी, मैं अकेला लालटेन जलाये बैठा रहता हूँ — कोई नहीं आता, दीपू भी नहीं आता ....

चाचाजी बोले — ठीक है, मैं आया करूँगा ....

— आप प्रेसीडेंट बनेंगे?

चाचाजी बोले — प्रेसीडेंट दीपू बाबू रहें। मैं कभी-कभी आया करूँगा और चन्दा दूँगा ....

किरण बोला — आप आयेंगे तो हमें बड़ा उत्साह मिलेगा चाचाजी, अच्छी-

दीपंकर बोला — भोजू दा ने उसे यह सब बताया है।

— भोजू दा कौन हैं ?

चाचाजी उत्सुक हो उठे। बोले — कौन है भोजू दा ? बड़े लर्नेड आदमी लगते हैं।

दीपंकर बोला — जी हाँ, बड़े लर्नेड हैं। अभी तक मैंने उनको देखा नहीं, किरण जानता है। किरण से उनकी जान-पहचान है ....

चाचाजी और संजीदा हो गये। बोले — हाँ, हाँ, बहुत अच्छा है। तुम लोगों की लाइब्रेरी देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई ....

याद है कि चाचाजी का उत्साह देखकर दीपंकर उस दिन बड़ा उत्साहित हुआ था। जिस किरण का सब अनादर करते हैं, जिसको सब दुरदुराते हैं, उसी को चाचा जी समझ सके थे। संसार में सब लोग जो कुछ चाहते हैं, रुपये-पैसे, इज्जत, नौकरी, वह सब किरण ने नहीं चाहा था। उसने सिर्फ लाइब्रेरी बनाना चाहा था। उसने चाहा था कि एक दिन उसकी दि कालीघाट बॉयज लाइब्रेरी का नाम सारे कलकत्ते में फैल जायेगा। एक दिन महात्मा गांधी, जे० एम० सेनगुप्त या ऐसे ही कोई आकर उसकी लाइब्रेरी का उद्घाटन करेंगे। कालीघाट का नाम चारों तरफ फैल जायेगा, नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट का नाम होगा! सब लोग उसकी लाइब्रेरी में किताब पढ़ने आयेंगे — और उसके बाद एक दिन स्वराज मिल जायेगा। वह स्वराज सिर्फ कलकत्ते का नहीं, कालीघाट का नहीं, मानव मात्र का होगा। अमीर, गरीब, हिन्दू, मुसलमान और ईसाई — सबका।

देर हो रही थी। चाचाजी ने कहा — अब मैं जा रहा हूँ।

किरण बोला — फिर आयेंगे न चाचाजी ?

— जरूर आऊँगा।

उसके बाद चाचाजी ने जेब से दो रुपये निकालकर किरण को दिये। रुपये पाकर भी किरण मानो विश्वास नहीं कर पा रहा था। इतनी जल्दी चाचाजी उनको इस तरह उत्साह देंगे, यह मानो उसकी कल्पना से परे था। दीपंकर ने किरण के चेहरे की तरफ देखा। भरपेट खाने को मिलता तो भी शायद किरण इतना खुश न होता। किरण समझ नहीं पा रहा था कि क्या कहेगा। वह खुशी के मारे अवाक् हो गया था। उसकी दोनों आँखें मानो डबडबा आयी थीं।

जाते समय चाचाजी ने कहा — एक बार मुझसे मिल लेना दीपू....

— कब चाचाजी ?

चाचाजी बोले — आज ही, थोड़ी देर बाद ....

चाचाजी गये। किरण लालटेन लिये उनको नाली तक पहुँचा आया। किरण न जाने कैसा अनमना हो गया। बस एक क्षण के लिए। उसके बाद वह अचानक लाइब्रेरी में फटी चटाई पर नाचने लगा। जोर-जोर से नाचने लगा। चंडी बाबू के घर जन्माष्टमी

कौन बुरा ? रुपये से ? रुपये से मानवता का विचार होगा ? अगर अघोर नाना पाँच रुपये चंदा देते तो किरण की आँखों में क्या वे एकाएक भले आदमी बन जाते ? बाद में अनेक बार अनेक तरह से दीपंकर ने सोचा है, लेकिन सदुत्तर उसे नहीं मिला। वह यही सोचता रहा है कि वह कौन-सा पैमाना है जिससे मनुष्यता की माप हो !

किरण बोला — अब 'पथ के दावेदार' खरीदूँगा ....

— अगर पुलिस पकड़ ले ?

.... कैसे मालूम होगा ? मैं बिस्तर के नीचे छिपाकर रखूंगा और चोरी-छिपे सबको पढ़ाऊँगा ....

दीपंकर बोला — जा, तू अब खाना खा ले। मैं घर जा रहा हूँ ....

उस समय बाहर अँधेरा गहरा आया था। किरण अकेला लाइब्रेरी में बैठा रहा। शायद खुशी की अधिकता के कारण आज वह नहीं खायेगा, शायद सोयेगा भी नहीं। सचमुच कौन सोच सका था कि चाचाजी इस तरह उनकी लाइब्रेरी की सहायता करेंगे। इस तरह लाइब्रेरी में आकर उनको उत्साह देंगे। जब चाचाजी मेम्बर बन गये, तब लक्ष्मी दी और सती भी बनेंगी। सब बनेंगे। तब कोई चिंता नहीं रहेगी। रुपये का प्रबन्ध हो जायेगा। रुपये हो जाने पर वे आलमारी और किताबें खरीदेंगे। फिर लाइब्रेरी के लिए नया मकान होगा। एक हजार रुपये में नया मकान बनेगा। मकान के सामने बड़े-बड़े हरफों में लिखा रहेगा — दि कालीघाट बॉयज लाइब्रेरी। बहुत दिन बाद, अनेक वर्षों बाद, एक सौ, दो सौ या हजार वर्ष बाद अगर कोई जानना चाहेगा कि इस लाइब्रेरी की किसने स्थापना की थी तो दो जनों के नाम सब लेंगे — किरणकुमार चटर्जी और दीपंकर सेन। हजार साल बाद कालीघाट ऐसा नहीं रहेगा, कलकत्ता भी ऐसा नहीं रहेगा। नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट और ईश्वर गांगुली लेन भी ऐसे नहीं रहेंगे, सिर्फ रहेगी उनकी दि कालीघाट बॉयज लाइब्रेरी और रहेंगे उन दोनों के नाम। एक लाइब्रेरी का सेक्रेटरी और दूसरा प्रेसीडेंट। किरणकुमार चटर्जी और दीपंकर सेन।

दीपंकर को यह घटना एक दिन और याद आयी थी।

प्राणमय बाबू के घर बैठकर वाल्मीकि की रामायण पढ़ते समय दीपंकर एक जगह रुक गया था।

एक बार वाल्मीकि मुनि ने नारद से पूछा था — भगवन्, इस समय इस संसार में कौन ऐसा है जो वीर्यवान, गुणवान, चरित्रवान, कांतिमान, विद्वान, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवादी, दृढ़व्रत, प्रियदर्शी, इन्द्रियजयी, क्रोधजयी, सर्वहितकारी, परोन्नति-सहनशील और लौकिक व्यवहार में चतुर है ?

महाकवि का यह प्रश्न दीपंकर के मन में भी जगा है। कब का वह युग था। ढाई-तीन हजार वर्ष पहले कब की वह बात थी। कोई नहीं जानता, कौन-सा युग था वह। उस दिन विश्व के आदियुग में ऋषिकवि के मन में यह प्रश्न उठा था। आश्रम में पेड़ की छाया में बैठे उन्होंने नारद से यह प्रश्न किया था। उस समय रामायण भी

— जाओ, ऊपर जाओ, लक्ष्मी और सती सब हैं। कहकर चाचीजी अपने काम में लग गईं। घर का काम चाचीजी न भी करें तो कोई बात नहीं। फिर भी काम करना उनको अच्छा लगता है। वे चुपचाप बैठ नहीं सकतीं।

दीपंकर बोला — जानती हैं चाचीजी, चाचाजी हमारी लाइब्रेरी देखकर बड़े खुश हुए हैं।

— सच ? बड़ा अच्छा है।

— लाइब्रेरी के मेम्बर भी बने हैं।

दीपंकर की इच्छा हो रही थी कि वह चाचाजी के मेम्बर बनने की बात चिल्लाकर सबसे कह दे। उसका मन कर रहा था कि लक्ष्मी दी, सती, मुहल्ले के सब लोगों से, यहाँ तक कि माँ और अघोर नाना से भी जाकर कह दे।

दूसरी मंजिल में लक्ष्मी दी के कमरे में बत्ती जल रही है। शायद सती भी वहाँ है अब तक सती जरूर आ गयी होगी। आकर पढ़ने बैठ गयी होगी। शाम को चाय पीते समय लक्ष्मी दी ने जो बातें कहीं थीं, वे दीपंकर को याद आयीं। सचमुच लक्ष्मी दी को बड़ा कष्ट है। बाहर से उस कष्ट को कोई जान नहीं सकता। लेकिन दीपंकर जानता है कि वह कितना बड़ा कष्ट है। लक्ष्मी दी को सब कोई झूठमूठ दोष देते हैं। शायद सती भी देती है। अगर दीपंकर अलग मिल गया तो सती भी लक्ष्मी दी के बारे में पूछेगी। पूछेगी — क्यों तुम लक्ष्मी दी के पास बार-बार आते हो ?

दबे पाँव दीपंकर तीसरी मंजिल को जानेवाली सीढ़ी की तरफ गया।

बगल के कमरे में लक्ष्मी दी मेज के पास बैठी पढ़ रही है। सती नहीं है। क्या सती अभी तक नहीं आयी ?

दीपंकर ने बुलाया — लक्ष्मी दी ....

लक्ष्मी दी ने किताब से निगाह हटाकर दीपंकर को देखा। लक्ष्मी दी अचंभे में पड़ गयी। बोली — क्यों रे, फिर क्यों आया ?

दीपंकर बोला — जानती हो लक्ष्मी दी, चाचाजी हमारी लाइब्रेरी के मेम्बर बने हैं। अभी उन्होंने मुझे बुलाया है ....

लक्ष्मी दी चौंकी। मानो डर गयी हो। बोली — चाचाजी ने बुलाया है ? क्यों रे ?

दीपंकर बोला — मैं नहीं जानता ....

लक्ष्मी दी बोली — सती से तेरी भेंट नहीं हुई ? सती तेरे घर गयी है।

— मेरे घर ? इस समय ? क्या करने ?

— सती बोली कि तेरी माँ से जान-पहचान करेगी ....

दीपंकर आश्चर्य से लक्ष्मी दी की तरफ देखता रहा। सती दीपंकर के घर गयी है। दीपंकर की माँ से जान-पहचान करने !

दीपंकर बोला — मैं अभी तक घर नहीं गया, चाचाजी से मिलकर घर

लिए खर्च नहीं करता। वैसा अच्छा लड़का ....

— बस करो!

चाचाजी की आवाज बड़ी रूखी लगी।

वे बोले — तुम्हारी उम्र क्या है दीपू बाबू? तुम कल के लड़के हो। दुनिया के बारे में तुम कितना जानते हो? कितना तुमने देखा है?

दीपंकर चाचाजी की बात का जवाब दे न सका।

चाचाजी की बातों से उसका मन शिथिल पड़ गया।

चाचाजी कहने लगे — एक आदमी का सब कुछ देखा नहीं जा सकता। बाहर से जो कुछ दिखाई पड़ता है, वही उसका असली रूप नहीं होता। तुमसे मेरी उम्र बहुत अधिक है। मैंने अच्छाइयाँ देखी हैं और बुराइयाँ भी, इसलिए तुम्हारी भलाई के लिए कह रहा हूँ कि उससे दूर रहा करो ....

इतना कहकर चाचाजी चुप हो गये। दीपंकर में विरोध करने की क्षमता समाप्त हो चुकी थी। वह चाचाजी की तरफ देखता चुपचाप बैठा रहा।

चाचाजी बोले — तुम्हारी माँ हैं। तुम तो उनकी तकलीफ देख रहे हो! कितना कष्ट उठाकर, दूसरे के घर नौकरानी का काम करके वे तुम्हें पढ़ा-लिखा रही हैं। यह सब क्या वे किरण से तुम्हारी दोस्ती कराने के लिए कर रही हैं? कभी तुमको भी दस जने के बीच सिर उठाकर खड़ा होना होगा। इस तरह दूसरे की रोटी पर पलने से क्या तुम्हारा जीवन सुखी होगा?

दीपंकर को प्रतिवाद की भाषा नहीं मिली।

चाचाजी बोले — आज किरण को छोड़ने में तुम्हें तकलीफ हो रही है, कभी इससे भी प्रिय वस्तु तुम्हें छोड़नी होगी। अपनी उन्नति के लिए जरूरत पड़ेगी तो तुम्हें सब कुछ छोड़ना होगा। संसार में लाइब्रेरी ही सब कुछ नहीं है। संसार भी अब पहले का-सा नहीं है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ अच्छा लगने में भी फर्क आयेगा। उस समय समझोगे कि मेरी ही बात सही है। मैंने जो कुछ कहा, गलत नहीं कहा ....

फिर दूसरी तरफ मुँह फेरकर उन्होंने कहा — ठीक है, जाओ।

दीपंकर को अब बैठे रहने की जरा भी हिम्मत नहीं पड़ी। उठकर वह सीढ़ी से नीचे आने लगा। उसने सोचा कि यह सब क्या हो गया! किरण को छोड़ना होगा! किरण ने क्या दोष किया है? किरण जैसा दोस्त कहाँ मिलता है। किरण उसका जिगरी दोस्त है। जिगरी दोस्त से भी बढ़कर! एक दिन भी वह किरण को नहीं देखता तो कितना खराब लगता है! इनफेंट क्लास से वह किरण के साथ एक ही क्लास में पढ़ता आया है, साथ-साथ दोनों बड़े हुए हैं और वे समान रूप से सुख-दुःख के साथी रहे हैं। उसकी माँ तक किरण से उसका मिलना-जुलना बंद न कर सकी थीं। उसी किरण को वह छोड़ेगा? किरण ने कौन-सा दोष किया है? गरीब होना क्या दोष है? गरीब होना क्या अपराध है? किरण ने ही कहा था कि मनुष्य को

यह कहकर दीपंकर ने लक्ष्मी दी का हाथ हटाया और वह झटपट बरामदा पारकर सीढ़ी से नीचे उतरने लगा। आज उसकी आँखों में यह मकान अपरिचित लग रहा है। कभी इसी मकान से उसकी अंतरात्मा धीरे-धीरे घनिष्ठ होने लगी थी, लेकिन आज उसे लगा कि उसका सारा सम्पर्क और आकर्षण एक पल में छिन्न-भिन्न हो गया है। अब इस मकान पर ही नहीं, इस धरती पर भी मानो उसका कोई अधिकार नहीं है।

दरवाजा खुला था। दीपंकर सीधे गली में निकल गया। ईश्वर गांगुली लेन उस समय सूना था। अँधेरे में आकर वह सब कुछ साफ देख सका। उसने अपने को भी साफ देखा। चाचाजी के मकान में रोशनी की मानो सब कुछ धुँधला दिखाई पड़ने लगा था।

— अरे ! तुम यहाँ हो और तुम्हारी माँ उधर तुम्हें ढूँढ़ रही हैं !

सामने सती खड़ी थी। वह अपने मकान में आ रही थी। उसी ने पहले दीपंकर को देखा। अँधेरे में दीपंकर का किसी तरफ ध्यान नहीं था। सती के घुँघराले बाल फूले हुए थे। दीपंकर अनमना एकटक उसी तरफ देखने लगा। फिर अचानक वह होश में आया। बोला — ओ हाँ ....

दीपंकर अपने मकान की तरफ बढ़ा। उसे लगा कि उसका अस्तित्व समाप्त हो चुका है और वह नहीं है। इस संसार से वह एकदम ओझल हो चुका है, अब कोई उसे ढूँढ़ नहीं पायेगा और कोई उसका पता नहीं जानेगा ....

— अरे, सुनो ....

सती की आवाज सुनकर दीपंकर मुड़ा। उस समय भी सती दरवाजे के सामने वाले पाये पर खड़ी है। बिखरे-बिखरे बाल उसके सिर पर फूले हुए हैं।

—सुनो जरा ....

दीपंकर एक यंत्र के समान धीरे-धीरे सती के सामने जाकर खड़ा हुआ। बोला — मुझे बुला रही हो ?

— हाँ अब तक कहाँ थे ? किससे बात कर रहे थे ?

दीपंकर मानो समझ नहीं पाया। सती मानो किसी और से कुछ पूछ रही है। दीपंकर बोला — मैं ? मुझसे कह रही हो ?

सती बोली — तुमसे नहीं तो और किससे कह रही हूँ ? यहाँ और कौन है ?

कहकर सती खिलखिलाकर हँसी, फिर बोली — तुम्हीं से कह रही हूँ। अब तक हमारे मकान में क्या कर रहे थे ?

— वाह ! क्या तुम्हारे मकान में नहीं जाना चाहिए ?

दीपंकर मानो बेवकूफ बन गया। चाचाजी के घर में उसके आने-जाने के बारे में इतने दिन तक किसी ने कोई सवाल नहीं किया था। किसी ने उसके अधिकार

दीपंकर बोला — यह मैं नहीं कह रहा हूँ। लेकिन आज अचानक कैसे चली गयी, यही पूछ रहा हूँ ....

सती मुस्करायी। बोली — लक्ष्मी दी ने सही कहा है ....

— लक्ष्मी दी ? लक्ष्मी दी ने मेरे बारे में क्या कहा है ?

— कहा है कि दीपू को बाहर से जैसा समझती है, वैसा वह नहीं है। वह बड़ा चालाक है। इसीलिए मैं तुमसे जान-पहचान करने तुम्हारे घर गयी थी।

दीपंकर बोला — मुझसे जान-पहचान करने की इतनी जल्दीबाजी क्यों पड़ गयी ?

इसका जवाब दिये बिना सती बोली — उस दिन की बात मैंने तुम्हारी माँ से कह दी है कि जिस दिन मैं यहाँ आयी थी उस दिन तुम्हें मेरा सामान ढोना पड़ा था। सुनकर तुम्हारी माँ खूब हँसीं और बोलीं — इस लड़के के कारण मैं परेशान रहती हूँ। सुना कि तुम सोते समय बात भी करते हो ?

कहकर सती फिर हँसने लगी। शाम को लक्ष्मी दी से सती के बारे में सुनी बातें फिर दीपंकर को याद आने लगीं।

दीपंकर ने फिर पूछा — सच बताओ, तुम मेरे घर क्यों गयी थी ?

— यों ही। क्या नहीं जाना नहीं चाहिए ?

— नहीं, सच बताओ। इतने दिन हो गये तुम आयी हो, पहले कभी नहीं गयी और आज जाने की क्या जरूरत पड़ी ?

— क्या तुम चाहते हो कि मैं न जाऊँ ?

— नहीं, यह बात नहीं है। जरूर तुम किसी कारण से गयी थी। लक्ष्मी दी तो कभी नहीं गयी ? चाचीजी नहीं गयीं और चाचाजी भी नहीं गये — तुम क्यों गयी ?

— वाह रे! कोई नहीं जाता तो क्या मैं नहीं जा सकती ? शायद मैं उनकी तरह नहीं हूँ, उनसे अलग हूँ ....

दीपंकर ने सिर हिलाया। कहा — नहीं। मैं तुम्हारी बात पर विश्वास नहीं करता, तुम उनसे अलग नहीं हो ....

सती इस दो-टूक जवाब से हैरान हो गयी। वह चुपचाप खड़ी दीपंकर की बात सुनती रही। उसकी जबान पर कोई जवाब नहीं आया।

दीपंकर बोला — असली बात यह नहीं है, असली बात मैं जानता हूँ ....

— असली बात क्या है ?

दीपंकर बोला — तुम किसलिए मेरे घर गयी थी, यह मैं जानता हूँ। तुम्हारे न बताने पर भी जानता हूँ ....

सती और ज्यादा आश्चर्य में पड़ गयी। बोली — तुम क्या जानते हो बताओ न, मैं किसलिए तुम्हारे घर गयी थी ?

— यह मैं नहीं वताऊँगा। कहकर दीपंकर मुड़ा और सीधे अपने मकान में चला गया। उसे लगा कि वह कुछ देर और खड़ा रहेगा तो सती उससे सारी वातें उगलवा लेगी।

• • •

रात को दीपंकर खाने वैठा तो माँ ने कहा — कल कहीं घूमने मत जाना, मेरे साथ एक जगह चलना है ....

दीपंकर के लिए उस समय माँ को कैसी चिंता-फिकर लगी रहती थी, यह दीपंकर को आज भी याद है। वे सव दिन भी क्या थे! माँ सावुन लगाकर कपड़े साफ कर देती थी, फटी कमीज सिल देती थी और यह सव कहीं जाने के लिए होता था। माँ उसे कमीज और जूते पहना देती थी उसके वालों में कंघी कर देती थी, फिर उसे अपने साथ कहीं ले जाती थी। गंगा घाट पर किसी से जान-पहचान हो गयी थी। माँ ने उसे अपना दुखड़ा सुनाया था। वेटे के वारे में कहा था। वेटे के वारे में लोगों से कहते-कहते माँ का मुँह दुखने लगता था। कहीं कोई हरीश वावू किसी फर्म में नौकरी करते हैं। उनकी पत्नी से माँ की जान-पहचान हो गयी तो माँ दीपू को उनके घर ले गयी। हरीश वावू — हरिश्चन्द्र गांगुली। कहीं किसी मर्चेंट ऑफिस में वे वड़े वावू हैं।

मकान के अन्दर जाकर माँ घूंघट काढ़े खड़ी रहती और वेटे को सिखा देती-पांव छूकर प्रणाम करना, कहीं दोवारा वताना न पड़े।

हरीश वावू पूछते — नौकरी ?

आड़ में माँ कहती — आप थोड़ी कोशिश करेंगे तो हो सकता है। कितने लोगों का आपने उपकार किया है। मैं विधवा हूँ, आप मेरा उपकार करेंगे तो जिन्दगी भर याद करूँगी....

हरीश वावू कहते — ठीक है, मुझे दरख्वास्त दे देना, देखूंगा, क्या कर सकता हूँ ....

सिर्फ हरीश वावू नहीं, पता नहीं माँ कहाँ-कहाँ से नये-नये लोगों का पता लाती थी। नये-नये चेहरे, नया-नया मुहल्ला। हर जगह माँ के साथ दीपंकर जाता था

दीदी, तुम जरा भैया से कहना। अब मुझसे नहीं रहा हो रहा है। मेरा शरीर नहीं चल रहा है....

आखिर एक दिन नृपेन बाबू ने खोलकर कहा।

बोले — फिर तुमसे खोलकर कहूँ दीपू की माँ। यह तो मर्चेंट आफिस नहीं है, यह है साहब लोगों का दफ्तर। यहाँ एक बार लग जाने पर जिन्दगी में कभी नौकरी नहीं जाती। इसके अलावा आराम कितना है। तुम विधवा हो, बेटे का पास लेकर काशी, वृन्दावन, गयाधाम और पुरी, कितनी जगह घूम सकोगी। एक पैसा किराया नहीं लगेगा। बताओ, यह मामूली बात है ?

— इसीलिए तो आपके पास आयी हूँ भैया !

— लेकिन दफ्तर तो भैया का नहीं है दीपू की माँ। अगर मेरा दफ्तर होता तो मैं आज ही हुक्म दे देता कि दीपंकर को नौकरी दे दो। रजिस्टर पर उसका नाम चढ़वा देता और महीने में तैंतीस रुपये तनख्वाह बँध जाती ! उसके बाद पाँव पर पाँव धरे आराम करो — लेकिन अब मेरे वश में नहीं है इसीलिए कह रहा था कि साहब लोगों को खुश करना मुश्किल हो गया है....

माँ कहती — आप कह देंगे तो क्या मुश्किल है भैया ?

— अरे नहीं ! तुम नहीं समझती हो। सब हमारे-तुम्हारे जैसे भले नहीं हैं। वे लोग सात समन्दर पार यहाँ शकल दिखाने थोड़े आये हैं ? वे सब देवता से बढ़कर हैं। देवता को जैसे भोग चढ़ाना पड़ता है, उसी तरह साहब लोगों को भेंट चढ़ानी पड़ती है।

— भेंट ! कितने रुपये की भेंट भैया ?

नृपेन बाबू ने कहा था — फिर भी कम से कम पचीस रुपये की भेंट चढ़ानी पड़ेगी, नहीं तो साहब देवता का पेट कैसे भरेगा ? यही समझ लो, दो मुर्गे, कुछ फल-फलारी, एक गिन्नी थोड़ी सी नये गुड़ की मिठाई, एक बोतल विलायती शराब। फिर बाबुओं और चपरासियों की बख्शिश अलग से। कुल मिलाकर पचीस रुपये पड़ जायेंगे....

नृपेन बाबू ने पचीस रुपये की बात पहली बार उस दिन बतायी। माँ ने भी भी वादा किया जैसे भी हो पचीस रुपये का जुगाड़ करेगी। पचीस रुपये का जुगाड़ होते ही दीपंकर को एकदम हाथों हाथ स्वर्ग मिल जायेगा। उसके बाद जिन्दगी भर चाहे जितना आराम करो। रेलवे का पास लेकर दिल्ली-बंबई घूमो और तीरथ-धरम करो। कोई तुमसे कुछ नहीं कहेगा। किसी के बाप की हिम्मत नहीं कि तुम्हारी नौकरी ले ले ! सरकारी नौकरी का यही तो मजा है ! फिर हर साल तीन रुपये का इनक्रीमेंट। फिर चाहे जितनी बाबूगीरी करो और नवाबी छाँटो। काम बस इतना करना पड़ेगा कि सवेरे दस बजे दफ्तर हाजिर हो जाओ और शाम के पांच बजे वहाँ से निकल पड़ो। दोपहर में आधे घंटे का टिफिन-

रास्ते भर माँ इसी तरह उपदेश देती रही। कहते-कहते मानो माँ का गला भर आया। घर लौटते ही दीपंकर को न जाने क्यों अफसोस होने लगा।

बोला — माँ।

माँ ने बिगड़कर कहा — क्या है? फिर भूख लगी है? अब भूख लगे तो मुझसे मत कहना, मैं तुझे बारंबार खिला नहीं सकती। जहाँ से हो सके तू अपना इन्तजाम कर।

दीपंकर को मानो रोना आ गया। उसकी आँखें डबडबा आयीं। उसने दोनों हाथों से माँ को पकड़ लिया। कहा — माँ, तुम नाराज मत हो। तुम नाराज होती हो तो मुझे अच्छा नहीं लगता ....

— अच्छा न लगे तो मैं क्या करूँगी? मैं कुछ नहीं जानती। जैसा मेरा भाग्य है, वैसा तू। अब मेरा मरण हो तो छुटकारा मिले। — छोड़ मुझे, छोड़ दे, ढेर सारा काम करना है। छोड़ ....

दीपंकर किसी तरह माँ को छोड़ नहीं रहा था। मानो छोड़ते ही उसकी माँ नहीं रहेगी। फिर माँ को खोकर वह कैसे जिंदा रहेगा? कहाँ रहेगा? माँ ही तो उसके लिए सब कुछ है।

वह बोला — माँ, तुम मुँह फुलाये क्यों हो?

— मुँह फुलाये नहीं रहूँगी तो क्या हँसूंगी! मेरे भाग्य में क्या हँसना लिखा है?

— नहीं, तुम एक बार हँसो। न हँसोगी तो तुम्हें छोड़ूँगा नहीं। हँसो तुम। तुम्हारे पाँवों पड़ता हूँ, तुम हँसो माँ ....

माँ दीपंकर को छुड़ा नहीं पाती और दीपंकर भी माँ को नहीं छोड़ता ....

माँ बोली — तुझे शर्म नहीं आती बात करते हुए दीपू! अगर तू मेरा दुःख समझता, तो क्या मेरा यह हाल होता। मैं तेरे लिए दरवाजे-दरवाजे भीख माँग रही हूँ, और तू मुझसे हँसने को कह रहा है? इस जले मुँह में क्या हँसी आती है? तूने क्या हँसने लायक मुँह रखा मेरा?

दीपंकर ने माँ का मुँह पकड़कर अपनी तरह किया और कहा — फिर भी तुम एक बार हँसो माँ, मैं देखूँ ....

दीपंकर देखता रहा। लगा, माँ ने एक बार हँसने की कोशिश की। लेकिन हँसना चाहकर माँ ने मानो रो दिया। आँसू टपक पड़े। दीपंकर को छाती से लगाकर माँ फफक-फफककर रोने लगी। बेटे का सिर अपनी छाती में भींचकर माँ कहने लगी — तू मुझसे हँसने को कहता है बेटा! क्या मैं हँसना नहीं चाहती? हँसने की बड़ी साध है मेरे मन में। कितने साल हो गये माँ को पुकार रही हूँ कि कभी हँस सकूँ, लेकिन क्या हुआ? और तू मुझसे हँसने को कहता है दीपू? तुझे क्या पता कि मेरी जैसी दुखिया कब नहीं हँसना चाहती?

माँ बोली — कल ही एक बार कहना। समझ गया ?

— मैं नहीं कह सकूँगा, माँ ....

— क्यों कह सकोगे ? वह तो मुझको कहना पड़ेगा। तुम तो बस किरण के साथ दिनभर घूम सकोगे। वह फेल हो गया है, उसके साथ तुम क्यों घूमा करते हो ? .... कल एक बार चले जाना।

— लेकिन सती तुम्हारे पास क्यों आयी थी माँ ?

माँ बोली — वह बार-बार तेरी बात पूछ रही थी। मैंने कहा, उसका बाप नहीं है, तुम अपने चाचाजी से कहकर कहीं उसकी नौकरी लगा दो तो एक गरीब माँ के बेटे का भला हो जाय ....

दीपंकर यह सुनकर मानो खुश नहीं हुआ। बोला — वह क्यों आयी थी, तुमने नहीं कहा।

— और किस लिए आयेगी ? पड़ोस में घूमने चली आयी थी।

— क्यों ? उसकी चाची नहीं आती, लक्ष्मी दी नहीं आती, वह क्यों अकेली चली आयी ?

— सब एक समान नहीं होते। वह लड़की दूसरी तरह की है, बड़ी मिलनसार

— कोई-कोई ज्यादा मिलनसार होता है न, वह उसी तरह की है।

दीपंकर बोला — नहीं माँ, ऐसी बात नहीं है। उसका दूसरा मतलब था, तुम समझ नहीं सकी।

— अरे ! कोई किसी के घर घूमने आता तो उसमें मतलब क्या होगा ? फिर वह अमीर की लड़की है, उसके बाप के पास बहुत रुपया है, हमारे जैसे गरीब के घर वह चली आयी तो उसको क्या मिलेगा ? यों ही समय बिताने चली आयी थी !

दीपंकर हँसा। बोला — नहीं माँ, तुम अच्छी हो, सीधी हो, इसलिए समझ नहीं पायी। उसका एक मतलब था। मैं जानता हूँ।

— क्या मतलब था ?

दीपंकर बोला — था एक मतलब ! वह तुम समझ नहीं सकोगी। बड़ी चालाक लड़की है, इसलिए उसने तुमसे कुछ नहीं कहा....

— क्या नहीं कहा, वही बता न ?

दीपंकर बोला — वे दोनों बर्मा की लड़कियाँ हैं, यह जानती हो न ! बर्मा की लड़कियाँ यहाँ की लड़कियों की तरह सीधी नहीं होतीं, यह तो जानती हो। वहाँ की लड़कियाँ बड़ी चालाक होती हैं और उनके पेट का हाल कोई नहीं जान सकता। वे दूसरों को बहुत तकलीफ देती हैं। यही समझ लो कि अगर उनको मालूम हो जाय कि तुम्हारा भला हो रहा है तो वे होने नहीं देंगी — सिर्फ यही चाहेंगी कि कैसे तुम्हारा बुरा हो। वे ऐसी हैं ! वे दूर से निगाह रखेंगी कि कोई तुम्हारा भला न कर सके। फिर वे सब पर शक करती हैं।

वहुत रुपया है, उन लोगों से भी ज्यादा। तुम्हारी शादी के समय अघोर नाना नत-जमाई को वहुत रुपया देंगे। इसी लिए नाना संदूक में रुपया इकट्ठे कर रहे हैं।

विन्ती चुप हो गयी।

अचानक दीपंकर वोला — माँ, तुम उन लोगों के घर मत जाना!

— क्यों रे, उनके घर जाने में क्या हर्ज है?

— नहीं, वे मेरे वारे में तुमसे वहुत कुछ पूछेंगे और तुम क्या कहते क्या कह दोगी, वाद में परेशानी होगी!

— क्यों? मुझसे क्या पूछेंगे?

दीपंकर वोला — यही समझ लो कि मैं सवेरे उठकर मंदिर में फूल चढ़ाने क्यों जाता हूँ, मंदिर जाते समय मैं किसी से वात करता हूँ या नहीं, किसी के लिए कुछ ले जाता हूँ या नहीं, यही सव ऊलजलूल सवाल तुमसे कर सकते हैं।

माँ आश्चर्य में पड़ गयी। वोली — मंदिर जाते समय तू किससे वात करता है? किसके लिए क्या ले जाता है? क्या वक रहा है?

— यही सव वे लोग पूछेंगे न!

— कौन पूछेगा?

दीपंकर वोला — वही लड़की पूछ सकती है। वही सती। फिर चाचीजी पूछ सकती हैं। चाचाजी तो हैं ही। असल में वे सव एक तरह के हैं — सिर्फ लक्ष्मी दी दूसरी तरह की है। वह इतनी अच्छी लड़की है कि क्या वताऊँ माँ! फिर अच्छा होने पर जो होता है, वही हुआ है ....

माँ वेटे की वात समझ नहीं पा रही थी। वोली — अच्छा होने पर क्या होता है?

— दुनिया में सव लोग अच्छे को सताते हैं!

माँ ने वेटे के चेहरे की तरफ देखा। कहा — यह सव तुझे किसने सिखाया है?

दीपंकर वोला — क्या यह सव किसी से सीखना पड़ता है? क्या तुम समझती हो कि मैं कुछ नहीं जानता? इस संसार में जो जितना अच्छा होता है, वह उतना ही कष्ट पाता है। यह तो सभी जानते हैं। तुम अपनी वात देखो न, तुम अच्छी हो, इसलिए कष्ट पा रही हो। है न? सच वताओ ....

माँ वोली — वह तो पा रही हूँ। कितना कष्ट पा रही हूँ, यह भगवान ही जानते हैं।

— फिर? लक्ष्मी दी भी तुम्हारी तरह अच्छी है माँ। लक्ष्मी दी को देखकर मुझे तुम्हारी वात याद आती है। जितना कष्ट तुम्हें है, उतना ही लक्ष्मी दी को। तुम दोनों एक तरह की हो ....

माँ वेटे की वात नहीं समझ पायी।

दीपंकर जाग रहा था। चाचाजी के मकान की छोटी-मोटी आवाजें थ रुक गयीं। उसके बाद सिर्फ गहरा अँधेरा। दिखाई नहीं पड़ता। कब, कितने और कितने युग पहले की बात है! ईसा के पैदा होने से चार सौ उनहत्तर साल की बात है। एक दिन एथेन्स नगर में एक गरीब के घर दीपंकर की तरह एक पैदा हुआ। बाप ने उसका नाम रखा सॉक्रेटीज़। वैंटरा के जमींदार के छोटे पट्टी के घर नाती पैदा हुआ तो उसका भी नाम दीपंकर रखा गया था। उसका हुआ, कोई नहीं जानता। लेकिन यह दीपंकर वीसवीं सदी के पहले दशक में एक ईश्वर गांगुली लेन के उन्नीस बटा एक बी नंबर मकान में पहुँच गया। ढाई हज साल पहले का वह बच्चा भी बड़ा हुआ था। लायक बना था। लेकिन वह बना थ एक विचित्र आदमी! उसने कहा था — Know thyself — अपने को जानो उसने कहा था It is not gods but we ourselves who shape our destiny — ईश्वर नहीं, हमीं अपने भाग्य के निर्माता हैं। उसने कहा था, To a good man, whether alive or dead, no evil can happen, nor are the gods indifferent to his well being — जो भला है, ईश्वर उसका मददगार है।

उसके बाद हमारे इस संसार में कितने महापुरुष आये। गौतम बुद्ध आये, ईसा मसीह और मुहम्मद आये, चैतन्य, शंकराचार्य, रामकृष्ण, विवेकानन्द, राममोहन, विद्यासागर और रवीन्द्रनाथ आये। उपनिषद् से गीतांजलि तक किताबें लिखी गयीं। हजारों साल और करोड़ों लोग! लेकिन आश्चर्य की बात है। किसी ने एक बार भी नहीं सोचा कि उसी एक प्रश्न, उसी एक समस्या के समाधान के लिए उन्नीस बटा एक बी ईश्वर गांगुली लेन में अघोर भट्टाचार्य के पुराने मकान के एक कमरे में वैंटरा गाँव का दीपंकर सेन लेटा-लेटा निद्राहीन रात वितायेगा? और उस जमाने का सॉक्रेटीज़? उसने भी क्या सोचा था कि मेरी मृत्यु के इतने साल बाद साउथ सबर्बन कालेज का एक छात्र प्रोफेसर का लेक्चर सुनकर मुझको याद करता हुआ रात को सो नहीं सकेगा? क्यों संसार में अच्छे लोग कष्ट पाते हैं? अच्छे लोगों से विधाता-पुरुष क्यों रूठे रहते हैं? कैसे अपने को जाना जा सकता है? अपने को जानने का मन्त्र कहाँ मिलता है? अगर मनुष्य ही अपने भाग्य का निर्माता है, तो ईश्वर की क्या जरूरत है? अगर ईश्वर न रहे तो क्यों रोज मंदिर में फूल चढ़ाया जाय?.... किस देवता की पूजा की जाय? फिर काली, सिद्धेश्वरी, षष्ठी, गणेश और नकुलेश्वर — ये सब कौन हैं? वह ईश्वर कहाँ है जो इहलोक और परलोक में भी हमारी रक्षा करेगा? फिर माँ के सुख के लिए किस देवता से प्रार्थना की जाय? लक्ष्मी दी के मंगल के लिए किस ईश्वर का स्मरण किया जाय?

अचानक दीपंकर को लगा कि कमरे में कोई आवाज हुई।

इस अँधेरे में दीपंकर ने निगाह दौड़ायी। नहीं, कोई आवाज तो नहीं हुई। शायद मन का भ्रम है। कहीं कोई नहीं है। शायद निद्राहीन मन की विचित्र कल्प

—अभी तो चिल्ला रही थी ?

—कब ? मैं कब चिल्लायी ! मेरे गले से आवाज नहीं निकल रही है और मैं चिल्लाऊँगी—अरे, मेरा तो भाग फूटा है ....

पुरानी आदत के कारण कभी-कभी चन्नूनी गाली बक लेती है, लेकिन उसे उसका ख्याल नहीं रहता। सोते समय भी वह गाली बकने लगती है। फिर सवेरे वह आँगन में झाड़ू नहीं लगा सकती और न उसे गोबर से लीप ही पाती है। उस दिन माँ की परेशानी बढ़ जाती है। वह एक हाथ से खाना बनाती और दूसरे हाथ से झाड़ू संभालती हैं। उसी को चूल्हा पोतना और बर्तन माँजना पड़ता है। उस दिन दीपंकर को सब्जी लेने जाना पड़ता है। बाजार से वह मछली, आलू, परवल, भाँटा, लौकी, कोंहड़ा आदि खरीद लाता है।

शुरू-शुरू में माँ डरती थी। दीपंकर सब्जी लाने कभी गया नहीं—पता नहीं, वह सब ठीक से ला पायेगा या नहीं। जब वह बाजार से लौटता, तब माँ उससे हिसाब लेती।

कहती—पैसे का हिसाब दे ....

माँ हिसाब लेने में चतुर हैं। एक-एक पाई का वह हिसाब लेती हैं। जो पैसा लौटता है, उसे माँ आँचल के कोने में गठिया लेती हैं। दूसरे का पैसा। दूसरे के पैसे में बड़ा झमेला है न ! अपना पैसा हो तो कोई चाहे जैसे खर्च करे। लेकिन उस बूढ़े का एक-एक पैसे में प्राण अटका रहता है। खुशी से वह एक पैसा किसी को दे नहीं सकता। बचपन में उसने पैसे का मुँह नहीं देखा था। पैसा न होने से उसे गंगा का पानी पीकर रहना पड़ा था। भूख लगने पर वह अंजुरी भर-भर गंगा का पानी पीता था। उस आदमी ने आज पैसे का मुँह देखा है। उस आदमी के रुपये-पैसे-मुहर और गहने आज संदूक में भरे पड़े हैं। रात के सोते समय भी उस बूढ़े को चैन नहीं मिलता और कहीं जाकर वह शांति से रह नहीं पाता। माँ बारबार उसके कमरे का ताला खींचकर देखती है—ठीक है न !

माँ कहती—दो पैसे सेर यह भाँटा ? तू क्या कह रहा है दीपू—यह तो दिनदहाड़े लूटना हुआ ....

दीपंकर कहता—मैंने बहुत कहा कि एक पैसा सेर दो, लेकिन कुंजड़िन ने दिया नहीं। मैं क्या करता ....

लेकिन अघोर नाना दर-दाम लेकर सिर नहीं खपाते। वे जितना पैसा देते हैं, उससे खर्च चल जाय, बस ! फिर वे कुछ नहीं कहते। खड़ाऊँ खटखटाते हुए नीचे आयेंगे और गपागप भात खा लेंगे। क्या खा रहे हैं और क्या नहीं, यह भी वे देखते नहीं थे।

—अरे, आपने मछली नहीं खायी ? मछली किसके लिए छोड़ दी ?

अघोर नाना चिल्लाकर उछल पड़ते। कहते—मुँहजली लड़की ने मुझे मछली

—नौकरी के बारे में कहेगा क्या ? जरा ठीक से कहना ....

माँ उस समय खाना वना रही थी। कड़ाही में तेल चढ़ाया गया था। तेल में वालू छोड़ते ही छर्-छर् आवाज होने लगी। फिर कुछ सुनाई नहीं पड़ा। दीपंकर ने वाजार का झोला रखकर हाथ धो लिया। उसने मछली छुई थी। उसके बाद पाँवों में चप्पल डाले वह लक्ष्मी दी के मकान की तरफ गया। न जाने क्यों वह मन ही मन डर रहा था। सवेरे भी उसे कुछ मालूम न था। रोज की तरह मन्दिर में फूल चढ़ा आया था। उसके वाद पढ़ने वैठा था। इतिहास, नागरिक शास्त्र और अंग्रेजी के पाठ पढ़ने थे। चन्नूनी की तवीयत ठीक नहीं हुई थी। इसलिए उस दिन भी दीपंकर को सब्जी लाने जाना पड़ा। वाजार में रघु से भेंट हो गयी। वह भी सब्जी लेने आया था।

रघु ने आवाज दी—दीपू वावू ....

दीपू वोला—सब्जी लेने आये हो रघु ?

उसके वाद पूछा—लक्ष्मी दी क्या कर रही है ?

रघु वोला—कल खूब झगड़ा हुआ था ....

—झगड़ा ? किससे झगड़ा हुआ था, किसने झगड़ा किया था ?

—दोनों वहनों में झगड़ा हुआ था। वड़ी दीदी और छोटी दीदी में ....

—क्यों ?

—यह नहीं जानता। वड़ी दीदी ने खाना नहीं खाया। चाचाजी ने बहुत समझाया, नहीं खाया; चाचीजी ने समझाया, फिर भी नहीं खाया ....

—किस वात पर झगड़ा हुआ ? नहीं सुना ?

रघु वोला—उन दोनों का झगड़ा कोई नया नहीं है—वहाँ भी वे लड़ती थीं, यहाँ भी ....

दीपंकर वोला—सिर्फ दोनों वहनें ! फिर भी मेल नहीं ?

रघु वोला—एकदम नहीं ....

—लेकिन कभी-कभी तो दोनो में वड़ा मेल देखता हूँ, खूब हँसती हैं। मैं घर में पढ़ने वैठता हूँ तो सुनता हूँ ....

रघु वोला—मेल तो है, लेकिन लड़ाई ही ज्यादा। जव दोनों छोटी थीं, तब से देख रहा हूँ ....

—गलती किसकी ज्यादा है ? लक्ष्मी दी की या सती की ? दोनों में कौन अच्छी है रघु ?

—दोनों अच्छी हैं ....

दीपंकर वोला—दोनों अच्छी हैं ?

—हाँ, दोनों अच्छी हैं।

—लेकिन लक्ष्मी दी शायद ज्यादा अच्छी है, है न ?

रघु वोला—नहीं। दोनों वहुत अच्छी हैं।

में पड़ गया। अगर लक्ष्मी दी के कमरे में इस समय सती हो! अगर सती लक्ष्मी दी से उसे बात न करने दे! सती जैसी लड़की है, शायद बात ही न करने देगी और क्या, सती शायद उसे कमरे में घुसने ही न दे। शायद कहे — अभी क्यों आये हो? क्या हमें पढ़ना-लिखना नहीं है?

कुछ देर खड़ा रहकर दीपंकर लौटा।

लेकिन इतनी दूर आकर लौटना क्या ठीक होगा? लक्ष्मी दी मुझसे प्यार करती हैं। मैं तो लक्ष्मी दी के पास जाऊँगा, इसमें कौन क्या कहेगा? लक्ष्मी दी बड़ी बहन हैं क्या बड़ी बहन की बात की कोई कीमत नहीं है? जो बड़ा होता है, उसी की बात तो छोटा मानता है। दीपंकर सोचने लगा।

चाचीजी बरामदे से शायद भंडारघर की तरफ आयीं।

दीपंकर को देखकर बोलीं — क्यों दीपू? यहाँ क्यों खड़े हो? ऊपर नहीं गये?

दीपंकर मानो होश में आया।

बोला — चाचीजी, एक बात कहूँ?

— क्या? कहो न!

दीपंकर बोला — आप तो हमारी हालत जानती हैं।

— वह तो जानती हूँ।

— हमारी हालत बहुत खराब है। आप तो जानती हैं कि मेरे पिताजी को डाकू ने मार डाला था। मेरी माँ ने बड़ी तकलीफ उठाकर मुझे पाला-पोसा। माँ को दूसरे के घर खाना बनाना पड़ता है। कहा जा सकता है कि भीख माँगकर हमारा गुजारा होता है ....

चाचीजी बोलीं — यह सब मैं जानती हूँ — लेकिन तुम कहना क्या चाहते हो, कहो न!

— यही कहने आया था। इस हालत में अगर मुझे कोई नौकरी मिल जाय, तो हमारा बड़ा उपकार हो। फिर माँ को दूसरे के घर खाना न बनाना पड़े ....

चाचीजी बोलीं — यह तो ठीक है। लेकिन तुम किसी से कुछ कहने आये हो न?

दीपंकर बोला — चाचाजी मुझे कोई नौकरी नहीं दिला सकते? वे तो बहुत बड़ी नौकरी करते हैं। वे अगर मुझे अपने दफ्तर में रखवा दें तो बड़ा अच्छा हो ....

चाचीजी बोलीं — चाचाजी ऊपर हैं। उन्हीं से जाकर कहो न!

— मैं जाकर कहूँ? चाचाजी नाराज तो नहीं होंगे?

— नहीं, नाराज क्यों होंगे! तुम्हें नौकरी की जरूरत है, तुम कहोगे? वे नाराज क्यों होंगे?

दीपंकर बोला — माँ भी आयेंगी। माँ चाचाजी से कहेंगी। उसके पहले मैं कहने आया था।

कालेज जाना है, मैं जाऊँ ....

सती बोली — लक्ष्मी दी से क्या काम है ?

— कुछ नहीं, यों ही ....

सती बोली — जरूरत न रहने पर भी तुम आते हो ?

दीपंकर बोला — हाँ, लक्ष्मी दी मुझसे आने को कहती हैं। लक्ष्मी दी कहती हैं, इसीलिए मैं आता हूँ। लक्ष्मी दी कहती हैं, चाचाजी कहते हैं, चाचीजी कहती हैं — सभी मुझसे आने के लिए कहते हैं, जरूरत न रहने पर भी आने के लिए कहते हैं। अब तुम लोगों का घर मुझे दूसरे का घर नहीं लगता ....

फिर जरा रुककर बोला — तुम्हारे आने से पहले मैं खूब आता था। तुम्हारे आने के बाद मैंने आना कम कर दिया है ....

— क्यों ?

थोड़ा सोचकर दीपंकर ने उत्तर दिया — अब मुझे फुरसत कम मिलती है। पढ़ाई बढ़ गयी है। नौकरी की तलाश में चारों तरफ दौड़ना पड़ता है। सवेरे बहुत काम रहता है। तुम्हारी तरह बैठे-बैठे पढ़ने से मेरा काम नहीं चलता। मुझे सब्जी लाना पड़ता है, सवेरे उठकर मंदिर जाकर फूल चढ़ाना पड़ता है।

ढेर सारे काम का ब्योरा दे लेने के बाद मानो दीपंकर का संकोच कुछ कम हुआ।

सती बोली — काम करना अच्छा है ....

दीपंकर को सती की बात से उत्साह मिला। बोला — मेरी माँ मुझसे ज्यादा काम करती हैं। काम करती-करती वह पसीने से तर हो जाती है। घर भर के लोगों का खाना उसे बनाना पड़ता है। मेरे पिताजी नहीं हैं, इसलिए माँ मेरे बारे में बहुत सोचती है। जब मैं दो महीने का था, तब से माँ मुझे अकेली पाल रही है। समझ लो, जब मैं बच्चा था, जब मैं बोल नहीं सकता था, तब माँ विधवा हुई! यह कैसा कष्ट है, कोई समझ नहीं सकता। माँ से सुना है कभी-कभी उसे भात खाने को नहीं मिला, सिर्फ लाई खाकर रहना पड़ा ....

अचानक दीपंकर को ख्याल हुआ कि यह सब किससे कह रहा हूँ। बोला — छोड़ो, यह सब तुम समझ नहीं ....

'सती बोली — नहीं, अच्छा लग रहा है, तुम कहो ....

दीपंकर बोला — तुम यह सब सपने में भी सोच नहीं सकती। माँ ने बताया है किस-किसी दिन घर में चावल नहीं रहता था और मैं भात खाने के लिए रोने लगता था। यह सब कहती हुई माँ रोने लगती है। और क्या बताऊँ ....

सहसा रुककर दीपंकर ने कहा — तुमसे एक बात पूछूँ ?

— क्या ?

— पहले बताओ, मेरी बात का सही-सही जवाब दोगी ?

कहा है, बताओ। मैं कुछ नहीं कहूँगी ....

दीपंकर बोला — लेकिन उसके लिए तुम्हीं जिम्मेदार हो !

— मैं ? मैं जिम्मेदार हूँ ?

दीपंकर बोला — हाँ, तुम्हीं जिम्मेदार हो।

— लेकिन मैं क्यों जिम्मेदार हूँ ? वाह रे ! किसने यह सब कहा है ? क्या लक्ष्मी दी ने कहा है ?

दीपंकर बोला — किसने कहा है और किसने नहीं कहा है, वह सब रहने दो, लेकिन तुम तो लड़की हो ? बड़ी बहन से लड़ना क्या ठीक है ? लक्ष्मी दी तुम्हारी बहन हैं न ?

यह सुनकर सती जरा संजीदा हो गयी। एक क्षण बाद बोली — हम लड़ती हैं तो तुम्हारे कानों तक वह बात कैसे पहुँचती है ?

दीपंकर बोला — मैं जानता हूँ, सब जान सकता हूँ ....

— लेकिन तुम कैसे जान सकते हो, यही तो मैं पूछ रही हूँ। लक्ष्मी दी ने कहा है ?

दीपंकर हँसा। बोला — लड़कर कल रात लक्ष्मी दी ने कुछ नहीं खाया, इससे क्या तुमको कष्ट नहीं होता ?

सती कुछ सोचने लगी। दीपंकर को लगा कि सती यही सोच रही है कि इस लड़के को यह सब कैसे मालूम हो गया ?

सती ने पूछा — हमारे घर में लड़ाई होती है तो तुम कैसे जान जाते हो, बताओ न ?

दीपंकर बोला — तुम आपस में लड़ती हो, उसमें कोई दोष नहीं है और मैं जान गया तो दोष हुआ ?

सती गंभीर हो गयी। बोली — समझ गयी ....

— क्या समझ गयी ?

सती ने उस बात का जवाब नहीं दिया। बोली — मैं तुमसे एक बात पूछूँगी, सही-सही जवाब दोगे न ?

— पूछो।

सती ने एक बार पीछे मुड़कर देख लिया, फिर कहा — लक्ष्मी दी नहाने गयी हैं, शायद अभी आ जायेंगी। — तुम्हारी उम्र क्या है ?

दीपंकर को आश्चर्य हुआ। बोला — मेरी उम्र जानकर क्या करोगी ? तुम्हारी उम्र क्या है ?

सती बोली — उम्र पूछी, इसलिए तुम नाराज हो गये ? मर्दों को अधिक उम्र तक अकल नहीं आती, इसलिए मैंने तुम्हारी उम्र पूछी ....

दीपंकर बोला — नहीं, तुम जैसा समझ रही हो, वैसा मैं नहीं हूँ।

—इसलिए तुम्हारी माँ से कहा कि मेरे पिताजी को देखते ही प्यार करने को मन करता है। मेरे पिताजी इतने अच्छे हैं। लेकिन वैसे पिताजी के पास हम रह न सकीं, ऐसा ही हमारा भाग्य है!

—क्यों ?

सती बोलीं—वही तो कह रही हूँ। अब इस उम्र में पिताजी को बड़ा कष्ट मिला। माँ के मरने पर भी उनको इतना कष्ट नहीं हुआ था। उनका वह कष्ट देखा नहीं जा सकता।

दीपंकर ने पूछा—उनको क्या कष्ट है ?

सती एक पल चुप रही। मानो उसका गला भर आया। फिर वह बोली—यही मेरी लक्ष्मी दी—लक्ष्मी दी के कारण ....

—लक्ष्मी दी के कारण ?

सती अपना मुँह एकाएक दीपंकर के थोड़ा पास ले आयी। आवाज धीमी कर वह बोली—तुमसे एक बात कहूँ ?

—कौन-सी बात ?

—वही बात जो तुमसे कहने के लिए मैं कई दिन से तुमसे मिलने की कोशिश कर रही थी। मैं इसी लिए कलकत्ते आयी हूँ। मैं इसी लिए तुम्हारे घर गयी थी। तुम तो लक्ष्मी दी से बहुत प्यार करते हो।

दीपंकर बोला—हाँ, बहुत प्यार करता हूँ। लक्ष्मी दी भी मुझसे बहुत प्यार करती है।

सती बोली—हाँ, लक्ष्मी दी की चिट्ठी से मैं समझ गयी। तुम्हारे बारे में वह मुझे लिखती थी। कैसे तुम झाँका करते थे, कैसे पकड़े गये थे और पीटने पर भी नाराज नहीं होते थे ....

दीपंकर बोला—उस समय मैं बहुत छोटा था, कुछ समझता नहीं था।

—लेकिन अब तो तुम सब समझते हो, बड़े हो गये हो और बच्चे नहीं हो ....

—नहीं।

—फिर एक बात कहूँगी, सुनोगे ?

दीपंकर बोला—क्या ?

—पहले बताओ, मैं जो कुछ कहूँगी, किसी से नहीं कहोगे ?

दीपंकर ने फिर कहा—क्या कहोगी, कहो न ....

सती ने एक बार पीछे मुड़कर देख लिया। कहा—बताओ, किसी से नहीं कहोगे ?

दीपंकर सोच में पड़ गया। सब यही कहते हैं कि मेरी बात किसी को मत बताना। संसार में क्या सभी एक दूसरे पर अविश्वास करते हैं ? लक्ष्मी दी सती पर

असुविधा है, लेकिन कुछ सुविधा भी तो है ही। लेकिन आज से लगा कि बड़ा होने का एक और पहलू है — जो अब तक उसका अनजाना था। उसे लगा कि बड़ा होना भी बड़ा अच्छा है। बड़ा होने पर बड़े लोग ज्यादा विश्वास करते हैं, प्यार करते हैं और अपने पास खींच लेते हैं।

सती बोली — मैं जानती हूँ कि लक्ष्मी दी तुम पर बहुत विश्वास करती है। है न ?

दीपंकर बोला — हाँ, करती है।

अचानक सती बोली — क्या वह तुम्हारे जरिये किसी के पास कोई चिट्ठी ....

— दीपू ! ! !

मानो अचानक बिजली गिरी। दीपंकर चौंक उठा। सती भी एक क्षण के लिए चौंक पड़ी ! दोनों के सामने से लक्ष्मी दी कमरे में आयी।

लक्ष्मी दी चिल्लायीं — तू फिर आया है ?

दीपंकर मुंह बाये लक्ष्मी दी की तरफ देखता रहा। अभी नहा कर आयी हैं लक्ष्मी दी। पीठ पर भीगे बाल फैले हैं। पानी के एक-दो बूंदें उसके माथे, चेहरे और पलक पर झलक रही हैं। लक्ष्मी दी की शकल देखकर दीपंकर मानो डर गया। लक्ष्मी दी की ऐसी शकल उसने पहले कभी नहीं देखी। क्यों ऐसा हुआ ?

लक्ष्मी दी मानो फट पड़ी। बोली — तू क्यों यहाँ आया है ?

दीपंकर सकपकाया, मानों डर के मारे मानो सिकुड़ गया। बोला — क्यों लक्ष्मी दी ? मैंने क्या किया है ?

— फिर बात कर रहा है ? तू क्यों यहाँ आया है ? क्या करने आया है ?

दीपंकर लक्ष्मी दी की बातें समझ नहीं पाया। यहाँ आकर उसने कौन-सा अपराध किया है ? उसने किसका नुकसान किया है ?

बोला — मैं चाचाजी के पास आया था लक्ष्मी दी !

— चाचाजी के पास आया था तो यहाँ क्यों ? इस कमरे में क्यों ?

— सती को पीछे से देखकर समझा कि आप हैं ....

— फिर झूठ बोल रहा है ! जा, निकल जा। निकल यहाँ से। निकल जहाँ मन हो वहाँ जा, यहाँ मत आ ....

दीपंकर लक्ष्मी दी की बातें सुनकर हक्का-बक्का रह गया। लक्ष्मी दी ! आखिर लक्ष्मी दी से यह सब सुनना पड़ा ? उसकी आँखों से आँसू निकलने को हो आये। उसने लक्ष्मी दी की तरफ देखा। उसने सती की तरफ भी देखा। आज सवेरे वह किसका मुंह देखकर उठा था, क्या पता !

फिर भी दीपंकर ने पूछा — मैं निकल जाऊँगा ?

लक्ष्मी दी बोलीं — हाँ, हाँ, निकल जा, कितनी बार कहूँगी !

— फिर कभी नहीं आऊँगा ?

वह नहीं आयेगा ! उसकी तुझे इतनी जरूरत क्या पड़ गयी ? उससे तेरा इतना मेलजोल क्यों ? तू इसके पेट से कौन-सी बात निकालना चाहती है ? वह तेरी तरह नहीं है, जानने पर भी कुछ नहीं बतायेगा । उसे मार डालने पर भी नहीं बतायेगा । उसे तू नहीं जानती ।

सती की पकड़ कुछ ढीली होते ही दीपंकर उसका हाथ छुड़ाकर कमरे के बाहर जा खड़ा हुआ । दोनों बहनें तब भी लड़ रही हैं । दीपंकर ने एक बार सोचा कि कहाँ जाऊँ ! अब तक वह मंत्रमुग्ध-सा हो गया था । उसे होश नहीं था कि मैं कौन हूँ और यहाँ किसलिए आया हूँ । अचानक उसे चाचाजी की बात याद आयी । लेकिन इस समय यहाँ की इस हालत में क्या वह चाचाजी से अपने बारे में बात कर सकेगा ? उसने सोचा कि उनसे बाद में मिलना ही ठीक रहेगा ।

नीचे आते ही दीपंकर चाचीजी के सामने पड़ गया ।

चाचीजी ने पूछा — क्यों रे, उन्होंने क्या कहा ?

दीपंकर पर छायी दहशत उस समय भी पूरी तरह दूर नहीं हुई थी । चाचीजी की तरफ वह देखता रहा, लेकिन चाचीजी ने क्या पूछा — वह समझ नहीं पाया ।

चाचीजी ने फिर पूछा — क्यों रे, चुप क्यों है ? चाचाजी से कहा है ?

— नहीं ।

— क्यों ? शरम लगी ?

दीपंकर बोला — नहीं ।

— फिर इतनी देर क्या कर रहा था ? लक्ष्मी शायद फिर सती से लड़ने लगी है ? तू वही सुन रहा था ?

दीपंकर बोला — हाँ चाचीजी ....

कहता हुआ दीपंकर दरवाजा खोलकर गली में आ गया । उसे लगा कि आँखों के आगे सारी पृथ्वी घूम रही है । उसने एक बार अच्छी तरह चारों तरफ देख लिया । मानो वह कुछ भी नहीं पहचान पा रहा है । जानी-पहचानी ईश्वर गांगुली लेन भी उसे बड़ी अनजानी-सी लगने लगी । वह धीरे-धीरे अपने मकान में चला गया ।

● ● ●

की गैस-बत्तियाँ जल उठती थीं। ट्राम में और बस के आगे बत्तियाँ जल उठती थीं। तब भी किसी-किसी दिन दीपंकर फुटपाथ के किनारे खड़ा होकर इंतजार करता था! अगर किरण आ जाय! कहीं किरण आकर लौट न जाए। ऐसा न हो कि वह आकर मुझे न देख पाये।

ऐसे ही एक दिन लगा कि किरण आ रहा है। नंगे पाँव, फटी, गंदी कमीज, और सिर के बाल बिखरे-बिखरे। वह जल्दी-जल्दी दीपंकर की तरफ आ रहा है।

दीपंकर की छाती धड़कने लगी। वह यही सोचने लगा कि कैसे बात शुरू की जाय। चाचाजी ने उससे दूर रहने के लिए कह दिया है। लेकिन वह बात किरण से कैसे कही जा सकती है। दीपंकर के जीवन का रास्ता अलग है और किरण का अलग। किरण लाइब्रेरी बनाया करे, देश को आजाद किया करे और भोजू दा का काम करता रहे। लेकिन दीपंकर को तो बड़ा होना होगा। उसके लिए बड़े होने का मतलब है बड़ी नौकरी करना, शादी-व्याह करना और माँ को सुख और शान्ति देना। उसे लायक बनना होगा। दस जने जैसे अपने पाँवों पर खड़े रहकर जीते हैं, वैसे उसे भी जीना होगा। वह भी दफ्तर जायेगा, नौकरी करेगा, तनख्वाह लेगा और तनख्वाह के रुपये लाकर माँ के हाथ में देगा। इससे बढ़कर संसार में और क्या सुख है! चाचाजी ने कोई गलत नहीं कहा है। उन्होंने उसे अच्छी सलाह दी है। चाचाजी, चाचीजी, लक्ष्मी दी, सती, सभी उसका भला चाहते हैं। उसी की भलाई के लिए सब उसे किरण से मिलने-जुलने से मना करते हैं। किरण से दोस्ती करके उसे क्या मिलेगा? क्या किरण उसका आदर्श है?

किरण पास आया तो दीपंकर फाटक के पीछे छिप गया।

काफी अँधेरा हो चला है। मानो किरण उसे देख नहीं पाया। किरण उसे देख नहीं पायेगा तो लौट जायेगा। उसके बाद? उसके बाद दीपंकर मुँह छिपाकर घर चला जायेगा। घर जाकर पढ़ने बैठेगा। वह एक बार घर पहुँच जायेगा तो किरण उसे बुलाने की हिम्मत नहीं करेगा। किरण जानता है कि कोई उसे पसंद नहीं करता, कोई उसे नहीं चाहता। किरण की बात सोचकर दीपंकर की आँखें भर आयीं! उसके मन में आया कि बुलाऊँ—किरण!

लेकिन दीपंकर ने एकाएक अपने को सँभाल लिया।

दीपंकर ने देखा कि किरण उसी अँधेरे में कालेज के फाटक के सामने आकर खड़ा हुआ। उसने एक बार इधर-उधर देखा। उसके बाद वहीं खड़े होकर वह चारों तरफ देखता न जाने क्या सोचता रहा। उसका चेहरा सूखा हुआ है। शायद उसे आज भी खाना नहीं मिला। शायद आज भी उसने डाभ खाकर भूख मिटायी है। उसकी कमीज की ऊपर वाली जेब रसीद की किताब रहने से फूली हुई लगी। इधर-उधर देखकर वह लौट पड़ा। शायद दीपंकर को न पाकर वह वापस जा रहा है। अब वह हाजरा रोड के मोड़ पर जाकर फिर जनेऊ बेचेगा या दि कालीघाट बॉयज लाइब्रेरी

मानो दीपंकर किरण पर जाकर मुँह के वल गिरा।

किरण के कंधे पर हाथ रखकर दीपंकर ने कहा — तू मुझे ढूंढ़ रहा था किरण ?

किरण ने पलटकर देखा। दीपंकर उसे देखकर चौंक पड़ा। उसने उसके कंधे पर से हाथ हटा लिया। कहा — आप वुरा न मानिए, मैंने समझा था ....

उस लड़के ने दीपंकर की तरफ गौर से देखा ! कहा — नहीं ....

कहकर वह लड़का अपने रास्ते चला गया। दीपंकर खुद अपने आचरण से सकपका गया था। इस तरह जोश में आना सचमुच ठीक नहीं हुआ। किरण शायद मेरे वारे में सोच भी नहीं रहा है। वह शायद किसी काम में लगा है। सचमुच उसके पास कितने काम हैं। वह कितना काम करता रहता है। उसे वहुत कुछ सोचना पड़ता है। उसका वाप वीमार हैं, उसके घर की हालत ठीक नहीं हैं, उसका भोजू दा है, लाइब्रेरी है — कितना काम है उसके पास ! उसे वहुत काम करना पड़ता है। दो दिन भेंट नहीं हुई तो क्या हुआ। वह शायद दीपंकर के कष्ट की वात जान भी नहीं रहा है। किरण को विना देखे दीपंकर को कितना कष्ट होता है, शायद किरण सोच भी नहीं पाता। आश्चर्य है !

हाजरा रोड के मोड़ के पास भीड़ ज्यादा है। दुकानों की वत्तियाँ जल चुकी थीं। उसी मोड़ के पास आकर दीपंकर थोड़ी देर खड़ा रहा। भीड़ में खड़े रहने पर भी कैसा मजा आता है। सभी लोग अपरिचित हैं। अपरिचितों की भीड़ में खड़े रहना दीपंकर को वड़ा अच्छा लगता है। वहाँ कोई उसे नहीं देखता और कोई उसकी तरफ ध्यान नहीं देता। छी छी, उस लड़के ने क्या समझा होगा ! लेकिन वह देखने में एकदम किरण जैसा है। शायद किरण की ही तरह वह भी भूखा रहता है। कम से कम उसकी शकल देखने से तो ऐसा ही लगता है।

सड़क पर खड़ा दीपंकर सोचता रहा कि अव कहाँ चला जाय। घर जाना ही ठीक है। घर जाकर पढ़ने वैठना चाहिए। पढ़ने वैठते ही वह सव कुछ भूल जाता है। पढ़ते समय उसे दूसरी वातें याद नहीं आतीं। किरण की वात याद नहीं आती और लक्ष्मी दी की भी नहीं। चाचाजी के घर की वात भी उसे याद नहीं पड़ती।

अचानक दीपंकर को लगा कि उस फुटपाथ से उसके कालेज के प्रोफेसर चले जा रहे हैं। हाँ, अमल वावू हैं हिस्ट्री पढ़ाते हैं। अमल वावू दूर से भी पहचाने जाते हैं। सफेद कुर्ते पर चद्दर। चेहरे पर खिचड़ी दाढ़ी। उधरवाले फुटपाथ से वे जल्दी-जल्दी जा रहे हैं। उनके एक हाथ में कई मोटी किताबें हैं।

सड़क पार कर दीपंकर अमल वावू के सामने पहुँच गया।

— सर !

अमल वावू रुक गये। दीपंकर ने उनके पांव छुए।

— कौन हो ?

लगे। दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या करे। अमल बाबू के पीछे-पीछे वह भी चलने लगा रहा।

फिर अमल बाबू ने कहा — तुमने अपना नाम क्या बताया ?

— दीपंकर सेन।

थोड़ा रुककर दीपंकर बोला — शायद अभी आप बहुत व्यस्त हैं, मैं चलूँ....

अमल बाबू बोले — नहीं रुको, तुम एक काम करना, मेरे साथ लाइब्रेरी में भेंट करना।

— किस समय सर ?

— जब इच्छा हो। कहकर अमल बाबू जाने लगे।

दीपंकर भी जाने लगा।

अचानक अमल बाबू लौटे। बोले — मुझसे जरूर मिल लेना। समझ गये ?

दीपंकर बोला — जी सर....

चलते-चलते दीपंकर एक बार रुका। उसने पलटकर अमल बाबू की तरफ देखा। अमल बाबू बड़े अद्भुत हैं। इतने दिन दीपंकर कालेज में पढ़ रहा है, लेकिन किसी प्रोफेसर से बात करने की उसने हिम्मत नहीं की। लेकिन आज क्या हो गया ! किरण की बात सोचता हुआ उसे सॉक्रेटीज़ याद आ गया। उस दिन लक्ष्मी दी के घर पहली बार चाय पीते समय उसे यह बात याद आयी थी। किरण चाय नहीं पीता। लेकिन दीपंकर ने उस दिन चाय पी। पता नहीं, उस समय उसे क्या हो गया था। लक्ष्मी दी को क्यों सब तकलीफ देते हैं ? जो भला आदमी है उसे तो कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। माँ इतनी अच्छी है, माँ ने कभी किसी को कष्ट नहीं दिया; किसी को नुकसान नहीं पहुँचाया, फिर उसे इतना कष्ट क्यों है ? क्यों उसे बेटे के लिए लोगों की इतनी खुशामद करनी पड़ती है ? और किरण ? किरण भी तो अच्छा है। कितना अच्छा लड़का है किरण ! वही किरण क्यों इतना कष्ट उठा रहा है ! फिर क्या सॉक्रेटीज़ का कहना गलत है !

उस अँधेरी सड़क पर खड़े दीपंकर को फिर लक्ष्मी दी की बात याद आयी। क्यों उस दिन लक्ष्मी दी उतनी बिगड़ गयी थी ? मैंने तो किसी से कुछ नहीं कहा ! मिस्टर दातार को मैं चिट्ठी पहुँचाता था, लेकिन वह बात मैंने सती से नहीं कही। वह बात मैं कभी किसी से नहीं कहूँगा। लक्ष्मी दी का राज मैं प्राण रहते किसी के सामने नहीं खोलूँगा। सती लाख कोशिश करे, लेकिन वह मेरे पेट से लक्ष्मी दी की बात नहीं निकाल सकती।

याद है, उस दिन दोनों बहनों की उसे लेकर हुई खींचतान के बाद जब दीपंकर घर लौटा था, तब उसका मन बड़ा दुःखी था। भात खाकर वह कालेज गया था, क्लास में उसने लेक्चर सुना था, छुट्टी के बाद वह सड़क पर घूमा था, फिर भी उस बात को वह भूल नहीं पाया था। दीया जलने के बाद वह पढ़ने बैठा और उसने

नहीं हुई थी लेकिन आपने सती के सामने डाँटा, इसलिए तकलीफ़ हुई।

लक्ष्मी दी बोली — जरा धीरे बोल, सती है, सुन लेगी ....

फिर लक्ष्मी दी ने दबी आवाज में पूछा — तूने सती से कुछ कहा तो नहीं ?

दीपंकर बोला — नहीं लक्ष्मी दी, मैंने कुछ नहीं कहा ....

—उसने तुझसे कुछ पूछा नहीं ?

दीपंकर बोला — उसके पूछने से पहले ही आप आ गयी थीं।

— तब कोई बात नहीं है ! अच्छा, तू एक काम कर सकेगा ?

दीपंकर बोला — क्या ?

लक्ष्मी दी बोली — शंभु को एक चीज देनी है ....

— कौन-सी चीज ?

लक्ष्मी दी ने आँचल के नीचे से वह चीज निकाली। अँधेरे में पता नहीं चला कि क्या है। दीपंकर ने ठीक से देखने की कोशिश की। कागज में मुड़ी हुई कोई चीज है।

— क्या है लक्ष्मी दी ?

लक्ष्मी दी बोली — खिलौना है, शंभु को देना होगा ....

खिलौना ! दीपंकर अचम्भे में पड़ गया। मिस्टर दातार खिलौना लेकर क्या करेंगे ?

दीपंकर बोला — कैसा खिलौना है ? देखूं ?

कागज खोलते ही एक गुड़िया निकल आयी। बड़ी खूबसूरत गुड़िया। हाथ-पैर-मुँह-नाक-आँख सब है। गोलमटोल मोम की गुड़िया।

दीपंकर ने पूछा — इससे वे क्या करेंगे लक्ष्मी दी ?

लक्ष्मी दी बिगड़ गयी। बोली — इससे वह कुछ भी करे — तेरा क्या ? तू सिर्फ शंभु को दे आयेगा — यह तुझसे नहीं होगा ?

— और चिट्ठी ?

लक्ष्मी दी बोली — चिट्ठी की जरूरत नहीं है। तू सिर्फ जाकर कहना — लक्ष्मी दी ने भेजा है — समझ गया। दे देगा न ?

उसी समय लगा कि पीछे के चबूतरे पर किसी की आहट हुई। लक्ष्मी दी ने चट से गुड़िया को आँचल में छिपा लिया। वह सकपकाकर इधर-उधर देखने लगी, फिर बोली — तू जा दीपू, मैं दे आऊँगी।

दरवाजा बंद कर लक्ष्मी दी चली गयी। विस्मित दीपंकर थोड़ी देर वहीं खड़ा रहा। रात काफी हो चुकी है। चारों तरफ अँधेरा है। अमड़े के पेड़ के नीचे अँधेरा ज्यादा गहरा है। पानी का लोटा हाथ में लिये दीपंकर वहीं विमूढ़-सा कुछ देर खड़ा रहा। उसे लगा कि एक पल में सब गोलमाल हो गया है। मामूली एक गुड़िया ! माने उसी गुड़िया ने एकाएक जिन्दा होकर सब-कुछ गड़बड़ा दिया। वह किसकी गुड़िया ?

दीपंकर ने गौर से उस लड़के की ओर देखा। उसने पहले उसे कभी नहीं देखा था।

फिर दीपंकर ने कहा — किरण मेरा भी दोस्त है, बचपन का दोस्त ....

उस लड़के ने पूछा — क्या आपका नाम दीपंकर सेन है ?

— आपने कैसे जाना ?

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया — इसने मेरा नाम कैसे जान लिया !

लड़के ने कहा — उस समय पहले मैं भी आपको पहचान नहीं पाया था, उसके बाद एकाएक याद आया। किरण आपके बारे में मुझसे अक्सर कहता है।

जरा रुककर उस लड़के ने कहा — किरण से आखिरी बार कब आपकी भेंट हुई थी।

दीपंकर ने याद करने की कोशिश की। बहुत दिन नहीं हुए। लेकिन दीपंकर को लगा कि एक युग बीत गया है। मानो उसने बरसों हो गये किरण से बात नहीं की। किरण के मकान के सामने जाकर भी उसने उस दिन किरण से भेंट नहीं की थी। किरण से भेंट करने से मानो वह डर रहा था।

उस लड़के ने कहा — किरण से मैंने आपके बारे में इतना सुना है कि मैं आपको कभी भूल नहीं सकता।

दीपंकर क्या जवाब देता, जरा मुस्कराया।

— किरण ने कहा था कि एक दिन वह आपको हमारे यहाँ ले आयेगा ....

— कहाँ ?

उस लड़के ने कहा — किरण ने आपसे भोजू दा के बारे में नहीं कहा ?

— हाँ, हाँ, उसने अनेक बार कहा है। मैंने उससे कहा भी था कि एक दिन भोजू दा के पास चलूँगा।

वह लड़का बोला — अभी भोजू दा यहाँ नहीं हैं, नेपाल गया है ....

नेपाल ! बहुत दूर है नेपाल ! दीपंकर ने कल्पना की आँखों से भोजू दा को देखने की कोशिश की। कहाँ नेपाल और कहाँ यह कलकत्ता ! दीपंकर के लिए भोजू दा मानो और ज्यादा रहस्यमय हो गया। दीपंकर जब छोटा था, तब प्राणमथ बाबू जेल जाते थे। उस समय वे भी रहस्यमय लगते थे। लेकिन यह जेल नहीं है — जेल से भी बहुत दूर, नेपाल। मानो जेल की दीवार फाँदकर तब नेपाल जाना पड़ता है।

— कब लौटेंगे ?

उस लड़के ने कहा — इसका कोई ठिकाना नहीं। कल भी लौट सकता है, और दो साल बाद भी ....

दीपंकर निराश हो गया ! वह चाहता तो बहुत पहले किरण के साथ जाकर भोजू दा से मिल सकता था।

उस लड़के ने कहा — भोजू दा के आने पर मैं किरण के जरिये आपके पास

दीपंकर ने सुना, दूनी चाचा कह रहा है — रहने दे तेरी कांग्रेस। कांग्रेस को मैंने खूब देख लिया है। वाप रे वाप।

इस पर छोने दा ने कहा — लेकिन दूनी चाचा, कुछ भी हो कांग्रेस लड़ रही है। कांग्रेस न होती तो कौन लड़ता? तुम या मैं?

दूनी चाचा विगड़ गया। वोला — कांग्रेस का नाम मत ले छोने, नहीं तो भरे वाजार में वात खोल दूँगा। पूछता हूँ, जव चरखे का दौर चला तव तेरे मुहल्ले के लीडर ने चरखे वेचकर कितने हजार का प्रॉफिट किया? वता न, उसने कितना रुपया कमाया है। मैंने उसका नाम जान-बूझकर नहीं लिया।

— तुम तो वस यही देखते हो दूनी चाचा, और ये हजारों लड़के जो जेल में पड़े हैं, यह, नहीं देखते ....

दूनी चाचा वोला — देख, सव मैं देख चुका हूँ। कितने लोग जेल में हैं और कितने लोग दूसरों के माल पर मजा लूट रहे हैं, यह दूनी चाचा ने देख लिया है। अव यह सव मुझको मत सिखा! लड़कों को भड़काकर लीडरों ने पढ़ाई-लिखाई चौपट करा दी। जव लड़के जेल से निकलेंगे तव दर-दर नौकरी के लिए भटका करेंगे। उस समय क्या ये लीडर उनको खिलायेंगे? वोल, क्या जवाव देगा?

वहस खूव जम उठी है।

किसी-किसी दिन चवूतरे की यह मजलिस खूव जमती है। उस दिन गांधी, जे० एम० सेनगुप्त, साइमन कमीशन आदि पर खूव सवाल-जवाव होता है। गली में भीड़ इकट्ठी हो जाती है। भीड़ में से कोई-कोई उस वक-वक में एकाध अपनी वात भी कह देता है। तव विवाद वढ़ जाता है। कुछ लोग अँग्रेजों की तरफ हो जाते हैं और कुछ सुराजियों की तरफ।

एक पक्ष कहता है — इतने दिनों तक जिन अंग्रेजों ने खाने और पहनने को दिया उनसे दुश्मनी करना नमकहरामी है।

दूसरा पक्ष कहता है — किन्होंने खाने और पहनने को दिया है? क्या अंग्रेज खाने और पहनने को दे रहे हैं? छः रुपये मन चावल और रुपये में दो सेर दूध — क्या यही खाने को दे रहे हैं? अव अंग्रेजों की वकालत मत करो!

दूनी चाचा कहता है — तेरी कांग्रेस का राज्य होने पर देखूँगा क्या खाने को मिलता है।

— क्यों नहीं मिलेगा? सव मिलकर अंग्रेजों को भगाओ, तव देखो कि कांग्रेस चावल का दाम एक रुपया मन और दूध रुपये में चार सेर करती है कि नहीं?

दूनी चचा विगड़कर कहता है — अगर नहीं करती तो?

— तव कांग्रेस को भगा देना। यह जो साइमन कमीशन आया है, वताओ इससे हमारा क्या भला होगा?

वहस रंग पकड़ने लगी और तभी किसी ने दीपंकर को देख लिया।

दीपंकर बोला — किरण को देखने चलेगा ?

— किरण को क्या हो गया है?

दीपंकर बोला — सुना कि वह बहुत बीमार है। चल, देख लिया जाय ....

राखाल बोला — अभी नहीं जा सकता भाई, पसीने से तर हो रहा हूँ — घर जाकर नहाऊँगा।

राखाल चला गया। दीपंकर अकेला गली में घुसा। शायद किरण को बहुत तकलीफ हो रही है। माँ के अलावा घर में कोई उसे देखनेवाला नहीं है। कौन दवा लायेगा, कौन जनेऊ बेचेगा और कौन डाक्टर बुलायेगा ? डाक्टर का पैसा भी कौन देगा !

वह जगह एकदम अंधेरी है। दूर, बहुत दूर, गली के मोड़ पर लगी तेल की बत्ती यहाँ से साफ दिखाई भी नहीं पड़ती। गली के किनारे खुली नाली है। उसको पार करने पर किरण की लाइब्रेरी है। लाइब्रेरी इस समय बंद है। लाइब्रेरी की बगल से दीपंकर किरण के मकान के दरवाजे पर पहुँचा। अन्दर से किसी की आवाज नहीं मिल रही है। शायद किरण बुखार में बेहोश पड़ा है। बुखार होने पर कैसी तकलीफ होती है, यह दीपंकर जानता है। उसे भी एक बार बुखार हुआ था। लेकिन किरण अगर मर जाय ? अगर इसी तरह बीमार रहकर मर जाय ?

यह सोचते ही दीपंकर की अन्तरात्मा सिहर उठी। उसने खुले दरवाजे के सामने अंधेरे में खड़े होकर आवाज लगायी — किरण।

आवाज लगाना चाहकर भी दीपंकर के गले से आवाज नहीं निकली। बार-बार कोशिश करने पर भी वह किरण को पुकार न सका। उसे याद आया कि माँ ने उसे किरण के घर जाने से मना किया है! किरण के पिता का थूक आँगन में पड़ा रहता है — उस पर पैर पड़ना ठीक नहीं है। रोगी के थूक पर पाँव पड़ने से रोग होता है। माँ ने कोई गलत तो नहीं कहा। माँ से बिना पूछे किरण के घर जाना ठीक न होगा।

खड़ा होकर दीपंकर सोचने लगा। उसने एक बार सोचा कि जाने में क्या हर्ज है! मैं तो गप्प लड़ाने नहीं जा रहा हूँ, किरण बीमार है, इसलिए देखने जा रहा हूँ। बीमारी के समय, मुसीबत के समय अपने साथी को देखने जाना ही चाहिए। अगर मुसीबत में नहीं पूछा तो कब पूछूँगा !

लेकिन कदम बढ़ाना चाहकर भी दीपंकर रुक गया। माँ से पूछकर ही जाना ठीक है। माँ ने तो जाने को मना किया ही है। माँ को समझाकर कहा जाय तो क्या वह नहीं मानेगी ? क्या वह तब भी मना करेगी ! वह तो बेसमझ नहीं है। दीपंकर फिर लौटा। अब वह माँ से पूछकर आयेगा। कितनी देर लगेगी ? बस जाना और आना। पूछकर ही चला आयेगा। दीपंकर को देखकर किरण बहुत खुश होगा।

विन्ती दी ने बड़े, करुण स्वर में यह बात कही। लेकिन सुनकर सती हँस पड़ी। बोली — लेकिन मेरा सजाना तुम्हें पसंद आयेगा विन्ती दी ?

माँ ने कहा — देख लिया न, वह कैसी सीधी और सरल है !

विन्ती दी ने उस बात पर ध्यान नहीं दिया। कहा — तुम मुझे अपनी तरह सजा देना बहन।

सती हँसकर बोली — मैं क्या कलकत्ते की लड़कियों की तरह सजा सकूँगी ?

विन्ती दी बोली — सजा सकोगी। ऐसे सजा देना कि वे लोग मुझे पसन्द कर लें।

सती फिर हँस पड़ी। उसने विन्ती दी के गाल दबाकर कहा — करेंगे, करेंगे, जरूर पसंद करेंगे। तुमको कौन नहीं पसंद करेगा विन्ती दी ?

लेकिन विन्ती दी हँसी नहीं। बोली — सच कह रही हो ?

सती बोली — सच नहीं तो क्या मैं झूठ बोल रही हूँ ?

फिर भी मानो विन्ती दी को विश्वास नहीं हुआ। बोली — सच कह रही हो न कि मैं तुम्हारी तरह देखने में अच्छी हूँ ?

सती हँसकर बोली — मैं क्या देखने में अच्छी हूँ, तुम मुझसे ज्यादा अच्छी हो ! कहकर सती हँसने लगी।

माँ बोली — देख लिया न, वह बिटिया इसी तरह है। उसको देख लेती हूँ तो मेरी आँखों में आँसू आ जाते हैं ....

उसके बाद माँ न जाने क्या-क्या कहने लगी। अपने दुःख की कहानी और दीपंकर की बात। दीपंकर के लिए ये सब बातें नयी नहीं हैं। हजारों बार यह सब उसने सुना है। मौका देखकर दीपंकर बोला — माँ।

माँ ने मुड़कर पूछा — क्या ? अब तुम क्या कहोगे ?

दीपंकर को अपनी बात कहने में संकोच हुआ। सती ने उसकी तरफ देखा। सती के सामने वह अपनी बात कहने में आगा-पीछा करने लगा।

सती बोली — क्या मेरे सामने कहने में शरम लग रही है ?

माँ बोली — नहीं बिटिया, वह तुम्हारे सामने कुछ कहने में क्यों शरमायेगा ? वह ऐसा ही है। एक न एक बहाना लगा हुआ है। तुम अपने चाचाजी से कहकर इसको कोई नौकरी लगवा दो बिटिया, तो मुझे कुछ आराम मिले।

सती बोली — आप एक दिन मेरे साथ चलिए न मौसी जी, और आप ही चाचाजी से कहिए।

माँ बोली — उस दिन तो वह गया था नौकरी की बात कहने, लेकिन आकर कहा कि मैंने नहीं कहा। अब भी वह किसी से अपनी जरूरत की बात कह नहीं सकता। बताओ बिटिया, ऐसा संकोची लड़का लेकर मैं क्या करूँ ?

सती बोली — क्या यह बड़ा संकोची है ? लेकिन लक्ष्मी दी से तो यह खूब

सती हंसी । बोली — किरण तुम्हारा जिगरी दोस्त है न ?

— हां, लेकिन तुम लाइब्रेरी की मेम्बर बनोगी कि नहीं, बताओ न । सिर्फ आठ आने चंदा । तुम लोग तो बड़े आदमी हो, आठ आने देने में कोई परेशानी नहीं है ....

सती ने इस बात को अनसुनी कर दिया । कहा — तुम किरण को ज्यादा चाहते हो या लक्ष्मी दी को ?

दीपंकर खीझ गया । बोला — ये सब बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं । तुम लाइब्रेरी की मेम्बर बनोगी कि नहीं, वही कहो ....

सती बोली — ये सब बातें क्यों नहीं अच्छी लगतीं ? लक्ष्मी दी का काम कर देना बहुत अच्छा लगता है ?

— नहीं, मैं लक्ष्मी दी का कोई काम नहीं करता !

— नहीं करते ? फिर उस दिन अंधेरे में खड़े होकर लक्ष्मी दी से क्या बात हो रही थी ? क्या मैंने सुना नहीं ?

— कब ? क्या बात हो रही थी ?

सती बोली — याद नहीं है ? उस दिन रात नौ बजे पीछे वाले दरवाजे के पास खड़ी लक्ष्मी दी तुमसे क्या कह रही थी ? किस काम के लिए तुम्हें भेज रही थी ? तुम्हें कहां जाने के लिए कह रही थी ? बताओ न ?

दीपंकर अचम्भे में पड़ गया । बोला — कब ? मुझे तो कहीं नहीं भेजा ? मुझे कहां भेजेगी ?

सती बोली — झूठ न बोलो ! झूठ बोलना पाप है !

— मैं झूठ नहीं बोलता । तुम इस तरह की बात न करो !

—फिर बताओ न, लक्ष्मी दी तुमसे क्या कह रही थी ?

दीपंकर बिगड़ गया । बोला — क्या तुम्हारे पास और कोई काम नहीं है ? क्या तुम और कोई बात नहीं सोच सकती ? लक्ष्मी दी क्या कर रही है, क्या तुम दिन-रात यही सोचा करती हो ? क्या तुम्हारी पढ़ाई-लिखाई नहीं है ? बताओ, तुम लक्ष्मी दी के पीछे क्यों पड़ी रहती हो ?

सती दीपंकर की बातें सुनकर आश्चर्य में पड़ गयी ।

दीपंकर फिर कहने लगा — जानती हो, लक्ष्मी दी का कोई दोष नहीं है । वह तुम्हारी तरह दूसरों के पीछे नहीं पड़ती — उसकी तरह लड़की मुश्किल से मिलती है । तुम झूठ-मूठ उसी को सताती रहती हो ....

— मैं सताती रहती हूं ?

इस बात पर मानो सती को मन ही मन बड़ा कष्ट हुआ ।

— सताती नहीं हो ? क्यों तुम मुझ पर शक करती हो ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ? मैं क्या तुम लोगों की तरह अमीर हूं ? मेरा बाप नहीं है, मेरी मां कितना कष्ट उठाकर मुझे पाल रही है, तुम देखती नहीं ? मैं भीख मांगकर पढ़ रहा

कौन हूँ ?

—अगर मैं रोज जाया करूँ ?

—फिर भी मैं कुछ नहीं कहूँगी।

—ठीक है, फिर यही बात रही—तुम कभी कुछ नहीं कह सकोगी! जब मन होगा लक्ष्मी दी से मिलूँगा-जुलूँगा, लक्ष्मी दी जहाँ कहेंगी वहाँ चला जाऊँगा, उनका सब काम कर दूँगा, लेकिन तुम कुछ नहीं कहोगी!

सती बोली—वाह रे! मैंने लक्ष्मी दी के बारे में कब कहा? लक्ष्मी दी की बात अलग है....

—क्यों? लक्ष्मी दी की बात क्यों अलग है?

—नहीं, लक्ष्मी दी जहाँ जाने को कहेगी वहाँ मत जाना, लक्ष्मी दी अगर किसी को कोई चिट्ठी दे आने को कहे तो मत दे आना।

—क्यों?

सती बोली—नहीं, यहाँ रास्ते में खड़े होकर यह सब नहीं बताया जा सकता। तुमसे तो उस दिन सब कहा है। बर्मा में रहते समय लक्ष्मी दी तुम्हारी तरह एक लड़के के हाथ से एक जने के पास चिट्ठी भिजवाती थी ताकि किसी को पता न चले।

दीपंकर यह सुनकर भौंचक-सा हो गया। अँधेरे मकान के सदर दरवाजे के सामने खड़े होकर बात हो रही थी। दीपंकर को लगा कि इतने दिन की सारी घटनाएँ अब साफ होने लगीं। फिर भी विश्वास करने को मन नहीं करता। उसने पूछा—सच कह रही हो?

सती बोली—अपनी दीदी के बारे में झूठ बोलने से मुझे क्या मिलेगा? फिर अपनी दीदी की बात क्या इस तरह दूसरों से बतायी जाती है?

दीपंकर ने पूछा—उसके बाद क्या हुआ?

सती बोली—मैं उस समय उसी स्कूल में पढ़ती थी और दीदी के साथ एक होस्टल में रहती थी। तुम तो बर्मा नहीं गये, नहीं तो जानते कि वहाँ लड़कियों का स्कूल कैसा है। बर्मा यहाँ की तरह नहीं है, वहाँ की लड़कियाँ बड़ी स्वतन्त्र हैं और जिससे मन हो मिल-जुल सकती हैं!

—लेकिन वह लड़का कौन था जिसके हाथ से लक्ष्मी दी चिट्ठी भिजवाती थी?

—वह भी तुम्हारी तरह एक लड़का था, बगल के मकान में रहता था, बहुत छोटा था, इसलिए कुछ समझता नहीं था और लक्ष्मी दी जो कहती थी वही करता था। लक्ष्मी दी उसे चाकलेट और लाजेन्स देती थी, कभी-कभी और चीजें देती थी और वह लड़का बहुत छोटा था, इसलिए वह भी नहीं समझता था कि दीदी का क्या नुकसान कर रहा है....

नाम है ?

—वह बर्मा में रहनेवाला एक मराठी लड़का था। दीदी उससे प्यार करती थी।

—उसका क्या नाम है ?

सती बोली—उसका नाम है शंभु दातार, बर्मा में कारोबार करता था। उससे दीदी को दूर हटाने के लिए पिताजी ने चाचाजी के साथ दीदी को कलकत्ते भेजा। लेकिन सुना कि वह लड़का भी बर्मा से चला गया है! शायद वह कलकत्ते आया हो—क्या पता! इसी लिए हम इतने परेशान हैं।

दीपंकर बोला—तुम लोग लक्ष्मी दी को मना क्यों नहीं करते ?

सती बोली—मना करने पर कौन सुनता है, इसी लिए तो लक्ष्मी दी के लिए वर ढूंढ़ा जा रहा है। लक्ष्मी दी की शादी हो जाने पर पिताजी भी निश्चिन्त हों और हम लोगों को भी चैन मिले।

—लक्ष्मी दी की शादी हो जायेगी ?

सती बोली—हां, कई लड़के देखे गये हैं।

—लक्ष्मी दी तो खूबसूरत हैं, क्यों नहीं शादी हो रही है ?

—खूबसूरत होने से ही क्या शादी हो जाती है ? तुम्हारी विन्ती दी भी तो सुन्दर है, उसकी क्यों नहीं शादी हो रही है ?

—विन्ती दी की शादी रुपये के लिए नहीं हो रही है। अघोर नाना रुपया नहीं देंगे ....

सती बोली—लेकिन ऐसे-वैसे के साथ लड़की की शादी नहीं हो सकती! फिर बर्मा में रहकर वर ढूंढ़ना भी आसान नहीं है। शायद मेरे पिताजी यहां आयेंगे—कोई अच्छा लड़का मिल जाय तो वे चले आयेंगे।

यह सुनकर दीपंकर न जाने क्यों चुप रहा। लक्ष्मी दी की शादी हो जायेगी! मांग में सिंदूर लगाये घूंघट काढ़े लक्ष्मी दी कैसी लगेंगी, शायद यही वह सोचने लगा।

दीपंकर बोला—अच्छा, मैं जाऊं ? काफी देर हो गयी है।

सती बोली—मैंने जो कहा, याद रहेगा न ?

—रहेगा।

कहकर दीपंकर जाने लगा।

सती फिर बोली—अगर वह कभी चिट्ठी या कोई चीज किसी को भेजे तो मुझसे कह देना। समझ गये ?

इस बात का जवाब न देकर दीपंकर पलटकर खड़ा हो गया। बोला—लक्ष्मी दी की शादी हो जाने पर तुम्हारी भी शादी हो जायेगी ?

अब सती हंसी। बोली—हां, कभी तो होगी ही! लेकिन तुम यह क्यों पूछ रहे हो ?

बोली — क्या हुआ ?

दीपंकर बोला — मैं असली बात कहना भूल गया था। तुम हमारी लाइब्रेरी की मेम्बर नहीं बनोगी ?

शायद सती ऐसी बात सुनने के लिए तैयार नहीं थी। इसलिए जवाब देने में उसे देर लगी।

सती के कुछ कहने से पहले दीपंकर बोला — चंदा तो सिर्फ आठ आने है, क्या आठ आने भी नहीं दे सकती ? दो किताबें पढ़ने को मिलेंगी ....

न जाने सती ने क्या सोचा। कहा — लेकिन वह लाइब्रेरी तुम्हारी है या किरण की ?

दीपंकर बोला — लाइब्रेरी असल में किरण की है। किरण ही उसके लिए ज्यादा मेहनत करता है। लाइब्रेरी उसे बहुत प्यारी है। वही लाइब्रेरी का सेक्रेटरी है ....

सती बोली — फिर मेम्बर नहीं बनूंगी।

— क्यों ?

सती बोली — अगर तुम्हारी अपनी लाइब्रेरी होती तो मैं मेम्बर बनती।

दीपंकर बोला — मैं भी तो हूं। मैं ही लाइब्रेरी का प्रेसीडेंट हूं।

सती बोली — फिर चन्दा दूंगी।

दीपंकर हंसा। बोला — वाह रे ! तुमने अच्छी बात कही ! किरण क्या मुझसे अलग है ? हम दोनों की लाइब्रेरी है। हम दोनों ने मिलकर उसे बनाया है।

सती बोली — मैं यह सब नहीं जानती। मैं किरण को नहीं जानती। तुमको जानती हूं, इसलिए चंदा दूंगी। मैं तुम्हीं को जानती हूं ....

दीपंकर बोला — लेकिन किरण मुझसे भी अच्छा लड़का है। जानती हो, वह बहुत अच्छा लड़का है। उसकी तुलना नहीं होती ....

— होने दो अच्छा ! अगर तुम्हारी लाइब्रेरी है तो चन्दा दूंगी। रुको, मैं पैसे ला रही हूं ....

दीपंकर बोला — अभी दोगी ?

सती बोली — कहो तो अभी दे सकती हूं।

दीपंकर बोला — नहीं, अभी रहने दो। मेरे पास रसीद की किताब नहीं है, कल रसीद की किताब लाकर चन्दा ले लूंगा।

सती बोली — रसीद बाद में देना, अभी चंदा लेते जाओ ....

दीपंकर हंसा। बोला — अगर चंदा लेकर मैं भाग जाऊं ?

सती हंसी। बोली — तुम क्या कर सकते हो, यह मैंने समझ लिया है, भागने की भी क्षमता तुममें नहीं है।

— क्यों ? मैं भाग नहीं सकता ? तुम क्या समझती हो ?

सती बोली — मैं ठीक समझती हूं ! नहीं तो इतनी रात को चंदे के बहाने

पड़ा करूँ। बीमार पड़ने पर कड़वी दवा पीने को मिलती है, बिना खाये रहने की आदत पड़ती है — इससे तकलीफ बर्दाश्त करने का गुर आ जाता है।

— अरे ! बीमार पड़ने पर तकलीफ नहीं होती ? तू क्या कह रहा है ?

किरण हंसा। बोला — हट ! तू नहीं जानता। बीमार नहीं पड़ूँगा तो तकलीफ बर्दाश्त करना कैसे सीखूंगा ? भूखों कैसे रहूँगा ?

किरण की माँ बाहर चली गयी थी। किरण बोला — मैंने डाक्टर साहब से कहा है कि मीठी दवा मत दीजिए, सिर्फ कड़वी दवा दीजिए ....

— क्यों ?

किरण बोला — जब जेल जाऊँगा, तब तो वहाँ खूब तकलीफ मिलेगी। इसलिए अभी से तकलीफ में रहने का आदत डाल रहा हूँ। तू भी ऐसा ही कर ! अभी से तकलीफ सह लेगा तो वहाँ पहुँचने पर जरा भी तकलीफ महसूस न होगी। चाचाजी ने उस दिन बुलाकर तुझसे क्या कहा ? बहुत खुश हुए हैं न ?

दीपंकर कुछ बोल नहीं पाया। उसे चाचाजी की बातें याद आयीं। लेकिन वे बातें किरण से कैसे कही जायें — कैसे कहा जाय कि चाचाजी ने तुझसे दूर रहने को कहा है !

किरण बोला — तेरे चाचाजी इतने अच्छे आदमी हैं, यह मैं सचमुच नहीं जानता था — बहुत बढ़िया आदमी हैं ! उसके बाद तो तू चला गया और मैं नाचता रहा। जानता है, मैं रातभर नाचता रहा, कुछ नहीं खाया, सोया नहीं — बस, नाचता रहा।

उसके बाद जरा रुठकर बोला — पढ़े-लिखे हैं न, इसीलिए लाइब्रेरी की कदर करते हैं। हाँ, तो तेरे चाचाजी ने क्या कहा ?

दीपंकर के मुंह में बात अटक गयी।

किरण बोला — खूब तारीफ की ? बताता क्यों नहीं ....

एक बार किरण की तरफ देखकर दीपंकर दूसरी तरफ देखने लगा।

किरण बोला — मैं जानता था कि तारीफ करेंगे ! मैं आदमी की शकल देखकर पहचान जाता हूँ ! 'पथ के दावेदार' किताब लाकर पहले चाचाजी को पढ़ने दूँगा। मैंने उन्हीं से पहले-पहल उस किताब की बात कही। सुना था न, कैसा उत्साह दिया, कितना उपदेश दिया। दो-चार ऐसे लोग मुहल्ले में हों तो कितना काम किया जा सकता है। क्यों रे, तू जवाब क्यों नहीं दे रहा है ? कुछ बोलता क्यों नहीं ?

थोड़ा रुककर किरण बोला — हाँ, मैं भूल रहा था — उन दोनों लड़कियों को मेम्बर बना लिया ?

दीपंकर बोला — बनाया है। लेकिन तू ज्यादा मत बोल, बीमारी बढ़ जायेगी।

— बना लिया ? दोनों को मेम्बर बना लिया ? कितना दिया ?

— दोनों को नहीं, एक को !

हमें क्यों नहीं खाने को मिलता और क्यों अंग्रेज गुलछर्रे उड़ाया करते हैं ? क्यों हमारे देश के लोग पुलिस के सिपाही बनकर उनके हुक्म से हमारी खोपड़ी को गोली मारकर छलनी बना देते हैं ? क्यों चौरंगी इतनी साफ है और कालीघाट इतना गंदा ? कभी तूने यह सब सोचा है ? क्यों रे, बोलता क्यों नहीं ? बोल, कभी तूने यह सब सोचा है ?

दीपंकर अचानक बोला — लेकिन लक्ष्मी दी शादी के बाद नहीं बदलेगी, तू देख लेना ....

किरण अचम्भे में पड़ गया। दीपंकर की चेहरे की तरफ अच्छी तरह देखकर उसने कहा — क्या तू अभी तक वही सोच रहा है ?

दीपंकर बोला — नहीं, लक्ष्मी दी आम लड़कियों की तरह नहीं है !

— आम लड़कियों की तरह नहीं हैं ?

दीपंकर बोला — तूने तो देखा है, तू ही बता — लक्ष्मी दी क्या साधारण लड़कियों की तरह है ?

किरण बोला — साधारण लड़की नहीं तो वह क्या है ? दो कान हैं और एक नाक — जो सब लड़कियों के पास रहते हैं। बता तेरी लक्ष्मी दी में कौन-सी असाधारण बात है ?

दीपंकर बोला — नहीं रे, कुल मिलाकर देखने में बड़ी अच्छी है न ?

किरण बोला — अरे बाप ! तू तो कविता करने लगा ! अब समझ रहा हूँ कि तू उनका चेहरा देखकर सब भूल चुका है ....

दीपंकर बोला — नहीं रे, तू नहीं जानता, लक्ष्मी दी को बड़ा कष्ट है। समझ ले कि उनका बाप, उसकी बहन, कोई उसे नहीं देख सकती। अब बता, लक्ष्मी दी को कितनी तकलीफ है ?

किरण बिगड़ गया। बोला — देख, मुझे लड़कियों का किस्सा मत सुनाया कर ! लड़कियों के बारे में सोचना पाप है, उन सबसे मिलना-जुलना भी पाप है। भोजू दा कहता है कि इसी उम्र से लड़कियों से ज्यादा मेलजोल करने पर इहलोक और परलोक दोनों बिगड़ते हैं।

दीपंकर बोला — लेकिन मैं तो ज्यादा मेलजोल नहीं करता।

— हाँ, मैंने अच्छी बात बता दी, ज्यादा मेलजोल मत करना — उससे सारा काम चौपट होता है — लड़कियाँ सारा खेल बिगाड़नेवाली होती हैं।

— नहीं, मैं तो सब काम करता रहता हूँ — पढ़ता-लिखता हूँ और सब्जी भी लाता हूँ। फिर उन लोगों के घर में क्यों जाता हूँ, तू नहीं जानता। असली बात है, चाचाजी से कहकर कोई नौकरी जुटाना ....

याद है, उस समय दीपंकर कम से कम अपने मन से यही कहता था। उस घर में जाना उसे अच्छा लगता था, लक्ष्मी दी को और सती को देखना अच्छा लगता

तू ही बता ?

नुकसान ! क्या कहा जाय। उस दिन भी दीपंकर के सामने किरण ने वही सवाल उठाया था। लेकिन लाभ-हानि के हिसाब-किताब की बात उस समय दीपंकर को कहाँ याद आयी ? क्या किरण ने सचमुच उसको नुकसान पहुँचाया है ? नुकसान की बात याद करते ही दीपंकर को फायदे की बात याद पड़ती है। जीवन में नुकसान का हिसाब लगाते समय बारबार उसके मन में आया है कि संसार में नुकसान नाम की कोई चीज नहीं है। न जाने किसने लाभ का बराबर अंक देकर :विचित्र उपाय से उसकी हानि को पूरा कर दिया था। कैसे पूरा किया, यह सोचने पर भी उसे आश्चर्य-चकित होना पड़ता है।

दीपंकर ने कहा था — तू बुरा मत मानना भाई ....

किरण ने कहा था — हट। यह सब सोचने पर मेरा काम नहीं चलता। औरतों की सी कमजोरी मेरे अन्दर नहीं है। दोस्ती रखना है रखेगा; न रखना है तो सही, मेरा क्या बिगड़ेगा।

उस दिन किरण की बात से न जाने क्यों दीपंकर का मन दुखा था। बोला था — मैं तेरे साथ दोस्ती नहीं रखूँगा तो तुझे जरा भी तकलीफ नहीं होगी ? जरा भी दुःख नहीं होगा ?

बिस्तर पर लेटा-लेटा किरण हँसा था। बोला था — तकलीफ ? तकलीफ क्यों होगी ? मुझे तकलीफ-ओकलीफ नहीं होती भाई। तू मुझसे नहीं मिलेगा-जुलेगा तो बहुत लोग हैं मिलने-जुलने के लिए — इस दुनिया में करोड़ों लोग हैं। क्या तूने इस दुनिया को इतना छोटा समझ लिया है ? तू दोस्ती नहीं रखेगा तो क्यों दुःख होगा ? तू मेलजोल की बात कर रहा है, अगर तू मर भी जाता है, तो मुझे कष्ट नहीं होगा।

— नहीं होगा ? दीपंकर ने आश्चर्य से किरण की तरफ देखा।

— नहीं। सिर्फ तू ही क्यों, बाप के मर जाने पर भी कष्ट नहीं होगा, माँ के मरने पर भी नहीं — किसी के लिए मुझे कोई कष्ट नहीं होगा ! पहले कष्ट होता था ! सी० आर० दास जिस दिन मरा था, उस दिन मुझे बड़ा कष्ट हुआ था, रोना आ गया था। तब मैं छोटा था, तब बाप और माँ का कष्ट देखकर मुझे रोना आता था, खाने को नहीं मिलता था तो रोना आता था — लेकिन अब समझ गया हूँ कि रोना औरतों का काम है ....

— क्या कहता है तू ?

— हाँ रे, रोने का मतलब है हार जाना ! इस संसार में जो रोता है, वह हारता है।

काफी देर तक दीपंकर के मुख से एक शब्द नहीं निकला था। किरण की बात से लगा था कि वह बड़ा निष्ठुर है। लगा था कि उसमें हृदय नहीं है — वह करुणाहीन और निर्मम है।

नहीं सकता सुनकर उसे इतनी ख़ुशी होगी, यह दीपंकर ने सोचा नहीं था। व
बड़े सोच में पड़ गया था कि कैसे यह बात छेड़ी जाय, कैसे शुरू की जाय। ले
सब सुनकर किरण इस तरह ख़ुशी से उछल पड़ेगा, यह दीपंकर ने नहीं सोचा था।

दीपंकर बोला — किरण, किरण, यह तुझे क्या हो गया है ?

किरण बोला — क्या कहता है तू — ख़ुशी नहीं होगी ?

अचानक आवाज लगायी — माँ .... माँ ....

किरण का रंग-ढंग देखकर दीपंकर को बड़ा आश्चर्य लगा। किरण की म
तब भी बाहर बरामदे में बैठी अँधेरे में जनेऊ बना रही थी। आवाज सुनकर कमरे
आयी। बोली — क्या ? फिर क्या हुआ ?

किरण बोला — माँ, दीपू एक बढ़िया ख़बर लाया है — सुनो ....

माँ कुछ समझ नहीं पायी। दीपंकर भी किरण की बात समझ नहीं पाया।

माँ बोली — कैसी ख़बर ?

किरण की माँ ने दीपंकर के मुँह की तरफ़ देखा। क्या लड़के की नौकरी की
बात है ? क्या कहीं से रुपये मिलने की बात है ? दुनिया में रुपये की ख़बर से बढ़कर
और क्या अच्छी ख़बर हो सकती है ? दुनिया में रुपया ही तो सब है। रुपया रहने से
सब कुछ रहता है। रुपये के बिना संसार सूना है ?

—क्या ख़बर है बेटा दीपू ? किरण की नौकरी की ख़बर है ?

किरण बोला — सुनो माँ, दीपू क्या कह रहा है। सब मुझसे नफ़रत करते हैं,
कोई मुझे देख नहीं सकता। चलो माँ, इतने दिन बाद तबीयत कुछ ठीक हुई, अब मुझे
किसी बात की चिंता नहीं है।

माँ न जाने कैसी निराश-सी हो गयी। दीपंकर की तरफ़ देखकर बोली —
सुन ली इसकी बात ?

क्या जवाब दे, दीपंकर समझ नहीं पाया। माँ कहने लगी — देखो तो, तुम
सब कैसे हो ! तुम्हारी माँ का भाग्य अच्छा है, तुम्हारी माँ ने बड़ा पुण्य किया था कि
उसे तुम जैसा बेटा मिला है। तुम पास हो गये, पढ़-लिख रहे हो और अब नौकरी भी
मिल जायेगी। लेकिन मेरा भाग्य देखो ....

कहकर किरण की माँ बाहर चली गयी। शायद उसकी आँखों में आँसू आ
गये थे।

किरण बोला — माँ पुराने जमाने की है, पढ़ी-लिखी तो नहीं है, बस जनेऊ
बना सकती है। इसलिए माँ सुनकर रोने लगी है।

दीपंकर बोला — लेकिन नौकरी तो तुझे करनी पड़ेगी। नौकरी नहीं करेगा
तो घर का ख़र्च कैसे चलायेगा ?

किरण बोला — अब ठीक चलाऊँगा। देख लेना, अब कोई बात नहीं है। जब
मुझे कोई देख नहीं सकता, जब मुझसे सब नफ़रत करते हैं, तब घर का ख़र्च चलाने

कहकर दीपंकर चलने लगा। किरण ने उसे रोका। वह अब भी हँस रहा है।

दीपंकर बोला — तू अब भी हँस रहा है — मुझे तो बड़ा गुस्सा आ रहा है ....

किरण बोला — इससे अच्छा होगा, तू एक काम कर। नोट उसी को लौटा दे। मिस्टर दातार ने हमें एक पता दिया था।

दीपंकर बोला — नहीं। अभी लक्ष्मी दी के पास जाऊँगा। लक्ष्मी दी को दो-चार बात सुनाऊँगा, कहूँगा — तुम लोगों ने समझ लिया है कि हम गरीब हैं, इसलिए हमको ठगोगे ? हम गरीब हैं तो क्या इन्सान नहीं हैं ?

उसके बाद थोड़ा सोचकर कहा — अच्छा ला, नोट दे — नोट लक्ष्मी दी को लौटा दूँगा ....

हँसते हुए किरण ने तकिये के नीचे से नोट निकालकर दीपंकर को दे दिया। दीपंकर नोट लेकर बाहर आया। उस समय बाहर अँधेरा खूब था। नेपाल भट्टाचार्य लेन यहाँ से सँकरी होकर बस्ती के भीतर खो गयी है। अँधेरा दीपंकर को बर्दाश्त है। बचपन से वह इस मकान में आ रहा है, इसलिए यहाँ का रास्ता वह अच्छी तरह जानता है। फिर भी उसे धक्का-सा लगा।

अचानक किसी ने पीछे से पुकारा — ओ लड़के ....

दीपंकर मुड़ा। कोई साफ नहीं दिखाई पड़ा। फिर भी लगा, कोई खड़ा है। उसकी धुंधली आकृति दिखाई पड़ी।

दीपंकर बोला — कौन ?

धुंधली सफेद आकृति धीरे-धीरे पास आयी। आवाज उसकी काफी भारी है। कौन है अँधेरे में पहचाना नहीं जाता। दीपंकर भी आगे बढ़ा। अब वह आकृति कुछ साफ दिखाई पड़ी। लंबा-चौड़ा डील-डौल। लगा, वह आदमी काफी गोरा है — बहुत ज्यादा गोरा। वह धोती, कुरता और चमचमाते पम्पशू पहने हुए है। दीपंकर ठीक उसके सामने खड़े होकर गौर से देखने लगा। फिर भी वह पहचान नहीं पाया ! कौन है यह ? क्या इसने मुझी को बुलाया ? या किसी और को ?

दीपंकर ने पूछा — आप मुझे बुला रहे हैं ?

— तुम कहाँ गये थे ?

भारी पाटदार आवाज। बोला तो स्वर गूंजने लगा। उस आवाज से दीपंकर की आत्मा मानो चौंक उठी।

दीपंकर बोला — क्यों ? आप कौन हैं ?

उस आदमी ने पूछा — इतनी रात को तुम कहाँ गये थे ?

दीपंकर बोला — किरण, अपने दोस्त किरण के घर। किरण बहुत बीमार है न, इसलिए उसे देखने गया था ....

— तुम रोज जाते हो ?

हैं। लगा अभी तक उस मकान में कोई सोया नहीं। इतनी जल्दी वे कभी सोते भी नहीं। चाचाजी तिमंजिले के कमरे में होंगे। अभी एक बार उस मकान में जाया जा सकता है — दीपंकर ने सोचा। जाकर बस रुपये वाली बात कही जाय और नोट वापस कर दिया जाय। ऐसे रुपये की जरूरत नहीं है! उस नोट से मानो दीपंकर को घृणा होने लगी। लेकिन वहाँ अगर सती हो! सती के सामने लक्ष्मी दी से वह सब नहीं कह सकता। इस समय तो कमरे में लक्ष्मी दी और सती दोनों ही होंगी। वे दोनों एक ही कमरे में रहती, पढ़ती और सोती हैं। दीपंकर ने सोचा कि इस वक्त अगर जाऊँगा तो फिर उस दिन की तरह झमेला शुरू होगा। फिर मुझको लेकर दोनों बहनों में झगड़ा शुरू हो जायेगा। फिर लक्ष्मी दी मुझे डाँटने लगेगी, जो मन में आयेगा बकेगी और सती के सामने मुझे बेइज्जत होना पड़ेगा। फिर यह सब कहने का मौका कहाँ मिलेगा? तब? तब क्या होगा?

आखिर संयोग से लक्ष्मी दी से भेंट हो गयी।

खाना खाकर दीपंकर अमड़े के पेड़ के नीचे हाथ-मुँह धोने गया। तभी अचानक लक्ष्मी दी की आवाज सुनाई पड़ी।

— अरे सुन!

दीपंकर मानो अभी तक इसी पुकार की आशा कर रहा था। झटपट पास जाकर उसने कहा — लक्ष्मी दी, मैं आपकी बात सोच रहा था। सोच रहा था, आपके पास जाऊँ या न जाऊँ। बड़ी जरूरत है।

— मैं लक्ष्मी दी नहीं, मैं सती हूँ!

मानो आसमान से बिना बादल बिजली गिरी! दीपंकर के हाथ से पानी का लोटा आँगन की ईंट पर गिरा और झन-झन आवाज हुई।

सती की शकल तब तक दीपंकर की आँखों के सामने साफ हो गयी। सती का मुख बड़ा गंभीर है। उस तरफ देखकर दीपंकर को बड़ा डर लगने लगा। उसने कहा — मैं सोचा था ....

उस बात पर ध्यान दिये बिना सती बोली — लक्ष्मी दी कहाँ गयी है तुम जानते हो?

— लक्ष्मी दी? लक्ष्मी दी कहाँ गयी है? घर में नहीं है?

दीपंकर का चौंकना मानो तब भी खत्म नहीं हुआ।

सती बोली — नहीं, सवेरे कालेज गयी है और अब रात के दस बजे हैं, लेकिन अभी तक नहीं लौटी ....

दीपंकर चुप रहा। उसी सती ने फिर पूछा — कहाँ जा सकती है, तुम कुछ जानते हो?

अब दीपंकर के मुँह से आवाज निकली। वह बोला — सच कहता हूँ, मैं कुछ नहीं जानता ....

कालेज जाते समय एक वार नृपेन वावू के घर जाने की वात थी। माँ ने ही कह दिया था। वीच-वीच में याद दिलाना पड़ता है, नहीं तो कोई घर आकर उपकार नहीं करता। दुनिया ऐसी अच्छी जगह नहीं है — यहाँ के लोग भी इतने अच्छे नहीं हैं। वारवार कहना होगा, वारवार खुशामद करनी पड़ेगी, वारवार मिलना होगा, तव जाकर कहीं काम वनेगा !

नृपेन वावू पहचान गये, यही वहुत है ! वोले — अव आये ? अरे, इस समय तो मुझे वात करने की फुरसत नहीं है।

दीपंकर ने कहा — माँ ने कहा है कि एक वार आपसे मिल लूँ। माँ ने मुझे भेजा है।

— ठीक है तुम्हारे आने की जरूरत नहीं है, तुम एक वार माँ को ही भेज देना ....

दीपंकर चला आ रहा था। नृपेन वावू ने वुलाया। वोले — अरे छोकरे, सुनते जाओ ....

यह 'छोकरा' कहकर पुकारना दीपंकर को वड़ा वुरा लगता है। फिर भी वह पास आया।

नृपेन वावू वोले — माँ से कह देना, अभी तीन-चार पोस्ट खाली हुए हैं, दो-चार दिन में भरती होना शुरू हो जायेगा ....

दीपंकर वोला — जी, कह दूँगा।

नृपेन वावू ने फिर भी नहीं छोड़ा। कहा — माँ से कहना कि जरा जल्दी इंतजाम करे। समझ गये न, जमाना वड़ा खरा खराव है। फिर पैसा फेंकने वाले आदमी भी कम नहीं हैं।

दीपंकर को ऐसी वातें अच्छी नहीं लगतीं सिर्फ पचीस रुपये। नृपेन वावू के लिए पचीस रुपये कोई वड़ी रकम नहीं है ! लेकिन माँ कहाँ से इतने रुपये का इंतजाम करेगी ? दीपंकर ने सोचा — कहीं और नौकरी करूँगा, लेकिन यहाँ नहीं। यह तो भूल देना होगा !

सड़क पर ट्राम जा रही है। वसें भी चल रही हैं। नयी-नयी वसें चलने लगी हैं। किसी का नाम 'उर्वशी' है तो किसी का 'मेनका' और किसी का 'शकुंतला' — सव लड़कियों के नाम ! वसों पर लड़कियों के नाम लिख देने से क्या ज्यादा भीड़ होती है ? ट्राम की वगल से सर्र-सर्र वसें निकल गयीं। दीपंकर उसी तरह मुंह वाये देखता रहा। इस तरफ आवादी काफी वढ़ गयी है। पहले शाम को इधर की सड़कें कितनी खाली रहती थीं। उसके वाद इधर ट्राम लाइन वनी। केवड़ातल्ले की तरफ सड़क काफी चौड़ी की गयी। वड़े-वड़े तालाव भरे गये। वही सड़क टीकेपाड़ा के मोड़ से

वदबू नहीं है, गंदगी नहीं और न खुली नालियां हैं ?

उस रात सती से वह खबर सुनने के बाद दीपंकर न जाने अचानक कहीं खो गया था ।

मां ने पूछा — क्यों रे, अभी तक नहीं सोया ?

दीपंकर बोला — नींद नहीं आ रही है मां !

मां के पास सोने की उसे आदत थी । बचपन से वह मां के पास सो रहा है ।

मां बोली — दिन भर धूप में मारा-मारा फिरता रहेगा तो नींद कैसे आयेगी ?

दीपंकर बोला — नहीं मां, घूमने के लिए नहीं ....

— फिर किसलिए नींद नहीं आ रही है ? कालेज से सीधे घर क्यों नहीं आता ? कालेज से निकलकर कहां जाता है ? शायद किरण के साथ बेमतलब घूमा करता है ?

दीपंकर बोला — नहीं मां, वह तो बीमार है । फिर तुमसे बिना पूछे मैं उसके घर जाता भी नहीं । आज तुमसे पूछ कर ही उसके घर गया ....

मां चुप हो गयी । मां खूब समझदार थी । वह सब समझती थी । ऐसी मां मिली थी, तभी तो दीपंकर जिंदा है, बड़ा हो रहा है और पढ़-लिख रहा है । दीपंकर बोला — जानती हो मां, आज क्या हुआ है ?

— क्या हुआ है रे ?

वह बात किसी से कहे बिना मानो दीपंकर से रहा नहीं जा रहा था । लक्ष्मी दी इस तरह चली गयी — इस तरह सबको चिंता में छोड़ गयी कि क्या कहा जाय ! दीपंकर किसी तरह इस बात को भूल नहीं पा रहा था । लेकिन कोई और बात भी तो हो सकती है, कोई दुर्घटना — सड़क क्या खतरे से खाली है ! नयी-नयी बसें चलने लगी हैं — 'उर्वशी', 'मेनका', 'रंभा' — तरह-तरह के नाम — घोड़ागाड़ियां भी बहुत बढ़ गयी हैं । कितने लोग सड़क पर चलते समय गाड़ी के नीचे आ जाते हैं । आजकल बड़ा सावधान होकर सड़क से चलना पड़ता है । हाजरा रोड के मोड़ पर पहले उतनी भीड़ नहीं होती थी । अब वहां बसें रुकती हैं, झुंड-के-झुंड लोग उतरते हैं, फिर वहां से बसें कालीघाट ट्राम डिपो के सामने आकर रुकती हैं । वहीं सब बसें आकर खड़ी होती हैं और आगे नहीं जातीं । वहीं सब लोग उतर जाते हैं । इधर-उधर या बालीगंज की तरफ जाने के लिए वहीं बस से उतरकर पैदल चलना पड़ता है । कई-कई बसें एक साथ वहां खड़ी रहती हैं । कहीं किसी बस की चपेट में तो नहीं आयी लक्ष्मी दी और बेहोश हो गयी ! अगर ऐसा हुआ हो तो लोगों ने उसे अस्पताल पहुंचाया होगा । शायद वह वहीं अभी तक बेहोश पड़ी हो । रात काफी हो गयी है । सब सो गये हैं । ईश्वर गांगुली लेन खामोश हो गयी है । गली का मरियल कुत्ता भी अब भूंक नहीं रहा है । दीपंकर ने सोचा, शायद लक्ष्मी दी अकेली अस्पताल में पड़ी-पड़ी दर्द से छटपटा रही है ।

दीपंकर को लगा कि अब रातभर नींद नहीं आयेगी ।

दीपंकर पीछे हट आया। बोला — पैसा नहीं है ....

— बस, पैसा नहीं है ! माँगा कि बस पैसा नहीं है !

बड़बड़ाता हुआ फोंटा चला जा रहा था, न जाने क्या सोचकर लौटा।

बोला — बीड़ी दे।

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया। बोला — मेरे पास बीड़ी नहीं है।

अब फोंटा खुद आश्चर्य में पड़ गया। बोला — एक बीड़ी भी नहीं देगा ?

दीपंकर को लगा कि फोंटा को बड़ा आश्चर्य हुआ है। मानो वह विश्वास नहीं कर पा रहा है।

दीपंकर बोला — सचमुच मेरे पास बीड़ी नहीं है।

— तू कैसा है रे ? हमारा माल खा रहा है, पी रहा है, मौज कर रहा है और एक बीड़ी देकर भी भला नहीं कर सकता ?

मानो उसका विस्मय दूर नहीं हुआ। कहने लगा — पैसा नहीं, धेला नहीं, एक पैसे में आठ बीड़ी मिलती हैं। लोग ऐसे ही दूसरों को देते हैं — तूने गजब कर दिया यार !

बड़बड़ाता हुआ फोंटा जाने लगा।

जाते समय वह बोला — ठीक है। मैं भी तुझे मजा चखाऊँगा ....

दीपंकर मानो डर गया। वह जल्दी से कमरे में घुस गया। वह दरवाजा बंद करने लगा तो खट से आवाज हुई और माँ चिल्लायी — कौन ? कौन है ?

— मैं हूँ माँ, मैं हूँ ....

जरा-सी आवाज होते ही माँ की नींद टूट गयी। माँ उठी। बोली — क्या कर रहा था ?

दीपंकर बोला — बाहर गया था माँ ....

— बाहर गया तो मुझे क्यों नहीं बुला लिया ? मैंने कहा है न कि जब भी बाहर जायेगा, मुझसे पूछ लेगा।

दीपंकर बोला — मैं और कहीं नहीं, आँगन में गया था ....

माँ बोली — लेकिन इतनी रात को आँगन में क्यों गया ?

दीपंकर बोला — नींद नहीं आ रही है।

— नींद नहीं आ रही है तो क्या आँगन में जाने से नींद आयेगी ?

माँ ने बत्ती जलायी और बत्ती जलाकर संदूक का ताला देख लिया। तखत के नीचे और कमरे में चारों तरफ देखकर माँ फिर लेटी। बोली — नहीं जानता कि इस कमरे में दूसरे का रुपया धरा है ? तू दरवाजा पूरा खोलकर क्यों बाहर निकला ? नृपेन बाबू के घर गया था ? वहाँ तू भला क्यों जायेगा !

— गया था।

— क्या बोले ?

क्या कहा ?

—लेकिन हर समय क्या ऐसा सम्भव है ? तुम्हारा अपना काम-काज भी तो है, पढ़ाई है, शरीर है और आराम है ....

—नहीं चाचाजी, फिर भी मैं रातदिन उस पर निगाह रखती थी ! मैं पहले से जानती थी न ! वहाँ भी स्कूल में पढ़ते समय वह ऐसा करती थी । वहाँ भी एक एक लड़का था, दीदी उसी के हाथ चोरी-छिपे चिट्ठी भेजा करती थी । आखिर मैंने ही एक दिन पकड़ा ....

अब चाचाजी की आवाज सुनाई पड़ी ।

वे कह रहे थे—लेकिन वह लड़का कहाँ गया ? वह जो एक मराठा लड़का वहाँ था—क्या नाम था उसका ?

—वह तो बर्मा में है, यहाँ कैसे आयेगा चाचाजी ?

चाचीजी बोलीं—उसका तो वहाँ कारोबार है ? सुना है, बड़ा पैसेवाला है ! लकड़ी का कारोबार करता है ।

सती बोली—पैसे वाला होने से क्या होगा चाचीजी ! अपनी जाति का नहीं है । फिर पिताजी यह सब पसन्द नहीं करते, यह तो आप जानती हैं । मैं भी यह सब पसंद नहीं करती । हम हिन्दू हैं । हिन्दू स्त्रियों का पति जन्म के पहले से निश्चित रहता है । हिन्दू पति-पत्नी का सम्पर्क जन्मांतर का है । है न चाचीजी ?

चाचीजी बोलीं—तुम ठीक कह रही हो, लेकिन अब क्या किया जाय वही बताओ ?

चाचाजी शायद अब तक कुछ सोच रहे थे । बोले—यहाँ लक्ष्मी और कहीं जाती थी ? कालेज या घर के अलावा क्या उसने कभी और कहीं जाना चाहा है ?

सती का स्वर सुनाई पड़ा । वह बोली—यहाँ तो वह अकेली कहीं नहीं गयी । यहाँ आने के बाद मैं हर जगह उसके साथ जाती रही । फिर जायेगी भी क्या ? यहाँ जान-पहचानवाले हैं भी कितने ?

चाचीजी बोलीं—उस दिन जो तुम दोनों कहीं गयीं थीं, अभी कुछ दिन पहले शाम को ?

—वह तो हम जयन्ती के घर गयी थीं । जयन्ती पालित । लक्ष्मी दी के क्लास में पढ़ती है । हरीश मुखर्जी रोड पर बैरिस्टर पालित हैं न, उन्हीं के घर चाय की दावत थी । वह भी बस एक दिन गयी थीं, उसके बाद हम कहीं नहीं गयीं ।

दीपंकर कान लगाकर सब सुनता रहा । थोड़ी देर सुनने के बाद उसे लगा कि यह गलत काम हो रहा है । उसे यह सब सुनना नहीं चाहिए । दूसरे के घर की बात उसे नहीं सुननी चाहिए । वह तो पराया है । लक्ष्मी दी चाहे उससे कितना ही प्यार करे, सती से उसकी चाहे कितनी जान-पहचान रहे, चाचाजी भले ही उसका लाख भला चाहें, फिर भी वह पराया है—उसको ये सब बातें नहीं सुननी चाहिए ।

अचानक दीपंकर को लगा कि ट्राम में मिस्टर दातार बैठा है। हूबहू की तरह देखने में। वैसा ही कोट-पैंट और टाई पहने। उसी तरह सिगरेट पी है। लेकिन दीपंकर को जरा शक हुआ। मानो पहले जैसी शकल नहीं है। मानो दिन से उसने डाढ़ी नहीं बनायी।

— मिस्टर दातार ! मिस्टर दातार !

मिस्टर दातार ने सुन लिया। पलटकर देखते ही वे दीपंकर को पहचान गये दीपंकर को पहचानते ही वे झटपट ट्राम से उतरने लगे। लेकिन रुकते-रुकते भी ट्राम कुछ आगे निकल गयी। मिस्टर दातार लौटने लगे और दीपंकर भी आगे बढ़ा।

— आप यहाँ मिस्टर दातार ?

— तुम दीपू बाबू हो न ?

मिस्टर दातार के कोट-पैन्ट पहले जैसे नहीं थे — पहले से गन्दे लगे। मिस्टर दातार मानो पहले ज्यादा अच्छा लगते थे — ज्यादा गोरे और खूबसूरत।

दीपंकर बोला — मैंने आपको पुकारा, आपने सुना नहीं ?

— हाँ, मैंने सुना। मैं यहीं उतर रहा था। यहाँ एक काम है। तुम लोगों की लाइब्रेरी कैसी चल रही है ?

दीपंकर बोला — आपने चन्दा दिया था, याद है न ? वहीं खिदिरपुर में ? आपने हमें खिलाया ! बाद में पाँच रुपये दिये ....

दातार बाबू बोले — खूब याद है। लेकिन तुम चन्दा लेने फिर नहीं आये ? मैंने तो पता दे दिया था। तुम्हारा वह दोस्त .... क्या नाम है उसका ?

— किरण।

— हाँ, किरण कैसा है ?

दीपंकर बोला — उसको तेज बुखार आया है। वह बड़ा अच्छा है, लेकिन बहुत गरीब ....

मिस्टर दातार बोले — इससे क्या हुआ ? गरीब होना क्या कोई दोष है ?

दीपंकर बोला — दोष नहीं है ! हम गरीब हैं, इसीलिए सब हमसे घृणा करते हैं। नौकरी के लिए जिसके पास जाते हैं, सीधे मुँह बात नहीं करता .... दो-चार अच्छी बातें भी नहीं कहता !

मिस्टर दातार चल रहे थे, रुक गये। बोले — ऐसा आघात मिलना, अच्छा है दीपू, बिना आघात सहे क्या कोई बड़ा हो सकता है ?

— लेकिन कभी-कभी निराश होना पड़ता है ....

मिस्टर दातार बोले — आघात कैसा भी मिले, अपने आगे कभी छोटा न बनना दीपू ....

दीपंकर समझ नहीं पाया। बोला — अपने आगे छोटा न बनने का मतलब ?

मिस्टर दातार बोले — रुपये न होने की गरीबी एक दिन मिट सकती है,

गया था, कल रात मैं एकदम सो नहीं सका ....

—तुमको किसने खबर दी ?

दीपंकर बोला — सती । लक्ष्मी दी की छोटी बहन .... बड़ी अच्छी लड़की है, बड़ी अच्छी .... जानते हैं मिस्टर दातार ! लक्ष्मी दी के पिताजी तो बर्मा में रहते हैं, बहुत बूढ़े हैं, उनकी तबीयत भी ठीक नहीं रहती और लक्ष्मी दी ने ऐसा काम किया । अब अगर उनको यह मालूम होगा तो उनका हार्ट फेल हो जायेगा ।

मिस्टर दातार यह सुनकर न जाने क्या सोचने लगे ।

दीपंकर बोला — सती बाप को बहुत चाहती है, लेकिन जानते हैं, लक्ष्मी दी बाप का कहना एकदम नहीं मानतीं ....

मिस्टर दातार बोले — अभी तुम घर जाओगे ?

— घर जाने को मन नहीं कर रहा है मिस्टर दातार । लक्ष्मी दी नहीं है, इसलिए मकान बड़ा सूना-सूना लगता है .... कुछ भी अच्छा नहीं लगता, घर में रहने को मन नहीं करता । पहले कालेज से सीधे घर जाकर लक्ष्मी दी के पास जाता था । जानते हैं मिस्टर दातार, लक्ष्मी दी ने मुझे कितना डाँटा है, कितना पीटा है, बाल पकड़कर खींचा है, फिर भी वे बहुत अच्छी लगती थीं । मैं उनसे बहुत प्यार करता था ।

— और उसकी छोटी बहन सती ?

दीपंकर बोला — पहले सती मुझे एकदम अच्छी नहीं लगती थी मिस्टर दातार, लेकिन दोनों बहनें अच्छी हैं । हम उनके मुकाबले कितने गरीब हैं, समझ लीजिए कि मेरी परवरिश दूसरे के घर हो रही है, लेकिन सती हमारे घर आती है, मेरी माँ को मौसी कहती है, लेकिन वह हम लोगों से दूर भी रह सकती थी । बताइए, उन लोगों से हमारा क्या मुकाबला है ?

याद है, उस दिन मिस्टर दातार से बहुत देर तक बातें होती रहीं । मानो दीपंकर को पहली बार एक ऐसा आदमी मिला था जिससे मन की बात कही जा सकती हो, जो हर बात सुनता हो । मिस्टर दातार के साथ चलते-चलते दीपंकर को ऐसा लगा था कि अभी तक इतनी सहानुभूति से किसी ने उसकी बात नहीं सुनी ।

दीपंकर बोला — जानते हैं, कभी-कभी बड़ा डर लगता है । डर लगता है कि कहीं वे मकान छोड़कर चले न जायें ।

— क्यों चले जायेंगे ?

दीपंकर बोला — शायद नहीं जायेंगे, लेकिन जा सकते हैं । लक्ष्मी दी के लिए ही उन लोगों ने वैसे मुहल्ले में मकान लिया था !

— क्यों ?

दीपंकर बोला — क्या आप नहीं जानते ? उन लोगों ने वैसी जगह इसलिए मकान लिया था कि लक्ष्मी दी किसी से मिल-जुल नहीं सकेगी ।

थी। दीपंकर देखकर आश्चर्य में पव कुछ जानता है .... तुम उसे खूब जानती हो ....
भक्ति देखकर कभी-कभी उसे हँनहीं, वह कुछ नहीं जानता, कुछ भी नहीं ....

सती कहती थी — ? तुम कैसी लड़की हो यह भी वह जानता है इतना वह

माँ दीपंकर को ःहाँ किसको चिट्ठी लिखती थी, किससे चोरी-छिपे मिलती थी

दीपंकर कहतगना चाहती थी ....

क्या अच्छी है ? !

माँ कत्मक लक्ष्मी दी फट पड़ी। लगा कि अभी झपटेगी। बोली — जितना बड़ा घर-गृहस्थी उतनी बड़ी बात ! तू मुझसे जवान चलाती है ? तेरी इतनी हिम्मत ?
विटिया, सती भी कुछ कम नहीं थी, बोली — सच बात कहूँगी तो डर किसका है ?
बात का डर है ? तुम बुरा कर सकती हो और मैं कहूँगी तो बुरा हो जायेगा ? तुम पनहीं जानती कि तुम्हारे कारण पिताजी को कितना कष्ट है ? तुम नहीं जानती कि तुमने पिताजी का दिल कितना दुखाया है ? तुम नहीं जानती कि अगर मैं न होती तो पिताजी का क्या हाल होता ?

अव दीपंकर को लगा कि यहाँ ज्यादा देर रहना ठीक नहीं है। यह सब सुनना भी बुरा है ! वह दोनों की निगाह बचाकर धीरे-धीरे कमरे से खिसकने लगा, लेकिन सती ने अचानक उसे बुला लिया — अरे दीपू, तुम क्यों जा रहे हो ? तुम यहीं रहो। तुम्हें किस बात का डर है ?

दीपंकर रुक गया। वह एक बार लक्ष्मी दी की तरफ देखता फिर सती को।

लक्ष्मी दी ने सती से कहा — यह सब उसके सामने कहे विना क्या तुझे चैन नहीं मिलता ?

सती ने जवाब दिया — तुम तो मुझे दोष देने लगी थी .... अब वह समझ ले कि दोष किसका है !

लक्ष्मी दी ने कहा — उसके समझने पर क्या तुझे सुख मिलेगा ? उसके सामने मेरी निंदा करने से तुझे क्या मिलेगा ? तेरी इज्जत बढ़ जायेगी ?

— दीदी, अव तुम इज्जत की बात न करो ! जानती हो, खानदान की इज्जत तुम्हीं ने बिगाड़ी है ?

लक्ष्मी दी बोली — अब तू मुझे इज्जत न सिखा, समझ गयी। दीपू से तेरा इतना रब्त-जब्त क्यों है, बताऊँ ? दीपू के घर तू क्यों इतना जाती है, क्या मैं नहीं समझती ? दीपू से क्यों तेरी इतनी दोस्ती है, बता न ?

तुरंत सती के चेहरे पर मानो किसी ने सिंदूर मल दिया। सती के चेहरे की तरफ देखकर दीपंकर को लगा कि अब वह भी पकड़ गयी है। एकाएक सती ने दीपंकर का हाथ छोड़ दिया। दीपंकर के सारे बदन में सिहरन-सी दौड़ गयी।

लक्ष्मी दी फिर भी नहीं चुप हुई। बोली — दूसरे का दोष देखने से पहले अपना दोष देखने की कोशिश किया कर सती ! तूने चिट्ठी लिखकर पिताजी से मेरी

मौसी, अब जाने क्या हो गया है, घर एकदम अच्छा नहीं लगता।

— तुम्हारे पिताजी को खबर भेजी गयी है न बिटिया ?

सती बोली — चाचाजी तो रोज खबर भेजने के लिए कह रहे हैं, लेकिन मैंने ही उनको रोक रखा है। शायद एक-दो दिन में दीदी लौट आये ! फिर झूठमूठ पिताजी के मन को दुखाना होगा।

मां बोली — तुम्हारी दीदी आ जाय तो पिताजी से कहना कि उसकी चटपट शादी कर दें। फिर तुम्हारी भी शादी हो जानी चाहिए बिटिया। लड़कियाँ ज्यादा दिन अनब्याही नहीं रहनी चाहिए। यही देखो न, मैं बिन्ती के लिए वर ढूंढ़ रही हूँ। जब तुम लोगों में पैसा खर्च करने की क्षमता है, तब ....

सती बोली — पिताजी के पास समय नहीं है मौसी जी, उनका अपना पूजा-पाठ है, कारोबार है, कब क्या करेंगे ?

मां बोली — क्या कहती हो ? कामकाज और कारोबार है तो क्या लड़कियों की शादी रुकी रहेगी ? यह भी तो एक काम है !

सती के चले जाने के काफी देर बाद भी दीपंकर पढ़ने में मन नहीं लगा सका। उसका दिमाग मानो जवाब दे चुका था। दीपंकर की दशा कोई नहीं जानता, कोई समझ भी नहीं सकता। असल में कोई सोच भी नहीं सकता। लक्ष्मी दी से उसका क्या सम्पर्क है, यह कोई कैसे जान सकता है ? कोई सपने में भी नहीं सोच सकता ! फिर भी लक्ष्मी दी उसे बताकर नहीं गयी। कम-से-कम अपने दीपू को तो बताकर जा सकती थी। बताकर भी जाती तो दीपंकर किसी से कुछ नहीं कहता। लेकिन लक्ष्मी दी ने उसे क्यों नहीं बताया ? उसी से लक्ष्मी दी ने यह बात क्यों छिपायी ?

एक दिन पहले भी लक्ष्मी दी से दीपंकर की भेंट हुई थी। उस दिन भी वह हँसकर दीपंकर से बोली थी। सती से लड़ी थी। कहीं कोई अन्तर नहीं आया था। उस दिन भी वह देर करके उठी थी और देर करके उसने चाय पी थी। सती तब तक नहा चुकी थी। उस दिन भी लक्ष्मी दी रोज की तरह कालेज जाने के लिए तैयार हुई थी। उसके बाद जब बस आकर गली के नुक्कड़ पर रुकी तो वह उसमें बैठ गयी थी। कालेज जाने से पहले जब वह भात खाती थी तब चाचीजी उसके पास आकर बैठती थीं। वह और सती साथ खातीं थीं।

चाचीजी कहतीं — क्यों रे, और थोड़ा भात देने के लिए कहूँ ? अरे, उठ क्यों रही है ? खा ले ....

लक्ष्मी दी कहती — अब नहीं खा सकती चाचीजी, पेट भर गया है।

चाचीजी कहतीं — लेकिन तुम्हारे पिताजी देखेंगे तो कहेंगे कि यह हमारी बेटी को खाने नहीं देती ....

लक्ष्मी दी कहती — नहीं चाचीजी, मैं लौटकर खाऊँगी, अभी देर हो गयी है।

— लेकिन देर क्यों हुई ? भात तो बहुत पहले बन गया है। कब से मैं बुला

दीपंकर बोला — आपने हमारी लाइब्रेरी के चन्दे में पांच रुपये का ए... दिया था ? याद है न आपको ? वह नकली है !

— नकली ? कहाँ है, देखूं ?

— मेरे पास नहीं है, घर में है।

मिस्टर दातार ने कहा — ठीक है, मुझे दिखाना, अगर नकली है तो ब... दूँगा। तुम मेरे दफ्तर में आना, पता तो तुम्हारे पास है ? ठीक है न ?

● ● ●

उस दिन नृपेन बाबू ने बड़ा अच्छा बर्ताव किया। कहा — तुम आते क्यों नहीं ? बीच-बीच में आना, आओगे नहीं तो तुम्हारी बात कैसे याद रहेगी ? हजार काम रहते हैं, इसलिए हर बात क्या हर समय याद रहती है ? दफ्तर पहुँचने पर सारा संसार भूल जाना पड़ता है।

थोड़ा रुककर उन्होंने पूछा — कहाँ तक पढ़े हो ?

— जी, इस बार बी० ए० का इम्तहान दिया है।

नृपेन बाबू हँसे। बोले — तुम लोगों ने बी० ए० पास किया है और हम पुराने जमाने के एण्ट्रैंस हैं। आजकल तुम लोगों के स्कूल-कालेज में वैसी पढ़ाई भी नहीं होती। पहले ....

अचानक नृपेन बाबू न जाने क्यों दयालु लगने लगे। मीठी बातें करने लगे। मुस्कराये। बोले — लेकिन तुमने दरख्वास्त नहीं दी ? कितनी बार कहा ....

दीपंकर बोला — जी, आपको तो दरख्वास्त दी है। तीन बार दी है ....

नृपेन बाबू थोड़ा गरम हो गये। बोले — देखा, कितना काम करना पड़ता है, हजारों कामों में डूबा रहता हूँ — हर समय हर बात क्या याद रहती है ? खैर, तीन बार दरख्वास्त दी है, तो एक बार और देने में क्या हर्ज है। बोलो, क्या हर्ज है ?

उस दिन नृपेन बाबू सचमुच गरम हो गये थे। बोले — अब मैं कितने दिन रहूँगा, अगले महीने रिटायर करूँगा, तब ? तब कौन तुम्हें नौकरी दिलायेगा ? कौन तुमको मेरी तरह इतना समझायेगा ?

लोगों का हुजूम वस से उतरता और वस में चढ़ता है। लेकिन किरण अव जने नहीं जाता ! उनको जरूरत भी उसे नहीं रही। आखिर वे सव दिन कहाँ चले

लेकिन उससे एक दिन पहले शाम को घर जाते ही दीपंकर आश्चर्य गया था। घर में 'लूची' तलने की खुशबू मिली। अचानक 'लूची' तलने की खुश उसे विस्मित होना ही पड़ा। माँ ने साफ कपड़ा पहन रखा है और वह वहुत हैं। चन्नूनी, जो कभी साफ कपड़ा नहीं पहनती, वह भी सावुन से धुली धोती पहन रसोईघर के वरामदे में वैठी मसाला पीस रही है।

आँगन के किनारे से जाते समय दीपंकर ने देखा कि उसके कमरे में तखत प दो-तीन लोग वैठे हुए हैं। सव काफी वूढ़े हैं। दीपंकर किसी को पहचान न सका। सभी चेहरे अपरिचित हैं। उधर से जल्दी-जल्दी रसोईघर की तरफ जाते ही उसने सती को देखा। सती ने विन्ती दी को सजाया है। विन्ती दी मानो पहचानने में नहीं आ रही है।

दीपंकर दरवाजे के सामने जा खड़ा हुआ। किसी ने उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया।

रसोईघर में जाकर दीपंकर ने माँ से पूछा — वे लोग कौन हैं माँ ? माँ का सारा काम मानो खत्म हो चुका था वह लोटा लेकर हाथ धो रही थी। वोली — आज भी इतनी देर करके लौटा ? जानता नहीं कि आज लोग विन्ती को देखने आयेंगे ?

— वाह रे, मुझसे तुमने कव कहा ?

माँ इसका जवाव न दे सकी। अचानक एक वूढ़े सज्जन कमरे में से एकदम रसोईघर के पास आ गये। वोले — दीदी, अव वे रुकना नहीं चाह रहे हैं।

माँ वोली — क्यों ? मैंने उनके लिए इतना खाना वनाया, इतना सारा इंत-जाम किया — नहीं, नहीं, आप जरा उनको समझाकर कहिए घटक जी, अगर वे नहीं खायेंगे तो मुझे वड़ा दुःख होगा।

घटक जी वोले — मैंने कहा है, लेकिन वे नहीं मान रहे हैं।

— चलिए, मैं कहती हूँ ....

माँ ने झटपट सफेद धोती को ठीक से वदन पर रख लिया, रसोईघर के दर-वाजे में साँकल लगायी और चन्नूनी से कहा — देखना वहन, कौआ न खा ले ....

माँ सीधे कमरे की तरफ गयी। घटक जी ने कहा — लगता तो है कि लड़की पसंद आयी है, लेकिन ....

माँ वोली — लड़की पसंद हो या न हो जलपान करने में क्या हर्ज हो सकता है।

घटक जी वोले — वहुत दूर से आये हैं, कह रहे हैं कि लौटने में रात हो जायेगी।

... वसों में भीड़ होती ही है। फिर शहर में किस वात का डर है ?

कुछ उसी नतजमाई का होगा। फिर पिताजी कितने दिन रहेंगे ? अभी उनको ठीक से दिखाई नहीं पड़ता, उस दिन वे गिर पड़े।

माँ की बात पूरी नहीं हुई थी, कि सती आयी — मौसीजी !

माँ ने मुड़कर सती को देखा और कहा — हाँ विटिया, क्या हुआ ?

सती बोली — विन्ती दी बहुत रो रही है, आपको बुला रही है।

बाहरी लोगों के सामने माँ जरा झेंप गयी। वह क्या कहेगी, समझ नहीं पायी। इतना इंतजाम, इतनी घवड़ाहट, मानो सब वेकार चला जायेगा। माँ के इतने दिनों के इतने सपनों की यह सारी योजना है ! सवेरे से माँ ने अकेले दम सब इंतजाम किया था। अघोर नाना बड़े कृपण हैं, आसानी से रुपये निकालना नहीं चाहते। माँ ने समझा-बुझाकर उनसे रुपये लिये। फिर भी बूढ़ा सवेरे चिल्लाता रहा। उस समय कालेज जाने की जल्दी थी, इसलिए दीपंकर कुछ समझ नहीं पाया था। कई दिन से उसका मिजाज भी ठीक नहीं था। लक्ष्मी दी के कारण उसका सब कुछ गड़बड़ा गया था। मिस्टर दातार से भेंट होने के बाद उसे बहुत-सी बातें याद पड़ने लगी थीं। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। उधर चाचाजी के घर में भी मानो इतने ही दिनों में सब कुछ बदल गया था। रात को बत्तियाँ जल्दी बुझ जाती थीं। उस मकान की तरफ देखकर कभी-कभी दीपंकर को लगता था कि लक्ष्मी दी शायद लौट आयी है। फिर वह पहले की तरह बस से कालेज जाने लगी है। लेकिन सती अकेले ही कालेज जाती थी। एक दिन उसके कालेज जाते समय दीपंकर खड़ा था। उस दिन शायद बस आने में देर हो गयी थी।

दीपंकर ने बुलाया — सुनो !

सती ने मुड़कर दीपंकर को देखा। पूछा — क्या ?

कुछ कहना चाहकर भी दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या कहा जाय।

— अरे, कुछ बोलोगे या चुपचाप खड़े रहोगे ?

दीपंकर बोला — तुम्हारे पिताजी की चिट्ठी आयी है ?

सती बोली — हाँ, क्यों ?

— तुम्हारे पिताजी को यह सब सुनकर बड़ी तकलीफ हुई होगी ?

— क्या सुनकर ?

— लक्ष्मी दी के चले जाने की खबर सुनकर ?

सती बोली — तुम तो लक्ष्मी दी के लिए हम लोगों से ज्यादा सोचने लगे हो ?

— क्यों ? तुम भी तो सोचती हो ? और मेरा सोचना बुरा हो गया ?

सती बोली — अभी तक पिताजी को खबर नहीं दी गयी है।

— फिर उनको खबर मत देना, समझ गयी ? वे परदेश में रहते हैं, उनको बड़ा कष्ट होगा — शायद यहाँ चले आयें। दो-चार दिन और देख लो, शायद लक्ष्मी दी इस बीच आ ही जायें !

— लेकिन किताब तो एक भी नहीं मिली ?

— तुमने किताब के लिए कहा क्यों नहीं ? मैं तुम्हें रोज दो किताबें दे सकता हूं — तुमको मांगना चाहिए न ?

सती बोली — लेकिन बात तो ऐसी नहीं थी। बात यह थी कि तुम किताब दे जाओगे ....

दीपंकर बोला — माना कि मुझे याद नहीं था, तुम तो याद दिला सकती थीं ?

सती बोली — अगर मैं लक्ष्मी दी होती तो तुम्हें याद दिलाना न पड़ता — तुम्हें याद आ जाता ....

दीपंकर ने सीधे सती के चेहरे की तरफ देखा। कहा — लक्ष्मी दी की बात अलग है ....

— क्यों ? लक्ष्मी दी की बात क्यों अलग है ?

— अलग नहीं होगी ? तुम लोगों ने लक्ष्मी दी को कितना कष्ट दिया है .... सब ने मिलकर कष्ट दिया है ! तुम्हीं लोगों के कारण लक्ष्मी दी घर छोड़कर चली गयी है !

— कैसा कष्ट ? सती मानो कुछ समझ न सकी।

दीपंकर भी बात को टालना चाह रहा था। बोला — यह मैं नहीं बताऊंगा .... तुम सब जान जाओगी ....

दीपंकर यह कहकर मुड़ा तो सती ने झट से उसका हाथ पकड़ लिया। कहा — भाग क्यों रहे हो ? बताना ही पड़ेगा कि हम लोगों ने लक्ष्मी दी को कौन-सा कष्ट दिया है ? बताना होगा ....

दीपंकर बोला — अरे, हाथ छोड़ो न !

— नहीं, बताओ पहले, तुम क्या जानते हो ....

— सच कहता हूं, मैं कुछ नहीं जानता, मुझे लगा, इसलिए कहा ....

सती ने फिर भी जोर से दीपंकर का हाथ पकड़े रखा। कहा — मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगी। मैं पहले भी जानती थी कि लक्ष्मी दी ने तुमसे सब कुछ कहा है ....

— क्या कहा है ?

सती बोली — तुम चाचाजी के पास चलो। चाचाजी से सब कहना पड़ेगा। चलो चाचाजी के पास ....

सती दीपंकर को मकान के अंदर ले चलने के लिए उसका हाथ पकड़कर खींचने लगी।

दीपंकर बोला — मैं तो कह रहा हूं कि कुछ नहीं जानता, फिर क्यों चाचाजी के पास जाऊंगा ?

दीपंकर ने जोर लगाकर अपना हाथ छुड़ाना चाहा। लेकिन सती में भी कम ताकत नहीं है। सती भी उसे खींचने लगी। बोली — मैं किसी तरह नहीं छोड़ूंगी ....

फिर दीपंकर की तरफ देखकर चाचीजी ने कहा — जाओ, तुम घर जाओ....

दीपंकर जाने लगा। सती ने बुलाया। कहा — चंदा नहीं लोगे ? चंदा लेते जाओ ....

दीपंकर मुड़ा। बोला — चंदा ?

— हाँ, इस महीने का चंदा लिये बिना जा रहे हो ? गुस्सा हो गये ?

चाचीजी हंसीं। बोलीं — अब तू उसे मत चिढ़ा .... नहीं, नहीं, तुम अभी घर जाओ दीपू ....

दीपंकर बोला — जिसको गरज होगी, मेरे घर आकर चंदा देगा .... अब मैं कहीं नहीं जा सकता।

सती शायद कुछ कहती। लेकिन डाकिया मकान की तरफ आता दिखाई पड़ा। दीपंकर डाकिये को देखकर रुक गया। उसके मकान में कभी चिट्ठी नहीं आती। फिर भी डाकिये को देखकर आशा होती है। डाकिया पास आया तो दीपंकर ने पूछा — उन्नीस बटा एक बी की चिट्ठी है ?

— है।

दीपंकर ने पूछा — किसके नाम ?

— सती मित्र।

नाम सुनकर दीपंकर ने सती की तरफ देखा। सती चिट्ठी लेने के लिए बढ़ी। लिफाफा लेकर उसने उसे फाड़ा। कैसी चिट्ठी ! क्या लक्ष्मी दी के नाम है ? या लक्ष्मी दी ने लिखी ? दीपंकर उस तरफ देखता रहा।

चाचीजी ने पूछा — किसकी चिट्ठी है सती ?

चिट्ठी पढ़ती हुई सती बोली—पिताजी की।

सती के पिताजी की चिट्ठी है ! सती के पिताजी की ! दीपंकर हिल न सका। चिट्ठी में क्या लिखा है, जाने बिना उसे चैन नहीं मिलेगा। क्या लक्ष्मी दी के बारे में उनको लिखा गया है ? अब क्या होगा ? लक्ष्मी दी के पिताजी अस्वस्थ हैं। यह खबर मिलने पर क्या वे जिंदा रहेंगे ? क्यों इन लोगों ने उनको यह सब लिखा ? एक-दो दिन और इन्तजार किया जा सकता था। क्या फायदा हुआ उनको चिट्ठी लिखकर ? व्यर्थ ही उस बूढ़े को कष्ट दिया गया !

चाचीजी ने फिर पूछा — उन्होंने क्या लिखा है ?

सती बोली — पिताजी कलकत्ते आ रहे हैं।

— कब ?

लेकिन तब तक गली के मोड़ पर सती की बस आ गयी। सती जल्दी से उसी तरफ भागी।

चाचाजी ने फिर पूछा — वे कब आ रहे हैं सती ?

इसका जवाब दिये बिना सती बस में जाकर बैठी और बस हार्न बजाकर पूरब

स्ट्रीट में दुमंजिले पर उनका दफ्तर था। उस मुहल्ले में बहुत-से दफ्तर थे। वह दफ्तरों का ही मुहल्ला था। अकेले ट्राम में बैठकर चलते समय दीपंकर को लगा कि वह काफी बड़ा हो गया है। अब तो ऐसे ही रोज सवेरे उसे दफ्तर जाना पड़ेगा। और लोगों की तरह भात खाकर उसे भी दौड़ना पड़ेगा। फिर कितना मजा आयेगा — सब कहेंगे, दीपंकर नौकरी करता है। कितने रुपये पाता है ? तैंतीस रुपये ! हाँ, तो तैंतीस रुपये भी क्या कम हैं ! फिर फ्री पास मिलेगा। जहाँ जी चाहे रेलगाड़ी में बैठकर चले जाओ। सवेरे टिफिन का डिब्बा लिये किसी तरह पहुँचते ही यह सब हो जायेगा ! वहाँ कोई खास का काम नहीं रहता। काम रहे, न रहे महीना बीतते ही तनख्वाह मिलेगी। कैसी आराम की नौकरी ! इसी रास्ते से दफ्तर जाना पड़ेगा। मुहल्ले के और लोग जिस तरह दफ्तर जाते हैं, उसी तरह !

चारों तरफ सूना-सूना। कलकत्ता शहर बड़ा सूना लगने लगा। कम से कम ट्राम में चलते समय उस दिन दीपंकर को ऐसा ही लगा था। दोपहर का रूप बड़ा कठोर बड़ा रूखा और बड़ा निष्ठुर है। शायद यही पृथ्वी का असली रूप है। रात को पृथ्वी शीतल और शांत होती है। लेकिन वह मानो उसका सामयिक रूप है। असल में इस जीवन की तरह यह दोपहर ही सत्य है। इस जीवन में क्या कभी दीपंकर को शांति मिली ? इस जीवन में क्या कभी उसे सांत्वना मिली ? अगर मिली भी है तो कितनी देर के लिए ? कितनी लघु रही उसकी परिधि और कितना सूक्ष्म उसका प्रसार ? उसकी सारी जिन्दगी एक दोपहर सी है — कलकत्ते की दोपहर सी रूक्ष, कठोर और निष्ठुर।

— टिकट ?

दीपंकर चौंका ! इतनी देर बाद टिकट ! टिकट कटाने की बात उसे याद नहीं थी। जेब से पैसे निकालकर देते ही कंडक्टर ने टिकट काटकर उसे दिया। दोपहर का टिकट — तीन पैसे का। दोपहर को टिकट का दाम सस्ता होता है ? शाम को इसी टिकट का दाम होगा पांच पैसे। गिनकर दो आने पैसे लेकर दीपंकर चला था। तीन पैसे देने पर पांच पैसे रहेंगे। लेकिन न जाने क्या संदेह होते ही उसने जेब में हाथ डालकर देखा। अरे, जेब में बस दो पैसे पड़े हैं ! फिर ?

एकाएक दीपंकर उछल पड़ा। बोला — मैंने टिकट कटाया है !

— कटाया है ! कहाँ गया टिकट ?

कंडक्टर हक्का-बक्का-सा खड़ा रहा। दीपंकर एक बार यह जेब तो दूसरी बार दूसरी जेब देखने लगा। आखिर कहाँ गया टिकट ?

बोला — सच कह रहा हूँ, मैंने टिकट कटाया है। मुझे अब याद आया ....

— लेकिन, कटाया है, कहने से काम नहीं चलेगा, टिकट दिखाना पड़ेगा।

पर टिकट नदारद ! फिर टिकट अगर उसने नहीं कटाया तो बाकी पैसे कहाँ गये ? उड़ गये क्या ? ट्राम में अकेला बैठा दीपंकर पसीने से तर होने लगा। अगर मिस्टर

सती सीधे उन लोगों के सामने पहुँच गयी थी।

माँ ने उससे कहा — तुम उनके सामने पहुँच गयीं बिटिया, पता नहीं लोगों ने क्या सोचा ....

उन लोगों ने घटक जी से पूछा — यह लड़की कौन है ?

घटक जी बोले — भट्टाचार्य जी के किरायेदार की लड़की है — यहीं कालेज पढ़ती है ....

— क्या वे लोग ब्राह्मण हैं ?

— नहीं, कायस्थ हैं।

बातचीत से दीपंकर को ऐसा लगा था कि उन लोगों को सती ही पसंद है अगर सती कायस्थ न होकर ब्राह्मण होती तो वे उसी को पसंद कर लेते। सचमुच उस दिन सती कितनी सुन्दर लग रही थी! लेकिन सती ने अपने गहने, स्नो-पाउडर और साड़ी से विन्ती दी को सजाया था। खूब मन लगाकर सजाया था। घर में जो कुछ था, सब से उसने उसे खूब सजाया था।

विन्ती दी ने पूछा — क्या मैं सुन्दर लग रही हूँ बहन ?

सती ने कहा — बहुत सुन्दर लग रही हो। देख लेना, वे लोग तुम्हें पसंद कर लेंगे।

माँ ने सती से कहा — तुम थीं तो बिटिया को सजा दिया, नहीं तो इतने गहने और साड़ी मैं कहाँ से लाती, अब किसी तरह उसकी शादी हो जाय तो समझूँगी कि उसका भाग्य अच्छा है।

लेकिन उसके बाद वह बात हो गयी।

माँ ने कहा — आप लोग जरा बैठिए, बिना नाश्ता किये जा नहीं सकते। मैं अभी आती हूँ ....

कमरे में आकर माँ ने पूछा — क्या हुआ बेटी, रो क्यों रही हो ?

सती बोली — देखिए मौसी जी, मैं लाख-लाख समझा रही हूँ, लेकिन यह रोती ही जा रही है। रो-रोकर सारा स्नो-पाउडर खराब कर लिया। मैंने कितनी मेहनत से सजाया था।

माँ ने झटपट विन्ती दी के मुँह-गाल पोंछ दिये। विन्ती दी तब भी फूट-फूटकर रो रही थी।

माँ बोलीं — छिः आज नहीं रोते। क्या हुआ है बिटिया! बताओ, क्या हुआ है ?

विन्ती दी बोली — वे क्यों नहीं खा रहे हैं ? क्या उन लोगों ने मुझे पसंद नहीं किया ?

माँ हँसी। सती पास में खड़ी थी, वह भी हँसी।

दीपंकर बोला — सती उन लोगों को बहुत पसंद है माँ। वे पूछ रहे थे कि

ज्यादा पसंद किया।

सती बोली — फिर डाँट खाने का मन हो रहा है? कह दूँ मौसी जी से?

— वाह रे, सच कहना भी बुरा है?

— लेकिन बिन्ती दी ने क्या सोचा मालूम है?

दीपंकर बोला — हाँ। लेकिन बिन्ती दी कितनी सजी थी, फिर भी उससे तुम ज्यादा सुन्दर लग रही थीं। सच कह रहा हूँ ....

सती ने कोई उत्तर नहीं दिया, सिर्फ कहा — छिः ....

— छिः क्यों?

सती बोली — ऐसा नहीं कहना चाहिए।

— क्यों नहीं कहना चाहिए? बताओ न ....

सती बोली — देखते नहीं, अभी तक मेरी शादी नहीं हुई है, शादी से पहले ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए।

— क्यों? ऐसा कहने से शादी नहीं होती?

सती एकाएक हँस पड़ी। बोली — तुम्हें जरा भी अक्ल नहीं है। लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे!

— क्या कहेंगे?

सती बोली — लोग यही कहेंगे कि तुमसे मेरा रिश्ता कुछ और है?

— कैसा रिश्ता?

सती शायद कोई उत्तर देती, लेकिन पीछे से माँ की आवाज सुनाई पड़ी — अरी बिटिया, तुम अपनी साड़ी और गहने नहीं ले गयीं?

सती ने वहीं से चिल्लाकर कहा — वह सब कल ले जाऊंगी मौसी जी, आज रहने दीजिए ....

दीपंकर बोला — खैर, तुमको सुन्दर कह दिया — तुम बुरा तो नहीं मान गयी?

— नहीं, बुरा क्यों मानूंगी? सुन्दर कहने पर सबको अच्छा लगता है। लेकिन मुंह पर कहने से जरा शक होता है, और क्या?

— लेकिन मैं तो अकेला नहीं कह रहा हूँ, उन लोगों ने भी कहा ....

सती बोली — उन लोगों ने किसी और कारण से कहा होगा लेकिन तुम किस लिए कह रहे हो?

दीपंकर बोला — सचमुच मेरा कोई स्वार्थ नहीं है — बताओ, मेरा क्या स्वार्थ हो सकता है?

— नहीं तो देख रही थी। तुम मुंह बाये मेरी तरफ देख रहे थे।

दीपंकर बोला — मैं सोच रहा था कि तुम्हारी शादी के वक्त इतनी परेशानी न होगी, जो देखने आयेगा वही पसंद करेगा।

ज्यादा पसंद किया।

सती बोली — फिर डाँट खाने का मन हो रहा है :

— वाह रे, सच कहना भी बुरा है ?

— लेकिन विन्ती दी ने क्या सोचा मालूम है ?

दीपंकर बोला — हाँ। लेकिन विन्ती दी कितनी सजी थीं, ज्यादा सुन्दर लग रही थीं। सच कह रहा हूँ ....

सती ने कोई उत्तर नहीं दिया, सिर्फ कहा — छिः ....

— छिः क्यों ?

सती बोली — ऐसा नहीं कहना चाहिए।

— क्यों नहीं कहना चाहिए ? बताओ न ....

सती बोली — देखते नहीं, अभी तक मेरी शादी नहीं हुई है, शादी ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए।

— क्यों ? ऐसा कहने से शादी नहीं होती ?

सती एकाएक हँस पड़ी। बोली — तुम्हें जरा भी अक्ल नहीं है। लोग सुनें तो क्या कहेंगे !

— क्या कहेंगे ?

सती बोली — लोग यही कहेंगे कि तुमसे मेरा रिश्ता कुछ और है ?

— कैसा रिश्ता ?

सती शायद कोई उत्तर देती, लेकिन पीछे से माँ की आवाज सुनाई पड़ी — अरी बिटिया, तुम अपनी साड़ी और गहने नहीं ले गयीं ?

सती ने वहीं से चिल्लाकर कहा — वह सब कल ले जाऊंगी मौसी जी, आज रहने दीजिए ....

दीपंकर बोला — खैर, तुमको सुन्दर कह दिया — तुम बुरा तो नहीं मान गयीं ?

— नहीं, बुरा क्यों मानूंगी ? सुन्दर कहने पर सबको अच्छा लगता है। लेकिन मुँह पर कहने से जरा शक होता है, और क्या ?

— लेकिन मैं तो अकेला नहीं कह रहा हूँ, उन लोगों ने भी कहा ....

सती बोली — उन लोगों ने किसी और कारण से कहा होगा लेकिन तुम किस लिए कह रहे हो ?

दीपंकर बोला — सचमुच मेरा कोई स्वार्थ नहीं है — बताओ, मेरा क्या स्वार्थ हो सकता है ?

— वही तो देख रही थी। तुम मुँह बाये मेरी तरफ देख रहे थे।

दीपंकर बोला — मैं सोच रहा था कि तुम्हारी शादी के वक्त इतनी परेशानी न होगी, जो देखने आयेगा वही पसंद करेगा।

सकता है। किरण बहुत कुछ जानता है। किरण बहुत ज्यादा समझता है। उसकी का बात नहीं होना स्वाभाविक है। फिर याद रखने से भी क्या फायदा! बल्कि याद न रखना ही अच्छा है। दफ्तरों के इस मुहल्ले में एक दिन काम-काज के बीच दीपंकर को भी सब भूलना होगा। फिर पहले की सब बातें क्या उसे याद हैं? वही लक्ष्मण सरकार, निर्मल पालित, फटिक और चंडी बाबू के घर का वह—याद नहीं पड़ता, क्या नाम है। आश्चर्य की बात है, कुछ ही दिन बीते हैं, लेकिन नाम भी याद नहीं पड़ रहा है। फिर क्या सिर्फ आदमी ही बदले, जगह भी कितनी बदल गयी है। इतिहास बदलता है तो क्या भूगोल नहीं बदलेगा?

—जरा सुनिए, यहाँ दातार बाबू का दफ्तर कहाँ है? एस० एस० दातार। शिव शंभु दातार!

बीस बी बहूबाजार स्ट्रीट! बहूबाजार की बड़ी सड़क पर नहीं, एक सँकरी गली के भीतर मकान है। दूसरी मंजिल पर जाना पड़ता है। नंबर अच्छी तरह देख लेने के बाद दीपंकर ने इधर-उधर निगाह दौड़ायी। लकड़ी की सीढ़ी से लोग ऊपर जा रहे हैं और नीचे आ रहे हैं। दीपंकर की बगल से कितने ही लोग अपने काम से आ-जा रहे हैं। दोपहर के समय दफ्तरों के मुहल्ले में इसी तरह चहल-पहल रहती है। इस तरफ चीनी लोगों की बस्ती भी है। आसपास बहुत से चीनी दिखाई पड़े। पाँवों में खड़ाऊँ और बदन पर बनियाइन। मकान के आगे सँकरी गली में भी उन लोगों ने अपनी गृहस्थी बसा ली है।

—जरा सुनिए, दातार बाबू का दफ्तर कहाँ है?

मुँह बाये सब इस सवाल को सुनते हैं। कोई-कोई तो ध्यान भी नहीं देता। दीपंकर सही नंबर के सामने चक्कर लगाता रहा। साइन बोर्ड भी नहीं है कि समझ में आये। दरवाजे में ताला लगा है रंग-उखड़ा दरवाजा। आसपास के घरों में लोग हैं, लेकिन यही एक दरवाजा बंद है। दीपंकर ने बगल के कमरे में झाँका। वहाँ दो बंगाली काम कर रहे थे।

—सुनिए, यह दफ्तर कब खुलेगा?

—अब वह नहीं खुलेगा, बंद हो चुका है।

—बंद हो चुका है?

—हाँ।

दीपंकर मानो निराश हो गया। इतना परेशान होकर उसने दफ्तर ढूँढ़ निकाला और अब उसे लौट जाना होगा! लौटने के लिए पास में पैसा भी नहीं है। जेब में सिर्फ दो पैसे पड़े हैं। जैसे भी हो मिस्टर दातार से मुलाकात करनी ही होगी। पाँच रुपये का नकली नोट भी बदलना होगा। लकड़ी की सीढ़ी से नीचे चला आया था। अब अगर वह कल आये तो फिर कई पैसे खर्च हों। कालीघाट से इतनी दूर आना क्या मामूली बात है! माँ भी क्यों बारबार पैसे देगी? माँ पूछेगी तो वह क्या जवाब

कोई जवाब नहीं मिला। उसने फिर कुंडी खटखटायी! अन्दर नौकर-चाकर जरूर कोई हैं, क्योंकि अन्दर से दरवाजा बंद है। अगर नौकर आकर कह दे कि दातार साहब घर में नहीं हैं। अगर कहे कि उनके लौटने में रात होगी! रात के दस या ग्यारह बज जायेंगे! तो? तब तक रुकना क्या संभव होगा? लेकिन मिस्टर दातार से पैसा लिये बिना लौटना भी संभव नहीं है! जेब में सिर्फ दो पैसे पड़े हैं। रुकना ही पड़ेगा। कोई उपाय नहीं है। बार-बार इधर आना संभव नहीं है। इधर आने का मतलब है तीन और तीन छः पैसे खर्च होना। फिर दिन में तीन बजे के बाद तीन पैसे में आया भी नहीं जा सकता। तीन बजे के बाद ट्राम का किराया बढ़ जाता है। दोपहर का सस्ता किराया बस तीन बजे तक है।

अंदर से नौकरानी की आवाज आयी — कौन है?

दीपंकर बोला — दरवाजा खोलिए, मैं बहुत दूर से आया हूँ।

अंदर से आवाज आयी — अभी बाबूजी घर में नहीं हैं।

दीपंकर बोला — मैं चिट्ठी लिखकर छोड़ दूँगा, एक मिनट के लिए दरवाजा खोलिए।

दरवाजा खुला। दरवाजा खुलते ही दीपंकर दो कदम पीछे हट आया! लक्ष्मी दी!

— लक्ष्मी दी, आप?

लक्ष्मी दी मानो डर गयी।

— दीपू, तू?

दीपंकर लक्ष्मी दी की शकल देखकर कुछ देर आश्चर्यचकित खड़ा रह गया। यह कैसी शकल हो गयी है लक्ष्मी दी की? ये कैसे कपड़े? माँग में सिन्दूर दमक रहा है। क्या लक्ष्मी दी की शादी हो गयी है? कब हुई? इतनी गंदी साड़ी और सेमिज में लक्ष्मी दी! यह कैसा मकान है। इस मकान में लक्ष्मी दी कैसे रहती है? इस कमरे में तो कहीं से रोशनी भी नहीं आती। एक किनारे एक तख्त पड़ा है। चारों तरफ सीलन की बू है।

— तू कैसे?

दीपंकर क्या जवाब देता! वह तो मानो गूंगा बन गया था। इस तरह इस हालत में लक्ष्मी दी मिलेगी, यह सोच भी न पाया था। मिस्टर दातार के घर में लक्ष्मी दी मिलेगी, यह भी उसने सोचा नहीं था। मिस्टर दातार को वह कितनी बार चिट्ठी दे आया था और उस दिन भी उनसे सड़क पर भेंट हुई थी। आखिर उन्हीं के घर लक्ष्मी दी मिल गयी!

— मैं समझ रही थी कि कोई और बुला रहा है। इसलिए दरवाजा खोलने में देर कर रही थी।

तब भी दीपंकर का विस्मय दूर नहीं हुआ। यह क्या सचमुच लक्ष्मी दी ही

बारे में सोच-सोचकर आने को मन नहीं हो रहा था। आप कैसी हैं लक्ष्मी दी ? आपको जरा भी दया नहीं आयी ?

लक्ष्मी दी जरा गंभीर हो गयी। बोली — तू तो नहीं जानता, मैं इधर कैसे संकट में पड़ गयी हूँ।

— आपने मुझे खबर क्यों नहीं दी ? खबर मिलते ही मैं आ जाता।

— तू तो कुछ कर नहीं सकेगा, इसलिए तुझे खबर देकर क्या करती ?

दीपंकर ने लक्ष्मी दी की तरफ देखा। लक्ष्मी दी उसका हाथ थामे अनमनी सी बैठी रही। धीरे-धीरे कमरे में अँधेरा होने लगा। शायद दिन ढलने लगा है। बहू-बाजार का इकतल्ले का कमरा, हवा और रोशनी आने की बहुत कम गुंजाइश है। दरवाजा और खिड़की तो है, लेकिन लक्ष्मी दी ने उनको बंद कर रखा है।

— वे लोग सोच रहे हैं, मैं भी सोच रहा था — सब लोग आपके लिए परेशान हैं लक्ष्मी दी। चाचाजी ने हर थाने में खबर कर दी है। वे आपके कालेज गये थे। कालेज से कोई पता नहीं चला! आप कैसे कहाँ चली गयीं, कोई नहीं समझ पाया। सती भी बहुत परेशान है। जानती हैं, उस दिन तो सती मुझ पर शक कर बैठी। सती समझ रही थी कि आप कहाँ हैं, मैं जानता हूँ। एक दिन तो उसने मेरा हाथ पकड़कर खींचना शुरू कर दिया, आखिर चाचाजी ने आकर छुड़ाया।

लक्ष्मी दी बोली — मैं समझ नहीं सकी थी कि ऐसा होगा ....

— लेकिन आप क्यों चली आयीं लक्ष्मी दी ? पहले तो सब ठीक था। कोई जान भी नहीं पा रहा था। जो कुछ कहना होता, मुझसे कह देतीं और मैं मिस्टर दातार से कह आता। अब अगर किसी को पता चल जाय कि आप यहाँ हैं, तो ?

— तू कह देगा क्या ?

— नहीं, मैं नहीं कहूँगा! लेकिन आपके पिताजी यहाँ आ रहे हैं, अगर वे यहाँ आकर आपका पता लगा लें, तो क्या होगा ?

— पिताजी आ रहे हैं ? तुझे कैसे मालूम ?

— मैंने देखा, आपके पिताजी की चिट्ठी आयी। सती के नाम चिट्ठी आयी और उसने चाची से कहा ....

न जाने लक्ष्मी दी क्या सोचने लगी ....

दीपंकर बोला — आप एक काम [illegible] ....

— क्या ?

— आ[illegible] । आपके [illegible] चलिए, कोई कुछ नहीं कहेगा [illegible] कहा है, [illegible] के किसी [illegible] जिन [illegible], कोई [illegible] कहेगा [illegible] और [illegible]

दीपंकर ने पूछा — क्यों ? क्या हुआ लक्ष्मी दी ?

— तू मेरा एक उपकार करेगा ?

दीपंकर बोला — जरूर करूँगा। बताइए, क्या करना होगा ?

— तो सुन !

लक्ष्मी दी सँभलकर बैठ गयीं। बोली — मैं जिस दिन यहाँ आयी, उस दिन भी मैं नहीं जानती थी कि अब मुझे यहीं रहना पड़ेगा। एक दिन पहले शंभु ने चिट्ठी लिखी थी कि उसकी तबीयत बहुत खराब है। मैं दूसरे दिन कालेज जाने के बहाने यहाँ चली आयी। आकर देखा, शंभु को तेज बुखार है। बुखार देखकर डाक्टर बुलाने गयी। सोचा, रोज की तरह शाम को घर पहुँच जाऊँगी। लेकिन दोपहर को उसे फिर तेज बुखार आया। फिर डाक्टर बुलाने का विचार किया, लेकिन मेरे पास रुपया नहीं था। शंभु का बक्सा देखा, उसमें भी रुपया नहीं था। उसकी जेब में मनीबैग देखा तो उसमें सिर्फ एक रुपया मिला। सोचने लगी, अब क्या करूँ ....

लक्ष्मी दी की बात सुनता हुआ उस दिन दीपंकर मानो सारा संसार भूल गया था। बहूबाजार स्ट्रीट के एकतल्ले के उस छोटे-से कमरे में उस दिन दीपंकर और लक्ष्मी दी मानो एकाकार हो गये थे। लक्ष्मी दी का संकट दीपंकर का संकट बन गया था। लक्ष्मी दी इस तरह संकट में पड़ गयी और दीपंकर को खबर तक न हुई !

— फिर ?

फिर कब रात बीती थी, लक्ष्मी दी को पता न था। तीसरे पहर के बाद शाम और फिर रात हुई। रात के आठ, नौ, दस और ग्यारह बजे। फिर सवेरा हुआ। लक्ष्मी दी ने सारी रात शंभु की बगल में बैठकर बिता दी थी। वह रात भर शंभु के माथे पर गीली पट्टी रखती रही। रात को उसने खाना नहीं खाया। दर्द से सिर टीसने लगा। उस समय उसे और कोई बात सोचने की फुर्सत नहीं थी। सवेरे शंभु ने आँखें खोलकर देखा। कहा — पानी दो। लक्ष्मी दी बोली — उस समय मेरी कैसी कैसी हालत थी, तुझे कैसे समझाऊँ ?

— लेकिन आपने मुझे खबर क्यों नहीं भेजी ?

लक्ष्मी दी कुछ कहने जा रही थी कि अचानक किसी ने दरवाजे की कुंडी खटखटायी। दीपंकर उठने लगा। बोला — शायद मिस्टर दातार आये हैं।

लक्ष्मी दी बोली — नहीं, दरवाजा मत खोलना।

— क्यों ? कौन दरवाजा ठेल रहा है ?

लक्ष्मी दी बोली — दिन भर लोग इसी तरह दरवाजा ठेलते हैं — तू चुपचाप बैठा रह।

— मिस्टर दातार भी तो हो सकते हैं ?

— नहीं, शंभु नहीं है। शंभु घर में नहीं रहता।

— नहीं रहते ?

वार था, नये सिरे से सब करना पड़ रहा था। कितने लोगों ने उसे ठग लिया। लेकिन बर्मा में उसका कितना बड़ा कारोबार था। मेरे कारण वह सब कुछ छोड़छाड़ कर यहाँ आया है। उस बेचारे को देखने से मुझे कितना कष्ट होता है, सोचती हूँ, मैं ही उसके सर्वनाश के लिए जिम्मेदार हूँ। मैं न होती तो वह आराम से रह सकता था।

— लेकिन आपको यहाँ छोड़कर मिस्टर दातार कहाँ रहते हैं ?

— पता नहीं वह कहाँ रहता है, कभी-कभी अचानक आधी रात को आकर कुंडी खटखटाता है। दिन में आने की हिम्मत नहीं करता। उस समय मेरे पास एक पैसा न था, जब वह चला गया — हाथ की चूड़ियाँ बेच-बेचकर इतने दिन चलाया — अब यही चूड़ियाँ रह गयी हैं।

मिस्टर दातार कर्ज क्यों नहीं चुका देते ? कितने रुपये देने हैं ?

लक्ष्मी दी बोली — बहुत रुपये। मैंने अपने हार, कान के झुमके सब उसे दे दिये, लेकिन अब भी बहुत रुपये देने हैं। रुपये के लिए वह मारा-मारा फिर रहा है....

लक्ष्मी दी की बात सुनकर दीपंकर काफी देर सोचता रहा। बोला — अगर रुपये का इन्तजाम न हुआ तो ?

— न हुआ तो क्या किया जायेगा। अन्त में जो होना होगा — होगा।

— लेकिन तब तक आप यहाँ कैसे रहेंगी ? ये चूड़ियाँ खत्म हो जायेंगी तो क्या होगा ?

लक्ष्मी दी चुप रहीं। तब क्या होगा यह सोचने की क्षमता उसमें नहीं थी।

दीपंकर बोला — आपकी भी अक्ल कैसी है लक्ष्मी दी, आपने एक बार भी अपने बारे में नहीं सोचा ? क्या आप समझती हैं कि इससे मिस्टर दातार का भला होगा ?

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन कौन-सा मुँह लेकर घर जाऊँ ?

— आप अपने घर जायेंगी, इसमें कौन क्या कहेगा ?

— मैंने शादी कर ली है न ?

— क्या कोई शादी नहीं करता ? आपने शादी कर ली है, तो क्या चाचा चाची आपको भगा देंगे ? वे तो आपके लिए परेशान हैं। आप इतने दिन घर बाहर हैं, इनसे क्या उनको कम कष्ट है ?

लक्ष्मी दी ने इस बात का उत्तर नहीं दिया।

दीपंकर बोला — फिर मैं आपको यहाँ छोड़कर जा भी कैसे सकता हूँ ? मैं रात को भी सो नहीं सकूँगा, लेटा-लेटा आपके बारे में सोचता रहूँगा....

लक्ष्मी दी बोली — तू एक काम कर, यहीं रह जा — रह नहीं सकता ?

— मैं ?

दीपंकर मुश्किल में पड़ गया। बोला — मैं ?

ट्राम की गड़-गड़ आवाज भी सुनायी पड़ी। लक्ष्मी दी दीपंकर के पास सरक आयी। दीपंकर को लगा कि लक्ष्मी दी बहुत डर गयी हैं। वह चारों तरफ डरी-डरी सी देखने लगी। कमरे में अँधेरा छाने लगा। उत्तर तरफ के एक संद से थोड़ी देर पहले भी रोशनी आ रही थी, लेकिन अब वह भी गायब हो गयी। दीपंकर को भी डर लगने लगा। अगर वह आदमी धक्का मारकर दरवाजा तोड़ दे? अगर वह अंदर घुस आये?

लक्ष्मी दी बोली — जवाब न देने पर वह चला जायेगा। रोज ऐसा होता है।

वही हुआ। थोड़ी देर बाद कुंडी खटखटाने की आवाज रुक गयी। लगा, वह आदमी जा चुका है।

दीपंकर बोला — लक्ष्मी दी, अब मैं आपको यहाँ रहने नहीं दूँगा। आप अभी चलिए।

लक्ष्मी दी कुछ बोली नहीं—दीपंकर ने देखा, लक्ष्मी दी की आँखें डबडबा आयी हैं।

लक्ष्मी दी बोली — नहीं रे, तू जा। मैं यहीं रहूँगी, जो होगा देखा जायेगा।

दीपंकर बोला—लेकिन आप यहाँ कैसे रहेंगी? अगर आपको कुछ हो जाय तो?

— मुझे क्या होगा रे, मेरा कुछ नहीं होगा, देख लेना।

— आप इस मुहल्ले के बारे में नहीं जानतीं लक्ष्मी दी, यहाँ गुंडे रहते हैं। वे आपको मार डालेंगे! यह बड़ी खतरनाक जगह है, यहाँ आप नहीं रह सकेंगी, यह मैंने बता दिया ....

लक्ष्मी दी बोली — नहीं रे, तू नहीं जानता। मैं जा नहीं सकती, मेरा जाना ठीक न होगा ....

— क्यों? जाने में क्या हर्ज है? आप सती के डर से नहीं जा रही हैं?

लक्ष्मी दी हँसी। बोली — नहीं रे, मैं सती से नहीं डरती, तेरे मिस्टर दातार के लिए डर रही हूँ! पता नहीं, वह कहाँ घूम रहा है, क्या कर रहा है, क्या खा रहा है और इस समय मैं आराम से अपने घर में रहूँगी? वह नहीं खायेगा, और मैं आराम से खाऊँगी?

— लेकिन दोनों के कष्ट उठाने से तो अच्छा है कि एक उठाये। मिस्टर दातार मर्द हैं, वे किसी तरह चला लेंगे। आप औरत हैं, ऐसे कष्ट में कैसे रहेंगी?

लक्ष्मी दी बोली — रह लूंगी, देख लेना, रह लूंगी। अगर वह कष्ट उठा सकता है तो मैं भी उठा सकती हूँ। तू जा दीपू, मैं यहाँ से कहीं नहीं जाऊँगी ....

दीपंकर दुविधा में पड़ गया। बोला — अगर मिस्टर दातार को पुलिस पकड़ ले जाय तो? तब आप क्या करेंगी?

लक्ष्मी दी बोली — तब की बात तब सोचूंगी।

— लेकिन कभी कोई बात हो जाने पर कौन आपको बचाने आयेगा? कौन

दीपंकर को याद आया। दरवाजे के पास वह रुक गया और बोला —

तीन पैसे कम हैं लक्ष्मी दी, आपके पास हैं ?

फिर जरा रुककर बोला — ठीक है, पैदल चला जाऊंगा ....

— वाह रे लड़के, गुस्सा हो गया ? दे रही हूं पैसा, ले जा ....

दीपंकर बोला — मैं कल ही पैसा लौटा दूंगा।

— देना जरूर ! कहकर लक्ष्मी दी हँसी।

— तेरे पांच रुपये इस समय तेरा मिस्टर दातार दे नहीं पायेगा। देख तो रहा है, वह कितना परेशान है ....

— आप उसके लिए परेशान न हों लक्ष्मी दी ! आपको यहाँ छोड़कर जाने में मुझे कितनी तकलीफ हो रही है। यह मैं जानता हूं। मेरे पास अगर रुपया होता, अगर मैं नौकरी करता होता तो सब रुपया आपको देता ....

दीपंकर दरवाजा खोलकर बाहर निकलने लगा।

लक्ष्मी दी बोली — सती से मेरे बारे में मत कहना, चाचा या चाची किसी से नहीं !

— नहीं, मैं किसी से नहीं कहूंगा।

बाहर अँधेरा हो चुका है। पास ही लाइन पर ट्राम चलने की धड़धड़ आवाज हो रही है। दीपंकर के पांव जवाब देने लगे। वह बोला — दरवाजा बन्द कर लीजिए लक्ष्मी दी, मैं जा रहा हूं।

लक्ष्मी दी ने अन्दर से कहा — पिताजी कलकत्ते आयें तो मुझे खबर देना ....

— क्यों ? आप पिताजी से मिलेंगी ?

लक्ष्मी दी बोली — मैं मिलना चाहूंगी भी तो पिताजी मेरी शक्ल नहीं देखेंगे। यह मैं जानती हूं।

अचानक दीपंकर ने पलटकर देखा। कहा — लक्ष्मी दी ....

— क्या ?

— मिस्टर दातार को कितने रुपये देने हैं ?

लक्ष्मी दी बोली — यह क्यों पूछ रहा है ? तू देगा ? वह बड़ी रकम है रे। उतनी रकम तू कहाँ से लायेगा ?

— फिर भी बताइए न।

— करीब पांच-छः हजार रुपये। छः हजार रुपये दे देने पर सब ठीक हो जायेगा। फिर तेरा मिस्टर दातार कारोबार शुरू कर सकेगा। असल में उसका कोई दोष नहीं है, मेरे कारण वह कारोबार में मन नहीं लगा सका। फिर जानता है न, बाजार बड़ा खराब चल रहा है। लेकिन यह सब तू कैसे जानेगा ?

छः हजार रुपये !

दीपंकर ने मन ही मन रुपये का अंक दोहराया !

जैसा था वह आदमी । आज वही खाकी कोट-पैंट पहने दौड़ रहा है ।

चारों तरफ से पुलिस वाले आ गये । पुलिस की गाड़ियाँ आ गयीं । पुलिसवालों से वह इलाका भर गया । आते ही पुलिसवालों ने लाठी तानकर आसपास के लोगों को दौड़ाना शुरू किया । लोग चारों तरफ भागने लगे ।

दीपंकर दौड़कर बायीं तरफ की गली में घुसा ।

अचानक किसी ने दीपंकर का हाथ पकड़कर खींचा । पलटकर देखते ही दीपंकर आश्चर्य-चकित हो गया ।

— किरण ! तू ?

— जल्दी भाग .... जल्दी ....

— वहाँ क्या हुआ है ? किसने बम फेंका ....

दौड़ते-दौड़ते किरण ने कहा — टेगर्ट साहब मारा गया है । भाग ....

— टेगर्ट साहब ? पुलिस कमिश्नर ? वही जो खाकी कोट-पैंट पहने था ? अरे वह तो धोती-कुर्ता पहनकर उस दिन तेरे मकान के सामने घूम रहा था !

— चुप !

याद है, दौड़ते-दौड़ते उस दिन दोनों एकदम गोलडिग्गी के पास पहुँच गये थे । दीपंकर हाँफने लगा था । उसे बोलने में कष्ट हो रहा था ।

किरण बोला — अब तू घर जा दीपू ! मैं दूसरी जगह जा रहा हूँ । काम है ।

— क्या काम है ?

— बाद में बताऊँगा । भोजू दा आ गया है ।

— भोजू दा !

किरण बोला — कल शाम को घर पर रहना, तुझे भोजू दा के पास ले चलूंगा । अभी घर जा ।

• • •

दूसरे दिन सवेरे मधुसूदन के चबूतरे पर भारी जमावड़ा शुरू हो गया । दूनी पाचा आया है, मधुसूदन का बड़ा भाई है, पंचू दा और दूसरे सभी आ गये हैं । सब [illegible] है ।

लगी तेरी ?

इन सब प्रश्नों से बचकर मकान के पास आते ही दीपंकर को याद सती शायद घर में होगी। सती चाहे तो रुपया दे सकती है। सती अगर च पिताजी से मांगते ही रुपया पा जायेगी। उन लोगों के लिए छः हजार रुपये क्या कुछ भी नहीं। छः हजार रुपये मिल जाने पर मिस्टर दातार फिर कारोबार शुरू सकेंगे। लक्ष्मी दी फिर सुखी होंगी, फिर इज्जत के साथ सिर ऊंचा कर खड़ी सकेंगी।

— चाची जी !

चाची जी पास ही थीं। बोलीं — कौन ? दीपू ? चाचाजी तो घर में नह हैं....

— कहां गये हैं ?

— घर आकर फिर गये हैं। दफ्तर का काम है। लौटने में देर होगी।

जरा रुककर चाची बोलीं — आज तुम्हारी माँ ने चाचाजी से सब कहा है। उन्होंने कहा है कि दीपू के लिए नौकरी का इन्तजाम करूँगा....

असली बात पूछने में न जाने क्यों दीपंकर को संकोच होने लगा। फिर भी वह बोला — चाची जी, लक्ष्मी दी के पिताजी के आने की बात थी, वे नहीं आयेंगे ?

चाचीजी बोलीं — अभी वे नहीं आयेंगे, उनकी तबीयत ज्यादा खराब है....

— तबीयत खराब है ? लक्ष्मी दी की बात सुनकर तबीयत खराब हो गयी होगी ?

चाचीजी बोलीं — हाँ, सती जा रही है।

— सती जा रही है ? वर्मा ? सती अब यहां नहीं पढ़ेगी ?

चाचीजी अपने काम में व्यस्त हो गयीं। दीपंकर ने पूछा — सती कहाँ है चाचीजी ?

— ऊपर है। उसका मन बड़ा दुःखी है। ऊपर जाओ....

दीपंकर जल्दी-जल्दी सीढ़ी से ऊपर गया। सती चली जायेगी। सचमुच उस दिन उसे उस बात पर विश्वास नहीं हुआ था। भुवनेश्वर बाबू के कलकत्ते आने की बात थी, लेकिन अचानक क्या हो गया ? दीपंकर के दिमाग के भीतर मानो सब गड़बड़ा गया। लक्ष्मी दी के संकट के समय सती चली जायेगी ? फिर रुपये का इन्तजाम कैसे होगा ? रुपये का इन्तजाम न हुआ तो मिस्टर दातार को जेल जाना पड़ेगा।

सती दरवाजे की तरफ पीठ किये उस समय ट्रंक खोलकर न जाने क्या कर रही थी। जूते की आहट होते ही वह मुड़ी।

दीपंकर ने पूछा — क्या तुम चली जाओगी ? चाचीजी कह रही थीं। सच ?

सती बोली — हां।

— कब ?

—जवाब नहीं है ? अपना मन उदास है या नहीं, यह भी नहीं सकती ?

सती मानो चिढ़ गयी। बोली—पता नहीं क्यों मुझे परेशान कर रहे हो ? अभी तुम जाओ तो—जाओ यहाँ से ....

दीपंकर बोला—क्या मेरे चले जाने से तुम्हारा मन ठीक हो जायेगा ?

—यह मैं नहीं कह रही हूँ, अभी मुझे बहुत-से काम करने हैं। कुछ अच्छा नहीं लग रहा है।

—लेकिन क्यों नहीं अच्छा लग रहा है, यह तो बताओगी ?

सती बोली—सब कुछ तुमसे कहना पड़ेगा, क्या ऐसा कोई करार है ? क्या किसी का मन उदास नहीं हो सकता ? मेरा मन उदास है तो तुमसे मतलब ?

—अरे, कहाँ की बात कहाँ ले गयी ? मैंने यह सब कब कहा ? मैं तो आया था तुमसे सलाह करने—मैं अकेला कोई निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ, इसलिए तुमसे पूछने चला आया ....

—किस बात की सलाह ?

दीपंकर बोला—तुम्हारे पिताजी आ जाते तो ठीक रहता। लेकिन वे जब नहीं आयेंगे तब तुम्हीं मेरी मदद कर सकती हो। मैं अपने लिए नहीं, किसी और के लिए कह रहा हूँ ....

—कौन ? किसके लिए कह रहे हो ? कैसी मदद ?

दीपंकर बोला—रुपये की।

—रुपये की ?

—हाँ, कुछ रुपये देकर मदद करनी होगी।

—किसकी ?

दीपंकर बोला—याद है ? जिस दिन तुम पहली बार कलकत्ते आयी थी, उस दिन मुझे घर का नौकर समझकर चार पैसे देने लगी थीं ? तुमसे कोई गलती नहीं हुई थी। लेकिन उस दिन मेरे मन में बड़ा दुःख हुआ था। रात को मैं ठीक से सो न सका था। मन में जरा-सा कष्ट होते ही मुझे नींद नहीं आती, लेकिन ....

—लेकिन वह सब तुम्हें अब भी याद है क्या ?

—मन का क्या कुसूर है बताओ न, वह तो बेचारा बड़ा निरीह है, लेकिन शरीर होने पर भी उसे बहुत कुछ अच्छा लगता है और बहुत कुछ नहीं।

सती अब सीधी खड़ी हो गयी। बोली—उतनी पुरानी बातें मुझे याद नहीं। उसके बाद कितना कुछ बदल गया, मैं भी अब वह न रही और तुम भी क्या अब हो ?

—मैं वही हूँ सती ! नहीं तो वे सब बातें मुझे क्यों याद हैं ? सिर्फ देखने में बदल रहा हूँ, आज लक्ष्मी दी यहाँ होती तो वे तुमसे कहतीं कि मैं वैसा ही हूँ या

सती खड़ी थी, अब कुर्सी पर बैठ गयी। उसने आँखें नीचीं कर
आखिर तुमने रुपया माँगा ही ?

दीपंकर उसके पास जाकर खड़ा हो गया। बोला — क्या मैंने रुपया
गलती की ?

— नहीं की ?

— क्यों की ? नौकरी माँगने पर गलती नहीं होती, गहने माँगने पर
नहीं होती, स्नेह, प्रेम, प्यार माँगने पर भी गलती नहीं होती, लेकिन मा
रुपया ....

सती ने उसे रोक दिया। कहा — बस करो !

दीपंकर बोला — क्यों बस करूँ ? रुपया भी तो माँगने लायक चीज है। माँ
माँगकर ही तो अघोर नाना ने इतना रुपया इकट्ठा कर लिया है। कोई माँगकर रुपया
लेता है, कोई कुछ बेचकर रुपया लेता है — बात एक ही है। फिर तुमसे माँगने में
क्या शर्म है ?

सती बोली — यही तो मैं सोच रही हूँ कि तुम कुछ और नहीं माँग सके ?

— और क्या माँगूं बताओ ? तुम न बताओगी तो मैं कैसे समझ पाऊँगा ?

सती कुर्सी से उठी। वह फिर हँसी। अब उसका हँसना रोना जैसा लगा।
उसका चेहरा बड़ा करुण दिखाई पड़ा। वह बोली — अब तुम मुझे न समझाओ दीपू
अभी तुम जाओ। अपने घर जाओ तो ....

दीपंकर मानो समझ नहीं पाया। बोला — घर जाऊँ ?

— हाँ, घर जाओ। अब तुम्हें कुछ समझना नहीं है, समझने की कोशिश
न करो ....

दीपंकर सती के व्यवहार से आश्चर्य में पड़ गया। अब तक जो लड़की बड़े
ढंग से बात कर रही थी, एकाएक ऐसी क्यों हो गयी ?

दीपंकर बोला — तुम रुपया दोगी न ?

सती बोली — अब तुम मुझे ज्यादा परेशान न करो दीपू, जाओ ....

इतनी देर बाद मानो दीपंकर को चोट लगी। उसने कहा — अब तो कहोगी,
जाओ — रुपया माँगने पर सभी ऐसे ही दुरदुराते हैं। समझ गया कि दुनिया में रुपया
ही सब कुछ है। सिर्फ अघोर नाना अकेले बदनाम होते हैं।

सती ने नीचे दीपंकर की तरफ देखा।

वह देर तक एकटक देखती रही।

फिर बोली — मुझसे रुपये मिलने पर तुम्हें सब कुछ मिल जायेगा ?

सती की शक्ल देखकर दीपंकर डर गया ! लेकिन डरने से काम नहीं चलेगा।
...नों दी को रुपये की बड़ी जरूरत है। रुपये न मिलने पर मिस्टर दातार को जेल
...ना पड़ेगा।

— हाँ जाओ, अब फिर कभी तुम मेरे पास मत आना। जाओ। दीपंकर फिर भी वेवकूफ की तरह वहाँ खड़ा रहा।

— तुम्हारे पाँवों पड़ती हूँ दीपू, तुम जाओ। जाओ तुम। मेरी आँखों से तुम हट जाओ।

दीपंकर धीरे-धीरे कमरे से निकल आया। वह एकदम निश्चित न हो... फिर भी सती ने जब कहा है, तब रुपया जरूर देगी। लेकिन थोड़ा पहले मिल... तो ठीक रहता। लक्ष्मी दी के पास बस दो चूड़ियाँ हैं, उससे कितने दिन च... अगर अंत तक सती रुपया न भेजे तो ? तब तो सर्वनाश हो जायेगा ! मिस्टर दाता... जेल जाना पड़ेगा। तब लक्ष्मी दी कहाँ रहेगी ? तब लक्ष्मी दी का वह अपमान, लज्जा कौन छिपायेगा ?

सीढ़ी से नीचे उतरते ही चाचीजी ने पूछा — क्यों दीपू, सती बहुत उदास न ?

दीपंकर बोला — हाँ चाचीजी, बहुत उदास है, मुझसे ठीक से बोली नहीं... कमरे से भगा दिया ....

चाचीजी बोलीं — इसलिए मैं भी उसके सामने नहीं जा रही हूँ। चिट्ठी आने के बाद से न जाने वह कैसी हो गयी है।

— कब जा रही सती है ? कुछ तय हुआ है ?

— मंगलवार को जा रही है।

दीपंकर ने मन ही मन हिसाब लगाया, फिर कहा — अभी कई दिन हैं ! और पहले नहीं जा सकती ?

चाचाजी बोलीं — क्यों ? और पहले क्या करेगी ? अभी तो उस दिन आयी, बेचारी और अब चली जा रही है, बताओ किसको अच्छा लगता है ? असल में कल-कत्ता उसे अच्छा लगा था। वह यहीं रहकर पढ़ना चाहती थी।

दीपंकर बोला — नहीं चाचीजी, उसके पिताजी बीमार हैं, अकेले हैं, उसे वहाँ जल्दी जाना चाहिए।

चाचीजी दीपंकर की बात ठीक से समझ न सकीं, फिर भी बोलीं — हाँ, जाना तो चाहिए, लेकिन अभी तो वह छोटी है, वहाँ अकेली रहने में उसका मन नहीं लगेगा। वह जगह तो कलकत्ते की तरह नहीं है। वह तो वन-जंगल का देश है, बस लकड़ी और आरा मशीन। मैं तो वहाँ थी, मेरा सब देखा हुआ है।

जरा रुककर बोलीं — फिर दोनों बहनें यहाँ एक साथ पढ़ती थीं, रहती थीं, लक्ष्मी के लिए वह यहाँ आयी, लेकिन लक्ष्मी ही चली गयी ....

— अच्छा चाचीजी, मान लीजिए, लक्ष्मी दी बहुत तकलीफ में हैं, उनके पास [illegible]गा नहीं है, बीमार हैं। ऐसी हालत में अगर वे पिताजी को चिट्ठी लिखती हैं तो [illegible]का पिताजी उनको रुपया नहीं भेजेंगे ?

—हाँ जाओ, अब फिर कभी तुम मेरे पास मत आना। जाओ।

दीपंकर फिर भी बेवकूफ की तरह वहाँ खड़ा रहा।

—तुम्हारे पाँवों पड़ती हूँ दीपू, तुम जाओ। जाओ तुम। मेरी आँखों के सामने से तुम हट जाओ।

दीपंकर धीरे-धीरे कमरे से निकल आया। वह एकदम निश्चिन्त न हो सका। फिर भी सती ने जब कहा है, तब रुपया जरूर देगी। लेकिन थोड़ा पहले मिल जाता तो ठीक रहता। लक्ष्मी दी के पास बस दो चूड़ियाँ हैं, उससे कितने दिन चलेगा? अगर अंत तक सती रुपया न भेजे तो? तब तो सर्वनाश हो जायेगा! मिस्टर दातार को जेल जाना पड़ेगा। तब लक्ष्मी दी कहाँ रहेगी? तब लक्ष्मी दी का वह अपमान, वह लज्जा कौन छिपायेगा?

सीढ़ी से नीचे उतरते ही चाचीजी ने पूछा—क्यों दीपू, सती बहुत उदास है न?

दीपंकर बोला—हाँ चाचीजी, बहुत उदास है, मुझसे ठीक से बोली नहीं.... कमरे से भगा दिया....

चाचीजी बोली—इसलिए मैं भी उसके सामने नहीं जा रही हूँ। चिट्ठी आने के बाद से न जाने वह कैसी हो गयी है।

—कब जा रही सती है? कुछ तय हुआ है?

—मंगलवार को जा रही है।

दीपंकर ने मन ही मन हिसाब लगाया, फिर कहा—अभी कई दिन हैं! और पहले नहीं जा सकती?

चाचाजी बोलीं—क्यों? और पहले क्या करेगी? अभी तो उस दिन आयी, बेचारी और अब चली जा रही है, बताओ किसको अच्छा लगता है? असल में कलकत्ता उसे अच्छा लगा था। वह यहीं रहकर पढ़ना चाहती थी।

दीपंकर बोला—नहीं चाचीजी, उसके पिताजी बीमार हैं, अकेले हैं, उसे वहाँ जल्दी जाना चाहिए।

चाचीजी दीपंकर की बात ठीक से समझ न सकीं, फिर भी बोलीं—हाँ, जाना तो चाहिए, लेकिन अभी तो वह छोटी है, वहाँ अकेली रहने में उसका मन नहीं लगेगा। वह जगह तो कलकत्ते की तरह नहीं है। वह तो वन-जंगल का देश है, बस लकड़ी और आग मसान। मैं तो वहाँ थी, मेरा सब देखा हुआ है।

जरा रुककर बोलीं—फिर दोनों बहनें यहाँ एक साथ पढ़ती थीं, रहती थीं, लक्ष्मी के लिए वह यहाँ आयी, लेकिन लक्ष्मी ही चली गयी....

—अच्छा चाचीजी, मान लीजिए, लक्ष्मी दी बहुत तकलीफ में हैं, उनके पास पैसा नहीं है, बीमार हैं। ऐसी हालत में अगर वे पिताजी को चिट्ठी लिखती हैं तो क्या पिताजी उनको रुपया नहीं भेजेंगे?

पड़ जायेगा। कहीं कोई बात नहीं — एकाएक दीपंकर सेन के नाम छः हजार रुपये आ गये। माँ पूछेगी — ये रुपये तुझे कहाँ से मिले ? किसने तुझे भेजे ? सती ने तुझे रुपये क्यों भेजे ? इतने लोग रहते सती को क्या गरज पड़ी ? फिर हजार लोगों को हजार जवाब दो। तब कहना पड़ जायेगा कि ये रुपये मेरे लिए नहीं, लक्ष्मी के लिए हैं। लक्ष्मी दी कहाँ है ? उसे क्या हुआ है ? फिर तरह-तरह की बातें उठ खड़ी होंगी और तरह-तरह के झमेले होंगे। पचीस रुपये के लिए माँ नृपेन बाबू को घूस नहीं दे पा रही है, पचीस रुपये के लिए उसकी नौकरी नहीं लग रही है और एकाएक छः हजार रुपये आ गये !

दीपंकर फिर सती के घर पहुँचा।

रुपया किरण के पते पर भेजना ठीक रहेगा। फिर कोई जान न सकेगा। डाकिया सीधे किरण के घर रुपया दे जायेगा। किरण को दीपंकर पहले से बता देगा ?

— अरे दीपू बाबू, लौट आये ?

दीपंकर बोला — हाँ चाचाजी, सती से एक बात कहना भूल गया था। सीढ़ी से दीपंकर फिर दूसरी मंजिल के बरामदे में जा खड़ा हुआ। सती को बता देना जरूरी है। नहीं तो वह किस पते पर रुपया भेजेगी। दीपंकर के नाम दीपंकर के घर के पते पर या किरण के नाम किरण के घर के पते पर भेजना बराबर है। डाकिया आते ही किरण बुला लेगा और दीपंकर को रुपया मिल जायेगा। वही ठीक रहेगा ! उन्नीस बटा एक बी ईश्वर गांगुली लेन के बदले तेरह नंबर नेपाल भट्टाचार्य लेन लिखना ठीक रहेगा।

अगर सती पूछे — किरण तुम्हारा रुपया ले ले तो ?

दीपंकर कहेगा — किरण वैसा लड़का नहीं है, उसे तुम नहीं जानतीं। वह साहब का खून कर सकता है, लेकिन लाख मुसीबत में भी दूसरे का रुपया नहीं लेगा, कम से कम अपने लिए तो नहीं ही लेगा। फिर लेगा कैसे ? मनीआर्डर मेरे नाम आयेगा ....

लेकिन सती के कमरे के सामने पहुँचकर दीपंकर सकपका गया।

ट्रंक उसी तरह खुला पड़ा है। सती अपने पलंग पर तकिये में मुँह छिपाये लेटी है। लगा, सती रो रही है। उसका शरीर रुक-रुककर काँप रहा है। क्या उसका मन इतना उदास हो गया कि वह रोने लगी।

पास जाकर दीपंकर ने बुलाया — सती, एक बात कहने आ गया, उस समय कहना भूल गया था।

कहकर दीपंकर जरा रुका। सती ने सिर नहीं उठाया।

दीपंकर ने फिर कहा — रुपया तुम मेरे पते पर मत भेजना। रुपया तुम किस पते पर भेजोगी, सुन लो ....

सती ने फिर भी सिर नहीं उठाया।

दीपंकर कहने लगा — रुपया तो तुम मनीआर्डर से भेजोगी, फिर एक काम

रहता है ?

दीपंकर ने पूछा — आज तुम सती के घर गयी थीं ?

— नौकरी तुम करोगे लेकिन मुझे चैन कहाँ ? कह तो सब से रही हूँ, किसी के जरिये लग जाय तब है। अब तो मुझसे गाड़ी खींची नहीं जाती ....

धीरे-धीरे रात हो गयी। माँ के चेहरे पर धीरे-धीरे थकावट की शिकनें उभरने लगी। माँ को देखकर दीपंकर का मन पसीज गया।

माँ बोली — आज मैं कीर्तन सुनने जाऊँगी, खूब होशियारी से रहना। समझ गये।

दीपंकर बोला — मैं भी जाऊँगा माँ।

— तुम कैसे जाओगे ? क्या रात भर कमरा खाली पड़ा रहेगा ? तुम्हारे लिए क्या मैं धरम-करम भी नहीं कर सकूँगी ? दूसरों की चाकरी करते-करते मैंने परलोक को भी तिलांजलि दे दी है।

खाना खाकर माँ चन्नूनी को साथ लिये निकली। जाते समय माँ विन्ती दी से कह गयी — खूब होशियारी से रहना बिटिया। कमरा बन्द कर लो, मैं देख लूँ ....

विन्ती दी ने कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द किया।

माँ ने बाहर से पूछा — ब्योंड़ा लगा लिया न ?

विन्ती दी बोली — हाँ दीदी ....

माँ बोली — अब बत्ती बुझाकर लेट जाओ — रात को दरवाजा मत खोलना कोई बुलाये भी तो मत खोलना ....

दीपंकर को भी माँ ने बारबार सावधान कर दिया — सदर दरवाजा बन्द कर कमरे को अगड़ी लगाकर सोने की हिदायत दी। छिटे और फोंटा का खाना अपनी जगह रखा है। दीपंकर से बारबार कहा गया कि वह रात को कमरा खुला छोड़कर कहीं न निकले क्योंकि घर में कोई नहीं है।

— चलो चन्नूनी, चलो ....

माँ चली गयी। सदर दरवाजा बंदकर दीपंकर ने अपने कमरे का दरवाजा बंद कर लिया। उसने गाल पर हाथ फेरकर देखा। मानो गाल फूल आया है। थोड़ा दर्द भी महसूस हुआ। अगर वह और रुकता तो सती और मारती। क्यों उस तरह सती बिगड़ गयी, क्या पता, दीपंकर ने कोई गलत काम तो नहीं किया। सती पहले ऐसी नहीं थी। पहले वह और कुछ नहीं तो कम से कम हँसती-बोलती तो थी, कितना अच्छा व्यवहार करती थी। हो सकता है, आज उसका मिजाज ठीक न रहा हो। लक्ष्मी दी के लिए उनका मिजाज पहले से खराब है, फिर अब बर्मा भी जाना होगा। मिजाज खराब होना स्वाभाविक है। फिर दीपंकर ने छः हजार रुपये माँगे। छः हजार कुछ कम रुपये नहीं है ! पता नहीं क्या हो गया ! मानो सब गड्डमड्ड हो गया ! अब नहीं रहा बचपन का वह जीवन। अब दीपंकर को लगता है कि वही अच्छा था।

हमेशा हंसता हुआ चेहरा, सहानुभूति भरी आँखें और देश का काम ! रुपया मिलते ही दीपंकर प्राणमथ बाबू के पांव छूकर प्रणाम करता है। तब तक प्राणमथ बाबू अपने काम में डूब जाते हैं। कलकत्ते के बड़े-बड़े कांग्रेसी नेता उनको घेरे रहते हैं। कभी-कभी मामी जी भी आती हैं। इन सब अच्छे-बुरे चरित्रों के बीच दीपंकर कभी-कभी खो जाता है। उसके मन में सवाल उठता है—कौन-सा रास्ता सही है और कौन-सा गलत। लक्ष्मी दी सही है या मिस्टर दातार, किरण सही है या अघोर नाना, या प्राणमथ बाबू ? कौन ? कौन सबसे सही है ? कौन सबसे गलत है ?

कालीघाट के बाजार से कीर्तन की आवाज आ रही है। दक्षिण दिशा से श्मशान की चिल्लाहट भी आ रही है। कल दिन में जाकर लक्ष्मी दी को खबर देनी है। सती ने कहा है कि रुपया भेजेगी, जाते ही भेजेगी। किरण के पते पर वह मनी-आर्डर भेजेगी। कुछ दिन और इंतजार करना होगा। बस, कुछ ही दिन। उसके बाद मिस्टर दातार को छिपकर रहना नहीं पड़ेगा और लक्ष्मी दी को लेनदारों के डर से दरवाजा बंद नहीं रखना होगा। उसके बाद शाम को किरण आयेगा। किरण का भोजू दा नेपाल से आ गया है। किरण दीपंकर को भोजू दा के पास ले जायेगा।

अचानक लगा कि दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी।

—कौन ?

कोई जवाब नहीं। दीपंकर ने पूछा —कौन है ?

सदर दरवाजा बंद है। इतनी रात को कौन आयेगा ?

—कौन ?

—मैं।

दीपंकर बोला —मैं ? मैं कौन ?

फिर कोई आवाज नहीं। दीपंकर बिस्तर से उठा। अंधेरे में टटोलता हुआ वह गया। फिर उसने दरवाजा खोला।

दरवाजा खोलते ही उसने कहा —सती !

सती उस अंधेरे में सिकुड़ी-सिमटी खड़ी है। शरमायी-सी वह खड़ी है। मानो मजबूर होकर इतनी रात को उसने दीपंकर को जगाया। मानो सती से कोई अपराध हो गया है।

—सती, तुम ? मां तो घर में नहीं है —कीर्तन सुनने गयी है।

सती ने दीपंकर की तरफ देखा। याद है, उस रात सती ने कुछ देर तक सीधे उसकी तरफ देखा था। अंधेरी ऊंघती-सी रात थी। हाजी कासिम के बाग के नारियल के पेड़ के पीछे चांद का टुकड़ा छिप चुका था। दीपंकर को डर लगने लगा था। सती के सामने वह कितनी बार खड़ा हुआ था, लेकिन ऐसा डर कभी नहीं लगा।

दीपंकर बोला —क्या मां से कोई बात थी ?

सती ने सिर हिलाया। कहा —नहीं। तुमसे है।

उसने आँखें बंद कर लीं। सोचा, क्यों इतनी जल्दी नींद खुल जाती है? क्यों रात इतनी जल्दी खत्म हो जाती है? आँखें बंद कर वह जोर-जोर से साँस लेने लगा। काश फिर पाउडर की वही खुशबू मिल जाती।

—दीपू, अरे दीपू! अरे तू कितनी देर तक सोता रहता है? उठ, जल्दी उठ ....

दरवाजा खोलकर बाहर आते ही उस दिन दीपंकर वास्तविक दुनिया के सामने खड़ा हो गया था। रात की दुनिया से इसमें कितना बड़ा अन्तर है! धूप से सारा आँगन चमक रहा है। सामने सती का मकान है। उस मकान की खिड़कियाँ सब बन्द हैं। शायद धूप के कारण बन्द कर दी गयी हों। उस मकान की तरफ देखते ही फिर रातवाला सपना दीपंकर को याद हो आया। शाम वाली घटना भी याद आयी। लक्ष्मी दी की बात याद आयी। सती से छः हजार रुपये माँगने की बात याद आयी। एक ही नींद में मानो दीपंकर एक युग पार कर आया था। मानो वह बहुत बड़ा हो गया था। मानो एक ही रात में वह काफी अनुभवी हो गया है।

माँ बोली—जल्दी तैयार हो लो, आज तुम्हें दफ्तर जाना है न—मैं नौ बजे तक भात बना देती हूँ ....

दीपंकर उस समय भी नहीं जानता था कि उसी दिन उसकी नौकरी लगेगी।

उसने पूछा—लेकिन रुपया? पचीस रुपये तुमने नृपेन बाबू को दे दिये हैं?

माँ बोली—रुपये की बात तुझको नहीं सोचना पड़ेगा, वह मैं सोचूँगी ....

उसके बाद माँ अपने मन में बड़बड़ाने लगी—रेल की नौकरी, रेलगाड़ी में चढ़ने के लिए पैसा नहीं लगेगा, ऐसी नौकरी भी बेटे को पसन्द नहीं। कितने लोग पचास-साठ रुपये देने को तैयार हैं। गरीब विधवा का लड़का समझकर वे इतना कर रहे हैं, लेकिन बेटे को कोई फिकर नहीं है—मानो सारी फिकर मेरी है।

जल्दी-जल्दी दीपंकर ने खाना खा लिया तो माँ ने कहा—चलो, अब मेरे साथ चलो ....

माँ ने साफ कपड़ा पहन लिया था। सीधे अघोर नाना के कमरे में दोनों गये। माँ ने जाकर कहा—पिताजी, आज आपका दीपू नौकरी करने जा रहा है ....

अघोर नाना कुशासन पर बैठे माला फेर रहे थे। बोले—कहाँ है? मुँहजला कहाँ है? कहाँ गया?

दीपंकर ने झटपट आगे बढ़कर अघोर नाना के पाँव छूए और माथा नवाया। कहा—मैं हूँ नाना ....

—नौकरी लगी मुँहजले की? चलो मुँहजला एक ठिकाने लगा। कहकर अघोर नाना ने हाथ से कुछ टटोला। मानो वे दीपंकर को देखना चाह रहे हों।

माँ बोली—आशीर्वाद दीजिए पिताजी, दीपू नौकरी में लगा रहे और साहब लोगों को खुश कर सके।

दीपंकर ने पूछा — क्या माँगेगा ?

— यही पान खाने या चाय पीने के लिए अगर अठन्नी-चवन्नी माँगे तो मेरा नाम बता देना। समझ गये ?

फिर सब कुछ जैसे किसी यांत्रिक नियम से हो गया। एस्टैब्लिशमेंट सेक्शन से अस्पताल — मेडिकल एग्जामिनेशन तक कई बार अपना नाम-पता आदि बताना और लिखाना पड़ा। सबने एक-एक बार पूछा — आप किसके आदमी हैं ?

दीपंकर ने कहा — नृपेन बाबू का। ट्रैफिक आफिस के सुपरवाइजर....

और कुछ कहना न पड़ा। नृपेन बाबू बहुत जल्दी रिटायर हो जायेंगे। बहुत पुराने आदमी हैं! डुग्गी पिटवाकर जब किरानी लाना पड़ता था, उस जमाने के। उस समय कोई भला आदमी रेल के दफ्तर में आता न था। उस दफ्तर में विद्या की जरूरत नहीं थी, बुद्धि न रहने पर भी काम चल जाता था। वहाँ की अंग्रेजी अलग थी, वहाँ के अदब-कायदे अलग थे। कहीं उसकी तुलना नहीं मिलती। उन्नीसवीं सदी के बीचो-बीच पता नहीं कब ये कम्पनियाँ मिट्टी और पत्थर काट-काटकर देश की छाती के आरपार रेल लाइन बिछाकर अच्छा-खासा मुनाफा पक्का करने आयी थीं। उन कम्प-नियों के सफेद चमड़ी वाले कर्मचारियों ने इस देश के लोगों को हाथ पकड़कर काम सिखाया, ककहरा और पहाड़ा रटाया। कब यह सब हुआ, उसका पता किसी अजायबघर में नहीं चलेगा। हाँ, रेल आफिस के रिकार्ड सेक्शन में उसका पता चलेगा। कब किस साहब ने नरकट की कलम से ड्राफ्ट लिखा था, कब किस साहब ने किस फाइल में मोटी पेन्सिल से दुर्बोध्य नोट लिखा था, रेल के दफ्तर में वही चिरस्थायी वेदवाक्य बन गया। रेल के विधान में वही गीता है, गीता की तरह अवश्य पाठ्य और गीता के उपदेश की तरह अवश्य पालनीय। अंग्रेजी ग्रामर के नियम-कानून रेलवे के लिए बड़े उदार हैं। नेस्फील्ड साहब को अगर रेल के दफ्तर में नौकरी करनी पड़ती तो शायद वे आत्मग्लानि से आत्महत्या कर लेते, क्योंकि रेलवे के वैयाकरण खास विलायत के खास रेलवेमैन थे। नेस्फील्ड साहब तो उनके आगे बस अंग्रेजी जानने वाले थे!

पहले पहल दीपंकर घबड़ा जाता था। के० जी० दास बाबू उस समय डी ग्रेड के सुपरवाइजर थे। कहते थे — भई, यह तुम्हारा कलकत्ता यूनिवर्सिटी नहीं है, यह है रेल कम्पनी!

दीपंकर कहता — रेल कम्पनी है तो क्या अंग्रेजी भी अलग हो जायेगी ?

बहस करने पर के० जी० दास बाबू बुरी तरह बिगड़ जाते थे। कहते थे — फिर बहस कर रहे हो ? देख रहे हो कि ऑस्बर्न साहब के अपने हाथ का लिखा ड्राफ्ट है। यह देखो। कहकर दास बाबू फाइल के नीचे से तीस साल पहले का फोलियो निकालकर मिस्टर ऑस्बर्न के देव-हस्त से लिखा ड्राफ्ट दिखा देते। वे बड़े गर्व और गौरव से उस ड्राफ्ट को थोड़ी देर देखते रहते। मानो वे ड्राफ्ट न देखकर दुर्लभ देव-दर्शन कर रहे हों। उसके बाद कहते — तुम लोग थोड़ा अध्ययन तो करोगे नहीं।

काम करते हुए गांगुली बाबू ने एक बार कहा — आप तो बी० ए० पास हैं ? भले घर के लड़के होकर यहाँ क्यों आये ?

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया। बोला — आप क्यों आये ?

— मेरी बात अलग है।

दीपंकर बोला — अलग क्यों ?

गांगुली बाबू बोले — वह किसी दिन बताऊँगा। आपको छुट्टी मिल गयी है, आप घर जाइए।

पहला दिन। नौकरी का पहला दिन दीपंकर को हमेशा याद रहेगा। जैसे याद रहेगा, छिपकर लक्ष्मी दी का नाच देखना। जैसे याद रहेगा, सती का चार पैसे फेंकना। दफ्तर के पूरे माहौल में न जाने कैसी गूँज थी। पुरानी फाइलों और जर्नलों की बू। बू नहीं बदबू। उसके साथ धूल। सौ साल से जम रही धूल। दीपंकर दौड़कर बाहर आ गया। कई गोरखा दरबान वर्दी पहनकर पहरा दे रहे थे। ऐसी तड़क-भड़क के साथ ये किनका पहरा दे रहे हैं ? सफेद चमड़ी वाले साहबों का या उन फाइलों, धूल और खटमलों का ? या उन क्लर्कों का ?

आश्चर्य है ! मात्र एक कागज के बल पर एक क्षण में दीपंकर हजारों-लाखों क्लर्कों में से एक बन गया !

दोपहर का समय। रात वाले सपने की बात फिर याद आयी। सती स्वयं आयी थी। उसने खुद माफी माँगी थी। थप्पड़ लगाने के लिए माफी माँगी थी। दोपहर को उस पिघलते डामर वाली सड़क पर मानो अचानक गहरी रात घिर आयी। एक क्षण में दीपंकर की आँखों के सामने से चिलचिलाती धूप गायब हो गयी। उसे लगा कि दक्षिण पवन के साथ सती के बदन के पाउडर की खुशबू बहकर आयी है !

मोड़ पर अचानक चिल्लाहट से दीपंकर होश में आया।

— धरमतल्ला, बहूबाजार, स्यालदा, श्याम बाजार ....

दीपंकर चिल्लाया — रोक के, रोक के।

जरा देर होती तो बस छूट जाती। दौड़कर दीपंकर बस में चढ़ा और अंदर जाकर बैठ गया। अब तक याद ही न था। आज पूरा दिन न जाने कैसा बुरा बीता ! वही नृपेन बाबू, नृपेन बाबू के उपदेश और के० जी० दास बाबू के ड्राफ्ट्स, बस्ते में गन्दी फाइलें और जर्नल ! स्कूल-कालेज भी कभी इतना बुरा नहीं लगा। टूटा-फूटा धर्मदास ट्रस्ट मॉडल स्कूल, कालीघाट हाई स्कूल, साउथ सबर्बन कालेज — किसी का मकान अच्छा नहीं है। वहाँ भी लक्ष्मण सरकार था, फटिक था, कालेज में भी ऐसे कितने लड़के थे। वे हाजरा पार्क में बैठे पश्चिम तरफ के मकानों की तरफ देखकर तरह-तरह की टिप्पणियाँ करते थे, सिगरेट और बीड़ी पीते थे। चार वर्ष के कालेज जीवन में दीपंकर किसी का घनिष्ठ न बन सका था। धर्मदास मॉडल स्कूल के बाद वह किसी भी विद्यालय से प्यार न कर सका था।

ईश्वर हैं, यही विश्वास होने पर सब झंझट खत्म ! मैंने ही सब किया है ....

अमल बाबू बोले — मैं इतिहास पढ़ाता हूँ, इतिहास का भी एक पहलू है, बड़ा इम्पॉर्टेण्ट पहलू, वही सुनो ....

उसके बहुत बाद की बात है। सन् १९०५ ई० की बात है। एक दिन कई हज़ार लोग एक देश के राजा के महल के सामने प्रार्थना लेकर पहुँचे। फाटक के सामने बंदूक लेकर सिपाही-संतरी पहरा दे रहे थे। उन लोगों ने पूछा — क्या चाहिए ?

लोगों ने कहा — राजा को हम एक प्रार्थनापत्र देना चाहते हैं ....

वे राजा के पास प्रार्थनापत्र ले गये। बड़ा ही विनीत प्रार्थनापत्र। उसमें लिखा था ....

"We come to thee Sire, to seek truth and redress. We have been oppressed, we are not recognised as human beings, we are treated as slaves, who must suffer their bitter fate and keep silence. The limit of patience has arrived. Sire, is this in accordance with the divine law, by grace of which thou reignest ? Is it not better to die, better for all the the toiling people, and let the capitalist, the exploiters of the working class live ? Do not refuse assistance to thy people. Destroy the wall between thyself and thy people and let them rule the country with thyself."

उसके थोड़ी देर बाद, बिना चेतावनी दिये ऊपर के बरामदे से उन लोगों पर गोलियाँ बरसायी जाने लगीं। गोलियाँ बरसती गयीं। उन हज़ारों निरीह लोगों पर न जाने कितनी गोलियाँ चलायी गयीं। हज़ारों लोग मरे और उतने ही घायल होकर कराहने और छटपटाने लगे।

फिर मजे की बात यह है कि उसके ठीक बारह साल बाद ठीक उसी बरामदे में १९१७ ई० में एक दूसरे आदमी ने हज़ारों लोगों के सामने खड़े होकर कहा — Comrades ! Feeding people is a simple task. We will take from the rich and give to the poor. Take milk from the rich and give to the children of the workers. He who does not work shall not eat. Workers receive cards. Cards bring food.

पहले बरामदे में खड़े होकर जिन्होंने गोलियाँ चलवायी थीं, वे थे रूस के ज़ार और बाद में जिन्होंने लोगों को संबोधित किया, वे थे लेनिन।

अमल बाबू ने और भी बहुत कुछ कहा था, लेकिन दीपंकर ठीक से समझ नहीं पाया था। समय भी अधिक नहीं था। क्लास का घंटा बजते ही अमल बाबू चले गये थे। वे जाते समय बोले थे — बाद में इस बारे में और बहुत-सी बातें बताऊँगा ....

दीपंकर धीरे-धीरे विस्तर के पास गया। वह कुछ देर खड़ा इं... लगा। लेकिन लक्ष्मी दी ने कुछ नहीं कहा।

धीरे-धीरे दीपंकर ने बुलाया — लक्ष्मी दी।

— क्या ?

— क्या हुआ है ? तबीयत ठीक नहीं है ? बुखार आया है ?

लक्ष्मी दी के गोरे माथे पर हाथ रखते ही दीपंकर चौंका। बोला — आपको तेज बुखार है ! अब क्या होगा ?

लक्ष्मी दी लेटी-लेटी ओफ-आह करती रही। उसने कोई जवाब नहीं दिया। दीपंकर बोला — यह तो बड़ी गड़बड़ हो गयी। इस तरह बुखार लिये आप यहीं पड़ी रहेंगी ? क्या होगा ? कौन देखेगा ?

— मेरा सिर जरा दबा दे दीपू ....

दीपंकर तखत पर बैठा लक्ष्मी दी का सिर दबाने लगा।

मानो लक्ष्मी दी को बड़ा आराम लगने लगा। आँखें बंद कर उसने कहा — आह ! बड़ा आराम लग रहा है —

देर तक दोनों हाथों से दीपंकर लक्ष्मी दी का सिर दबाता रहा। लक्ष्मी दी आँखें बंद कर पड़ी रही। थोड़ी देर बाद दीपंकर ने पूछा — मिस्टर दातार नहीं आये लक्ष्मी दी ?

लक्ष्मी दी बोली — आया था, कल काफी रात को ....

— तुम्हारी तबीयत खराब है, उनको मालूम है ?

— हाँ, देखा है। तभी बुखार आया था।

— लेकिन आपको इस हालत में छोड़कर भी वे चले गये ? कैसी उनकी अक्ल है ?:आज भी आयेंगे न ?

— मालूम नहीं। वह बेचारा भी क्या करेगा बता ?

दीपंकर बोला — वाह, गलती तो मिस्टर दातार की है। आप तो औरत हैं। आपको बुखार की हालत में छोड़कर वे चले गये ! मैं होता तो भले ही जेल जाना पड़ता या पुलिस पकड़ ले जाती, मैं आपको छोड़कर हटता नहीं। आप बीमार हैं और उनको पुलिस का डर सताने लगा ....

लक्ष्मी दी के मुँह से सिर्फ एक आवाज निकली — छिः !

— आप छिः कह रही हैं, लेकिन अब मैं क्या करूँ ? डाक्टर, दवा, यह सब ...ने क्या किया जाय ? कौन रुपया दे ?

लक्ष्मी दी रोने लगी। आँखों से आँसू बहने लगे। यह देखकर दीपंकर चुप ... गया। बोला — अब मैं मिस्टर दातार के बारे में कुछ न कहूँगा लक्ष्मी दी, आप ... रोइए। लेकिन अब मैं क्या करूँ बताइए ?

— तुम्हें कुछ नहीं करना पड़ेगा, तू जहाँ रहता है, वहीं जा। ...

आपकी वहन भी तो सीधी नहीं है। आपके बारे में शक किया, लेकिन उन लोगों का ख्याल है कि आप कलकत्ते में नहीं हैं। इधर मेरे लिए भी कठिनाई हो गयी है। अब मैं दिन में नहीं आ सकूँगा, नौकरी लग गयी है न ....

—लग गयी है ?

—हाँ, तैंतीस रुपये की नौकरी। वहीं से तो आ रहा हूँ, बड़ी खराब नौकरी है, इसीलिए तो सवेरे से मिजाज ठीक नहीं है। एक तो नौकरी की झंझट फिर आपको बुखार हो गया, अब बताइए क्या करूँ ?

दीपंकर और पास आया। बोला—देखूँ, अभी बुखार कैसा है ?

माथे पर हाथ रखकर दीपंकर ने देखा। बुखार थोड़ा कम लगा। बोला—कुछ कम लग रहा है, लेकिन रात को अगर बढ़ जाय ?

इतनी देर बाद लक्ष्मी दी के हाथ की तरफ नजर गयी। बोला—लक्ष्मी दी, आपकी चूड़ी ?

अचानक बाहर कुंडी खटखटाने की आवाज होते ही लक्ष्मी दी बोली—हाँ, शंभु आया है, दरवाजा खोल दे ....

आश्चर्य है! दीपंकर विस्मित हुआ। लक्ष्मी दी कैसे समझ गयी! चटपट दरवाजा खोलते ही मिस्टर दातार अन्दर आये। लक्ष्मी दी बोली—तुम ? इस समय ?

दीपंकर हक्का-बक्का खड़ा रहा। मिस्टर दातार सीधे कमरे में आये। एक बार उन्होंने दीपंकर की तरफ देखा। फिर वे लक्ष्मी दी की तरफ बढ़े। बोले—तुम कैसी हो ?

लक्ष्मी दी बोली—तुम क्यों आये ? किसी ने देखा तो नहीं ?

मिस्टर दातार ने एक बार दीपंकर को तरफ देखा। कहा—दीपू बाबू, कब आये ?

दीपंकर बोला—आपने तो मुझसे कहा नहीं कि लक्ष्मी दी यहाँ हैं ? आपकी शकल कैसी हो गयी है ?

सुनकर मिस्टर दातार मुस्कराये। दीपंकर को कोट-पतलून पहने पहले के मिस्टर दातार याद आये। अब बड़ी-बड़ी डाढ़ी निकल आयी है। बहुत दुबला लग रहे हैं। गले की नसें उभर आयी हैं। चेहरे पर तंगी और बेचैनी की छाप साफ झलक रही है। ऐसा तो नहीं होना चाहिए।

लक्ष्मी दी बोली—कोई इन्तजाम हुआ ? कोई खबर मिली ?

मिस्टर दातार बोले—तुम घबड़ाओ नहीं, दो-एक दिन में कोई-न-कोई इंतजाम हो जायेगा। मैं एक-एक कर पार्टियों से मिलने की कोशिश कर रहा हूँ। बम्बई में पुरानी पार्टियों को चिट्ठियाँ लिखी हैं।

दीपंकर को याद है, मिस्टर दातार उस दिन न जाने क्यों बड़े बेचैन लग रहे थे। जो आदमी बर्मा में बड़ा कारोबार करता था और सफलता के शिखर

बड़ा सर्वनाश किया है ! अब आप घर नहीं जा सकतीं, यहाँ भी नहीं रह सकतीं। अब आप लोग क्या करेंगे ?

इसके उत्तर में दोनों चुप रहे। दीपंकर दोनों के बीच खड़े होकर बोला — बताइए न, आप लोग क्या करेंगे ? मैं सुनकर जाना चाहता हूँ।

लक्ष्मी दी कुछ कहने जा रही थी, लेकिन मिस्टर दातार ने उसे रोक दिया और कहा — एक दिन मैंने तुम लोगों को उपदेश दिया था, आश्वासन दिया था, लेकिन आज मैं मान रहा हूँ कि मुझसे भूल हुई है।

— लेकिन भूल हुई है, कहने से क्या सब खत्म हो जाता है ? कोई उपाय तो करना होगा न ? आप तो जानते हैं कि लक्ष्मी दी बड़े घर की बेटी हैं, प्यार और आराम में पली हैं, अब आपके कारण उनका यह सर्वनाश हुआ।

मिस्टर दातार के होंठों पर उदास हँसी थी। बोले — सर्वनाश क्या सिर्फ हमीं लोगों का हुआ है ? सारे संसार का सर्वनाश हो गया है, तुम इसकी खबर रखते हो ? जानते हो, अमेरिका में पाँच हजार बैंक बंद हो गये हैं, इंगलैंड में पाँच लाख लोग बेकार हुए हैं। इटली में लड़कों को काम नहीं मिल रहा है और वे मारे-मारे फिर रहे हैं ....

थोड़ी देर के लिए दीपंकर कोई जवाब नहीं दे पाया।

लक्ष्मी दी ने सान्त्वना देने के स्वर में कहा — तुम उसकी बात पर ध्यान मत दो, अभी वह बच्चा है, उसकी बातों का बुरा मत मानो। दीपू, अभी तू जा ....

दीपंकर बोला — अभी आप लोग क्या करेंगे, यह क्यों नहीं बताते ?

लक्ष्मी दी बोली — मरेंगे, हम भूखों मरेंगे, तेरा क्या ? तू जानकर क्या करेगा ?

मिस्टर दातार बोले — नहीं, नहीं, दीपू सुनो, मैं भी सोच रहा हूँ कि क्या किया जाय, ऐसा संकट तो इस जीवन में नया नहीं है। संकट के लिए मैं हमेशा तैयार रहा हूँ। तुम्हारे सामने भी लंबा जीवन पड़ा है, तुम पर भी अनेक संकट आयेंगे। मैं रुपये के लिए कोशिश कर रहा हूँ। रुपये का इंतजाम होते ही यह संकट टल जायेगा। तुम्हारी लक्ष्मी दी के लिए मैं कम परेशान नहीं रहता। मैं तुम्हारी लक्ष्मी दी को किसी तरह की तकलीफ नहीं होने दूँगा।

दीपंकर बोला — मैं भी तो रुपये की बात कहने आया था ....

— रुपये ? तुम रुपया दोगे ?

दीपंकर बोला — दूँगा ! मेरे पास रुपया नहीं है, लेकिन मैंने लक्ष्मी दी के लिए हर तरह से कोशिश की है और कुछ समय लगेगा। सती बर्मा जा रही है, वहाँ से वह रुपया भेज देगी ....

लक्ष्मी दी बोली — सती कब बर्मा जा रही है ?

— मंगलवार को। मैंने आपके बारे में कुछ नहीं कहा — सिर्फ कहा है कि

क्या हर कोई सीधे लक्ष्मी दी के सामने आ धमकेगा ? ये लोग तो नहीं जानते कि लक्ष्मी दी कितने बड़े आदमी की बेटी है। कितने प्यार और आराम में वह पली है! आज वह मुसीबत में पड़ी है तो क्या हर कोई दया दिखाने चला आयेगा ? अगर इतनी दया है तो छः हजार रुपये क्यों नहीं दे देता ? दीपंकर जिस तरह कोशिश कर रहा है, उसी तरह कोशिश करे। सब तो दीपंकर से ज्यादा दयावान हैं, हैसियत वाले हैं, उम्र में बड़े हैं और बड़ी नौकरी करते हैं, फिर क्यों नहीं मुसीबत में लक्ष्मी दी की मदद करते ? यह तो नहीं होगा, मौके-बेमौके कमरे में घुसकर बड़बड़ायेंगे ! हर महीने मकान का किराया ही क्यों नहीं दे देते ?

— मैं जा रहा हूँ लक्ष्मी दी।

— जा।

सड़क पर निकलकर भी दीपंकर को कुछ अच्छा नहीं लगा। वह और कुछ देर लक्ष्मी दी के पास रहता तो अच्छा होता। उसका मन करने लगा कि फिर लक्ष्मी दी का सिर दबाऊँ। लेकिन मिस्टर दातार के आने के बाद उसे अच्छा नहीं लगा। मिस्टर दातार लक्ष्मी दी के पास क्यों आते हैं ? यहाँ न आकर यदि वे रुपये का इन्तजाम कर तो उससे फिर भी कुछ काम होता। सब बुरे हैं ! मिस्टर दातार सचमुच आदमी ठीक नहीं हैं। उनमें जरा भी अकल नहीं है। दीपंकर की आँखों के आगे डलहौजी स्क्वायर अँधेरा लगने लगा। लेकिन कल बड़ा अच्छा लग रहा था।

वही कोइड स्ट्रीट। कोइड स्ट्रीट से ही टेगर्ट साहब की गाड़ी आ रही थी, तभी बम फटा था। उस जगह पर उस समय भी कई पुलिस वाले खड़े हैं। आज सवेरे से दीपंकर को बुरा लग रहा है। दफ्तर जाने के बाद से ही। वही के० जी० दास बाबू और जर्नल सेक्शन। याद आते ही दिमाग खराब होने लगता है। लगता है, कितनी बड़ी दुनिया है लेकिन उस दुनिया से उसका सदा के लिए निर्वासन हो चुका है।

घर के पास आते ही दूर से दुनी चाचा ने बुलाया — अरे दीपू, सुन — क्यों रे, आज से तेरी नौकरी लग गयी ?

दीपंकर ने पास जाकर कहा — हाँ दुनी चाचा !

— बहुत अच्छा, बहुत अच्छा — अब तेरी बुद्धि सही रास्ते पर आ गयी, यह बड़ा अच्छा हुआ। अब से एक काम करना, समझ गया ....

— क्या ?

दुनी चाचा बोला — अगर नौकरी में तरक्की चाहता है, तो रोज एक काम करना। दफ्तर जाकर अपने साहब को आया को जरूर सलाम करना ....

पंचा दा ने पूछा — क्यों ?

— अरे, हमारे दफ्तर में क्या हुआ, हमारे सुपरिटेंडेंट हॉवर्न साहब विलायत

इरविन वाइसराय बनकर दिल्ली आये। उसी समय लाहौर में सुभाष बोस के गुट वालों ने २६ जनवरी को 'गणतन्त्र दिवस' की घोषणा की। उसी समय गाँधीजी ने गैरकानूनी नमक बनाने के लिए मार्च करना शुरू किया। सब जेल गये। सत्याग्रहियों पर लाठियाँ बरसीं। अखबारों में खबरें छपना बन्द हो गया। ठीक उसी समय एक दिन क्लब में साहब-मेमों की खूब भीड़ हुई। डीनर चल रहा है। नाच-गाना और पान-भोजन पूरी रफ्तार में चल रहा है। बाहर देशी पहरेदार चिल्लाया — Halt! Who comes there?

— Friends!

साथ ही साथ एक गोली आकर पहरेदार के सीने में लगी। गोली की आवाज से क्लब में हलचल मच गयी। खबर पाकर डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट विलसन साहब आये। साथ में आये पुलिस सुपर। सार्जेंट मेजर फैरेल खाना खा रहा था, मेम को छोड़कर बाहर आया और उसी दम छाती में गोली लगने से लुढ़क गया। मिसेज फैरेल छोटी बच्ची को साथ लेकर रोती हुई आयी — For God's sake, Don't, don't — फिर उसके बाद दो दिन न टेलीग्राफ रहा न टेलीफोन, न ट्रेन रही न और कुछ। उस दिन कुछ बंगाली लड़कों के लिए भारत का एक छोटा इलाका एकदम स्वतंत्र हो गया। दो दिन की स्वतंत्रता। चटगांव! १९३० में चटगाँव और आयरलैंड में विद्रोह-घोषणा की तारीख भी एक हो गयी। १८ अप्रैल १९३०।

आश्चर्य की बात है कि उसी समय दीपंकर को रेल दफ्तर में नौकरी मिली।

दीपंकर घर में घुसा तो माँ आयी। बोली — इतनी देर हो गयी बेटा?

माँ के हाथ में शायद पूजा के फूल और प्रसाद थे। माँ बोली — हाथ-मुंह धो ले, प्रसाद दूँगी ....

आज प्यार थोड़ा मुखर है और आवभगत जरा ज्यादा। आज दीपंकर को सब कुछ दूसरी तरह का लगा। आज मानो माँ के लिए दीपंकर की कीमत बढ़ गयी है। मानो दीपंकर की तैंतीस रुपये की योग्यता संसार के सामने साबित हो गयी है। अब क्या चाहिए? मनुष्य को इससे ज्यादा और क्या चाहिए?

माँ बोली — अरे, तूने उस मकान की चाचीजी को प्रणाम नहीं किया?

— अभी जाऊँ?

— हाँ, अभी जा। सुनकर वे खुश होंगी।

दीपंकर झटपट उठा। चाचीजी को जरूर प्रणाम करना है। चाचाजी को भी। लेकिन चाचाजी क्या अभी लौटे होंगे? आजकल चाचाजी अक्सर देर करके घर आते हैं। कभी-कभी दोपहर के बाद घर आकर वे कपड़े बदलकर निकल जाते हैं। शायद उनके दफ्तर में बहुत ज्यादा काम आ गया है। और सती? बीती रात का सपना याद आया। आश्चर्य है! बड़ा आश्चर्यजनक था वह सपना। ऐसा सपना भी क्या

सुख-दुःख का साथी मानो कई महीने से बिछुड़ गया है। किरण कितना बड़ा हो गया है। उसके चेहरे पर दाढ़ी-मूंछें आ गयी हैं। गोरा चिकना चेहरा कुछ ही महीनों में कर्कश हो गया है। सिर्फ किरण बिछुड़ा नहीं, मानो उसे लांघकर बहुत ऊपर पहुँच गया है। गली से चलते समय किरण कुछ बोला नहीं। वह सिर्फ इधर-उधर देख रहा था।

दीपंकर बोला — हम कहाँ जा रहे हैं?

किरण बोला — तुझसे तो कहा है, भोजू दा के पास ....

— भोजू दा कहाँ है?

— चल न, मैं ले चल रहा हूँ।

किरण के साथ चलते समय दीपंकर फिर अपने को छोटा महसूस करने लगा। वह तो मामूली आदमी था ही, अब रेल की नौकरी कर लेने के बाद और भी मामूली हो गया है, और भी :मामूली, और भी तुच्छ। सब सुनकर किरण ने दीपंकर को निरुत्साहित नहीं किया। कहा — ठीक है, तू नौकरी कर, नौकरी करने में हर्ज नहीं है, लेकिन गुलामी मत करना ....

— लेकिन नौकरी करना ही तो गुलामी है।

किरण बोला — ऐसा नहीं है। मन ही असल है, मन को स्वतन्त्र रखना ....

चलते-चलते किरण ने बहुत-सी बातें कहीं। शरीर के साथ मन को भी तैयार करना होगा। आयरलैंड में क्या हुआ था, इटली में क्या हुआ था और रूस में क्या हुआ था, किरण ने इन सब के बारे में किताबें दीपंकर को पढ़ायी थीं। हमारे देश में भी वैसा ही करना होगा।

दीपंकर ने एकाएक पूछा — तू टेगर्ट साहब को मारने गया, तुझे डर नहीं लगा?

किरण बोला — साला बहुत परेशान कर रहा था, रोज मेरे मकान के सामने चक्कर लगाता था। उसे खतम किये बिना कोई काम नहीं हो सकता। उस दिन चूक गया, बाल-बाल वह बच निकला, लेकिन अब देख लूंगा ....

— फिर मारने जायेगा?

— चुप!

लगा, कोई शक्की निगाह से उनकी तरफ देख रहा है। रास्ते में हलका अँधेरा है। न जाने किधर से किस गली से, किसके आँगन की बगल से किरण दीपंकर को हाजरा रोड के मोड़ पर ले आया। दीपंकर ये सब रास्ते जानता है। एक दिन इन्हीं रास्तों में वे दोनों घूमा करते थे, लाइब्रेरी के लिए चंदा मांगा करते थे और किरण अनेक बेचा करता था। फिर भी आज ये रास्ते रहस्यमय लगे और इस तरह चलना दीपंकर को दुस्साहसिक लगा। दफ्तर के कारण सवेरे से उसका मन बिगड़ा हो उठा था, अब थोड़ा चंगा लगने लगा। मानो अब भी आशा है। नौकरी करने से इन्सानियत एकदम खतम नहीं हो जाती। नौकरी करके भी बहुत काम

किरण बोला — अभी आ जायेगा ....

दीपंकर फिर बोला — नेपाल से भोजू दा कब आया ?

किरण बोला —नेपाल नहीं, भोजू दा चटगाँव गया था।

— चटगाँव ? इस समय चटगाँव क्यों ? वहाँ तो बड़ी गड़बड़ी है। दिन गोली चल रही है।

किरण बोला — यहाँ भोजू दा को सब काम करना पड़ गया न ! सूर्य दा नागा है। भोजू दा वहाँ से चन्द्रनगर गया था, आज कलकत्ते आया है।

धीरे-धीरे चारों तरफ अँधेरा गहरा हो गया। एक-एक दो-दो करके पार्क बत्तियाँ जलीं। आसपास के मकानों में भी बत्तियाँ जलीं। दीपंकर को लगा कि देशव्यापी इस विद्रोह में उसकी भी भूमिका है। मानो वह भी किरण, भोजू दा, गोपीनाथ साहा, दिनेश मजूमदार आदि के गौरव का हिस्सेदार है। कहाँ किस सात समंदर पार के देश का कोई शासक दीपंकर के देश में अत्याचार कर रहा है और उसके प्रतिवाद का शुभ संकल्प दीपंकर में भी है। मानो वह भी विद्रोहियों में से एक है।

दीपंकर ने फिर पूछा — कब आयेगा भोजू दा ?

सारा पार्क एकाएक मुखर हो उठा। धुंधले अँधेरे ग्रोव में दीपंकर और किरण चुपचाप बैठे हैं। कलकत्ते के अनगिनत लोग अनगिनत कामों में व्यस्त हैं। उन्हीं में कितने लोग अंधेरे में अटूट संकल्प लिये किरण की तरह काम किये जा रहे हैं। घर की गरीबी, बाप की बीमारी और माँ की तकलीफ की ये लोग परवाह नहीं करते।

दीपंकर ने फिर कहा — बड़ी देर हो रही है किरण, कल फिर सवेरे साढ़े दस बजे दफ्तर जाना है ....

— थोड़ा और बैठ न, तेरा दफ्तर भागा नहीं जा रहा है ....

दीपंकर बोला — लेकिन कोई अगर हमें देख ले ?

— देख लेगा तो पकड़ेगा।

बड़ी आसानी से यह कहकर किरण हँसा।

दीपंकर बोला — अगर जेल में बंद कर फाँसी पर लटका दे ?

— दे भी सकता है। पकड़ेगा तो फाँसी जरूर देगा। कई लोगों की जान ली है। फाँसी से डरने पर कैसे चलेगा ? हम दल बाँधकर फाँसी के तख्ते पर चढ़ेंगे तभी न वे साले डरेंगे।

याद है, किरण की बात सुनता हुआ दीपंकर डरने लगा था। खुश भी हो रहा था। कैसे इतना साहस किरण में आया ? कहाँ से उसको इतना साहस मिला। यही किरण एक दिन कितने उत्साह से जनेऊ बेचा करता था और कितना जोश लेकर भाषण सुनने जाता था। जिस दिन आँखों के सामने भूपेन बनर्जी को गोली मारी गयी उस दिन भी किरण के साथ दौड़ता हुआ दीपंकर घर लौटा था। उसके बाद किरण बेचारा मैट्रिक का इम्तहान न दे सका, जेब में पैसा नहीं, खाना नहीं, नींद नहीं [illegible]

किरण बोला — अभी आ जायेगा ....

दीपंकर फिर बोला — नेपाल से भोजू दा कब आया ?

किरण बोला —नेपाल नहीं, भोजू दा चटगाँव गया था ।

— चटगाँव ? इस समय चटगाँव क्यों ? वहाँ तो बड़ी गड़बड़ी है । आये दिन गोली चल रही है ।

किरण बोला — यहाँ भोजू दा को सब काम करना पड़ गया न ! सूर्य दा तो भागा है । भोजू दा वहाँ से चन्द्रनगर गया था, आज कलकत्ते आया है ।

धीरे-धीरे चारों तरफ अँधेरा गहरा हो गया । एक-एक दो-दो करके पार्क की बत्तियाँ जलीं । आसपास के मकानों में भी बत्तियाँ जलीं । दीपंकर को लगा कि देशव्यापी इस विद्रोह में उसकी भी भूमिका है । मानो वह भी किरण, भोजू दा, गोपीनाथ साहा, दिनेश मजूमदार आदि के गौरव का हिस्सेदार है । कहाँ किस सात समंदर पार के देश का कोई शासक दीपंकर के देश में अत्याचार कर रहा है और उसके प्रतिवाद का शुभ संकल्प दीपंकर में भी है । मानो वह भी विद्रोहियों में से एक है ।

दीपंकर ने फिर पूछा — कब आयेगा भोजू दा ?

सारा पार्क एकाएक मुखर हो उठा । धुंधले अँधेरे ग्रोव में दीपंकर और किरण चुपचाप बैठे हैं । कलकत्ते के अनगिनत लोग अनगिनत कामों में व्यस्त हैं । उन्हीं में कितने लोग अंधेरे में अटूट संकल्प लिये किरण की तरह काम किये जा रहे हैं । घर की गरीबी, बाप की बीमारी और माँ की तकलीफ की ये लोग परवाह नहीं करते ।

दीपंकर ने फिर कहा — बड़ी देर हो रही है किरण, कल फिर सबेरे साढ़े दस बजे दफ्तर जाना है ....

— थोड़ा और बैठ न, तेरा दफ्तर भागा नहीं जा रहा है ....

दीपंकर बोला — लेकिन कोई अगर हमें देख ले ?

— देख लेगा तो पकड़ेगा ।

बड़ी आसानी से यह कहकर किरण हंसा ।

दीपंकर बोला — अगर जेल में बंद कर फांसी पर लटका दे ?

— दे भी सकता है । पकड़ेगा तो फांसी जरूर देगा । कई लोगों की जान ली है । फांसी से डरने पर कैसे चलेगा ? हम दल बांधकर फांसी के तख्ते पर चढ़ेंगे तभी न वे साले डरेंगे ।

याद है, किरण की बात सुनता हुआ दीपंकर डरने लगा था । खुश भी हो रहा था । कैसे इतना साहस किरण में आया ? कहाँ से उसको इतना साहस मिला । यही किरण एक दिन कितने उत्साह से जनेऊ बेचा करता था और कितना जोश लेकर भाषण सुनने जाता था । जिस दिन आंखों के सामने भूपेन बनर्जी को गोली मारी गयी उस दिन भी किरण के साथ दौड़ता हुआ दीपंकर घर लौटा था । उसके बाद किरण दोबारा मैट्रिक का इम्तहान न दे सका, जेब में पैसा नहीं, खाना नहीं, नींद नहीं सिर्फ

लड़कों को दिया है।

घर में चाचीजी कहतीं — अभी तो वे दफ्तर से नहीं लौटे, आने पर कहूँगी। कालीघाट का हर कोई जानता था कि इस मकान में चंदे के लिए आने पर कोई खाली लौटेगा नहीं। चाचाजी भी कहते — लड़कों को लौटाना मत, वे माँगने आयें तो दो आने, चार आने कुछ भी दे देना ....

सिर्फ चंदा देना नहीं, चंदा देकर मदद करना नहीं। मैदान में भी जाना होगा। जहाँ खेल होगा, वहाँ जाकर खड़ा होना पड़ेगा। कम से कम फाइनल के दिन। जरूर वे भी एक मेडल देंगे। सोने का मोटा-सा मेडल या जर्मन सिलवर का कप। खेल के बाद वही कप लेकर लड़के जुलूस बनाकर चिल्लाते हुए जायेंगे। — थ्री चियर्स फॉर कालीघाट फुटवाल क्लब! हिप हिप हुर्रे! लड़के ईश्वर, गांगुली लेन से चिल्लाते हुए जायेंगे और उन्नीस बटा एक बी नंबर मकान के सामने एक बार रुकेंगे। लड़कों का चिल्लाना सुनकर चाचाजी निकल आयेंगे, चाचीजी आयेंगी। सती आयेगी। लक्ष्मी दी जब थी तब वह भी आती थी। लड़कियों को देखकर लड़के जोर-जोर से चिल्लाते थे। मानो नये जोश में भर उठते थे। लक्ष्मी और सती, दोनों बहनों को देखकर उनकी वीरता मानो गले से बाहर निकलने लगती थी।

फिर अकाल पड़ा था। अकाल या बाढ़ के समय लोग झुंड बनाकर गले से हारमोनियम लटकाये गाना गाते हुए आते थे। ऊपर से लक्ष्मी दी और सती झुककर देखती थीं। चाचाजी रघु के हाथ चंदा भिजवा देते थे। पुराने कपड़े या चावल भी वे लोग देते थे। दीपंकर देखता था कि उन्हीं के मकान के सामने ज्यादा भीड़ होती है। चाचाजी के आने से पहले ऐसी भीड़ नहीं होती थी। लेकिन चाचाजी के आने के बाद चंदा माँगने की धूम मच गयी थी। शुरू-शुरू में दीपंकर कुछ समझता नहीं था। बाद में वह सब समझ गया।

लोग अक्सर दीपंकर से पूछा करते थे — तेरे मकान में कौन लोग आये हैं रे?

मुहल्ले के नुक्कड़ के पास किसी मकान के चबूतरे पर बैठा कोई गाने लगता था — 'लगाओ न तरी मेरी नदी के किनारे' या 'बाँसुरी बजावे श्याम कदम्ब के तले'। अंगूरबाला के नये रिकार्ड निकले थे। वही सब गाने।

चाचीजी कहतीं — तुम सब उधर ध्यान मत देना लक्ष्मी ....

लेकिन लक्ष्मी दी या सती के सामने कोई कुछ कहने की हिम्मत नहीं करता था। वे जूते पहने खट-खट स्कूल में जाकर बैठ जाती थीं। ईश्वर गांगुली लेन के लिए यह बहुत अधिक निर्भीक और असामाजिक था।

चाचाजी कहते — ऐसा हर मुहल्ले में है। खुद को ठीक रखना चाहिए।

चाचीजी कहतीं — आप तो दिनभर घर के बाहर रहते हैं और मैं दूसरे की लड़कियों को लेकर परेशान रहती हूँ।

चाचाजी कहते — जिस मुहल्ले में जाओगी, वहीं डर लगेगा।

— कैसे नहीं ज्यादा सोचता, जब से भेंट हुई तब से तू सिर्फ उन्हीं लड़ के बारे में कहता जा रहा है।

— नहीं, अब वह सब सोचने का मौका नहीं मिलेगा। अब तो सवेरे साढ़े बजे आफिस चला जाऊंगा और शाम को घर लौटूंगा, सोचूंगा कब ? फिर लक्ष्मी तो जा चुकी है, सती भी मंगलवार को जा रही है।

— कहाँ जा रही है ?

दीपंकर बोला — बर्मा, बाप के पास। उसका जाना ही ठीक है। जितनी जल्द जाय, उतना अच्छा है। अब मुझे भी वह सब सोचना अच्छा नहीं लगता। हम लोगों को तो खटकर खाना होगा! हम गरीब हैं, उन लोगों की तरह अमीर नहीं। उनके बारे में हम कैसे सोच सकते हैं ?

किरण बोला — मैं तुझे एक किताब दूंगा। उसे पढ़ने से तेरे दिमाग से लड़कियों की चिंता एकदम निकल जायेगी।

— हाँ, वह जरूर देना। वह कौन-सी किताब है ?

— स्वामी विवेकानन्द का लिखा — 'ब्रह्मचर्य'। ब्रह्मचर्य का पालन न करने पर तू जिन्दगी में कोई काम नहीं कर सकता। हम अपने दल के लड़कों को पहले वही किताब पढ़ने के लिए देते हैं। उस किताब को पढ़ने पर देखेगा कि मन कितना पवित्र हो गया है। मन और शरीर, इन दोनों पर तू कंट्रोल कर लेगा, तो देखेगा कि किसी की परवाह करने की जरूरत नहीं है।

याद है, सिर्फ ब्रह्मचर्य नहीं, और भी कितने ही उपाय दीपंकर को ढूंढ़ने पड़े थे। अब वह किसी को याद नहीं रखेगा — सती को नहीं, लक्ष्मी दी को भी नहीं। रेलवे की मामूली नौकरी, उसी से जिन्दगी में तरक्की करनी होगी। उन सबकी बात याद करने पर उसे कोई लाभ न होगा। सफेद दीवाल पर गोल निशान बना था। उस गोल निशान के बीच एक बिंदी थी। पॉयंट। सवेरे सोकर उठने के बाद दीपंकर उस पॉयंट की तरफ एकटक देखा करता था। आँखों की पलक झपकाना मना था, हिलना-डुलना भी मना। पहले एक सेकंड, उसके बाद अभ्यास से एक मिनट तक आँखों की पलक झपकती न थी। सती को भूलना होगा! उसे पूरी तरह भूलना होगा। रात को अगर सपने में वह दिखाई पड़े तो सवेरे मन में उसका कोई चिह्न नहीं रहना चाहिए। संसार में सिर्फ सती नहीं है, और भी अनगिनत व्यक्ति हैं। भूख है, गरीबी है, लोभ, मोह और हिंसा सब हैं। उन्नति है, अवनति भी। सारे संसार में मानवों का विशाल जुलूस चक्कर लगा रहा है, वहाँ सती क्या हस्ती रखती है ? उसका क्या अस्तित्व है ? कौन है सती ? ऐसी कितनी ही लड़कियों ने कितने ही लड़कों को लुभाकर जीता है, फिर वे काल के अटल नियम से सदा के लिए खो गयी हैं। ढूंढ़ने पर इतिहास में आज उनका चिह्न तक नहीं मिलेगा। फिर बेकार सती को याद कर दीपंकर क्यों कष्ट पायेगा ? उससे तो यही अच्छा है! वह सफेद दीवार पर स्याही के गोल निशान पर और स्याही

से नमक बनाने गये तो अँग्रेजों ने उनको जेल में डाल दिया। ठीक उसी समय बंगा
लड़के मिलिटरी पोशाक में जलालाबाद की आर्मरी में घुस गये। सारे भारत के ल
सुनकर दंग रह गये। ब्रिटिश साम्राज्य के एक इलाके पर बीसवीं सदी के तीसरे द
में बंगालियों ने पूरी तरह कब्जा कर लिया।

उन दिनों इन सब बातों के बारे में सोचने पर रोमांच होता था। दीपंकर
पर सीधा बैठ गया। मानो हिलने की उनमें क्षमता न थी। मानो इतने दिन ब
उसकी मनोकामना पूरी होगी। चटगाँव, डलहौजी स्क्वायर, लाहौर और बेतिया म
सब जगहों के सब लोग उसे बुला रहे हैं। यह कोई मामूली सपना नहीं है, पाउ
की मामूली खुशबू नहीं, मामूली नौकरी नहीं और न मामूली छः हजार रुपये हैं।
और ज्यादा लेना पड़ेगा, अब और ज्यादा देना पड़ेगा। माँ की बात सोचकर दुःखी
लक्ष्मी दी की बात सोचकर उदास होने से काम न चलेगा। अब सती के बारे में सप
देखना संभव नहीं है। दीपंकर पर भारी जिम्मेदारी है, कर्तव्य है।

किरण एकाएक उठा खड़ा हुआ। फुसफुसाकर पूछा — क्या हुआ ?

जो आया था, उसने एक बार दीपंकर को देखा। सीधा-सादा शर्ट पहना
आदमी। अब उसका चेहरा साफ दिखाई पड़ा। मानो बहुत तेज चल कर आया
एकदम दौड़ता हुआ।

किरण ने पूछा — भोजू दा नहीं आया ?

उस आदमी ने किरण से अलग कुछ कहा। दीपंकर कान लगाकर भी सुन न
पाया। दोनों में धीरे-धीरे बातचीत हुई। फिर जिधर से वह आदमी आया था, उ
ही जल्दी-जल्दी चला गया।

किरण ने पास आकर कहा — चल दीपू।

दीपंकर खड़ा हुआ। बोला — भोजू दा नहीं आयेगा ?

किरण बोला — नहीं, कभी नहीं आ सकता, सी० आई० डी० वाले पीछे
हैं। उनको मालूम हो गया है। चल, तुझे पहुँचा दूँ।

देर तक किरण कुछ बोला नहीं। अब वह रास्ता नहीं। दूसरे रास्ते से चक
लगाकर दोनों घर की तरफ चले। एक जगह काफी अँधेरा था। किरण ने चारों तर
देख लिया। कहा — अब तू घर जा दीपू।

— तू नहीं जायेगा ?

— नहीं, दूसरा काम है।

किरण जाने लगा। दीपंकर चुपचाप खड़ा रहा। फिर उसने बुलाया —
किरण, सुन।

दीपंकर खुद किरण की तरफ बढ़ा। बोला — तूने ठीक कहा है किरण, अ
मैं यह सब नहीं सोचूँगा।

किरण बोला — बड़ी अच्छी बात है।

में क्या हर्ज है ! सती से भेंट करने की जरूरत नहीं है । उससे बोलने की भी जरूरत नहीं है । फिर तो कोई दोष नहीं होगा !

— चाचीजी !

चाचीजी रसोईघर में थीं । शायद रसोइये के साथ रसोई की देखभाल कर रही थी । बाहर जूते उतारकर दीपंकर सीधे अन्दर गया ।

— क्या है दीपू ? अरे, प्रणाम क्यों कर रहे हो ? क्या हुआ ?

दीपंकर ने चाचीजी के पाँव छूए । चाचीजी विस्मित हुईं पर हँसीं । बोलीं — अचानक इतनी भक्ति क्यों ?

दीपंकर बोला — आज मेरी नौकरी लगी है चाचीजी ।

चाचीजी ने आशीर्वाद दिया । बोलीं — लग गयी ? आशीर्वाद देती हूँ बेटा, तुम नौकरी में खूब तरक्की करो, माँ का नाम रोशन करो । तुम्हारी माँ ने बड़ा कष्ट उठाकर तुम्हें पाला-पोसा है ।

फिर बोलीं — जाओ, ऊपर जाओ, सती है —

— नहीं चाचीजी, बहुत रात हो गयी है, घर जाऊँ ।

कहकर दीपंकर बाहर आने लगा । बोला — चाचाजी के आने में तो बहुत रात होगी, मैं कल आऊँगा ....

रसोईघर के बाद आँगन है । आँगन के बाद सीढ़ी से चबूतरे पर चढ़ना पड़ता है । यही चबूतरा दरवाजे तक गया है । चबूतरे पर जाकर दीपंकर ने एक बार सोचा कि ऊपर जाऊँ या न जाऊँ । एक क्षण के लिए वह दुविधा में पड़ गया । सिर झुकाकर उसने सोचा । लेकिन, नहीं ।

सहसा सामने फर्श पर निगाह पड़ते ही दीपंकर चौंका : सती के पाँव ! सती सामने खड़ी है !

दीपंकर निगाह ऊपर न कर सका । निगाह ऊपर करते ही सामना हो जायेगा । दो गोरे पाँवों पर रंगीन साड़ी लटक रही है । दोनों पाँव हिलते भी नहीं और हटते भी नहीं । अब सती से बचकर निकलने का रास्ता नहीं है । सदर दरवाजे की तरफ जाने के लिए सती को सामने से हटाना होगा ।

सिर झुकाये दीपंकर चुपचाप खड़ा रहा । लेकिन सती हटी नहीं । दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या किया जाय । अगर हटने के लिए कहे, तो बोलना होगा । दीपंकर ने आखिर निगाह उठायी । देखा, सती उसकी तरफ देख रही है । दीपंकर ने तुरंत आँखें झुका लीं । फिर कुछ देर वह उसी तरह खड़ा रहा ।

फिर दीपंकर ने एकाएक सिर उठाकर कहा — हटो न ! वाह रे !

सती हटी नहीं । वह उसी तरह दीपंकर की तरफ देखती खड़ी रही ।

दीपंकर ने कहा — हट जाओ । मैं जाऊँगा न ....

सती फिर भी हिली नहीं, खड़ी रही । दीपंकर मुश्किल में पड़ गया । क्या

आई० डी० वाले को बसाना? और कोई जगह नहीं मिली?

—कौन सी० आई० डी० वाला है?

दीपंकर ने उतने ही जोर से जवाब दिया।

आगे के उस आदमी ने लाठी ठोंककर कहा—आप कौन हैं? बताइए, आप कौन हैं? आप इस घर के कौन हैं?

भीड़ में से किसी ने कहा—अरे, वह बगलवाले मकान का है। अघोर भट्टाचार्य के घर में रहता है।

दूसरे लोग तब तक शोर मचाने लगे थे। एक ने कहा—वन्दे मातरम्। फिर सब एक साथ चिल्लाये—वन्दे मातरम्। फिर देखते-देखते पैशाचिक कांड शुरू हो गया। जितने लोग पीछे खड़े थे, सब आँगन में चले आये। फिर आँगन, सीढ़ी और चबूतरा उन गुंडों से भर गया। रघु बारम्बार कहने लगा—बाबूजी घर में नहीं हैं। लेकिन उसकी बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। कइयों ने कमरों में घुसना चाहा। कई लोग सीढ़ी से ऊपर गये। चाचीजी एक कोने में खड़ी थरथर काँपने लगीं।

—आप लोग क्या चाहते हैं? देख रहे हैं कि यह शरीफ आदमी का मकान है।

—शरीफ है खाक! सी० आई० डी० का आदमी है। कालीघाट में सी० आई० डी० वाला आया, मुहल्ले की बदनामी नहीं हुई?

दीपंकर फिर भी समझ नहीं पाया। बोला—कौन सी० आई० डी० वाला है? आप लोग किसकी बात कर रहे हैं? यहाँ कौन सी० आई० डी० का आदमी है।

—अरे, घर में बंदूक है, गोली चलायेगा—होशियार!

जो लाठी लेकर आगे बढ़ आया था, उसने बंदूक का नाम सुनते ही लाठी घुमाना शुरू किया। वह एकदम दीपंकर के सामने आ गया। सती दीवार के पास कोने में खड़ी थी। वह आदमी उसी तरफ जाने लगा। दीपंकर आगे बढ़ा तो सती ने उसका हाथ पकड़कर खींचा—दीपू, हट आओ ....

—वंदे मातरम्! वंदे मातरम्!

भयानक चीत्कार से सारा मकान गूंज उठा।

दीपंकर बोला—आप लोग कालीघाट के लड़के होकर कालीघाट को ही बदनाम कर रहे हैं? आप लोगों को शरम नहीं आती?

—शरम! उस आदमी ने मारने के लिए लाठी उठायी। दीपंकर को लगा कि लाठी सीधे सती के सिर पर पड़ेगी। दीपंकर चिल्लाया—खबरदार!

ठीक समय पर दीपंकर ने अपने को सँभाल लिया। लाठी गिरने से पहले ही उसने लपककर सती को अपने पीछे कर लिया। सती तो बच गयी, लेकिन लाठी दीपंकर की पीठ पर पड़ी। दीपंकर को लगा रीढ़ चूर-चूर हो गयी। लेकिन गनीमत है कि लाठी सती पर नहीं पड़ी। अगर पड़ती तो सती का सिर फट जाता और वह

आई० डी० वाले को बसाना ? और कोई जगह नहीं मिली ?

— कौन सी० आई० डी० वाला है ?

दीपंकर ने उतने ही जोर से जवाब दिया।

आगे के उस आदमी ने लाठी ठोंककर कहा — आप कौन हैं ? बताइए, आप कौन हैं ? आप इस घर के कौन हैं ?

भीड़ में से किसी ने कहा — अरे, वह बगलवाले मकान का है। अघोर भट्टाचार्य के घर में रहता है।

दूसरे लोग तब तक शोर मचाने लगे थे। एक ने कहा — वन्दे मातरम्। फिर सब एक साथ चिल्लाये — वन्दे मातरम्। फिर देखते-देखते पैशाचिक कांड शुरू हो गया। जितने लोग पीछे खड़े थे, सब आँगन में चले आये। फिर आँगन, सीढ़ी और चबूतरा उन गुंडों से भर गया। रघु बार-बार कहने लगा — बाबूजी घर में नहीं हैं। लेकिन उसकी बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। कइयों ने कमरों में घुसना चाहा। कई लोग सीढ़ी से ऊपर गये। चाचीजी एक कोने में खड़ी थरथर काँपने लगीं।

— आप लोग क्या चाहते हैं ? देख रहे हैं कि यह शरीफ आदमी का मकान है।

— शरीफ है खाक ! सी० आई० डी० का आदमी है। कालीघाट में सी० आई० डी० वाला आया, मुहल्ले की बदनामी नहीं हुई ?

दीपंकर फिर भी समझ नहीं पाया। बोला — कौन सी० आई० डी० वाला है ? आप लोग किसकी बात कर रहे हैं ? यहाँ कौन सी० आई० डी० का आदमी है।

— अरे, घर में बंदूक है, गोली चलायेगा — होशियार !

जो लाठी लेकर आगे बढ़ आया था, उसने बंदूक का नाम सुनते ही लाठी घुमाना शुरू किया। वह एकदम दीपंकर के सामने आ गया। सती दीवार के पास कोने में खड़ी थी। वह आदमी उसी तरफ जाने लगा। दीपंकर आगे बढ़ा तो सती ने उसका हाथ पकड़कर खींचा — दीपू, हट आओ ....

— वंदे मातरम् ! वंदे मातरम् !

भयानक चीत्कार से सारा मकान गूँज उठा।

दीपंकर बोला — आप लोग कालीघाट के लड़के होकर कालीघाट को ही बदनाम कर रहे हैं ? आप लोगों को शरम नहीं आती ?

— शरम ! उस आदमी ने मारने के लिए लाठी उठायी। दीपंकर को लगा कि लाठी सीधे सती के सिर पर पड़ेगी। दीपंकर चिल्लाया — खबरदार !

ठीक समय पर दीपंकर ने अपने को सँभाल लिया। लाठी गिरने से पहले ही उसने लपककर सती को अपने पीछे कर लिया। सती तो बच गयी, लेकिन लाठी दीपंकर की पीठ पर पड़ी। दीपंकर को लगा रीढ़ चूर-चूर हो गयी। लेकिन गनीमत है कि लाठी सती पर नहीं पड़ी। अगर पड़ती तो सती का सिर फट जाता और वह

अचानक उसी भीड़ में से किसी ने पुकारा — दीपू!

दीपू उस समय भी सती को अपनी आड़ में छिपाये खड़ा था। उसने पलटकर देखा। बोला — मैं यहाँ हूँ, माँ!

आश्चर्य है! इस भीड़ में माँ कैसे आ गयी? उसे जरा भी डर नहीं लगा! फिर भी उसके बाल बिखर गये थे और चेहरे पर बदहवासी छायी थी।

माँ बोली — आओ बिटिया, चलो। डर किस बात का? चलो मेरे साथ ....

माँ सती और चाचीजी दोनों को पीछेवाले दरवाजे से अपने घर में ले गयी। माँ ने दोनों को अपने कमरे में ले जाकर, बिठाया, फिर दरवाजा बन्द कर लिया। दीपंकर ने सती के चेहरे की तरफ देखा। मानो, तब भी सती समझ नहीं पायी थी कि क्या हो रहा है।

माँ ने चाचीजी से कहा — आप यहाँ बैठिए दीदी, डरिए नहीं ....

बाहर उस समय भी हल्ला हो रहा था। अघोर नाना अपने कमरे में चिल्ला रहे थे — मुँहजलों ने मेरा मकान तोड़ डाला रे, मेरा मकान तोड़ डाला ....

उस हो-हल्ले में अघोर नाना की आवाज बड़ी कमजोर लगी। उनके शब्द हवा में विला गये। कोई सुन न सका।

थोड़ी देर बाद गली के बाहर कई मोटरगाड़ियों की आवाज हुई। चारों तरफ से जोरदार चिल्लाहट हुई। पिस्तौल से गोली चलाने की ठायँ-ठायँ सुनाई पड़ी। जो लोग लूटपाट मचाये हुए थे, इधर-उधर भागने लगे। आँगन से उनके दौड़ कर भागने की आवाज आयी। उन पर पुलिसवालों ने धावा बोल दिया था। सार्जेंट और सिपाहियों से मकान भर गया। देखते-देखते सारी जगह गुंडों से खाली हो गयी। उनका हल्ला भी बन्द हो गया। कमरे का दरवाजा बन्द किये चारों प्राणी चुपचाप सब सुनते रहे।

चाचीजी की आँखों में आँसू आ गये थे।

माँ बोली — रो क्यों रही हैं दीदी, हम तो हैं। दीपू है। डर किस बात का?

चाचीजी बोलीं — वे तो घर में नहीं हैं ....

माँ बोली — पुलिस आ गयी है। अब क्या डर है?

चाचीजी आँचल से आँखें पोंछने लगीं और बोलीं — मेरी आँखों के सामने सब सामान तोड़ डाला ....

माँ ने पूछा — आप लोगों ने अभी तक खाया न होगा?

चाचीजी बोलीं — कैसा खाना! मैं तो रसोईघर में खाना पका रही थी!

माँ बोली — हम लोगों ने भी नहीं खाया दीदी। मैं दीपू के लिए बैठी थी, इतने में ....

वह रात न जाने कैसे बीती! दीपंकर को याद है, उस रात वह देर तक हक्का-बक्का बना रहा था! उसकी बुद्धि काम नहीं कर रही थी। सुबह और शाम उसने

—दीदी ! बिन्ती दी ने कमरे के भीतर से माँ को बुलाया ।

माँ बोली—तुम घबड़ाओ नहीं, सो जाओ ।

बिन्ती दी ने पूछा—अब दरवाजा खोलूँ ?

—नहीं, नहीं, दरवाजा मत खोलो । खाना-पीना हो चुका है। आराम से सो जाओ ।

बिन्ती दी ने पूछा—क्या वे लोग चले गये हैं ?

—नहीं । उन्हीं के लिए बाहर हूँ । उनको खिला रही हूँ । तुम मत [illegible] खिड़िया ।

बिन्ती दी ने फिर कहा—दीदी, एक बार मेरे पास आओ ।

माँ गयी । खिड़की के पास खड़ी होकर माँ ने पूछा—क्या कह रही हो [illegible]

बिन्ती दी ने धीरे से पूछा—डाकू चले गये हैं ?

—हाँ तुम सो जाओ, अब बोलो नहीं, बहुत रात हो गयी है, सो जाओ । [illegible] तक चाचीजी एक शब्द भी नहीं बोलीं । सती भी नहीं बोली । दीपंकर भी चुप रहा । बहुत रात को रघु आकर उनको बुला ले गया, पुलिस के पहरे में दोनों अपने मकान से गयीं । तब भी किसी ने एक भी शब्द नहीं कहा । उस घर में बत्ती नहीं जली । दरवाजे और खिड़कियाँ टूट चुकी थीं, फर्नीचर टूटे पड़े थे और बर्तन-भाँड़े भी । आलमारियों और ट्रंकों में जो कुछ था, सब फेंका और लूटा गया था । उत्तर में हालदारटोला, पश्चिम में पचरपट्टी, दक्षिण में शाहनगर और पूर्व में हाजी कासिम का बगीचा—पूरे इलाके में बात फैल गयी थी । सभी लोग अपने-अपने घरों में बन्द शंकित हो रहे थे ।

—माँ !

रात की खामोशी चीरकर दीपंकर की आवाज गूँजी ।

—क्या है दीपू ?

—चाचाजी पुलिस के, सी० आई० डी० के आदमी हैं, यह तुम जानती थीं ? इतने दिन से वे लोग इस मकान में हैं, इतने दिन से मैं उन लोगों के घर जा रहा हूँ, लेकिन लक्ष्मी दी या सती किसी ने यह नहीं बताया । शरीफ लोगों के मुहल्ले में क्या कोई जान-बूझकर सी० आई० डी० वालों को मकान किराये पर देता है, तुम्हीं बताओ माँ ? सुनने के बाद से मुझे बहुत बुरा लग रहा है । इतनी बड़ी बात, लेकिन किसी ने हम लोगों से नहीं कहा । हम जान भी नहीं पाये ।

माँ बोली—चुप रह ।

—क्यों चुप रहूँ ? मैं सबेरे ही चाचाजी से कहूँगा । यह तो हम लोगों को [illegible] हुआ ! हम नहीं जानते तो क्या आप लोग हमें सीधा समझकर ठगेंगे ? अगर [illegible] पता होता तो मैं कभी उनके पास न जाता ।

—तुझे इन सब बातों से क्या मतलब ? वे पुलिस के आदमी हैं या नहीं, [illegible] के लिए तू क्यों परेशान है ? तू किसी से कुछ मत कहना । बड़ी मुश्किल से नौकरी

उसने शर्ट का कालर ठीक किया, धोती को खींच-खाँचकर देखा।

— क्यों रे, खड़ा क्यों है ? देर हो रही है न ? दफ्तर जा ....

माँ की बात से दीपंकर मानो होश में आया। नौ बजे हैं। माँ ने जल्दी भात बना दिया था। अब भी डेढ़ घंटे हैं। काफी समय है। मानो दफ्तर की फिकर माँ को है। मानो माँ को उस फिकर से नींद नहीं आती।

दीपंकर बोला — जा तो रहा हूँ माँ, अभी काफी समय है।

माँ बोली — हाँ, समय तो रहना ही चाहिए। नयी नौकरी है, ठीक समय पहुँचना होगा ....

दीपंकर एक बार कमरे में गया। पेंसिल और कलम लेना वह भूल गया था। उसने ठाकुरजी को एक बार और प्रणाम किया। फिर वह बरामदे में आकर खड़ा हुआ। माँ रसोईघर में चली गयी थी। विन्ती दी माँ के पास दरवाजे के सहारे खड़ी थी। अमड़े के पेड़ पर गझिन डालियों में छिपकर बैठे उस कौए की तरफ दीपंकर की निगाह गयी। बहुत दिन से उसने उस कौए के नहीं देखा था। मानो उसे वह भूल चुका था। अपना जोड़ा मर जाने के बाद से वह कौआ यहीं बैठा रहता है। कभी दीपंकर ने लक्ष्मी दी का दिया चाकलेट उसे खिलाया था। इतने दिन बाद फिर वह सब याद आया। अब लक्ष्मी दी यहाँ नहीं है। वह लक्ष्मी दी भी अब नहीं है। कैसी विपत्ति में उसके दिन कट रहे हैं। खाने को नहीं मिल रहा है, डर के मारे अकेली कमरे का दरवाजा बंद किये पड़ी रहती है। इसी से उसे बुखार आता है! और सती! उसके भी दिन बुरे कट रहे हैं। कल ही दीपंकर ने पूरी ताकत से उसे अपने शरीर की आड़ में लेकर बचाया नहीं तो पता नहीं क्या सर्वनाश हो जाता!

दीपंकर ने टिफिन का डब्बा खोलकर उसमें से एक पराँठा निकाला, फिर हाथ बढ़ाकर कौए की तरफ फेंका और कहा — आ — आ — आ।

कौआ झप् से आँगन में आ गया और गप-गप पराँठा खाने लगा। मानो वह अपने सौभाग्य पर विश्वास नहीं कर पा रहा था, बार-बार इधर-उधर देख रहा था और पराँठा खा रहा था।

दीपंकर बोला — खा ले, कोई कुछ नहीं कहेगा। भरपेट खा ले। संसार में इसी खाने के लिए सारा झमेला है। इसी के पीछे सारा दंगा-फसाद है और इसी के लिए मैं नौकरी करने लगा हूँ।

सहसा कोई खटका होते ही दीपंकर ने ऊपर की तरफ देखा। उसने आश्चर्य से देखा कि सती के मकान के दुमंजिले की एक खिड़की की झिलमिली जरा खुली है। वहाँ से कौन देख रहा है, समझ में नहीं आया। शायद सती हो, शायद न हो। सती को देख लेने पर दीपंकर कुछ कह सकता था। कहता — सवेरे से तुम्हारे यहाँ आने को मन कर रहा है, लेकिन कैसे आऊँ ? चारों तरफ पुलिस का पहरा है ....

अचानक खिड़की की झिलमिली बंद हो गयी।

एक दिन रॉबिन्सन साहब ने दीपंकर को बुला भेजा था। चपरासी ने आकर कहा — सेन बाबू, साहब ने बुलाया है।

के० जी० दास बाबू शुरू से अप्रसन्न थे। बोले — जाइए, अब साहब को जो समझाना हो, समझाइए ....

दीपंकर थोड़ा डर गया था। बोला — क्यों, क्या हुआ है के० जी० दास बाबू ?

— आपने साहब के पास सीधे ड्राफ्ट भेज दिया ? मुझे एक बार दिखाकर नहीं भेज सके ? अब झमेला सँभालिए। पता नहीं, उसमें क्या लिख दिया ! पढ़े-लिखे लोगों के साथ यही तो परेशानी है। ऑसबर्न साहब के अपने हाथ का लिखा ड्राफ्ट फाइल के नीचे है, उसे एक बार देखा नहीं जाता ?

दीपंकर सीधे साहब के कमरे में गया। स्विंग डोर खोलते ही उसने देखा लटकते कान वाला एक कुत्ता जीभ निकाले बैठा है। काटेगा तो नहीं ? दीपंकर पीछे हट आया।

साहब की आवाज सुनाई पड़ी — कम इन ....

दीपंकर दबे पाँव अंदर गया और बहुत बड़े टेबिल के सामने फाँसी के कैदी की तरह खड़ा हो गया। साहब चुरुट पी रहे थे। चुरुट मुँह में लिये बोले ....

लेकिन क्या बोले, उसका एक शब्द भी समझ में नहीं आया। गूँगा बना दीपंकर मुँह बाये सामने खड़ा रहा। तब तक उसे पसीना छूटने लगा था। अचानक लगा कि पावों के नीचे से धरती खिसकती जा रही है। यह कैसी अँग्रेजी है ! कालेज में अँग्रेजी लेक्चर समझ में आया, अंग्रेजी किताबें भी उसे समझ में आती हैं और अँग्रेजी लिखने की भी आदत है। कालेज मैगजीन में वह 'ऐसे' लिखता रहा है। लेकिन यह क्या हुआ ? साहब के होंठ मोटे, तिस पर चुरुट लगाये हुए हैं — एक भी बात समझ में नहीं आयी। सिर्फ उन होंठों के बीच से हाउ-हाउ आवाज सुनायी पड़ी। साहब ने दोबारा कहा। फिर वही हाउ-हाउ आवाज ! साहब ने फिर कहा। फिर वही हाउ-हाउ !

फिर हाथ हिलाकर कहा — गो ....

दीपंकर ने चैन की साँस ली। मानो पसीना देकर बुखार उतरा। वह सेक्शन में आया कि साहब के कमरे से चपरासी आकर के० जी० दास बाबू को बुला ले गया। के० जी० दास बाबू उतारकर रखा कोट पहनते हुए दौड़े। दीपंकर अपनी कुर्सी पर बैठा पसीने से तर होने लगा। छिः। कितनी बड़ी लज्जा ! अंग्रेजी भाषा भी वह समझ न सका ! लोग क्या कहेंगे ? अंग्रेजी न समझ पाने की लज्जा से उस दिन उसका सिर एकदम झुक गया था।

पंद्रह मिनट बाद हँसते हुए के० जी० दास बाबू लौट आये। उन्होंने कोट उतारकर कुर्सी की पीठ पर लटकाया।

— क्या हुआ, आप साहब की बात समझ नहीं पाये ?

के० जी० दास बाबू ने कहा — जाइए, साहब ने आपको दुमंजिले में ट्रांजिट सेक्शन में ट्रान्सफर किया है।

गांगुली बाबू ने पूछा — क्यों ? क्यों ऐसा आर्डर दिया साहब ने ?

— क्यों क्या ? वही कल की बात। बात न समझ सकने पर साहब बिगड़ेंगे नहीं ?

ट्रांजिट सेक्शन कहाँ है और वहाँ का बड़ा बाबू कैसा है, यह सब दीपंकर कुछ भी नहीं जानता था। यहाँ तो एक दिन में सबसे जान-पहचान हो गयी थी। एक दिन में यहाँ के लोग ऐसे हो गये थे जैसे बहुत दिन के परिचित हों। बाद में इस रेलवे के जर्रे-जर्रे से दीपंकर का परिचय हुआ था और यह उसी की शुरूआत थी — एक सेक्शन से दूसरे सेक्शन में जाना। जिस दफ्तर में घुसते हुए उसके मन में ऊब हुई थी, कभी उसी से उसका इतना घनिष्ठ परिचय होगा, यह भी उस दिन कौन समझ सका था ? उस समय जापान से अंग्रेजों की बड़ी दोस्ती थी। जापान उस समय इंडिया से आयरन ओर खरीद रहा था। जापान बढ़िया ग्राहक है, नकद पैसा देता है। हजारों वैगन आयरन ओर जापान को निर्यात होता था। लोहे का चूर। भारत की खानों से लोहे का चूर निकलता था, उसी को वैगनों में भरकर कलकत्ता या विशाखापटनम् के पोर्ट में भेजा जाता था। जहाँ जितने वैगन थे, रेल कम्पनी ने इस काम में लगा दिये। रेल के दफ्तर में रात-दिन काम होने लगा। रात-दिन जागकर कंट्रोलर वैगनों की डिलेवरी दे रहे हैं। हेड आफिस में उनका हिसाब रखना पड़ता है। ट्रांजिट सेक्शन में स्टेटमेंट बनता है कि जेटी घाट में लोहे के कितने वैगनों की डिलेवरी दी गयी। असल में जापान उस समय नया-नया सभ्य हुआ था। बड़े राष्ट्रों की बिरादरी में शामिल हो गया था। उसने रूस को लड़ाई में हराया था। उसने कोरिया पर कब्जा किया था। मंचूरिया भी उसने हड़प लिया था। अंग्रेज कुछ बोल नहीं रहे थे। चोर-चोर मौसेरे भाई वाला हिसाब उस समय चल रहा था। चीन ने लीग ऑव नेशन्स के पास दरख्वास्त की, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। तुम लोग चीनियों को चाहे जितना मारो, बम गिराकर सबको खतम कर डालो, हम कुछ नहीं कहेंगे। हमारी शंघाई पर नजर मत डालो, बस ! फिर जापान को लोहा बेचने में मुनाफा भी कितना था ? उस समय संसार में चारों तरफ डिप्रेशन था, नक़द रुपया कौन देता ? इसलिए उस अवसर को जाने नहीं दिया जा सकता था। रात नहीं, दिन नहीं, रेल दफ्तर बस लोहा भेजने में लगा रहता था। जापान ट्रैफिक पर रेल कम्पनी का विशेष ध्यान था। सवेरे सोकर उठते ही रॉबिन्सन साहब दफ्तर में फोन करते — आज जापान ट्रैफिक का फीगर क्या है ?

सवेरा होते ही दीपंकर को दफ्तर जाना पड़ता था। सोकर उठते ही दफ्तर ! फिर देर करके घर लौटना। अब दीपंकर ट्रांजिट सेक्शन का क्लर्क नहीं, रॉबिन्सन साहब का एकदम खास आदमी है। उसे दिन भर सेक्शनों में घूम-घूमकर फीगर लेना पड़ता है। उन फीगरों का टोटल लगाना पड़ता है। डिस्ट्रिक्ट से टेलीफोन पर फीगर

लेकिन हाँ, वड़े हो जाने पर हम सबको याद रखिएगा, इतना कहे देता हूँ। उस समय घोषाल साहब न बन जाइएगा।

सुनकर उस दिन दीपंकर को हँसी आयी थी। ईश्वर गांगुली लेन में दूसरे के घर पलनेवाला, नकद तैंतीस रुपये घूस देकर नौकरी की शुरुआत करनेवाला, वह बड़ा होगा और लोगों को भूल जायेगा! मानो दीपंकर गरीब होने का कष्ट नहीं समझता, मानो वह नहीं जानता कि अभाव क्या है? मानो उसकी माँ ने दूसरे के घर खाना पकाकर, लाई बनाकर और कथरी सिलकर उसकी परवरिश नहीं की? उसके लिए नौकरी क्या है, यह गांगुली वावू और के० जी० दास वावू क्या समझेंगे!

शाम हो जाने के बहुत वाद ड्राअर में पेंसिल, कलम और ऐल्युमिनियम का गिलास बंदकर दीपंकर बाहर खुले आसमान के नीचे निकल आता था। अब तक मानो वह सारे संसार को भूला हुआ था। रेल के दफ्तर में उस समय तक उसकी अपनी सत्ता नाम की कोई चीज नहीं थी। दुनिया कितनी बड़ी है और वहाँ कितना शोर-शराबा है, यह सब मानो वह भूल चुका था। सिर्फ उसे याद था होम वोर्ड, उसे सिर्फ याद था रेलवे वोर्ड और याद थे रॉबिन्सन साहब और घोषाल साहब। इनसे भी ज्यादा उसे याद था जापान ट्रैफिक! सवेरे अखबार में वह देखता था, बड़े-बड़े हरफों में लिखा है—जापान द्वारा मंचुरिया पर हमला। शंघाई और ताईपेई में अमानवीय बमवर्षा। हजारों निरीह लोगों पर जापान का नृशंस अत्याचार। लेकिन दफ्तर आते ही रॉबिन्सन साहब का पहला सवाल होता — हाउ इज द जापान ट्रैफिक टुडे?

शाम को सड़क पर निकलकर दीपंकर थोड़ी देर के लिए वह सब भूल जाता है। उस समय लक्ष्मी दी की बात याद आती है। याद आती है सती की बात। लक्ष्मी दी का कैसे क्या होगा? अगर दातार वावू को सचमुच जेल जाना पड़े? और सती? जब सारे कालीघाट के लोग घर में घुस पड़े थे, तब अगर वे सचमुच सती को मारते-पीटते? दीपंकर अपने शरीर पर हाथ फेरकर देखता है। उसके इस शरीर से उस दिन सती का शरीर एकाकार हो गया था। सती उसके सीने में सिर रखकर निश्चित हो सकी थी। बाहर के सारे आँधी-तूफान से मानो दीपंकर ने अकेले उसे उस दिन बचाया था। दीपंकर ने भी तो मन ही मन चाहा था कि और अत्याचार हो, और लूटपाट हो, तभी न वह देर तक सती को अपने सीने से लगाए रह पायेगा। उसके बाद न जाने कब पुलिस आयी थी और सब गुंडे भाग गये थे। वह सब कुछ एक दुःस्वप्न के समान था।

दीपंकर सड़क के मोड़ पर आकर खड़ा हुआ। अब किधर जाया जाय? लक्ष्मी दी के मकान की तरफ या ईश्वर गांगुली लेन की ओर? कल की घटना के बाद सती अगर वहाँ चली जाय? फिर लक्ष्मी के तो अनेक लोग हैं। वे आकर उससे बातें करते

—सुनिए, सुनिए दीपंकर बाबू ....

दीपंकर आगे बढ़ गया ।

उस आदमी ने पूछा — कल क्या हुआ था आपके मकान में ?

वही एक सवाल और वही एक जवाब । सवेरे से एक ही जवाब सबको दे रहा था । दीपंकर बोला — हम तो जानते नहीं थे जानने पर क्या कोई आई० डी० वाले को मकान किराये पर देता है ?

दीपंकर को वह घटना फिर याद आयी । पता नहीं, सती कौन-सा तेल बालों में लगाती है ? दीपंकर के सीने पर जब उसने सिर रखा था, तब उसके बालों से विचित्र खुशबू आ रही थी । बड़ी मीठी खुशबू ! उस खुशबू से मन-प्राण सब मानो शीतल हो गया था । उस दिन के उस पाउडर से भी अच्छी खुशबू थी । सती से उस तेल का नाम पूछना पड़ेगा । वह तेल दीपंकर के हाथ में भी लग गया था । दीपंकर ने सती का सिर पकड़ रखा था न ! दीपंकर नाक के पास उँगली लाया । मानो कल की खुशबू अब भी उँगलियों में लगी हो । कितनी बढ़िया खुशबू थी !

घर के पास आते ही दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया ।

उसी समय एक टैक्सी मकान के सामने आकर रुकी । ठीक उन्नीस बटा एक बी नंबर मकान के सामने । दूर से ही पता चल गया था कि टैक्सी उसी के मकान के सामने रुकेगी । उस समय भी पुलिस वाले वहाँ खड़े थे । एक सार्जेंट स्टूल पर बैठा ऊँघ रहा है । उसके साथ लाल पगड़ी वाले कई सिपाही हैं । घटना कल हुई थी । और अभी तक पुलिसवाले बैठे थे ! दीपंकर ने देखा — टैक्सी आते ही रघु अन्दर से दौड़ता हुआ आया । टैक्सी से एक सज्जन उतरे । चेहरा-मोहरा देखने लायक है । थोड़ी-सी नुकीली दाढ़ी, घुंघराले बाल । टैक्सी से बिस्तर-बक्से आदि सामान उतारे गये । चाचीजी बाहर आ गयी थीं । सती भी आयी । चाचाजी हँसते और बात करते हुए उनके साथ मकान के अन्दर गये । टैक्सी में दो और लोग थे । वही लोग सामान उतार रहे थे । सामान काफी था । इसलिए उतारने में देर लगी । कौन आया ? बर्मा से सती के पिताजी तो नहीं आये ? शक्ल सती से काफी मिलती-जुलती है । शरीर लंबा-चौड़ा, गोरा-चिट्टा और घुंघराले बाल !

दीपंकर मकान के अन्दर जाने लगा । लेकिन जरा संकोच हुआ । पूरे मकान पर पुलिस का पहरा था । कल रात से पुलिस वाले बैठे थे । सार्जेंट की कमर से पिस्तौल लटक रहा था । सिपाहियों के हाथ में लम्बी लाठी । दीपंकर थोड़ा हटकर खड़ा हो गया । दूर से देखने लगा । होल्डाल उतारा गया, ट्रंक और सूटकेस उतारे गये । हैट, छाता, छड़ी, अटैची केस, बैग आदि तरह-तरह के सामान उतारे गये ।

— रघु !

रघु ने मुड़कर दीपंकर की तरफ देखा ।

दीपंकर ने पूछा — तुम्हारे घर कौन आये हैं रघु ?

—क्यों रे, दफ्तर में कुछ खाया था ?

दीपंकर ने फिर उस मकान की तरफ देखा। पूरे मकान के सब दरवा[illegible] और खिड़कियाँ बन्द थे। कल की घटना के बाद से ही वे बन्द थे। मानो कालीघा[illegible] की सारी अपवित्रता को दूर रखने के लिए उन लोगों ने ऐसा किया है।

दीपंकर ने सिर उठाया। बोला — माँ, मैंने देखा कि लक्ष्मी दी के पिताजी वर्मा से आ गये हैं। वे अचानक क्यों आ गये ? तुम्हारा क्या ख्याल है ?

माँ बोली — लड़कियों के लिए बाप के मन में चिंता नहीं होगी ?

— लेकिन इतने दिन तो यही सुना कि उनकी तबीयत खराब है। सती के ही जाने की बात थी। एकाएक सब बदल कैसे गया ?

माँ बोली — उनके लिए आना क्या मुश्किल है ? उनके पास पैसे की कमी नहीं है। जब मन हुआ, वे आ गये। लेकिन मैं जो पूछ रही हूँ, उसका जवाब क्यों नहीं दे रहा है ? दफ्तर में कुछ खाया था ?

इतने में रघु आ गया।

माँ ने कहा — क्या है रघु ? तुम्हारे बाबूजी क्या वर्मा से आ गये ?

— हाँ मौसीजी। घर के सब सामान टूट-फूट चुके हैं ! चावल, दाल, नमक, तेल सब खरीद कर लाना पड़ा।

दीपंकर ने पूछा — तुम्हारे मकान में लोग जाने पा रहे हैं ?

रघु बोला — कोई नहीं जा पा रहा है। सवेरे ग्वाला भी अन्दर नहीं आ पाया। चाचाजी ने किसी को अन्दर न आने देने के लिए पुलिसवालों से कह दिया है। अभी कई दिन पुलिस का पहरा रहेगा। कल रात भी सब के सो जाने के बाद [illegible]ांगन में ढेले पड़े थे।

माँ बोली — हाँ, मैंने सुना था — दो बार धम्-धम् आवाज हुई थी।

दीपंकर बोला — पुलिस वाले तो थे, उन लोगों ने कुछ नहीं किया ?

रघु बोला — बाबू ने छत पर जाकर जो फायर किया तो सब चुप हो गये।

लेकिन दीपंकर को कुछ भी पता नहीं चला था। कल रात कब ढेले पड़े और [illegible]स्तौल की आवाज हुई, वह कुछ भी नहीं जान पाया था। शायद उस समय वह [illegible]बेखबर था। दिनभर दफ्तर में खटना, उसके बाद वह बाजार में लक्ष्मी दी के [illegible]ा, फिर किरण के साथ मैदान स्क्वायर तक पैदल चलना — फिर रात को [illegible]ा। कल ने हम पाँच सौ लोग आये थे। जिसे जो मिला, उसने वही तोड़ा।

माँ ने दो थालियाँ निकालकर दे दीं।

दीपंकर बोला — रघु, तुम्हारे मकान में पुलिसवाले जाने नहीं देंगे ?

रघु ने कहा — पुलिस को तो ऐसा हुक्म है। किसी को अन्दर नहीं जाने दे रही है। सवेरे ग्वाले को भी अन्दर नहीं आने दिया।

माँ ने दीपंकर से कहा — अभी तेरा उस मकान में क्या काम पड़ गया ? उस हंगामे में अब जाने की जरूरत नहीं है।

रघु चला गया। जाते समय बोला — दरवाजा बंद कर लीजिए मौसीजी।

दीपंकर ने उठकर दरवाजा बंद कर दिया। पूरे आँगन में अजीब अँधेरा है। पहले दूसरी मंजिल की खिड़की से आँगन में रोशनी आती थी। अमड़े के पेड़ के पास पीछेवाला दरवाजा भी उन लोगों ने बंद कर दिया था। कल पुलिस आने के बाद उस दरवाजे से काफी लोग भागे थे। आहट मिलते ही अघोर नाना चिल्लाये थे। उन्होंने सोचा था, डकैत लूटने आये हैं। उन्होंने कहा था — मुँहजलों ने मेरा मकान तोड़ डाला। मुँहजलों ने मेरा सर्वनाश कर दिया। अरी मुँहजली लड़की, कहाँ गयी तू। मुँहजली तू भी नहीं सुनती ....

उस समय जबर्दस्त हल्ला होने लगा था। लेकिन उस हल्ले में भी माँ ने अपना होशहवास खोया नहीं था। वह भागी-भागी अघोर नाना के कमरे में गयी थी। माँ को देखते ही अघोर नाना चिल्लाये थे — घर में डाका पड़ा और तूने नहीं सुना ?

— डाकू नहीं पिताजी, स्वराजी हैं।

.... हरामजादे स्वराजी ! मेरे घर में क्यों आये ? मैंने उन मुँहजलों का क्या बिगाड़ा है ? मैंने क्या उन सब का मुँह झुलस दिया है ?

माँ बोली थी — नहीं पिताजी, हमारे घर में नहीं, उस किरायेदार के घर में ....

अघोर नाना ने कहा था — अरी मुँहजली, किरायेदार के घर में आया तो क्या कुछ नहीं हुआ ? वह मकान भी तो मेरा ही है। क्या वह मकान भी किरायेदार का है ?

माँ ने कहा था — आप चुप रहिए पिताजी, मैं जाकर देखती हूँ, क्या हुआ।

अघोर नाना बोले थे — देख मुँहजली की अकल, तू क्यों उस झंझट में जायेगी ? किरायेदार लोग मरें तो तेरा क्या है री मुँहजली ? वह मुँहजला कहाँ गया ? वही, वह मुँहजला ....

— उसके लिए आप न सोचें पिताजी !

अघोर नाना मानो चिढ़ गये। बोले — हाँ, मैं क्यों सोचूँगा ? सिर्फ तू ही सोचेगी न ? मुँहजला दफ्तर गया, लेकिन अभी तक नहीं आया। अब मैं न सोचूँगा तो और कौन सोचेगा ?

माँ ने आश्वासन देकर कहा — आप बूढ़े हो गये हैं, देख नहीं पाते, अभी जरा

दीपंकर ने पूछा था — अघोर नाना को क्या हुआ है ? बीमार हैं क्या ?

— नहीं, तेरे दफ्तर से लौटने में देर हो रही थी तो वे बहुत घबड़ा रहे थे !

उसी रात दीपंकर अघोर नाना के पास गया था। उस समय चाचीजी और सती अपने घर जाकर सो गयी थीं। बहुत रात हो गयी थी। माँ ने छिटे और फोंटा के लिए रोज की तरह भात ढककर रख दिया था। उस समय तक दोनों आये नहीं थे। माँ ने विन्ती दी से कमरे की बत्ती बुझाकर और दरवाजे का व्योंड़ा लगाकर सोने के लिए कहा। उतनी रात को चन्नूनी ने चौका-बरतन किया। वह बड़बड़ाती जरूर रही, लेकिन उसने सब काम किया। दीपंकर धीरे-धीरे अघोर नाना के कमरे के सामने जा खड़ा हुआ। अँधेरे में कुछ दिखाई नहीं पड़ा। सिर्फ नाक में सड़ी बदबू आने लगी। उसने देर तक इन्तजार किया। उसे लगा, अघोर नाना खर्राटा ले रहे हैं।

दीपंकर जिस तरह गया था, उसी तरह दबे पाँव लौट आया। बोला — अघोर नाना सो गये हैं माँ, मैंने बुलाया नहीं।

— सो गये हैं ? ठीक किया, नहीं बुलाया। अब तू भी सो जा ....

लेकिन नींद कहाँ आती ? थोड़ी देर बाद चाचाजी आकर चाचीजी को ले गये। सती भी गयी। उसके बाद सदर दरवाजा बंद कर बिस्तर पर आकर उसने सोचा था, आज रात शायद नींद नहीं आयेगी। शुरू में सचमुच देर तक नींद नहीं आयी थी। पुलिसवालों को देखकर कुत्ते भौंक रहे थे। वह बिस्तर पर पड़ा सुन रहा था। श्मशान से हरि बोल की आवाज आ रही थी। वह भी वह सुन रहा था। बिस्तर पर लेटे-लेटे दोबारा सारी घटना को याद करने में उसे बड़ा मजा आ रहा था। शुरू से आखिर तक वह सारी घटना को मन की आँखों से देखने लगा था। शायद सती उससे कुछ कहना चाह रही थी, क्योंकि वह दीपंकर का रास्ता रोककर खड़ी हो गयी थी। शायद वह कुछ कहती। शायद उसके पास कुछ कहने को था। ठीक उसी समय अचानक रसोईघर की टीन की छाजन पर ढेला पड़ा था और उस तीखी आवाज से दोनों चौंक पड़े थे। फिर देखते-देखते क्या से क्या हो गया।

उसके बाद कुछ याद नहीं पड़ता। न जाने कब दीपंकर बेखबर सो गया था। फिर उसे कुछ पता न रहा। उसके बाद सवेरा होने से पहले फिर आँगन में ढेला पड़ा था। लेकिन दीपंकर को पता नहीं चला। वह बेखबर सो रहा था। वह सबेरे उठा। उठकर वह सब्जी लाने गया। फिर खाना खाकर वह दफ्तर गया और दफ्तर से लौटा। उत्तेजना से भरा-भरा जब वह थका-माँदा दफ्तर से लौटा, तब उस मकान में बर्मा से भुवनेश्वर बाबू आ गये थे।

माँ ऐसी जगह जायेगी जहाँ मनुष्य की लाज रहे या न रहे, बदनामी हो या न हो, इज्जत रहे या न रहे, लेकिन धर्म टिका रहे। माँ के लिए धर्म का मतलब है मनुष्यत्व। माँ यह भी चाहती है कि उसका अपना ही धर्म नहीं, दीपंकर का मनुष्यत्व भी सुरक्षित रहे, उसका सत्य भी जिंदा रहे। हालांकि तैंतीस रुपये घूस देकर दीपंकर को नौकरी मिली है, लेकिन सत्य और धर्म को बचाने के रास्ते में तैंतीस रुपये घूस देने का कलंक कोई रोड़ा नहीं है। तैंतीस रुपये घूस देने की ग्लानि एक दिन जरूर मिट जायेगी और दीपंकर मनुष्यत्व का गर्व लिये दस जनों के बीच सिर ऊँचा कर खड़ा हो सकेगा। तब सभी पूछेंगे — वह कौन है? — वह दीपंकर है! उस समय तक क्या तैंतीस रुपये घूस देने का धब्बा उस पर लगा ही रहेगा?

हाय रे! अब सोचने पर दीपंकर को हँसी आती है। माँ तो उस समय नहीं जानती थी कि कलंक चाहे कितना भी मामूली हो, असत्य चाहे कितना ही नगण्य हो, एक दिन वही एक कण असत्य या वही तिलमात्र कलंक कभी सारे देश को मनुष्यता से शून्य और धर्म से विच्युत कर सकता है। कभी-कभी एक जने का जरा-सा पाप लाखों लोगों के सर्वनाश और करोड़ों लोगों के विनाश से भी मिटाया नहीं जा सकता। माँ तो नहीं जानती थी कि एक चंगेज खाँ के पाप का ऋण एक करोड़ लोगों को अपनी मौत से चुकाना पड़ता है। पता नहीं कहाँ किसके हिसाब में थोड़ी-सी गलती हुई तो ट्रेंड डिप्रेशन हुआ, लेकिन बहूबाजार के एक कोने में मिस्टर दातार को उसका फल भोगना पड़ा। सिर्फ मिस्टर दातार को क्यों, लक्ष्मी दी को भी उसका फल भोगना पड़ा। माँ का दोष नहीं है। शायद कोई भी इसे नहीं समझता। नहीं तो जिस दिन टोकियो से जापानी रूटन पहुँचे, उस दिन अमेरिका ने ही जापानियों को हवाई जहाज दिया था, ग्रेट ब्रिटेन ने राइफल दी थी, रूस ने टैंक दिया था और जर्मनी ने मशीनगन। व्यापार आखिर व्यापार है। उसमें ना-नुकुर नहीं चलता। लेकिन उस समय क्या वे राष्ट्र जानते थे कि कभी वही जापान सारे अफ्रीका और एशिया का नकशा पूरी तरह बदल देगा! उनके एशिया की सारी कालोनियाँ हाथ से निकल जायेंगी!

माँ ने मन ही मन हिसाब लगा लिया था। तैंतीस रुपये! तैंतीस रुपये का हिसाब बड़ा आसान है। भवानीपुर में छोटा-सा मकान, अच्छे मुहल्ले में थोड़ा-सा आराम, छटांक भर विश्राम और तोला भर शांति। माँ की इच्छा सीमित थी।

माँ पूछती थी — साल में कितने रुपये तनख्वाह बढ़ेगी?

दीपंकर कहता था — तीन रुपये ....

खाना पकाती हुई माँ मन ही मन हिसाब लगाती। अगर साल में तीन रुपये बढ़े तो पाँच साल में पन्द्रह रुपये बढ़ेंगे। याने दीपंकर की उम्र जब पचीस होगी, तब उसकी तनख्वाह होगी अड़तालिस रुपये। तब दीपंकर की बहू आयेगी। सुन्दरी श्रीतिमयी एक लड़की। ऐसी लड़की जो दीपंकर का ख्याल रखेगी, लेकिन सास पर भी श्रद्धा रखेगी। अड़तालिस रुपये में घर का खर्च चलाना होगा। लापरवाही से खर्च

फिर भी विन्ती दी नहीं छोड़ती। मा खाना बनाने में व्यस्त थी। विन्ती दी कहती — दीदी ....

— क्या है बिटिया ?

— मुझे भी अपने साथ लेती जाना दीदी, मैं यहाँ अकेली नहीं रहूँगी।

माँ कहती — तुम क्यों मेरे संग जाओगी बिटिया, तुम कितने बड़े आदमी की नतनी हो, तुम्हारे नाना के पास कितना रुपया है, बड़े आदमी के घर तुम्हारी शादी होगी, तुम्हें किस बात का दुःख है ? तुम हमारे साथ जाकर क्यों तकलीफ उठाओगी ?

माँ अनेक तरह से विन्ती दी को आश्वासन देती है। आँचल से विन्ती दी के आँसू पोंछती है। सुख और सौभाग्य का सपना दिखाती है। शायद विन्ती दी भी उस पर विश्वास करती है। लेकिन फिर जब लड़केवाले आकर देख जाते और देख जाने के बाद कोई खबर नहीं भेजते, तब विन्ती दी फिर रोने लगती है। कमरे का दरवाजा बंद कर चुपचाप आँसू बहाती है। किसी को उसके रोने का पता नहीं चलता। संसार में लोगों की कितनी समस्याएँ हैं, कितने लोगों के कितने दुःख हैं, कितने लोगों के कितने काम हैं, लेकिन विन्ती दी को लगता कि उसकी समस्या और उसके दुःख की कोई तुलना नहीं है।

बिस्तर पर दीपंकर ने करवट बदली।

— माँ !

माँ का जवाब नहीं मिला। कुत्ते अब भी भौंक रहे हैं। श्मशान की तरफ से हरिध्वनि आ रही है। पता नहीं कहाँ से इतने लोग मरते हैं ! हर क्षण मौत अपनी माँग पूरी करती रहती है। हरि-बोल में एक क्षण का विराम नहीं। सहसा कोई खटका हुआ। दीपंकर ने सिर उठाया। क्या सती आयी है ? क्या उस रात के सपने की तरह सती फिर उसके कमरे में आयी है ? लेकिन आयेगी कैसे ? किसलिए आयेगी ? मकान के सामने पुलिस का पहरा है न ! पुलिस के सामने से वह कैसे आयेगी ? फिर क्या वह पिछवाड़े के दरवाजे से अमड़े के पेड़ के नीचे से आयी है ?

दीपंकर ने चारों तरफ देखा।

उस दिन की तरह सपना तो नहीं देख रहा है ! नहीं, सपना नहीं है। यही तो वह अपने हाथ और पाँव को छू रहा है। यही तो आँख बंद करने पर अँधेरा हो गया और आँख खोलने पर भी अँधेरा। वह साँस रोककर सुनने लगा। लेकिन फिर कोई खटका नहीं हुआ। नहीं, सती आज क्यों आयेगी ? उसे क्या जरूरत पड़ी है आने की ? अब तो उसका बाप आया है। सती बाप से कितना प्यार करती है ! बाप की चिट्ठी मिलने में जरा देर होती थी तो वह कितनी परेशान हो जाती थी। वही बाप इतने दिन बाद आया है। अब तो सती नहीं आ सकती। हालांकि कुछ कहा नहीं जा सकता। आना चाहे तो आ भी सकती है। शायद कल की बात कहने आयी हो। कल उतना बड़ा कांड हो गया, शायद उसी के लिए कृतज्ञता जताने आयी हो। शायद

फोंटा भी कालीघाट का लड़का है। उसने जिन्दगी में ऐसे बहुत पुलिसवाले देखे हैं। बहुत से पुलिसवालों से उसकी दोस्ती है। उनके साथ उसने बीड़ी पी है और पिलायी है। उसने सोचा था, पुलिसवालों से रब्त-जब्त है तो कोई कुछ नहीं कहेगा। दीपंकर आँगन में खड़ा देखता रहा।

फोंटा ने दीपंकर को देखकर उससे कहा — देखा यार, तू जरा इन लोगों से कह दे। कह दे कि मैं इसी घर का लड़का हूँ। अघोर भट्टाचार्य का नाती। तू बता दे न इन लोगों से ....

उसके बाद पुलिसवालों की तरफ देखकर कहा — अरे भाई, यह मकान मेरा है। अघोर भट्टाचार्य मर जायेगा तो मैं ही इस मकान का मालिक बनूँगा।

लेकिन पुलिसवाला किसी तरह छोड़ने वाला नहीं। बोला — उतर, उतर जल्दी!

फोंटा ने कहा — अब देखो, फिर मजाक शुरू हो गया? अरे भाई, मैं अघोर भट्टाचार्य का नाती फटिक भट्टाचार्य हूँ। कालीघाट का हर कोई फोंटा के नाम से मुझे जानता है। क्यों भइया, मेरा मजाक क्यों कर रहे हो?

पुलिसवाला बिगड़ गया। उसने फोंटा को खींचकर नीचे उतारा। दीपंकर सुनता रहा कि फोंटा पुलिसवालों से चिरौरी कर रहा है। उसकी सारी बातें समझ में नहीं आयीं। लगा कि पुलिसवाला फोंटा को गर्दन पकड़कर खींच ले गया। उसके बाद खामोशी छा गयी। किसी की आवाज सुनाई नहीं पड़ी। कमरे में आकर दीपंकर ने दरवाजा बंद कर लिया। छिटे तब तक लौटा नहीं था। छिटे भी उसी तरह दीवार फाँदकर आयेगा। उसे भी पुलिसवाला पकड़ेगा। उसे भी हवालात में बंद कर दिया जायेगा। एक चाचाजी के कारण आज सब दोषी और निर्दोष बराबर परेशान हो रहे हैं। लेकिन कल जो लोग चाचाजी के घर घुसे थे, उनमें फोंटा नहीं था, छिटे भी नहीं था। वे इन बातों में नहीं रहते। वे सिर्फ कालीघाट बाजार के आसपास टीन से छाये मकानों में जाते हैं। वहीं वे तबला बजाते, बीड़ी पीते और नशा करते हैं। रात बारह बजे तक उस जगह दिन रहता है। वहीं उनके दोस्त-अहबाब हैं। वहाँ झगड़ा-फसाद होने पर वे बीच-बचाव करने जाते हैं। जब गाँजा पीने को मन करता है, तब वे मसानघाट चले जाते हैं। केवड़ातल्ले का श्मशान। साधु-वैरागियों के बीच लेक्चर झाड़कर वे एक-दो चिलम पी आते हैं। बस! वे सी० आर० दास को नहीं जानते। कांग्रेस या टेगर्ट साहब को नहीं जानते। अंग्रेज, अमेरिका या च्यांग काई शेक को भी वे नहीं जानते। उनको नौकरी नहीं करनी पड़ती, वे नृपेन बाबू को घूस नहीं देते। उन्हें न उन्नति की फिक्र है, न अवनति की। वे ही सही माने में सिटीजन ऑव दी वर्ल्ड हैं। वे अंग्रेजी शासन में हैं। जब कांग्रेसी शासन होगा, तब भी रहेंगे। उनके बारे में कोई शासन सिर नहीं खपाता। वे अजर-अमर हैं। इतिहास बदलता है, लेकिन वे अक्षय और अव्यय रहते हैं! वे ही इतिहास के डस्टबिन के खर-पतवार हैं।

गयी। दो पुलिसवालों के साथ दारोगा सामने खड़ा है।

दारोगा ने पूछा — दीपंकर सेन हैं ?

— हाय अम्मा, क्या हुआ ? किसका सर्वनाश हो गया ! अब मैं क्या करूँ ?

चन्नूनी के गले में अब भी इतना जोर है, यह किसी को मालूम न था।

चन्नूनी दीपंकर के कमरे का दरवाजा पीटने और चिल्लाने लगी — अरी दीदी, सिपाही आये हैं। अरी दीदी, दीपू ने किसका सर्वनाश किया है ?

हाँ, तो उस समय चन्नूनी ने चीखना-चिल्लाना शुरू कर दिया था। उस आवाज से दीपंकर की माँ जग गयी थी और विन्ती दी भी। अघोर नाना भी चिल्लाने लगे थे। तब तक ए० एस० आई० और दो कान्स्टेबिल आँगन में चले आये थे। उनको हर जगह पहुँच जाने का अधिकार जो है।

माँ ने ठेल-ठेलकर दीपंकर को जगाना शुरू किया — अरे दीपू, उठ, उठ, पुलिस आयी है, पुलिस ....

काफी ठेलाठेली के बाद दीपंकर उठा। आँखों में नींद लिये वह बाहर आया तो ए० एस० आई० ने पूछा — आपका नाम दीपंकर सेन है ?

दीपंकर बोला — जी हाँ ....

— आपके नाम वारन्ट है, हम आपको गिरफ्तार कर रहे हैं।

याद है, उस दिन पहले तो दीपंकर भी भौंचक्का हो गया था। दीपंकर को पुलिसवाले गिरफ्तार करेंगे ! उसने क्या किया है ! उसका क्या अपराध है ? अभी उसे दफ्तर जाना है। रेलवे दफ्तर में वह नौकरी करता है। साढ़े दस बजे उसे दफ्तर पहुँचना है। अभी वह सब्जी खरीदकर लायेगा तो माँ खाना पकायेगी, फिर खाना खाकर वह दफ्तर जायेगा। अगर उसे गिरफ्तार भी किया जाता है तो साढ़े दस बजे से पहले छोड़ देना होगा। नहीं तो उसकी नौकरी नहीं रहेगी। नयी-नयी नौकरी है। रॉबिन्सन साहब उसे ढूंढ़ेगा न ! ट्रांजिट सेक्शन का काम रुक जायेगा। जापान ट्रैफिक का काम बन्द हो जायेगा।

ए० एस० आई० सफेद गलाबन्द यूनिफार्म में है। सवेरा होने से पहले नींद से उठकर उसे ड्यूटी बजाने आना पड़ा है, इसलिए मिजाज जरा चिड़चिड़ा है।

बोला — इतना जवाब देने की फुरसत नहीं है, थाने चलिए, वहीं सब जवाब मिल जायेगा।

— फिर ?

— फिर मेरे साथ थाने चलिए।

— कब छोड़ देंगे ?

— यह थाने के ओ० सी० बता सकते हैं।

दीपंकर बोला — चलिए।

माँ अब तक सब सुन रही थी, अचानक चीख उठी। बोली — तूने क्या

साम्राज्य के केन्द्र स्थल में इतनी बड़ी अराजकता ने मानो टेगर्ट साहब को पागल बना दिया था। साहब अंधा हो गया था। उसके लिए यह सब असहनीय हो गया था। मुहल्ले-मुहल्ले घूमकर टेगर्ट साहब ने जब ठेठ बंगला में बात की, गाली-गलौज की, तब लोग आश्चर्य में पड़ गये। उसी आदमी को सबने अपने मुहल्ले में अद्धी का कुर्ता और धोती पहने घूमते देखा था। लेकिन उस समय कौन जानता था की वही टेगर्ट साहब है — कलकत्ते का पुलिस कमिश्नर और ब्रिटिश शासन का प्रतिनिधि चार्ल्स टेगर्ट।

मुहल्ले के सभी जवान लड़के पकड़े गये थे। सिर्फ दीपंकर बचा था। अंत में वह भी पकड़ा गया। अपराध? अपराध की बात बाद में होगी, पहले थाने चलो, पहले पूछताछ होगी, तब चार्ज बनेगा और सजा मिलेगी!

बाजार के किनारे से रास्ता है। सब लोग आँखें फाड़कर देख रहे हैं। दीपंकर सिर झुकाये चला जा रहा है। उसके कानों में मानो उस समय भी माँ का आर्तनाद पड़ रहा है।

दीपंकर भवानीपुर थाने में ओ० सी० के पास पहुँचा। यही पहली सीढ़ी है।

एक टूटी कुर्सी पर दीपंकर बैठा।

— क्या नाम है?

सिर्फ नाम नहीं। नाम, पता, बाप का परिचय, सब कुछ लिखा गया। चारों तरफ पुलिस का पहरा है। चारों तरफ शासन-यंत्र चालू है। चारों तरफ क्रूर कठिन कर्तव्य है। लौह-कठिन निर्मम शासन! कहीं जरा-सी ढिलाई नहीं है। सात समन्दर पार के नियम-कानून की साँकल से बँधा वह यंत्र लुढ़कता चला जा रहा है। लुढ़कता हुआ वह एकदम थाने के गेट के सामने पहुँच गया। काले रंग की मोटर। लेफ्ट-राइट कर सिपाहियों ने दीपंकर के लिए रास्ता बनाया। कहीं आसामी भाग न जाय। खूब होशियार! संगीन तानकर खड़े रहो! जरा ढीला पड़ते ही इंडिया हाथ से निकल जायेगा! दीपंकर उस गाड़ी के अँधेरे में डूब गया तो भारत-शासन का यंत्र फिर चलने लगा। अब वह चला उत्तर की तरफ! चौरंगी रोड से सीधे इलिशियम रो के आँगन में आकर वह रुका!

छोटी-छोटी कोठरियाँ। एक के बाद एक। एस० बी० और आई० बी० का दफ्तर। यहाँ भी वही नियम। सामने जाते ही बँधे-बँधाये सवालों का तूफान उठा।

— यह सब क्या सुन रहा हूँ?

वज्र-गंभीर स्वर सुनकर दीपंकर ने सिर उठाकर देखा। लंबा-चौड़ा विशाल शरीरवाला पुरुष है। भले आदमी की तरह उसकी साधारण पोशाक है। पहली बार दीपंकर ने राय बहादुर को देखा। राय बहादुर नलिनी मजुमदार। आबनूसी काला रंग। एक बार देखने से उनका सब कुछ देख लिया जाता है। मनुष्य के मन के भीतर की असली छवि उनके चेहरे पर लिखी होती है।

होशियार ! इस बार थाने के दफ्तर में नहीं। अब सीधे लॉक-अप में। लोहे की मोटी-मोटी छड़ोंवाला दरवाजा दीपंकर को निगलने के लिए पूरा खुल गया। उस बदबूदार जगह में दीपंकर का मानो दम घुटने आया। पहले उसे कुछ दिखाई नहीं पड़ा। एकाएक अँधेरे में आने के कारण उसकी आँखें काम नहीं कर रही थीं। उसके बाद उसे लगा, वहाँ बहुत से लोग हिल-डुल रहे हैं।

— कौन ? दीपू ? अरे यार, तू भी आ गया ? तुझे भी पकड़ लिया।

फोंटा की आवाज है। दीपंकर ने गौर से देखा। छिटे भी है। दीवार से टिककर पांव मोड़े वह जमीन पर बैठा है।

फोंटा पास आया। उसने दीपंकर को आश्वासन दिया। कहा — इतना उदास क्यों है रे ? क्या पहली बार आया है।

दीपंकर तुरंत कोई जवाब दे नहीं पाया।

अब छिटे भी पास आया। बोला — पहले पहल तो उदास रहेगा ही। पहली बार मैं भी उदास हो गया था — है न फोंटा ?

फोंटा बोला — घबड़ा मत दीपू, यहाँ कोई दिक्कत नहीं है। जरूरत पड़ने पर तुझे यहीं बीड़ी मँगा दूंगा ....

तब तक हवालात का भारी दरवाजा चीख के साथ बन्द हो गया।

• • •

सिर्फ एक दिन नहीं, लगातार कई दिन वे लोग दीपंकर को यहाँ से ले गये और यहाँ छोड़ गये। याद है, उस पर कितना अत्याचार हुआ और उसे किस-किस तरह फुसलाया गया। लेकिन वह कुछ जानता ही नहीं था तो बताता क्या ?

दीपंकर ने कहा था — आप विश्वास कीजिए, मैं कुछ नहीं जानता।

राय बहादुर ने आखिर दूसरा रास्ता अपनाया। कहा — छी-छी ! इन लोगों ने आपको पीटा है ? माथे पर दाग देख रहा हूँ।

दीपंकर चुपचाप खड़ा था। इस बात का जवाब देने में भी उसे घृणा हुई।

राय बहादुर बोले — खैर, लेकिन आप अभी तक खड़े क्यों हैं ? बैठिए, खड़े

निकालते ही गये। गड्डियों पर गड्डियाँ। बारबार जेब पर हाथ रखते हुए कहा — इनको अपने पास रख लीजिए। दस हजार है। मेरा गिना हुआ है, फिर भी आपके सामने गिन रहा हूँ ....

कहकर एक गड्डी उठाकर गिनने लगे — एक, दो, तीन —

दस हजार रुपये! इसी रुपये के लिए उस दिन दीपंकर को सती की खुशामद करनी पड़ी थी। उसे दस हजार की जरूरत नहीं है, सिर्फ छः हजार से काम चल जायेगा। उसी से मिस्टर दातार के सब कर्जे अदा हो जायेंगे। दीपंकर अपलक उन रुपयों की तरफ देखने लगा।

— इनको उठा लीजिए, अपने पास रख लीजिए। लाइए, देखूँ आपकी जेब, मैं ही रख देता हूँ। उसके बाद टैक्सी से घर पहुँचा दूँगा। लीजिए, आइए। सिर्फ एक नाम बतायेंगे, कोई जान भी न पायेगा और कोई डर भी नहीं है। मुफ्त में आपको दस हजार रुपये मिल गये। रोज ही कितने लोग अरेस्ट हो रहे हैं, अमृत सरकार भी अरेस्ट होगा, आपके न बताने पर भी अरेस्ट होगा। इसलिए आप बताकर यह रुपया ले लीजिए। फिर देखिए, आपकी पोजीशन भी नहीं बिगड़ी। आप सोच लीजिए ....

उस दिन बस यहीं तक।

राय बहादुर ने सोचने के लिए काफी समय दिया था। लॉक-अप में भी दीपंकर ने काफी सोचा था। दस हजार रुपये! उसकी माँ का अभाव, उसकी तैंतीस रुपये की नौकरी और उसका भविष्य! क्या जीवन में कभी वह दस हजार रुपये इकट्ठा कर सकेगा? कोई नहीं जान पायेगा और कोई शक नहीं करेगा। लेकिन अमृत सरकार! कौन है अमृत सरकार? एक किरण के अलावा वह और किसे जानता है! लेकिन किरण का पता भी वह नहीं जानता। किरण का बाप बीमार है, माँ गरीब है, लेकिन नेपाल भट्टाचार्य लेन की बस्ती वाले घर में तो वह रहता भी नहीं। किरण कहाँ रहता है, इसका कोई ठिकाना नहीं है। फिर भी किरण का नाम बता देने पर दस हजार रुपये मिल जायँ। कब किस तरह वह किरण के साथ मैंडॉक्स स्क्वायर गया था और क्या-क्या बातें हुई थीं — इतना बता देने पर भी दस हजार रुपये का मालिक बना जा सकता है!

दूसरे दिन फिर उसी कमरे में! राय बहादुर बैठे थे। बगल में दो पुलिस इन्स्पेक्टर खड़े थे।

दीपंकर के आते ही राय बहादुर ने कहा — आइए, आइए, बैठिए ....

उसके बाद इन्स्पेक्टरों की तरफ देखकर बोले — दीपंकर बाबू को आप लोगों ने देखा है?

दोनों चुप रहे।

हैवान समझ लिया है ? राय बहादुर का चुरुट पीता चेहरा अचानक उसे [illegible]
लगने लगा। अचानक लगा कि शैतान मानो शरीर धरकर धरती पर उतर [illegible]
मानो मानवता का अस्तित्व चूर्ण-विचूर्ण करने के लिए फिर कोई कालापहाड़ [illegible]

—क्या हुआ, जवाब दीजिए ?

दीपंकर बोला — मैं जवाब नहीं दूँगा। आप लोगों के पास जितने ह[illegible]
हैं, इस्तेमाल कर लीजिए।

—उसका क्या परिणाम होगा, आपने सोच लिया है ?

दीपंकर बोला — टी० बी० होगी, मुँह से खून उगलकर मर जाऊँगा ....

राय बहादुर हो-होकर हँसने लगे। बोले — अरे नहीं साहब, मैं तो आप[illegible]
इम्तहान ले रहा था। देख रहा हूँ कि आप दोस्ती निभाना जानते हैं ....

उसके बाद उन्होंने शांति को बुलाया — शांति, इनको सोचने के लिए एक
दिन का समय और दो। कल एक बार फिर ले आना ....

कहकर राय बहादुर चले गये।

ए० एस० आई०, शांति बाबू कमरे से निकलते समय बोला —क्यों साहब,
इतना बढ़िया चान्स क्यों छोड़ रहे हैं ?

—कैसा चान्स ?

शांति बाबू बोला — राय बहादुर को तो आप जानते नहीं, वे ऐसा चान्स
किसी को नहीं देते। पता नहीं, आपके लिए उनको कैसी फैन्सी हो गयी है, एक बात
पर उन्होंने दस हजार रुपये निकाल दिये ! और आपका भी लोहा मानता हूँ, साहब,
रेल की मामूली नौकरी करते हैं, विधवा माँ है, आपने उनका एक बार भी ख्याल नहीं
किया —

दीपंकर चुप ही रहा।

शांति बाबू कहता गया — मैं पुलिस का आदमी हूँ साहब, मुझे आपसे यह
सब नहीं कहना चाहिए, लेकिन आपकी बात सोचकर बिना कहे रह नहीं पा रहा हूँ।
मेरे घर में भी विधवा माँ है, तीन लड़कियों की शादी करनी होगी, अगर मुझे कोई
ऐसा चान्स देता तो मैं नहीं छोड़ता। यह तो आप हाथ आयी लक्ष्मी को ठुकरा
रहे हैं।

उसके बाद उन्होंने लंबी सांस छोड़ी। कहा — खैर, आप जैसा अच्छा समझें
[illegible]गे, कहना मेरा फर्ज था — कह दिया। जाइए, आज रात भर अच्छी तरह सोच
[illegible]जिए। कल शायद राय बहादुर आपको बैटरी घर में ठेल देंगे।

दीपंकर गाड़ी में बैठने जा रहा था।

शांति बाबू जल्दी-जल्दी लौट आया। बोला — एक बात आपसे कहना भूल
[illegible], किसी से कहिएगा नहीं, नहीं तो मेरी नौकरी खतरे में पड़ जायेगी ...

— क्या ?

अपने को छोटा किया ? क्यों दीपंकर की आँखों में उसने अपने को इतना गिरा दिया !

प्रतिदिन वही इलिशियम रो और भवानीपुर थाना। मानो सारी पृथ्वी का चक्कर लगाना। उस दिन इलिशियम रो से लौटने के बाद देखा हवालात खाली है। कोई नहीं है। छिटे और फोंटा भी नहीं हैं। इन्हीं थोड़े से दिनों में उनसे अच्छी दोस्ती हो गयी थी। उनके मकान में रहते हुए भी उनसे दीपंकर की इतनी दोस्ती नहीं हुई थी। जब दीवार से सिर टिकाकर दीपंकर चुपचाप अकेला बैठा रहता था, तब कभी-कभी छिटे उसके पास आता था। कहता था — क्यों रे, रो रहा है ? सिर उठा, देखूँ ....

दीपंकर का सिर वही हाथ से सीधा कर लेता। कहता — कुछ बोलता क्यों नहीं ? मैं समझा, तू रो रहा है।

उसके बाद सान्त्वना देता। कहता — क्यों इतना सोच रहा है ? हम लोगों की बात जरा सोच ! हम यहाँ कितनी बार आये हैं, फिर एक दिन छूट गये हैं। वह सब क्या हमारे माथे पर लिखा हुआ है ? सुभाष बोस और गांधी की बात क्यों नहीं सोचता ? कितनी बार इसी कमरे में हम पास-पास रहे हैं। फिर एक दिन सब छूट गये हैं। लेकिन एक बात कहूँगा यार, इतने लोगों के साथ यहाँ रहा, लेकिन सुभाष बोस जैसा दूसरा आदमी नहीं देखा। बड़ा अच्छा है। लोग चाहे जो कहें, कभी एक बीड़ी भी उसने नहीं पी। बड़ा सच्चा आदमी है यार !

छिटे भी आता। कहता — कभी-कभी मन करता है कि यह लाइन छोड़ दूँ। जानता है दीपू, अब इस लाइन से नफरत हो गयी है। पहले यह लाइन अच्छी थी। शरीफ लोग इस लाइन में आते थे, माल खाते थे, मजा लेते थे और आर्टिस्ट की कदर करते थे। लेकिन आजकल छोटे लोगों की भीड़ बढ़ गयी है। जरा-सा माल खाते ही अंय-बंय बकने लगते हैं और बात-बात पर माँ-बहन की गाली !

मनपसंद श्रोता पाने पर फोंटा खुश था। वह दीपंकर से सटकर बैठता। कहता — फिर सुन, एक बार राजा सुबोध मल्लिक के घर बजाने गया था। लखनऊ से अख्तरी बाई आयी थी। मैं भी अपना साज लेकर पहुँचा था। बजाने के लिए मैं आस्तीन मोड़ ही रहा था कि राजा के मैनेजर ने आकर हाथ जोड़कर कहा — फटिक बाबू, जरा मेहरबानी करनी होगी। कहकर बगलवाले कमरे में ले गया। कहने पर विश्वास नहीं करेगा दीपू, असली विलायती ह्विस्की की बोतल खोल दी। कहा — पहले थोड़ी-सी मेहरबानी कीजिए फटिक बाबू, नहीं तो आपका तबला जमेगा नहीं ....

उसके बाद फोंटा एकाएक दार्शनिक बन जाता। थाने की उस अँधेरी वीभत्स हवालात में दार्शनिक बने बिना कोई चारा नहीं था। फोंटा कहता — इसीलिए तुझसे कह रहा था दीपू, भले घर के लड़के अब इस लाइन में नहीं रह सकते। आजकल कोई हम लोगों की इज्जत भी नहीं करता। समझ गया न, अभी तक जिसने धा-गे-धिन्ना नहीं सीखा, आजकल वही तिहाई मारकर महफिल को बेवकूफ बना देता है। अब यह सब रोना किसके पास रोऊँ ?

लक्का ! दीपंकर के देखने का ढंग देखकर छिटे-फोंटा समझ गये कि दीपंकर किसी को नहीं जानता। सचमुच ताज्जुब की बात है। इतने दिन से दीपंकर कालीघाट में है, यहीं पढ़ा-लिखा, इसी मुहल्ले में रहकर उसने बी० ए० पास किया और लक्का या लोटन को नहीं जानता !

— बस, तूने नाम के वास्ते बी० ए० पास कर लिया है, लेकिन जानता कुछ नहीं है !

फोंटा कहता — खैर, नाम सुना है या नहीं, इससे कुछ नहीं फर्क पड़ता। तू हिन्दू होटल के पीछे की तरफ टीन की छाजनवाले पक्के मकान के दरवाजे पर जाकर लोटन का नाम लेकर पुकारना, मैं मिल जाऊँगा। रात ग्यारह बजे आना।

उसके बाद अभय देकर कहता — तू घबड़ाना मत, लोटन अपनी ही है। अगर कोई कुछ कहे तो मेरा नाम बता देना, बस ! उस मुहल्ले के सब गुंडे मेरे दोस्त हैं ! तू इतने दिन से वहाँ है, और यह सब नहीं जानता ? मैंने लोटन को रख लिया है, और भैया ने लक्का को, चन्नूनी की बड़ी लड़की को ....

छिटे भी हामी भरता। कहता — हाँ रे ! तू यह नहीं जानता था ? लक्का तो मेरे पास रहती है। वह तो चन्नूनी की बड़ी लड़की है।

फिर अचानक छिटे पूछता — चन्नूनी अघोर नाना की कौन है, यह भी तू न जानता होगा, कैसे जानेगा ?

थाने की हवालात में मनुष्य शायद सचमुच पशु बन जाता है। भला-चंगा आदमी बीमार पड़ जाता है तो छिटे-फोंटा का क्या पूछना। रोज-रोज छिटे-फोंटा की बातें सुनते-सुनते दीपंकर को सचमुच जरा भी घृणा नहीं लगती थी, बल्कि उन दोनों के लिए ममता होती थी। ममता इसलिए होती थी कि ये भी तो इसी देश के वासी हैं। ये भी तो जिंदा रहते हैं और इनके भी तो बाल-बच्चे हैं ! देश में स्वराज होगा तो क्या इनको भी मतदान का अधिकार मिलेगा ? क्या ये भी वोट नहीं डालेंगे ? पता नहीं, किस किताब में दीपंकर ने पढ़ा था कि ये ही लोग इतिहास के डस्टबिन ऐसे होते हैं। शायद छिटे-फोंटा वहीं हैं !

— अरे, इसी लिए तो बिन्ती की शादी नहीं हो रही है। यह सब तू नहीं जानता ?

छिटे और फोंटा के हँसने की आवाज से हवालात के बाहर खड़ा कान्स्टेबल भी मुड़कर देखने लगता है।

— हल्ला मत कर ! हल्ला मत कर।

चाहे जितना कुत्सित हो और चाहे जितना अश्राव्य, फिर भी दीपंकर को लगता था कि यह भी एक आविष्कार है। यहाँ आकर उसने मानो जीवन को एक दूसरे ही कोण से देखा। बचपन से इतने दिन वह सिर्फ लाइब्रेरी बनाता रहा, स्वराजियों के बारे में जानता रहा, सी० आर० दास, सुभाष बोस और कांग्रेस का नाम सुनता रहा,

मकान है। उसी के सामने जाकर पुकारना। लोटन का नाम याद रहेगा न?

दूसरे दिन फिर वही इलिशियम रो। फिर राय बहादुर नलिनी मजुमदार की वही जिरह।
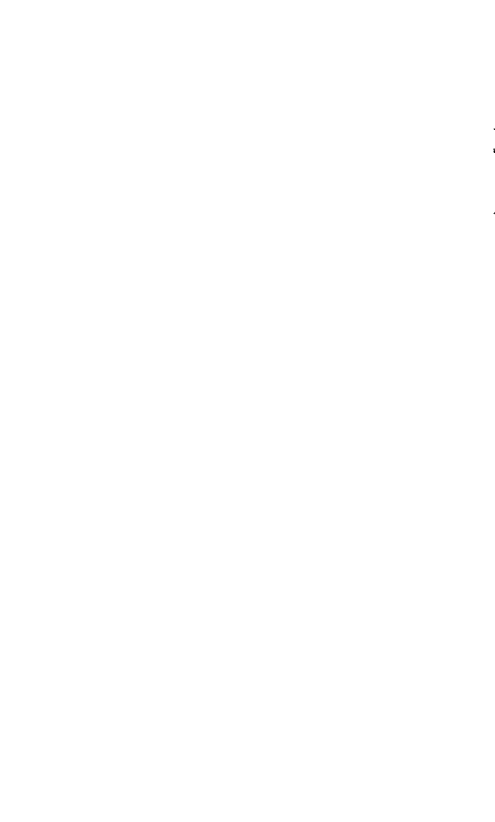
— फिर आपने क्या तय किया दीपंकर बाबू?

शांति बाबू साथ में था। बोला — मैंने बहुत समझाया है सर, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ।

दीपंकर चुपचाप खड़ा था। चुरुट मुँह में लगाये राय बहादुर न जाने क्या सोचने लगे। बोले — फिर रेगुलेशन थ्री में डाल दो ....

सहसा दीपंकर ने पूछा — आप लोग सच कह रहे हैं कि किरण पकड़ा गया है?

— सच नहीं तो क्या झूठ कह रहा हूँ? झूठ कहने से क्या फायदा?

— किरण ने आप लोगों से मेरा नाम-पता बताया?

— किरण न कहता तो हम कैसे एक-एक बात जान जाते? इसी तरह बात का पता लगाया जाता है। फिर किरण ही क्यों, आपके दल के सभी को हम एक-एक कर पकड़ लेंगे। कोई नहीं बचेगा। बस, एक-दो महीने का मौका दीजिए। इसीलिए तो कह रहा था कि आप बड़ी बेवकूफी कर रहे हैं। आप एक विधवा माँ के इकलौते बेटे हैं, इसीलिए आपको यह स्पेशल ऑफर दे रहा हूँ ....

दीपंकर फिर आश्चर्य में पड़ गया। किरण ने ऐसा क्यों किया? क्यों उसने इस तरह सबका सर्वनाश किया? इसी ने तो एक दिन दीपंकर को समझाया था कि इसी तरह बड़े-बड़े राज्य और साम्राज्य धूल में मिल जाते हैं, ऐश्वर्य का बड़े से बड़ा भंडार एक दिन खाली हो जाता है, लेकिन मानवता का सम्पर्क सदा बना रहता है! मानवता का अपमान शून्य से अधिक सूना है, क्योंकि फिर पूर्णता का नामो निशान भी नहीं रहता। वही मानवता कभी किरण की एकमात्र दौलत थी। उसके पास कोई और धन या ऐश्वर्य नहीं था। कुल-गौरव, पद-मर्यादा, वित्त-वैभव या और कुछ उसके पास नहीं था। फिर भी दीपंकर उससे प्यार करता था। उसी प्यार की कीमत उसने इस तरह अदा की?

उस दिन लौटकर दीपंकर ने छिटे-फोंटा को नहीं देखा। दो-चार जने जो थे, उन सबने कहा कि वे छूट गये हैं। अच्छा हुआ! अकेले एक कोने में बैठकर दीपंकर ने सारा दिन बिता दिया। अच्छा हुआ कि वे दोनों चले गये। रातदिन दोनों बहुत परेशान करते थे। वे ऐसा दिखावा करते थे कि मानो सारी दुनिया उनकी मुट्ठी में हो। फिर भी दीपंकर को उन पर दया आती थी। वह सोचता था कि वे दोनों नहीं जानते कि वे कितने कंगाल हैं। वे कालीघाट बाजार को ही सारा संसार मानकर चल रहे हैं

सका। इसलिए भवानीपुर की जानी-पहचानी सड़क पर थोड़ी देर खड़े होकर उसने जी भरकर चारों तरफ देख लिया। जो पृथ्वी सुख देती है, दुःख देती है, यंत्रणा देती है, और सांत्वना भी देती है, जो पृथ्वी प्रतिदिन की घनिष्ठता से सहज ही पुरानी लगने लगती है, जिस पृथ्वी से मनुष्य का जन्म का सम्पर्क है, मृत्यु का सम्पर्क है, जिसको हर क्षण मनुष्य पाँवों तले रौंदता है, फिर जिसके आश्रय में अनन्त काल तक जिन्दा रहता है, वही पुरानी पृथ्वी मानो दीपंकर को बड़ी अच्छी लगी। खास कर उसी दिन उसे लगा था कि इस पृथ्वी से मनुष्य का नाता कभी टूट नहीं सकता। यह नातासिर्फ जीवनभर का ही नहीं, उससे आगे का भी है। किसी दिन अन्य सारे नाते-रिश्तों की तरह पृथ्वी से भी नाता शायद थोड़े समय के लिए टूटता है, लेकिन मानव के इतिहास के मुकाबले में वह क्षणभर का बिछोह उस दिन उसे कल्पांतव्यापी लगा था। उस दिन भवानीपुर की भीड़भरी सड़क को देखकर उसे लगा था कि उसके जीवन के सारे सम्पर्कों का सूत्र मानो यहीं आकर मिला है। इतने दिन जिस पथ के भ्रम में पड़कर वह घूमा करता था और कभी प्रेम, कभी अविश्वास कभी घृणा, कभी बाधा और कभी आनन्द पाता रहा, आज मानो वह सब इस जेलखाने के दरवाजे के सामने आपस में घुल-मिल गया। हवालात के बाहर आते ही यह सब हो गया। मानो इतने दिन बाद भाग्य ने उसे सही जगह आकर खड़ा कर दिया था। जो प्यार उसे मिला था वह जैसे सच नहीं था, वैसे जो प्यार उसे मिला नहीं था वह भी सच नहीं था। इस पाने-न पाने के द्वन्द्व से जब वह दिग्भ्रांत होने लगा था, तभी मानो पथ के मोड़ पर आकर उसे गंतव्य स्थल का संकेत मिल गया। शायद बिछुड़े बिना आँखों का धोखा दूर नहीं होता। इस पृथ्वी से वह बिछुड़ चुका था, इसीलिए मानो इस पृथ्वी का यह भवानीपुर उसे इतना अच्छा लगा। ईश्वर गांगुली लेन ज्यादा दूर नहीं था, फिर भी वहाँ से रास्ता पहचानकर लौटने में मानो उसे लंबा अरसा लग गया। शायद किरण को उसने मन-प्राण से भोगना चाहा था, शायद किरण से उसने स्वार्थी की तरह प्यार किया था, शायद इसीलिए आज उसके अनुराग और विराग में इतना विरोध हो गया था। शायद इसीलिए किरण की अप-मृत्यु ने दोनों का सम्पर्क-सूत्र इस तरह तोड़ दिया था!

—दीपंकर!

अगर कभी किसी रात कोई अशरीरी आत्मा उसे बुलाये तो शायद वह इसी तरह बुलायेगी। हरीश मुखर्जी रोड पर दीपंकर मानो छिपकर चल रहा था। लगा, उसका अतीत मानो फिर उसे पीछे लौटने को कह रहा हो। मानो कह रहा हो—सब झूठ है, मैं अकेला सच हूं। अतीत का हर्ष भी सच है और विषाद भी। तुम्हारा भविष्य जितना सच है, उससे कम सच तुम्हारा अतीत नहीं है। फिर भी दीपंकर आँखें बंद कर चलने लगा। उसे क्या हो गया है? कुछ भी तो नहीं! ऐसे कितने संकट आते हैं, कितने पतन होते हैं! फिर उत्थान भी है—इस संसार में अभ्युत्थान भी है शायद इन कई दिनों की अनुपस्थिति से उसकी नौकरी नहीं रही है। शायद उसके लिए

बोला — वाइ द वे, हम लोगों का वह किरण, वह तो तेरा भी दोस्त था, एक बार मैंने उसे लाइब्रेरी के लिए चन्दा भी दिया था, सुना, एकदम बिगड़ गया है ? तुझे कुछ मालूम है ?

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया।

निर्मल कहता गया — सुना, आजकल वह टेररिज्म करता फिर रहा है। सुनकर मुझे बड़ा शॉक लगा। आइ गॉट हर्ट। हजार हो, कभी तो उसे जानता था, वही आखिर — हालांकि पॉवर्टी .... पॉवर्टी ही इसका कॉज है। मैंने उस दिन रॉबिन्सन से यही कहा था ....

सहसा बायां हाथ पलटकर देखते ही वह उछल पड़ा।

— माइ गॉड !

पास ही गैरज से बहुत बड़ी मोटरकार निकल रही थी। उसी तरफ देखकर मानो निर्मल को घड़ी देखने की याद आयी।

बोला — पास्ट सेवन।

— कहीं जाना है क्या ? देर कर दी ?

निर्मल बोला — ज्यादा दूर नहीं जाऊंगा, सती मित्र की शादी है न, अरे वही जो जयंती की फ्रेंड है —

सती !

निर्मल बोला — पहले वह तो तेरे मुहल्ले में किराये के मकान में रहती थी। वह जिसके घर में रहती थी उस बेचारे का दोष यही था कि वह सी० आई० डी० में है। पता नहीं, यह मुल्क बिडिंग टुअर्ड्स ह्वाट — मैं समझ नहीं पा रहा हूं। मैं समझता हूं, यह सब पॉवर्टी के कारण है, और कुछ नहीं। मैंने उस दिन रॉबिन्सन से यही कहा ....

— सती की शादी हो रही है ? सती की ? तुझे ठीक से मालूम है न ?

निर्मल बोला — शादी नहीं, बहूभात। यहीं तो पास में प्रियनाथ मल्लिक रोड पर। जयंती को वहां छोड़ दूंगा — मैं भी थोड़ा मिल लूंगा, और क्या ? खैर, सती के बाप को बहुत थोड़े समय में अच्छी पार्टी मिल गयी। मल्टी-मिलियनेअर है, फिर जानता है, लड़का भी अच्छा मिल गया, बड़ा हैंडसम। अरे, वही सनातन घोष, हम लोगों का पुराना क्लायंट भी है ....

पता नहीं, निर्मल ने और भी क्या-क्या कहा। अंग्रेजी-बंगला मिलाकर अब उसने जो कुछ कहा, वह दीपंकर ने नहीं सुना। निर्मल की कार स्टार्ट हुई तो दीपंकर चौंककर फुटपाथ पर चला गया। फिर उसने एक पल के लिए देखा, निर्मल कार में बैठा है और उसकी बगल में उसकी बहन जयंती है। बस, एक पल के लिए। कहना चाहिए, एक पल भी नहीं। शायद एक पल का कोई अंश हो। लेकिन निर्मल की कार चली जाने के बाद देर तक दीपंकर वहीं निस्पंद विमूढ़-सा खड़ा रहा।

कह दे कि वह अभी थोड़ी देर में लौटेगा। लेकिन पुकारना चाहकर भी उसके गले से आवाज नहीं निकली। आज कितने दिन हो गये उसने भरपेट खाना नहीं खाया। सिर्फ दोनों वक्त उसे दो-चार कचौड़ियाँ और आलू की थोड़ी-सी सब्जी दी जाती थी। उसके पाँव लड़खड़ा रहे हैं। मानो घर जाकर विस्तर पर लेट जाय तो बड़ा आराम मिले। लेकिन माँ को पुकारने जाकर भी उसका गला रुँध आया। अगर इस हालत में कोई उसे देख ले? अगर चन्नूनी इस समय कहीं से आ जाय। अगर उस पर चन्नूनी की निगाह पड़ जाय? दीपंकर लौटा।

जिस रास्ते से आया था, ठीक उसी रास्ते से दीपंकर लौट चला। वह फिर काली के मंदिर से उत्तर तरफ नयी सड़क से चलने लगा। वह सीधे रसा रोड से हाजरा रोड पहुँचा। उसके वाद पूरव तरफ मुड़कर प्रियनाथ मल्लिक रोड मिला। लेकिन मकान नंवर तो वह नहीं जानता। निर्मल पालित ने सिर्फ सड़क का नाम वताया था।

एक गली के नुक्कड़ पर आते ही उसे दूर से शहनाई का सुर सुनाई पड़ा।

गली में घुसकर दीपंकर धीरे-धीरे उस मकान के सामने जा खड़ा हुआ। पूरा मकान रोशनी से सजाया गया है। छत पर शामियाना तना है। गली जहाँ से शुरू होती थी, वहीं से गाड़ियों की भीड़ भी। कतार में गाड़ियाँ काफी दूर तक खड़ी हैं। शहनाई पर कौन-सा सुर वज रहा है, क्या पता! दीपंकर के दिमाग पर नशा छाने लगा। वह यह भी भूल गया कि कई दिन से वह भूखा है। उसे यह भी याद न रहा कि कल से उसकी नौकरी नहीं रहेगी। उसकी माँ वीमार और विस्तर पर पड़ी है, यह भी उसे याद न रहा। चारों तरफ वड़ी भीड़ है, वड़ा समारोह और निमंत्रितों की आवभगत का भरपूर आयोजन। शायद दीपंकर ही वहाँ एकमात्र विन-वुलाया है, एकमात्र अपरिचित। फिर भी उसे लगा कि यही ठीक है। यही अच्छा है। एकदम विच्छिन्न होकर अलग अपरिचित के रूप में उसका आना उचित है। इस विच्छिन्नता का अतिक्रमण कर ही वह पूर्ण वनेगा। इतने दिन तक वह पूरी तरह विच्छिन्न नहीं हो सका था, इसीलिए सारा विक्षोभ उसे सताता रहा। अव उसका कोई कर्त्तव्य नहीं है, कोई उत्तरदायित्व भी नहीं। अव किसी से उसका कोई प्रयोजन नहीं है, अव किसी वात से उसका कोई मतलव नहीं। मानो एक-एक कर उसने अपने सव अधिकार स्वस्थ और प्रसन्न चित्त से त्याग दिये। कभी वह दूसरों की अच्छाई और वुराई को लेकर परेशान होता था, लेकिन अव वैसी परेशानी नहीं रही। आज सर्वहारा वनकर वह मानो सर्वस्व समर्पण के दायित्व से मुक्ति पा गया।

रोशनी, खुशी, स्वागत और अनुष्ठान में कहीं भी कमी नहीं है।

लाल कनात की वगल से अनगिनत निमन्त्रितों का आना-जाना अव भी जारी है। दीपंकर दूसरी मंजिल की खिड़कियों की तरफ वेमतलव देखकर न जाने अपने मन में क्या सोचने लगा! आज के इन निमन्त्रितों में वह नहीं है, आज के इस उत्सव में

अश्लील गालियाँ।

लेकिन उस दिन दीपंकर ने दूसरी ही दृष्टि से चन्नूनी को देखा। किसी जमाने में चन्नूनी की उम्र कम थी। उस जमाने में वह इस घर की उप-गृहिणी थी, लेकिन आज ढूंढ़ने पर उसमें उसका कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़ेगा। क्या उम्र के साथ-साथ मनुष्य का सारा अतीत भी लुप्त हो जाता है? क्या सब कलंक धुल जाता है?

सभी दौड़कर आये। छिन्ती दी अपने कमरे से निकलकर बाहर खड़ी हो गयी। उसकी जबान पर कोई शब्द नहीं है। मानो विस्मय के मारे वह कुछ बोलना भी भूल गयी है। वह सिर्फ आँखें फाड़कर देखती रही।

दीपंकर ने पूछा — माँ कहाँ है चन्नूनी? माँ ठीक है न?

छिन्ती दी बोली — तुम्हारी माँ बहुत रो रही थी दीपू ....

इतनी देर बाद माँ अपने कमरे से निकली। उनके कंधे से आँचल सरक गया था। माँ ने धीरे-धीरे उसे उठा लिया। फिर वह दोनों हाथों से दरवाजे की चौखट पकड़कर खड़ी हो गयी!

माँ दीपंकर की तरफ एकटक देखती रही। मानो उसमें हिलने तक की ताकत नहीं थी। उसके मुँह से एक बात नहीं निकली। मानो वह गूँगी बन गयी थी।

दीपंकर आगे बढ़ा।

— माँ, मैं आ गया हूँ, मैं आ गया हूँ ....

मानो माँ ने कुछ कहना चाहा। लेकिन माँ का चेहरा बड़ा गम्भीर लगा। आँखों की दृष्टि बड़ी अद्भुत है। वह दृष्टि तिरस्कार की नहीं और स्नेह की भी नहीं है। दोनों की मिली-जुली विभ्रान्ति-सी है! माँ की आँखों की तरफ देखकर दीपंकर भी विभ्रांत हो गया। इन थोड़े-से दिनों में ही माँ कैसी हो गयी है! कितनी बदल गयी है! अपनी माँ को भी पहचानने में कष्ट होता है! माँ का सारा शरीर थरथर काँपने लगा।

दीपंकर ने आगे बढ़कर माँ को पकड़ लिया।

— मैं आ गया हूँ माँ। तुम कुछ बोलती क्यों नहीं? कुछ तो बोलो!

देखते-देखते माँ का शरीर मानो चेतनाहीन होने लगा।

मुँह से सिर्फ निकला — दीपू ....

अस्पष्ट अप्रत्यक्ष अभियोग का स्वर गले से निकलकर हवा में विला गया। दीपंकर ने झट से माँ को पकड़ लिया। फिर उसने धीरे-धीरे माँ को बिस्तर पर लिटा दिया। कभी इसी तरह लिटाकर, बैठाकर और खड़ा कर माँ ने दीपंकर को पाला-पोसा था। आज माँ की सेवा करने की दीपंकर की बारी आयी। माँ बिस्तर पर लेटकर हाँफने लगी। उसकी साँस तेज-तेज चलने लगी।

बाहर से चन्नूनी की आवाज सुनाई पड़ी।

— तुम्हारी माँ कैसी अकल है बेटा? माँ पड़ी रही और बेटा स्वराज करने चला गया। ऐसे बेटे का भाग फूटे। ऐसे बेटे के मुँह में झाड़ मारूँ!

सँभाला। फिर वे दीपंकर के बाल पकड़कर खींचने लगे। बोले — मुँहजले, मेरी बिटिया को तकलीफ देता है? अगर मैं आँखों से देख पाता तो तेरा खून पी जाता। तुझे केवड़ातल्ला ले जाकर जिंदा चिता पर जला देता। मेरी बिटिया इतनी अच्छी है, इसलिए तू उसकी दुर्गति करता है?

अघोर नाना के बदन में इतनी ताकत है, यह भी कौन जानता था। वे दीपंकर के बाल मुट्ठियों में लेकर जी-जान से खींचने और गला फाड़कर चिल्लाने लगे।

— बोल मुँहजले! किसने तुझे स्वराज करना सिखाया? बोल, तुझे कौन उन कम्बख्तों के बीच खींच ले गया?

अघोर नाना दीपंकर के बाल खींचते और चिल्लाते रहे।

दीपंकर का सिर दर्द से भन्ना गया। लगा, सिर फट जायेगा। फिर भी उसने सिर हटाने की कोशिश नहीं की। अच्छा हुआ। यह अत्याचार उसे अत्याचार नहीं लगा। लगा, यह दंड उसे मिलना ही चाहिए। उसने अघोर नाना के हाथ अपने को सौंप दिया। लगा, अघोर नाना मानो उसे दंड नहीं आशीर्वाद दे रहे हैं। उसने मन ही मन चाहा, नाना का स्नेहाशीर्वाद इसी तरह उसके सिर पर बरसता रहे। नाना उसे और सजा दें, और अत्याचार करें।

सिर्फ उसने एक बार कहा — जरा धीरे अघोर नाना, माँ अभी सोयी है।

— क्या बोला रे मुँहजले। माँ के लिए इतना दर्द? जड़ काटकर ऊपर से पानी डाल रहा है? मैं चुप नहीं रहूँगा और चिल्लाऊँगा। मैं चिल्लाकर तेरी माँ को जगाऊँगा। देखूँ, तू क्या कर लेता है?

उस दिन अगर अंत में चन्नूनी ही छुड़ा न देती तो शायद अघोर नाना उसे जिंदा न छोड़ते। उस दिन जैसे उनके सिर पर खून सवार हो गया था।

चन्नूनी बुढ़िया थी। लेकिन उसी बुढ़िया ने अघोर नाना का हाथ पकड़ लिया था।

कहा था — क्या करते हो? आखिर उसे मार ही डालोगे क्या?

अघोर नाना उस समय हाँफने लगे थे। बोले — हाँ, मार डालूँगा! आज मैं मुँहजले को मार डालूँगा।

— लेकिन अब क्या वह पहले जैसा बच्चा है? अब वह बड़ा हो गया है। छोड़ो, छोड़ दो उसे ....

पता नहीं क्या हो गया! अंधे बूढ़े अघोर नाना सहसा रुक गये। शायद अब उन्हें ख्याल हुआ कि दीपू अब पहले जैसा छोटा नहीं है। अब वह बड़ा हो गया है। उसने बी० ए० पास कर लिया है। वह नौकरी करने लगा है।

काँपते हुए अघोर नाना अपने कमरे की तरफ जाने लगे।

चन्नूनी पास आयी। बोली — बेटा, रोते नहीं। बूढ़ा है, क्या कहते क्या कह देता है। उसका दिमाग भी तो ठीक नहीं है।

इन थोड़े-से ही दिनों में दफ्तर में उथल-पुथल मच गयी थी। महज चार कई दिन की नौकरी लेकिन उसके बिना मानो जापान ट्रैफिक का काम रुक गया था। ब्रिटिश साम्राज्य की नींव मानो हिलने लगी थी। रॉबिन्सन साहब जैसे ठंडे मिजाज का आदमी भी इधर कई दिन गरम होने लगा था। वह बारबार पूछता था — वट ह्वेयर इज सेन ?

रामलिंगम बाबू ट्रांजिट सेक्शन का बड़ा बाबू था। लेकिन रॉबिन्सन साहब के नित-नये हुक्म से वह भी परेशान होने लगा था। उसे एक बार सेक्शन तो एक बार साहब का कमरा — बस यही भागदौड़ करनी पड़ रही थी। सारे कागज, फाइल, स्टेटमेंट दीपंकर कहाँ छोड़ गया है, किसी को खबर भी नहीं। कई दिन सेक्शन में उथल-पुथल मची रही।

— अरे हरिपद, जापान ट्रैफिक का स्टेटमेंट कहाँ है, बता सकते हो ?

सिर्फ हरिपद नहीं, सेक्शन भर के क्लर्कों ने दफ्तर का एक-एक कोना ढूंढ़ डाला, लेकिन स्टेटमेंट नहीं मिला। उधर रेलवे बोर्ड से कड़ा नोट आया है। रेलवे बोर्ड ने अर्जेंट स्लिप लगाकर चिट्ठी का जवाब माँगा है। रामलिंगम बाबू सिर पर हाथ धरकर बैठ गया।

अरे हरिपद, एक बार रिकार्ड सेक्शन में जाकर पता करो न ! जल्दी जाकर कहो कि असेम्बली में क्वेश्चयन पूछा गया है, अभी चाहिए —

लेकिन आश्चर्य है। स्टेटमेंट फाइल की जरूरत रोज पड़ती है, रोज उस फाइल को देखना पड़ता है और वह सामने ही पड़ी रहती है। रेलवे बोर्ड से चिट्ठी आते ही रॉबिन्सन साहब को वह फाइल दिखानी पड़ती है और स्टेनोग्राफर से नोट लिखाकर साहब उसका जवाब देता है। लेकिन उस मामूली फाइल के लिए दफ्तर में तहलका मच गया।

रॉबिन्सन साहब का चपरासी द्विजपद भी घबड़ा गया।

वह दौड़ता हुआ आया। बोला — रामलिंगम बाबू, जल्दी ....

— फिर ?

रामलिंगम बाबू अभी-अभी अपनी सीट पर आकर बैठा है और फिर बुलावा आ गया। रामलिंगम बाबू दौड़ा।

हरिपद ने पूछा — अरे द्विजपद, साहब को क्या हो गया है ? आज सवेरे से इतना गरम क्यों है ?

द्विजपद बोला — साहब का कुत्ता बीमार है, मेमसाहब घर से बारबार टेलीफोन कर रही हैं।

गजब हो गया ! रामलिंगम बाबू साहब के कमरे में घुसा है तो अभी तक निकलने का नाम नहीं लेता। उस दिन खड़े-खड़े बड़े बाबू के पांव दुखने लगे थे। मानो अब रेलगाड़ी के पहिये नहीं घूमेंगे। उस समय ऐसी ही हालत हो गयी थी। पांच बजे

रामलिंगम बाबू ने उत्तर दिया — सेक्शन के रैक में ....

— फिर इतने दिन तुम लोग क्या कर रहे थे ? दीज़ क्लर्क्स ....

उसके बाद साहब ने कहा — नो, नो, मैं सारा सिस्टम बदलना चाहता हूँ। जापान ट्रैफिक का कोई कागज, कोई फाइल या स्टेटमेंट कुछ भी रिकार्ड सेक्शन में नहीं रहेगा। वह सब मैं अपनी आँखों के सामने रखना चाहता हूँ। सब मेरे कमरे में लाकर रख दो — आई वांट इट नाउ ओनली ....

दीपंकर और रामलिंगम बाबू चले आ रहे थे ....

अचानक साहब को कुछ याद पड़ा वह बोला — ऐनदर थिंग — एक बात और — सेन शुड सिट हियर — सेन यहाँ बैठेगा — बगल के कमरे में ....

रामलिंगम बाबू सेक्शन में पहुँचा तो हरिपद दौड़ा हुआ आया। — क्या खबर है बड़े बाबू ? रामलिंगम बाबू बोला — चलो छोड़ो, जापान ट्रैफिक की झंझट से बच गया।

— क्यों ? कैसे ?

— साहब का आर्डर हो गया है, जापान ट्रैफिक का क्लर्क उसके स्टेनोग्राफर के कमरे में बैठेगा। स्टोर में आर्डर चला गया है। नये ड्राअर, टेबुल, कुर्सी के लिए हुक्म हो गया है।

अच्छा हुआ ! रामलिंगम बाबू बच गया और सेक्शन भर के लोग बच गये। सबको उस झंझट से छुटकारा मिल गया। सवेरे से जो जापान ट्रैफिक की आँधी चलती है तो दिन भर रुकने का नाम नहीं लेती। उसके लिए अलग से एक पैसा भी नहीं मिलता, सिर्फ खटते रहो। हर घड़ी साहब की निगाह के सामने रहो, वह भी खतरे वाली बात है। पान नहीं खाया जा सकता, गप नहीं लड़ाया जा सकता या अखबार की खबरों पर चटपटी बहस भी नहीं छेड़ी जा सकती। दफ्तर में आते ही फाइल लेकर बैठो और जब तक साहब दफ्तर में रहेगा, तब तक उसी फाइल में क़ैद रहो। नहीं जनाब, ऐसी नौकरी से बाज आया। यह सब आप ही लोगों के लिए ठीक है। अभी आपने शादी-ब्याह नहीं किया, बैचेलर हैं, आप ही हर वक्त साहब को तेल लगा सकते हैं।

एस्टैब्लिशमेंट क्लर्क ने दरख्वास्त देखते ही कहा — यह क्या ? नौकरी में आते ही छुट्टी ?

दीपंकर बोला — क्या करूँ बताइए, मैंने जानबूझकर तो छुट्टी ली नहीं।

— लेकिन सर्विस तो ब्रेक हो जायेगी। इन कई दिनों की तनख्वाह तो कट ही जायेगी।

दीपंकर बोला — लेकिन रॉबिन्सन साहब ने छुट्टी ग्रांट कर दी है, यह देखिए, साहब का दस्तखत है ....

— यह कैसे हो सकता है ? टेम्पोररी सर्विस में साहब कैसे छुट्टी दे सकता है ?

दीपंकर बोला — यह तो मैं नहीं जानता, आप रॉबिन्सन साहब से पूछ

कॉरीडर में गांगुली बाबू से भेंट हो गयी। वे दौड़े हुए आये और बोले — अभी-अभी खबर मिली कि आप आये हैं, इसलिए भागा-भागा चला आया। आप आ गये, बड़ा अच्छा हुआ। आज ही नृपेन बाबू का फेअरवेल है ....

— आज ही ? अरे ! मैं तो जानता नहीं था।

— हाँ, आपके नाम एक रुपया चंदा लगाया गया है।

दीपंकर संकट में पड़ गया। बोला — लेकिन मेरे पास तो अभी रुपया है नहीं, जेब में सिर्फ ट्राम का किराया पड़ा है।

— बाद में दीजिएगा। तनख्वाह मिलने पर दीजिएगा। अभी आपके नाम चंदा लगा दिया है। महीना खत्म होने पर देखा जायेगा। जानते हैं, उनको क्या दे रहे हैं ?

— क्या ?

— हमने महाभारत और रामायण देने का विचार किया था, लेकिन उन्होंने कहा कि रामायण-महाभारत मेरे पास है और तब उन्होंने खुद सोने के बटन का सेट माँगा ....

— सोने के बटन ?

गांगुली बाबू बोले — चालीस रुपये से कम में बटन का सेट नहीं होगा। इसलिए अब एक-एक रुपया चंदा रखना पड़ा। पहले फी आदमी आठ आने का हिसाब लगाया गया था।

दीपंकर को मानो फिर भी विश्वास नहीं हुआ। बोला — उन्होंने खुद माँगा ?

गांगुली बाबू बोले — हाँ ! खैर छोड़िए। आज शाम को पाँच बजे टिफिन रूम में फेअरवेल होगा। आपको रहना पड़ेगा। फोटो खींचा जायेगा। अच्छा मैं चला ....

गांगुली बाबू चले गये। फिर पुरानी विरक्ति दीपंकर के मन में सुगबुगाने लगी। आज नृपेन बाबू चले जायेंगे और फिर नहीं आयेंगे। सोचने पर जरा दुःख भी हुआ। इतने दिन की नौकरी। छोड़ते समय तकलीफ तो होगी ही ! आज के दिन मन में कोई घृणा या विराग नहीं रखना चाहिए। रखना अन्याय भी है। नृपेन बाबू जा रहा है। सब को चाहिए कि उसे प्रसन्न मन से विदा करें। एक दिन दीपंकर भी जायेगा ! उस दिन ? उस दिन क्या उसके सहकर्मी उसे कुंठित हृदय से विदा करेंगे ? लेकिन मनुष्य क्यों अच्छा नहीं हो सकता ? क्यों उसमें इतना लोभ है ? दीपंकर को बड़ा आश्चर्य हुआ। यह छोटा-सा लोभ अगर नृपेन बाबू त्याग देते तो क्या वे दरिद्र हो जाते ? जेब से पैसा निकालकर हम जो चीज खरीदते हैं क्या उससे मुफ्त मिली चीज से अधिक आनन्द है ? फिर सुख की सामग्री खरीदने के लिए हम अपने जीवन में जो मूल्य देते हैं उससे अधिक लाभ क्या हमें उस वस्तु से मिलता है ? उस समय क्या हम सोचते हैं कि हम उसके योग्य नहीं हैं ?

—क्या कहते हो ? तुम मेरे बारे में जो कुछ जानते हो, वही दो-चार बातों में कह दोगे। अगर तुम लोग कुछ नहीं कहोगे तो मीटिंग जमेगी कैसे ? बताओ, तुम क्या कहोगे ? जरा सोच लो ....

—बताइए क्या कहूँगा ?

नृपेन बाबू बोले—लेकिन अंग्रेजी में कहना पड़ेगा। अंग्रेजी में न कहोगे तो साहब लोग समझ नहीं पायेंगे। अगर साहब लोग समझ नहीं पाये तो कहने से फायदा ?

—लेकिन मैंने कभी कहीं लेक्चर नहीं दिया ....

—अरे तुम जो कुछ जानते हो, वही कहोगे। अब उसे तुम लेक्चर कहो या जो कहो। मेरे बारे में तुम कुछ नहीं जानते ?

दीपंकर बोला—वह तो जानता हूँ ....

—बस, वही तुम कहोगे। तुम तो जानते हो कि मैं कितना भला आदमी हूँ। मैं कितना मेहनती हूँ, कितना परोपकारी हूँ और दफ्तर के काम में कितना पक्का हूँ—यह सब तो तुम जानते हो। लेकिन तुम नहीं जानते कि मैंने झूठ कभी नहीं कहा। मैंने कभी किसी से घूस नहीं ली और कभी किसी का नुकसान नहीं किया। मैंने कभी किसी का अहित सोचा ही नहीं। यह सब क्या तुम नहीं जानते ?

दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या कहा जाय।

—तुम जानते हो या न जानते हो, तुम्हें बताने में क्या हर्ज है ? इन्हीं बातों को थोड़ा ढंग से नहीं कह पाओगे ?

मीटिंग में खड़े होकर उस दिन दीपंकर ने क्या कहा था, खुद उसी के कानों में नहीं पहुँचा था। लेकिन नृपेन बाबू ने जो कुछ कहा था, वह आज भी याद है। आफिस की छुट्टी के बाद टिफिन रूम में भीड़ कम नहीं हुई थी। न्यू मार्केट से फूल मालाएँ आयी थीं। रॉबिन्सन साहब और मैकफर्सन साहब बीच में बैठे थे। ट्रैफिक आफिस के तिरसठ बाबू उनके दायें-बायें थे।

गांगुली बाबू देखते ही दौड़कर आये।

बोले—आप आ गये ? आपको भी कुछ कहना पड़ेगा।

दीपंकर बोला—नहीं, नहीं, मुझे कुछ कहना नहीं आता।

—फिर भी कहना पड़ेगा। नृपेन बाबू ने मुझे बुलाकर आपके बारे में कहा है। हाँ, अंग्रेजी में कहिएगा। अंग्रेजी में न कहेंगे तो साहब लोग समझ नहीं पायेंगे। अभी तो बीस मिनट समय है। सोच लीजिए।

शुरू में मंगल गान हुआ।

पहले बोलने के लिए उठे के० जी० दास बाबू। वे जेब से एक कागज निकालकर पढ़ने लगे। दीपंकर मन लगाकर सुनता रहा। नृपेन बाबू सिर्फ रेलवे के ट्रैफिक आफिस के सुपरिंटेंडेंट नहीं, वे रेलवे के सेवक हैं। रेलवे की सेवा का अर्थ है देश की

अगर उनके बारे में कुछ अप्रिय रहा हो तो आज वह भुला देना चाहिए। आज कहीं कुछ अप्रिय नहीं होना चाहिए। नृपेन बाबू ने ही मुझे नौकरी दिलायी है। इसलिए मैं अगर उनके बारे में कुछ कहूँगा तो वह अपनी ही प्रशंसा करना होगा और आत्म-प्रशंसा महापाप है। इसलिए ....

सभा के बाद नृपेन बाबू ने दीपंकर को बाँहों में भर लिया और कहा — तुम तो एम० ए० पास हो!

— नहीं, मैं बी० ए० पास हूँ।

नृपेन बाबू आश्चर्य चकित हो गये। बोले — बी० ए० पास? फिर भी कोई कागज देखे बिना धाराप्रवाह कहते चले गये! फिर भी तुमने कहा कि तुम्हें लेक्चर देने की आदत नहीं है। — खैर, मेरा लेक्चर कैसा रहा?

दीपंकर बोला — बहुत अच्छा।

मानो इतने से नृपेन बाबू संतुष्ट नहीं हुए। बोले — कैसा बहुत अच्छा?

— बहुत अच्छा।

— रॉबिन्सन साहब या मैकफर्सन साहब के लेक्चर से भी अच्छा?

अब दीपंकर जरा मुश्किल में पड़ गया। इसलिए वह हँसा।

नृपेन बाबू बोले — देखो, तुम्हारा मुँह देखकर ही मैं समझ रहा हूँ कि तुम्हें मेरा लेक्चर अच्छा लगा है। लेकिन वे सब क्या कह रहे हैं जानते हो? वे सब कह रहे हैं कि मैं घर से रटकर आया हूँ।

गांगुली बाबू दौड़े हुए आये। बोले — चले मत जाइएगा, जलपान का इंतजाम है। हृदय चपरासी ने कहकर मांस का बढ़िया चॉप बनवाया है।

फिर सब लोग खाने के लिए बेचैन हो उठे। नृपेन बाबू साहबों के आसपास चक्कर काट रहे हैं। सोने का बटन एक केस में रखकर सिल्क के फीते से बाँधा गया है। फ्रेम में मढ़ा छपा हुआ मानपत्र भी है। नृपेन बाबू ने उसे बगल में दाब रखा है। दूसरे हाथ में फूलमाला है।

दीपंकर बोला — अब मैं घर जाऊँ गांगुली बाबू। घर में माँ की तबीयत बहुत ज्यादा खराब है।

— कम से कम एक समोसा तो खा लीजिए।

लौटते समय रास्ते में दीपंकर वही सब सोच रहा था। मानो वह सब झूठ है! भाषण भी झूठ है और समोसा-रसगुल्ला भी झूठ! वह मानपत्र भी झूठ से भरा हुआ। सचमुच ये लोग कितने झूठे हैं!

जलपान की जगह बड़ी भीड़ थी। फेअरवेल में जलपान का प्रबंध है, यह सबको मालूम था। इसलिए उस दिन किसी ने टिफिन नहीं किया था। सबने टिफिन

सती के बारे में सोच रहा है।

फिर दीपंकर उसी लड़की की बात मन ही मन दोहराने लगा। न्यू रोड! न्यू रोड! नया पथ! सचमुच नये पथ पर उसकी यात्रा शुरू हुई है। इस पथ पर उसका कोई साथी नहीं है। अब से इस पथ पर उसे अकेला चलना होगा। कितना आश्चर्य है! न्यू रोड, न्यू रोड! वह लड़की उसके पास नये पथ का संकेत जानने आयी थी। लेकिन अभी तो उसी को नये पथ का संकेत चाहिए!

न्यू रोड! न्यू रोड! नया पथ!

• • •

अब सचमुच नये पथ पर दीपंकर को चलना होगा। जब सब ने एक-एक कर उसका साथ छोड़ दिया, तब उसे स्वयं एक नया रास्ता ढूंढ़ निकालना होगा। अब लक्ष्मी दी को भी उसकी जरूरत नहीं है। सती के लिए भी उसकी जरूरत खत्म हो चुकी है। किरण उसे छोड़ चुका है। सबके चाहने और पाने की थाह वह पा चुका है। सब यही कहते हैं इस विछोह से मुझे उबार लो! लेकिन उन्हीं की तरह उसने भी कभी सबसे यही कहा था और साहचर्य चाहा था। एकदम दूर बचपन के लक्ष्मण सरकार से शुरू कर सबसे उसने मिलना-जुलना चाहा था। लेकिन इस तरह का मिलना-जुलना तो उसने कभी नहीं चाहा। उसने जहाँ भी जिससे मिलना-जुलना चाहा, वहीं उसे विच्छेद मिला! क्या ऐसा मिलन उसे मिल नहीं सकता, जिसके लिए उसे विरह का मूल्य न चुकाना पड़े!

मोटर गाड़ी चली गयी।

दीपंकर थोड़ी देर उसी तरफ देखता रहा। उस लड़की के होंठ लिपस्टिक से रंगे थे। ब्लाउज कंधे तक था। ड्राइवर के साथ अकेली घूमने निकली है। लेकिन दीपंकर के बचपन में ऐसा नहीं देखा जाता था। उन दिनों घोड़ा गाड़ी के दरवाजे और खिड़कियां बन्द कर औरतें बाहर निकलती थीं। पूजा के समय जो स्त्रियां कालीघाट में आतिशबाजी का जलना देखने जाती थीं, वे बगल के हालदार लोगों के मकान की आड़ से देखती थीं। लेकिन यह नया फैशन कब से चालू हो गया! बालीगंज के उच

हो सकता है। बस मियाँ और बीवी। बाल-बच्चे तो हैं नहीं। लक्ष्मी दी थी, वह भी चली गयी। सती थी, उसकी भी शादी हो गयी। शायद इसीलिए अब वे कलकत्ते में नहीं रहना चाहते।

ट्राम आ रही थी। अचानक दीपंकर की इच्छा हुई कि बहूबाजार जाकर एक बार लक्ष्मी दी को देख लिया जाय। अचानक लक्ष्मी दी के लिए उसका मन बेचैन होने लगा। सती की तो खैर शादी हो गयी है, उसके सास-ससुर हैं, पति है, बहुत बड़ा मकान, रुपया-पैसा सब कुछ है। उसे किस बात की चिंता है! दो दिन बाद वह सब कुछ भूल जायेगी। भूल जाना ही उसके लिए स्वाभाविक है। अभी-अभी देखी उस लड़की की तरह वह भी बाल गर्दन तक छाँट लेगी, होंठों पर लिपस्टिक लगायेगी और अकेली ड्राइवर के साथ न्यू रोड के किसी पते के लिए मोटर में बैठी चली जायेगी। राह चलते किसी लड़के को रोककर पूछेगी कि न्यू रोड किधर है। शायद दीपंकर पर उसकी कार कीचड़ उछाल देगी। शायद क्यों, यही तो होता है। सवेरे नींद खुलने से पहले उसके सिरहाने पर चाय पहुँच जायेगी। बॉय, बावरची, खानसामा मिसेस घोष की हुक्म-तामीली के लिए हर वक्त तैयार रहेंगे। सती अब सती मित्र नहीं, सती घोष है। गरमी में वह दार्जिलिंग जायेगी या सी-साइड। और जाड़े में? जाड़े में अगर चाहे तो वह कलकत्ते में रह सकती है। अगर कलकत्ते में न रहना चाहे तो वह कहीं और चली जायेगी। जाने के लिए जगह की क्या कमी है। अच्छा न लगने पर कभी-कभी मियाँ-बीवी होटल पहुच जायेंगे। चौरंगी के किसी होटल के टेरेस में बैठ कर चाय पियेंगे। कॉफी पियेंगे। शाम का अवकाश उस समय सामनेवाले मैदान में पंख फैला देगा। उसी टेरेस में बैठे दोनों बाहर चलती दुनिया को देखेंगे। ट्राम और बस, गति और विश्राम, कल्पना और संभावना की दुनिया! उसके बाद जब फोर्ट विलियम के माथे पर उस लंबे पोस्ट में लाल बत्ती जलेगी, तब दोनों चलने के लिए तैयार होंगे। सीढ़ी से उतरकर होटल का लाउंज पार कर दोनों कार में आकर बैठ जायेंगे। समय के साथ होड़ बदते कार के पहिये घूमेंगे। उसके बाद प्रिन्सेप्स घाट, आउटरम घाट, जेसोर रोड का एकांत या ग्रांड ट्रंक रोड का भुलावा।

उधर उस समय रेल के दफ्तर में जापान ट्रैफिक की पतली फाइलें धीरे-धीरे मोटी होने लगेंगी। कुर्सियां खटमलों से भरती जायेंगी और उन खटमलों का पेट बाबुओं के खून से ठसाठस भरने लगेगा। दीपंकर सेन तीन-तीन स्पेशल ट्रेनों का हिसाब मिलाने में पसीना-पसीना होगा। जर्नल सेक्शन के गांगुली बाबू एक गिलास चाय चार हिस्से में बाँटकर के० जी० दास बाबू को खुश रखने की कोशिश करेंगे। रामलिंगम बाबू के टेबिल पर फाइलों का पहाड़ ऊंचा होता जायेगा। स्टोर सेक्शन में नये इंडेंट को लेकर जबर्दस्त तूल-तूफान मच जायेगा। हृदय चपरासी एल्युमिनियम के भगौने में बकरे के चाँप बेचने आयेगा। धूल, हाय-तोबा, रगड़ा-झगड़ा, खटमल और काम दफ्तर के बाबुओं का शाम का अवकाश बेजार कर देंगे। जापान ट्रैफिक का काम करते-करते

अपनी दुश्चिन्ता में डूबी हुई है।

पास जाकर दीपंकर ने पूछा — अभी कैसी हो माँ ?

माँ ज्यादा कुछ नहीं वोली। सिर्फ वोली — ठीक हूँ ....

दीपंकर माँ की वगल में वैठ गया। वोला — तुम यहाँ क्यों वैठी हो ? अगर फिर तवीयत खराव हो जाय तो ? कमरे में जाकर लेटी रहतीं ? दवा पी थी न ?

माँ मानो दीपंकर की वातें सुन नहीं पायीं। वह एकटक शांत दृष्टि से सामने टूटी दीवार की तरफ देखती रही।

दीपंकर वोला — मैं वहुत डर गया था माँ, दफ्तर जाते समय मैं वहुत डरा हुआ था। कई दिन दफ्तर गया नहीं था। दफ्तर में हाय-तोवा मच गया था। किसी को फाइल मिल नहीं रही थी। आखिर रॉविन्सन साहव ने आर्डर दिया कि अव से मुझे उनके वगलवाले कमरे में वैठना होगा।

एक कटोरे में लाई लाकर चन्नूनी ने सामने रखा।

माँ ने धीरे-धीरे पूछा — आज क्या खाया ?

दीपंकर वोला — अभी चला आ रहा हूँ माँ, कपड़े वदल लूँ, हाथ-मुँह धो लूँ ....

थोड़ी देर वाद लौटकर लाई खाते हुए दीपंकर ने कहा — मेरा लेक्चर सुनकर रॉविन्सन साहव वहुत खुश हुए। जानती हो माँ ? नृपेन वावू भी वहुत खुश हुए। वे सव तो रटकर आये थे। अगर मैं रटकर जाता तो और अच्छा वोलता। लेकिन मैं तो जानता नहीं था कि आज ही नृपेन वावू का फेअरवेल है ....

माँ का चेहरा अव भी गंभीर है।

दीपंकर ने पूछा — पन्ना डाक्टर को एक वार वुला लाऊँ माँ ? खवर दे आऊँ कि तुम आज ठीक हो।

माँ ने उसी तरह गंभीर होकर कहा — नहीं।

— अगर फिर वीमारी वढ़ जाय तो क्या होगा ? कल दिन भर तुमने कुछ नहीं खाया, कल तुम सोयी भी नहीं, अव उठकर टहलना ठीक नहीं है। चन्नूनी तो खाना वना रही है, फिर तुम विस्तर छोड़कर क्यों उठी ?

इतनी देर वाद माँ ने दीपंकर की तरफ देखा।

कहा — दीपू !

दीपंकर माँ के कंठस्वर की गंभीरता से डर गया।

वोला — क्या है माँ ?

माँ ने कोई उत्तर नहीं दिया।

दीपंकर वोला — क्यों, क्या हुआ माँ ? कमरे में चलोगी ? पकड़ लूँ ?

माँ वोली — नहीं, कमरे में नहीं जाऊँगी, पहले तू मेरे पाँव छूकर शपथ ले —

दीपंकर माँ के चेहरे की तरफ देखकर आतंक से सिहर उठा। माँ की ऐसी

—नहीं, मैं कमरे में नहीं जाऊँगी। मैं मर जाऊँगी तो किसका क्या बिगड़ेगा? मैं मर जाऊँगी तो तुझे आराम मिलेगा ....

दीपंकर बोला—लेकिन बीमार पड़ोगी तो तुम्हीं को कष्ट होगा ....

—तू चला जा मेरे सामने से, चला जा! मेरे कष्ट के बारे में तुझे सोचना नहीं पड़ेगा ....

दीपंकर हँसा। बोला—चाहे जो कहो माँ, तुम्हें तकलीफ होगी तो मैं जरूर सोचूंगा। तुम्हारे मना करने पर भी सोचूंगा।

माँ ने आँचल से आँसू पोंछ लिये।

दीपंकर बोला—तुम मुझ पर बेकार नाराज हो रही हो। मैं सच कह रहा हूँ कि मैंने कभी स्वराजियों का साथ नहीं किया।

—तू स्वराजियों का साथ कर या न कर, तू मेरे पाँव छूकर कसम खा कि जिंदगी में कभी ऐसा नहीं करेगा। कसम खा मेरे पाँव छूकर, छू मेरे पाँव!

दीपंकर एकटक माँ की तरफ देखता रहा। सहसा उसे लगा कि माँ मानो उससे दासता के भयानक प्रतिज्ञापत्र पर दस्तखत कराना चाहती है। चिरजीवन के लिए इस अपमान के मूल्य पर उसे अपना जीवन वापस पाना होगा।

—तू जब तक मेरे पाँव नहीं छूएगा, तब तक मैं नहीं उठूँगी, नहीं खाऊँगी, नहीं सोऊँगी। मैं सिर पटककर यहीं मर जाऊँगी।

माँ के चेहरे की तरफ देखकर दीपंकर डर गया। माँ की जिद बड़ी भयानक है। दीपंकर माँ को अच्छी तरह जानता है।

चन्नूनी अब तक सब सुन रही थी। बोली—तुम पांव छूकर कसम खाओ न बेटा, माँ के पांव छूने में भी शर्म लगती है। बलिहारी है तुम्हारी शर्म को बेटा, धी!

चन्नूनी की बातों पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। लेकिन माँ मानो अपनी जिद पर अटल रही। दीपंकर वहीं खड़ा दुविधा के झूले में झूलता रहा।

सहसा माँ ने गजब कर दिया। न कुछ कहना, न सुनना, एकाएक थोड़ा खिसककर सामने वाले ईंट के खंभे पर माँ सिर पटकने लगी।

दीपंकर ने जल्दी से माँ को पकड़ लिया।

—माँ, माँ, यह क्या कर रही हो? यह क्या कर रही हो तुम?

चन्नूनी दौड़कर आयी। शोरगुल सुनकर विन्ती दी भी दौड़ी हुई आयी।

तब तक माँ का माथा फूल चुका था। दीपंकर बोला—विन्ती दी, एक लोटा पानी दो न ....

दीपंकर माँ के सिर पर हाथ से पानी देने लगा। ऐसा करते हुए उसे रुलाई आने लगी। एक तो कई दिन से माँ की तबीयत ठीक नहीं है। कई दिन दीपंकर के लिए सोच-सोचकर माँ सो न सकी। अब उसने अपने पर यह कैसा अत्याचार किया!

मेरा कष्ट कष्ट नहीं है ?

विन्ती दी ने आकर माँ को बहुत समझाया। कहा — दीदी, तुम ऐसा शरीर लेकर मत जाओ, कहीं मुँह के बल गिर पड़ोगी ....

लेकिन माँ पर जब जिस बात की धुन सवार होगी तब उसे वह करके मानेगी। दीपंकर माँ को पकड़कर चलने लगा। अँधेरा काफी हो चुका है। ईश्वर गांगुली लेन से नेपाल भट्टाचार्य लेन तक रास्ता भी खराब है। माँ मानो हाँफ रही है। इतने दिन की परेशानी, इतने दिन से भूखी रहना। मानो माँ की सहनशक्ति अंतिम सीमा पर पहुँच चुकी है। माँ कुछ बोल नहीं रही है। मानो वह अटल संकल्प लिये उस संकरी गली से चली जा रही है। दीपंकर को सही रास्ते पर लाना होगा। उसे बुरी संगति से बचाना होगा। तभी न वह बड़ा बनेगा नाम कमायेगा। इसलिये उसे अन्याय और अनियम से दूर रखना होगा। यह तो भला आदमी बनेगा, घर-गृहस्थी वाला बनेगा। तभी मानो माँ की सारी आशाएँ पूरी होंगी। आसपास के मकानों के चूल्हों से कोयले का धुआँ निकलकर हवा में तैर रहा है। माँ धीरे-धीरे सँभलकर नालियाँ पार कर गयी। अब रास्ता कच्चा है। ऊबड़-खाबड़ और ऊँचा-नीचा। हर कदम पर ठोकर लगने का डर है। इस हालत में माँ अगर गिर पड़ेगी तो उसे बचाया नहीं जा सकेगा।

दीपंकर दूसरी सारी चिंताएँ भूल चुका था।

किरण का बाप। छाती के नीचे तकिया रखकर बैठा बेचारा बूढ़ा! वह कानों से सब कुछ सुन पायेगा, लेकिन कुछ नहीं बोल सकेगा। उसके गले से सिर्फ घड़घड़ आवाज निकलेगी। उस समय थोड़ा गरम पानी देने पर उसे आराम मिलेगा। किरण की माँ शायद कुछ नहीं बोलेगी, माँ की बात सुनकर बस रोयेगी।

लेकिन गली के सामने पहुँचते ही दीपंकर को एक आर्तनाद सुनाई पड़ा और वह चौंका।

माँ भी चौंकी।

— कौन रो रहा है रे ?

दीपंकर को न जाने कैसा शक हुआ। बोला — किरण की माँ की आवाज लग रही है माँ!

किरण की माँ! तब तक किरण के मकान का दरवाजा आ गया। दरवाजा खुला था। दीपंकर ने झाँककर देखा। माँ ने भी देखा। किरण का बाप उसी तकिये पर छाती के बल पड़ा है, लेकिन उसका सिर बरामदे से नीचे लटक रहा है। अकेली किरण की माँ किरण के बाप के प्राणहीन लंबे-चौड़े शरीर से लिपटी असहाय चीख रही है। उस चीख से सारा कालीघाट सहसा एक पल के लिए सहम गया। मृत्यु के पास आने पर शायद सभी जीवित प्राणी घबड़ा जाते हैं। माँ भी मानो वैसी ही हो गयी। गंदे बिस्तर-तकिये, थूक और दुर्गंध, ऐसी जगह आने में भी मृत्यु सकुचायी नहीं, यह

रहना और मर जाना बराबर है — यह भी सबने कहा। स्वराज हम भी करते हैं, खद्दर हम भी पहनते हैं, गांधीजी के कहने पर विलायती कोंहड़ा हमने भी खाना छोड़ दिया है — लेकिन यह क्या! माँ-बाप ही तो सब-कुछ हैं, मुसीबत के समय अगर उन्हीं को नहीं देखा तो देशसेवा क्या की? ऐसे लड़के अँग्रेजों को क्या भगायेंगे! अरे, घर में ऐसा संकट है — यही तो देशसेवा का असली मौका है!

घूमघाम कर दीपंकर लौट आया।

मौसीजी मृतदेह के पास गाल पर हाथ धरे बैठी हैं। बगल में गंदे विस्तर का ढेर है। उसी गंदी जगह मृत्यु को अपना सस्ता शिकार मिल गया है। लेकिन मौसीजी में मानो कोई विकार नहीं है। आसपास के मकानों से एक-दो स्त्रियाँ आकर आँगन में खड़ी होने लगीं। वे मुंह और नाक पर आँचल रखकर एक किनारे खड़ी रहीं। शायद आज के दिन इस तरह आना भी उनका एक कर्त्तव्य है!

पथरपट्टी की गली में फटिक का घर है। फटिक का नाम लेकर पुकारते ही उसकी माँ निकल आयी। बूढ़ी माँ। इनकी भी दशा किरण लोगों की तरह है। फटिक की माँ बोली — फटिक तो नहीं है बेटा!

— कब आयेगा?

— उसके आने का कोई ठिकाना नहीं है बेटा। सवेरे से शाम तक पैसे के लिए मारा-मारा फिरता है।

एक बार चंडी बाबू के घर भी आना चाहिए। राखाल तो उन्हीं लोगों का साथी है। घर से चुराकर एक दिन उसने उनकी लाइब्रेरी में किताब दी थी। लेकिन मधुसूदन का मकान पहले पड़ता है। उसके मकान के चबूतरे पर मजमा जुटना बंद हो चुका है। दूनी चाचा नहीं आता और पंचू दा भी नहीं। अब वहाँ अखबार की खबरों पर गरमागरम बहस का तूफान नहीं उठा करता।

मधुसूदन को बुलाते ही वह थोड़ी देर बाद बाहर आया। बोला — क्या है रे दीपू? क्या खबर है? कब छूटा?

दीपंकर बोला — किरण का बाप मर गया है।

— अरे! कब?

— अभी घंटे भर पहले। तू श्मशान जा सकेगा? तू तो जानता है, उन लोगों का कोई नहीं है। तू, मैं और दो जनों की जरूरत है। खैर, दो जने और मिल जायेंगे ....

मधुसूदन के चेहरे से लगा कि वह बहुत बड़े धर्म-संकट में पड़ गया है। थोड़ी देर सोचकर वह बोला — देख, मुझे कोई एतराज नहीं है, लेकिन बात असल में यह है भाई कि बड़े भैया बड़ा एतराज करेंगे। देख रहा है न, अब हमारे चबूतरे पर लोग नहीं आते। आजकल इस मुहल्ले में जो कुछ हो रहा है, वह सब देख-सुनकर बड़े भैया ने किसी से भी मिलने-जुलने को मना कर दिया है।

लेकिन बिना बुलाये कोई उपाय नहीं है। उधर देर हो रही है।

दीपंकर ने फिर सदर दरवाजे की तरफ देखकर बुलाया — लोटन ....

— कौन है ?

एक लड़की हँसती हुई निकल आयी। उसके मुँह में पान भरा है। लेकि‍ दीपंकर को देखते ही वह गंभीर हो गयी। दीपंकर भी उसे पहचान न सका। शक्ल पहचानी-सी लगी। अघोर नाना के घर में ही देखा है उसे — चन्नूनी के पास है देखा है।

— आ गया ? आ अंदर आ जा ....

नंगे बदन लुंगी पहनकर फोंटा निकल आते ही दीपंकर का हाथ पकड़कर खींचने लगा। फिर उसने लोटन से कहा — अरे, यह कोई मामूली आदमी नहीं है बी० ए० पास ग्रेजुएट है, रेलवे का अफसर।

दीपंकर बोला — मैं बड़ी मुसीबत में पड़कर तुम्हारे पास आया हूँ। किरण का बाप मर गया है, श्मशान जाना है। कोई मदद करनेवाला नहीं है, जिसके पास गया, उसी ने लौटा दिया। फिर किरण भी नहीं है। आखिर कोई उपाय न देखकर तुम्हारे पास आया, अब तुम्हीं को मदद करनी है।

फोंटा जैसे आदमी ने दीपंकर की बातें ध्यान से सुनीं। उसके बाद वह न जाने क्या सोचने लगा।

दीपंकर बोला — तुम्हें कुछ खर्च भी करना पड़ेगा। उनके पास कुछ नहीं है। कम से कम दस रुपये तो लगेंगे ही ....

थोड़ा सोचकर फोंटा ने कहा — दस रुपये में नहीं होगा ....

दीपंकर बोला — दस रुपये भी शायद नहीं लगेंगे, लेकिन पास में रखना अच्छा है।

फोंटा बोला — नहीं, मैं वहाँ बहुत बार गया हूँ, माल-ओल खाना पड़ता है, कम-से-कम बीस रुपये लेना ठीक रहेगा।

लोटन की तरफ देखकर उसने कहा — बीस रुपये देना जी, और गमछा ....

उसके बाद फोंटा ने दीपंकर से पूछा — और कौन चल रहा है ? और किसे बुलाया है ?

— और कोई नहीं है। सिर्फ तुम और मैं। अगर तुम किसी को ले सकते हो तो बड़ा अच्छा हो।

— ले क्यों नहीं सकता ? मैं कहूँगा तो इस मुहल्ले में कौन साला ना करेगा ? फोंटा ने सीना तानकर कहा।

उस दिन फोंटा था, इसलिए कोई असुविधा नहीं हुई। पता नहीं, उसने कहाँ से तीन-चार लोगों को बुला लिया ! दीपंकर ने देखा कि वे लोग फोंटा को देवता जैसा मानते हैं। सब उसे देवता कहकर पुकारते भी हैं। फिर उस दिन दीपंकर को कुछ भी

घाट पर आते ही दीपंकर को माथे में ठंडक महसूस हुई। रात हो रही है! आठ बजे चिता जली है, रात के ग्यारह बजे से पहले खत्म न होगा। देर तक इसी तरह चुपचाप बैठे इंतजार करना पड़ेगा। वे लोग तब तक खाना खायेंगे, और भी जो मन होगा खायेंगे-पीयेंगे। रुपया-पैसा वही लोग खर्च कर रहे हैं। दीपंकर को कुछ नहीं सोचना है।

अचानक दबे पाँव कोई पास आकर खड़ा हुआ। वही लड़का। अँधेरे में साफ दिखाई नहीं पड़ता। बहुत दिन पहले वही एक बार किरण की खबर लाया था। मैडॉक्स स्क्वायर में भोजू दा की खबर भी वही लाया था। दीपंकर चौंक पड़ा— मानो उसने भूत देख लिया हो। बोला — आप ? यहाँ ?

वह लड़का बोला — मैं आपके पास आया हूँ। किरण ने भेजा है ....

— किरण ? कहाँ है किरण ? आज उसके पिताजी का देहान्त हो गया है ....

उस लड़के ने धीरे से कहा — मालूम है।

दीपंकर मानो सहसा बिगड़ गया। बोला — लेकिन आपका किरण इतना गिर कैसे गया ? उसने मेरा नाम-पता सब बता दिया ? जानते हैं, उसके लिए मैं भी कई दिन हवालात में बंद रहा ? कल ही तो छूटा। खुद पकड़ा गया तो उसने मुझे भी फँसा दिया। मैं उस दिन उसके साथ मैडॉक्स स्क्वायर गया था, वह भी उसने पुलिस को बता दिया। अगर तकलीफ बरदाश्त नहीं कर सकता था तो वह स्वराज करने गया ही क्यों ?

उस लड़के ने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुप रहा। उसने एक बार चारों तरफ देखकर धीरे से जेब से एक मोड़ा हुआ कागज निकालकर आगे बढ़ाया। कहा — किरण दा ने आपको दिया है ....

— किरण ? किरण कहाँ है ? क्या वह छूट गया है ?

वह लड़का बोला — चिट्ठी पढ़ने से समझ जायेंगे ....

दीपंकर जल्दी-जल्दी चिट्ठी खोलकर पढ़ने लगा।

"मुझे अभी खबर मिली। लेकिन भाई, मैं कुछ नहीं कर सकता। हम लोगों को पकड़ने के लिए चारों तरफ जाल बिछाया जा रहा है। अगर कभी मौका मिला तो तुम्हें सब बताऊँगा। इन शैतानों को जब तक हम खत्म नहीं कर लेते तब तक न हमारे घर-द्वार हैं, न माँ-बाप। तुम्हें चिट्ठी के साथ जो कागज भेजा, उस पर दस्तखत कर देना। उसके बाद जो कुछ करना होगा, हम करेंगे।"

चिट्ठी को ऊपर या नीचे किसी का नाम नहीं है। फिर भी दीपंकर किरण के हाथ की लिखावट पहचान गया।

दीपंकर ने सिर उठाकर कहा — यह क्या है ?

वह लड़का बोला — पढ़ लीजिए।

दीपंकर फिर रोशनी में जाकर पढ़ने लगा। उसमें लिखा था ....

— लेकिन किरण दा से बहुत जल्दी मुलाकात नहीं हो पायेगी। वह आज ही कलकत्ते से बाहर जा रहे हैं।

दीपंकर बोला — लेकिन मैं तो दस्तखत नहीं कर सकता। मैंने आज ही माँ के पांव छूकर प्रतिज्ञा की है कि अब जिन्दगी में कभी यह सब नहीं करूँगा।

यह कहते हुए दीपंकर का सिर एकाएक लज्जा से झुक गया। मानो अब उसमें सिर उठाकर देखने का साहस नहीं है। मानो वह संसार में सबके सामने छोटा हो गया है। मानो उस श्मशान के नीरव अंधकार में सब उसकी तरफ उँगली उठाकर धिक्कार रहे हैं।

— फिर वह सब दे दीजिए।

दीपंकर ने दोनों कागज उस लड़के को दे दिये।

लड़के ने कहा — किरण दा की चिट्ठी भी दीजिए।

उस लड़के ने किरण की चिट्ठी को फाड़कर राख के ढेर में फेंक दिया। उसके बाद कुछ बोले बिना वह झटपट अँधेरे में गायब हो गया।

श्मशान में विकट हरिध्वनि हो रही है। सारी जगह धुएँ से भरी है। शिरीष के विशाल पेड़ पर बैठे गिद्ध विचित्र किच-किच आवाज कर रहे हैं। उस पार चेतला की सड़क पर धानगोले के सामने लोगों का आना-जाना कम हो गया है। जो आदमी बाँसुरी बजा रहा था, उसने भी अब बजाना बंद कर दिया है।

दीपंकर फिर घाट पर आकर बैठ गया।

घाट की आखिरी सीढ़ी पर जो आदमी बैठा था, अब हिलने-डुलने लगा। अँधेरे में उसकी शकल और पोशाक दिखाई नहीं पड़ी। उसकी वैसी हरकत का कारण भी समझ में नहीं आया। फिर उस आदमी ने खड़े होकर पानी में पाँव डाला। आगे बढ़ने लगा। धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा।

दीपंकर को न जाने कैसा शक हुआ। कौन है वह? यहाँ काफी देर से बैठा था। आखिर उसका क्या इरादा है?

दीपंकर से चुप न बैठा गया। वह आदमी धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है।

दीपंकर जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ उतरने लगा।

बोला — कौन है वहाँ? कौन हैं आप?

उस आदमी ने पीछे मुड़कर देखा। दीपंकर को देखते ही वह ऊपर आने लगा। जब वह पास आया तब दीपंकर उसे पहचान गया। मिस्टर दातार!

मिस्टर दातार? आप यहाँ?

नहीं, कोई शक नहीं। पहले से और दुबले हो गये हैं। कंकाल-सा शरीर। मिस्टर दातार के पास दीपंकर के सवाल का जवाब नहीं है। मानो वे अचानक पकड़े गये हैं।

दीपंकर ने फिर पूछा — लक्ष्मी दी कैसी हैं?

सेक्शन से हिसाब कर एक-एक फाइल मँगानी पड़ी थी। रामलिंगम बाबू बहुत पु[illegible] आदमी है। बहुत दिन पहले उन्होंने अपना मुल्क छोड़ा था। साफ बंगला बोलते [illegible] बोले थे — साहब के बगलवाले कमरे में बैठकर आपको काम करने में दिक्कत होगी [illegible]

दीपंकर ने कहा था — जब नौकरी करने आया हूँ तब क्या किया [illegible] सकता है ?

सचमुच दीपंकर कुछ कर नहीं सकता था। वह नौकरी करने आया है। जब जहाँ बैठने को कहा जायेगा, तब वहीं बैठना होगा। जब जो काम करने को कहा जायेगा, तब वही करना होगा। लेकिन उस दिन भी दीपंकर जानता नहीं था कि उस कमरे में अगर उसे बैठने का मौका न मिलता तो कभी घोपाल साहब की निगाह उस पर न पड़ती, रॉबिन्सन साहब का वह प्रियपात्र भी न बनता। रॉबिन्सन साहब की मेम से भी उसकी घनिष्ठता न होती।

एक दिन रॉबिन्सन साहब ने पूछा था — सेन, आर यू ए बेंगाली ?

रॉबिन्सन साहब के सवाल का जवाब देने में दीपंकर असमंजस में पड़ गया था। दीपंकर सेन बंगाली नहीं तो और क्या है ?

कहा था — येस सर — ह्वाई ?

रॉबिन्सन साहब ने कहा था — नहीं, मिसेज़ रॉबिन्सन कह रही थी कि तुम बंगाली नहीं हो, तुम जरूर साउथ इंडियन हो ....

दीपंकर ने पूछा था — उन्होंने ऐसा क्यों समझ लिया सर ?

रॉबिन्सन साहब खूब हँसा था। बोला था — नहीं, उसका ख्याल है कि बेंगाली कभी अच्छा नहीं हो सकता। ऑल बेंगालीज़ आर टेररिस्ट्स — बंगाली कैसे अंग्रेजों को गोली मार रहे हैं, देख नहीं रहे हो ?

इस बात पर साहब से बहस करना खतरे से खाली नहीं है। इस बात पर अगर बहस की जाय तो बहुत-सी बातें कहनी पड़ेंगी। साहब कहता — देखो सेन, तुम जरूर रियलाइज़ करोगे कि अंग्रेजों ने तुम लोगों का अच्छा किया है, लाखों बंगालियों को नौकरी दी है, रेलवे बनायी है, स्टीमशिप बनाया है, फेमिन बंद कर दिया है — [illegible]ाट नाट ?

— लेकिन सर, किसी की पावर्टी कम नहीं हुई है।

सुनकर रॉबिन्सन साहब जरा आश्चर्य में पड़ जाता। कहता — क्यों ? इंडिया [illegible]ोई पावर्टी नहीं है। मैं तो कहीं पुअर पीपॅल नहीं देखता। जब मैं चौरंगी जाता हूँ, [illegible] जाता हूँ, सब वेल ड्रेस्ड पीपॅल मिलते हैं। अगर मेरी बात पर विश्वास नहीं करते [illegible]सेज़ रॉबिन्सन ने पूछो, शी इज़ ऑव द सेम ओपीनियन ....

साहब सचमुच पागल था ! उसे चौरंगी में गरीब आदमी दिखाई नहीं पड़ता [illegible]

साहब कहता — जानते हो मेरा चपरासी द्विजपद एट्टीन रुपीज़ पे पाता है।

घोपाल साहब ने पूछा — क्यों ?

रॉबिन्सन साहब ने कहा — मैंने सोचा था ही मस्ट बी ए साउथ इं
अब सेन कह रहा है, ही इज ए बेंगाली । तुम जानते हो घोपाल, बेंगालीज आर
पीपॅल, दे आर आल टेररिस्ट्स !

घोपाल साहब बोला — जानता हूँ ।

ऐनदर थिंग, इज़ देअर एनी पॉवर्टी इन इंडिया ? यहाँ पावर्टी है ? तुम
क्या ओपिनियन है घोपाल ? यू मे नो बेटर दैन मी ! तुम इंडियन हो, तुम मु
ज्यादा जानते हो । मेरे इस जिमी की जो देखभाल करता है, तुम जानते हो उसे
मंथली क्या देता हूँ ? टेन चिप्स — मैं उसे दस रुपये देता हूँ । नहीं घोपाल, मैं स
मझता हूँ, इंडिया में कहीं पॉवर्टी नहीं है ! शायद अँग्रेजों के आने से पहले थी, लेकि
अब रेलवे बन गयी है, टेलीग्राफ्स और टेलीफोन बन गये हैं, इससे कितने लोग प्रोवाइडे
हो रहे हैं । अब पावर्टी कहाँ है ? मैंने रोटरी क्लब में इस पर डिस्कशन किया है ।

घोपाल साहब अभी तक इन सारी बातों का मतलब समझ नहीं पा रहे थे ।
अचानक क्यों यह प्रसंग छिड़ा, यह भी वे समझ नहीं सके । जब वे रॉबिन्सन साहब
को तरफ देख रहे थे तब उनके चेहरे पर हँसी थिरक रही थी, लेकिन जब उनकी
निगाह दीपंकर से मिल रही थी तो उनका चेहरा गंभीर दिखाई पड़ रहा था । पता
नहीं, कहाँ का एक क्लर्क है, उसे कमरे में बुलाकर यह कैसा प्रसंग साहब ने छेड़ दिया !

उसके बाद न जाने रॉबिन्सन साहब ने क्या सोचा । कहा — हाँ, तो घोपाल,
वन थिंग, तुम बेंगाली हो या साउथ इंडियन ?

सवाल सुनकर घोपाल साहब भी घबड़ा गये । उसके बाद बोले — आइ कम
फ्रॉम साउथ इंडिया ....

— नाउ, सी !

रॉबिन्सन साहब ने दीपंकर की तरफ देखकर कहा — अब देखो, घोपाल इज
ए साउथ इंडियन ! मैं जानता हूँ, साउथ इंडियन्स अच्छे होते हैं !

उसके बाद भूल सुधारकर साहब बोला — लेकिन सेन भी अच्छा है । जानते
हो घोपाल, सेन बेंगाली है, फिर भी अच्छा आदमी है ! ही राइट्स गुड ड्राफ्ट्स ! तुम
इसके काम से सैटिस्फाइड होगे ....

अब साहब खड़ा हुआ । बोला — खैर, मैं जो कहने आया था । हमारे रोटरी
क्लब में इस पर डिस्कशन हुआ है — व्हाट डू यू थिंक — इज देअर एनी पॉवर्टी इन
इंडिया ? इंडिया में पावर्टी है ?

घोपाल साहब बोले — कोई पॉवर्टी नहीं है, सब हैपी हैं ! दे आर ऑल हैपी
विथ द ब्रिटिश गवर्नमेंट — किसी को कोई तकलीफ नहीं है ।

— नाउ सी ।

रॉबिन्सन साहब फिर अपने कमरे में चला आया । उसके साथ उसका कुत्ता

उसके बाद फिर वही रास्ता।

यहीं तो पास में बहूबाजार है। थोड़ा-सा घूमकर जाने में क्या हर्ज है!

लेकिन बहूबाजार की उस गली में घुसते ही दीपंकर ने देखा कि लक्ष्मी दी के कमरे में बत्ती जल रही है। खुली खिड़की से रोशनी बाहर गली में चली आयी है। दीपंकर जल्दी-जल्दी आगे बढ़ा, लेकिन मकान के सामने पहुँचकर वह रुक गया। झुंड के झुंड चीनी लोग न जाने आपस में क्या बात कर रहे थे। कमरे की शकल एकदम बदल गयी थी। छोटे बच्चे-कच्चे लेकर कम से कम बीस आदमी उस कमरे में थे।

दीपंकर समझ नहीं पाया कि किससे पूछा जाय और कौन जवाब दे। क्या मिस्टर दातार यह कमरा छोड़कर चला गया! इन्हीं कई दिनों में इतना परिवर्तन हो गया है! सिर्फ कई दिन दीपंकर आ नहीं पाया। बस, वही रुपये की बात कहने आया था। उसके बाद तो वह थाने की हवालात में बंद हो गया था।

— येस बाबू, आप क्या चाहते हैं?

— मिस्टर दातार की वाइफ यहाँ रहती थी, वह कहाँ गयी?

वे लोग कुछ बता नहीं पाये। फिर एक आदमी बाहर आया। उसने टूटी-फूटी अंग्रेजी में जो कुछ कहा, उसका यही मतलब निकलता है कि वे लोग कुछ दिन से यहाँ रह रहे हैं। पहले कौन रहता था, यह वे नहीं जानते।

— और कोई जानता है? और कोई बता सकता है?

कौन जानता है, वह भी वे लोग बता नहीं पाये। वह आदमी बोला — आप आसपास के लोगों से पूछकर देखिए, शायद कोई जानता हो।

आसपास में दीपंकर किसको जानता है? इस मुहल्ले में वह पहले कभी किसी से बोला भी नहीं। किसी से उसकी जान-पहचान नहीं है। यहाँ के ज्यादातर लोग चीन से आये हुए हैं। इसको चीनी मुहल्ला ही कहना चाहिए। एक लड़का था जो लक्ष्मी दी के लिए दुकान से खाना लाता था। अगर वह लड़का मिल जाय तो ....

— नो बाबू, हम नहीं जानते।

दीपंकर निराश होकर लौटने लगा था। इतने में उसे उस दफ्तर की बात याद आयी। वही दफ्तर, जहाँ उसे पहले दिन लक्ष्मी दी के मकान का पता मिला था।

गली से सीढ़ी ऊपर चली गयी थी। सीढ़ी से चढ़ते ही वह दफ्तर था। मिस्टर दातार का दफ्तर फिर खुल गया है क्या? दीपंकर ने झाँककर देखा। लेकिन मिस्टर दातार की कुर्सी दिखाई नहीं पड़ी। मिस्टर दातार के उस दोस्त की भी कुर्सी नहीं थी।

— क्या यह मिस्टर दातार का दफ्तर है? मिस्टर एस० एस० दातार?

दो आदमी अन्दर थे। एक ने पूछा — आप कौन हैं? कहाँ से आये हैं?

— मैं उनसे मिलने आया हूँ। वे मेरे परिचित हैं। वे कहाँ हैं, बता सकेंगे?

उस आदमी ने कहा — गली में पीले रंग का एक मकान है, इकमंजिला मकान, वहीं उनकी फैमिली रहती है।

मित्र और तारकेश्वर सेन। हिजली जेल के भीतर उनको गोली चलाकर मारा गया था। जिस दिन अलीपुर के सेशन जज मिस्टर गार्लिक आई० सी० एस० को गोली मार दी गयी थी, उस दिन उन लोगों ने हिजली जेल में रोशनी से सजावट की थी। फिर क्या पूछना था, जेल में गोलियाँ चलीं। कलकत्ते में उन दोनों की लाशें आयीं। फिर उनको जुलूस बनाकर केवड़ातल्ला के श्मशान में ले जाया गया था।

दीपंकर भीड़ को देखने लगा। माँ के पाँव छूकर उसने शपथ ली थी। फिर भी उसे सब-कुछ सुनाई पड़ा। विच्छिन्न विपर्यस्त वह दूर से केवल देखता रहा। लेकिन यह कौन रवीन्द्रनाथ ठाकुर हैं! बचपन में उनकी जो शकल देखी थी, वह आज की शकल से मेल नहीं खाती!

रवीन्द्रनाथ के दोनों बगल दो आदमी खड़े हैं। एक तरफ सुभाष बोस और दूसरी तरफ जे० एम० सेनगुप्त। रवीन्द्रनाथ की नाक के पास वे आक्सिजेन पकड़े हुए हैं।

रवीन्द्रनाथ कहने लगे — पहले ही कह देना ठीक है कि मैं राष्ट्रनेता नहीं हूँ। मेरा कार्यक्षेत्र राष्ट्रीय आन्दोलन से बाहर है। अधिकारियों द्वारा किये गये किसी अन्याय या भूल को मैं अपने खाते में चढ़ाकर विशेष आनन्द नहीं पाता। हिजली गोलीकांड आज हमारा विवेच्य विषय है। उसकी शोचनीय कापुरुषता और पशुता के बारे में मैं जो कुछ कहूँगा वह केवल अपमानित मानवता को दृष्टि में रखकर। इतनी बड़ी जनसभा में भाग लेना मेरे शरीर के लिए हानिकारक है। और मन के लिए उद्भ्रांतिजनक। लेकिन जब मुझे बुलाया गया, तब मैं शांत न रह सका। यह पुकार उन पीड़ितों की है, जिनके कंठस्वर को रक्षक कहलानेवालों ने नरहत्या जैसी निष्ठुरता से सदा के लिए मूक बना दिया है ....

खूब तालियाँ बजीं। थोड़ी देर के लिए कोई बात सुनाई नहीं पड़ी।

काफी देर बाद फिर सुनाई पड़ा — जहाँ अविचार अपमान और अपघात से जर्जरित होना देशवासियों के लिए इतना सरल है, जहाँ यथोचित विचार और अन्याय के प्रतिकार की आशा इतनी बाधाग्रस्त है, वहाँ प्रजा की रक्षा का भार जिनपर है उन शासकों और उनके सगे-संबंधियों की शुभबुद्धि कलुषित होगी ही और फिर वहाँ शिष्ट राष्ट्रशासन की नींव जराजीर्ण हुए बिना नहीं रहेगी।

फिर तालियाँ बजने लगीं। मानो अब कवि भी उत्तेजित हो उठे।

वे कहने लगे — उत्पीड़न मान लेने के लिए प्रजा को बाध्य करना राजा के लिए कठिन नहीं भी हो सकता, लेकिन विधाता के दिये अधिकार से प्रजा का मन जब राजा का विचार करने लगता है तब उसे कौन-सी शक्ति रोक सकती है?

खड़े होकर दीपंकर देर तक सुनता रहा। उसे लगा कि माँ ने मानो यह सब सुनने का उसका अधिकार भी छीन लिया है। वह पूरा सुन भी नहीं पाया। वह जल्दी-जल्दी भीड़ से निकल आया। लाखों लोगों की इस भीड़ से वह मानो अलग बना

के पते पर मुझे न पाकर लौट गये हो। इस समय मैं ऊपर के पते पर हूँ। तुमने कहा था कि नौकरी कर रहे हो। इसलिए मैंने तुम्हें तंग नहीं किया। बहुत दिन हो गये किसी की खबर नहीं मिली। अगर मौका मिले तो ऊपरवाले पते पर एक बार आ जाना। तुमसे भेंट होने पर खुशी होगी।

तुम्हारी लक्ष्मी दी

माँ ने पूछा — किसकी चिट्ठी है दीपू ? दफ्तर की ?

दीपंकर अब भी मन लगाकर चिट्ठी पढ़ रहा था। एक बार वह पढ़ चुका था, अब दोबारा पढ़ रहा था।

उधर से चन्नूनी ने आवाज लगायी — अरी दीदी, इधर तुम्हारी दाल जल रही था।

माँ जल्दी से चली गयी। इतने दिन बाद मानो माँ को फिर आशा मिली है। अब कोई डर नहीं है। अब कोई आशंका नहीं है। अब दीपू को हर तरह की छूत से बचा सकी है। दीपू ने माँ के पाँव छू कर कसम खायी है कि कभी स्वराज नहीं करेगा। अब सिर्फ एक मकान किराये पर लेकर यहाँ से चले जाना है। उसके पहले विन्ती की शादी हो जाय तो माँ को सारी जिम्मेदारी से छुटकारा मिले।

बगलवाला मकान अँधेरा पड़ा है। बहुत दिन हो गये, कोई किरायेदार नहीं आया, इसलिए अघोर भट्टाचार्य भी थोड़ा बेचैन होने लगे हैं। मकान किराये पर उठाने के लिए साइनबोर्ड लटकाया गया है। फिर भी कोई नहीं आता। सिर्फ बीस रुपये। इतने बड़े मकान के लिए बीस रुपये! फिर भी बहुत कम लोग हर महीने बीस रुपये गिन सकते हैं! कितने लोगों में इतनी ताकत है! कलकत्ते में ऐसे कितने लोग हैं जो हर महीने मकान का किराया बीस रुपये दे सकते हैं ?

जो लोग आते हैं, कहते हैं — पंद्रह रुपये में हो तो मकान लिया जा सकता है, बीस रुपये तो बहुत ज्यादा हैं।

अघोर भट्टाचार्य कहते हैं — फिर पड़ा रहे! वह कोई मछली नहीं है कि सड़कर बदबू देने लगेगा।

दीपंकर की माँ कहती है — दे दीजिए पिताजी, पंद्रह रुपये पर ही दे दीजिए....

अघोर भट्टाचार्य बिगड़ जाते हैं। कहते हैं — क्यों दूँ ? क्या मेरा रुपया इतना सस्ता है ? क्या मेरे घर में रुपये का पेड़ लगा है कि उसे हिलाऊँगा और ठन-ठन रुपया गिरने लगेगा ? क्या कहती हो बिटिया ?

इस बात का जवाब नहीं है। फिर भी लगता है कि उस मकान में लोग आ जायें तो अच्छा हो। वे लोग बड़े अच्छे थे। वह लड़की आती थी, मौसी कहकर पुकारती थी। विन्ती को लोग देखने आते थे तो वह उसे गहनों से सजा देती थी। पता नहीं, वह लड़की कहाँ चली गयी! शायद उसका बाप बर्मा से आकर उसे ले गया होगा।

याद आयी। जब तक उद्देश्य पूरा नहीं होता तब तक दल नहीं छोड़ूँगा। पिता, माता, भाई, बहन, घर-गृहस्थी किसी के स्नेह के बंधन में बँधा न रहूँगा। नेता के आदेश पर दल का हर काम बिना विरोध के करूँगा। यदि प्रतिज्ञा-पालन में असमर्थ होऊँ तो पिता, माता, ब्राह्मण और सभी देशों के सभी देशप्रेमियों का अभिशाप मुझे नाश कर दे।

—देख, ज्यादा देर मत करना। जब तक तू नहीं लौटेगा, मुझे नींद नहीं आयेगी।

इतने दिन संसार से केवल बाधा ही मिलती रही है दीपंकर को। कदम-कदम पर बाधा। माँ ने उसे कोई काम स्वतंत्र रूप से नहीं करने दिया। बचपन से अब तक बस मनाही और निषेध। मनाही और निषेध के घेरे में वह बँधा रहा। शायद इसी लिए चाहने पर भी कहीं उसे शांति नहीं मिली। संसार में उसे कोई आश्रय नहीं मिला। ऑफिस में रॉबिन्सन साहब की शरण में आने पर भी मिस्टर घोषाल की बद-तमीजी शायद इसीलिए उसे विचलित करती है। शायद इसीलिए वह किरण से दोस्ती कर और उसके साथ रहकर भी उस पर पूरी तरह विश्वास न कर सका। शायद इसीलिए सती उस पर शक करती रही। शायद इसीलिए लक्ष्मी दी उससे इस तरह दूर रहती है।

सच में बहुत दूर है। जेब से चिट्ठी निकालकर दीपंकर ने एक बार पता देख लिया। एकदम बालीगंज के आखिरी छोर पर। फिर पैदल चलना है। वह सीधे दक्षिण तरफ चलता चला गया। एक-दो मकान अलग-अलग। इधर का इलाका एकदम बदल गया है। इधर एक लेक बन रहा है। चारों तरफ बस पेड़ ही पेड़। ताड़ के लंबे-लंबे पेड़ों का जंगल। कई मकान बन गये हैं। अभी तक जंगल ठीक से साफ नहीं हुआ। रास्ते से भैंसागाड़ी चली जा रही है। कई गाड़ियाँ एक कतार में। धीरे-धीरे रास्ते की रोशनी कम होती गयी। परचून की दो-चार दुकानें। उसके बाद बायीं तरफ दूर तक दलदल। कुंभियों से ढका हुआ पानी।

चलते-चलते दीपंकर एकदम गाड़ियाहाट रेललाइन के लेवल-क्रासिंग पर पहुँच गया। यहाँ रेल लाइन उत्तर से आकर मुड़ी है और सीधे पश्चिम तरफ चली गयी है। गेट बंद है। बंद लेवल-क्रासिंग के सामने कतार में भैंसागाड़ियाँ खड़ी हैं। गेट पर लाल बत्ती जल रही है। बगल में ही लंबा नाला है। मेंढक की टर्र-टर्र सुनाई पड़ रही है। पास ही बुद्ध-मंदिर है। मंदिर में पूजा का घंटा बजने की आवाज सुनाई पड़ी —टन-टन ....

दीपंकर पहचान गया। भूषण खड़ा है। भूषण माली के हाथ में हरा सिगनल-लैम्प है। रेल का गुमटीवाला। गेटमैन।

कभी-कभी एक-दो बार भूषण हेड ऑफिस आया है। बहुत पुराना गेटमैन है। कोई एक्सिडेंट होने पर भूषण गवाही देने आता है। घोषाल साहब के पास दरबारदारी करता है। फिर बालीगंज वेस्ट केबिन का केबिनमैन कराली बाबू भी परिचित है।

आसपास कोई बत्ती भी नहीं थी। आँगन में ताड़ का पेड़ खड़ा था। उसका सिर आसमान तक चला गया था! कच्चा आँगन। चारों तरफ ऊँची दीवार। दीवार के उस पार दलदल में मेंढक बोल रहा था।

लक्ष्मी दी ने दबी आवाज में कहा — तू ऐसे समय आया ....

दीपंकर भी बहुत धीरे बोला — दफ्तर से लौटकर तुम्हारी चिट्ठी मिली। उसके बाद माँ ने कहा कि खाना खाकर जा। इसलिए खाना खाकर निकला।

थोड़ा रुककर वह बोला — न हो मैं अभी जाऊँ, बाद में किसी दिन जल्दी आ जाऊँगा ....

— नहीं, रुक। तुझे मैंने ही बुलाया है।

— खैर, इसकी चिंता न कीजिए, मैं दूसरे दिन आ जाऊँगा।

फिर उसे अचानक याद आया। बोला — कल मिस्टर दातार मिल गये थे लक्ष्मी दी, क्या वे अभी तक छिपे रहते हैं? मैंने बुलाया तो उन्होंने जवाब तक नहीं दिया। क्या हुआ है?

लक्ष्मी दी ने इसका जवाब नहीं दिया। दीपंकर से कहा — इधर आ ....

फिर एक दूसरे गलियारे से लक्ष्मी दी दूसरी तरफ चली। उधर भी अँधेरा था। लक्ष्मी दी आगे-आगे चल रही थी। दीपंकर को मानो सब कुछ रहस्यमय लगने लगा। कहाँ बहूबाजार की चीनी पट्टी और कहाँ यह गाड़ियाहाट लेवल क्रासिंग! यह तो ठाकुरिया है। इतनी जगह रहते लक्ष्मी दी यहाँ क्यों आयी? वही लक्ष्मी दी, कितने बड़े आदमी की बेटी! उसके पास कितना रुपया था! भुवनेश्वर बाबू के पास कितना रुपया है। कितनी अच्छी जगह लक्ष्मी दी की शादी हो सकती थी! सती की तरह उसकी भी किसी बड़े घर में शादी हो जाती। सती की शादी के दिन जैसे मोटरकारें प्रियनाथ मल्लिक रोड पर खड़ी हुई थीं, वैसे लक्ष्मी दी की शादी में भी होतीं। बड़े-बड़े लोग कीमती कार में आते। राय बहादुर नलिनी मजूमदार भी आता।

लक्ष्मी दी एक खिड़की के सामने जा खड़ी हुई। खिड़की खुली थी। लक्ष्मी दी ने उँगली से इशारा किया। बोली — वह देख ....

दीपंकर ने देखा। कल अँधेरे में ठीक से देख न सका था। कमरे में लालटेन टिमटिमा रही थी। मिस्टर दातार तख्त पर सो रहे थे। बड़ा असहाय चेहरा। मानो बहुत लड़कर बहुत आघात सहने के बाद थककर अब जरा सो रहे हों। मानो फिर अभी वे जग जायेंगे। दीपंकर देर तक देखता रहा। पहले वे कितना टिप-टॉप रहते थे! कोट-पैंट पहने टाई लगाये थे टैक्सी से तड़के ही कालीघाट के मंदिर में आते थे — सिर्फ लक्ष्मी दी की एक चिट्ठी के लिए। वे सिगरेट खूब पीते थे। पश्चिम भारत के किसी [illegible] के निवासी हैं। सगे-संबंधियों और इष्ट-मित्रों से दूर वे अपना [illegible] पार किसी दूर देश में पहुँच गये थे।

[illegible] दातार को प्रतिष्ठा मिली थी, यश मिला था — वे अपने पाँवों

गांगुली बाबू क्या जानते थे कि एक क्षण की भी शांति के लिए उनका सेन साहब अपनी सारी पद-मर्यादा, सम्मान, धन, सब कुछ अपने ही पाँवों के नीचे रौंद सकता है !

लेकिन यह सब बाद की बात है।

लक्ष्मी दी के जीवन में ही किस बात का अभाव था? धन? धन के प्रति लक्ष्मी दी का कोई आकर्षण नहीं था। फिर लक्ष्मी दी के पास रूप था, स्वास्थ्य था, गुण था, वह पढ़ी-लिखी थी, उसमें सब कुछ था। बाप का स्नेह और बहन का प्यार भी उसे मिला था। उसका भविष्य उज्ज्वल था। भुवनेश्वर बाबू अपनी लड़की के लिए क्या नहीं कर सकते थे? एक दिन उनकी मृत्यु के बाद लक्ष्मी दी ही तो उनकी आधी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी होतीं। अपनी लड़कियों का खयाल करके ही भुवनेश्वर बाबू ने दूसरी शादी नहीं की थी। उन्होंने सोचा था कि दूसरी शादी करने पर, लड़कियाँ बड़ी होकर बाप की स्वार्थपरता की निंदा करेंगी। तब वे किसको क्या जवाब देंगे !

बहुत दिन बाद कभी दीपंकर ने लक्ष्मी दी से पूछा था — आपने यह लोभ छोड़ा कैसे लक्ष्मी दी?

उस समय लक्ष्मी दी गरीबी की चरम सीमा पर पहुँच गयी थी। रोज का खाना मिलना भी मुश्किल हो गया था। शहर के बाहर टूटे मकान के एक कमरे में लक्ष्मी दी रहती थी। सैकड़ों जगह फटी गंदी साड़ी पहनकर उसे अपनी लज्जा ढँकना पड़ता था। तब भी कभी उसे रोते या मुँह फुलाते नहीं देखा गया। फटी साड़ी बार-बार सिलकर घुमा-फिराकर वह पहनती थी। ऐसी भी विकट गरीबी में उसने दिन बिताये थे !

— सच बताइए न, आपने उतने ऐश्वर्य का लोभ कैसे त्यागा? आपको अफसोस नहीं होता?

लक्ष्मी दी ने कहा था — अगर तू शंभु को ठीक से जानता तो ऐसा सवाल न करता।

— लेकिन मिस्टर दातार ने आपके लिए क्या किया है? सिर्फ अभाव और गरीबी के अलावा उन्होंने आपको और दिया ही क्या है?

उस दिन यह सुनकर लक्ष्मी दी हँसी थी। बोली थी — तू बाहरी आदमी है। तू तो ऐसा कहेगा ही। पिता जी देखते तो वे भी यही कहते !

— क्या मिस्टर दातार आपसे सचमुच प्यार करते हैं?

— अगर प्यार नहीं करता तो इतना शक क्यों करता है! देखता नहीं, तुमसे बात करती हूँ, तो भी वह शक करता है।

उस समय मिस्टर दातार की विचित्र मानसिक स्थिति थी। लक्ष्मी दी के उन दिनों के बारे में सोचने पर अब भी मन आतंकित होता है। लक्ष्मी दी को देखकर ही मानो दीपंकर ने अपने को नये ढंग से देखना सीखा था। सब तरह के दुःखों में

काफी रात हो गयी थी। शायद एक बज गया था। मैं बहुत घबड़ा रही थी। घबड़ाहट के मारे नींद नहीं आ रही थी। फिर वह लेवल क्रॉसिंग है न, उससे भी बड़ा डर लगता है!

— क्यों ?

— वहाँ कई दुर्घटनाएँ हुई हैं। लाइन पार करते समय कई लोग ट्रेन से कटे हैं। उसका दिमाग तो ठीक है नहीं, पता नहीं कब अनमना होकर रेलवे लाइन पार करेगा और उधर से जो ट्रेन आ रही है, इसका ध्यान नहीं रहेगा ....

दीपंकर बोला — इतनी जगह रहते यहीं आपने क्यों मकान लिया है लक्ष्मी दी ? क्या और कहीं मकान नहीं मिला।

लक्ष्मी दी बोली — इतना सस्ता मकान और कहीं नहीं मिलेगा।

सिर्फ एक कमरा। एक और कमरा भी है, लेकिन उसे कमरा नहीं कहा जा सकता। बस, चारों तरफ दीवार है। उसी कमरे में लक्ष्मी दी ने दीपंकर को बैठाया। बगल के कमरे में मिस्टर दातार बेखबर सो रहे थे। लक्ष्मी दी एक-एक कर हर बात बताने लगीं।

लक्ष्मी दी बोली — इसीलिए तुझे बुलाया था ....

दीपंकर बोला — मुझसे कैसी मदद हो सकेगी, आप ही बताइये। आप जो चाहेंगी मैं वही करूँगा। अब तो मैं दफ्तर में काम कर रहा हूँ। मेरी तनख्वाह भी बढ़ गयी है।

लक्ष्मी दी ने कहा — यह क्या है रे ? तेरा मनीबैग ?

न जाने कब पैंट की जेब से मनीबैग गिर गया था, दीपंकर को पता भी न चला था।

दीपंकर बोला — इसमें सिर्फ बारह आने पैसे हैं !

जरा रुककर दीपंकर ने कहा — अगर रुपये की जरूरत हो तो बताइये लक्ष्मी दी, मैं दे सकता हूँ ....

लक्ष्मी दी बोली — रुपये की जरूरत नहीं है। अनंत देता है....

— अनंत कौन है ?

— लक्ष्मी दी बोली — शंभु का दोस्त। वही, जिस पर वह शक करता है....

— शक क्यों करते हैं ....

लक्ष्मी दी हँसकर बोली — पता नहीं। अनंत न होता तो हम कहाँ रहते पता नहीं। अनंत न रहता तो आज उसे जेल जाना पड़ता। अनंत को दोष देना आसान है, लेकिन वह है, इसीलिए हम जिंदा हैं। उस बेचारे का कहीं नहीं है। फिर कौन किसके लिए इतना करता है ? उसे क्या गरज पड़ी है ? मैं उसकी कोई नहीं, फिर भी वह इतना ख्याल क्यों करता है ?

अनंत की बात करते समय लक्ष्मी दी सहसा उत्तेजित हो उठी।

पर तू जाना। और सब क्या खबर है, वह बता। तेरे मुहल्ले की क्या खबर है? मौसीजी कैसी हैं? और वह लड़की? विन्ती ही तो उसका नाम है न? उसकी शादी हो गयी?

एक साथ लक्ष्मी दी ने बहुत कुछ पूछ लिया। बहुत सारी खबरें जान लीं! सती की कैसी शादी हुई? दीपंकर को बुलाया था कि नहीं? ससुराल कहाँ है? ऐसी बहुत सी बातें ....

अचानक दीपंकर बोला — अच्छा लक्ष्मी दी ....

— क्या?

— आप उसे उसे यहाँ सोने क्यों देती हैं?

— किसे?

— अनंत बाबू को? लाख दोस्त हो, लेकिन एक घर में सोना क्या अच्छा है? मिस्टर दातार बीमार हैं और बीमारी का कारण भी वही हैं। वही अनंत बाबू। आप अनंत बाबू से दूसरे मकान में सोने के लिए नहीं कह सकतीं? यहाँ खाना खाये, कोई हर्ज नहीं है, लेकिन सोने की क्या जरूरत है?

फिर जरा रुककर दीपंकर ने पूछा — अनंत बाबू कहाँ सोता है? किस कमरे में?

— इसी तखत पर। यह तो अनन्त का ही कमरा है!

— और आप? आप कहाँ सोती हैं।

अचानक बाहर कुंडी खटखटाने की आवाज हुई। लक्ष्मी दी उठी। बोली — अनंत आया है।

लक्ष्मी दी दरवाजा खोलने जा रही थी। दीपंकर बोला — अब मैं भी चलूँ। रात काफी हो गयी है ....

— बैठ न। अनंत से मिलकर जा। तुझे अनन्त से मिलाने के लिए ही तो मैंने बुला भेजा है।

कहकर लक्ष्मी दी दरवाजा खोलने के लिए गलियारे से चली गयी। रात काफी हो गयी है। अब ज्यादा देर रुकना संभव नहीं है। उस दिन दीपंकर को लगा था कि लक्ष्मी दी मानो बहुत बड़ी गलती कर रही है। बहुत बड़ा अन्याय। सिर्फ अन्याय नहीं, अपना अपव्यय। लेकिन लक्ष्मी दी में जितनी बुद्धि है, उससे तो उसके लिए ऐसा जीवन बिताना नामुमकिन है। शहर के अँधेरे छोर पर एकांत विच्छिन्न रहना उसे शोभा नहीं देता। वह तो इससे भी बड़े, इससे भी महान् जीवन के लिए पैदा हुई थी। जो होना चाहिए था, उसकी बात अलग है, लेकिन ऐसी दरिद्रता में वह अपने होंठों पर हँसी को कैसे बरकरार रख सकी है, यही सोचकर उस दिन दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया था।

और वह अनंत बाबू? अनंतराव भावे और शिवशंभु दातार। दोनों बहुत दिन के दोस्त हैं। बाद में दीपंकर ने सुना था — दोनों एक होटल में रहते थे। एक ही

पर तू जाना। और सब क्या खबर है, वह बता। तेरे मुहल्ले की क्या खबर है ? मौसीजी कैसी हैं ? और वह लड़की ? विन्ती ही तो उसका नाम है न ? उसकी शादी हो गयी ?

एक साथ लक्ष्मी दी ने बहुत कुछ पूछ लिया। बहुत सारी खबरें जान लीं ! सती की कैसी शादी हुई ? दीपंकर को बुलाया था कि नहीं ? ससुराल कहाँ है ? ऐसी बहुत सी बातें ....

अचानक दीपंकर बोला — अच्छा लक्ष्मी दी ....

— क्या ?

— आप उसे उसे यहाँ सोने क्यों देती हैं ?

— किसे ?

— अनंत बाबू को ? लाख दोस्त हो, लेकिन एक घर में सोना क्या अच्छा है ? मिस्टर दातार बीमार हैं और बीमारी का कारण भी वही है। वही अनंत बाबू। आप अनंत बाबू से दूसरे मकान में सोने के लिए नहीं कह सकतीं ? यहाँ खाना खाये, कोई हर्ज नहीं है, लेकिन सोने की क्या जरूरत है ?

फिर जरा रुककर दीपंकर ने पूछा — अनंत बाबू कहाँ सोता है ? किस कमरे में ?

— इसी तखत पर। यह तो अनन्त का ही कमरा है !

— और आप ? आप कहाँ सोती हैं।

अचानक बाहर कुंडी खटखटाने की आवाज हुई। लक्ष्मी दी उठी। बोली — अनंत आया है।

लक्ष्मी दी दरवाजा खोलने जा रही थी। दीपंकर बोला — अब मैं भी चलूँ। रात काफी हो गयी है ....

— बैठ न। अनंत से मिलकर जा। तुझे अनन्त से मिलाने के लिए ही तो मैंने बुला भेजा है।

कहकर लक्ष्मी दी दरवाजा खोलने के लिए गलियारे से चली गयी। रात काफी हो गयी है। अब ज्यादा देर रुकना संभव नहीं है। उस दिन दीपंकर को लगा था कि लक्ष्मी दी मानो बहुत बड़ी गलती कर रही हैं। बहुत बड़ा अन्याय। सिर्फ अन्याय नहीं, अपना अपव्यय। लेकिन लक्ष्मी दी में जितनी बुद्धि है, उससे तो उसके लिए ऐसा जीवन बिताना नामुमकिन है। शहर के अँधेरे छोर पर एकांत विच्छिन्न रहना उसे शोभा नहीं देता। वह तो इससे भी बड़े, इससे भी महान् जीवन के लिए पैदा हुई थी। जो होना चाहिए था, उसकी बात अलग है, लेकिन ऐसी दरिद्रता में वह अपने होंठों पर हँसी को कैसे बरकरार रख सकी है, यही सोचकर उस दिन दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया था।

और वह अनंत बाबू ? अनंतराव भावे और निवशंभु दातार। दोनों बहुत दिन के दोस्त हैं। बाद में दीपंकर ने सुना था — दोनों एक होटल में रहते थे। एक ही

अनंत बाबू की बात सुनकर ठाकुरिया के उस अँधेरे कमरे में बैठा दीपंकर स्तब्ध हो गया था। वह रोजाना जिस ऑफिस में जाता है, प्रतिदिन जिसके अटेंडेंस रजिस्टर में दस्तखत करके काम करता है, उसके अन्दर क्या हो रहा है यह उसने कभी नहीं देखा ! वह कलम चलाकर साफ-सुथरा काम करता है। नोट लिखता है, ड्राफ्ट भेजता है, स्टेटमेंट बनाता है, लेकिन उस सबके पीछे इतना बड़ा रहस्य है, यह वह नहीं जानता ! कहीं किसी बोर्ड से टेलीफोन आता है, पब्लिक से भी आता है। हेड ऑफिस से आर्डर आनेपर डिवीजन से उस हुक्म की तामीली भी होती है। बाहर गेट पर गोरखा दरवान रहता है और एस्टैब्लिशमेंट के नियम-कानून की कड़ाई रहती है ! लेकिन इतने दिन तक वहाँ काम करने पर भी वह यह सब राज जान न सका। उसने सपने में भी यह सब सोचा नहीं था। वहाँ इतना बड़ा छेद है, इतनी चौड़ी दरार और इतना घपला !

लक्ष्मी दी अब तक सब सुन रही थी। बोली — क्यों रे दीपू, क्या कहता है तू ? कुछ कर पायेगा ? तू मिस्टर घोषाल को जानता है ?

अनंत बाबू बोला — मैं दो सौ रुपये तक दे सकता हूँ, लेकिन तीन सौ रुपये देने पर क्या बचेगा, आप ही बताइए।

दीपंकर अचानक बोला — अगर रॉबिन्सन साहब सैंक्शन करने का मालिक है तो आपको मिस्टर घोषाल के पास जाने की क्या जरूरत है ?

अनंत बाबू बोला — मिस्टर घोषाल रॉबिन्सन साहब का खास आदमी है — मिस्टर रॉबिन्सन मिस्टर घोषाल की बात बहुत मानता है।

दीपंकर बोला — आप रॉबिन्सन साहब से कभी मिले थे ?

अनंत बाबू बोला — नहीं, मैं उन लोगों का एनलिस्टेड सप्लायर हूँ। कंट्रोलर ऑव् स्टोर्स के दफ्तर में मैंने अपना नाम रजिस्टर्ड करवा लिया है। उसके लिए भी कुछ रुपये खर्च हुए हैं। खाते पर नाम क्या आसानी से चढ़ता है ? नाम चढ़ाना भी मुश्किल काम है। उसके बाद इसको खिलाओ, उसको खुश रखो, फिर किसी और की दिलजोई करो ! अब वह कह रहा है कि माल तो आप सप्लाई करेंगे, लेकिन डी० टी० एस० अगर रिजेक्ट कर दें तो पेमेंट नहीं होगा। असल में वहाँ सब एक-दूसरे से मिले हुए हैं, याने सभी को खिलाना पड़ेगा। खैर, मैं आपके दफ्तर में जाकर मिला था ....

— किससे मिले थे ?

अनंत बाबू बोला — नाम मैं नहीं बता पाऊँगा। उसने मना कर दिया है। उसी के जरिये मिस्टर घोषाल खाता है। उसका नाम बताने पर मेरा काम रुक जायेगा।

दीपंकर बोला — ठीक है, नाम बताने की जरूरत नहीं है। मैं आपका काम करवा दूँगा। आपको मिस्टर घोषाल के पास जाने की जरूरत नहीं है। अब किसी को खिलाने की जरूरत भी नहीं है। आपको एक पैसा भी देने की जरूरत नहीं है। अब से

बाहर दरवाजे के पास आकर, कदम बढ़ाकर भी दीपंकर रुक गया। बोला — अच्छा लक्ष्मी दी, मैं चलूं ....

लक्ष्मी दी बोली — फिर आना ....

दीपंकर बोला — इतने दिन बाद आपसे मुलाकात हुई और कुछ नहीं पूछेंगी? और किसी की बात?

लक्ष्मी दी को थोड़ा आश्चर्य हुआ। बोली — और किसकी बात पूछूं, बता न?

— क्या और किसी की बात नहीं पूछी जा सकती? इतने दिन ईश्वर गांगुली लेन में रहीं, चाचाजी, चाचीजी, सती — आप सबको भूल गयीं?

लक्ष्मी दी बोली — भूली नहीं हूं।

— लेकिन उन लोगों के बारे में आपने कुछ नहीं पूछा? इस तरह आप सबको भूल गयीं? लेकिन इसके बदले आपको क्या मिला? बताइए, सचमुच क्या मिला? आज तो मैंने अपनी आँखों से आपकी यह हालत देखी। क्या आप समझती हैं कि आप सुखी हो हैं? जिसके लिए आपने सब कुछ छोड़ा, क्या उन्हें भी आप सुखी कर सकी हैं? अब पता नहीं वह कहाँ का कौन है, जिससे आपका कोई सम्पर्क नहीं है, उसी की दया पर निर्भर रहकर आपको अपना पेट पालना पड़ रहा है — क्या इसे आप बड़े गौरव की बात मानती हैं?

लक्ष्मी दी ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

दीपंकर बोला — आप सच बताइए, मैं पूछ रहा हूं, वह आदमी आपका कौन है? उससे आपका क्या सम्पर्क है? वह आप लोगों के लिए इतना क्यों करता है? उसका क्या स्वार्थ है?

लक्ष्मी दी मानो सहसा सँभलकर बोली — काफी रात हो गयी है, तुझे लौटना है न तू जा ....

दीपंकर बोला — मैं तो जाऊंगा ही, आपके पास रहने के लिए नहीं आया, मेरी बात का जवाब तो दीजिए।

लक्ष्मी दी बोली — तू नहीं जानता, अनंत न होता तो हमारी इस मुसीबत में हम पर क्या गुजरती, कहा नहीं जा सकता। उसने बहुत किया है और वह अब भी कर रहा है। इसीलिए मैं कह रही हूं कि हो सके तो उसका काम कर दे। उससे मेरा भला होगा ....

— आपका भला होगा, इसीलिए मैं उसका काम कर दूंगा, नहीं तो उससे मेरा क्या सम्पर्क है?

— हाँ, मेरा भला होगा। इसीलिए मैंने तुझे चिट्ठी लिखी थी। शंभु की बीमारी ठीक हो जाने पर मैं उसे यहाँ से दूसरी जगह ले जाऊंगी, तब हमारे साथ कोई नहीं रहेगा, तब मुझे किसी की दया पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा।

दीपंकर ने पूछा — लेकिन मिस्टर दातार का क्या इलाज करा रही हैं ?

— मैं औरत क्या करूँगी बता, वही अनंत उसे डाक्टर के पास ले जाता है।

— डाक्टर क्या कहता है ?

— डाक्टर क्या कहेगा। मैं तो खुद समझ रही हूँ, वह सिर्फ शक करता है। उसे जबर्दस्त वहम की बीमारी है ! वह मुझपर शक करता है, अनंत पर शक करता है। उसके दिमाग में बस यही बात बैठ गयी है कि मैं उससे पहले:का-सा प्यार नहीं करती, वह सिर्फ यही सोचता रहता है कि मैं उसे छोड़कर चली जाऊँगी ....

अचानक अन्दर से मिस्टर दातार की आवाज सुनाई पड़ी। बगल के कमरे में चिल्लाकर वे कुछ कह रहे हैं। उनकी भाषा समझ में नहीं आयी।

लक्ष्मी दी चौंक पड़ी। बोली — देख, शंभु जग गया है, मैं जा रही हूँ ....

अनत बाबू आया। बोला — शंभु उठ गया है।

उसके बाद दीपंकर की तरफ देखकर अनंत बाबू बोला — रात हो गयी है, आपको बहुत दूर जाना है।

लक्ष्मी दी बोली — फिर आना दीपू ....

— आऊँगा।

फिर दीपंकर अनंत बाबू से कहा — आप जरूर आइएगा, मैं साहब से कहकर सब इन्तजाम कर दूँगा। आपका रुपया खर्च न होगा ....

कहकर दीपंकर अँधेरे में निकल पड़ा। चारों तरफ अँधेरा गहरा आया है। नीची दलदली जमीन। दोनों किनारे नालियों में कीचड़ जमा है। दीपंकर जल्दी-जल्दी चलने लगा। यहाँ से काफी दूर पैदल चलना होगा। उसके बाद मोड़ पर ट्राम मिलेगी। शायद इतनी रात को ट्राम बंद हो गयी होगी। आसपास कहीं घड़ी नहीं है। रात कितनी हुई है, जानने का उपाय नहीं है। दीपंकर लेवल क्रॉसिंग का गेट पारकर इस पार आया। अगर ट्राम न मिली तो पूरा रास्ता पैदल चलना होगा। कल सवेरे दफ्तर भी जाना है। फिर वही जापान ट्रैफिक, फिर वही मिस्टर घोषाल ! उसने कल अनंत बाबू से आने के लिए कह दिया है। आश्चर्य की बात है ! नृपेन बाबू फिर भी अच्छा है। तैंतीस रुपये में नृपेन बाबू का पेट भरता है, लेकिन मिस्टर घोषाल तो तीन सौ रुपये माँगता है !

अचानक जेब में हाथ डालकर दीपंकर चौंक पड़ा। मनीबैग कहाँ गया ! उसका पर्स !

उसमें दीपंकर का पैसा है। अब वह ट्राम का किराया कैसे देगा ? हालाँकि ज्यादा पैसा उसमें नहीं था। शायद बारह आने थे। जरूर लक्ष्मी दी के घर पड़ा है।

दीपंकर जल्दी-जल्दी लौटा। इतनी दूर आने-जाने में पन्द्रह मिनट लग ही जायेंगे। लग जाय, लेकिन मनीबैग के बिना कैसे काम चलेगा ! कल तो सवेरे ही दफ्तर जाना है।

फिर वही गेट पार करना पड़ा। गेट भी बंद है। कई गाड़ियाँ खड़ी हैं। शायद गुड्स ट्रेन आ रही है। दुमंजिली गुमटी में ऊपर बत्ती जल रही है। भूषण माली इस समय अन्दर है। गेट बंदकर वह टेलीफोन पर साउथ केबिन से बात कर रहा है। रास्ते से उसकी आवाज सुनाई पड़ रही है।

— हलो, थ्री-सेवेंटिन अप ? गेट बंद कर दिया हुजूर —

— जी नहीं, सनातन नहीं, मैं भूषण हूँ ! भूषण माली ! सेकंड नाइट ड्यूटी है हुजूर।

वही भूषण ! भूषण की आवाज सुनते ही दीपंकर पहचान जाता है। बहुत दिन बाद रॉबिन्सन साहब के साथ जब दीपंकर लाइन देखने आया था, तब यही भूषण ड्यूटी पर था। एकदम विनय का पुतला भूषण ! सलाम ठोंकने से वह नहीं थकता। रॉबिन्सन साहब भूषण को बहुत चाहता था !

रॉबिन्सन साहब ने दीपंकर से पूछा था — इज़ ही ए साउथ इंडियन सेन ?

रॉबिन्सन साहब के मन में न जाने क्यों यह बात बैठ गयी थी कि अगर कोई भला आदमी है तो वह जरूर साउथ इंडियन होगा। ऐसा न हो, यह नहीं हो सकता। उस समय मिसेज़ रॉबिन्सन से भी दीपंकर की अच्छी जान-पहचान हो गयी थी। साहब के साथ कभी-कभी मेम भी लाइन देखने आती थीं। जब यह लेवल क्रॉसिंग गेट और चौड़ा हुआ तब अक्सर यहाँ आना पड़ता था। कभी साहब की गाड़ी से और कभी ट्राली से। साहब का कुत्ता जिमी भी आता था। सब गाड़ी से उतरते थे। फिर नाप-जोख होती थी, इन्स्पेक्शन होता था। उसी समय भूषण माली आकर साहब के सामने खड़ा होता था। सिगरेट पी रही मिसेज़ रॉबिन्सन की तरफ वह आश्चर्य से देखता था।

रॉबिन्सन साहब ने एक दिन भूषण से पूछा था — ह्वाट इज योर पे गेटमैन ?

दीपंकर ने भूषण को मतलब समझा दिया था। कहा था — साहब पूछ रहे हैं कि तुम कितनी तनख्वाह पाते हो ?

भूषण ने कहा था — हुजूर, अठारह रुपये।

रॉबिन्सन साहब इस पर भी खुश नहीं हुआ था। उसने पूछा था — आर यू सैटिस्फायड ?

दीपंकर ने तर्जुमा कर भूषण को समझा दिया था — साहब पूछ रहे हैं कि तुम इस तनख्वाह से खुश हो ?

भूषण ने कहा था — जी हुजूर, खुश हूँ ....

साहब उत्तर सुनकर खुश हो गया था। बोला था — सी, ही इज हैपी !

रॉबिन्सन साहब किसी को दुःखी नहीं देखना चाहता था। साहब चाहता था, सब लोग खुश होकर खुशी से काम करें। तभी रेलवे का काम अच्छा होगा।

गेट पार कर चलते-चलते दीपंकर फिर उसी तिरपन नंबर मकान के सामने

जा खड़ा हुआ। शायद लक्ष्मी दी वगैरह अब सो गये हैं। रात कोई कम नहीं है। फिर बुलाकर उनको जगाना पड़ेगा। नाली पार कर दीपंकर सदर दरवाजे की कुंडी खटखटाने गया। लेकिन आश्चर्य है, दरवाजा सिर्फ ओढकाया हुआ है। जरा ठेलते ही वह खुल गया। शायद बंद करना लक्ष्मी दी भूल गयी हैं।

अन्दर वैसा ही अँधेरा है। सँकरी गलियारी में पहुँचते ही दीपंकर को मिस्टर दातार का चिल्लाना सुनाई पड़ा। वे उसी तरह चिल्ला रहे हैं। फिर अभी तक कोई सोया होगा। शायद मिस्टर दातार को जबर्दस्ती खिलाया जा रहा है या सुलाने की कोशिश हो रही है। आह! दीपंकर के मन से अपने आप वह शब्द निकल पड़ा। लक्ष्मी दी का भाग्य भी कैसा है! वह कितना सुख छोड़कर यहाँ कितने कष्ट में रह रही है!

गलियारे के अंत में पहुँचते ही दीपंकर चौंक पड़ा।

अन्दर किसी के जोर से हँसने की आवाज सुनाई पड़ी। इस तरह कौन हँस रहा है? इतनी रात को कौन हँस रहा है? कमरे में बत्ती जल रही है। खिड़की से अन्दर निगाह पहुँची तो दीपंकर चौंका।

कमरे के फर्श पर लक्ष्मी दी और अनंत बाबू आमने-सामने खाना खाने बैठे हैं। खाते-खाते दोनों किसी बात पर दिल खोलकर हँस रहे हैं। हँसते-हँसते लोटपोट हो रहे हैं। कोई ऐसी मजे की बात आ पड़ी है कि दोनों दीन-दुनिया को भूल गये हैं।

दीपंकर ने निगाह हटा ली। उधर से मिस्टर दातार का चिल्लाना उस समय भी सुनाई पड़ रहा है। लेकिन उस तरफ किसी का ख्याल नहीं है। वे लोग अपनी धुन में हँसे जा रहे हैं। मिस्टर दातार की चिल्लाहट सुनकर भी वे हँस पा रहे हैं!

नहीं, जरूरत नहीं है! दीपंकर पैदल घर लौटेगा। चाहे जितनी रात हो जाय, चाहे जितनी दूर चलना पड़े। मनीबैग की जरूरत नहीं है। बारह आने पैसे के लिए हँसी में खलल डालने की जरूरत नहीं है। बारह आने पैसे का नुकसान दीपंकर बरदाश्त कर लेगा। फिर कल ही तो तनख्वाह मिल जायेगी। महीने की पहली तारीख है कल।

रास्ते में चलते हुए भी दीपंकर लक्ष्मी दी की हँसी सुनने लगा। वही छल-छलाती हड़हड़ाती हँसी! मिस्टर दातार का वही वीभत्स चीत्कार! एक तरफ चीत्कार और दूसरी तरफ हँसी! एकदम पास-पास!

••

लक्ष्मी दी का जीवन न जाने क्यों बड़ा जटिल लगा था उस दिन। लगा था — हर मनुष्य के साथ शायद यही होता है। दीपंकर ने भी तो कितनी बार अपने जीवन को सरल बनाना चाहा था। सहज, सरल और सीधा जीवन ही तो दीपंकर को प्रिय था। सरल रेखा की तरह सरल जीवन! शायद सभी ऐसा चाहते हैं। जीवन को सरल बनाने के लिए ही कितना आयोजन होता है, लेकिन अंत में वही आयोजन भारी पड़ जाता है और वही आयोजन जी का जंजाल बनकर जीवन को पीड़ा देता है। जिस दिन लॉक-अप से निकला था, उसी दिन दीपंकर ने निश्चय किया था — बस, अब और आगे नहीं! प्रियनाथ मल्लिक रोड पर उस शादी वाले मकान के सामने खड़े होकर उसने यही निश्चय किया था। उसने मन-ही-मन कहा था — अच्छा हुआ, सब बंधन तोड़कर वह छुटकारा पा गया है। सारे रिश्ते टूटे तो क्या हुआ, उसकी जान तो बची! माँ के पाँव छूकर उसने उस दिन यही संकल्प दोहराया था। उसके बाद उसने किसी के सम्पर्क में जाना नहीं चाहा। नौकरी करेगा और उन्नीस बटा एक बी गांगुली लेन में आकर अज्ञातवास करेगा, यही उसने सोचा था। उसने कोई आयोजन भी नहीं किया था। उसे कोई आकर्षण भी नहीं था। उसने सोचा था — जीवन से सब कुछ धुल-पुंछ गया है। किरण के बाप का नश्वर शरीर जिस तरह श्मशान में निःशेष हुआ है, उसी तरह उसके जीवन से सब आकर्षण समाप्त हो गये हैं। लेकिन फिर इतना बड़ा आयोजन उसके जीवन में क्यों हुआ, क्यों उसके जीवन में इतना जंजाल इकट्ठा हुआ और, क्यों इस तरह लक्ष्मी दी उसके जीवन में उलझ गयी! क्यों सती उसे फिर इस तरह झकझोरने लगी!

याद है, मिस माइकेल कहती थी — मिस्टर सेन, यू आर वेरी शाइ। तुम इतने लज्जालु क्यों हो?

मिस माइकेल से ज्यादा दिन का परिचय नहीं था। लेकिन कुछ दिन अगल-बगल बैठते ही मानो वह दीपंकर को पूरी तरह जान गयी थी। मिस माइकेल घर से टिफिन लाती थी। एक चपटे डब्बे में जेली की मोटी परत लगे कई सैंडविच। फिर वह इलेक्ट्रिक केतली में थोड़ी चाय बना लेती थी।

पहले दिन मिस माइकेल ने दीपंकर से चाय पीने के लिए आग्रह किया था।

दीपंकर ने कहा था — मैं चाय नहीं पीता मिस माइकेल!

दीपंकर की बात सुनकर मिस माइकेल के आश्चर्य का ठिकाना न था। वह बोली थी — तुम चाय नहीं पीते? तुमने कभी चाय नहीं पी?

दीपंकर बोला था — मैंने कभी चाय नहीं पी।

लेकिन यह कहकर उसे एकाएक याद पड़ गया था। चाय तो उसने एक बार पी थी? वही बचपन में। लक्ष्मी दी के पास। वह लाइब्रेरी का चन्दा माँगने गया था

और तभी उसने चाय पी थी। हाँ, चाय उसे बड़ी अच्छी लगी थी।

बाद में मिस माइकेल से दीपंकर की बड़ी घनिष्ठता हो गयी थी। इस तरह की बात होती थी।

मिस माइकेल कहती थी—दैट्स वेरी गुड सेन, चाय न पीना बहुत अच्छा है....

—क्यों ऐसा कह रही हो!

मिस माइकेल ने हँसकर कहा था—यू विल गेट प्लेजर इन किसिंग—चुम्मा लेकर तुम बहुत मजा पाओगे?

सुनकर थोड़ी देर के लिए दीपंकर के दोनों कान गरम हो गये थे। पहले दिन दीपंकर बुरी तरह शरमा रहा था! पहले कभी वह किसी महिला के साथ एक कमरे में इतनी देर नहीं रहा। मेमसाहब की उम्र काफी थी। फिर भी दीपकर बहुत देर तक उसकी तरफ ताक न सका था।

उसी दिन मेम साहब ने कहा था—तुम तो बड़े शरमीले हो!

दीपंकर ने एक दिन पूछा था—तुमने शादी क्यों नहीं की मिस माइकेल?

शादी! बड़ा जबर्दस्त सवाल किया है—दीपंकर ने सोचा था। टाइपिंग रोककर मेमसाहब थोड़ी देर दीपंकर की तरफ देखती रही थी।

दीपंकर ने पूछा था—तुम तो सुन्दर हो, फिर तुमने क्यों नहीं शादी की?

मेमसाहब खूब हँसी थी। बोली थी—मैं बहुत, बहुत सुन्दर थी इन माइ यंग डेज—उस समय अगर तुम मुझे देखते ....

—फिर तुमने क्यों नहीं शादी की?

मेमसाहब ने कहा था—सुन्दर थी,इसीलिए शादी नहीं की!

—अरे! सुन्दर होने पर क्या कोई शादी नहीं करता?

मेमसाहब बोली थी—वह तुम नहीं समझोगे सेन, तुम बच्चे हो।

—क्यों?

फिर मेमसाहब ने टाइपराइटर रोककर कहा था—तुमने विवियन ले का नाम सुना है? द ग्रेट हालीवुड फिल्म स्टार! इस समय अमेरिका में बड़ा फेमस स्टार है। वह मेरे साथ यहीं काम करता था। शायद तुम विश्वास नहीं करोगे—उससे मेरी बड़ी दोस्ती थी।

दीपकर चुप है देखकर मिस माइकेल बोली थी—मैं तुम्हें उसकी चिट्ठी लाकर दिखाऊँगी, तब तो विश्वास करोगे?

मिस माइकेल ने सोचा था कि दीपकर शायद उसकी बात पर विश्वास नहीं कर रहा है।

मेमसाहब ने कहा था—तुम यहाँ जिससे भी पूछोगे, वही बता सकेगा सेन! हम दोनों एक मकान में रहते थे, एक कमरे में सोते थे, और एक साथ दफ्तर

आते थे।

—तो तुम उसके साथ हालीवुड क्यों नहीं चली गयीं ?

मिस माइकेल घड़ी की सूई के साथ दफ्तर आती थी। बे-ऐब सलीकेदार पोशाक ! कहीं कोई कमी नहीं रहती थी। दफ्तर आते ही वह टाइप राइटर मशीन खोलकर नोट की कापी निकालकर बैठ जाती थी। उसके बाद वह चाकू से पेंसिल काट-कर उसकी नोक को नुकीला बनाती थी। फिर जब तक रॉबिन्सन साहब न बुलाता तब तक वह सेन से गप लड़ाती थी। वह तीन बार चाय बनाती थी और बार-बार बैग से शीशा निकालकर अपना चेहरा देखती थी, होंठों पर लिपस्टिक लगाती थी और भौंहों को ठीक करती थी। बार-बार घुमा-फिराकर वह अपना चेहरा देखती थी। जब तक वह दफ्तर में रहती थी, तब तक मौका पाते ही अपनी कहानी सुनाती थी। जीवन की कोई कहानी उसने छोड़ी न थी। दीपंकर पर न जाने क्यों मेमसाहब जरा रीझ गयी थी !

मिस माइकेल ने एक दिन कहा था—बंगालियों से मुझे बड़ी हेट्रेड थी। जानते हो सेन, मैं बंगालियों से बहुत हेट करती थी—लेकिन ....

दीपंकर पूछता—क्यों ?

—आइ डोंट नो ! इस दफ्तर में मैं किसी से नहीं बोलती। तुमने तो देखा है, मैं कभी बाबुओं से बात नहीं करती। आइ हेट दैम फ्रॉम माइ हार्ट ! मैं मन से उनसे हेट करती हूँ, लेकिन ....

—लेकिन क्या ?

लेकिन तुमको देखने के बाद मैंने अपना माइंड चेंज किया है—आइ हैव चेंज्ड माइ माइंड ....

दीपंकर हँसा। बोला—क्यों ?

—बिकॉज यू आर रियली गुड ! तुम सचमुच अच्छे हो। तुम्हारा भला हो, यही मैं चाहती हूँ। तुम अपनी जिंदगी में तरक्की करोगे तो मुझसे ज्यादा कोई न खुश होगा। याद रखना ....

आश्चर्य है ! शायद इसी तरह संसार में कोई न कोई किसी को अच्छा लग जाता है ! फिर अकारण कोई बुरा भी लगता है। शायद संसार में अच्छा और बुरा लगने में अन्तर बहुत कम है। शायद इसीलिए एक जने के अच्छा लगने और दूसरे जने के बुरा लगने का कारण ढूँढ़े नहीं मिलता। वह मिस माइकेल को क्यों अच्छा लगा, इसका कारण शायद इसीलिए उस दिन दीपंकर समझ नहीं पाया था। वह बोला था—तुम अच्छी हो, इसलिए मैं भी तुम्हें अच्छा लगता हूँ मिस माइकेल।

—नो, नो सेन, नेवर ! तुम नहीं जानते मैं कितनी बुरी हूँ !

मिस माइकेल के विरोध करने के ढंग पर दीपंकर विस्मित हो गया था।

—मैं आज तुमसे कह रही हूँ सेन, संसार में कोई ऐसा क्राइम नहीं है जो मैंने

नहीं किया। इस जीवन में मैंने कितना क्राइम किया है, यह तुम सोच नहीं सकते सेन ! लार्ड जीसस के आगे मैं बहुत बड़ी अपराधिनी हूँ ....

यह कहकर मिस माइकेल अपना सिर झुका लेती थीं। दीपंकर समझ जाता था कि वह रो रही है। बैग से सिल्क का रूमाल निकालकर वह हलके से आँखें पोंछ लेती थीं। उसके बाद वह देर तक कुछ नहीं बोलती थी। दीपंकर को बड़ा आश्चर्य लगता था !

दीपंकर भी मेमसाहब का रंग-ढंग देखकर आश्चर्य में पड़ जाता था। कितने विचित्र लोग इस संसार में हैं — यही देखकर दीपंकर अवाक् हो जाता था। कहाँ की यह मेमसाहब हैं, यह भी इसी कलकत्ते में पली हैं! यह भी इसी कलकत्ते की हवा में साँस लेकर दीपंकर की तरह बड़ी हुई है। एक दिन इसका भी बाप था, माँ थी, सगे-संबंधी थे और यह भी दीपंकर की तरह स्कूल में पढ़ती थीं ! लेकिन पाउडर, लिपस्टिक और बॉब्ड हेयर की आड़ में छिपी असली मिस माइकेल को कौन इस तरह देख सका था ? बाहर से देखकर कौन समझ सकता था कि यह मेमसाहब भी रोती हैं। बाहर से उसके खूबसूरत चेहरे को देखकर कौन सोच सकता था कि उसे भी दुःख है, कष्ट है और अशांति है।

शुरू में एक दिन गांगुली बाबू ने कहा था — होशियार रहिएगा सेन बाबू, मेमसाहब के साथ एक कमरे में बैठ रहे हैं, जरा समझ-बूझकर चलिएगा। कुछ कहा तो नहीं जा सकता !

— क्यों ? दीपंकर गांगुली बाबू की बात सुनकर सचमुच घबड़ा गया था।

दीपंकर आजन्म लोगों से अनादर और उपेक्षा पाने का अभ्यस्त हो गया था। माँ से वह बराबर सुनता आया था कि वह बेकार है, नालायक है। वह सुनता आया था कि उसी के कारण माँ को इतना कष्ट है। अगर वह लायक होता तो माँ को थोड़ा आराम मिलता। बचपन में लक्ष्मण सरकार ने उसे मारा, लक्ष्मी दी ने पीटा और सती ने उसकी उपेक्षा की। इसलिए गांगुली बाबू की बात से वह ज्यादा डरा नहीं था। कष्ट भोगने के लिए ही वह पैदा हुआ है, न हो थोड़ा कष्ट और भोग लेगा ! इसके अलावा वह और कर ही क्या सकता है ! नौकरी वह छोड़ नहीं सकता !

गांगुली बाबू ने कहा था — बड़ी घमंडी औरत है ! इंडियन से बहुत हेट करती है। हम लोगों को वह आदमी नहीं समझती जनाब ! हम लोगों को वह जानवर समझती है। वह ऐसे चलती है कि ....

लेकिन आश्चर्य है ! मिस माइकेल के भीतर भी एक सहज व्यक्ति छिपा है। और यह बात उस दफ्तर में शायद दीपंकर ही जान पाया था। मिस माइकेल ने दीपंकर से कहा था — तुम एक दिन मेरे फ्लैट पर चलना सेन ....

— मैं ?

— हाँ, बताओ कब चलोगे ?

दीपंकर मानो विश्वास नहीं कर पाया था। मिस माइकेल इतना आग्रह दिखायेगी, इस पर विश्वास करने को भी मन नहीं करता।

— आज चलोगे ?

दीपंकर ने कहा था — नहीं, नहीं, आज मेरे कपड़े बड़े गंदे हैं ....

— इससे क्या हुआ ? मेरे फ्लैट में और कोई नहीं है। सिर्फ मैं अकेली रहती हूँ। मेरे परिवार में और कोई नहीं है। इस दुनिया में मैं एकदम एलोन हूँ सेन, एकदम एलोन !

फिर जरा रुककर मिस माइकेल बोली थी — विवियन जिस पलंग पर सोता था, वह तुम्हें दिखाऊँगी, — चलो। जिस टेबुल पर वह ड्रेस करता था, वह भी दिखाऊँगी। मैंने सब रख दिया है, एक भी चीज नष्ट होने नहीं दी। मैं अपना अलबम भी तुम्हें दिखाऊँगी। देखना, विवियन से मैं कितनी सुंदर थी, कितनी ब्यूटीफुल थी। मेरे अपने लव लेटर्स हैं फाइव हंड्रेड थर्टी-थ्री — पाँच सौ तैंतीस प्रेमपत्र हैं और विवियन के ये ओनली थ्री हंड्रेड — सिर्फ तीन सौ ! वुड यू बिलीव ?

दीपंकर की तरफ थोड़ी देर अपलक देखती मिस माइकेल।

उसके बाद लंबी साँस छोड़कर बोली — लेकिन देखो, वही विवियन अब अमेरिका में द ग्रेट फेमस फिल्म स्टार ! और मैं ? मैं उसी रेलवे में 'रट' रही हूँ, फिर अब तो ....

कहते-कहते मिस माइकेल की छाती मानो खाली हो गयी। दीपंकर मिस माइकेल के दुःख को समझने की कोशिश करता है, उसे महसूस करना चाहता है। [illegible] भी वह मानो पूरी तरह महसूस नहीं कर सकता। पाँच सौ तैंतीस और तीन सौ [illegible] लेटर्स का फर्क वह समझ नहीं सकता। दीपंकर को तो किसी ने लव लेटर नहीं [illegible] ! फिर मिस माइकेल को इतना दुःख क्यों है ?

मानो किसी ने बुलाया। चपरासी ने आकर दीपंकर को बुलाया।

दीपंकर ने पूछा — कौन है ?

— कोई बाबू है।

शायद अनंत आया है। वही अनंत राव भावे। मिस्टर दातार का दोस्त। कल उस आदमी को अच्छा नहीं लगा था। सचमुच लक्ष्मी दी से उसका इतना लगाव ठीक नहीं है ! लक्ष्मी दी के लिए अनंत बाबू का इतना आकर्षण अच्छा नहीं है। खैर, कुछ भी हो लक्ष्मी दी का भला होगा ! लक्ष्मी दी की इस परेशानी के समय अनंत बाबू का उपकार करने से लक्ष्मी दी का ही उपकार करना होगा। अगर दीपंकर रॉबिन्सन साहब से जाकर कहेगा, तो साहब इन्कार न कर सकेगा।

बाहर जाकर देखा — नहीं। अनंत बाबू नहीं है, कोई दूसरा है।

— आप क्या चाहते हैं ? आप कौन हैं ?

उस सज्जन ने कहा — मिस्टर सेन से मिलना चाहता हूँ ....

मैं ही मिस्टर सेन हूँ । नाम क्या है ? पूरा नाम ?

— हरिपद सेन ।

— चलो ! कहाँ का कौन हरिपद सेन है । उसे खोजने यह जनाब यहाँ चला
।

दीपंकर बोला — वह रेट्स आफिस में हैं, सीढ़ी से तीसरी मंजिल में चले
।

वह सज्जन चला गया । एक-न-एक झमेला लगा है ! बस, मिस्टर सेन को पूछता
आ गया । दीपंकर ने चपरासी से कहा — वह मुझसे नहीं, रेट्स आफिस के हरिपद
को ढूँढ रहा था ।

फिर दीपंकर ने कहा — देखो, आज मुझे एक आदमी ढूँढने आयेगा, वह
ली नहीं है, मराठी है, अनंत राव भावे । वह आये तो मुझे बुला लेना । बहुत
री काम है । मैं उसका इंतजार कर रहा हूँ ।

रॉबिन्सन साहब ठीक एक बजे लंच खाने जाता है । फिर वह आता है दो बजे
 बाद । अनंत बाबू अगर एक बजे से पहले आये तो ठीक है, नहीं तो फिर वही दो
बजे काम होगा । अगर एक और दो के बीच अनंत बाबू आया तो खामखाह बैठा रहना
पड़ेगा । फिर उससे बिना मतलब बात करनी पड़ेगी । उससे गप लड़ाने में क्या
फायदा ! ऑफिस में जितनी देर शोरगुल होता है, दीपंकर को अच्छा नहीं लगता ।
फिर भी मिस माइकेल का कमरा काफी एकांत है । वहाँ शोरगुल नहीं पहुँचता । काम
करते हुए बहुत कुछ सोचा जा सकता है । दीपंकर को बहुत कुछ सोचना है । उसके
सोचने का कहाँ अंत है ! वह सोचता है, अभी तो जीवन की शुरुआत है । इसके बाद
क्या होगा ? इसके बाद वह कहाँ पहुँचेगा ? इस आफिस में तो बस रॉबिन्सन साहब,
मिस्टर घोषाल और यह मिस माइकेल है ! आज वह यहीं तक पहुँचा है । धर्मदास
ट्रस्ट मॉडल स्कूल से कभी उसकी यात्रा शुरू हुई थी । उसके बाद किरण, लक्ष्मण सर-
कार, प्राणमथ बाबू, रोहिणी बाबू, चाचाजी, चाचीजी, लक्ष्मी दी, सती — सब को
पार कर इतने दिन बाद वह यहाँ पहुँचा है । लेकिन इसके बाद ? इसके बाद क्या है
क्या यहीं तक आकर वह रुक जायेगा ? क्या यहीं उसे रुकना पड़ेगा ?

अचानक गांगुली बाबू कमरे में आया । दीपंकर के पास वह कुर्सी खींच
बैठ गया ।

बोला — एक मिनट के लिए आपको परेशान करने आया सेन बाबू ।

— नहीं, नहीं, परेशान करने की क्या बात है, बताइए ।

गांगुली बाबू के हाथ में पत्तल में लपेटी कोई चीज थी । उसने वह दीप
तरफ बढ़ाया और कहा — यही देने आया था । प्रसाद है, माँ का प्रसाद
लीजिए ।

ने पत्तल खोलकर देखा । पत्तल में लिपटा थोड़ा-सा सिंदूर,

दो-चार पँखुड़ियाँ और खोवे की एक मिठाई है।

—यह किसका प्रसाद है ?

गांगुली बाबू बोला — माँ काली का। आज सवेरे मैं पूजा चढ़ा आया, तो सोचा आपको भी प्रसाद दूँगा, इसलिए दफ्तर ले आया।

— लेकिन आप पूजा क्यों चढ़ाने गये थे ?

— मेरी पत्नी पाँच साल से बीमार चल रही थीं, अब ठीक हो गयी हैं, इसीलिए ....

— पाँच साल से बीमार चल रही थीं ? कौन-सी बीमारी थी ? आपने कभी कुछ बताया भी नहीं ?

गांगुली बाबू थोड़ा संजीदा हो गया। बोला — आपसे तो कभी कुछ नहीं बताया ! आप मेरे बारे में जानते भी क्या हैं ? मेरी पत्नी पागल हो गयी थीं।

पागल। दीपंकर चौंक पड़ा। मिस्टर दातार का दिमाग भी तो ठीक नहीं है। गांगुली बाबू ने कभी जिक्र नहीं किया, नहीं तो दीपंकर उससे पूछता और लक्ष्मी दी से कहता। लक्ष्मी दी इतने दिनों से कष्ट भोग रही हैं। मिस्टर दातार अगर ठीक हो जायँ तो अनंत बाबू की सहायता की जरूरत न पड़े। फिर तो लक्ष्मी दी की बहुत बड़ी परेशानी खत्म हो जाय।

— आपकी पत्नी क्यों पागल हो गयी थीं ?

— वह लंबा किस्सा है। आपसे तो कहा था, किसी दिन सब बताऊँगा। किसी दिन मौका मिल जाय तो बताऊँगा, अच्छा अब चलूँ।

गांगुली बाबू जाने लगा।

दीपंकर ने गांगुली बाबू का हाथ पकड़ लिया और कहा — नहीं, नहीं, आप अभी बताइए। मेरे पास कोई काम नहीं है। आप बैठिए, बताइए ....

गांगुली बाबू बाहर आया। दीपंकर भी उसके साथ बाहर आ गया।

दीपंकर बोला — बताइए क्या हुआ था ?

गांगुली बाबू का चेहरा न जाने क्यों बदरंग हो गया। बोला — यहाँ ठीक से बताया नहीं जा सकेगा, बल्कि किसी दिन फुरसत में ....

दीपंकर बोला — लेकिन मुझे तो आज ही सुनना है। मेरा भी एक संबंधी अभी हाल में पागल जैसा हो गया है।

— कौन ?

— मेरी एक दीदी का पति।

गांगुली बाबू थोड़ी देर चुप रहा, फिर बोला — इधर पाँच साल मैं बहुत परेशान था सेन बाबू, कहा नहीं जा सकता — पाँच साल मैं न रात को सो सका, न दिन में मुझे चैन मिला। मैं भगवान को नहीं मानता था, फिर भी दिनरात भगवान को याद करता था। कहता था — मेरा कष्ट दूर करो प्रभु, अब मुझसे यह कष्ट बरदाश्त नहीं

आप लोगों से बातें करता था, दफ्तर का काम करता था, हँसता था, बोलता
किन मन में अशांति की आग बराबर जलती थी।

दीपंकर बोला — चलिए, वहीं चलकर बैठा जाय, फिर आपकी बात सुनूँ —

— कहाँ जायेंगे ? बड़ी लंबी कहानी है, काफी समय लगेगा।

— फिर भी चलिए।

दीपंकर ने चपरासी से कह दिया कि अगर कोई खोजने आये तो उसे बैठा
ना। गांगुली बाबू भी के० जी० दास बाबू से कहकर आया था।

कैसा विचित्र है मनुष्य और कैसा विचित्र उसका है जीवन ! यह जो मिस
माइकेल है, इसकी भी अपनी समस्या है। उस समस्या के बारे में कहती है तो मेम-
साहब रोने लगती है। फिर यह गांगुली बाबू। इसकी भी समस्या कैसी विचित्र है।
यह भी जब अपनी बात करता है तब इसका चेहरा दयनीय बन जाता है।

सचमुच इनकी तुलना में दीपंकर सुखी है। कहना होगा कि दीपंकर की कोई
ऐसी खास समस्या नहीं है। सिर्फ लक्ष्मी दी की समस्या इस समय उसकी छाती पर
भारी चट्टान की तरह बनी हुई है। लक्ष्मी दी सुखी हो जाय तो उसकी कोई समस्या
न रहे। मिस्टर दातार स्वस्थ हो जायें तो लक्ष्मी दी की कोई समस्या न रहे और दीप-
कर भी निश्चिंत हो सके।

याद है, गांगुली बाबू को लेकर दीपंकर दफ्तर के सामनेवाले पार्क में जा बैठा
था। चारों तरफ दफ्तर। दफ्तर और दफ्तर के बाबू। पूरे इलाके में दफ्तर की बू !
इस माहौल से निकलकर दीपंकर एकदम खुले आसमान के नीचे आकर बैठा था।

गांगुली बाबू बोला — आप मेरी बातें ठीक से समझ नहीं पायेंगे सेन बाबू,
जो भुक्तभोगी है, वही समझ सकता है।

दीपंकर बोला — आप बताइए, मैं जरूर समझ पाऊँगा।

दीपंकर जानता है कि संसार में जो भुक्तभोगी है, केवल वही दुःख की ब
समझ सकता है। क्या दीपंकर भुक्तभोगी नहीं है ? क्या दीपंकर ने आदमी नहीं दे
क्या दीपंकर नहीं जानता कि मनुष्य का बाहरी रूप देखकर उसके बारे में फैसला
कितना भ्रामक है ? क्या दीपंकर ने छिटे और फोंटा को नहीं देखा ? क्या उसने कि
दी को नहीं देखा ? क्या प्राणमय बाबू को उसने नहीं देखा ? फिर किरण, प
राखाल, निर्मल पालित और लक्ष्मण सरकार को उसने नहीं देखा ?

दीपंकर बोला — मैंने भी अनेक तरह के इन्सान देखे हैं गांगुली बाबू,
मैं एक दूसरे कारण से पूछ रहा हूँ — अपनी एक दीदी के लिए जानना चाहत

— दीदी ? कैसी दीदी ? सगी ?

— नहीं सगी दीदी नहीं। यहाँ तक कि दूर रिश्ते की भी नहीं
चाहिए कि वह मेरी कोई नहीं है। फिर भी मेरे लिए वह अपनी है। मैं
हूँ — अक्सर सोचता हूँ। संसार में मैं केवल दो जने की ब

हूँ, उनमें एक यह दीदी है ।

गांगुली बाबू बोला — आपकी तरह मेरा भी कोई नहीं था सेन बाबू, मजे में था । माँ-बाप थे, उनके मरने के बाद मैंने पढ़ाई-लिखाई की और आखिर में रेलवे की यह नौकरी मिल गयी । एक बहन थी, जिसकी शादी करनी थी, उसकी भी शादी टाटानगर में हो गयी ।

— उसके बाद ?

— उसके बाद अचानक मेरी शादी हो गयी । अचानक इस माने में कि मैं उसके लिए कतई तैयार नहीं था । पत्नी बहुत बड़े घर की लड़की है । आपने बर्दवान के भट्टाचार्य लोगों का नाम सुना है ? वे वहाँ के पुराने प्रतिष्ठित लोग हैं । कई पीढ़ियों से वे वहाँ रह रहे हैं । उनके पास दौलत भी अकूत थी । एक समय था, जब वे चाहते तो कलकत्ते में ही सौ मकान बनवा सकते थे । घर में बहुत-सी लड़कियाँ थी — याने मेरी बहुत-सी सालियाँ । एक-एक कर सब भाइयों के लड़कियाँ हुईं । लेकिन सब लड़कियों की शादी अच्छे घर में हुई । कोई डाक्टर, कोई इंजीनियर, कोई वकील, कोई बैरिस्टर तो कोई कारोबारी । दामादों में मैं सब से छोटा हूँ और मेरी ही आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है अकेला मैं ही क्लर्क हूँ !

हां जनाब, शुरू से मेरी पत्नी मेरे कारण लज्जित रहती थी । बारबार मुझसे कहती थी — तुम कोई बड़ी नौकरी नहीं कर सकते ? और बड़ी नौकरी ? मेरे मझले जीजा की तरह ?

बताइए, मैं इसका क्या जवाब दूँ ? मैं समझता था कि शायद वह मुझसे मजाक कर रही है ।

लेकिन एक दिन अचानक न कहना न सुनना मेरी पत्नी घर से चली गयी — अकेली चली गयी जनाब ! दफ्तर से घर लौटकर देखा कि बीवी घर में नहीं है । — आखिर क्या हुआ ? ऐसा तो कभी नहीं होता । इधर-उधर उसे बहुत ढूंढ़ा । कई जगह गया । मेरा भी तो कोई कलकत्ते में नहीं है कि उसके वहाँ जायेगी । बगलवाले मकान में पूछा, वहाँ भी कोई पता नहीं चला । आखिर न जाने कैसा शक हुआ, मैं बर्दवान अपनी ससुराल गया । जो सोचा था, वही सही निकला । जाकर देखा कि बीवी बाप के घर बैठी है ....

मेरे सास-ससुर पुराने विचार के हैं । बोले — अकेले रहती है, इसलिए ऐसा हुआ है, कुछ दिन रुक जाओ बेटा, सब ठीक हो जायेगा ।

उस समय मेरे घर में कोई नहीं था, समझ गये न ? इसलिए बीवी को वहाँ कैसे छोड़ सकता था....

मैंने ससुर जी से कहा — अगर उसे मेरे साथ भेज दें तो बड़ा अच्छा हो, खाने-पीने की बड़ी तकलीफ हो रही है ।

सास बोली — मैं पटल को भेज देती हूँ, तुम उसे समझा लो ....

मेरी पत्नी का नाम पटल है । खैर, मेरी पत्नी कमरे में आयी ।

मैं बोला — तुम अचानक बिना बताये चली आयी और मैं उधर सोचते-सोचते

न हो रहा हूँ ।

पत्नी बोली — अब मैं कलकत्ते नहीं जाऊंगी, मुझे शरम लगती है ....

मैंने कहा — शरम कैसी ? मेरे पास रहोगी, इसमें क्या शरम है ?

उसी समय से उसका दिमाग थोड़ा-थोड़ा खराब होने लगा था, लेकिन कोई

समझ नहीं पाया । खैर, मेरी पत्नी ने मेरी बात के जवाब में कहा — तुम्हें जो तन-

ख्वाह मिलती है, उससे मुझे शरम लगती है ।

बोला — तनख्वाह कम या ज्यादा पाना क्या मेरे हाथ में है ?

हाँ, तो इसके जवाब में वह क्या बोली जानते हैं ? बोली — मेरे बड़े जीजा

और मझले जीजा को कितनी ज्यादा तनख्वाह मिलती है — तुम्हें उन लोगों की तरह

तनख्वाह क्यों नहीं मिलती ?

बताइए, इसका मैं क्या जवाब दूँ ?

दीपंकर मन लगाकर गांगुली बाबू की बातें सुन रहा था । बोला — उसके

बाद ?

गांगुली बाबू बोला — आपने तो शादी नहीं की । लेकिन आप कभी शादी

करें तो अमीर की बेटी से हर्गिज नहीं, यह मैं अभी से बता देता हूँ । मैं आज तक

कभी बीमार नहीं पड़ा । अपने लिए मुझे कभी डाक्टर बुलाना नहीं पड़ा । सिर्फ एक

चाय के अलावा मैंने जिंदगी में कोई नशा नहीं किया, इसलिए अब मैं सोचता हूँ कि

अगर शादी न करता तो कितने आराम से रहता ! आराम से नौकरी करता औ

सिनेमा-थियेटर देखता फिरता ....

दीपंकर ने पूछा — लेकिन आपका प्रोमोशन क्यों नहीं होता गांगुली बा

इतने साल से आप नौकरी कर रहे हैं ?

गांगुली बाबू बोला — आप भी ऐसा सवाल कर रहे हैं ? प्रोमोशन कैसे

सेन बाबू ? आपकी बात अलग है । आप आये तो जर्नल सेक्शन में लेकिन उन

कैसे क्या हो गया, यह तो आप जानते हैं । रॉबिन्सन साहब ने आपको अपने

बैठा दिया । लेकिन हम लोगों को वैसा मौका कहाँ मिला ? हम लोगों को तो

भर एक ही कुर्सी पर बैठना होगा और एक ही कमरे में सड़ना पड़ेगा .

दीपंकर बोला — हाँ, तो उसके बाद ?

— उसके बाद समझा-बुझाकर तो घरवाली को घर ले आया ।

समझा-बुझाकर लड़की को भेज दिया । मैंने बीवी को खुश करने के लि

कोआपरेटिव बैंक से डेढ़ हजार रुपये का लोन लिया । पत्नी को अच्छी

अच्छे-अच्छे गहने बनवा दिये, सिनेमा और थियेटर ले आता रहा ।

चलो सब ठीक हो गया । उसी समय बड़े

उसके वाद एक लड़का भी हुआ।

लेकिन दूसरे महीने से हाथ पर तनख्वाह कम आने लगी। अव घर का खर्च चलना मुश्किल हो गया। लेकिन वीवी से कुछ कह नहीं सकता। आखिर एक दिन वात छिपी न रही। तव वह खुलकर मुझे गाली वकने लगी।

दीपंकर विस्मित हुआ। वोला — गाली वकने लगी?

— हाँ सेन वावू, दफ्तर के किसी से मैंने यह सव नहीं कहा, इसलिये कोई नहीं जानता। आज पहली वार मैं आपसे कह रहा हूँ। उस समय उसकी हालत भयानक हो गयी। वह अपनी साड़ी और पेटीकोट भी ठीक नहीं रख सकती थी। रात-दिन वस चिल्लाना और गाली वकना ....

— किसको गाली वकती हैं थीं?

— मुझे सेन वावू, और किसे? मैं कम तनख्वाह पाता हूँ, मैं पत्नी को साड़ी और गहना नहीं दे सकता, मैं कमीना हूँ, जाहिल हूँ — ऐसी गाली वकती थी कि कान वन्द करना पड़ता था। उस चिल्लाहट से मुहल्लेवाले भी परेशान होने लगे — आये दिन चिल्लाहट। माँ की हालत देखकर वच्चे रोने लगते थे।

गांगुली वावू का किस्सा सुनते-सुनते दीपंकर विस्मय से अवाक् हो गया। कितनी परेशानी झेलनी पड़ी गांगुली वावू को! लेकिन वाहर से कुछ भी पता नहीं चलता, कुछ भी समझने का उपाय नहीं है। प्रतिदिन वह नियम से जर्नल सेक्शन में आता रहा, नियम से के० जी० दास वावू को चाय पिलाता रहा, हँसता रहा और मजाक करता रहा। नृपेन वावू के फेअरवेल के समय सव कुछ उसी ने किया, लेकिन दूर उसे देखकर कुछ भी नहीं समझा जा सकता।

धीरे-धीरे पार्क में भीड़ वढ़ रही है। शायद अव तक रॉविन्सन साहव के लंच खाकर लौटने का समय हो गया है।

दीपंकर ने पूछा — उसके वाद?

गाँगुली वावू वोला — उसके वाद डाक्टर को दिखाने लगा। सास-ससुर आये। मेरे पास तो पैसा नहीं था। सव कुछ उन्हीं लोगों को करना पड़ा। सव शायद मुझे दामाद वनाने के कारण उनको अफसोस करना पड़ रहा है। उन लोगों ने सोचा था, दामाद रेलवे में नौकरी करता है, तरक्की होगी तो खूव होगी, एकदम सवके ऊपर पहुँच जायेगा। अगर वह भी नहीं हुआ तो वेटी को जिन्दगी भर-खाने-पहनने का कष्ट न रहेगा। लेकिन वे तो नहीं जानते थे कि मैं जर्नल सेक्शन में एक वी० ग्रेड का क्लर्क हूँ और जर्नल सेक्शन में एक वार पहुँचने पर वहाँ से छुटकारा नहीं मिलता!

— खैर, उसके वाद? उसके वाद वे कैसे ठीक हुईं?

गांगुली वावू कुछ कहने जा रहा था, लेकिन वाधा पड़ी। द्विजपद दौड़ता हुआ एकदम पार्क में आ गया।

—हुजूर रॉबिन्सन साहब !

— बुला रहा है ? साहब इतनी जल्दी आ गया ? जल्दी-जल्दी उठा

दीपंकर उठा । आज पता नहीं साहब क्यों जल्दी आ गया ? दीपंकर बोला — ...

कर दीपकर चल दिया । गांगुली बाबू भी चला । ...

पाया गांगुली बाबू, छुट्टी के बाद जरूर सुनूंगा ....

गांगुली बाबू बोला — अब कोई तकलीफ नहीं है जनाब, ...

ा है । इसीलिए आज सवेरे उठकर मैं कालीबाड़ी में पूजा चढ़ा आया ।

— हाँ, तो किस दवा से ठीक हुई ?

— अरे साहब, कितनी दवाएँ कीं, जिसने जो कहा वही किया । ...

पानी वाली का कंगन पहनाया था, लेकिन उससे भी फायदा नहीं हुआ । ... ने

बहुत रुपया खर्च कर कलकत्ते के बड़े-बड़े डाक्टरों से उसका इलाज करवाया, लेकिन

इस सब से भी कोई फायदा नहीं हुआ । आखिर ....

— हाँ, तो आखिर क्या हुआ ?

इस समय दोनों रॉबिन्सन साहब के कमरे के सामने आ पहुँचे हैं ।

— हरकाली कविराज का एक तेल है ... । वही उनके ...

में रोज लगाया गया और उसी से वह ठीक हो गयी । अब ... नॉर्मल है, ...

स्वाभाविक ।

दीपंकर ने पूछा — वह तेल कहाँ मिलता है ? कितना दाम है ? मुझे एक

बोतल दिला सकते हैं ?

— छुट्टी के बाद तो भेंट होगी, तभी बता दूंगा । मुझे ... दीजिएगा

साहब के कमरे का दरवाजा खोलकर अंदर जाते ही दीपंकर ने देखा

साहब मुस्करा रहा है । दीपंकर सामने जाकर खड़ा हुआ, तब भी साहब ने उसकी ओर

ध्यान नहीं दिया । वह अपनी ही धुन में मुस्कराता रहा । विचित्र दुर्बोध ...

मुस्कराहट ।

लेकिन थोड़ी देर बाद साहब को ध्यान हुआ । वह हिलकर बैठा ।

बोला — मैंने तुम्हें बुलाया था न ?

दीपंकर बोला — येस सर —

— लेकिन किस लिए बुलाया ? व्हाई ?

रॉबिन्सन साहब ऐसा ही विचित्र है । किसलिए बुलाया था ...

... जापान ट्रैफिक के पॉलिटिकल स्टेटमेंट के लिए ...

गया है ।

दीपंकर ने पूछा — ...

— नो, नो, नॉट दैट ....

यह कहकर साहव अपनी खोपड़ी पर टहोका लगाने लगा। दीपंकर खड़ा रहा। सहसा जिमी की तरफ़ निगाह जाते ही साहव बोला — जानते हो सेन, जिमी इज़ ऐन इंटेलीजेंट डॉग, जिमी वहुत समझदार है। जानते हो, आज उसने क्या किया है ?

· दीपंकर खड़ा होकर सुनने लगा।

साहव बोला — आज मिसेज़ ने सवेरे सोकर उठने में देर कर दी। रोज मिसेज अर्ली मॉर्निंग छः वजे उठ जाती है। जिमी को इसका ख्याल है। वुड यू विलीव ? जिमी जाकर मिसेज के दरवाले पर नॉक करने लगा — धक्का मारने लगा ....

जिमी की समझदारी की दाद देने के लिए दीपंकर जिमी की तरफ देखकर मुस्कराया। शायद जिमी समझ गया कि उसी के वारे में वात हो रही है। उसने दीपंकर की तरफ देखकर दो वार दुम हिला दी।

साहव वोला — वेरी इंटेलीजेंट ! समझ गये सेन, ईवन मोर इंटेलीजेंट दैन दीज ऑफिस क्लर्क्स ....

साहव विस्तार से धाराप्रवाह जिमी की गुणावली का वखान करने लगा। जव जिमी साहव के घर में आया था तव वह वहुत छोटा था। उसके वाद वह धीरे-धीरे वड़ा हुआ और घर का लड़का जैसा हो गया। साहव और मेम दिन भर जिमी के पीछे पागल रहते हैं। अगर एक दिन भी जिमी की तवीयत खराव हुई या एक दिन उसने ठीक से खाना नहीं खाया तो सी० एम० ओ० से अस्पताल के कम्पाउंडर तक को परेशान होना पड़ता है। जिमी के लिये कहाँ से गोश्त आयेगा, कहाँ से सोप और कहाँ से विस्किट, मेमसाहव को इस सवका ख्याल रखना पड़ता है। जिमी गरम पानी नहीं पी सकता, उसके लिए रेफ्रीजरेटेड वाटर चाहिए। वह स्टू खायेगा, वेकन खायेगा, हैम और परीज भी खायेगा लेकिन राइस में मुंह न लगायेगा — ऐसा डॉग तुमने देखा है सेन ?

दीपंकर खड़े होकर सव सुन रहा था। क्या इसीलिए साहव ने उसे वुलाया था ? क्या जिमी का गुणगान सुनाने के लिये ही साहव ने उसे चपरासी भेजकर वुलाया था ? वड़ा मजेदार और मस्त है यह साहव भी ! वाद में जव भी उसे रॉविन्सन साहव की याद आयी तव उसने लम्वी साँस छोड़ी। भले ही रॉविन्सन यूरोपियन हो, फारिनर हो, व्रिटिश हो लेकिन वैसा आदमी नहीं होता ! अंग्रेजों में क्या भले आदमी नहीं हैं ? जरूर हैं ! रॉविन्सन साहव ही तो इसका सवूत है। उतना विश्वास और उतना प्यार दीपंकर को और कितने लोगों से मिला है ? प्राणमथ वावू ? प्राणमथ वावू ने तो उसका उपकार किया है। चैरिटी की है। गरीवों के प्रति वे अपना कर्त्तव्य समझते थे, इसलिये उन्होंने दीपंकर की सहायता की लेकिन रॉविन्सन साहव के साथ ऐसी वात नहीं थी। रॉविन्सन साहव को तो इंडिया की पॉवर्टी दिखाई ही नहीं पड़ी। साहव पॉवर्टी टालरेट नहीं कर सकता था। जिमी के क्लीनर को साहव टेन चिप्स देता था। संसार में गरीव

गा ? कोई चाहे कितना छोटा काम करे, लेकिन ही मस्ट वी फेड। उसे खाने
नना चाहिये। कुत्ते की सेवा कर रहा है तो क्या वह कम खायेगा ? क्या उसे
रहने का अधिकार नहीं है ? दानव कुल में न जाने कहाँ से प्रह्लाद आ गया था ?
पेंडो, वर्ज, टेगर्ट और सिम्पसन की भीड़ में अचानक एक डेविड हेयर भूल से घुस
था। लेकिन इसे आना था तो क्या उसी जगह — रेल के उसी दफ्तर में।

अचानक साहब को मानो असली बात याद आयी।

साहब बोला — हाँ, जिसके लिए मैंने तुम्हें बुलाया था, याद आया है। तुम
आफिस में क्या काम करते हो ?

सवाल सुनकर दीपंकर पहले तो आश्चर्य में पड़ गया फिर वह बोला — मैं
क्लर्क हूँ सर ! मैं जापान ट्रैफिक का काम करता हूँ ....

— आइ सी ! लेकिन यू आर ए ग्रैजुएट ?

— येस सर।

साहब ने थोड़ी देर न जाने क्या सोचा, उसके बाद कहा — तो तुम सेक
वर्किंग एग्जामिनेशन क्यों नहीं देते। सेफ वर्किंग ऑव वाई !

दीपंकर बोला — आप अगर परमिशन दें तो मैं दे सकता हूँ —

— येस यू डू इट। मैं डी० टी० आई० लेने जा रहा हूँ, यू मे बी ए कैण्डिडेट....

कहकर साहब ने एक बार जिमी की तरफ देखा। कहा — जानते हो सेन, व्हाट
ऐन इंटेलीजेंट डॉग ! मैं उसी को डी० टी० आई० बना देता, बट अनफार्चुनेटली जिमी
इज ए डॉग — दो ही इज मोर इंटेलीजेंट दैन दोज आफिस क्लर्क्स ....

पता नहीं साहब क्या कहना चाहता था और क्या कह गया।

दीपंकर बोला — मैं इम्तहान दूँगा सर ...

— हाँ, दे डालो — आइ विल हेल्प यू ....

कहकर साहब अपना काम करने जा रहा था। दीपकर भी उसके कमरे
चला आ रहा था। अचानक उसे वह बात आ गयी। वह बोला — सर, आपसे मे
एक अनुरोध है ....

— बताओ।

दीपंकर बोला — मेरी एक बहन बड़ी मुसीबत में है सर, उसका हजबैंड
एक पागल हो गया है, उसी के लिए मैं आपसे एक फेवर चाहता हूँ। वह रेल
एनलिस्टेड कांट्रैक्टर है। उसका एक काम अगर आप कर दें — सिर्फ तीन हजा
का काम ....

साहब ने पूछा — कौन-सा काम है ?

जितना जानता था, दीपंकर ने बताया। बोला — लिस्ट में बड़े-बड़े
की तरह नहीं है। उसका काम है छोटा-मोटा आर्डर
है, लेकिन उन लोगों ... मुसीबत में है। वह बंगाली नहीं, महाराष्ट्री

डिप्रेशन के कारण उसका दफ्तर वन्द हो गया है। एक मामूली मकान किराये पर लेकर वह कलकत्ते के वाहर ठाकुरिया में रहता है — गड़ियाहाट लेवल क्रॉसिंग के पास। वह मेरी सगी दीदी भी नहीं है लेकिन सगी दीदी से वढ़कर है। वचपन में हम एक ही मकान में अगल-वगल रहते थे। इसलिए इसका कष्ट मेरा कष्ट है। मैं खुद जाकर उसकी हालत देख आया हूँ। अगर मुझसे होता तो मैं रुपये से उसकी मदद करता। अपनी उस दीदी की मुसीवत के वारे में जितना हो सका दीपंकर ने वताया। साहव की दया पाने के लिये जितना कहना चाहिये, उतना उसने कहा।

साहव ने पूछा — टेंडर भेजा है ?

दीपंकर वोला — यह सव मैं नहीं जानता। आज वह सज्जन खुद आयेगा।

साहव वोला — ऑलराइट, मेरे पास उसे ले आना, आइ शैल सी टु इट।

दीपंकर अपनी दीदी की गरीवी के वारे में और कुछ कहने जा रहा था, लेकिन साहव ने कहा — अव वताने की जरूरत नहीं है सेन, आइ विल डू इट फॉर यू।

साहव को धन्यवाद देकर दीपंकर वाहर आया। वाहर आकर उसने एक वार चारों तरफ देखा। शायद अनंत वावू आकर इन्तजार कर रहा है। उधर के कॉरिडोर से इधर के कॉरिडोर तक उसने एक वार घूमकर देख लिया। लेकिन अनंत वावू कहीं नहीं दिखाई पड़ा। पता नहीं, वह इतनी देर क्यों कर रहा है ? काम तो उसी का है ? दीपंकर का क्या है ? गर्ज तो उसी की है। काम मिल जायेगा तो अनंत वावू को फायदा होगा। लक्ष्मी दी को फायदा होगा। कम से कम पाँच सौ रुपये का प्राफिट तो ...लेगा ही। किसी को घूस भी नहीं देनी पड़ेगी। रॉविन्सन साहव के पास ले जाते ही फार्म पर दस्तखत कर देगा। उसी से काम हो जायेगा। फिर किसी के लिए कुछ ...ने को नहीं रहेगा।

अपने कमरे के पास आकर दीपंकर ने चपरासी से पूछा।

— क्यों रे, कोई मुझसे मिलने आया था ?

— नहीं हुजूर।

दीपंकर वोला — अगर कोई मुझसे मिलने आये तो मुझे वुला देना। याद रहेगा न ?

— याद रहेगा हुजूर।

— हाँ, भूलना मत। वहुत जरूरी है।

आश्चर्य है ! दीपंकर ने वार-वार कह दिया था, लेकिन अभी तक अनंत वावू नहीं आया। पता नहीं, उसकी क्या अकल है ! दीपंकर ने तो उन्हीं लोगों के फायदे के लिए इतना किया, नहीं तो उसका क्या स्वार्थ है ? लक्ष्मी दी के लिए ही दीपंकर ने खुद रॉविन्सन साहव से अनुरोध किया। लेकिन इतना कुछ करने के वाद भी अनंत वावू ठीक समय पर नहीं आ सका।

दीपंकर अपने कमरे में आया। साहव ने मिस माइकेल को लंवा नोट दिया है,

ल उसी को टाइप कर रही है। दीपंकर ने अपनी फाइलें निकालीं। फिर
ताना होगा। स्टेटमेंट भेजने की तारीख आ गयी है। काम छोड़कर वह एक
र आया। नहीं, अभी तक अनंत बाबू का पता नहीं है।
उसने चपरासी से फिर पूछा — क्यों रे, कोई नहीं आया?

— नहीं हुजूर।

आश्चर्य है। लक्ष्मी दी में भी कोई उत्तरदायित्व नहीं है। लक्ष्मी दी की कोई
समझ में नहीं आती। अनंत बाबू से उसका इतना रब्त-जब्त भी क्यों है? हाँ,
सज्जन उपकार कर रहा है, इसलिए कृतज्ञता होनी चाहिए। लेकिन उस कृतज्ञता
लिए इतनी घनिष्ठता! इतना हँसना-बोलना! एक-दूसरे पर इतना लुढ़कना!
ल के कमरे में मिस्टर दातार चिल्ला रहा है, लेकिन उधर किसी का ख्याल नहीं है।

इतनी देर बाद दिखाई पड़ा कि अनंत बाबू आ रहा है। बाहर गेट से वह
सीधे अन्दर आ रहा है, उसी की तरफ। उसने पोशाक बदल ली है। साफ-सुथरी और
ढंग की पोशाक है। दीपंकर हँसकर अनंत बाबू की तरफ बढ़ा। आखिर अनंत बाबू
आया, यही बहुत है! नहीं तो इतनी कोशिश-सिफारिश और रॉबिन्सन साहब से
कहना सब बेकार चला जाता।

— अनंत बाबू, आपने इतनी देर क्यों की? मैं बड़ी देर से यहाँ आपका
इन्तजार कर रहा हूँ।

अनंत बाबू जल्दी-जल्दी आ रहा था। दीपंकर की बगल से वह दायें मुड़ गया।
मानो उसने दीपंकर को देखा ही नहीं।

दीपंकर ने बुलाया — अनंत बाबू मैं यहाँ हूँ ....

अनंत बाबू ने मुड़कर जल्दी से दीपंकर की तरफ देखा। मानो बड़ी
मुश्किल से उसने दीपंकर को पहचाना। कहा — अरे, आप? मैं अभी आ रहा
हूँ ....

यह कहकर अनंत बाबू रुका नहीं वह सीधे मिस्टर घोषाल के कमरे में चल
गया। चपरासी भी कैसा है! उसने अनंत बाबू को देखते ही सलाम ठोंका और दरवा
खोल दिया।

मानो एक पल में दीपंकर की आँखों के सामने यह सब जादू हो गया। वह अ
बाबू ही तो है, या उसने गलती की? उसने किसी और को तो अनंत बाबू नहीं स
लिया? बड़े आश्चर्य की बात है! दीपंकर को वह पहचान ही न सका! दीपंकर
देर तक सोचता रहा। ऐसा क्यों हुआ? जिसके लिये उसने इतनी कोशिश की,
उसे पहचान न सका। मिस्टर घोषाल को तो वह बड़ी अच्छी तरह जानता है
भी उसके पास गया।

दीपंकर उस समय उस नौकरी में नया-नया आया था, इसलिए न
ई लगा था। जो निःस्वार्थ होकर लोगों का भला करना

है, लोग उसके पास न जाकर क्यों स्वार्थी और कपटी के पास जाते हैं ! जहाँ आसानी से काम निकल सकता है, लोग वहाँ क्यों नहीं जाना चाहते ! दीपंकर का कोई स्वार्थ नहीं है, क्या इसीलिए अनंत बाबू उसके पास न आकर मिस्टर घोषाल के कमरे में चला गया — वहीं, जहाँ घूस देनी पड़ेगी और अन्याय से समझौता करना होगा ?

वहीं काफी देर तक विमूढ़-सा दीपंकर खड़ा रहा। कल रात दीपंकर के चले आने के बाद कौन ऐसी बात हो गयी जिससे अनंत बाबू इस कदर बदल गया ! दीपंकर का हृदय दर्द से टीस उठा। यह दर्द अनंत बाबू के विपरीत आचरण के लिए नहीं, उसकी अपनी आत्मग्लानि के कारण है। बचपन से दीपंकर ने अनेक और विभिन्न लोगों के अनेक विचित्र व्यवहार देखे और झेले हैं, अनेक दुर्बोध व्यवहारों की बाद में व्याख्या मिली है, लेकिन आज यह क्या हो गया ! ऐसा तो नहीं होना चाहिए। दीपंकर को लगा कि अनंत बाबू ने उसकी सदाशयता, निष्ठा और स्नेहभावना का घोर अपमान किया है।

द्विजपद ने आकर कहा — हुजूर, साहब ने सलाम कहा है ....

दीपंकर ने चपरासी से कहा — जरा ख्याल रखना, वह बाबू मिस्टर घोषाल के कमरे से निकलता है कि नहीं ....

रॉबिन्सन साहब के कमरे में ज्यादा देर नहीं लगी। एक-दो सवाल का जवाब देकर झटपट दीपंकर बाहर आया। आते ही उसने चपरासी से पूछा — वह बाबू निकला है ?

— नहीं हुजूर।

दीपंकर वहीं खड़ा रहा। आज अनंत बाबू से मिलना ही है। कम से कम ...ी दी के लिए मिलना है। आखिर लक्ष्मी दी ने क्यों उसे चिट्ठी लिखकर बुला भेजा था ? क्यों उसे इस तरह अपमानित किया ? जब रॉबिन्सन साहब पूछेगा कि क्यों, तुम्हारा रिलेटिव तो नहीं आया ? अब वह क्या जवाब देगा ?

अचानक मिस्टर घोषाल के कमरे का दरवाजा खुलते ही दीपंकर तैयार हो गया।

लेकिन अनंत बाबू के साथ मिस्टर घोषाल भी बाहर आया। मानो दोनों में बड़ी दोस्ती है। दोनों बात करते हुए सीधे सामने गेट की तरफ चले। मिस्टर घोषाल की गाड़ी खड़ी थी। दोनों उसी में बैठ गये। दीपंकर ने फिर भी अनंत बाबू को बुलाना चाहा। लेकिन उसके पहले ही गाड़ी चली गयी।

दीपंकर वहाँ कुछ देर विमूढ़-सा खड़ा रहा। उसके बाद धीरे-धीरे वह अपने कमरे में कुर्सी पर आकर बैठ गया।

मिस माइकेल के पास उस समय कोई काम नहीं था। वह एक कप चाय बना कर पी रही थी।

बोली — क्या हुआ सेन ? आज तुम बड़े बरीड से लग रहे हो ? ह्वाट हैपेंड ?

पकर ने दूसरी तरफ मुँह फेरकर कहा — नहीं, कुछ नहीं हुआ।

मेम साहब ने पूछा — आज चलोगे सेन ?

— कहाँ ?

दीपंकर को कोई बात याद नहीं पड़ी। उसके दिमाग में उस समय उथल-पुथल
ई है।

मेम साहब बोली — मेरे फ्लैट में। मैं तुम्हें अपना अलबम दिखाऊँगी। मेरे अच्छा कलेक्शन है। विवियन की तस्वीर दिखाऊँगी। वह जिस पलंग पर सोता वह भी दिखाऊँगी। वह ड्रेस करते समय जिस ड्रेसिंग टेबुल का इस्तेमाल करता, वह भी दिखाऊँगी। चलना मेरे साथ।

उसके बाद सहसा दीपंकर के चेहरे की तरफ देखकर मेम साहब ने कहा — क्या सोच रहे हो ? एनीथिंग रौंग विथ यू ?

दीपंकर उस समय भी वही सोच रहा था — ऐसा कैसे संभव हुआ ? अनत बाबू ने ऐसा व्यवहार क्यों किया ? लक्ष्मी दी और अनत बाबू खाना खाते समय हँसते-हँसते लोटपोट हो रहे थे, लेकिन उसके लिए तो दीपंकर ने किसी से कुछ नहीं कहा। उसने जो सब कुछ देखा था, यह भी कोई नहीं जानता। वह तो चुपचाप देखकर चुप-चाप चला आया था। लक्ष्मी दी भी नहीं जान सकी थी और अनत बाबू भी नहीं जान सका था ! उसका मनीबैग वहीं पड़ा था। लेकिन वे कभी जान न सकें, उनकी खुशी में बाधा न पड़े, इसलिए वह मनीबैग लिए बिना चला आया था। उतनी रात को उतनी दूर चलकर वह ईश्वर गांगुली लेन आया था।

इतने में गांगुली बाबू कमरे में आया। बोला — सेन बाबू, चलेंगे ?

— कहाँ ?

— अरे, आप इतनी जल्दी भूल गये ? वही आयुर्वेदिक तेल नहीं खरीदेंगे — मध्यम नारायण तेल। पागलपन की दवा।

दीपंकर को अब वह सब सोचने में भी ऊब लगी। बोला — नहीं गांगुली बा[बू,] अब उस तेल की जरूरत नहीं है।

— अरे ! आप इतनी जल्दी भूल गये ? सच कह रहा हूँ, तेल बहुत अच्छा [है।] चाहे जितने दिन का पागलपन हो इस्तेमाल करने पर एकदम ठीक हो जायेगा। [राम]बाण दवा है, दाम भी ज्यादा नहीं है ....

दीपंकर बोला — नहीं गांगुली बाबू, मुझे जरूरत नहीं है। अब मैं कि[सी की] भलाई के लिए माथापच्ची नहीं करूँगा — अपना समझकर मैं जिसका भला चाहता हूँ, वही मुझे पराया समझता है। आप जाइए, मुझे देर लगेगी।

गांगुली बाबू न जाने क्या सोचकर चला गया। ठीक तो है, दी[पंकर] ... दी को कोई कष्ट नहीं है। वह हुँग तो गूर ... उसका कुछ नहीं बिगड़ने

दी अनंत वावू के साथ आराम से है !

थोड़ी देर वाद मिस माइकेल ने कहा — चलो सेन ।

दीपंकर ने उस वात का जवाव न देकर कहा — जानती हो मिस माईकेल, जहाँ भी जिससे भी मैंने मिलना-जुलना चाहा, जिससे भी दोस्ती करना चाहा, वहीं मुझे वाधा मिली । मैंने कभी स्वार्थ नहीं साधा, धन नहीं चाहा, सिर्फ पराये को अपना वनाना और उससे प्यार करना चाहा, लेकिन सभी जगह मुझे आघात ही मिला । क्यों ऐसा होता है ? क्यों संसार के लोग अच्छे नहीं होते ? क्यों वे भले नहीं होते ? क्यों कोई प्यार करना नहीं जानता ? वता सकती हो इसका क्या कारण है ?

मेमसाहव आश्चर्य से थोड़ी देर दीपंकर की तरफ देखती रही । अचानक दीपंकर का भावांतर देखकर वह विस्मित हुई । इतने दिन से वह दीपंकर के साथ काम कर रही है, लेकिन इसके पहले तो सेन ने ऐसी वात कभी नहीं कही !

वह वोली — चलो सेन । मनुष्य क्यों अच्छा नहीं होता, मैं तुम्हें वता दूँगी । मैं तुम्हें सव समझा दूँगी ।

मिस माइकेल ने झटपट अपना कागज-पत्तर ठीक से रख दिया । मशीन वंद कर उसने चाभी चपरासी को दे दी । चाय का सामान ठीक से आलमारी में रखकर ताला लगा दिया । रॉविन्सन साहव जा चुका था ।

सव ठीक-ठाक कर मिस माइकेल चलने की तैयारी करने लगी । इतने में पास ही कहीं धायँ-धायँ की कई वार विकट आवाजें हुईं । वंदूक और रिवाल्वर चलने की आवाज । फिर वहुत से लोगों की चिल्लाहट सुनाई पड़ी । मानो आसपास कहीं कोई वारदात हो गयी । मिस माइकेल के मुँह से चीख निकल पड़ी ।

— सेन, स्टॉप, स्टॉप, फायरिंग हो रहा है । स्टॉप !

दीपंकर जल्दी से कमरे में आ गया । मेम साहव वोली — क्लोज द डोर, क्लोज इट — क्विक !

पास ही कहीं वहुत देर तक हो-हल्ला होता रहा । दरवाजा वंद कर कमरे में मिस माइकेल और दीपंकर मानो और निकट हो वैठे । मिस माइकेल ने दीपंकर के दोनों हाथ कसकर पकड़ लिये । कहा — वाहर मत जाओ, अभी यहीं रहो — फायरिंग हो रहा है ....

अचानक गांगुली वावू दौड़ता हुआ आया । वह अव भी हाँफ रहा था । वोला — गजव हो गया है सेन वावू ! राइटर्स विल्डिंग में गोली चल रही है ....

— क्यों ?

गांगुली वावू वोला — सव लोग इधर-उधर भाग रहे हैं — चारों तरफ पुलिस के सिपाही दिखाई पड़ रहे हैं । मैं दौड़ता हुआ लौट आया ।

दीपंकर वोला — क्या हुआ है, आपने कुछ सुना ?

गांगुली वावू वोला — कर्नल सिम्पसन को स्वराजियों ने मार डाला है ।

दी अनंत वाबू के साथ आराम से है !

थोड़ी देर वाद मिस माइकेल ने कहा — चलो सेन ।

दीपंकर ने उस वात का जवाब न देकर कहा — जानती हो मिस माईकेल, जहाँ भी जिससे भी मैंने मिलना-जुलना चाहा, जिससे भी दोस्ती करना चाहा, वहीं मुझे वाधा मिली । मैंने कभी स्वार्थ नहीं साधा, धन नहीं चाहा, सिर्फ पराये को अपना वनाना और उससे प्यार करना चाहा, लेकिन सभी जगह मुझे आघात ही मिला । क्यों ऐसा होता है ? क्यों संसार के लोग अच्छे नहीं होते ? क्यों वे भले नहीं होते ? क्यों कोई प्यार करना नहीं जानता ? वता सकती हो इसका क्या कारण है ?

मेमसाहव आश्चर्य से थोड़ी देर दीपंकर की तरफ देखती रही । अचानक दीपंकर का भावांतर देखकर वह विस्मित हुई । इतने दिन से वह दीपंकर के साथ काम कर रही है, लेकिन इसके पहले तो सेन ने ऐसी वात कभी नहीं कही !

वह बोली — चलो सेन । मनुष्य क्यों अच्छा नहीं होता, मैं तुम्हें वता दूँगी । मैं तुम्हें सव समझा दूँगी ।

मिस माइकेल ने झटपट अपना कागज-पत्तर ठीक से रख दिया । मशीन वंद कर उसने चाभी चपरासी को दे दी । चाय का सामान ठीक से आलमारी में रखकर ताला लगा दिया । रॉविन्सन साहव जा चुका था ।

सव ठीक-ठाक कर मिस माइकेल चलने की तैयारी करने लगी । इतने में पास ही कहीं धायँ-धायँ की कई बार विकट आवाजें हुईं । वंदूक और रिवाल्वर चलने की आवाज । फिर वहुत से लोगों की चिल्लाहट सुनाई पड़ी । मानो आसपास कहीं कोई हो गयी । मिस माइकेल के मुँह से चीख निकल पड़ी ।

— सेन, स्टॉप, स्टॉप, फायरिंग हो रहा है । स्टॉप !

दीपंकर जल्दी से कमरे में आ गया । मेम साहव वोली — क्लोज द डोर — क्लोज इट — क्विक !

पास ही कहीं वहुत देर तक हो-हल्ला होता रहा । दरवाजा वंद कर कमरे में मिस माइकेल और दीपंकर मानो और निकट हो वैठे । मिस माइकेल ने दीपंकर के दोनों हाथ कसकर पकड़ लिये । कहा — वाहर मत जाओ, अभी यहीं रहो — फायरिंग हो रहा है ....

अचानक गांगुली वावू दौड़ता हुआ आया । वह अव भी हाँफ रहा था । वोला — गजव हो गया है सेन वावू ! राइटर्स बिल्डिंग में गोली चल रही है ....

— क्यों ?

गांगुली वावू वोला — सव लोग इधर-उधर भाग रहे हैं — चारों तरफ वस पुलिस के सिपाही दिखाई पड़ रहे हैं । मैं दौड़ता हुआ लौट आया ।

दीपंकर वोला — क्या हुआ है, आपने कुछ सुना ?

गांगुली वावू वोला — कर्नल सिम्पसन को स्वराजियों ने मार डाला है । कर्नल

खरीदी

वही जो जेलखाने का आई० जी० था। साहब ऑफिस में बैठा था, अचानक
ों ने आकर उसके सीने में गोली दाग दी।

दीपंकर ने पूछा — कितने मरे हैं, कुछ पता चला ?

गांगुली बाबू बोला — यह सब पता लगाने का मौका कहाँ था, फायरिंग की
ज सुनते ही मैं भागा ....

हालांकि दूसरे दिन अखबार में सारी खबर छपी थी। दीपंकर ने बहुत ढूँढ़ा
केन किरण का नाम नहीं मिला। किरण पकड़ में आने वाला लड़का नहीं है।
पकर आश्वस्त हुआ। उस दिन पूरा डलहौजी स्क्वायर ही मानो अग्निकुंड बन गया
ा। अनगिनत पुलिसवाले और सार्जेंट। उन लोगों ने चारों तरफ से सबको घेर लिया
था। बहुत से निर्दोष लोगों को भी पकड़कर लालबाजार थाने ले जाया गया था। मिस
माइकेल का चेहरा डर के मारे एकदम सफेद पड़ गया था। मेमसाहब की उम्र कम
नहीं थी। लेकिन वह लिपस्टिक, रूज और पाउडर से अपनी उम्र छिपाकर रखती थी।

मेमसाहब बोली — मैं कैसे घर जाऊँगी सेन ?

दीपंकर बोला — झमेला कुछ कम हो जाय, मैं तुम्हें घर पहुँचा दूँगा।

पूरे डलहौजी स्क्वायर में उस समय भयानक सनसनी छा गयी थी। कब
स्वराजी अंदर घुसे, कोई नहीं जानता। पूरी साहबी पोशाक पहने तीन लड़के राइटर्स
बिल्डिंग में घुसे। सबने सोचा, अंग्रेज होंगे नहीं तो एँग्लो-इंडियन। सिम्पसन साहब
उस समय बहुत व्यस्त था। सेक्शन का बड़ा बाबू फाइल दिखाने लाया था। इतने में
अचानक कमरे का दरवाजा खुल गया। साहब बोला — हू'ज दैट ? कौन है ?
सिम्पसन साहब की इजाजत के बिना कमरे में घुसना मना है।

— हू आर यू ?

लेकिन साहब बात पूरी कर न सका। उसके पहले ही एक गोली उसके मुँह
लगी। फाइल पर साहब का नोट लिखना धरा रह गया। हाथ से कलम गिर पड़ी

बाहर होम सेक्रेटरी अलब्रियन साहब का कमरा है। अलबियन मरे।

वहाँ जाकर एक ने पूछा — मरे साहब कमरे में हैं ?

जवाब का इन्तजार किसी ने नहीं किया। गोली चलते ही कमरे का
टूटा। आवाज सुनकर पुलिस का इन्सपेक्टर जनरल क्रेग साहब दौड़ा हुआ
आते ही उसने गोली चलायी। असिस्टेंट इन्सपेक्टर जनरल जोन्स साहब ने भ
निकलकर गोली चलायी। लेकिन किसी की गोली सही आदमी को नहीं ल
तक वे लोग पासपोर्ट ऑफिस की तरफ चले गये। वहाँ रिवाल्वर में गोली
लौटने लगे। जूडीशियल सेक्रेटरी मिस्टर नेलसन का कमरा बगल में है। नेल
कमरे से झाँका तो एक गोली उसे भी लगी। मिस्टर नेलसन के मुख से भ
निकली।

साहब का कमरा है। नेलसन साहब दौड़कर

चला गया।

बाहर राइटर्स बिल्डिंग के कॉरीडोर में उस समय गोलियाँ चल रही हैं। जोन्स और नेल्सन साहब के बाडीगार्ड स्वराजियों की तरफ गोलियाँ चला रहे हैं और स्वराजी भी उसका जवाब दे रहे हैं।

तीसरी मंजिल पर एडूकेशन सेक्रेटरी स्टेपल्टन साहब का कमरा है। खबर मिलते ही स्टेपल्टन साहब ने लालबाजार में टेगर्ट साहब को टेलीफोन कर दिया।

लालबाजार से सिर्फ टेगर्ट साहब नहीं, गर्डन साहब और बर्ट साहब सब आ गये। लालबाजार के सब सिपाहियों ने आकर राइटर्स बिल्डिंग को घेर लिया। आस-पास के दफ्तरों से जो लोग तमाशा देखने पहुँचे थे, सबको पुलिस ने अरेस्ट कर लिया।

बर्ट साहब सिम्पसन साहब के कमरे में गया।

देखा, एक लड़का आराम से कुर्सी पर बैठा हुआ है।

और दो टेबिल के नीचे बैठे हैं।

खबर पाते ही टेगर्ट साहब हड़बड़ाकर कमरे में आया। जो लड़का कुर्सी पर बैठा है, उसे पकड़ना अब कोई माने नहीं रखता। शायद थोड़ी देर पहले उसने जहर खा लिया है। उसका सिर एक तरफ लटका हुआ है।

टेगर्ट साहब रिवाल्वर तानकर टेबिल के नीचे झुककर चिल्लाया—हैंड्स अप!

लेकिन हाथ उठाने की शक्ति उनमें नहीं है। दोनों ने रिवाल्वर चलाकर आत्महत्या करने की कोशिश की थी, लेकिन गोली खत्म हो गयी थी। दोनों हाँफ रहे हैं।

टेगर्ट साहब ने पूछा—क्या नाम है तुम्हारा?

—दीनेश गुप्त।

—और तुम्हारा?

—विनय वसु।

विनय वसु को पकड़ने के लिए पुलिस ने दस हजार रुपये के पुरस्कार की घोषणा की थी। इतने दिन से पुलिस उसे ढूँढ़ती फिर रही थी।

उधर राइटर्स बिल्डिंग के बाहर पुलिसवालों ने लाठी तानकर सबको भगाना शुरू कर दिया था—भागो, भागो साले ....

जैसे कुत्ते या बिल्ली को लोग भगाते हैं, उसी तरह पुलिसवाले लोगों को भगाने लगे। अस्पताल में विनय वसु मर गया। कुछ दिन बाद दीनेश गुप्त की फाँसी हो गयी।

उन दिनों डा० विधानचन्द्र राय कार्पोरेशन के मेयर थे। उन्होंने शोकसभा में खड़े होकर भाषण किया। उन्होंने कहा ....

"We have read instances in history, where the perpetrates of acts like these in one generation having been punished for them,

en acclaimed as martyrs by the next generation.
e let us pay our respect to the courage and devotion shown
young man in the pursuit of his ideal."

हीं, तो उस दिन मेमसाहब बहुत ज्यादा डर गयी थीं। वह थरथर काँपने लगीं
पंकर जब दफ्तर से निकला तब वह इलाका एकदम खाली हो गया था। चारों
स पुलिसवाले हैं। दफ्तर में जो लोग देर तक काम करते हैं, तनख्वाह बाना
ने में वे भी जल्दी चले गये हैं। दीपंकर को एक बार लगा कि शायद किरण इसके
है। शायद उसे भी पुलिस पकड़ लेगी। अब वह पकड़ा गया तो उसे कोई न
सकेगा। अब उसको जरूर फाँसी हो जायेगी। दफ्तर के उस कमरे में बैठे दीपंकर
अपने को बहुत छोटा महसूस किया। किरण की तुलना में बहुत छोटा। किरण की
अथवा माँ के पास खबर पहुँचेगी। अभी उस दिन किरण का बाप मरा है, अब किरण
का कुछ हो गया तो मौसीजी नहीं बचेंगी। फिर शायद दीपंकर ही मौसीजी को
श्मशान ले जायेगा!

मेमसाहब बोलीं — मुझे बड़ा डर लग रहा है, सेन।

गांगुली बाबू जा चुका था। उसकी पत्नी पाँच साल बाद स्वस्थ हुई है। इस-
लिए वह ज्यादा देर तक घर लौटना नहीं चाहता। इतने दिन बाद वह बीवी और
बाल-बच्चों के साथ आराम से गृहस्थी करना चाहता है। तनख्वाह कम मिलती है तो
क्या हुआ! सुख ही बड़ा है। शांति ही बड़ी चीज है।

दीपंकर बोला — चलो, मैं तुम्हें घर पहुँचा दूँ मिस माइकेल ....

कहाँ किस तरफ मिस माइकेल का मकान है, यह दीपंकर नहीं जानता। बड़ी
मुश्किल से टैक्सी मिली। मिस माइकेल उसमें बैठीं। दीपंकर सामनेवाली सीट पर बैठने
जा रहा था तो मेमसाहब बोलीं — अरे, इधर बैठो, मेरे पास आओ।

टैक्सी चलने लगी तो मिस माइकेल बोलीं — मुझे अब भी डर लग रहा है

सेन —

— क्यों, डर किस बात का है? मैं तो हूँ।

मिस माइकेल बोलीं — अगर सब यूरोपियन इस तरह मार डाले जायें तो

होगा?

दीपंकर बोला — लेकिन तुम तो यूरोपियन नहीं हो। तुम तो इण्डियन,
इण्डियन हो तुम्हें किस बात का डर है?

लेकिन यह सब क्या कोई सुनेगा? जब वह दिन आयेगा, तब इण्डिय
सबका खून करेगा। स्वराज आने पर यूरोपियन और ऐंग्लो-इण्डियन, कोई नहीं
किरण ने भी एक दिन यही कहा था।

मिस माइकेल बोलीं — विश्वास बड़े मजे में है सेन! वह या ऐंग्ल
यूरोपियन।

टैक्सी में बैठा दीपंकर बाहर सड़क की तरफ देख रहा है। इधर की सड़क काफी खाली लग रही है। खास कर दफ्तर वाला मुहल्ला वीरान लग रहा है। चौरंगी पर अब भी लोग-बाग हैं। जगह-जगह लोग इकट्ठा होकर बात कर रहे हैं। लेकिन पुलिस देखते ही वे इधर-उधर खिसक रहे हैं। लक्ष्मी दी की बात याद आयी। इतना कह देने पर भी अनंत बाबू नहीं मिला। अच्छा हुआ! दीपंकर की क्या गरज पड़ी है! लक्ष्मी दी का फायदा हो या नुकसान, उसे कुछ करना नहीं है। सिर्फ लक्ष्मी दी क्यों, किसी का फायदा-नुकसान देखने की अब उसे फुरसत नहीं है।

अचानक मिस माइकेल बोली — क्या सोच रहे हो सेन ?

दीपंकर बोला — क्या ? कुछ नहीं सोच रहा हूँ ....

— लेकिन तुम बड़े अनमाइंडफुल लग रहे हो ?

दीपंकर बोला — मैं एक दूसरी बात सोच रहा हूँ मिस माइकेल।

— तुम इतना क्यों सोचते हो ? मैं देखती हूँ, तुम हर वक्त सोचते ही रहते हो।

दीपंकर बोला — आज मिस्टर रॉबिन्सन से एक काम के बारे में कहा था। साहब उसे करने के लिए तैयार था। काम मेरे एक रिलेटिव का था। मैंने उससे मेरे पास आने के लिए कहा था। फिर कोई घूस नहीं देनी पड़ती और मैं उसका काम करवा देता ....

इतने में टैक्सी एक गली में आकर रुकी।

मिस माइकेल टैक्सी से उतरी। बोली — यहीं मेरा मकान है।

दीपंकर बोला — ठीक है। जब मैं जाऊँ मिस माइकेल ....

मिस माइकेल ने अचानक दीपंकर का हाथ पकड़ लिया। कहा — नहीं, नहीं। यह कैसे हो सकता है। मेरे फ्लैट में चलो, थोड़ी देर रहोगे। चलो। मैं तुम्हें ज्यादा देर नहीं रोकूँगी। मेरे घर में कोई नहीं है। मैं एलोन हूँ ....

आखिर जबर्दस्ती खींच ले गयी मेमसाहब। क्यों वह दीपंकर को अपने घर ले जाना चाहती है, क्या पता! यह मुहल्ला भी कलकत्ते का ही एक हिस्सा है। बचपन में दीपंकर ईश्वर गांगुली लेन से बहुत जगह घूमने जाता था, लेकिन ऐसे मुहल्ले में आज वह पहली बार आया। चारों तरफ छोटी-छोटी दुकानें हैं — गोश्त, चाय और दरजी की दुकानें। हर जगह भीड़ है। इतनी भीड़ कालीघाट में भी नहीं है। शहर के बीचो-बीच एक ऐसा मुहल्ला है, यह दीपंकर पहले नहीं जानता था। खड़ाऊँ पहनी छोटी-छोटी ऐंग्लो-इंडियन लड़कियाँ दुकान से चाय खरीदकर मग्घे में लिये जा रही हैं। सभी दुकानें मुसलमानों की हैं। वे लुंगी पहनकर दुकानदारी कर रहे हैं। मेमसाहबों से मानो उनकी बड़ी दोस्ती है। मेमें अकेली दुकानों से सामान खरीद रही हैं। मुहल्ले भर में भारी चहलपहल है। अभी थोड़ी देर पहले राइटर्स बिल्डिंग में इतनी बड़ी वारदात हो गयी, लेकिन यहाँ मानो किसी को उसकी खबर तक नहीं है। यहाँ जीवन एकदम स्वाभाविक है। सीटी बजाते हुए टॉमी लोग किले से यहाँ आकर घूम रहे हैं। लगभग

इसलिए परदे, बत्तियों, पुराने फरनीचर और अन्य सामानों से कमरा ठसाठस भरा लग रहा है। दीवारों पर कई तस्वीरें लगी हैं। तस्वीरों से मानो दीवारें भर गयी हैं। कई मर्दों और औरतों के फोटो। एक लड़के के साथ एक लड़की खड़ी है — दोनों एक-दूसरे के कंधे पर हाथ डाले हुए हैं। कहीं दो लड़कियाँ लिपटकर परस्पर एक दूसरी को चूम रही हैं। कमरे की छत से रंगीन कागज का बड़ा-सा फानूस लटक रहा है।

परदे की आड़ से मेमसाहब निकल आयी। हाथ में एक कप चाय और दो डिशों में पुडिंग ....

मेमसाहब ने दीपंकर की तरफ देखकर कहा — क्या तुमने फिर सोचना शुरू कर दिया है ?

मानो पकड़े जाने पर दीपंकर ने हँस दिया। कहा — नहीं, सोच नहीं रहा हूँ — अब कभी नहीं सोचूंगा।

अब अचानक मिस माइकेल दीपंकर को बड़ी अच्छी लगी। क्यों मेमसाहब उसे बुला लायी ? इतने लोगों के रहते वह उसी को क्यों बुला लायी ? कोई तो उसे इतने आग्रह से नहीं बुलाता ! क्या सिर्फ अपनी बातें कहने के लिए मेमसाहब उसे बुला लायी है ?

मेमसाहब बोली — सोचते रहने से लाइफ का ओर-छोर नहीं मिलेगा सेन ! लो, अब खाओ ....

दीपंकर ने पूछा — तुम खुद खाना बनाती हो ?

— खुद नहीं बनाऊँगी तो कौन बनायेगा ? कुक ? अकेला एलोन लाइफ, उसके लिए कुक रखकर क्या होगा ? फिर मुझे तनख्वाह क्या मिलती है, यह तो तुम जानते हो ! पहले जब विवियन था, तब एक दिन वह बनाता था और एक दिन मैं बनाती थी....

इतने में बाहर शायद दुमंजिले पर कहीं जोर-शोर से नाच-गाना शुरू हुआ। धम-धम् कुछ लोग मानो सिर पर नाचने लगे।

दीपंकर ने पूछा — कौन नाच रहे हैं ?

— वह कुछ नहीं, किरायेदार की लड़कियाँ नाच रही हैं।

खा चुकने के बाद मेमसाहब ने कई अलबम निकाले। चमड़े के जिल्दवाले बढ़िया अलबम। दीपंकर तस्वीरें देखने लगा। विभिन्न भाव भंगिमाओं में मिस माईकेल की तस्वीरें। कितनी ही तस्वीरें जोड़े में। विभिन्न पुरुषों के साथ विभिन्न मुद्राओं में। किसी में मिस माइकेल ने गाउन पहन रखा है, तो किसी में सारा शरीर दिखाई पड़ रहा है। सिर्फ उसकी कमर में एक टुकड़ा कपड़ा लिपटा है। देखकर दीपंकर ने आँखें झुका लीं। उसे कान, नाक और माथे पर आग की लपटें महसूस हुईं। ये सब तस्वीरें मेमसाहब उसे क्यों दिखा रही हैं ? उधर ऊपर नाच के संग गाना शुरू हो गया है। दीपंकर को इच्छा हुई कि उठकर चला जाय। ये सब तस्वीरें दिखाने की क्या जरूरत थी ?

— कैसा लगा मेम? हाउ डू यू लाइक इट? पसंद है?

क्या आश्चर्य है! कैसे हैं ये लोग। इनमें ज़रा भी लज्जा नहीं है! ज़रा भी हया या संकोच नहीं है!

— अच्छा मेम, मेरा फीगर अच्छा है या विवियन का? सच बताना!

इतनी देर बाद दीपंकर ने निगाह उठायी।

बोला — यह सब मुझे क्यों दिखा रही हो मेमसाहब? मैं तुम लोगों के फीगर का क्या समझता हूं?

मेमसाहब हंस पड़ी। बोली — क्या तुमने कभी किसी लड़की का साथ नहीं किया? क्या तुम्हारी कोई लेडी-लव नहीं है?

याद है, उस दिन मिस माइकेल के कमरे में बैठा दीपंकर मानो किसी और लोक में चला गया था! जो मिस माइकेल आफिस में स्टेनोग्राफर है, वह मानो यह नहीं है। वह मतलब की इस दुनिया में आकर हार गयी थी। कब उसने सबके साथ यात्रा शुरू की थी कहा नहीं जा सकता। उस समय उसकी जवानी थी। उस समय उसके लिए झुंड के झुंड लोग [illegible] आकर सड़क पर खड़े होते थे। कई मोटरबाइक लेकर आते थे। शाम होते ही वे मकान के सामने भीड़ करते थे। खड़े होकर सीटी बजाते थे।

मेमसाहब बोली — उस समय मैं उम्र में तुम्हारे बराबर थी। जानते हो मेम ....

— क्या इसीलिए तुम मुझे बुला लायी हो?

मेमसाहब हंसी। बोली — नहीं। तुम्हें इसीलिए बुला लायी हूं कि तुम अभी समझ पाओगे। लेकिन जब तुम और बड़े हो जाओगे, तुम्हारी उम्र अधिक हो जायेगी तब समझ नहीं पाओगे ....

अब दीपंकर को मेमसाहब से घृणा नहीं हुई। उसने मेमसाहब के चेहरे की त[...] देखा। देखने पर सचमुच दया आयी। अब यहां कोई नहीं आता। अब कोई मो[...] बाइक में आकर मकान के सामने सीटी बजाकर उसे नहीं बुलाता। अब जो लोग [...] हैं, उनकी निगाह दूसरी जगह होती है।

मेमसाहब का स्वर बड़ा करुण सुनाई पड़ा। वह बोली — अब कोई नहीं मेम। कोई आता भी है तो ....

दीपंकर ने पूछा — कौन आता है?

मेमसाहब ने इसका जवाब नहीं दिया। उसने कहा — पहले जो लो[...] थे, वे मेरे कारण आते थे। विवियन का फीगर देख रहे हो न, विवियन भी [...] मुझसे बड़ा जलता था। मैंने खुद विवियन को कितनी फ्रेंड्स जुटा दी थी। अ[...] मैं कितने बुरे ढंग से सजी हूं ....

फिर मेमसाहब ने अचानक आलमारी खोलकर एक पैकेट निकाला।

— यह देखो!

वड़े जतन से सिल्क के रिबन से बंधा पैकेट। वड़ी कीमती चीज की तरह मेमसाहब ने उसे सँभालकर रख दिया था। पैकेट निकालते ही सेंट की खुशबू से कमरा भर गया। धीरे-धीरे मिस माइकेल ने पैकेट को खोला। अनेक रंगों की चिट्ठियाँ। तरह-तरह के विभिन्न कागज। उन पर कितने ही विभिन्न चित्र बने हुए हैं। किसी पर लिखा है 'माइ लव', किसी पर 'डीयरेस्ट' और किसी पर 'माइ स्वीट'। ये संबोधन कितने विचित्र लगते हैं!

मेमसाहब वोली — कभी-कभी मैं इन चिट्ठियों को खोलकर पढ़ती हूँ। जानते हो सेन, रात को विस्तर पर लेटकर पढ़ती हूँ। उस समय मुझे वे पुरानी वातें याद आती हैं। उस समय मैं अपने पुराने दिनों में लौट जाती हूँ....

मेमसाहब की आँखें छलछला आयीं। यह भी इन्सान का एक रूप है! इस कलकत्ते में कितने लोगों की कितनी ही समस्याएँ हैं, लेकिन इस तरह की समस्या के वारे में दीपंकर जानता नहीं था। पाँच सौ तैंतीस चिट्ठियाँ। जिन लोगों ने चिट्ठियाँ लिखी थीं, आज वे कहाँ हैं, शायद कोई नहीं जानता! कभी उन लोगों ने इस फ्लैट के सामने सड़क पर खड़े होकर सीटी बजायी है। कोई मिस माइकेल को मोटरबाइक के पीछे विठाकर घुमाने ले गया है। किसी ने उसे होटल में ले जाकर खाना खिलाया है। कोई उसके साथ नाचा है। फिर आधी रात को कोई यहाँ छोड़ गया है। शायद उस समय मिस माइकेल नशे में झूमा करती थी।

— ये सव कहाँ गये मिस माइकेल?

मिस माइकेल वोली — कव कौन किधर छटक गया, उसका हिसाव रखने का मौका तो नहीं मिला सेन, फिर भी कभी-कभी किसी से भेंट हो जाती है। उस दिन हॉग मार्केट में आर्थर से भेंट हो गयी थी। देखा, उसके साथ उसकी मिसेज़ है, उसकी वेवी है। मैं पहचान गयी थी लेकिन आर्थर मुझे पहचान ही नहीं पाया। लेकिन....

— लेकिन क्या?

मिस माइकेल कहने लगी — लेकिन उसी आर्थर की कितनी चिट्ठियाँ इस पैकेट में हैं। एक वार उसके फ्लैट में उसके साथ मैंने सेवेण्टी-टू आवर्स विताये थे। हम एक साथ खाते रहे, एक साथ जागते रहे, एक साथ सोते रहे और एक साथ ड्रिंक करते करते रहे....

— क्या तुम ड्रिंक करती हो मिस माइकेल?

— ड्रिंक?

मिस माइकेल खिलखिलाकर हँस पड़ी। वोली — ड्रिंक नहीं करूँगी? ड्रिंक न करती तो मैं कभी की स्विसाइड कर चुकी होती सेन। मैं रोज ड्रिंक करती हूँ, यह देखो....

एकाएक उठकर मिस माइकेल कवर्ड खोलकर एक वोतल निकाल लायी। दीपंकर की तरफ देखकर वह वोली — पियोगे?

— नहीं! नहीं! दीपंकर ने जोर-जोर से हाथ हिलाया।

एक सा'व आया है ।

मिस माइकेल का चेहरा न जाने क्यों बदरंग दिखाई पड़ा । वह बोली — तुम जाओ रहीम, जाओ ....

रहीम फिर भी नहीं गया । वह मेमसाहब के चेहरे की तरफ देखता खड़ा रहा । बोला — सा'ब आया है मेमसा'ब, बहुत बड़ा आदमी, बहुत बड़ी गाड़ी में आया है — विलायती साहब ।

मेमसाहब बोली — तू कहीं और ले जा साहब को, अभी मुझे फुरसत नहीं है —

लेकिन रहीम ने पीछा नहीं छोड़ा । वह बोला — सब मिससाहबों के घर आदमी है मेमसाहब, आज कोई खाली नहीं है ।

— निकल यहाँ से । गेट आउट !

अचानक मिस माइकेल गुस्से से उबल पड़ी । बोली — कह रही हूँ कि मेरे पास वक्त नहीं है, फिर भी बात कर रहा है । निकल ....

मिस माइकेल ने रहीम के मुँह पर धड़ाम से दरवाजा बंद कर दिया । फिर वह धीरे-धीरे कुर्सी पर आकर बैठ गयी । दीपंकर ने देखा कि मेमसाहब का चेहरा न जाने कैसा हो गया है ! बड़ा भद्दा लग रहा है । मानो अचानक किसी ने उसका अपमान कर दिया है । थोड़ी देर वह कुछ बोल न सकी ।

दीपंकर बोला — अब मैं चलूँ, मिस माइकेल ....

मिस माइकेल आँख उठाकर दीपंकर की तरफ देख न सकी । सहसा उसने दोनों हाथों से अपना चेहरा ढक लिया । थोड़ी देर वह सिर उठा न सकी ।

दीपंकर बड़ी मुश्किल में पड़ गया । यह मानो मिस माइकेल की लज्जा नहीं, दीपंकर की है । मेमसाहब से बिना कहे एकाएक चले जाना भी ठीक नहीं है । थोड़ी देर दीपंकर चुपचाप बैठा रहा । चुपचाप बैठा वह मिस माइकेल की तरफ देखता रहा ।

— मिस माइकेल !

मेमसाहब ने इतनी देर बाद सिर उठाया । उसकी आँखें गुड़हल के फूल जैसी लाल हो गयी हैं । फूल गयी हैं । पलकें गीली हैं ।

— मिस माइकेल, अब मैं चलूँ ....

मिस माइकेल खड़ी हो गयी । बोली — तुमने जो कुछ देखा, उसे भूल जाना सेन । फॉरगेट इट प्लीज ....

मिस माइकेल ने फिर निगाह झुका ली । उसी तरह खड़ी रहकर वह बोली —

मुझे गलत मत समझना सेन, प्लीज गलत मत समझना — मैं हमेशा ऐसी नहीं थी । इसके लिए और कोई जिम्मेदार नहीं है सेन, और कोई नहीं — सिर्फ विवियन जिम्मेदार है, उसी ने मुझे पागल कर दिया है । ही हैज रुइण्ड माइ लाइफ ....

एक सा'ब आया है।

मिस माइकेल का चेहरा न जाने क्यों वदरंग दिखाई पड़ा। वह वोली — तुम जाओ रहीम, जाओ ....

रहीम फिर भी नहीं गया। वह मेमसाहव के चेहरे की तरफ देखता खड़ा रहा। वोला — सा'व आया है मेमसा'व, वहुत वड़ा आदमी, वहुत वड़ी गाड़ी में आया है — विलायती साहव।

मेमसाहव वोली — तू कहीं और ले जा साहव को, अभी मुझे फुरसत नहीं है —

लेकिन रहीम ने पीछा नहीं छोड़ा। वह वोला — सव मिससाहवों के घर आदमी है मेमसाहव, आज कोई खाली नहीं है।

— निकल यहाँ से। गेट आउट!

अचानक मिस माइकेल गुस्से से उवल पड़ी। वोली — कह रही हूँ कि मेरे पास वक्त नहीं है, फिर भी वात कर रहा है। निकल ....

मिस माइकेल ने रहीम के मुँह पर धड़ाम से दरवाजा वंद कर दिया। फिर वह धीरे-धीरे कुर्सी पर आकर वैठ गयी। दीपंकर ने देखा कि मेमसाहव का चेहरा न जाने कैसा हो गया है! वड़ा भद्दा लग रहा है। मानो अचानक किसी ने उसका अपमान कर दिया है। थोड़ी देर वह कुछ वोल न सकी।

दीपंकर वोला — अव मैं चलूँ, मिस माइकेल ....

मिस माइकेल आँख उठाकर दीपंकर की तरफ देख न सकी। सहसा उसने दोनों हाथों से अपना चेहरा ढक लिया। थोड़ी देर वह सिर उठा न सकी।

दीपंकर वड़ी मुश्किल में पड़ गया। यह मानो मिस माइकेल की लज्जा नहीं, दीपंकर की है। मेमसाहव से विना कहे एकाएक चले जाना भी ठीक नहीं है। थोड़ी देर दीपंकर चुपचाप वैठा रहा। चुपचाप वैठा वह मिस माइकेल की तरफ देखता रहा।

— मिस माइकेल!

मेमसाहव ने इतनी देर वाद सिर उठाया। उसकी आँखें गुड़हल के फूल जैसी लाल हो गयी हैं। फूल गयी हैं। पलकें गीली हैं।

— मिस माइकेल, अव मैं चलूँ ....

मिस माइकेल खड़ी हो गयी। वोली — तुमने जो कुछ देखा, उसे भूल जाना सेन। फॉरगेट इट प्लीज ....

मिस माइकेल ने फिर निगाह झुका ली। उसी तरह खड़ी रहकर वह वोली —

मुझे गलत मत समझना सेन, प्लीज गलत मत समझना — मैं हमेशा ऐसी नहीं थी। इसके लिए और कोई जिम्मेदार नहीं है सेन, और कोई नहीं — सिर्फ विवियन जिम्मेदार है, उसी ने मुझे पागल कर दिया है। ही हैज रुइण्ड माइ लाइफ ....

मिस माइकेल अपने को सँभाल न सकी। उसने दीपंकर के सामने ही दोनों
...ाथ रख लिया।

फिर मानो अचानक मिस माइकेल होश में आयी। आँखें पोंछकर वह बोली —
...ड्ट, तुमने आज मुझे घर पहुँचा दिया है, इसलिए धन्यवाद। कल फिर दफ्तर
...ट होगी।

दीपंकर को कुछ नहीं कहना था। वह कुछ कह भी न सका। पूरी घटना एक
...पने की तरह घट गयी। शायद इस मुहल्ले की जिंदगी में ऐसी घटना रोज होती है।
मानो यह रोज की बात है। फिर भी सब कुछ देखकर दीपंकर अवाक् हो गया था।
जिस मेमसाहब को रोज वह दफ्तर में देखता है, वह मानो वह नहीं है। किसी जमाने
के किसी दोस्त के भाग्य की उन्नति से मेमसाहब मानो पागल हो गयी है। अदृश्य भाग्य
की बदौलत एक आदमी यश के शिखर पर पहुँच गया है और दूसरा यहाँ अपने फूटे
भाग्य लेकर हाहाकार करता पड़ा है। क्या यह भी कम ट्रेजेडी है! आज दीपंकर यहाँ
आया था, तभी तो वह जीवन के एक और पहलू को देख सका। कालीघाट के बाजार
के पीछे छिटे और फाँटा का जो जीवन है, यहाँ कलकत्ता शहर के एकदम केन्द्र में दीप-
कर ने उसी जीवन की पुनरावृत्ति देखी। कालीघाट के बाजार की दुनिया में जो लोग
दबे पाँव विचरण करते हैं वे तथाकथित सभ्यजनों की निगाह में धूर्त समझे जाते हैं,
लेकिन यहाँ इस सभ्य दुनिया में जो लोग आते हैं, वे आदरणीय कहे जाते हैं। फर्क
इतना है कि वहाँ जवानी की बाजी चोरी-छिपे लगती है और यहाँ खुले आम ताल
ठोंककर ललकार के साथ लगायी जाती है। यहाँ का कारोबार देनरस और देन-
शाव है।

लेकिन अब भी दीपंकर को कुछ देखना बाकी था।

दरवाजे की कुंडी फिर खटकी। अब की बार जरा जोर से। अधिकार ...
घोषणा की तरह।

शायद रहीम फिर आया है। शायद समझा-बुझाकर मिस माइकेल को ...
करेगा।

— कौन? कौन है?

उस चौड़ी पट्टी में कभी लक्ष्मी दी को इसी तरह अनचाहे आगन्तुकों से ...
पड़ा है। मिस माइकेल के कमरे में खड़े दीपंकर को वही बात याद आयी।

मिस माइकेल बोली — जरा रुको सेन। देख लूँ कौन है

दरवाजा खुलते ही दीपंकर ने मानो भूत देख लिया।

मिस्टर घोषाल।

... खड़ा है। अँधेरे में उसका चेहरा ठीक से दिखाई न ...

दीपंकर को देखते ही मिस्टर घोषाल आगे बढ़ आया। बोला — हलो ! लगता है, मैं तुम्हें जानता हूँ ...

खड़े होकर दीपंकर ने कहा — मैं हूँ दीपंकर सेन, जापान ट्रैफिक का क्लर्क—

— ह्वाट ब्रॉट यू हियर ? तुम यहाँ कैसे ?

दीपंकर को इसका जवाब नहीं देना पड़ा। मिस माइकेल ने ही दिया। राइ-टर्स बिल्डिंग में गोली चलने के कारण मेमसाहब खुद सेन को अपने साथ लायी है। सेन ने आना नहीं चाहा। कहना चाहिए कि मेमसाहब जबर्दस्ती उसे यहाँ लायी है।

— आइ सी।

शायद मिस्टर घोषाल के पास ज्यादा समय नहीं है। लगा, वह बड़ी जल्दी में है। मानो थोड़ी देर पहले कहीं से घूम-घामकर आ रहा है। चेहरे पर पसीने की बूंदें चमक रही हैं।

अचानक मिस्टर घोषाल मिस माइकेल को बाहर बुला ले गया। बाहर धीमी आवाज में न जाने उनमें क्या बातें होने लगीं। दीपंकर अकेला कमरे में बैठा रहा।

दीपंकर चुपचाप बैठा पसीने से तर होने लगा।

मिस्टर घोषाल यहाँ क्यों आया है ! इतनी जगह रहते मिस माइकेल के घर ! जो आदमी आफिस में इतना गंभीर होकर बात करता है, उसी ने यहाँ हँसकर दीपंकर से बात की। क्या विचित्र आदमी है ! कैसा अद्भुत चरित्र !

इतने में मिस माइकेल कमरे में आयी।

दीपंकर ने पूछा — मिस्टर घोषाल गया ?

— हाँ।

— वह यहाँ क्यों आया था, तुम्हारे पास ?

मेमसाहब हँसी। बोली — वह आया था गर्ल्स के चक्कर में ....

दीपंकर हक्का-बक्का हो गया। बोला — क्या ? गर्ल्स ?

— यहाँ ऊपर-नीचे सभी घरों में गर्ल्स मिलती हैं न ! आज मिस्टर घोषाल को कहीं कोई मिल नहीं रही थी, इसलिए मुझे इंतजाम करना पड़ा। मिस्टर घोषाल बैचे-लर है न — शादी नहीं की, पास ही पैलेस कोर्ट में रहता है।

थोड़ी देर दीपंकर के मुँह से कोई बात नहीं निकली।

उसके बाद वह उठा। बोला — अब मैं चलूँ मिस माइकेल ....

— ऑलराइट, कल फिर भेंट होगी।

तिमंजिला या चौमंजिला मकान। मिस माइकेल के कमरे से निकलते ही सीढ़ी है। कम पावर की बत्ती जल रही है। आते समय दीपंकर ने ख्याल नहीं किया था। मिस माइकेल के साथ वह सीधे चला आया था। बाहर निकलते ही न जाने क्यों उसे डर लगने लगा। लकड़ी की बहुत चौड़ी सीढ़ी। ऊपर या नीचे एक भी आदमी दिखाई

सूर्य सेन, भगतसिंह, और जतीन दास ने अपना बलिदान किया है ? वहाँ खड़े दीपंकर को लगा कि इस वक्त अगर किरण से भेंट हो जाती तो अच्छा होता। फिर वह किरण को समझा देता कि तू जिन लोगों के लिए तकलीफ उठा रहा है किरण, वे अनंत राव भावे हैं ! स्वराज मिलने पर उन्हीं को फायदा होगा। वे ही उस समय सिर पर चढ़कर बैठ जायेंगे, देख लेना !

तनख्वाह का रुपया ऊपरवाली जेब में है।

भीड़ भरी सड़क की फुटपाथ पर खड़े होकर न जाने क्या सोचने लगा। कालीघाट के बाजार का जो माहौल है, उसके कारण वहाँ के अधःपतन को फिर भी माफ किया जा सकता है। वहाँ वे नासमझी को पूंजी बनाकर जीवन के सट्टा बाजार में जुआ खेलने उतरे हैं। भले ही वे पापी हैं, लेकिन वह पाप अज्ञानता का है। जिस दिन किरण का चाहा स्वराज आयेगा, उस दिन वे लागडाट कर आगे की कतार में खड़े होने की होड़ में शामिल नहीं होंगे। लेकिन ये लोग ? ये ही लोग उस दिन खुदीराम की फाँसी की प्रशंसा की पराकाष्ठा कर भाषण देंगे। उस समय ये ही लोग देशसेवक का प्राप्य फूलमाला छीन-झपटकर गले में डाल लेंगे !

एक टैक्सी जा रही थी। उसे बुलाकर दीपंकर उसमें बैठ गया।

टैक्सीवाले ने पूछा — कहाँ सा'ब ?

टैक्सीवाले ने सोचा था कि बंगाली साहब शायद पार्क स्ट्रीट, फ्री स्कूल स्ट्रीट या ऐसी ही किसी सड़क का नाम लेगा, लेकिन दीपंकर ने कहा — कालीघाट।

तेज रफ्तार में टैक्सी चलने लगी। बचपन में कभी-कभी किरण और दीपंकर दूर से इस मुहल्ले की तरफ देखा करते थे। उस समय मन ही मन उनको बड़ा अफसोस होता था। वे सोचते थे कि इसी मुहल्ले में शायद मनुष्य की सारी समस्याओं का समाधान छिपा है। मनुष्य स्वस्थ और स्वाभाविक होने पर जो होता है, वह शायद यही है। बड़े-बड़े मकान, अच्छे-अच्छे परदे, बढ़िया-बढ़िया खाना, धन-दौलत और ऐशो-आराम के सामान — शायद यही मनुष्य की कामना का सर्वोच्च सोपान है। मानो यहीं पहुँच जाने पर और कुछ चाहने का सवाल नहीं उठता।

चौरंगी से जाते समय दीपंकर ने फिर उन मकानों की तरफ देखा। मिस माइकेल के कमरे में लटकते परदे की तरह यहाँ की खिड़कियों में भी परदा लटक रहा है। मिस माइकेल के कमरे की बत्ती में तरह बत्ती यहाँ भी सीलिंग से बत्ती लटक रही है। शायद इन मकानों की औरतें भी मिस माइकेल की तरह सिल्क के रिबन से लव-लेटर्स बाँधकर जतन से रख देती हैं। शायद यहाँ की औरतें भी मिस माइकेल की तरह रूमाल से चेहरा ढंककर खामोशी से रोती हैं। लेकिन बाहर से पता नहीं चलता !

टैक्सी हाजरा रोड से मंदिर की तरफ जाने लगी।

दीपंकर मानो होश में आकर उछल पड़ा। बोला — कालीघाट नहीं सरदार जी, गड़ियाहाट चलो, गड़ियाहाट लेवल क्रॉसिंग ....

टैक्सी ड्राइवर आश्चर्य में पड़ गया। शायद उसने सोचा कि बंगाली साहब
नहीं है। खैर, सोचा करे! अभी जाकर लक्ष्मी दी से मिल लेना ठीक रहेगा।
अनंत बाबू की करतूत के बारे में बता देना जरूरी है। कम से कम लक्ष्मी दी
सके कि वह किस पर निर्भर कर रही हैं। अनन्त बाबू किस चरित्र का आदमी
उसका चरित्र कितना गंदा है।

लेवल क्रॉसिंग का गेट खुला है। शायद अब कोई ट्रेन नहीं है। टैक्सी लाइन
पहुँचते ही दीपंकर ने उस अँधेरे में भी पहचान लिया। उसने चिल्लाकर टैक्सीवाले
कहा — रुको! रुको!

क्रॉसिंग के उस पार पहुँचकर टैक्सी रुक गयी।

टैक्सीवाले को झटपट किराया देकर दीपंकर दौड़कर उसके पास गया। बोला —
लक्ष्मी दी, आप यहाँ क्या कर रही हैं?

लक्ष्मी दी रेल लाइन पर अकेली खड़ी थी। चेहरा उदास है। आज उसने
जूड़ा भी नहीं बनाया — सिंदूर की बिंदी भी नहीं लगायी।

— आप यहाँ अकेले क्या कर रही हैं लक्ष्मी दी?

लक्ष्मी दी भी दीपंकर को देखकर आश्चर्य में पड़ गयी है। बोली — तू यहाँ
फँसे? अपना मनीबैग लेने आया है?

— नहीं, उसके लिए नहीं, आपसे एक बात है। लेकिन आप यहाँ क्या कर
रही हैं? इतनी रात को?

लक्ष्मी दी बोली — शंभु न जाने कहाँ चला गया है। देख न, कितनी परेशान
हो रही हूँ। कब निकल गया, पता भी न चला, उसी को ढूँढ़ने आयी हूँ।

दीपंकर बोला — लेकिन यहाँ उन्हें कहाँ ढूँढ़ पायेंगी?

लक्ष्मी दी बोली — क्या बताऊँ? लेकिन वह गया कहाँ यही सोच रही हूँ।
आखिर कुछ समझ में नहीं आया तो ढूँढ़ने निकल पड़ी।

दीपंकर बोला — चलिए, चलिए। आप भी क्या गजब करती हैं। इस सम
अकेले बाहर निकल पड़ी। अगर मैं न आता तो ....

लक्ष्मी दी की आँखों में बेचैनी है। उस अँधेरे में लेवल क्रॉसिंग के गेट के
खड़ी वह बड़ी असहाय लग रही है। सचमुच अगर दीपंकर इस समय न आ गया
तो वह अकेली न जाने कहाँ मिस्टर दातार को ढूँढ़ने निकल जाती।

दीपंकर रुक गया। बोला — आप कहाँ जायेंगी?

लक्ष्मी दी बोली — चल, उधर जरा देख लूँ। भला इतनी देर में वह
दूर जायेगा। शायद उसी तरफ गया है। चल, तू भी चल। तू रहेगा तो ज
पाऊँगी।

— आप कब घर से निकली हैं?

...दी बोली — अरे, मैं तो खाना बना रही थी। जरा देर के

हटा होगा कि देखा दरवाजा बंद करना भूल गयी हूँ। फिर जो सोचा था वही हुआ, उठकर देखा कि कमरा खाली है।

लक्ष्मी दी के साथ दीपंकर को भी चलना पड़ा। थोड़ी दूर पर था बुद्धमंदिर। सँकरी गलियाँ। दोनों तरफ पड़ती और झाड़-झंखार। उसके बाद लेक। बीच-बीच में गैस की बत्ती जल रही हैं। वह भी काफी दूर-दूर। अँधेरे में कुछ साफ नहीं दिखाई पड़ता। बहुत दूर एक आदमी धुँधली परछाईं की तरह हिल रहा है। इतनी दूर से उसे पहचानना मुश्किल है। उस दिन तो मिस्टर दातार कालीघाट के श्मशान में पहुँच गया था। आज भी अगर वहाँ चला जाय? उतनी दूर चले जाने पर क्या वह ढूंढ़ने से मिलेगा? पागल आदमी है, उसे किसी बात का ख्याल तो नहीं रहता। जहाँ मन होगा चल देगा। फिर शायद पुलिस ही उसे पकड़ ले!

दीपंकर बोला — गलती आपकी है। आपको थोड़ा ख्याल रखना चाहिए था।

लक्ष्मी दी कुछ नहीं बोली। सिर्फ आगे-आगे चलने लगी। उस धुँधली परछाईं का अनुसरण कर चलने लगी। दीपंकर भी पीछे-पीछे चलता रहा। दिन भर वह दफ्तर में खटता रहा। उसके बाद मिस माइकेल के घर जाना पड़ा। उसे वहीं से सीधे घर चले जाना चाहिए था। लेकिन वह यहाँ चला आया। यहाँ आने की क्या जरूरत थी!

— वही तो, वही शायद शंभु है!

लक्ष्मी दी जल्दी-जल्दी बढ़ गयी। लेक के आसपास कहीं कोई दिखाई नहीं पड़ा। दीपंकर डरने लगा। इतनी रात को लक्ष्मी दी जैसी लड़की को लेकर यहाँ घूमना क्या ठीक है? यहाँ कितनी वारदातें हो जाती हैं। रात ज्यादा होते ही तरह-तरह के बदमाश लोग यहाँ जुटते हैं।

दीपंकर जल्दी-जल्दी लक्ष्मी दी की बगल में चला गया। दूर गैस-बत्ती के नीचे मानो मिस्टर दातार धीरे-धीरे बेमतलब चला जा रहा है। लक्ष्मी दी कुछ बोली नहीं, तेज कदमों से चलती चली गयी।

लेकिन थोड़ी दूर जाते ही गलती समझ में आ गयी। कोई उत्तर भारतीय सज्जन भोजन के बाद घूमने निकला है!

दीपंकर ने कहा — देखा न! क्या इस तरह मिस्टर दातार को ढूंढ़ना संभव है?

लक्ष्मी दी सचमुच निराश हो गयी। वह कुछ बोली नहीं।

दीपंकर बोला — चलिए, लौटिए। इस तरह ढूंढ़कर आप उनको नहीं पा सकतीं, बल्कि थाने में खबर करना ठीक होगा ....

बहुत समझा-बुझाकर दीपंकर लक्ष्मी दी को वापस ले चला।

चारों तरफ काफी अँधेरा है। आसपास की नालियों से झींगुरों की झनकार उठ रही है। लक्ष्मी दी अनमनी चल रही है। लेक के बाद बुद्धमंदिर की बगल से सीधा

है।

लक्ष्मी दी बोली — जानता है दीपू, अब मैं समझती हूँ कि मेरे कारण शंभु
ह दशा है। अगर मैं न होती तो वह बीमार भी न पड़ता।

दीपंकर बोला — लेकिन उस आदमी को आप क्यों अपने पास रहने देती हैं?
क्यों आप लोगों के साथ रहता है? जानती हैं, वह आदमी ठीक नहीं है।

लक्ष्मी दी ने निगाह ऊपर की। उसने पूछा — क्यों?

दीपंकर बोला — आप बुरा न मानें, कल आपने चिट्ठी भेजी थी, इसीलिए मैं
आया था। आपने कहा था, इसीलिए मैंने अनंत बाबू से आज दफ्तर आने के लिए
कहा था ....

— क्या वह तेरे पास नहीं गया था?

दीपंकर बोला — गया था ....

लक्ष्मी दी ने पूछा — वह काम उसे मिल गया है न?

दीपंकर बोला — कह नहीं सकता। शायद मिला हो। लेकिन मैं बेमतलब
रॉबिन्सन साहब के पास शर्मिंदा हुआ। आपका ख्याल कर मैंने साहब से कह रखा
था। साहब भी राजी हो गया था। लेकिन देखा कि अनंत बाबू दफ्तर में आकर सीधे
मिस्टर घोषाल के कमरे में चला गया।

— अरे!

दीपंकर बोला — सुनकर शायद आप विश्वास नहीं करेंगी। न देखने पर मैं भी
विश्वास नहीं करता। मैंने अनंत बाबू को बुलाया। अपना काम छोड़कर मैं दिन भर
उसके लिए बाहर खड़ा रहा, लेकिन वह मुझे पहचान न सका। मानो गरज मेरी थी
और काम मेरा था ....

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन अनंत ने तुझे देखकर क्या कहा?

— मैंने बुलाया तो अनंत बाबू ने मुझे देखा। फिर भी उसने मानो मुझे प
जाना नहीं। वह सीधे मिस्टर घोषाल के कमरे में चला गया। मैंने साहब से कह र
था। साहब ने भी कहा था कि काम हो जायेगा। इसलिए अनंत बाबू मेरे पास आ
तो उसका एक पैसा न लगता।

लक्ष्मी दी बोली — खैर, तू बुरा मत मानना। उधर मिस्टर घोषाल क
पर राजी हो गया है!

दीपंकर बोला — भले ही कम पैसा हो, लेकिन घूस देने की क्या जरू
जानती हैं, तैंतीस रुपये घूस देकर मेरी नौकरी लगी है! वह बात मैं कभी
सकता।

लक्ष्मी दी बोली — संसार में सब लोग तो तेरे समान नहीं हैं। यह
है। इस बुरी दुनिया में बुरा हुए बिना आदमी कैसे जिंदा रह सकता है

दीपंकर की पीठ पर हाथ रखकर लक्ष्मी दी उसे सांत्वना देने लगी ।

बोली — सबको तू अपने समान मत समझना, इस संसार में अच्छे भी हैं और बुरे भी — बुरे ही ज्यादा हैं । जब सबको लेकर चलना है, तब दुःखी होने से कैसे चलेगा ।

चलते-चलते दोनों लेवल क्रॉसिंग के पास आ गये ।

दीपंकर बोला — आप दुःखी होने की बात कर रही हैं । आप का काम देखकर भी तो मन दुःखी होता है ।

— मेरा काम ? मैंने क्या किया है ?

दीपंकर बोला — जरा सोचिए, आप मिस्टर दातार के साथ कितना बड़ा अन्याय रही हैं ?

लक्ष्मी दी दीपंकर का अभिप्राय समझ नहीं पायी । वह दीपंकर का मुँह देखने लगी ।

दीपंकर बोला — आपमें क्या एक दोष है ? हजारों दोष हैं ! आपने सती को कष्ट दिया है, अपने बाप को कष्ट दिया है, अब आप मिस्टर दातार को कष्ट दे रही हैं ....

लक्ष्मी दी हँसने लगी ।

दीपंकर बोला — हँसिए नहीं । आपको शरम आनी चाहिए । अब मैं छोटा था, तब समझ नहीं सकता था । उस समय मैं समझता था कि सब आपको कष्ट देते हैं, सब आप पर अत्याचार करते हैं, सब आपको उत्पीड़ित करते हैं । आपका कष्ट देखकर मुझे कष्ट होता था । सबसे आपके कष्ट के बारे में कहा है, लेकिन अब देख रहा हूँ कि मुझसे गलती हुई थी ....

— क्यों ? गलती क्यों हुई ?

— गलती नहीं है ? अनंत बाबू आपका कौन है ? उसी के कारण मिस्टर दातार का दिमाग खराब हो गया है । उससे आपका क्या सम्पर्क है ? क्यों आप उससे रुपया लेकर खर्च चलाती हैं ?

लक्ष्मी दी फिर हँसी । बोली — इसलिए तुझे इतना गुस्सा है ?

— मुझे क्यों गुस्सा होगा लक्ष्मी दी ! गुस्सा मुझे नहीं आता । मुझे आपके लिए अफसोस होता है । आप बाप का धन ऐश्वर्य, सुख-आराम, सब क्या इसीलिए छोड़ आयीं ? अनंत बाबू के साथ एक कमरे में रहने के लिए ? आपको मालूम है कि अनंत का चरित्र कितना बुरा है ?

लक्ष्मी दी बोली — तू सचमुच गुस्सा कर रहा है, अब चुप हो जा ....

दीपंकर बोला — चुप नहीं करूँगा । आपसे मैं सारी बात कहकर तब जाऊँगा, इसीलिए इतनी रात को आया हूँ । नहीं तो मैं घर ही चला जाता । फिर भी आपसे कहने के लिए चला आया — सोचा, आप शायद नहीं जानतीं, इसीलिए आपको

कर देना जरूरी है।

लक्ष्मी दी बोली — बता। क्या कहना चाहता है ?

दीपंकर बोला — मालूम है, अनंत बाबू शराब पीते हैं ?

लक्ष्मी दी जोर से हँस पड़ी। बोली — पीता है तो पीने दे, तेरा क्या ?

दीपंकर लक्ष्मी दी की बात सुनकर स्तंभित हो गया। उसने सोचा था कि यह
र लक्ष्मी दी चौंक पड़ेगी! लेकिन लक्ष्मी दी ने इस बात को बड़े साधारण ढंग
या !

लक्ष्मी दी बोली — शराब तो पीने को चीज है, नहीं पियेगा ?

— आप क्या कह रही हैं ?

लक्ष्मी दी बोली — तेरी उम्र बढ़ने में क्या होगा दीपू, तू अब भी बच्चा है!
री बात सुनकर हँसी आती है। अनंत शराब पीता है, यह तू नहीं जानता था ?
राब तो शंभु भी पीता था। फिर शराब पीते ही क्या आदमी एकदम बुरा हो
जाता है ?

दीपंकर कोई जवाब नहीं दे सका। वह कुछ देर लक्ष्मी दी के मुँह की तरफ
देखता रहा। क्या कह रही हैं लक्ष्मी दी ? लक्ष्मी दी यह कहाँ उतर आयी है! उसका
इतना पतन हो गया है !

लक्ष्मी दी बोली — अनंत शराब पीता है, यही कहने के लिए इतनी रात को
जहमत उठाकर तू मेरे पास आया है! क्यों ? तू खुद शराब नहीं पीता ?

दीपकर बोला — मैं शराब पियूंगा ?

— क्यों, पीने से क्या होता है ? तुझमें अभी तक ये सब अंधविश्वास है ? तू
अभी तक बड़ा नहीं हुआ दीपू! अब कब होगा रे ?

यह कहकर लक्ष्मी दी सुनसान रास्ते में खिलखिलाकर हँसने लगी।

दीपंकर चुप रहा। उसे कुछ कहने की इच्छा नहीं हुई।

लेवल क्रॉसिंग पर आकर लक्ष्मी दी बोली — रात काफी हो गयी है, अब तू
घर जा, शायद तेरी माँ सोच रही है ..

दीपकर बोला — माँ तो सोच रही है, लेकिन मिस्टर दातार आज रात घर
न लौटे तो ?

लक्ष्मी दी बोली — पहले भी इस तरह कई बार निकल गया था, लेकिन फि
लौट आया। वह लौट आयेगा, तू जा ..

दीपकर बोला — चलिए, आपको घर पहुँचा दूँ ....

लक्ष्मी दी बोली — मैं खुद चली जाऊँगी — तू मत डर।

दीपकर बोला — आपके लिए नहीं डरता लक्ष्मी दी, मैं अपने लिए ड
है ....

दीपंकर बोला — आज अनंत बाबू को ऐसी जगह देखा और ऐसी जगह में देखा कि वह सब कहने पर आप ही अनंत बाबू को घर से निकाल देंगी। मैंने जो कुछ देखा है उसके बाद किसी भले आदमी के घर में अनंत बाबू को घुसने देना ठीक नहीं है ....

लक्ष्मी दी ने पूछा — तूने उसे कहाँ देखा ?

दीपंकर बोला — वह बड़ी गंदी जगह है ! ऐंग्लो-इंडियन मुहल्ले में मिस्टर घोषाल के साथ उसे देखा। उनके साथ दो लड़कियाँ भी थीं। मैं उनको देखकर छिप गया।

— अनंत वहाँ किसलिए गया था ?

— यह मैं कैसे जानूँगा ? वहाँ लोग जिसलिए जाते हैं, शायद उसी लिए गया था। छी ! वहाँ देखने के बाद मुझे अनंत बाबू से घृणा हो गयी है। यही कहने के लिए मैं आपके पास आया हूँ।

लक्ष्मी दी चुप रही।

दीपंकर बोला — इसी लिए मैं आपसे कहने आया कि आपको रुपये की जरूरत हो तो आप मुझसे ले सकती हैं। मैं हर महीने आपके घर का सारा खर्च दूँगा, लेकिन अनंत बाबू को निकाल बाहर कीजिए। वैसे लोगों को घर में आने देना ठीक नहीं है।

लक्ष्मी दी अब भी कुछ न बोली।

दीपंकर कहने लगा — आप शायद सोच रही हैं कि मैं अनंत बाबू के खिलाफ क्यों इतना कह रहा हूँ ? इसमें मेरा क्या स्वार्थ है ? लेकिन मेरा स्वार्थ है आपके और मिस्टर दातार के लिए।

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन मुझे तो घर का खर्च चलाना होगा ....

दीपंकर बोला — मैं आपके घर का खर्च चलाऊँगा ....

लक्ष्मी दी बोली — हट ! सिर्फ घर का खर्च चलाना नहीं है, शंभु का भी इलाज है, उसके इलाज के लिए काफी पैसा खर्च करना पड़ता है।

दीपंकर बोला — बताइए, हर महीने आपको कितने रुपये चाहिए ? बताइए न, हर महीने आपको कितने रुपये की जरूरत पड़ती है ?

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन मैं तुझसे रुपया क्यों लूँगी ? तेरी माँ क्या सोचेगी ?

दीपंकर बोला — आफिस की तनख्वाह मैं माँ को दूँगा और सुबह-शाम आपके लिए ट्यूशन करूँगा ....

मक्ष्मी दी बोली — ऐसा नहीं होता ....

क्यों नहीं होता ? अगर रुपये के लिए आपको अनंत बाबू की जरूरत है तो मैं आपको रुपया दे रहा हूँ, आपका सारा खर्च चला रहा हूँ, यहाँ तक कि मिस्टर दातार के इलाज का खर्च भी दूँगा। फिर एक ऐसी दवा है जो लगाने से मिस्टर दातार ठीक हो सकते हैं ....

— कौन सी दवा ?

दीपंकर बोला — लेकिन मैं दवा ला दूँगा तो आप मिस्टर दातार को नहीं

…गा। अनन्त बाबू जैसा आदमी है, वह तो चाहेगा कि मिस्टर दातार ठीक न हों।

— कैसी दवा है, बता न।

दीपंकर बोला — मेरे दफ्तर के एक आदमी की बीबी का पाँच साल से दिमाग …ाब था, आखिर वहाँ दवा लगाने से ठीक हुआ। सिर्फ दवा क्यों, आप लोगों के खाने …हने का खर्च और मकान का किराया सब मैं दूँगा, आप उसके लिए चिन्ता न करें। …र बहुत जल्दी मुझे अच्छी तरक्की मिलने वाली है — गाँगुली साहब मुझे डी० …० आई० बना देगा।

दोनों चलते-चलते काफी दूर आ गये।

दीपंकर बोला — अब रही मकान की बात। अघोर नाना का मकान खाली …क खाली है। जब से चाचा-चाची गये हैं, तब से कोई किरायेदार वहाँ नहीं आया। आप उस मकान में चल सकती हैं।

— लेकिन किराया बहुत ज्यादा है।

— आप किराये के बारे में क्यों सोच रही हैं? किराया मैं दूँगा। फिर मैं कहूँगा तो अघोर नाना वह मकान पन्द्रह रुपये में दे सकते हैं। नाना मुझसे बहुत प्यार करते हैं। फिर नाना नहीं रहेंगे तो छिटे और फोंटा भी मुझे बहुत मानते हैं। मैं जो भी किराया दूँगा, उसी से वे खुश हो जायेंगे। आप उनको जितना बुरा समझती हैं, वे उतने बुरे नहीं हैं।

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन तू हम लोगों के लिए इतना क्यों करेगा?

दीपंकर बोला — यह आपको सोचने की जरूरत नहीं है। आपको सिर्फ रहने से मतलब है न?

लक्ष्मी दी मानो दीपंकर के सुझाव से सहमत हो गयी। मानो वह सुझाव पर… गौर करने लगी। वहाँ रहने से दीपंकर पास रहेगा और वह वक्त बेवक्त देखभाल कर… सकेगा। मिस्टर दातार के इलाज में भी आसानी होगी।

दीपंकर बोला — आप लोगों को कुछ नहीं करना पड़ेगा। मैं हूँ, मेरी माँ है… छिन्दी दी है, फिर वह आपका पुराना मुहल्ला है, वहाँ आप इतने दिन रही हैं, आप… किसी बात की तकलीफ नहीं होगी लक्ष्मी दी, आप चलिए। यहाँ आप अकेली… रह सकेंगी। आप जब बहूबाजार में थीं उसी दिन मैंने आपसे चले आने के लिए कहा था…

— और अनन्त?

लक्ष्मी दी मानो अनन्त बाबू का नाम लेते समय घबड़ायी। बोली —… क्या कहूँगी?

दीपंकर बोला — आप उससे इतना डरती हैं?

लक्ष्मी दी बोली — डरना नहीं, लेकिन उसने इतने दिन हम लोगों की… …ती है, जितना रुपया देकर हम लोगों का उपकार किया है, अब उस…

दीपंकर बोला — यही कहेंगी कि तुमने हम लोगों का उपकार किया है, इसलिए हम तुम्हारा एहसान मानते हैं, लेकिन अब हम तुम्हें तकलीफ देना नहीं चाहते ।

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन तू नहीं जानता कि उसका उपकार जीवन भर भूला नहीं जा सकता । वह न होता तो हमें भूखों मरना पड़ता । हमारी मुसीबत के समय उसने जितना किया, उतना कोई किसी के लिए नहीं करता ....

दीपंकर बोला — लेकिन उसने जो कुछ किया है, उसमें उसका स्वार्थ है ।

— क्यों ? स्वार्थ कैसा ?

लक्ष्मी दी ने दीपंकर की तरफ देखा ।

दीपंकर बोला — आप नहीं जानतीं, कैसा स्वार्थ है ?

— नहीं । नहीं जानती ।

दीपंकर बोला — आप अपने को इस तरह धोखा न दीजिए । इसी को कहते हैं मन को भुलावा देना । लेकिन जिनको आँखें हैं, उनको आप कैसे समझा सकती हैं ? उनके लिए आपके पास क्या जवाब है ?

लक्ष्मी दी बोली — किस बात का जवाब ?

लक्ष्मी दी मानो समझकर भी समझना नहीं चाह रही थी ।

दीपंकर बोला — आप नहीं जानतीं कि आप लोगों के लिए अनन्त बाबू क्यों इतना करता है ? उसे क्या लोभ है ? किस लोभ से अनंत बाबू को आपसे इतनी हमदर्दी है ? क्या आपसे उसे कुछ भी नहीं मिलता ? मिस्टर दातार के पागल होने के पीछे क्या उसका हाथ नहीं है ? व्यापार में मिस्टर दातार का इतना नुकसान हुआ, क्या इसके पीछे अनंत बाबू की कोई कारस्तानी नहीं है ?

लक्ष्मी दी चुपचाप चलती रही ।

दीपंकर बोला — आप देखने में खूबसूरत हैं, आपमें रूप है, क्या आप शीशे में यह भी नहीं देख पातीं ? अनंत बाबू ने आपको कितना दिया है ? आपका कितना उपकार किया है ? आपके रूप के लिए इससे भी ज्यादा उपकार करनेवालों की कमी कलकत्ते में नहीं है ।

लक्ष्मी दी अचानक मुँह दबाकर हँसी । उसने दीपंकर की तरफ देखा ।

कहा — क्यों रे, तू भी क्या इसीलिए मेरा इतना उपकार करना चाहता है ?

दीपंकर बोला — मेरी बात अलग है ।

लक्ष्मी दी बोली — क्यों ? अलग क्यों है ? तू भी तो मर्द है ?

थोड़ी देर के लिए दीपंकर के मुँह से कोई बात नहीं निकली । वह लक्ष्मी दी के पास से जरा हट आया ।

सहसा लक्ष्मी दी ने दीपंकर का हाथ पकड़कर खींचा ।

कहा — क्यों शरमा रहा है ? बोल न ....

दीपंकर ने हाथ छुड़ाने की कोशिश की । लेकिन लक्ष्मी दी ने कसकर हाथ

...ता था।

लक्ष्मी दी कहने लगी — सारी कोशिश करने पर भी तू मुझसे भाग नहीं [सकता]। चल, मकान के अन्दर चल।

दरवाजे का ताला खोलकर लक्ष्मी दी अन्दर गयी। दीपंकर भी गया।

अँधेरे कमरे में जाकर लक्ष्मी दी ने बत्ती जलाकर कहा — बैठ, यहीं बैठ ....

दीपंकर बैठा। बैठकर वह बोला — बहुत देर हो गयी है, अब घर जाऊँ ....

लक्ष्मी दी अचानक एकदम सटकर बैठी। बोली — क्यों रे, इतनी जल्दी क्यों ...ता रहा है ? अभी तो यहाँ कोई नहीं है। शंभु भी नहीं है और [illegible] भी नहीं।

दीपंकर ने थोड़ा हटकर बैठना चाहा। लेकिन लक्ष्मी दी ने उसका हाथ जोर [से] पकड़ लिया।

दीपंकर बोला — छी !

लक्ष्मी दी दीपंकर की आँखों में देखने लगी और हँसने लगी।

दीपंकर बोला — क्या आप इन्सान नहीं हैं लक्ष्मी दी ? छि: !

लक्ष्मी दी हँसती हुई बोली — अगर इन्सान होती तो क्या आज मेरी यह दशा होती ? तू समझ नहीं सकता ? अगर मैं इन्सान होती तो क्या [illegible] में, दिन में अपना पेट भरती ? अगर मैं इन्सान होती तो क्या [illegible] को छोड़कर शंभु के साथ भाग आती ? अगर मैं इन्सान होती तो क्या अँधेरे में अकेली घूमती ? तू तो मुझसे छोटा है, अगर मैं इन्सान होती तो क्या तुझे कमरे में बुलाकर तुझसे यहाँ बैठी गप्प लड़ाती ? क्या तू मुझे इन्सान समझता है ?

इतना कहकर लक्ष्मी दी हँसती हुई लोटपोट होने लगी।

दीपंकर एकटक लक्ष्मी दी की तरफ देखता रहा। यही लक्ष्मी दी आज कितना ...वे गिर गयी है ! कहाँ आकर खड़ी हो गयी है !

दीपंकर बोला — आप सब कुछ जानकर पाप कर रही हैं लक्ष्मी दी ....

लक्ष्मी दी बोली — आज मैं न कुछ जानती हूँ और न पाप क्या है जानती हूँ, सिर्फ जिंदा रहने के लिए जो करना चाहिए, वही कर रही हूँ ....

दीपंकर बोला — लेकिन इस तरह आप कितने दिन जिंदा रहेंगी ? आप तो मिस्टर दातार की तरह पागल हो जायेंगी !

लक्ष्मी दी बोली — पागल होने पर तो बच जाऊँगी। सुख-दुःख का ज्ञान ... रहेगा। शंभु इसी लिए बन गया है। मैं अपने लिए डरती हूँ।

— कैसा डर ?

लक्ष्मी दी बोली — कई बार [illegible] [illegible] स्टेशन के पास [illegible] ... हूँ। जब ट्रेन आती है और पाँव के नीचे धरती धड़कने लगती है, तब [illegible] ... कि इसके सामने कूद पड़ूँ और सारा झमेला खत्म कर दूँ ....

... बोला — [illegible] रहा है कि अब [illegible] [illegible] [illegible] ...

नहीं है ....

लक्ष्मी दी बोली — लेवल-क्रॉसिंग का जो गेटमैन है वह कभी-कभी मुझे अकेली खड़ी देखकर आश्चर्य में पड़ जाता है।

— कौन ? भूषण ?

— उसका नाम नहीं जानती। उसने बहुत बार मुझे देखा है। पता नहीं वह क्या सोचता है ! तेरी तरह वह भी शायद सोचता है कि मेरा दिमाग खराब हो गया है !

दीपंकर बोला — फिर एक काम कीजिए लक्ष्मी दी। आप पिताजी का पता दीजिए, मैं उनको खत लिख दूँगा। बाप से माफी माँगने में कोई शरम नहीं है।

लक्ष्मी दी गंभीर हो गयी। बोली — नहीं।

दीपंकर बोला — आप पता दीजिए चाहे न दीजिए, मैं आपके पिताजी को चिट्ठी जरूर लिखूंगा ....

लक्ष्मी दी बोली — मैं सब छोड़ सकती हूँ दीपू, लेकिन अपना अहंकार नहीं छोड़ सकती। अहंकार छोड़ने पर मैं कैसे जिंदा रहूँगी ? अहंकार के भरोसे मैं घर से निकली थी, जब वह भी नहीं रहेगा तब मेरा अपना कहने के लिए कुछ भी नहीं रहेगा।

— लेकिन किस बात का अहंकार है आपका ? रूप का ?

लक्ष्मी दी बोली — अहंकार का क्या कोई नाम होता है रे ? अहंकार के लिए क्या कोई बहाना ढूंढ़ना पड़ता है ? जिसमें अहंकार है, उसके लिए सब कुछ तुच्छ है।

आपके लिए क्या जीवन से बड़ा अहंकार हो गया ?

लक्ष्मी दी बोली — जो जिंदा है, वही जीवन से लिपटा रहता है। लेकिन मैं तो जिंदा नहीं हूँ — जिंदा रहना भी नहीं चाहती।

दीपंकर बोला — लेकिन जब आप मेरे हाथ मिस्टर दातार को चिट्ठी भेजा करती थीं और जब उनकी बीमारी की खबर पाकर घर छोड़कर चली आयी थीं, तब तो आपने जिंदा रहना चाहा था ?

लक्ष्मी दी बोली — इन्सान बहुत कुछ चाहता है, लेकिन ढंग से कौन चाह सकता है ?

— लेकिन उस तरह चाहने से आपको किसने रोका था ? किसने आपको मना किया था ?

लक्ष्मी दी बोली — अभी कहा न, मेरे अहंकार ....

दीपंकर बोला — अगर आप इतना समझती हैं तो अनंत बाबू को क्यों बर-दाश्त करती हैं ? क्यों आप उसे भगा नहीं सकतीं ? क्यों उसके सामने हँसती हैं ? क्यों उससे हँसकर बात करती हैं ? क्या यह उचित है ?

— मैं कब उसके सामने हँसी हूँ ? मैंने कब उससे हँस-हँसकर बात की है ?

दीपंकर बोला — आप समझ रही हैं कि मैंने कुछ नहीं देखा। अपनी आँखों

कुछ देखकर मैं कह रहा हूँ। कल रात मनीबैग वापस लेने आया तो देखा मिस्टर अपनी धुन में चिल्ला रहे हैं और इस कमरे में आप अनंत बाबू के साथ गाना बैठी हैं और हँसती-हँसती लोटपोट हो रही हैं। मिस्टर दातार की तरफ किसी याल नहीं है। अगर इसको भी आप अहंकार कहती हैं तो कहूँगा कि मैं अहंकार अर्थ नहीं समझता।

लक्ष्मी दी ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

दीपंकर कहने लगा — आपके पास क्यों आता हूँ, यह मैं नहीं जानता। शायद आपसे प्यार करता हूँ, इसीलिए आता हूँ। लेकिन आप बुरा मानें या जो करें, यह ब मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। अगर मैं अनत बाबू का आना बद नहीं कर सकता तो आपके पिताजी को चिट्ठी में सब लिख दूँगा ....

लक्ष्मी दी अब कुछ नरम पड़ी।

बोली — ठीक है, तू जो कहेगा मैं वही करूँगी। बता, क्या करना होगा ?

दीपंकर बोला — आप ईश्वर गांगुली लेन के पुराने मकान में आ जाइए, अब भी वह मकान खाली है।

— किराया ?

दीपंकर बोला — किराये की बात आपको सोचना नहीं पड़ेगा, वह मैं मम- झूँगा। इसके अलावा आपको कुछ भी नहीं सोचना है। मिस्टर दातार का इलाज मैं कराऊँगा, सारा खर्चा मैं दूँगा।

— हम लोगों के लिए तू क्यों खर्च करेगा ?

दीपंकर बोला — करूँगा! जरूरत पड़ने पर मैं ऑफिस के बैंक से उधार लूँगा ....

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन इस तरह कब तक खर्च करेगा ? आखिर तेरी भी घर-गृहस्थी होगी, बीवी आयेगी, बाल-बच्चे होंगे — तब !

— उससे बहुत पहले मिस्टर दातार ठीक हो जायेंगे।

— अगर न हो ?

अचानक बाहर कुंडी खटखटाने की आवाज हुई।

दीपंकर बोला — शायद मिस्टर दातार आये हैं।

लक्ष्मी दी ने जाकर दरवाजा खोला तो अनंत बाबू अन्दर आया। लक्ष्मी उसके आगे-आगे आयी।

अनंत बाबू को देखकर दीपंकर ने मुँह फेर लिया। उसने लक्ष्मी दी तरफ कर कहा — अब मैं चलूँ लक्ष्मी दी।

लक्ष्मी दी बोली — जायेगा ?

— हाँ, जाऊँगा ....

कहकर दीपंकर ने सामने देखा तो पाया कि अनंत वावू उसी की तरफ देख रहा था। अनंत वावू की आँखों में कठोर उजड्डपन था। मानो दारुण घृणा से वह देख रहा हो। दीपंकर उस दृष्टि की उपेक्षा कर कमरे से निकलने लगा .लेकिन लक्ष्मी दी ने अचानक वह वात पूछकर झमेला खड़ा कर दिया।

लक्ष्मी दी ने अनंत वावू से पूछा — उस काम का क्या हुआ अनंत ?

अनंत वावू ने गंभीर स्वर में कहा — हो गया है।

— क्या तुम दीपू के पास नहीं गये ? वह तुम्हारे लिए दिन भर चिन्ता कर रहा था। उसने रॉविन्सन साहव से कह रखा था। कितना रुपया लेगा मिस्टर घोपाल ?

अनंत वावू वोला — यह सव सुनकर तुम क्या करोगी ? वह ले, न ले जानने से तुम्हें फायदा ?

दीपंकर के कान में यह वात वुरी तरह चुभी। मानो यह वात लक्ष्मी दी के लिए नहीं, दीपंकर के लिए कही गयी हो।

दीपंकर पलटकर खड़ा हो गया। वोला — लेकिन आपने कहा था कि आप मुझसे मिलेंगे। इसलिए मैंने रॉविन्सन साहव से कह रखा था।

इस वात का जवाव न देकर अनंत वावू ने लक्ष्मी दी से पूछा — यह कव आया है ?

लक्ष्मी दी वोली — वहुत देर हो गयी है। शंभु फिर निकल गया है। उसी को ढूंढ़ने मैं गयी थी। तभी दीपू से भेंट हुई। वह यहीं आ रहा था।

अनंत वावू ने कहा — और अव तक वही सव वातें हो रही हैं ?

लक्ष्मी दी हँसकर वोली — दीपू से मेरी हमेशा जो वातें होती हैं, वही हो रही थीं। लेकिन तुम नाराज क्यों हो रहे हो ?

अनंत वावू ने मानो लक्ष्मी दी को डाँट दिया। कहा — उससे इतनी क्या वातें करती रहती हो ?

अव दीपंकर सामने आ गया। अनंत वावू के सामने आते ही उसे शराव की वू मिली। उसे लगा कि अनंत वावू होश में नहीं है। लेकिन उसका इतना उजड्डपन भी वरदाश्त नहीं किया जा सकता। विशेपकर लक्ष्मी दी से इस तरह वात करने की उसे हिम्मत कैसे हो गयी ?

अनंत वावू ने लक्ष्मी दी से कहा — उसे मना नहीं कर सकतीं ? वह यहाँ क्यों आता है ?

लक्ष्मी दी भी इस सवाल पर आश्चर्य में पड़ गयी। वोली — तुम किससे क्या कह रहे हो ?

अनंत वावू वोला — मैं ठीक कह रहा हूँ। रेलवे का मामूली क्लर्क है, वह यहाँ क्यों आता है ? किस लालच से आता है ? क्या चाहता है ?

दीपंकर के सारे बदन में जलन होने लगी। उसने बड़ी मुश्किल से अपने को सँभाल लिया।

बोला — लक्ष्मी दी, आप उनसे चुप रहने को कहिए, नहीं तो अब बरदाश्त के बाहर होता जा रहा है।

लक्ष्मी दी ने दीपंकर के सामने आकर उसके दोनों हाथ पकड़ लिये। कहा — तू जा दीपू, उसकी बात का ख्याल न कर ....

अनंत बाबू ने लक्ष्मी दी से कहा — हाँ, ज्यादा बात करेगा तो मैं तुम्हारे भाई का लिहाज नहीं करूँगा। इसलिए उससे कह दो, यहाँ से जाय ....

लक्ष्मी दी दीपंकर को ठेलती हुई एकदम गलियारे में ले गयी। उसने दरवाजा भी खोल दिया। कहा — आज तू भी गुस्से में आ गया है। अब जा ....

दीपंकर बोला — आप सिर्फ मेरा गुस्सा देख रही हैं ....

लक्ष्मी दी बोली — वह उसी तरह है, उसकी बात जाने दे ....

दीपंकर बोला — लेकिन मैं ऐसा नहीं कह सकता। आप उसके साथ रहती हैं इसलिए ऐसा कह रही हैं। आपको वह खाने और पहनने को देता है, इसलिए आप उसे खुश रखने की कोशिश करती हैं। मुझे तो आपकी बात सोचकर तकलीफ हो रही है।

लक्ष्मी दी बोली — मेरी बात छोड़ दे, मैं तो मुर्दा हो गयी हूँ, इसलिए वह सब मुझे बुरा नहीं लगता।

— लेकिन हमारे यहाँ आपके चलने का क्या होगा ?

लक्ष्मी दी बोली — मैंने तो कहा कि जाऊँगी ....

— तो मैं मकान किराये पर ले लूँ ? बाद में आपकी राय बदल तो नहीं जायेगी ?

लक्ष्मी दी बोली — नहीं।

अचानक पीछे अनंत बाबू की आवाज सुनाई पड़ी। उसने कहा — क्या फुस-फुसाकर दोनों में प्रेमालाप हो रहा है ?

यह कहता हुआ अनंत बाबू एकदम पास आ गया।

लक्ष्मी दी बोली — तुम फिर क्यों आ गये ?

अनंत बाबू अचानक लक्ष्मी दी से लिपटकर उसके मुँह के पास मुँह ले गया और बोला — उसके साथ तुम अँधेरे में खड़ी प्रेमालाप करोगी और मैं कुछ नहीं कहूँगा ?

बात खत्म नहीं हो पायी। अनंत बाबू की हिम्मत देखकर दीपंकर पर मानो खून सवार हो गया।

वह बोला — स्काउंड्रेल !

यह कहकर उसने अनंत बाबू के मुँह पर घूँसा जमा दिया। घूँसा अनंत बाबू

के मुँह पर जबर्दस्त पड़ा और वह लड़खड़ाकर जमीन पर गिरा — गिरकर छटपटाने लगा।

एक पल में ही कैसे क्या हो गया दीपंकर को पता भी नहीं चला।

लक्ष्मी दी भी मानो समझ नहीं पायी कि क्या हो गया है। फिर अनंत बाबू की तरफ ध्यान जाते ही वह जमीन पर बैठ गयी और उसके मुँह के पास मुँह ले जाकर पुकारने लगी — अनंत ! अनंत !

अनंत बाबू तकलीफ से छटपटा रहा था। उसमें जवाब तक देने की क्षमता नहीं थी।

लक्ष्मी दी एकाएक खड़ी हुई।

बोली — तूने अनंत को मारा ?

लक्ष्मी दी के इस सवाल से दीपंकर चौंका।

बोला — आप क्या कह रही हैं लक्ष्मी दी ? वह स्काउंड्रेल है ! उसे मार नहीं डाला यही बहुत है ! जो आपके साथ वैसा आचरण कर सकता है, उसे मैं स्काउंड्रेल के अलावा और क्या कहूँगा ?

— चुप रह !

लक्ष्मी दी एकदम गरजी। लक्ष्मी दी की शकल देखकर दीपंकर डर गया।

— तेरी इतनी हिम्मत ! तूने उस पर हाथ छोड़ दिया ? मेरे साथ वह कैसा भी आचरण करे, वह मैं समझूँगी, तू बोलनेवाला कौन है ?

यह कहकर लक्ष्मी दी फिर बैठ गयी और अनंत बाबू का सिर सहलाने लगी। अनंत बाबू के सिर पर हाथ फेरती हुई वह बेचैन-सी पुकारने लगी — अनंत ! अनंत !

अनंत बाबू शायद बेहोश बेखबर है। अँधेरे में उसका चेहरा भी ठीक से दिखाई नहीं पड़ा। लक्ष्मी दी बारबार उसे पुकारती रही — अनंत ! अनंत !

कोई जवाब न पाकर लक्ष्मी दी फिर खड़ी हुई।

बोली — बोल, तूने उसे क्यों मारा ? तू उसे मारनेवाला कौन है ? अगर वह मेरा अपमान करता है तो मैं समझूँगी, तू उसे भला क्यों मारेगा ?

जरा रुककर लक्ष्मी दी बोली — तेरी हिम्मत बहुत बढ़ गयी है ! तुझसे मैं हँस-कर बोलती हूँ तो क्या तू एकदम सिर पर चढ़ जायेगा ? निकल, निकल यहाँ से — अब तुझे मेरे यहाँ आने की कोई जरूरत नहीं है — निकल ...

दीपंकर को धकेलकर लक्ष्मी दी ने एकदम दरवाजे के बाहर कर दिया। उसके बाद उसने धम्म से सदर दरवाजा बंद कर लिया। बाहर अँधेरे में दीपंकर थोड़ी देर स्तम्भित-सा खड़ा रहा। फिर उसने अँधेरे रास्ते पर धीरे-धीरे चलना शुरू किया। उसे लगा कि इतने दिन के विश्वास और इतने दिन के आकर्षण की जड़ को लक्ष्मी दी ने हिला दिया है। मानो सारा रिश्ता ही खत्म हो गया है

सा सड़क पर आ गया है।

रात की आखिरी और खाली ट्राम ईश्वर गांगुली लेन का मोड़ पार कर गयी। दीपंकर तब भी वही बात सोच रहा है। हाजरा रोड का मोड़ आते ही वह चलती ट्राम से उतर गया। पास ही प्रियनाथ मल्लिक रोड है। सती की ससुराल। सती से उसके बाप का पता जरूर मिल जायेगा।

प्रियनाथ मल्लिक रोड से पैदल चलकर दीपंकर एकदम सती के मकान के सामने जा खड़ा हुआ। बहुत बड़ा तिमंजिला मकान। सामने गेट पर दरवान बैठा पहरा दे रहा है।

दीपंकर गेट की तरफ गया। शायद सती अभी सो न गयी होगी। इतनी जल्दी वह क्यों सोयेगी! हर कमरे में बत्ती जल रही है। जरूर सब लोग जाग रहे हैं। सती भी जाग रही होगी।

लेकिन सती अगर दीपंकर को पहचान न पाये! बहुत दिन बाद दीपंकर उससे मिलने जा रहा है। बहुत बड़े घर में उसकी शादी हुई है। मकान के सामने लोहे की रेलिंगवाला गेट है। अन्दर जाने के लिए खडंजा बिछा रास्ता है। मकान के सामने खड़े होने पर अन्दर गैरेज दिखाई पड़ता है। गेट के दोनों छोरों पर ऊपर बिजली की डूम-बत्तियाँ जल रही हैं।

दीपंकर देर तक वहीं इधर-उधर चहलकदमी करता रहा।

उसने सोचा कि सती अभी कहीं से लौटे और उसे देख ले तो बड़ा अच्छा हो। फिर बुलाना न पड़े। लेकिन वैसा न हो तो दीपंकर चिट्ठी या अपना नाम लिखकर पुरजा अंदर भेज सकता है। लेकिन स्लिप पाकर भी सती उससे न मिले तो! अगर वह जवाब ही न दे! अगर वह कह दे कि अभी फुरसत नहीं है तो! दरवान वापस आकर कहेगा — अभी मुलाकात नहीं हो सकती!

दीपंकर को लगा कि वह स्थिति बड़ी मर्मांतक होगी। कोई पहचान न पाने पर मन में बड़ी तकलीफ होती है।

लेकिन लक्ष्मी दी के पिता का पता लेना भी जरूरी है। लक्ष्मी दी की बात से उनको आगाह किये बिना कोई चारा नहीं है। उनको मालूम हो जाने पर सारी समस्याओं का समाधान हो जायेगा। लक्ष्मी दी कहाँ से कहाँ पहुँच गयी है! अनन्त बाबू के चक्कर में पड़कर वह कितना नीचे गिर गयी है। आखिर वह कहाँ किस गहराई में गिर जायेगी, कहा नहीं जा सकता। उसका पहले का रूप, पहले का चाल-चलन, बात करने का ढंग — सब कुछ कितना बदल गया है। उसके बारे में सोचते हुए दीपंकर को बड़ी तकलीफ हुई।

ट्राम में बैठा दीपंकर सारा समय लक्ष्मी दी के बारे में ही सोचता रहा। लक्ष्मी दी को बचाने का अब कौन-सा उपाय रह गया है? उस खाली ट्राम में दीपंकर अकेला

था। इसलिए वह बहुत कुछ सोचता रहा। लक्ष्मी दी ने उसे भगा दिया है इसलिए नहीं, बल्कि लक्ष्मी दी का अध:पतन देखकर ही उसके मन को गहरा आघात लगा है। इस तरह आँखों के सामने लक्ष्मी दी तबाह हो जायेगी! उसके बाद वह समय आयेगा जब लक्ष्मी दी का सारा सौन्दर्य नष्ट हो जायेगा और तब उस अनन्त बाबू के साथ उसे भी पथ की भिखारिन बनना पड़ेगा! उस समय उसकी मदद करनेवाला कोई नहीं रहेगा। तब शायद उसे गड़ियाहाट लेवल-क्रॉसिंग पर ट्रेन के आगे कूदकर आत्महत्या करनी पड़ेगी!

—आप किसको चाहते हैं?

दीपंकर ने एकाएक सामने देखा। एक सज्जन सामने चबूतरे पर खड़ा उसी की तरफ देख रहा है।

—आप किसको ढूँढ रहे हैं?

दीपंकर बोला—बगलवाले मकान में आया हूँ।

—घोष बाबुओं के मकान में?

दीपंकर बोला—जी हाँ, सनातन घोष। फिर वह जरा रुककर बोला—लेकिन इतनी रात को क्या वे जाग रहे होंगे?

उस सज्जन ने कहा—जरूर जाग रहे होंगे। बत्ती तो अन्दर जल रही है। बुलाइए न, सामने दरबान बैठा है। उसी से कहिए, वह बुला देगा।

दीपंकर बोला—जी हाँ, अभी तक यही सोच रहा था। लेकिन इस वक्त बुलाना क्या ठीक होगा? रहने दीजिए, कल देखा जायेगा.

दीपंकर धीरे-धीरे गली से निकलकर सड़क पर आ गया। नहीं, आज नहीं। इतनी रात को किसी घर की बहू से मिलने जाना ही बुरा है। दरबान से अपना परिचय बताना होगा। दरबान शायद उसे सनातन बाबू के ही पास ले जाय। सनातन बाबू के पास जाकर फिर अपना परिचय बताना होगा। पता नहीं, सनातन बाबू कैसे आदमी हैं! इतनी रात को उनकी पत्नी से क्या काम है, यह भी उनसे ही कहना पड़ेगा। फिर तरह-तरह की पूछताछ के बाद सती से मिलने की आज्ञा मिलेगी ही, इसका कोई ठिकाना नहीं है। यदि सनातन बाबू पूछ बैठे कि आप कौन हैं? मेरी पत्नी से आपका कैसा परिचय है तो? तब दीपंकर क्या जवाब देगा? कभी बगल के मकान में रहता था, यही उसका परिचय है। उसका और तो कोई सम्पर्क सती से नहीं है।

छोड़ो!

दीपंकर धीरे-धीरे ईश्वर गांगुली लेन की तरफ चलने लगा। बहुत बड़ा मकान! सती के ससुर का मकान बहुत बड़ा है। अन्दर काफी जगह है। बहुत-से नौकर-चाकर होंगे। कई गाड़ियाँ होंगी। ऐश्वर्य की छाप उस मकान की ईंट-ईंट पर है! मुहल्ले के सब मकानों से वही मकान सबसे बड़ा है। अपने आभिजात्य का दंभ लिये वह मकान सबसे ऊँचा सिर उठाये खड़ा है।

सहसा दीपंकर को लगा कि सती शायद कलकत्ते में नहीं है। २

रात की आखिरी और खाली ट्राम ईश्वर गांगुली लेन का मोड़ पार कर गयी। दीपंकर तब भी वही बात सोच रहा है। हाजरा रोड का मोड़ आते ही वह चलती ट्राम से उतर गया। पास ही प्रियनाथ मल्लिक रोड है। सती की ससुराल। सती से उसके बाप का पता जरूर मिल जायेगा।

प्रियनाथ मल्लिक रोड से पैदल चलकर दीपंकर एकदम सती के मकान के सामने जा खड़ा हुआ। बहुत बड़ा तिमंजिला मकान। सामने गेट पर दरबान बैठा पहरा दे रहा है।

दीपंकर गेट की तरफ गया। शायद सती अभी सो न गयी होगी। इतनी जल्दी वह क्यों सोयेगी! हर कमरे में बत्ती जल रही है। जरूर सब लोग जाग रहे हैं। सती भी जाग रही होगी।

लेकिन सती अगर दीपंकर को पहचान न पाये! बहुत दिन बाद दीपंकर उससे मिलने जा रहा है। बहुत बड़े घर में उसकी शादी हुई है। मकान के सामने लोहे की रेलिंगवाला गेट है। अन्दर जाने के लिए खडंजा बिछा रास्ता है। मकान के सामने खड़े होने पर अन्दर गैरेज दिखाई पड़ता है। गेट के दोनों छोरों पर ऊपर बिजली की डूम-बत्तियाँ जल रही हैं।

दीपंकर देर तक वहीं इधर-उधर चहलकदमी करता रहा।

उसने सोचा कि सती अभी कहीं से लौटे और उसे देख ले तो बड़ा अच्छा हो। फिर बुलाना न पड़े। लेकिन वैसा न हो तो दीपंकर चिट्ठी या अपना नाम लिखकर पुरजा अंदर भेज सकता है। लेकिन स्लिप पाकर भी सती उससे न मिले तो! अगर वह जवाब ही न दे! अगर वह कह दे कि अभी फुरसत नहीं है तो! दरबान वापस आकर कहेगा — अभी मुलाकात नहीं हो सकती!

दीपंकर को लगा कि वह स्थिति बड़ी मर्मांतक होगी। कोई पहचान न पाने पर मन में बड़ी तकलीफ होती है।

लेकिन लक्ष्मी दी के पिता का पता लेना भी जरूरी है। लक्ष्मी दी की बात से उनको आगाह किये बिना कोई चारा नहीं है। उनको मालूम हो जाने पर सारी समस्याओं का समाधान हो जायेगा। लक्ष्मी दी कहाँ से कहाँ पहुँच गयी है! अनन्त बाबू के चक्कर में पड़कर वह कितना नीचे गिर गयी है। आखिर वह कहाँ किस गहराई में गिर जायेगी, कहा नहीं जा सकता। उसका पहले का रूप, पहले का चाल-चलन, बात करने का ढंग — सब कुछ कितना बदल गया है। उसके बारे में सोचते हुए दीपंकर को बड़ी तकलीफ हुई।

ट्राम में बैठा दीपंकर सारा समय लक्ष्मी दी के बारे में ही सोचता रहा। लक्ष्मी दी को बचाने का अब कौन-सा उपाय रह गया है? उस खाली ट्राम में दीपंकर अकेला

था। इसलिए वह बहुत कुछ सोचता रहा। लक्ष्मी दी ने उसे भगा दिया है इसलिए नहीं, बल्कि लक्ष्मी दी का अधःपतन देखकर ही उसके मन को गहरा आघात लगा है। इस तरह आँखों के सामने लक्ष्मी दी तबाह हो जायेगी! उसके बाद वह समय आयेगा जब लक्ष्मी दी का सारा सौन्दर्य नष्ट हो जायेगा और तब उस अनन्त बाबू के साथ उसे भी पथ की भिखारिन बनना पड़ेगा! उस समय उसकी मदद करनेवाला कोई नहीं रहेगा। तब शायद उसे गड़ियाहाट लेवल-क्रॉसिंग पर ट्रेन के आगे कूदकर आत्महत्या करनी पड़ेगी!

—आप किसको चाहते हैं?

दीपंकर ने एकाएक सामने देखा। एक सज्जन सामने चबूतरे पर खड़ा उसी की तरफ देख रहा है।

—आप किसको ढूंढ़ रहे हैं?

दीपंकर बोला—बगलवाले मकान में आया हूँ।

—घोष बाबुओं के मकान में?

दीपंकर बोला—जी हाँ, सनातन घोष। फिर वह जरा रुककर बोला—लेकिन इतनी रात को क्या वे जाग रहे होंगे?

उस सज्जन ने कहा—जरूर जाग रहे होंगे। बत्ती तो अंदर जल रही है। बुलाइए न, सामने दरबान बैठा है। उसी से कहिए, वह बुला देगा।

दीपंकर बोला—जी हाँ, अभी तक यही सोच रहा था। लेकिन इस वक्त बुलाना क्या ठीक होगा? रहने दीजिए, कल देखा जायेगा ....

दीपंकर धीरे-धीरे गली से निकलकर सड़क पर आ गया। नहीं, आज नहीं। इतनी रात को किसी घर की बहू से मिलने जाना ही बुरा है। दरबान से अपना परिचय बताना होगा। दरबान शायद उसे सनातन बाबू के ही पास ले जाय। सनातन बाबू के पास जाकर फिर अपना परिचय बताना होगा। पता नहीं, सनातन बाबू कैसे आदमी हैं! इतनी रात को उनकी पत्नी से क्या काम है, यह भी उनसे ही कहना पड़ेगा। फिर तरह-तरह की पूछताछ के बाद सती से मिलने की आज्ञा मिलेगी ही, इसका कोई ठिकाना नहीं है। यदि सनातन बाबू पूछ बैठे कि आप कौन हैं? मेरी पत्नी से आपका कैसा परिचय है तो? तब दीपंकर क्या जवाब देगा? कभी बगल के मकान में रहता था, यही उसका परिचय है। उसका और तो कोई सम्पर्क सती से नहीं है!

छोड़ो!

दीपंकर धीरे-धीरे ईश्वर गांगुली लेन की तरफ चलने लगा। बहुत बड़ा मकान! सती के ससुर का मकान बहुत बड़ा है! अन्दर काफी जगह है। बहुत-से नौकर-चाकर होंगे। कई गाड़ियाँ होंगी। ऐश्वर्य की छाप उस मकान की ईंट-ईंट पर है। मुहल्ले के सब मकानों में वही मकान सबसे बड़ा है। अपने आभिजात्य का दम लिये वह मकान सबसे ऊँचा सिर उठाये खड़ा है।

सहसा दीपंकर को लगा कि सती शायद कलकत्ते में नहीं है। शायद वह बाप

के पास वर्मा चली गयी है। शादी के बाद एक वार तो लड़कियाँ बाप के पास जाती ही हैं। शायद वहीं वह भी गयी हो। वह बाप से कितना प्यार करती है, इतने दिन वह बाप को छोड़कर कैसे रहेगी ? अगर वह कलकत्ते में होती तो क्या एक दिन भी ईश्वर गांगुली लेन न आती ? दीपंकर को जब पुलिस पकड़ ले गयी थी, तब से दीपंकर की उससे कहाँ भेंट हुई ? लड़कियाँ क्या इतनी जल्दी सब भूल जाती हैं ? क्या इतनी जल्दी भूलना संभव है ? किरण ने उस दिन ठीक कहा था — उनके बारे में तू मत सोचा कर दीपू ! देख लेना, शादी हो जाने के बाद वे तुझे एकदम भूल जायेंगी !

ठीक तो है। लक्ष्मी दी ने ही आज उसे अपमानित कर भगा दिया। जिस लक्ष्मी दी से वह इतना प्यार करता था, वही लक्ष्मी दी ! और सती ! अब उसी सती की ससुराल के सामने प्रार्थी की तरह उसे डरता हुआ खड़ा रहना पड़ता है !

अचानक दीपंकर को लगा कि वह बड़ा अकेला है ! उसका कोई नहीं है। लक्ष्मी दी भी नहीं है। लक्ष्मी दी से उसका जो सम्पर्क था, वह लक्ष्मी दी ने खत्म कर दिया है। सती भी नहीं है। किरण भी नहीं है। सबके सब हैं, लेकिन उसका कोई नहीं है। इस शहर में, इस कालीघाट में सबके पास सब कुछ है, सिर्फ दीपंकर ही साथीहीन अकेला है। मानो उसका इस संसार में कोई काम नहीं है। उसे आज इसके तो कल उसके दरवाजे पर जा खड़ा होना पड़ता है। छिटे की भी अपनी दुनिया है। फोंटा की भी अलग दुनिया है। अपनी-अपनी दुनिया में छिटे और फोंटा सम्राट् और देवता हैं। वे सुखी हैं। गांगुली बाबू की पत्नी भी ठीक हो गयी है। गांगुली बाबू भी आज सुखी हैं। मेमसाहब भी अपना तस्वीरों वाला अलबम और प्रेमपत्र लिये अपनी दुनिया में मस्त है। किरण ? किरण के पास काम की क्या कमी है ? पता नहीं संसार के किस कोने में वह अपना काम कर रहा है। सिर्फ दीपंकर ही आज भी निष्प्रयोजन सड़क पर अकेला घूम रहा है।

कालीघाट के बाजार की तरफ न जाकर दीपंकर ने सीधा रास्ता पकड़ा। गली से वह सीधे ईश्वर गांगुली लेन पहुँच जायेगा। अँधेरी सँकरी गली। दोनों किनारों के मकानों में एक-दूसरे से सटकर कितने ही परिवार रह रहे हैं। किसी-किसी की खिड़की से रोशनी दिखाई पड़ रही है। कोई मकान अँधेरे में डूबा हुआ है। उसमें रहनेवाले लोग सो गये हैं। सबके पास काम है, सबकी आँखों में नींद है — सिर्फ दीपंकर ही मानो इस संसार में घड़ियाँ गिनने आया है ! माँ शायद अब सोचने लगी है। शायद वह बिना खाये बेटे के लिए बैठी है। आज उसके बेटे को तनख्वाह मिली है। तनख्वाह लेकर इतनी देर बाहर घूमना ठीक नहीं हुआ। जिस दिन उसे तनख्वाह मिलती है, वह जल्दी घर लौटकर माँ के हाथ पर रुपया रख देता है। माँ रुपये को गिनकर माथे से लगाती है। उसके बाद वह रुपया लकड़ी के बक्से में रख देती है।

दीपंकर जल्दी-जल्दी चलने लगा। माँ की याद आते ही उसके कदम तेज हो गये।

नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट के पास ही नेपाल भट्टाचार्य लेन है। किरण के मकान

की तरफ देखते ही उसे लगा कि अँधेरा ज्यादा है। शायद किरण की माँ सो गयी है। किरण के बाप के मरने के बाद वह कभी वहाँ नहीं गया।

न जाने क्या हुआ। एकाएक दीपंकर नेपाल भट्टाचार्य लेन में चला गया! किरण के मकान के सामने जाकर वह कुंडी खटखटाने लगा।

— मौसीजी !

कुंडी फिर खटकानी पड़ी। ज्यादा जोर से कुंडी खटखटाने की हिम्मत नही पडी। अँधेरे में उसने एक बार चारों तरफ देखा। किरण के मकान के आसपास अब भी सी० आई० डी० वाले चक्कर लगाया करते है। किरण कहाँ रहता है, यह कोई नही जानता। सारे बंगाल और सारे कलकत्ते में उस जैसे लड़कों ने आग लगा दी है।

दीपकर ने एक बार चारों तरफ देख लिया। कहीं कोई नही है। किरण के बाप के मरने के बाद सी० आई० डी० वालो ने यहाँ ज्यादा निगाह रखना शुरू कर दिया है।

उसने सोचा कि लौट चला जाय। क्या जरूरत है। अँधेरे में वहाँ खड़े रहने पर फिर पुलिसवाले उसे परेशान करने लगेंगे।

लेकिन दरवाजा खुल गया।

अँधेरे में किरण की माँ का चेहरा साफ दिखाई पड़ा।

दीपंकर बोला — मैं दीपू हूँ, मौसीजी ....

— आओ बेटा, आओ ....

दीपंकर बोला — कैसी है मौसीजी ?

— अन्दर आओ बेटा, बताती हूँ।

अँधेरा आँगन। आँगन में एक किनारे कोंहड़े की लतर है। बरामदे में जहाँ किरण का बाप छाती के नीचे तकिया रखकर बैठा रहता था, वहाँ पहुँचते ही दीपंकर की छाती धड़क उठी। लगा कि किरण का बाप तो नही है, लेकिन सारे मकान में उसकी अशरीरी आत्मा घूम रही है मानो वह आत्मा यही कहने आयी है कि मुझे मुक्ति मिल गयी है, लेकिन उसकी बात कोई नही सुन पाता।

— दफ्तर के काम के मारे मैं नही आ सका मौसीजी — आपको कोई दिक्कत तो नहीं है ?

मौसी बोली — दिक्कत हो भी तो क्या करूँगी बेटा! अब मरण हो तो मुझे छुटकारा मिले।

मौसी बगल में खड़ी थी।

दीपंकर बोला — ऐसी बात क्यों कर रही हैं मौसीजी ?

— क्यों न करूँ बेटा, बताओ मेरा कौन है ? मैं किसके लिए जिंदा रहूँगी ?

— क्यो ? किरण तो है ! किरण जैसा बेटा रहते आप ऐसा कह रही है ? किरण तो हमेशा इस तरह घर से दूर नही रहेगा ....

मौसी ने कोई उत्तर नहीं दिया ।

दीपंकर ने जेब से पाँच रुपये का एक नोट निकाला । कहा — आप यह रुपया रखिए मौसीजी, आज मुझे तनख्वाह मिली है । हर महीने मैं आपको पाँच रुपये दिया करूँगा ।

किरण की माँ ने नोट लिया । कहा — अपनी माँ से पूछ लिया है न बेटा ?

दीपंकर बोला — यह मेरा अपना रुपया है मौसीजी, मेरा कमाया हुआ ....

— फिर भी तुम्हारे ऊपर माँ है ।

दीपंकर बोला — अब मैं बड़ा हो गया हूँ, क्या अब भी आप हर बात माँ से पूछने को कहती हैं ?

किरण की माँ ने इसका जवाब नहीं दिया । वह कहने लगी — नहीं बेटा, वह बात नहीं है । लड़के को पाल-पोसकर बड़ा करना कितना मुश्किल काम है, यह माँ ही समझ सकती है । इसलिए वही लड़का जब बड़ा होकर माँ को नहीं देखता, तब माँ के मन में कितना कष्ट होता है, यह दूसरा कैसे समझ सकता है ? फिर वह समझायेगी भी किसे ?

कहकर मौसी आँचल से आँखें पोंछने लगी ।

दीपंकर बोला — किरण जैसा बेटा क्या सबको मिलता है मौसीजी ? आपका बड़ा सौभाग्य है !

मौसी बोली — मेरा मरण होना ही अच्छा है बेटा ! लायक बेटा रहते दूसरों के आगे हाथ फैलाने से अच्छा है मर जाना ....

— छी, मौसीजी, ऐसी बात न कहें, इससे किरण का अकल्याण होगा ।

मौसी फिर आँचल से आँखें पोंछने लगी । दीपंकर बोला — आज आप रो रही हैं मौसीजी, लेकिन जब स्वराज होगा, तब देखेंगी कि उसी लड़के के लिए आपकी छाती गर्व से फूल उठी है । स्वराज होने पर किरण जैसे लोगों की ही खातिर होगी । यही सुभाष बोस, जे० एम० सेनगुप्त और विधान राय उस समय देश के लाट साहब बनेंगे ....

मौसी बोली — क्या पता बेटा, शायद वही हो, लेकिन गरीबों का दुख हमेशा रहेगा, देख लेना ....

दीपंकर बोला — नहीं मौसीजी, आप नहीं जानतीं, अभी जो लोग स्वराज कर रहे हैं, जेल जा रहे हैं, देखेंगी उस समय उनकी कितनी खातिर होगी । जे० एम० सेनगुप्त या विधान राय अगर लाट साहब बन जाय तो देखेंगी कि आप लोगों को कोई दुख नहीं रहेगा । उस समय किरण जैसे लोगों की ही इज्जत होगी ।

मौसी पुराने जमाने की है । उसने क्या समझा क्या पता ! शायद उसने विश्वास किया या नहीं किया । विश्वास न करना ही स्वाभाविक है । उन दिनों विश्वास करता भी कौन था ! विपिन पाल, जिन्होंने स्वराज शब्द को चालू किया था, क्या वे भी

विश्वास कर सके थे ? क्या वे पूरी तरह विश्वास कर सके थे ? और कोमिल्ला जिले के सब से बड़े स्कूल के हेडमास्टर शरत्कुमार बसु ? उनके स्कूल के दो लड़कों ने एक दिन लीफ्लेट बाँटा था । हेडमास्टर ने उनके नाम डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास भेज दिये थे । उसके बाद एक दिन वे सड़क पर घूमने निकले और किसी ने पिस्तौल से गोली चलाकर उन्हें मार डाला ! और मैमनसिंह के डी० एस० पी० यतीन्द्रमोहन घोष ? बाहरवाले कमरे में बैठे वे अपने छोटे लड़के को प्यार कर रहे थे कि कहीं से पाँच लड़के कमरे में घुस आये । घुसकर उन्होंने उनकी छाती पर गोली चला दी । गोली पर गोली चली ! उसके बाद रंगपुर पुलिस के डी० आई० जी० राय साहब नंदकुमार बसु । स्वराजी लड़कों को पकड़ने में उन्होंने बड़ा उत्साह दिखाया । अचानक एक दिन चार लड़कों ने उनके घर में घुसकर उनपर गोलियाँ चला दीं । बस इतना ही नहीं । एक के बाद एक यही सिलसिला जारी रहा । सब-इन्स्पेक्टर मधुसूदन भट्टाचार्य मेडिकल कालेज के सामने चला जा रहा था । सड़क पर काफी भीड़ थी । इतने में गोली छूटने की आवाज हुई । मधुसूदन सड़क पर ही लुढ़क गया । और यह क्या आज शुरू हुआ है ? यह उसी दिन शुरू हुआ था जिस दिन बड़े लाट की लेजिस्लेटिव काउंसिल में सर रिजली ने भाषण किया था ....

"इस समय हमें भीषण षड्यंत्र का सामना करना पड़ रहा है । देश की गवर्नमेंट को खत्म करने और ब्रिटिश शासन को ध्वंस करने के लिए देशव्यापी संघर्ष चलाना ही इन लोगों का उद्देश्य है । इनका संगठन जैसा सक्रिय है, वैसा ही व्यापक भी है । इनकी संख्या भी अधिक है । नेतागण छिपकर काम करते हैं और उनके अनुयायी आँख मूँदकर उनकी आज्ञा का पालन करते हैं । राजनैतिक हत्याएँ करना इनके आन्दोलन का एक अंग है । मैजिनी का रास्ता ही इनका रास्ता है । इन लोगों ने दो-चार सर एण्ड्रू फ्रेजर की ट्रेन उड़ा देने की कोशिश की है । एक बार सबके सामने उनको गोली मारने की भी कोशिश की है । मिस्टर किंग्स फोर्ड की हत्या के भी दो बार प्रयत्न हुए हैं । उनको निशाना बनाकर फेंके गये बम से दो अंग्रेज महिलाएँ मारी गयी हैं । इन्स्पेक्टर नन्दलाल बनर्जी, अलीपुर के पब्लिक प्रोसीक्यूटर आशुतोष विश्वास, सर विलियम कर्जन-विली, मिस्टर वैक्सन और अभी उस दिन डिप्टी सुपरिंटेंडेंट शम्सुल आलम की इन लोगों ने हत्या की है । तीन इनफार्मरों में से दो को गोली मार दी गयी है । तीसरे को पकड़ न पाने पर उसके भाई की हत्या उसकी माँ और बहन की आँखों के सामने कर दी गयी है । ढाका के मैजिस्ट्रेट एलेन को भी इन लोगों ने नहीं बख्शा । वाइसराय पर दो पिक्रिक एसिड बम फेंके गये थे, लेकिन वे फटे नहीं । इसलिए वे किसी तरह बच गये ! ये सारी वारदातें कुछ अखबारों द्वारा हुए प्रचार का परिणाम हैं । विद्रोह के लिए पृष्ठभूमि उन्हीं ने तैयार की है ।

ये सब बहुत पहले की घटनाएँ हैं । जब दीपंकर किरण के साथ रातदिन रहता था उस समय की ये बातें हैं । किरण ही ये सब कहानियाँ सुनाता था । आज किरण के घर उसकी विधवा माँ को देखकर दीपंकर को वे ही बातें फिर याद पड़ने लगीं ।

मौसी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

दीपंकर ने जेब से पाँच रुपये का एक नोट निकाला। कहा — आप यह रुपया रखिए मौसीजी, आज मुझे तनख्वाह मिली है। हर महीने मैं आपको पाँच रुपये दिया करूँगा।

किरण की माँ ने नोट लिया। कहा — अपनी माँ से पूछ लिया है न बेटा?

दीपंकर बोला — यह मेरा अपना रुपया है मौसीजी, मेरा कमाया हुआ ....

— फिर भी तुम्हारे ऊपर माँ है।

दीपंकर बोला — अब मैं बड़ा हो गया हूँ, क्या अब भी आप हर बात माँ से पूछने को कहती हैं?

किरण की माँ ने इसका जवाब नहीं दिया। वह कहने लगी — नहीं बेटा, वह बात नहीं है। लड़के को पाल-पोसकर बड़ा करना कितना मुश्किल काम है, यह माँ ही समझ सकती है। इसलिए वही लड़का जब बड़ा होकर माँ को नहीं देखता, तब माँ के मन में कितना कष्ट होता है, यह दूसरा कैसे समझ सकता है? फिर वह समझायेगी भी किसे?

कहकर मौसी आँचल से आँखें पोंछने लगी।

दीपंकर बोला — किरण जैसा बेटा क्या सबको मिलता है मौसीजी? आपका बड़ा सौभाग्य है!

मौसी बोली — मेरा मरण होना ही अच्छा है बेटा! लायक बेटा रहते दूसरों के आगे हाथ फैलाने से अच्छा है मर जाना ....

— छी, मौसीजी, ऐसी बात न कहें, इससे किरण का अकल्याण होगा।

मौसी फिर आँचल से आँखें पोंछने लगी। दीपंकर बोला — आज आप रो रही हैं मौसीजी, लेकिन जब स्वराज होगा, तब देखेंगी कि उसी लड़के के लिए आपकी छाती गर्व से फूल उठी है। स्वराज होने पर किरण जैसे लोगों की ही खातिर होगी। यही सुभाष बोस, जे० एम० सेनगुप्त और विधान राय उस समय देश के लाट साहब बनेंगे ....

मौसी बोली — क्या पता बेटा, शायद वही हो, लेकिन गरीबों का दुख हमेशा रहेगा, देख लेना ....

दीपंकर बोला — नहीं मौसीजी, आप नहीं जानतीं, अभी जो लोग स्वराज कर रहे हैं, जेल जा रहे हैं, देखेंगी उस समय उनकी कितनी खातिर होगी। जे० एम० सेनगुप्त या विधान राय अगर लाट साहब बन जाय तो देखेंगी कि आप लोगों को कोई दुख नहीं रहेगा। उस समय किरण जैसे लोगों की ही इज्जत होगी।

मौसी पुराने जमाने की है। उसने क्या समझा क्या पता! शायद उसने विश्वास किया या नहीं किया। विश्वास न करना ही स्वाभाविक है। उन दिनों विश्वास करता भी कौन था! विपिन पाल, जिन्होंने स्वराज शब्द को चालू किया था, क्या वे भी

विश्वास कर सके थे ? क्या वे पूरी तरह विश्वास कर सके थे ? और कोमिल्ला जिले के सब से बड़े स्कूल के हेडमास्टर शरत्कुमार वसु ? उनके स्कूल के दो लड़कों ने एक दिन लीफलेट बाँटा था। हेडमास्टर ने उनके नाम डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास भेज दिये थे। उसके बाद एक दिन वे सड़क पर घूमने निकले और किसी ने पिस्तौल से गोली चलाकर उन्हें मार डाला ! और मैमनसिंह के डी० एस० पी० यतीन्द्रमोहन घोष ? बाहरवाले कमरे में बैठे वे अपने छोटे लड़के को प्यार कर रहे थे कि कहीं से पाँच लड़के कमरे में घुस आये। घुसकर उन्होंने उनकी छाती पर गोली चला दी। गोली पर गोली चली ! उसके बाद रंगपुर पुलिस के डी० आई० जी० राय साहब नंदकुमार वसु। स्वराजी लड़कों को पकड़ने में उन्होंने बड़ा उत्साह दिखाया। अचानक एक दिन चार लड़कों ने उनके घर में घुसकर उनपर गोलियाँ चला दीं। बस इतना ही नहीं। एक के बाद एक यही सिलसिला जारी रहा। सब-इन्स्पेक्टर मधुसूदन भट्टाचार्य मेडिकल कालेज के सामने चला जा रहा था। सड़क पर काफी भीड़ थी। इतने में गोली छूटने की आवाज हुई। मधुसूदन सड़क पर ही लुढ़क गया। और यह क्या आज शुरू हुआ है ? यह उसी दिन शुरू हुआ था जिस दिन बड़े लाट की लेजिस्लेटिव काउंसिल में सर रिजली ने भाषण किया था ....

"इस समय हमें भीषण षड्यंत्र का सामना करना पड़ रहा है। देश की गवर्नमेंट को खत्म करने और ब्रिटिश शासन को ठप करने के लिए देशव्यापी संघर्ष चलाना ही इन लोगों का उद्देश्य है। इनका संगठन जैसा सक्रिय है, वैसा ही व्यापक भी है। इनकी संख्या भी अधिक है। नेतागण छिपकर काम करते हैं और उनके अनुयायी आँख मूँदकर उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। राजनैतिक हत्याएँ करना इनके आन्दोलन का एक अंग है। मैजिनी का रास्ता ही इनका रास्ता है। इन लोगों ने दो-चार सर एण्ड्रू फ्रेज़र को ट्रेन उड़ा देने की कोशिश की है। एक बार सबके सामने उनको गोली मारने की भी कोशिश की है। मिस्टर किंग्स फोर्ड की हत्या के भी दो बार प्रयत्न हुए हैं। उनको निशाना बनाकर फेंके गये बम से दो अंग्रेज महिलाएँ मारी गयी हैं। इन्स्पेक्टर नन्दलाल बनर्जी, अलीपुर के पब्लिक प्रॉसीक्यूटर आशुतोष विश्वास, सर विलियम कर्जन-विली, मिस्टर वैक्सन और अभी उस दिन डिप्टी सुपरिंटेंडेंट शम्सुल आलम की इन लोगों ने हत्या की है। तीन इनफार्मरों में से दो को गोली मार दी गयी है। तीसरे को पकड़ न पाने पर उसके भाई की हत्या उसकी माँ और बहन की आँखों के सामने कर दी गयी है। ढाका के मैजिस्ट्रेट एलेन को भी इन लोगों ने नहीं बख्शा। वाइसराय पर दो पिक्रिक एसिड बम फेंके गये थे, लेकिन वे फटे नहीं। इसलिए वे किसी तरह बच गये। ये सारी वारदातें कुछ अखबारों द्वारा हुए प्रचार का परिणाम हैं। विद्रोह के लिए पृष्ठभूमि उन्हीं ने तैयार की है।

ये सब बहुत पहले की घटनाएँ हैं। जब दीपंकर किरण के साथ रातदिन रहता था उस समय की ये बातें हैं। किरण ही ये सब कहानियाँ सुनाता था। आज किरण के घर उसकी विधवा माँ को देखकर दीपंकर को वे ही बातें फिर याद पड़ने लगीं।

मौसी ने कोई उत्तर नहीं दिया ।

दीपंकर ने जेब से पाँच रुपये का एक नोट निकाला । कहा — आप यह रुपया रखिए मौसीजी, आज मुझे तनख्वाह मिली है । हर महीने मैं आपको पाँच रुपये दिया करूँगा ।

किरण की माँ ने नोट लिया । कहा — अपनी माँ से पूछ लिया है न बेटा ?

दीपंकर बोला — यह मेरा अपना रुपया है मौसीजी, मेरा कमाया हुआ ....

— फिर भी तुम्हारे ऊपर माँ है ।

दीपंकर बोला — अब मैं बड़ा हो गया हूँ, क्या अब भी आप हर बात माँ से पूछने को कहती हैं ?

किरण की माँ ने इसका जवाब नहीं दिया । वह कहने लगी — नहीं बेटा, वह बात नहीं है । लड़के को पाल-पोसकर बड़ा करना कितना मुश्किल काम है, यह माँ ही समझ सकती है । इसलिए वही लड़का जब बड़ा होकर माँ को नहीं देखता, तब माँ के मन में कितना कष्ट होता है, यह दूसरा कैसे समझ सकता है ? फिर वह समझायेगी भी किसे ?

कहकर मौसी आँचल से आँखें पोंछने लगी ।

दीपंकर बोला — किरण जैसा बेटा क्या सबको मिलता है मौसीजी ? आपका बड़ा सौभाग्य है !

मौसी बोली — मेरा मरण होना ही अच्छा है बेटा ! लायक बेटा रहते दूसरों के आगे हाथ फैलाने से अच्छा है मर जाना ....

— छी, मौसीजी, ऐसी बात न कहें, इससे किरण का अकल्याण होगा ।

मौसी फिर आँचल से आँखें पोंछने लगी । दीपंकर बोला — आज आप रो रही हैं मौसीजी, लेकिन जब स्वराज होगा, तब देखेंगी कि उसी लड़के के लिए आपकी छाती गर्व से फूल उठी है । स्वराज होने पर किरण जैसे लोगों की ही खातिर होगी । यही सुभाष बोस, जे० एम० सेनगुप्त और विधान राय उस समय देश के लाट साहब बनेंगे ....

मौसी बोली — क्या पता बेटा, शायद वही हो, लेकिन गरीबों का दुख हमेशा रहेगा, देख लेना ....

दीपंकर बोला — नहीं मौसीजी, आप नहीं जानतीं, अभी जो लोग स्वराज कर रहे हैं, जेल जा रहे हैं, देखेंगी उस समय उनकी कितनी खातिर होगी । जे० एम० सेनगुप्त या विधान राय अगर लाट साहब बन जाय तो देखेंगी कि आप लोगों को कोई दुख नहीं रहेगा । उस समय किरण जैसे लोगों की ही इज्जत होगी ।

मौसी पुराने जमाने की है । उसने क्या समझा क्या पता ! शायद उसने विश्वास किया या नहीं किया । विश्वास न करना ही स्वाभाविक है । उन दिनों विश्वास करता भी कौन था ! विपिन पाल, जिन्होंने स्वराज शब्द को चालू किया था, क्या वे भी

विश्वास कर सके थे ? क्या वे पूरी तरह विश्वास कर सके थे ? और कोमिल्ला जिले के सब से बड़े स्कूल के हेडमास्टर शरत्कुमार वसु ? उनके स्कूल के दो लड़कों ने एक दिन लीफलेट बांटा था। हेडमास्टर ने उनके नाम डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास भेज दिये थे। उसके बाद एक दिन वे सड़क पर घूमने निकले और किसी ने पिस्तौल से गोली चलाकर उन्हें मार डाला ! और मैमनसिंह के डी० एस० पी० यतीन्द्रमोहन घोष ? बाहरवाले कमरे में बैठे वे अपने छोटे लड़के को प्यार कर रहे थे कि कहीं से पांच लड़के कमरे में घुस आये। घुसकर उन्होंने उनकी छाती पर गोली चला दी। गोली पर गोली चली ! उसके बाद रंगपुर पुलिस के डी० आई० जी० राय साहब नंदकुमार वसु। स्वराजी लड़कों को पकड़ने में उन्होंने बड़ा उत्साह दिखाया। अचानक एक दिन चार लड़कों ने उनके घर में घुसकर उनपर गोलियां चला दी। बस इतना ही नहीं। एक के बाद एक यही सिलसिला जारी रहा। सब-इन्स्पेक्टर मधुसूदन भट्टाचार्य मेडिकल कालेज के सामने चला जा रहा था। सड़क पर काफी भीड़ थी। इतने में गोली छूटने की आवाज हुई। मधुसूदन सड़क पर ही लुढ़क गया। और यह क्या आज शुरू हुआ है ? यह उसी दिन शुरू हुआ था जिस दिन बड़े लाट की लेजिस्लेटिव काउंसिल में सर रिजली ने भाषण किया था ....

"इस समय हमें भीषण षड्यंत्र का सामना करना पड़ रहा है। देश की गवर्नमेंट को खत्म करने और ब्रिटिश शासन को ठप करने के लिए देशव्यापी संघर्ष चलाना ही इन लोगों का उद्देश्य है। इनका संगठन जैसा सक्रिय है, वैसा ही व्यापक भी है। इनकी संख्या भी अधिक है। नेतागण छिपकर काम करते हैं और उनके अनुयायी आंख मूंदकर उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। राजनैतिक हत्याएँ करना इनके आन्दोलन का एक अंग है। मैजिनी का रास्ता ही इनका रास्ता है। इन लोगों ने दो-बार सर एण्ड्रू फ्रेजर की ट्रेन उड़ा देने की कोशिश की है। एक बार सबके सामने उनको गोली मारने की भी कोशिश की है। मिस्टर किंग्स फोर्ड की हत्या के भी दो बार प्रयत्न हुए हैं। उनको निशाना बनाकर फेंके गये बम से दो अंग्रेज महिलाएं मारी गयी हैं। इन्सपेक्टर नन्दलाल बनर्जी, अलीपुर के पब्लिक प्रॉसीक्यूटर आशुतोष विश्वास, सर विलियम कर्जन-विली, मिस्टर वैक्सन और अभी उस दिन डिप्टी सुपरिंटेंडेंट शम्सुल आलम की इन लोगों ने हत्या की है। तीन इनफार्मरों में से दो को गोली मार दी गयी है। तीसरे को पकड़ न पाने पर उसके भाई की हत्या उसकी मां और बहन की आंखों के सामने कर दी गयी है। ढाका के मैजिस्ट्रेट एलेन को भी इन लोगों ने नहीं बख्शा। वाइसराय पर दो पिक्रिक एसिड बम फेंके गये थे, लेकिन वे फटे नहीं। इसलिए वे किसी तरह बच गये ! ये सारी वारदातें कुछ अखबारों द्वारा हुए प्रचार का परिणाम हैं। विद्रोह के लिए पृष्ठभूमि उन्हीं ने तैयार की है।

ये सब बहुत पहले की घटनाएं हैं। जब दीपंकर किरण के साथ रातदिन रहता था उस समय की ये बातें हैं। किरण ही ये सब कहानियाँ सुनाता था। आज किरण के घर उसकी विधवा मां को देखकर दीपंकर को वे ही बातें फिर याद पड़ने लगीं।

दीपंकर ने कहा — आप सिर्फ अपने वारे में सोच रही हैं मौसीजी, लेकिन सुभाष वोस की वात जरा सोचिए ....

मौसी वोली — उन सव की वात छोड़ो वेटा, स्वराज मिलने पर अगर कुछ होगा तो उन्हीं लोगों का होगा, वड़ी-वड़ी नौकरियाँ उन्हीं लोगों को मिलेंगी। उस समय मेरे गरीव वेटे की वात कौन सोचेगा ?

— सोचेगा मौसीजी, सोचेगा। मैं कह रहा हूँ, सोचेगा। उस समय इसी देश के लोग राज्य चलायेंगे और वे कभी अँग्रेजों की तरह नमकहरामी नहीं करेंगे।

— यह कौन जानता है वेटा ! मेरा जैसा भाग्य है, उससे अव किसी वात पर विश्वास करने का साहस नहीं होता !

थोड़ी देर वाद दीपंकर चलने लगा। मौसी वोली — शायद तुम्हारी माँ फिक्र कर रही होगी, तुमने झूठमूठ यहाँ देर कर दी।

दीपंकर वोला — कभी-कभी जरूरत तो पड़ती ही है ....

— फिर आप मुझे क्यों नहीं वुलातीं ? जव भी रुपये की जरूरत पड़े मुझसे कहा करें, संकोच न करें।

— रुपये की वात नहीं वेटा। तरह-तरह के लोग आते हैं, तरह-तरह की वातें पूछते हैं। किरण घर आता है या नहीं, वह चिट्ठी भेजता है कि नहीं — यही सव। मुझे तो वेटा वड़ा डर लगता है ....

उसके वाद जरा रुककर वोली — आज भी एक वात हो गयी है — रुको, तुम्हें दिखाती हूँ ....

कहकर किरण की माँ कमरे से एक पैकेट ले आयी। दीपंकर के हाथ में देकर ...ली — यह देखो, आज एक आदमी आया था और यह दे गया है। किरण को देने के ..

दीपंकर ने पैकेट खोला। कई कितावें हैं। अंग्रेजी की मोटी-मोटी कितावें। वम, वारूद और गोली वनाने के उपाय उनमें वताये गये हैं। एक किताव है अरविंद की — 'भवानी मंदिर।' और दूसरी है वारीन घोष की — 'मुक्ति का उपाय।' साथ में ढेर सारे छपे कागज हैं — हैंडविल। नीचे लिखा है — 'स्वाधीन भारत सिरीज़।'

लालटेन की रोशनी में दीपंकर एक हैंडविल पढ़ने लगा —

"ज़ार हमसे कहते हैं कि ईश्वर ने मुझे रूस का सम्राट् वनाकर भेजा है। तुम लोग मेरे सिंहासन को ईश्वर का [illegible] समझ कर प्रणाम करना। मुझे परेशान करने के लिए तुम लोग मेरे पास [illegible]। मैं हर [illegible] की वात सोचा करता हूँ। मुझे सलाह-मश[illegible] है, [illegible] मुझे पूर्ण ज्ञान दिया है। मैं तुम लोगों के [illegible] करना चाहिए और मेरी इच्छा को ही [illegible]

"हमने जार की

उसी को मान लिया है। लेकिन उसका नतीजा क्या निकला? दफ्तरों में फाइलों का पहाड़ गरीबों के स्वार्थ को तिलांजलि दे रहा है। सरकारी कर्मचारी सब के सामने तो मंत्रियों और सेक्रेटरियों के चरण छूते हैं, लेकिन पीठ पीछे सब कुछ भूलकर चोरी करते हैं। चोरी की महत्ता इतनी बढ़ गयी है कि जो जितना बड़ा चोर है वह उतना ही बड़ा सम्मानित व्यक्ति है। दफ्तरों में नौकरी चाहने वालों की योग्यता का कोई सवाल नहीं उठता। अस्तबल का साईस प्रेस-सेंसर बन गया है। सम्राट् का खुशामदी एक अयोग्य आदमी एडमिरल बन गया है। और हम रूसवासी क्या कर रहे हैं? हम आराम की नींद सो रहे हैं। रो-पीटकर किसान लगान का पैसा भर रहे हैं। जिनके पास सम्पत्ति है, वे उसे गिरवी रख रहे हैं। लोग बाध्य होकर सरकारी नौकरों को घूस दे रहे हैं। हम देख रहे हैं कि सम्राट् के प्रमोद-भ्रमण पर लाखों रुपये बरबाद हो रहे हैं, फिर भी हम आराम से ताश खेलरहे है, फिल्म-स्टार या संगीत सभा की गायिका के गीतों पर बहस कर रहे हैं और शैतान के सामने सिर झुका रहे हैं। हम जिन कामों की भरपूर निंदा करते हैं उन्हीं को स्वयं करने के लिए जी-जान से कोशिश कर रहे हैं। इस माहौल में जब कोई सिर ऊँचा कर खड़ा होता है, देश के लिए संघर्ष छेड़ देता है, तब हम कहते हैं कि यह भी कैसा अहमक है।

"यह सब होते हुए भी हमें एक बात का संतोष था कि विश्व में रूस शक्तिशाली राष्ट्र कहलाता है। अंग्रेजों में जब फ्रान्स के चक्रांतकारी सम्राट् और विश्वासघाती आस्ट्रिया की मदद से पश्चिम यूरोप को हमारा विरोधी बना दिया तब भी हमने उसे हँसकर टाल दिया। हमने कहा — जार ने हमारे देश की रक्षा का प्रबंध किया है। हमें किस बात का डर है? हम निर्भीक होकर लड़ाई के मैदान में गये। लेकिन उस रण में रूस की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल गयी और हमारे सामने भागने के अलावा और कोई उपाय न रहा। हमारे हजारों भाई मारे गये।

"हे जार! रूसवासियों ने आपको पूरी क्षमता दी थी और धरती पर ईश्वर के रूप में आपको मान लिया था। लेकिन आपने क्या किया? आपने सत्य की हत्या की। इसलिए रूसवासियो, अब जागो! मंगोलों के उत्तराधिकारियों की दासता तुमने बहुत पहले मिटा दी है। आज अत्याचारी शासक के सामने सिर ऊँचा कर खड़े हो जाओ। राष्ट्र की इस दुर्दशा के लिए उनसे जवाब तलब करो। दृढ़ स्वर में उनसे बता दो कि सम्राट् का सिंहासन ईश्वर का सिंहासन नहीं है। हम हमेशा गुलाम का जीवन जियें, यह ईश्वर की इच्छा नहीं है। बस।

निहिलिस्ट पार्टी — रूस।"

पढ़ लेने के बाद दीपंकर काफी देर तक न जाने क्या सोचता रहा। उसके बाद बोला — यह सब आपको कौन दे गया है? आप उसे जानती हैं?

मौसी बोली — नहीं बेटा, मैं उसे नहीं जानती। मैंने कभी उसे देखा भी नहीं। उसने कहा कि किरण आने पर उसे यह दे देना।

दीपंकर बोला — आपने मुझे दिखा दिया, बड़ा अच्छा हुआ मौसीजी। यह सब सी० आई० डी० का काम है। माचिस है ?

मौसी ने कमरे से माचिस लाकर दी। कहा — माचिस से क्या करोगे बेटा ?

— इनको जला दूँगा। किरण को फँसाने के लिए यह सब किया गया है।

कहकर दीपंकर ने उन कागजों और किताबों में आग लगा दी। किरण के मकान के आँगन में वह सब धू-धू कर जलने लगा। दीपंकर ने माँ के पाँव छूकर प्रतिज्ञा की है कि कभी स्वराज नहीं करूँगा। लेकिन किरण को बचाने के लिए इतना करने में कोई हर्ज नहीं है। अँधेरे आँगन में आग की लपटें लपलपाने लगी। दीपंकर चुपचाप खड़ा होकर उसी तरफ देखने लगा। थोड़ी देर बाद आग बुझ गयी। जरा देर के लिए जले कागज लाल अंगार की तरह दिखाई पड़े, फिर धीरे-धीरे सिकुड़कर काली राख बन गये। धुआँ इसके बाद भी कुछ देर रहा।

दीपंकर को अचानक लगा कि बाहर किसी के चलने की आहट हुई।

— कौन ?

दीपंकर चौंक पड़ा। कौन है वहाँ ?

झटपट आँगन का दरवाजा खोलकर दीपंकर बाहर आया, लेकिन कहीं कोई दिखाई नहीं पड़ा। उसने इधर-उधर देखा। फिर कहा — मौसीजी, आप दरवाजा बंद कर लीजिए और सावधान होकर रहियेगा। मैं जा रहा हूँ।

मौसी ने पूछा — कौन है बेटा ? किसी को देखा ?

दीपंकर बोला — नहीं, कोई नहीं है। अच्छा, मैं जा रहा हूँ....

मौसी ने दरवाजा बंद कर लिया। आश्चर्य है ! किरण घर में नहीं आता, फिर भी पुलिसवाले उसके पीछे पड़े हैं ! उसे फँसाने के लिए वे आपत्तिजनक किताब-कागज छोड़ जाते हैं ! राय बहादुर नलिनी मजूमदार के गुर्गे अब भी उसकी टोह में चक्कर लगाते हैं।

ईश्वर गांगुली लेन के पास आते ही दीपंकर को शोरगुल सुनाई पड़ा। मानो उसी के मकान से आवाज आ रही है। इतनी रात को अब क्या हो गया है ! वह जल्दी जल्दी मकान के सामने पहुँच गया। इतने में छिटे अंदर से निकल आया।

छिटे एकदम दीपंकर के सामने आ गया।

मानो वह दौड़ता हुआ आ रहा था, सामने दीपंकर को देखकर रुक गया।

बोला — आ गया दीपू, देख उस साले सुअर के बच्चे की करतूत !

छिटे की मूर्ति देखकर दीपंकर डर गया। पसीने से तरबतर। माथे से पसीना चू रहा है। हाथ में लाठी है। बाल बिखरे हैं। मानो वह किसी को मारने के लिए कहीं जा रहा है। इस समय उसने किससे झगड़ा कर लिया !

दीपंकर ने पूछा — क्या हुआ है ?

याद है, अघोर नाना उसी रात ऊपर से नीचे चले आये थे। वे न आते तो अच्छा रहता। बेचारे बूढ़े! आँखों से वे देख नहीं सकते, कानों से सुन नहीं सकते। जिन्दगी भर वे यजमानों से सम्मान और श्रद्धा पाते आये हैं। उन्होंने अपनी कोशिश से प्रतिष्ठा अर्जित की है। लेकिन बुढ़ापे में पहुँचकर उन्होंने देखा कि जिस आधार पर उनकी प्रतिष्ठा खड़ी है, वही आधार उनको धोखा दे गया है। उनकी घर-गृहस्थी बनी थी, लेकिन उसके पीछे उनकी अपनी कमजोरी छिपी थी। बहुत दिनों तक वे उस गृहस्थी रूपी लता को जल से सींचते और उसके नीचे खाद डालते रहे। शायद मन के किसी कमजोर क्षण में उन्होंने आशा की थी कि वह लता फूलेगी-फलेगी और उसका मीठा फल उन्हें बुढ़ापे में मिलेगा। लेकिन बाद में उन्होंने देखा कि उस लता में जो फल लगे हैं वे विषैले हैं और जो फूल खिले हैं उनमें काँटे हैं। तब से वे नियतिवादी बन गये हैं। तब से वे कहने लगे हैं — कौड़ियों से सब खरीदा जा सकता है — कौड़ियों के मोल सब-कुछ मिलता है।

तब से अघोर नाना सारे संसार पर अविश्वास करने लगे थे। तब से उनके लिये हर आदमी मुँहजला बन गया था। अपने नाती मुँहजले बन गये और अपनी नतनी मुँहजली बन गयी। शायद स्वयं अपने लिये भी वे मुँहजले हो गये थे।

तब से अघोर नाना का सारा स्नेह, सारा प्यार, सारा लगाव रुपये पर केंद्रित हो गया। रुपये रहने पर किसकी परवाह! रुपये रहने पर किसका डर! उन्होंने उसी रुपये को जी-जान से पकड़कर अंत तक जीना चाहा था। उन्होंने सोचा था कि रुपया ही अंत में उन्हें शांति और सान्त्वना देगा। रुपये के आगे आत्म-समर्पण कर वे निश्चित होकर बैठ गये थे।

लेकिन रुपया बात नहीं करता, रुपये में जीवन नहीं है और रुपया तो प्यार के बदले प्यार देना जानता नहीं — इसलिये दीपंकर के लिये उनके मन में थोड़ी-बहुत ममता पैदा हो गयी थी। इसीलिये इम्तहान में दीपंकर के पास होने की खबर सुनकर नाना उसे नये कपड़े खरीदकर देते थे। दीपंकर की नौकरी लगने की खबर सुनकर वे खुश हुए थे। इसीलिये स्नेहमय उपहार के रूप में वे कभी-कभी उसे चींटा खाया बताशा और बदबूदार मिठाई देते थे।

अब इतने दिन बाद वह थोड़ी-सी ममता भी मानो दीपंकर के जीवन से निःशेष हो चली।

किरण के घर से लौटते समय भी दीपंकर इस बात की कल्पना न कर सका था। शायद दोपहर से ही नाना को बुखार आया था। दीपंकर उस समय दफ्तर में

बच्चे को गोद में लिये इस घर में आयी थी। मनुष्य के जीवन का परिणाम यही है। उस समय चन्नूनी के मारे कोई किरायेदार टिक नहीं पाता था। सब उसकी खुशामद करते थे। अघोर नाना उसके इशारे पर उठते और बैठते थे। उसके बाद धीरे-धीरे उसका जमाना गया, उसकी जवानी गयी और उसका बोलबोला गया। उसकी आँखों में मोतियाबिंद हो गया। लक्का और लोटन पहले पैदा हुई थीं। धीरे-धीरे वे बड़ी हुईं और एक दिन बाजार में जाकर बैठ गयीं।

काम-काज के बीच दीपंकर की माँ एक बार और चन्नूनी को देखने आयी थी।

—कैसी हो चन्नूनी ?

अब चन्नूनी के मुँह से कोई आवाज नहीं निकली। दीपू की माँ न जाने क्यों डर गयी। उसने उसके माथे पर हाथ रखकर देखा। झुककर उसके चेहरे को देखा।

— चन्नूनी ! अरी चन्नूनी !

शायद ऐसी खबर हवा के संग फैलती है। तीसरे पहर नल में पानी आया। दीपंकर छः बजे दफ्तर से लौटेगा। अभी से उसकी माँ के हाथ-पाँव ढीले पड़ने लगे। चन्नूनी के लिए न जाने क्यों उसका मन मसोसने लगा। चाहे चन्नूनी जितनी लड़ती रही हो, चाहे जितना चिड़चिड़ाती रही हो, लेकिन है तो वह इन्सान !

बिन्ती बोली — क्या होगा दीदी !

माँ बोली — तुम घबड़ाओ नहीं बिटिया, भगवान का नाम लो ....

— तुमने नाना को खबर दी है ?

माँ बोली — हाँ ....

अघोर नाना खुद परेशान हैं। उनको कौन देखे, इसका ठिकाना नहीं है। वे भी चलने के लिए तैयार बैठे हैं। अब उनको भी देखना जरूरी है। वे खुद मर रहे हैं, अब चन्नूनी के बारे में कुछ सुनना उनको अच्छा नहीं लगता।

नाना बोले — मरे वह बुढ़िया ! मुँहजली मर जाय तो मुझे चैन मिले ....

फिर भी दीपंकर की माँ खुद जाकर फणी डाक्टर को बुला लायी। पास ही फणी डाक्टर के रहते बेचारी बिना इलाज के मर जायेगी ! डाक्टर ने आकर चन्नूनी को देखा और दवा दी। दीपू की माँ ने डाक्टर को एक रुपया दिया। उसके बाद शाम हुई। उस दिन ईश्वर गांगुली लेन के उस मकान में रात का अँधेरा मानो बड़ा सहमा हुआ आया ! सब काम-काज के बीच कहीं एक आतंक छिपा रहा। दरवाजे के पास जरा आहट होते ही माँ चौंक पड़ती — शायद दीपू आया है। मानो दीपू के आते ही सारे आतंक का अवसान होगा। मानो उसके आते ही सिरहाने आयी मौत टल जायेगी।

— कौन है रे ? दीपू ?

बाहरवाला दरवाजा बन्द है। आहट मिलते ही माँ झटपट लालटेन लेकर दर-

— मतलब ?

फोंटा सीना तानकर खड़ा हो गया। फणी डाक्टर और नोटे डाक्टर दोनों एक दूसरे को देखकर हक्का-बक्का हो गये। इस तरह रोगी देखने वे कभी किसी घर में नहीं जाते।

छिटे बोला — हरामजादे, माँ के गहने के लालच में तू डाक्टर लाया है, क्या यह मैं नहीं समझता ?

— गहने के लालच में ?

— हाँ, गहने के लालच में ! दस तोले के हार के लिए तू डाक्टर बुला लाया और समझ रहा है कि ड्यूटी पूरी हो गयी है। क्या मैं कोई नहीं हूँ ?

लोटन ने गाल पर हाथ रखा। कहा — हाय अम्मा, यह कैसी बात है। जरा बात तो सुनो ! हम क्या दस तोले के हार के लिए डाक्टर बुला लाये हैं ?

लक्का बोली — नहीं तो और क्या ? अब तू छिनारपना मत दिखा। तेरा छिनारपना देखकर बदन सुलग जाता है। सच कहती हूँ ....

फोंटा चिल्लाया — खबरदार, मुँह सँभालकर बात क[illegible]

छिटे आगे आया और बोला — क्या ! मेरी औरत [illegible] रहा है ?

— तू अपनी औरत को चुप करा छिटे, अब भी [illegible] दे रहा हूँ ....

इस पर लक्का लगी चिल्लाने। बोली — हाय अ[illegible], यह तो

चले आये।

लक्खा ने सोटन का झोंटा पकड़कर खींचा और कहा — हरामजादी! छिनारपना करती है? मैं तेरा मतलब समझ गयी हूँ। मैं तेरी चालाकी खूब जानती हूँ....

छिटे ने कोई लाठी-डंडा नहीं लिया तो वह बाहर चला आया और चिल्लाने लगा — मैं कालीघाट का गुंडा हूँ, मुझको कोई पहचान नहीं पाया साले, मैं तुम्हें मार डालूँगा, बोटी-बोटी काट डालूँगा। गंगा में बहा दूँगा। ऐसा नहीं किया तो मेरा नाम छिटे भट्टाचार्य नहीं है।

वह चिल्लाता हुआ सदर दरवाजे की तरफ भागा। शायद वह अपने चेलों को बुलाने जा रहा था। तभी दीपंकर से उसकी भेंट हो गयी।

दोनों आदमियों के बीच पड़ने से उस दिन दीपंकर पर ही मुसीबत आयी। छिटे का चलाया ढेला उसी के सिर पड़ा। उसकी माँ दूर से सब देख रही थी। तब उसके मुँह से चीख निकली।

— बाप रे!

बस, इतना ही सुन पाया था दीपंकर। उसके बाद सिर पर पानी के छींटे पड़ते ही वह होश में आया। दोनों डाक्टर वहीं थे। वे ही उसे वहाँ से उठाकर लाये थे। चोट ज्यादा नहीं थी। दीपंकर उठ बैठा। उसी के बाद अघोर नाना का चिल्लाना सुनाई पड़ा। बेचारे बूढ़े हाँफते-चिल्लाते दौड़कर आने लगे।

— मुँहजले! फिर सब मुँहजले तंग करने आ गये हैं। अब मैं मुँहजलों के मुँह में झाड़ू मारूँगा। कहाँ गये सब मुँहजले, किस जहन्नुम में चले गये!

अघोर नाना को दिखाई नहीं पड़ता। गाली बकते हुए वे अँधेरी सीढ़ी से उतरने लगे।

— हरामजादे फिर इस मकान में आये हैं! मुँहजलों को मैं अभी निकाल बाहर करता हूँ। हरामजादे! मुँहजले! सब गये किधर?

इतने में गजब हो गया। अघोर नाना को शायद मामूली ठोकर लगी। लेकिन लम्बे-चौड़े विशाल शरीर के कारण वे अपना सन्तुलन खो बैठे और लुढ़कते हुए एकदम आँगन में आ गये। उस समय भी उनके मुँह से गाली ही निकली — मुँहजला! हरामजादा!

जीवन का रास्ता उतना सुगम और सरल नहीं है जितना समझा जाता है। जीवन उद्यान नहीं है। वह अपने रास्ते चलता है। और वह रास्ता निश्चित होता है। उस रास्ते के अपने नियम-कानून होते हैं। उसी रास्ते पर चलने का नियम जीवन का नियम कहलाता है। उसी रास्ते से अब तक दीपंकर के जीवन का रथ चलता आया है। उस दिन बारबार दीपंकर को यह बात याद आती थी। याद है, दूसरे दिन सवेरे तक अघोर नाना होश में नहीं आये थे। सवेरे एक बार सिर्फ उनकी आँखें खुली थीं। वह भी एक क्षण के लिए।

दीपंकर की माँ ने उनके मुँह में थोड़ा-सा पानी दिया था।

उसने झुककर पूछा था — और थोड़ा-सा पानी दूँ पिताजी ?

जब तक बूढ़े में ताकत थी, तब तक तक किसी ने चूं तक करने की हिम्मत नहीं की। लेकिन अब उस चट्टान को ढहते देख छिटे और फोंटा ने उस मकान में आसन जमा लिया। नीचे आँगन के सामनेवाले क़मरे के बरामदे में दोनों बैठ गये। सवेरे से चूल्हा नहीं जला। चन्नूनी की आखिरी घड़ी है। अघोर नाना की भी। अकेली दीपंकर की माँ को सब सँभालना पड़ रहा है।

बिन्ती अपने कमरे में घुसी है। उसे निकलने की हिम्मत नहीं हो रही है।

माँ नीचे आयी तो छिटे ने उसे पकड़ा — दीदी, चाभी किसके पास है ?

— कैसी चाभी बेटा ?

छिटे मानो बिगड़ गया। बोला — कैसी चाभी आप नहीं जानतीं ? संदूक की, और किसकी ?

यह बात दीपंकर के कान में गयी। वह सुनकर आश्चर्य में पड़ गया। अभी तक अघोर नाना मरे नहीं, अभी तक बेचारे बूढ़े जी रहे हैं और अभी से ये लोग संदूक चाभी माँगने लगे हैं !

माँ बोली — देख तो रहे हो बेटा, बेचारे बूढ़े दम तोड़ रहे हैं, वे तुम लोगों के नाना हैं, और तुम लोग ऐसी बात कर रहे हो ?

— लेकिन बूढ़ा मरने में इतनी देर क्यों कर रहा है ?

रातभर माँ को बड़ा झमेला झेलना पड़ा था। वह न खा सकी, न सो सकी। डाक्टर बुलाओ तो दवा का इन्तजाम करो, फिर मरीजों की देखभाल है। भला अकेली औरत क्या-क्या कर सकती है ? मकान का हाल यह है कि जैसे बाजार बन गया हो। चन्नूनी की दोनों लड़कियाँ मकान से टलना नहीं चाहतीं।

दीपंकर ने कहा था — माँ, मुझे उस हार की जरूरत नहीं है, तुम उन लोगों को दे दो ....

माँ ने कहा था — लेकिन चन्नूनी ने वह हार तुझे देना चाहा था।

मामूली एक हार ! भले ही दस तोले का हो। लेकिन एक आदमी की जान से सोने की कीमत ज्यादा नहीं है। फिर भी उसी रात उस हार को काटकर दो हिस्सों में बाँटा गया। उस हार का आधा लक्का ने लिया और आधा लोटन ने। उसके बाद दोनों रात भर बैठी रहीं। माँ सामने पड़ जाती तो पूछतीं — दीदी, बुढ़वा मरा ?

जितना दिन बढ़ने लगा, छिटे और फोंटा उतने ही बेचैन होने लगे।

बोले — आठ बजने को हुए और अभी तक बूढ़ा नहीं मरा ?

उसके बाद न जाने कहाँ से एक-एक कर छिटे और फोंटा के चेले आने लगे। वे भी मकान के अंदर आँगन में बैठ गये। दो भाइयों के दो दल बन गये। सब बैठकर बीड़ी फूंकने लगे। वे दीपंकर के कमरे में रखे संदूक को कई बार झाँककर देख गये।

दीपंकर उठकर अघोर नाना की बगल में आ खड़ा हो गया।

फिर डाक्टर आया। माँ ने पूछा — आप का क्या ख्याल है डाक्टर बाबू ?

दीपंकर को लगा कि अघोर नाना के साथ मानो एक युग का अंत हो रहा है। जब एक-एक कर सब चले गये तब अघोर नाना का एकमात्र बंधन दीपंकर के लिए बचा रहा। लेकिन अब वह बंधन भी टूट चला। अघोर नाना के पास खड़ा रहते समय उसकी आँखें डबडबा आयीं। मानो अब उसका कोई नहीं रहा। कोई नहीं भी रहा। मृत्यु के सामने खड़े होकर उसे मानो बड़ा कष्ट होने लगा। उसे बहुत-सी बातें याद आने लगीं। यही तो अंत है। यही तो है अंतिम परिणति। अब अघोर नाना का वह प्रताप कहाँ गया! वह रोबदाब कहाँ गया! किसके लिए उन्होंने इतने दिन तक इतनी दौलत इकट्ठी की! किसके लिए उन्होंने इतने दिन रुपये-पैसे, गहने और बर्तन जुटाये। मिठाइयां बटोर-बटोरकर सड़ायीं! अब यह सब कौन खायेगा? यह सब किसके काम आयेगा? रुपये से क्या सब-कुछ होता है? क्या कौड़ियों के मोल सब कुछ खरीदा जा सकता है? अब कहाँ गये वे सब यजमान? इतने दिनों तक अघोर नाना को जिनका भरोसा था? कहाँ गया वह भरोसा? दीपंकर गौर से अघोर नाना का चेहरा देखने लगा। कई दिनों से दाढ़ी नहीं बनायी गयी थी। इसलिए दाढ़ी के बाल बढ़े हो गये हैं। दोनों होंठ जरा खुले हैं। मुँह में दाँत नहीं हैं। पोपला मुँह। लगा कि अघोर नाना हँस रहे हैं। फिर लगा कि नहीं, रो रहे हैं। समझ में नहीं आता कि वे हँस रहे हैं या रो रहे हैं। लेकिन वह चेहरा अद्भुत करुण लगा। आँखों की पलकें मानों लिपटी हुई हैं। लगा, होंठों का कोना फड़क उठा। लेकिन नहीं; कहीं कोई हरकत नहीं है। एक बार दीपंकर की इच्छा हुई कि अघोर नाना से पूछे कि अब कैसा लग रहा है! मरने से पहले मनुष्य को कैसा लगता है, उसे कैसी अनुभूति होती है, यह सब अगर अघोर नाना से जाना जा सकता तो बड़ा अच्छा होता! क्या बहुत तकलीफ होती है? क्या बड़ा कष्ट होता है? मरने से पहले क्या मनुष्य समझ जाता है कि अब उसका जीवन-नाटक समाप्त हो चला है? क्या वह समझ जाता है कि इतने दिनों के इस संसार को वह छोड़कर जा रहा है?

तभी डाक्टर उठा।

माँ ने उसकी तरफ देखा। शायद उसने आशा की एक बात सुननी चाही।

पूछा — आपका का क्या ख्याल है डाक्टर बाबू ?

दीपंकर भी उत्कंठा से डाक्टर बाबू की तरफ देखने लगा।

इतने में अचानक छिटे, फोंटा और उनके चेले हड़बड़ाकर ऊपर आ गये। शायद वे ज्यादा इंतजार नहीं कर सके।

फोंटा ने पूछा — क्या हुआ? मरा?

इसका जवाब कौन देता! छिटे बोला — रात भर न खा सका न पी सका। साले बूढ़े ने खूब तंग किया ....

फोंटा रुका नहीं। वह अघोर नाना के कमरे की तरफ गया। उसके चेले लगे रहे। छिटे के शागिर्द भी किसी से पीछे नहीं हैं। कमरा खुला था। और दिन होता तो अघोर नाना लाठी लेकर दौड़ते और मुँहजला कहकर गाली वकते। लेकिन आज उनको रोकने वाला कोई नहीं था। छिटे और फोंटा के चेलों ने सब सामान उलट-पुलट डाले। जुटाकर रखी सड़ी मिठाइयाँ फर्श पर फेंकी गयीं, गंदे कंवलों और तकियों को उलट-पलटकर देखा गया — मानो डाकुओं ने लूटपाट शुरू कर ली हो।

दीपंकर विगड़कर शायद कुछ कहने जा रहा था। अभी वेचारा मरा नहीं — क्या उसके पहले ही ये लोग उसे गला दवाकर मार डालना चाहते हैं! लेकिन माँ ने इशारे से दीपंकर को चुप करा दिया। वह धीरे से वोली — तू कुछ मत वोल। उनका सामान है, चाहे जो करें ....

उसके वाद शायद चाभियों का गुच्छा मिल गया। चाभियों का गुच्छा मिलते ही सव हड़वड़ाकर नीचे आये। फिर वे दीपंकर के कमरे में घुसे। इसी कमरे में संदूक है।

दीपंकर ने ऊपर से यह सव देखकर कहा — माँ, वे सव तो हमारे कमरे में घुसे हैं।

माँ वोली — घुसने दे ....

संदूक तोड़ना शुरू हो गया। हथौड़ा चलाने की घम-घम आवाज होने लगी। ताला नहीं खुला तो हथौड़ी, सवरी, छेनी, जिसे जो मिला उसी से वह संदूक खोलने लगा। कहाँ से उतने लोग आ गये और कैसे क्या हो गया, कुछ समझ में नहीं आया। सव हल्ला मचाने लगे। संदूक में क्या है, यह कोई नहीं जानता। वहुत दिनों से दोनों भाई प्रतीक्षा कर रहे थे। अघोर नाना से दोनों को वड़ा अपमान और तिरस्कार मिला था। आज इतने दिन वाद मानो वे उसका वदला लेने लगे।

दीपंकर का मन मानो रो उठा। क्या इस संसार में दया-माया-ममता का कोई मूल्य नहीं है? अघोर नाना क्या जानते थे कि कभी ऐसा होगा? वे क्या इन घटनाओं की कल्पना कर सके थे? दीपंकर ने एक वार उनके मुँह की तरफ देखा। उनके चेहरे पर कोई विकार नहीं है। मानो वे सांसारिक सुख-दुख से वहुत ऊपर चले गये हैं। माँ वगल में वैठी उनके चेहरे को एकटक देख रही है। स्थिर होकर मानो अंतिम क्षण की प्रतीक्षा कर रही है।

नीचे आँगन में लक्का और लोटन फिर आ पहुँची हैं। अव दोनों सजधजकर आयी हैं। हार का वँटवारा हो चुका है। अव दोनों में कोई खास झगड़ा नहीं है। दोनों ने पान खाकर होंठों को लाल कर लिया है।

दीपंकर ने वुलाया — माँ!

माँ ने वेटे की तरफ देखा।

— वे सव तो हमारे कमरे को तहस-नहस किये दे रहे हैं — मैं जाऊँ?

माँ ने गंभीर स्वर में कहा — नहीं।

इतने में अचानक नीचे बड़े जोर का हल्ला उठा। मुहल्ले को कँपाकर सब एक साथ चिल्लाये। अब तो अगल-बगल के मकानों से कुछ लोग आँगन में आ गये हैं। आज इस घर में न चूल्हा जलना है, न किसी को खाना है। एक तरफ उन्मत्त लोगों का कोलाहल और छिपे खजाने को पाने के लिए छीना-झपटी है तो दूसरी तरफ मृत्यु। यह दौलत इन लोगों ने पसीना बहाकर नहीं कमायी, यह दौलत भगवान के नाम पर दिन पर दिन जुड़ती गयी है। ईश्वर को ठगकर एक कंजूस ने स्वयं माँगने के लिए यह दौलत जुटायी है। लेकिन धीरे-धीरे उसकी मौत आ गयी। कठोर अनिवार्य मौत। दीपंकर को लगा कि सारा संसार उनके सामने निपट नंगा खड़ा हो गया है। सिर्फ छिटे और फोंटा ही नहीं, नीचे आँगन में भीड़ करके जो लोग खड़े हैं, वे सभी नंगे हैं। के० जी० दास बाबू, घोषाल साहब और अनंत राव भावे में बड़ा मेल दिखाई पड़ा। सक्खा, लोटन और मिस माइकेल में भी कोई फर्क नहीं रह गया। उधीन बटा एक बी ईश्वर गांगुली लेन वाला यह मकान एक मकान नहीं, समग्र विश्व है। दीपंकर का देखा और अदेखा विश्व मानो यहाँ मूर्तिमान हो उठा है। मृत्यु के लिए इन लोगों के मन में कोई भय या श्रद्धा नहीं है। वे हँस रहे हैं, बोल रहे हैं और पान चबा रहे हैं।

छिटे बीड़ी पी रहा है और सब इंतजाम देख रहा है। वह बोला — तुम सब से एक ताला न टूट सका! हट मैं देखूँ ....

उसने कुंडी में सबरी फँसाकर जोर लगाया।

लेकिन अघोर नाना का ताला जल्दी टूट नहीं सकता। फिर भी छिटे जोर लगाने लगा।

फोंटा कंधे पर गमछा रखकर बीड़ी पी रहा था। बोला — पेट में माल नहीं है, ताकत कहाँ से आयेगी?

पास ही एक चेला खड़ा था। बोला — माल लाऊँ देवता?

— ले आ ....

फोंटा ने जेब से रुपया निकालकर दिया। सब पसीने से तर हैं। लेकिन वहाँ से कोई हट नहीं पा रहा है। बहुत पुराना संदूक है और बहुत दिन से उस पर सब आँख लगाये हुए हैं। यह क्या आज की बात है? अघोर नाना से इन दो नातियों को जरा भी स्नेह नहीं मिला था। ज्यों-ज्यों बड़े हुए त्यों-त्यों नाना की आँख का काँटा बनते गये। उसके बाद वे सड़कों पर घूमे, तबला बजाते रहे और अपनी ही बुद्धि के बल पर दोनों को इस संसार में अपने लिए जगह बनानी पड़ी। वे हवालात में बंद हुए, जेल गये और समाज के कूड़ेखाने में उनको जगह मिली। फिर भी अपनी दुनिया में वे सिर ऊँचा किये खड़े हैं। इतने दिन वे कालीघाट की बस्ती में रहे, अब इस मकान में आयेंगे और बहुत रुपये के मालिक बनेंगे। फिर सक्खा और लोटन के साथ उनको भी सभ्य समाज की सदस्यता मिल जायेगी। इसलिए बोतल आते ही फोंटा ने उसे मुँह में

ऊँड़ेल लिया — जी खोलकर ऊँड़ेल लिया !

चेला बगल में ही खड़ा था। बोला — जरा परसाद दीजिए देवता ....

— दूँगा, दूँगा, पहले संदूक तो खोल ....

यह देखते ही छिटे पास आया। बोला — क्यों रे, अकेले ही माल उड़ायेगा ?

फोंटा बोला — उड़ाऊँगा, जरूर उड़ाऊँगा; अपनी मेहनत की कमाई खा रहा हूँ, तेरे बाप के पैसे से नहीं पी रहा हूँ ....

छिटे बिगड़ गया। बोला — इसमें बाप को मत घसीट !

— जरूर घसीटूँगा। क्यों नहीं घसीटूँगा ?

— अबे हरामजादे, मजा चखा दूँगा !

शायद छिटे खून-खराबा कर बैठता, लेकिन इतने में दीपंकर कमरे में आया। उसे देखते ही सब जरा सँभलकर बैठ गये। छिटे ने दीपंकर की तरफ देखा, फोंटा ने भी ....

दीपंकर जरा चुप रहकर बोला — नाना अब नहीं हैं ....

— मर गया ?

मानो उन पर खुशी छा गयी ! मर गया ! मानो वे खुशी के मारे होश-हवाश खो बैठे। फोंटा पहले उस बात पर विश्वास नहीं कर सका। लेकिन विश्वास होते ही उसने पूरी बोतल गले में उड़ेल ली। उसके बाद और बोतलें आयीं, पीने और पिलाने का दौर शुरू हुआ, और हो-हल्ला अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। मौत से वह भी अच्छी मसखरी थी !

दीपंकर धीरे-धीरे कमरे के बाहर आकर खड़ा हुआ। एक पल में उसका मन बड़ा खाली-खाली लगने लगा। कितना हो-हल्ला और शोरगुल हो रहा है, लेकिन दीपंकर को लगा कि सब खामोश हैं, चुप हैं, खाली हैं। मुहल्ले के कई बच्चे तमाशा देखने मकान के अन्दर आ गये। एक-दो बच्चे दीपंकर की माँ के पास जाकर बैठे। बिन्ती माँ का आँचल पकड़कर बैठी है। माँ की आँखों से बस टप-टप आँसू झरते रहे। कोई रोना-धोना नहीं, कोई शोक-सियापा नहीं। अघोर नाना का चट्टान-सा शरीर सामने पड़ा है। अब उसमें कोई हरकत नहीं है। कैंची की तरह चलने वाली जबान भी बन्द है। मरने से पहले भी अघोर नाना के मुँह से कोई बात नहीं निकली थी। किसी को वे जी भरकर गाली नहीं दे सके थे। पन्द्रह-सोलह घंटे वे आँखें बंद कर चुपचाप पड़े थे।

अंत समय माँ ने उनके मुँह में एक बूँद गंगाजल दिया था।

अघोर नाना खत्म हो गये हैं। लेकिन एक आदमी के खत्म होने से ही तो सब कुछ खत्म नहीं हो जाता ! दीपंकर आँगन में चुपचाप खड़ा यही सोचने लगा। उन लोगों

के जो मन में आये, सो वे लें। सन्दूक तोड़कर वे सब कुछ ले जायें। दीपंकर कुछ नहीं कहेगा। उसे कुछ नहीं कहना है। अब उसे यह मकान छोड़कर, माँ के साथ कोई और आश्रय ढूंढ़ना होगा।

अचानक उस भीड़ में से किसी ने उसका नाम लेकर पुकारा।

—दीपंकर बाबू हैं?

दीपंकर ने पलटकर देखा। एक अपरिचित आदमी उसे खोज रहा है!

—दीपंकर बाबू कौन है?

बढ़िया खाकी पोशाक में कोई उत्तर भारतीय है। वह सदर दरवाजे से एकदम अन्दर चला आया है।

दीपंकर आगे बढ़ गया। बोला—किसको ढूंढ़ रहे हैं?

—दीपंकर बाबू को।

—मैं ही हूँ।

उस आदमी ने कहा—बहूजी आपको बाहर बुला रही हैं ....

—कौन बहूजी?

वह बोला—बाहर गाड़ी में बैठी हैं।

बाहर कहाँ? दीपंकर उस आदमी के साथ बाहर निकला। इस गली में कार नहीं आ सकती! दो कदम पर नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट का चौड़ा रास्ता है। वहीं बड़ी सी कार खड़ी है। बदामी रंग। दीपंकर को न जाने कैसा शक हुआ। अचानक उसकी छाती धड़क उठी। कार में मानो कोई जाना-पहचाना चेहरा है। जल्दी-जल्दी पास जाते ही दीपंकर अचंभे में पड़ गया।

—सती, तुम?

माँग में सुर्ख लाल सिंदूर है। सती पहले से ज्यादा गोरी लगी, पहले से ज्यादा मोटी और पहले से अधिक सुन्दर।

सती भी दीपंकर को देखकर कम आश्चर्यचकित नहीं हुई। वह बोली—अरे, तुम्हारे सिर में क्या हुआ है?

दीपंकर बोला—अरे कुछ नहीं, कल जरा चोट लगी थी। लेकिन तुम कैसे चली आयी?

सती हँसी। बोली—तुम्ही से मिलने आयी हूँ।

—मुझसे?

—क्यों, तुमसे नहीं मिला जा सकता क्या?

कहकर सती मुस्करायी।

दीपंकर बोला—कल तो मैं तुम्हारे घर गया था, तुम्हारी ससुराल, प्रियनाथ मल्लिक रोड पर। लेकिन रात ज्यादा हो गयी थी, शायद तुम सो गयी थीं, इसलिए बुलाया नहीं ....

उसके बाद जरा रुककर बोला — कार से निकलोगी नहीं ?

सती मुस्कराकर बोली — नहीं । हाँ, मैं क्यों आयी हूँ, वह तो बता दूँ । अगले सोमवार मेरे घर आना होगा । आओगे न ? सोमवार शाम को ....

दीपंकर बोला — अगले सोमवार शाम को ?

सती बोली — हाँ ....

दीपंकर बोला — क्यों नहीं आऊँगा ? लेकिन बात क्या है ?

सती बोली — तुम मेरे घर खाना खाओगे ....

दीपंकर सिर नीचा किये बात- कर रहा था । बोला — खाना खाऊँगा ?

— हाँ, जिसे न्योता कहते हैं । समझ नहीं पाये ?

दीपंकर बोला — आश्चर्य है ।

सती बोली — इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? न्योता नहीं दिया जाता क्या ? एक दूसरे को तो हर कोई न्योता देता ही है ।

दीपंकर बोला — मेरा मतलब यह नहीं है ।-कल रात मैं तुम्हारी ससुराल के सामने काफी देर तक खड़ा रहा । तुमसे भेंट करने की बड़ी कोशिश की और आज तुम खुद आ गयीं ....

— तुमने बुलाया क्यों नहीं ? मैं तो घर पर ही थी ।

दीपंकर बोला — बड़ा डर लगा । सोचा, एक अमीर के मकान में जाऊँगा, कहीं कोई कुछ कह दे ....

सती खूब हँसने लगी । उसने कोई विरोध नहीं किया । सिर्फ कहा — अमीर देखकर ही तो पिताजी ने वहाँ मेरी शादी की है ।

अचानक प्रसंग बदलकर वह बोली — छोड़ो । तुम आना जरूर, याद रहेगा न ?

दीपंकर ने पूछा — क्या अभी तुम और कई लोगों को न्योता देने जाओगी ?

सती बोली — कई लोगों को ! कई लोगों को क्यों न्योता दूँगी भला ? सिर्फ तुमसे कहने चली आयी, और किसी से नहीं कह रही हूँ ।

— सिर्फ मुझे न्योता दे रही हो ?

दीपंकर सचमुच आश्चर्य में पड़ गया । और किसी को नहीं, अकेले उसी को न्योता दिया जा रहा है ! दीपंकर ने सीधे सती की तरफ देखा । उसके बदन पर ढेर सारे गहने हैं, उसकी देह में ढेर सारा रूप है, उसकी आँखों में भी ढेर सारी आत्मीयता है । अब तक यह सब दिखाई नहीं पड़ा था । दीपंकर जी भरकर देखने लगा ।

बोला — इतने लोगों के रहते तुमने न्योता देने के लिए मुझे क्यों चुना ?

सती बोली — मेरी मर्जी है ! इसका कोई जवाब नहीं है ।

उसके बाद आवाज धीमी कर बोली — आओगे न ?

सती का स्वर बड़ा करुण सुनाई पड़ा । दीपंकर बोला — तुम तो ऐसे कह रही

हों जैसे तुम्हारे घर खाना खाकर मैं तुम लोगों पर बड़ा एहसान करूँगा। अगर तुम न आती और नौकर से ही बुला भेजती तो भी मैं आता ....

— तो मैं जाऊँ ? याद रहेगा न ? पता तो मालूम है न ?

क्या कहती है सती ! याद रहेगा न ? पता मालूम है न ? वह भला क्या जाने कि दफ्तर में काम करते समय और ट्राम में बैठे-बैठे उसने कितनी वार सती को याद किया है ! घर आते समय कितनी वार उसने पलटकर प्रियनाथ मल्लिक रोड की तरफ देखा है।

ड्राइवर गाड़ी स्टार्ट करने जा रहा था, सती बोली — मौसीजी से मिल नहीं सकी, वे बुरा न मानें, तुम उनसे कह देना ....

दीपंकर बोला — उनसे मिल नहीं सकी, अच्छा हुआ, इस समय माँ को बात करने की फुरसत भी नहीं है ....

— क्यों ? वे काम में व्यस्त है ?

— नहीं, अघोर नाना अभी-अभी मरे है ....

— अरे !

दीपंकर बोला — हाँ, तुम्हारा ड्राइवर बुलाने गया था, उसी के थोड़ी देर पहले। इस समय घर में क्या तमाशा हो रहा है, तुम सोच नहीं सकती। कल से मेरा मन बड़ा दुःखी है। नाना मुझे अपने नाती के समान मानते थे। अपने नातियों को वे उतना नहीं चाहते थे, जितना मुझे — तुम्हें तो सब पता है। अब संसार में माँ के अलावा मेरा कोई नहीं रहा।

— क्या हुआ था ?

दीपंकर बोला — वह लंबी कहानी है, अभी बताने को फुरसत भी नहीं है और तुम भी उतनी देर रुक नहीं सकती। तुम लोगों के जाने के बाद मेरे जीवन में बहुत कुछ घटा, सब कुछ बताने पर भी तुम समझ नहीं पाओगी।

— तो मैं तुम्हारा ज्यादा समय नहीं लूँगी। पहले कहते तो इतनी देर भी न लगाती। अच्छा, मैं जा रही हूँ ....

— हाँ, वह सब सुनने की जरूरत नहीं है।

— हाँ, तो अगले सोमवार, याद रखना, मैं इन्तजार करूँगी ....

सती की कार हलकी आवाज के साथ चली गयी। कितना आश्चर्य है ! दीपंकर को लगा कि संसार में ऐसी आश्चर्यजनक घटना भी होती है ! इन कई महीनों में दीपंकर ने न जाने कितनी बार सती को याद किया और आज वही सती खुद उसे बुलाने आ गयी। आखिर दुनिया में ऐसा भी होता है ! बहुत कुछ पूछना था, दीपंकर के मन में बहुत से सवाल इकट्ठा है, लेकिन वह कुछ भी न पूछ सका। सती उसे न्योता देकर चली गयी।

— दीपू बाबू, आपको देवता बुला रहा है।

दीपंकर ने पीछे मुड़कर देखा। फोंटा का एक चेला खड़ा था। दीपंकर ने फिर सड़क पर निगाह दौड़ायी — सती की कार जा चुकी थी। वह धीरे-धीरे मकान के अन्दर गया। वहाँ तो मानो महोत्सव शुरू हो गया था। उसके कमरे में भी बड़ी भीड़ थी। छिटे और फोंटा सभी थे। संदूक का ताला टूट चुका था। अन्दर से सामान निकाले गये थे। चाँदी के बर्तन गिन्नियाँ, रुपये, पैसे, इकन्नियाँ दुअन्नियाँ, और ढेर सारी अन्य कीमती चीजें। सबको बराबर दो हिस्सों में बाँटा जा रहा था।

देखते ही फोंटा ने कहा — क्यों रे दीपू, कहाँ गया था ? मैं तो समझ रहा था कि तू भाग गया। उधर का क्या हाल है ?

फोंटा के हाथ में गिलास था, छिटे के हाथ में भी। कमरे में निगाह दौड़ाते ही दीपंकर को गुस्सा आया। यही उसका सोने का कमरा था ! यहीं उसकी माँ सोती थी ! यही माँ का कैश बाक्स था। इसी सन्दूक पर माथा टेककर माँ रोज प्रणाम करती थी। माँ के लिए यही सन्दूक लक्ष्मी था ! लेकिन इन लोगों ने सब कुछ गंदा कर दिया, सब कुछ अशुद्ध और अपवित्र कर दिया।

दीपंकर धीरे-धीरे माँ के पास जाकर खड़ा हो गया। रातभर माँ अघोर नाना के पास बैठी रही थी और एक मिनट के लिए भी उठकर कहीं नहीं गयी थी। अघोर नाना चित्त लेटे थे। धीर स्थिर मूर्ति। बिन्ती भी बगल में माँ से सटकर बैठी थी।

दीपंकर पास जाकर खड़ा हुआ तो माँ ने देखा। कहा — आज दफ्तर मत जाओ, सब तो तुम्हीं को करना पड़ेगा।

दीपंकर बोला — फिर मैं साहब को फोन कर आऊँ ....

— हाँ, कर आओ।

श्मशान पास में है। केवड़ातल्ला श्मशान से दीपंकर ने दफ्तर में फोन किया। रॉबिन्सन साहब ने पूछा — ह्वाट्स राँग विद यू ? क्या हो गया है ?

दीपंकर बोला — मेरे ग्रैंडफादर का देहांत हो गया है।

साहब बोला — तुमने तो कहा था कि मदर के अलावा तुम्हारा और कोई नहीं है।

— मेरे अपने ग्रैंडफादर नहीं हैं सर, लेकिन ग्रैंडफादर से बढ़कर ....

साहब ने पूछा — कब तक ऑफिस आ सकोगे ?

दीपंकर बोला — सोमवार !

साहब ने फिर पूछा — डैफिनिटली सोमवार ?

— हाँ, सर।

सती के घर सोमवार शाम को जाना होगा। उसी दिन दीपंकर दफ्तर से लौटते समय सती के घर चला जायेगा।

● ● ●

फिर वही श्मशान। ईश्वर गांगुली लेन में दीपंकर का मकान है। इसलिए बचपन से वह श्मशान देखने का आदी है। रोज रात को जब सब लोग सो जाते हैं, श्मशान से आवाज साफ सुनाई पडती है। किरण के साथ शाहनगर रोड से जाते समय उसने कितनी बार श्मशान के पास की दुकान से आलू चॉप या बैंगनी खायी थी। श्मशान के बारे में कोई भय या आतंक उसके मन में नहीं है। श्मशान मानो उसके घर का आँगन है। उसी आँगन में खेलकर वह बडा हुआ है। उसी श्मशान से उसे जीवन का बीज मिला है। उसी जाने-पहचाने श्मशान को मानो उस दिन फिर से जानना पड़ा। बार-बार देखने पर भी श्मशान कभी पुराना नही लगता। अभी उस दिन वह इसी श्मशान में किरण के बाप को लाया था। यही जीवन-मृत्यु के महा-सधिस्थल में मानों उस दिन उसका नया जन्म हुआ।

फोटा अचानक पास आया। बोला — क्यों रे दीपू, तू क्या मेरे मकान से चला जायेगा ?

दीपंकर ने पूछा — किसने कहा ? किससे सुना ?

फोटा बोला — दीदी कह रही थी ! हम खैर, पढे-लिखे नही है, लेकिन तू तो पढा-लिखा है, यह तेरी कैसी अकल है ?

दीपंकर बोला — इतने दिन अघोर नाना थे, इसलिए जोर भी था, अब कौन रह गया है ? किसके जोर पर रहूँगा ?

फोटा बोला — क्यों ? कौन साला तुझे भगायेगा ? मेरे रहते कौन साला तुझे मकान से निकालेगा, देख लूँगा न ?

दीपंकर बोला — ऐसी बात नही है। अब तो मैं बडा हो गया हूँ भाई, अब मेरा दूसरे मकान में चले जाना ही ठीक है। क्यों मैं हमेशा तुम लोगो के घर रहूँगा ? क्या यह अच्छा लगता है ?

फोटा इस समय पूरी तरह होश में नही है। वह सबेरे से पीता रहा है। दिन-भर वह पीता रहता है। सिर्फ फोंटा नही, छिटे भी इसी तरह पीता है। अभी तो बहुत रुपये हाथ लगे हैं। इतने दिन बाद मकान भी अपना हो गया है।

फोटा बोला — जितने दिन तू चाहेगा रहेगा, कोई साला कुछ नही कहेगा।

दीपंकर बोला — अभी तुम उधर जाओ फोटा, अभी यह सब लेकर माथापच्ची मत करो।

फोटा बोला — क्या कहा तूने ? क्या मैं नशे में हूँ ?

दीपंकर बोला — नही, यह मैंने कब कहा ? मैं कह रहा हूँ कि अभी तुम्हारा

मन दुःखी है, इसलिए वह सब बात अभी रहने दो।

सचमुच अघोर नाना की मृत्यु ने दीपंकर के जीवन की नींव को हिला दिया था। इतने दिन का सम्पर्क, इतने दिन का आकर्षण, शायद इसी तरह एक दिन छूट जाता है। सुदूर बचपन में धीरे-धीरे कितने लोगों से दीपंकर का सम्पर्क बना और धीरे-धीरे वह टूट भी चुका। अब उसका हिसाब लगाने पर उसे आश्चर्य होता है। शायद इसी तरह एक तरफ टूटता है और दूसरी तरफ बनता है। अघोर नाना को खाट पर रखते समय उस घर में कोई रोनेवाला नहीं था। उस दिन कोई भी नहीं रोया था। तीन रुपये का मामूली सस्ता खाट और दस पैसे की नारियल की जटा की रस्सी। दीपंकर ने कुछ फूल खरीदना चाहा था, लेकिन फोंटा ने कहा था — हट, फूल-वूल की जरूरत नहीं है। बेकार क्यों पैसा बरबाद करना!

शायद पैसा बेकार ही बरबाद होता। फिर भी दीपंकर को लगा था कि जो आदमी इस घर का इतने दिन कर्ता-धर्ता रहा, उसी की मृत्यु पर थोड़ा पैसा बरबाद करना क्या जरूरी नहीं था। सिर्फ दो आने के फूल खरीदकर खाट पर रख देने से चलता। लेकिन उसमें भी उत्तराधिकारियों को एतराज था। अघोर नाना अगर जिन्दा होते तो शायद वे भी आपत्ति न करते। दस पैसे की रस्सी और तीन रुपये का हलका खाट। अंतिम संस्कार का खर्च सवा तीन रुपये। कुल छः रुपये साढ़े छः आने। लखपति आदमी के लिए आखिरी खर्च और इस मामूली खर्च में भी वारिसान को आपत्ति थी!

एकादशी बनर्जी खबर पाते ही आये थे। बहुत बड़ी कार में वे आये थे। कार से नंगे पाँव उतरकर वे अघोर नाना के नश्वर शरीर को अंतिम बार के लिए देख गये थे। चावलपट्टी के धनी यजमान लोग आये थे। जिनको खबर मिली, वे सभी आये। मुहल्ले के लोग भी आये थे। हालदार लोगों के घर से भी कई पुरनियाँ लोग आये थे। जवानी में अघोर नाना जिन लोगों में उठते-बैठते थे और जिन लोगों से हँसी-मजाक करते थे वे भी अपना अंतिम कर्तव्य पूरा कर गये।

किसी-किसी ने कहा — अहा, बड़े भले आदमी थे भट्टाचार्य जी ....

किसी-किसी ने कहा — पुण्यात्मा थे, स्वर्ग चले गये ....

एक ने कहा — इतसे दिन बाद कालीघाट खाली हो गया ....

दीपंकर ने अघोर भट्टाचार्य से कभी किसी को बात करते नहीं देखा था। दीपंकर जानता था, अघोर नाना सदा से अकेले हैं। अघोर नाना सिर्फ रिक्शे में बैठते और देवता का नैवेद्य चुराकर अपने घर में भरते रहे थे। इसके अलावा वे दिनभर दुनिया भर के लोगों का मुँह जलाते रहे थे। उसी अघोर नाना को एकाएक पुण्यात्मा होते देखकर दीपंकर को बड़ा आश्चर्य हुआ।

जब श्मशान से सब लौटे तब मकान बड़ा सुनसान लगा।

एक बार फोंटा चिल्लाया — बोलो हरि, हरि बोलो ....

सबके समवेत स्वर से ईश्वर गांगुली लेन अचानक चौंक पड़ा। एक मनुष्य का

अंत हुआ, उसके साथ एक युग का भी। मानो एक अध्याय पूरा हो गया।

माँ तैयार थीं। नाई सबके लिये इन्तजार कर रहा था। उसने सबके हाथ-पाँव के नाखून काटे। फिर हरेक के लिये नीम की पत्ती और बताशे का इन्तजाम था। नीम की पत्ती दाँत से काटकर बताशा खाना पड़ता है। इससे परलोकगत पितृपुरुषों का कल्याण होता है। उसमें 'नहीं' नहीं करना चाहिए, उससे इन्कार नहीं करना चाहिए। युग-युग से इसी अनुष्ठान और इसी संस्कार की शृंखला से उनका जीवन बँधा है। यह बुरा हो या अच्छा, अगर इससे अघोर नाना की आत्मा का कल्याण होता है तो क्या हर्ज है!

आँगन में खड़े होकर दीपंकर ने चारों तरफ देखा। आज सारा मकान सूना-सूना लगा। एक दिन चाचाजी लोग बगलवाला मकान छोड़कर गये थे — उस दिन भी मकान ऐसा ही सूना लगा था। लेकिन तब का वह सूनापन दूसरी तरह का था। आज तो मानो इस मकान की आत्मा भी मर चुकी थी। अब कोई स्नेह, तिरस्कार और गाली-गलौज करके दीपंकर की रक्षा करनेवाला नहीं रहा। आज दीपंकर मानो अपनी विधवा माँ के साथ निराश्रित हो गया।

बिन्ती दी सवेरे से माँ के आसपास घूमती रही थी। वह एक क्षण को भी माँ से दूर नहीं हो रही थी। उसका चेहरा सूखकर कितना छोटा लग रहा था। सवेरे ही छिटे और फोंटा ने कमरे से संदूक हटा लिया था। अब वह जगह खाली थी। कमरे में आकर दीपंकर ने देखा कि माँ चटाई बिछाकर वहीं दीवार से टिककर बैठी थीं। बगल में बिन्ती दी माँ की गोद के पास बैठी थीं।

दीपंकर बोला — माँ, मैं एक काम से जाऊँगा ....

माँ बोलीं — इतनी रात को अब कहाँ जायेगा तू?

दीपंकर बोला — अब तो यह मकान हमें छोड़ना पड़ेगा।

माँ बोलीं — हाँ, छोड़ना तो पड़ेगा, लेकिन क्या आज ही? पहले क्रिया-कर्म सब हो जाय ....

दीपंकर बोला — लेकिन अभी से खोज-खबर लेनी होगी। जरा अच्छा मुहल्ला हो, नहीं तो रहना मुश्किल होगा।

माँ बोलीं — ठीक है, जैसा तू अच्छा समझता है कर [illegible] कहाँ?

— वाह रे! तुम्हारे लिए ही तो मकान छोड़ रहा हूँ। तुम्हीं तो [illegible] के लिए कहा करती थीं! इतने दिन अघोर नाना के [illegible] नहीं जा सका, लेकिन अब तो कोई डर नहीं है। अब तो तुम्हें कोई [illegible] नहीं देगा।

माँ कुछ बोलीं नहीं। चुप रहीं। दीपंकर को लगा कि अघोर नाना के जाने से माँ को ही ज्यादा शोक हुआ है। अघोर नाना के लिए [illegible] अंतिम अनुष्ठान तक माँ ही [illegible]

भी उसने आँसू नहीं बहाये। घर में आँखों के सामने इतना अनाचार, अविचार और अत्याचार हुआ, लेकिन माँ जरा भी विचलित नहीं हुई। उसके अनासक्त आचरण से ही उसका शोक पूरी तरह प्रकट हो सका था। सवेरे से वह एक शब्द नहीं बोली। जो कुछ करना था, वह चुपचाप करती गयी। जब अघोर नाना को लोग श्मशान ले गये तब वह बिन्ती को अपनी छाती के पास लेकर सान्त्वना देती रही। बिन्ती का भी तो कोई नहीं है। माँ को रोते देखकर तो बेचारी बिलख उठेगी। उसको फिर किससे सांत्वना मिलेगी, किसके पास उसे आश्रय मिलेगा! माँ ने बहुत कोशिश की कि उसकी शादी हो जाय, कितनी बार दिन कितने लोग आकर उसे देख गये, माँ ने सबको जलपान कराया, सबने मिठाई खायी और लड़की को भली-भाँति जाँचा-परखा। लेकिन उसके बाद किसी ने भी कोई खबर नहीं दी। कहाँ की और किसकी बेटी है, माँ-बाप नहीं हैं। उसी के कारण माँ यहाँ इतने दिन पड़ी रही।

माँ ने बिन्ती दी के चेहरे को हाथ से उठाकर कहा — क्यों री, तुझे नींद भी नहीं आती? तू क्या दिन भर मेरा आँचल पकड़कर ही बैठी रहेगी?

अगर कुछ कहती तो कुछ पता चलता, लेकिन यह लड़की तो बोलती भी नहीं, रोती भी नहीं और गुस्सा भी नहीं करती। सिर्फ वह गूँगी बनी माँ के पीछे डोलती रहती है।

— हाँ री, तेरे कारण क्या मैं नरक में भी नहीं जा सकूँगी?

अघोर नाना की मृत्यु के कई दिन बाद तक इस घर का आधा शरीर मानो सुन्न पड़ा रहा। इस आधे शरीर के अंग हैं दीपंकर, दीपंकर की माँ और बिन्ती। दूसरे आधे शरीर में मानो नया जीवन फुंका था! छिटे और फोंटा की महफिल खूब जमी। लक्का और लोटन अब इस मकान में आ गयी हैं। दोनों ने नये गहने बनवा लिये हैं। दोनों खूब पान चबाती रहती हैं। पुरोहित आये। श्राद्ध के लिए फर्द बनने लगी। षोड़श होगा। वृषोत्सर्ग होगा। यही नहीं। एक सौ एक ब्राह्मण-भोजन का सुझाव फोंटा ने दिया। उसने कहा — अघोर भट्टाचार्य का श्राद्ध धूमधाम से करना होगा, नहीं तो बदनामी होगी। यजमान लोग असंतुष्ट होंगे।

दीपंकर सब कुछ देखता रहा। लेकिन वह किसी बात में नहीं पड़ा। उसने कुछ नहीं कहा, उसकी माँ ने कुछ नहीं कहा और बिन्ती भी कुछ न बोली। ये लोग मानो इस तरफ के हैं और वे लोग उस तरफ के। घर का माहौल ही मानो बदल चुका है। इस घर में अब तक हँसी न थी, आवाज न थी, शोरगुल न था। लेकिन अब वह सब है। छिटे और फोंटा अब इस मकान में सीना तानकर रहते हैं। लक्का और लोटन जोर-जोर से बोलती हैं।

पुरोहित आते हैं। पूछते हैं — वृषोत्सर्ग तो होगा न बेटा?

छिटे कहता है — जरूर होगा! वृषोत्सर्ग न हुआ तो श्राद्ध कैसा?

— और दान कैसा होगा?

जो कुछ होना जरूरी है, सब होगा ! और लोगों के श्राद्ध में जो कुछ होता है, उसका चौगुना होगा ! दीपंकर सब सुनता है। माँ भी सुनती है। किरण दी भी सुनती है। बड़े-बड़े हंडे और कड़ाह आये। ढेर की ढेर लकड़ी आयी। छिटे और फोटा के चेलों ने आकर मकान को गुलजार कर दिया।

दीपंकर की माँ एक बार चन्नूनी की कोठरी में जा कर खड़ी हुई। चन्नूनी ठीक से बात नहीं कर सकती। वह गंदे बिस्तर पर सिमटी-सिकुड़ी पड़ी रहती है। दीपंकर की माँ को देखकर वह आँसू बहाने लगी।

दीपंकर की माँ ने पूछा — आज कैसी हो ?

चन्नूनी हाथ हिलाती है। कहती है — नहीं। अब मैं नहीं हूँ दीदी !

माँ बोली — अब हम लोग जा रहे हैं। चन्नूनी, अब हम यह मकान छोड़ देंगे ....

चन्नूनी इसका मतलब समझती है। इसलिए उसकी आँखों से और ज्यादा आँसू बहते हैं। वह दीपू की माँ का हाथ पकड़ लेती है। पता नहीं, बुढ़िया क्या कहना चाहती है। शायद वह यही पूछना चाहती है कि मेरा दस तोले का हार दीपू को दिया है न ? शायद और भी बहुत कुछ कहना चाहती है। लेकिन माँ उसे थोड़ी देर सांत्वना देकर अपने कमरे में चली आयी। आजकल माँ के पास कोई काम नहीं है। सिर्फ दो जनों का खाना बनाना और खाना।

दीपंकर सवेरे निकल जाता है और शाम को लौटता है। पता नहीं, वह कहाँ-कहाँ जाता है। कहीं मनपसंद मकान नहीं मिल रहा है।

गांगुली बाबू ने उस दिन कहा — मेरे मुहल्ले में एक बढ़िया मकान है, लेंगे सेन बाबू ?

दीपंकर बोला — लेकिन बहूबाजार की तरफ नहीं जाऊँगा, इधर भवानीपुर की तरफ देख रहा हूँ। गंगा के पास हो तो ठीक है।

गांगुली बाबू बोला — ठीक है, अगर पता चल जाय तो आपको कहूँगा।

दीपंकर बोला — लेकिन मुझे बहुत जल्दी चाहिए। अब इस मकान में रहा नहीं जाता। आज मकान मिल जाय तो आज छोड़ दूँ।

दो कमरे हों तो काफी है। एक में माँ रहेगी और दूसरे में दीपंकर। [illegible] तीन कमरे हों तो और अच्छा है। एक कमरा बैठका [illegible] तो उसी में बैठेगा।

आखिर एक मकान मिल गया। चारों तरफ [illegible] लटकता देखकर दीपंकर पहुँच गया था। एकदम [illegible] दो बड़े कमरे और ऊपर भी दो। नल है। [illegible] मकान है। ऊपर के बरामदे से रेल लाइन दिखाई [illegible] है। जरा आवाज होगी। खैर, कोई बात नहीं। [illegible]

नहीं होगी। हाँ, गंगा जरा दूर है। माँ के गंगा-स्नान में दिक्कत होगी। लेकिन किराया भी तो देखना पड़ेगा। बीस रुपये। कोई ज्यादा किराया नहीं है।

बगल में मकान मालिक रहते हैं। उन्होंने पूछा — आप क्या करते हैं ?

दीपंकर बोला — रेलवे में हूँ ....

मकान मालिक निश्चिंत हुए। दो-तीन साल से उन्हें किरायेदार नहीं मिल रहा था। मकान खाली पड़ा था। असल में शहर छोड़कर कौन इस जंगल में आना चाहता है, बताइए। अब तो इधर लेक बन गया है, लोगबाग आ गये हैं। लेकिन उस दिन तक मकान के पीछे सियार बोलता था। गाड़ियाहाट के मोड़ पर उस समय भी बाजार नहीं हुआ था। इधर ट्राम भी नहीं थी साहब ! लोग क्यों आते ? बस, इस रेल का भरोसा था। दीपंकर ने पाँच रुपये पेशगी के दे दिये।

उस सज्जन ने पूछा — कब से आयेंगे ?

दीपंकर बोला — आज ही आ जाऊँगा, आज दफ्तर नहीं जाऊँगा ....

— सवेरे ही या शाम को ?

दीपंकर बोला — दोपहर तक चला आऊँगा।

घर लौटने पर माँ ने पूछा — क्यों रे, इतनी देर क्यों कर दी ? दफ्तर नहीं जायेगा ?

दीपंकर बोला — चलो माँ मकान मिल गया है। आज ही चला जाऊँगा ....

माँ बोली — क्या कहता है रे, न कहना न सुनना, बस अचानक चल देगा ?

दीपंकर बोला — लेकिन यहाँ एक मिनट भी रहने को मन नहीं करता ....

— लेकिन इतने दिन तो रहा, अब एक दिन भी न रह सकेगा ? कल चला जायेगा।

दीपंकर बोला — अब एक दिन भी यहाँ अच्छा नहीं लग रहा है माँ। मैं अभी चला जाऊँगा। क्या अब यहाँ कोई भला आदमी रह सकता है ?

माँ बोली — लेकिन आज तेरा जन्मदिन है बेटा, जन्मदिन पर तू इतने दिन पुराना मकान छोड़ेगा ?

— लेकिन मैं तो वादा कर आया हूँ कि आज दोपहर तक चला आऊँगा।

— मुझसे बिना पूछे तू क्यों वादा कर आया ? तू नहीं जानता कि आज तेरा जन्मदिन है ?

जन्मदिन पर मकान नहीं छोड़ा जाता, ऐसी बात दीपंकर नहीं जानता था। फिर आज उसका जन्मदिन है, यह भी उसे मालूम नहीं था।

दीपंकर बोला — मैं पाँच रुपये पेशगी दे आया हूँ।

— ठीक है, रुपया चला नहीं जायेगा। जन्मदिन पर क्या कोई मकान छोड़ता है ? तू यह सब भले ही न मान, लेकिन माँ होकर मैं कैसे न मानूँ ?

— फिर कब चलोगी ?

माँ बोली — कल। कल ही चल ....

आखिर वही तय हुआ। कल ही चला जायेगा। इतने दिन का पुराना मुहल्ला छोड़कर दीपंकर चला जायगा। यहाँ के भले-बुरे सब कुछ से नाता तोड़कर वह चला जायेगा। अब यहाँ के बारे में वह नहीं सोचेगा। धर्मदास ट्रस्ट माडल स्कूल, कालीघाट पथरपट्टी, सोने के कार्तिक का घाट, माँ का मन्दिर और हाजी कासिम का बगीचा—सब कुछ वह भूल जायेगा। बड़ी मीठी और बड़ी कड़वी है यहाँ की स्मृति। वही सब स्मृति मिटाकर वह चला जायेगा। अब वह किसी को याद नहीं रखेगा।

दीपंकर बोला — क्या-क्या सामान जायेगा, बता दो, मैं ठीक करके रख दूँ।

माँ बोली — इतनी जल्दी किस बात की है, शाम पड़ी है, बाद में यह सब किया जा सकता है — दफ्तर से लौटकर कर लेना।

दीपंकर बोला — आज दफ्तर से लौटने में देर हो जायेगी ....

— क्यों ? शाम को कहाँ जायेगा ?

दीपंकर बोला — आज रात में घर में खाना नहीं खाऊँगा, आज ....

— क्यों ? कहाँ खायेगा ? कहीं न्योता है क्या ?

दीपंकर बोला — हाँ।

— तो आज ही न्योता पड़ गया ? सोचा था, तेरे लिए अच्छी-अच्छी चीजें बनाऊँगी ....

दीपंकर बोला — अब क्या किया जा सकता है ?

— लेकिन कहाँ न्योता है ? किसने न्योता दिया ?

दीपंकर बोला — सती !

— सती ! माँ मानो चौंक उठी।

बोली —कौन सती ? यहाँ जो रहती थी ? उसने तुझे क्यों न्योता दिया ? उससे तेरी कहाँ भेंट हो गयी ?

दीपंकर बोला — यहीं। यहाँ परसों आयी थी ....

— कब आयी ? मुझे कुछ नहीं मालूम !

दीपंकर बोला — जिस दिन अघोर नाना मरे, उसी समय। सब सुनकर वह तुमसे मिलने नहीं आयी। मुझसे कहकर चली गयी। फिर उस समय यहाँ जो हाल था, कैसे उससे आने के लिए कहता ?

माँ बोली — उसकी तो शादी हो गयी है ! कैसी शादी हुई यह भी न जान सकी ! तू उसकी ससुराल जानता है ? उसने पता बताया है क्या ?

दीपंकर बोला — हाँ ....

— लेकिन यह न्योता किस बात का है ?

दीपंकर बोला — यह मैं कैसे जानूँगा। उस समय पूछने का मौका कहाँ मिला ? वह अचानक आयी और कहकर चली गयी। उस समय सब पूछने का मौका

नहीं होगी। हाँ, गंगा जरा दूर है। माँ के गंगा-स्नान में दिक्कत होगी। लेकिन किराया भी तो देखना पड़ेगा। बीस रुपये। कोई ज्यादा किराया नहीं है।

बगल में मकान मालिक रहते हैं। उन्होंने पूछा —आप क्या करते हैं ?

दीपंकर बोला — रेलवे में हूँ ....

मकान मालिक निश्चिंत हुए। दो-तीन साल से उन्हें किरायेदार नहीं मिल रहा था। मकान खाली पड़ा था। असल में शहर छोड़कर कौन इस जंगल में आना चाहता है, बताइए। अब तो इधर लेक बन गया है, लोगबाग आ गये हैं। लेकिन उस दिन तक मकान के पीछे सियार बोलता था। गाड़ियाहाट के मोड़ पर उस समय भी बाजार नहीं हुआ था। इधर ट्राम भी नहीं थी साहब ! लोग क्यों आते ? बस, इस रेल का भरोसा था। दीपंकर ने पाँच रुपये पेशगी के दे दिये।

उस सज्जन ने पूछा — कब से आयेंगे ?

दीपंकर बोला —आज ही आ जाऊँगा, आज दफ्तर नहीं जाऊँगा ....

— सवेरे ही या शाम को ?

दीपंकर बोला — दोपहर तक चला आऊँगा।

घर लौटने पर माँ ने पूछा — क्यों रे, इतनी देर क्यों कर दी ? दफ्तर नहीं जायेगा ?

दीपंकर बोला — चलो माँ मकान मिल गया है। आज ही चला जाऊँगा ....

माँ बोली — क्या कहता है रे, न कहना न सुनना, बस अचानक चल देगा ?

दीपंकर बोला — लेकिन यहाँ एक मिनट भी रहने को मन नहीं करता ....

— लेकिन इतने दिन तो रहा, अब एक दिन भी न रह सकेगा ? कल चला जायेगा।

दीपंकर बोला — अब एक दिन भी यहाँ अच्छा नहीं लग रहा है माँ। मैं अभी चला जाऊँगा। क्या अब यहाँ कोई भला आदमी रह सकता है ?

माँ बोली — लेकिन आज तेरा जन्मदिन है बेटा, जन्मदिन पर तू इतने दिन पुराना मकान छोड़ेगा ?

— लेकिन मैं तो वादा कर आया हूँ कि आज दोपहर तक चला आऊँगा।

— मुझसे बिना पूछे तू क्यों वादा कर आया ? तू नहीं जानता कि आज तेरा जन्मदिन है ?

जन्मदिन पर मकान नहीं छोड़ा जाता, ऐसी बात दीपंकर नहीं जानता था। फिर आज उसका जन्मदिन है, यह भी उसे मालूम नहीं था।

दीपंकर बोला — मैं पाँच रुपये पेशगी दे आया हूँ।

— ठीक है, रुपया चला नहीं जायेगा। जन्मदिन पर क्या कोई मकान छोड़ता है ? तू यह सब भले ही न मान, लेकिन माँ होकर मैं कैसे न मानूँ ?

— फिर कब चलोगी ?

वार्षिकी है। आप बल्कि उपहार देने के लिए कुछ खरीदकर लेते जाइये।

—बताइये, क्या खरीदूं ?

गांगुली बाबू बोला — चाहे कुछ भी खरीदें, एक-दो रुपये से कम में कुछ नहीं मिलेगा।

दीपंकर बोला — लेकिन मेरे पास तो ज्यादा पैसा नही है। पहले एकदम ध्यान में नही आया! जेब में सिर्फ ट्राम का किराया पडा है। सवेरे पाँच रुपये मकान-मालिक को पेशगी दे आया ....

—कहाँ मकान मिला ?

—बालीगंज स्टेशन रोड पर !

गांगुली बाबू बोला — लेकिन वहाँ आप क्या रह पायेंगे ? सुना है बालीगंज में बहुत ज्यादा मच्छर है। चारों तरफ जंगल ....

दीपंकर बोला — नहीं गांगुली बाबू, अब न तो वह बालीगंज है और न वह जंगल। आप शायद बहुत दिन से उधर नहीं गये। अब जाकर देखिए। गाड़ियाहाट के मोड़ पर काफी बडा बाजार बन गया है। बहुत से बडे-बडे मकान बन गये हैं। अब जायेंगे तो पहचान ही नही पायेंगे ....

गांगुली बाबू बोला — ठीक है, आप दो आने में रजनीगंधा का एक गुच्छा ले जाइए — सस्ता भी होगा और फैशन भी ....

इतने में मिस्टर घोषाल कमरे में आया।

आते ही बोला — ह्वेयर इज मिस माइकेल ? मिस माइकेल कहाँ है ?

गांगुली बाबू और दीपकर दोनों खड़े हो गये। दीपंकर बोला — मिस माइकेल आज दफ्तर नहीं आयीं सर — ऐबसेंट है ....

—आइ सी !

उसके बाद मिस्टर घोषाल ने न जाने क्या सोचा ! जाते-जाते रुककर बोला — सेन, सी मी इन माइ रूम। एक बार मेरे कमरे में आओ।

यह कहकर खटाखट मिस्टर घोषाल अपने कमरे में चला गया।

गांगुली बाबू बोला — क्या बात है सेन बाबू, मिस्टर घोषाल ने आपको बुलाया ?

— पता नहीं, देखूं ....

इतना कहकर दीपंकर सीधे मिस्टर घोषाल के कमरे में गया। उसे देखते ही मिस्टर घोषाल ने कहा — टेक योर सीट। बैठो कुर्सी पर ....

दीपंकर बैठा। लेकिन उसे थोड़ा आश्चर्य हुआ। मिस्टर घोषाल ऐसा बर्ताव तो नही करता ! भद्दा चेहरा मुस्कराता हुआ। बोला — डू यू नो, मैंने तुम्हें प्रोमोट किया है ?

दीपंकर फिर भी समझ नहीं पाया। अभी उस रात फ्री स्कूल स्ट्रीट में मिस

दरवान आगे-आगे चलने लगा और दीपंकर उसके पीछे। खड़ंजा बिछा रास्ता सीधे अस्तबल की तरफ गया है। उत्तर तरफ लॉन है। लॉन के चारों तरफ बगीचा। फिर चौड़े रास्ते से एक सँकरा खड़ंजा बिछा रास्ता बायें मुड़ गया है। वहाँ कई कमरे पास-पास हैं। शीशे की खिड़की के पीछे बिजली की बत्ती जल रही है। उसी के सामने ऊपर जाने की सीढ़ी है। सीढ़ी पर कार्पेट बिछा है। चारों तरफ देखकर दीपंकर भौंचक्का रह गया। इतना ऐश्वर्य! क्या यही ऐश्वर्य दिखाने के लिए सती ने उसे बुलाया है!

दरवान बोला — आइए बाबूजी, ऊपर आइए....

दरवान के पीछे-पीछे दीपंकर सीढ़ी से ऊपर जाने लगा।

कितना ऐश्वर्य, कितना वैभव चारों तरफ फैला हुआ है! सीढ़ी के दोनों किनारे छोटे-छोटे गमलों में रंग-बिरंगे पत्तोंवाले पौधे। जहाँ सीढ़ी मुड़ी है वहाँ मुरादाबादी गमले में कैक्टस है। कहीं धूल का नाम नहीं, कहीं कोई चीज बेतरतीब नहीं। ऊपर जहाँ सीढ़ी खत्म होती थी वहाँ मर्दखोर पर काले हरफों में मोनोग्राम बना था। दीवार का रंग न सफेद है न हरा, बल्कि दोनों के बीच का चमचमाता हुआ है! कहाँ लिये जा रहा है दरवान! इतनी सफाई में जूता पहनकर चलने में भी दीपंकर को कष्ट होने लगा।

पहली मंजिल से दूसरी मंजिल और दूसरी मंजिल से तीसरी मंजिल।

कम से कम एक लड़की की शादी करके भुवनेश्वर बाबू को जरूर शांति मिली है। दीपंकर अवाक् चारों तरफ देखने लगा। कैसी शान-शौकत है और कैसी सजावट! कलकत्ते में जिनके पास रुपया है, क्या वे इसी तरह आराम की जिंदगी बिताते हैं? ऐसे ऐश्वर्य में रहने के लिए सचमुच बड़ा सौभाग्य होना चाहिए। सती सौभाग्य लेकर ही पैदा हुई है। यह सुख से रहेगी यह तो पहले ही पता चल गया था। वह माँ के साथ गंगा नहाने जाती थी, मंदिर जाती थी। किन्ती को लड़केवाले देखने आते थे तो वह किन्ती को अपने गहनों से सजा देती थी। दीपंकर को बड़ा अच्छा लगा। सती का सौभाग्य देखकर उसे बड़ा अच्छा लगा। इतने दिन तक उसके मन में जो क्षोभ था वह एक ही क्षण में दूर हो गया। सचमुच दीपंकर से उसका क्या सम्पर्क था! अगल-बगल के मकानों में वे बचपन से रहे, इसके अलावा और कौन-सा सम्पर्क था!

— चलो, आ गये। मैं समझ रही थी कि तुम भूल गये।

बरामदे के आखिरी छोर पर सती खड़ी थी। दीपंकर ने उसकी तरफ देखा। चारों तरफ अपार ऐश्वर्य। उसके बीच सती दूसरी तरह की दिखाई पड़ी। एकदम दूसरी तरह की! हँसता हुआ चेहरा। सिर पर घूँघट जरा खिंचा हुआ। वह ना साड़ी पहने हुई थी। सितारों वाला ब्लाउज बदन पर। सिर के पीछे का हिस्सा मैं लगा। लगा, उसने बड़ा-सा जूड़ा बनाया है।

— दरवान! तुम नीचे जाओ।

कमरे का साफ फर्श चमक रहा था। बीच में बड़ी थाली की तरह मीने की काम वाली तिपाई। उस पर जापानी फूलदान जिसमें तरह-तरह के फूल थे। उस तिपाई के चारों तरफ अपहोलस्टर्ड सोफा कोच लगे थे। सोफे पर क्यूबिज्म के ढंग की डिजाइनें बनी थी। दीपंकर एक पर बैठ कर सोचने लगा कमरा कितना बड़ा है, लेकिन बाहर से पता नहीं चलता। एक तरफ सोफा कोच और दूसरी तरफ डबल दीवान। पूरा लेदर फिटिंग। बीच में फर्श का काफी हिस्सा खाली। दीपंकर ने दीवार की तरफ देखा। एक बूढ़े की तस्वीर लगी थी। पोर्ट्रेट। ठीक उसके दूसरी तरफ की दीवार में दो जनों की तस्वीर थी। कुर्सी पर सती बैठी है और उसके पीछे एक अपरिचित सज्जन खड़े हैं।

सती ने रजनीगंधा का गुच्छा गमले में रख दिया और दीपंकर की तरफ देख-कर कहा — उनको पहचान रहे हो ? वही मेरे पिताजी हैं।

भुवनेश्वर मिश्र। इतनी देर बाद दीपंकर पहचान सका। जिस दिन वे पहले पहल बर्मा से आये थे, उसी दिन दीपंकर ने देखा था। बस एक ही बार उसने उनको देखा था। ठुड्डी पर थोड़ी सी दाढ़ी थी। सती को मानो यह तेज पिता से ही मिला था। यौवन और रूप का तेज। स्निग्ध शांत परन्तु प्रखर। इसीलिए दीपंकर बारबार आकृष्ट होने पर भी सती से दूर-दूर रहा।

सती हँसने लगी। बोली — बारबार मेरी तरफ क्या देख रहे हो ?

दीपंकर बोला — तुम्हारे पिताजी की शक्ल से तुम्हें मिला रहा हूँ ....

सती बोली — पिताजी की शक्ल-सूरत का मुझे कुछ भी नहीं मिला। खैर, इधर इनको पहचान रहे हो ? ये ही मेरे पतिदेव हैं ....

सती ने 'पतिदेव' शब्द का ऐसे उच्चारण किया कि दीपंकर को बड़ा मजा आया। वह बोला — ये ही सनातन बाबू हैं ? वाह, देखने में बड़े खूबसूरत हैं !

सती अपने पति की प्रशंसा सुनकर मानो मन ही मन खुश हुई। बोली — पिताजी ने काफी देख-सुनकर मेरी शादी की है। अगर ये खूबसूरत न होते तो भला पिताजी मेरी शादी इनसे करते ?

दीपंकर मानो झेंप गया। बोला — नहीं, यह मैं नहीं कह रहा हूँ। सचमुच मैं सोच नहीं सका था कि इतने बड़े घर में तुम्हारी शादी होगी। तुमसे मिलने के लिए मैं उस दिन तुम्हारे मकान के सामने चक्कर लगा गया हूँ, लेकिन तुम्हारे दरबान की शक्ल देखकर अन्दर आने की हिम्मत नहीं पड़ी !

सती बोली — वह आदमी बड़ा अच्छा है, सिर्फ उसकी मूंछें देखकर बड़ा डर लगता है ....

दीपंकर बोला — तुम्हारी शादी में दावत नहीं खा सका, इसलिए मन में बड़ा अफसोस था, लेकिन आज वह अफसोस तुमने असल के साथ सूद देकर मिटा दिया।

यह कहकर दीपंकर ने मुस्कराने की कोशिश की। उसने सती की तरफ देखकर कहा — लेकिन एक बात समझ नहीं पा रहा हूँ कि तुम लोगों ने अपनी शादी की बात

गाँठ में सिर्फ मुझे क्यों बुलाया ?

सती होंठों को दवाकर मुस्कराने लगी। बोली — आज हमारी शादी की वर्ष गाँठ है, यह तुमसे किसने कह दिया ?

दीपंकर बोला — मैं समझ गया हूँ। लेकिन पहले मैं भी नहीं समझ पाया था। फिर सोचा तो समझ गया कि विना किसी उपलक्ष्य के क्यों सती न्योता देगी ! वहुत देर सोचने के वाद जव समझ गया तव जल्दीवाजी में रजनीगंधा का गुच्छा ही खरीद लाया।

सती वोली — क्यों, विना किसी उपलक्ष्य के क्या किसी को न्योता नहीं दिया जाता ?

दीपंकर वोला — सच वताओ न, और किसी को न्योता दिया है या नहीं ?

— अरे, तुम तो वड़े विचित्र आदमी हो ! सिर्फ तुम्हीं को न्योता दिया है तो क्या अनर्थ हो गया ?

दीपंकर चुप हो गया। सचमुच, जिसको खुशी होगी, उसी को तो कोई न्योता देगा, इसमें कोई क्या कह सकता है ! दीपंकर को यह सोचकर जरा गर्व का अनुभव हुआ।

वह वोला — अकेले मुझे वुलाकर तुमने मेरी खातिर की या मेरा सम्मान किया, यह कह नहीं सकता, लेकिन मन ही मन मुझे वड़ा गर्व हो रहा है सती !

फिर जरा रुककर दीपंकर ने पूछा — लेकिन वे कहाँ हैं ?

— कौन ?

— तुम्हारे पति, सनातन वावू। तुम्हारे घर में मैं अकेला वैठा तुमसे वातें कर रहा हूँ, यह कैसा लगता है ! वे नहीं आयेंगे ? उनको वुलाओ न।

सती हँसी। वोली — अरे उनको कैसे वुलाऊँ ? वे तो घर में नहीं हैं !

दीपंकर वोला — कहीं गये हैं क्या ?

सती को जरा आश्चर्य हुआ। वोली —हाँ, तुमसे शायद नहीं कहा ? वे पुरी गये हैं। वे गये हैं और उनके साथ मेरी सास भी गयी हैं। आज तीन दिन हो गये हैं....

दीपंकर के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। इसीलिए मकान वड़ा चुपचाप है ! सारे मकान में ऐश्वर्य की भरमार होने पर भी वड़ा सुनसान लग रहा है। इसीलिए मकान में घुसते समय लग रहा था कि क्या यहाँ कोई नहीं है ! दरवान और नौकर-चाकर तो हैं, फिर भी मानो कोई नहीं है।

— क्या तुम्हारे वाल-वच्चे भी उनके साथ गये हैं ?

सती हँसते-हँसते लोटपोट होने लगी। वोली — तुम्हारी अकल की वलिहारी है ! माँ को छोड़कर क्या वाल-वच्चे दूर रह सकते हैं ?

— यही तो मैं भी सोच रहा हूँ ! तुम यहाँ हो और तुम्हारे वच्चे वाप के संग

कैसे चले गये ! वे सब कहाँ गये ? दिखाई नहीं पड़ रहे हैं ?

सती बोली — अब मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ !

दीपंकर बोला — अरे, इसमें समझाने का क्या है ! मैंने माँ से कहा कि तुम न्योता दे गयी हो तो माँ ने पूछा कि सती के बाल-बच्चा हुआ कि नहीं ....

सती बोली — अगर होता तो क्या अब तक तुम देख नहीं पाते ! लेकिन नहीं हुआ तो क्या करूँ ?

दीपंकर बोला — नहीं हुआ ?

दीपंकर मन ही मन हिसाब लगाने लगा कि कितने साल पहले सती की शादी हुई थी !

— अच्छा, तुम बैठो ! मैं देख आऊँ, गोश्त का क्या हुआ ....

दीपंकर बोला — क्या तुम्हीं खाना बना रही हो ?

सती बोली — नहीं, रसोइया है, लेकिन एक दिन के लिये तुम्हें बुलाया है, इसलिये उस पर भरोसा नहीं होता। कहीं नमक ज्यादा डाल दे तो मेरी क्या इज्जत रह जायेगी ? पुराने रसोइये को सास अपने साथ पुरी ले गयी हैं, यह उतना होशियार नहीं है।

— तब तो तुम्हें बड़ी तकलीफ हुई !

सती हँसी। बोली — खाना बनाने में क्या औरतों को तकलीफ होती है ?

दीपंकर बोला — नहीं, यह मैं नहीं कह रहा हूँ, वे पुरी से लौट आते तब मुझे न्योता देती ! तब सनातन बाबू से भी परिचय हो जाता और तुम्हें भी इतनी तकलीफ न करनी पड़ती।

सती बोली — वाह, किसी के जन्मदिन को कैसे टाला जा सकता है ?

जन्मदिन ? दीपंकर को जन्मदिन वाली बात एकाएक याद आयी। जन्मदिन तो उसी का है। और वह बात आज तक सती को कैसे याद रही !

बोला — आज तो मेरा जन्मदिन है ! लेकिन तुम कैसे जान गयी ?

सती बोली — बैठो, मैं गोश्त देख आऊँ ....

यह कहकर सती कमरे से निकल गयी। उसके जाने के बाद दीपंकर न जाने क्या-क्या सोचता रहा। उसके जन्मदिन के बारे में एक माँ के अलावा कोई दूसरा कैसे जान सकता है ? फिर जानने पर भी कौन याद रख सकता है ? आश्चर्य की बात है ! यह सती भी कैसी लड़की है ! पति नहीं है, सास घर में नहीं है और अचानक उसे न्योता दे आयी। क्या इन लोगों में ऐसा भी चलता है ! फिर सनातन बाबू भी कैसे हैं और सती की सास की भी क्या अकल है ! वे बहू को अकेली छोड़कर पुरी चले गये ! फिर सती ने भी ऐसे समय उसे न्योता दिया, जब घर में कोई नहीं है ! क्या उसने यह अच्छा किया है ?

थोड़ी देर बाद सती मानो हवा में तैरती हुई कमरे में आयी। बोली — तुम्हें

अकेला छोड़कर चली गयी थी, तुमने बुरा तो नहीं माना ?

दीपंकर बोला — वाह रे वाह ! मैं तुम्हारे लिए क्या नया आदमी हूँ ?

सती बोली — तुम नये न सही, लेकिन मेरी ससुराल तो तुम्हारे लिए नयी है।

दीपंकर बोला — लेकिन सती, सनातन बाबू की बात मेरी समझ में नहीं आती। वे माँ को लेकर पुरी गये, लेकिन तुम यहाँ पड़ी हो, यह कैसी बात हुई ?

सती खिलखिलाकर हँसी। बोली — शादी के बाद इतने दिन बीत गये, अब किस बात का डर है ? तुम भी कैसी बात करते हो ? क्या मैं घर छोड़कर भाग जाऊँगी ?

— नहीं, भागने की बात नहीं है, लेकिन ....

— लेकिन क्या ? विरह ?

दीपंकर बोला — वे तुम्हें छोड़कर कैसे रह रहे हैं ?

सती बोली — नहीं भई, तुम जो शक कर रहे हो, वह बात नहीं है, हम दोनों में बड़ा मेल है।

उसके बाद जरा रुककर सती बोली — असल में मेरी सास की मनौती थी, इसलिये वे गयी हैं। घर छोड़कर सब चले जायेंगे यह अच्छा नहीं लगता, इसलिये मैंने कहा कि मैं यहाँ रहूँगी ....

दीपंकर ने पूछा — कब आयेंगे सब ?

सती बोली — अभी तो तीन दिन हुए वे गये हैं, अगले हफ्ते तक आयेंगे ....

दीपंकर गौर से सती को देखने लगा। ईश्वर गांगुली लेन के एक किरायेदार के घर की लड़की सती, बस से कालेज जाती थी और यहाँ आकर एकदम दूसरी तरह की हो गयी है। एकदम बहू लग रही है। गाल, मुँह, गले और छाती में भारीपन आ गया है। चिकनापन आया है। हाँ, शादी के बाद ऐसा होना स्वाभाविक है। सिर्फ लक्ष्मी दी ही देखने में खराब हो गयी है। पहले से अधिक कठोर, अधिक प्रखर।

— हाँ, तो दिन भर तुम क्या करती हो ? इतने नौकर-नौकरानियाँ हैं, तुम्हें शायद कुछ भी नहीं करना पड़ता ! कैसे अपना समय काटती हो ? शायद उनके साथ कार में बैठी खूब घूमती हो ?

— हाँ, किसी-किसी दिन घूमने निकलती हूँ।

— कहाँ जाती हो ?

— कभी बोटानिकल गार्डन तो कभी जेसोर रोड से सीधे जहाँ तक जी चाहता है निकल जाती हूँ। जब वह लौटने को कहता है तब हम लौटते हैं। कभी-कभी झमाझम पानी बरसने लगता है। उस समय हम कार में बैठे पानी बरसना देखते हैं।

दीपंकर बोला — सचमुच तुम लोग बड़े मजे में हो सती !

— तुम्हें जलन हो रही है ?

दीपंकर बोला — नहीं, मैं अपनी बात सोच रहा हूँ । सवेरे जल्दी-जल्दी खाना खाकर दफ्तर जाना पड़ता है, उसके बाद दिनभर तरह-तरह के विचित्र लोगों से मिलना-जुलना और बोलना-बतियाना पड़ता है । वह एक घिनौनी दुनिया है सती । अब सोचता हूँ कि इसी नौकरी के लिए मैंने कितने दिन कितने लोगों की खुशामद की है और कितनों के घर माँ दौड़ती रही है । अब लगता है कि वहाँ ज्यादा दिन नौकरी करने पर मेरी इन्सानियत ही खतम हो जायेगी ।

— क्यों ?

दीपंकर बोला — यह तुम नहीं समझोगी और मैं चाहता हूँ कि कभी तुम्हें समझना भी न पड़े । न समझना ही अच्छा है । ऐसा कोई गलत काम नहीं है जो लोग नौकरी की खातिर नहीं करते । झूठ कहते समय उनके चेहरे पर शिकन तक नहीं पड़ती । खैर, दफ्तर की बात छोड़ो ....

— नहीं-नहीं, बताओ ! मैं एक दिन तुम्हारे दफ्तर आऊँगी !

— तुम ?

— क्यों ? आने में क्या हर्ज है ?

दीपंकर बोला — हर्ज तो कुछ भी नहीं है । लेकिन तुम तो मजे में हो, दफ्तर क्यों आओगी ? फिर आओगी तो लोग क्या कहेंगे ?

— तुम्हें प्रोमोशन वगैरह कुछ मिला ?

दीपंकर ने सब कुछ बताया । कैसे एक मामूली क्लर्क से जल्दी-जल्दी उसकी तरक्की हो गयी, वही सब । ऐसा अवसर किसी के साथ नहीं होता । लेकिन न घूस देनी पड़ी, न खुशामद करनी पड़ी । पता नहीं क्यों वह रॉबिन्सन साहब की नेक नजर में पड़ गया है, जिससे उसकी नौकरी ठीकठाक चल रही है । नहीं तो दफ्तर में खटते-खटते उसकी जान निकल जाती । उसने और भी बहुत-सी बातें बतायीं । उसने स्टेशन रोड पर नया मकान किराये पर लिया है, छिटे और फोटा कितने विचित्र हैं, लक्का और लोटन कैसी हैं, यह सब भी उसने बताया । और विन्ती !

सती ने पूछा — अभी तक उसकी शादी नहीं हुई ?

दीपंकर बोला — हो सके तो तुम भी जरा कोशिश करना सती । तुम कोशिश करोगी तो उसकी शादी हो जायेगी । माँ उसी के बारे में सोच-सोचकर परेशान है । कैसे उस मकान को छोड़कर हम जायेंगे, यही मैं सोच रहा हूँ । छोड़ो वह सब !

अब दीपंकर ने दूसरा प्रसंग छेड़ा । बोला — छोड़ो, वे सब बेकार की बातें । तुम अपनी बात कहो ।

सती बोली — मैं अपनी बात क्या कहूँगी ? मुझे तो तुम अपने सामने देख रहे हो । खाती-पीती हूँ, सोती हूँ, और क्या नयी बात हो सकती है ?

दीपंकर बोला — तुम्हारी शादी के बाद आज पहली बार तुमसे मेरी ठीक से

मुलाकात हुई। ससुराल कैसी है, तुम्हारा वर कैसा है, दोनों में कैसा चल रहा है, वही सब बताओ ....

सती हँस पड़ी। बोली — सबका जिस तरह चलता है, उसी तरह हमारा भी चल रहा है। शादी के बाद एक बार उसके साथ पिताजी के पास गयी थी। एक महीना वहाँ रहकर लौट आयी।

दीपंकर बोला — यहाँ आने के बाद मुझे बड़ा अच्छा लग रहा है, सती! लग रहा है कि कम से कम एक ऐसे इन्सान को तो मैं जानता हूँ जो अपनी जिन्दगी में सुखी हो सका है। संसार में चारों तरफ नित नयी बात देखकर मन बड़ा दुःखी होता है। मैं खुद सुखी नहीं हो सका लेकिन तुम सुखी हो, इसी में मुझे सुख है ....

सती बोली — बस करो। अब बड़े-बूढ़ों की तरह बात न करो! तुम्हें कौन-सा दुःख है, जरा सुनूँ तो ....

दीपंकर बोला — क्या कहती हो? यह दुःख नहीं है।

— बताओ न, तुम्हें क्या दुःख है? नौकरी में तरक्की मिली है, अलग मकान ले लिया है ....

— क्या नौकरी में तरक्की और बढ़िया मकान से ही किसी का सब दुःख दूर हो जाता है?

सती हँसकर बोली — अब बचा है शादी होना! मैं ही मौसीजी से इसके लिए कह आऊँगी। नहीं, अब सचमुच तुम्हारी शादी होना जरूरी है। समझ रही हूँ कि अब तुम अकेले नहीं रह सकते!

दीपंकर बोला — अगर शादी के बाद तुम्हारी तरह सुखी हो सकूँ तो मैं शादी करने को तैयार हूँ ....

सती बोली — क्या शादी करने से भी कोई दुःखी होता है?

दीपंकर बोला — नहीं होता? मेरे दफ्तर में ही कितने लोग हैं, जो शादी करके पछता रहे हैं। तुम सुखी हो, इसलिए सबको सुखी समझ रही हो। तुम्हारी अच्छी गृहस्थी है, रुपये की कमी नहीं है, आराम की कमी नहीं, एक गिलास पानी तक तुम्हें अपने हाथ से लेकर पीना नहीं पड़ता, शादी करना तुम्हीं लोगों को पुसाता है।

सती बोली — लेकिन हम सुख से हैं, इसलिए तुम नजर मत लगाओ ....

— नहीं, ऐसी बात नहीं है सती, तुमने गरीबी नहीं देखी, मैंने देखी है। मुझे देख लो, बचपन में मैं किस तकलीफ में पला हूँ। कहना चाहिए कि भीख माँगकर और दूसरे के घर खाना पकाकर माँ ने खर्च चलाया है। वह तो तुमने देखा है। मेरी बड़ी इच्छा थी कि स्वराज करूँगा, देश का काम करूँगा, क्योंकि इस देश के नब्बे फी सदी लोगों की हालत मेरी तरह है। जानती हो, एक भले घर का लड़का सड़क पर फेंके गये डाभ उठा-उठाकर उसकी गरी खाकर पेट भरता है। इसीलिए जब स्वराजियों के बम से बड़े-बड़े जज-मैजिस्ट्रेट और अंग्रेज अफसर मरते हैं, तब बड़ा कष्ट होता है।

मन में लगता है कि मैं कुछ नहीं कर सका। मैं बाध्य होकर नौकरी कर रहा हूँ और देश के लिए कोई काम नहीं कर सका! अगर तुम लोगों की तरह मेरे पास रुपया होता तो मुझे नौकरी करके समय बरबाद नहीं करना पड़ता ....

सती चुपचाप सुनती रही।

दीपंकर बोला — तुम लोगों का रुपया और सुख देखकर बड़ा अच्छा लग रहा है। इसलिए कह रहा हूँ कि जब देश का हर आदमी इसी तरह सुख और चैन से रहेगा, तब मैं सुखी हो सकूँगा। ....

सती बोली — मैं देख रही हूँ कि तुम वैसे ही हो ....

— कैसा ?

— जैसा पहले थे! सोचा था, इतने दिन बाद तुम जरा अक्लमंद हो गये होगे!

दीपंकर बोला — तुम नहीं जानती हो सती कि हम सब प्राणमथ बाबू के शिष्य हैं। हम बढ़िया शुगर-कोटिंग देकर घटिया माल का व्यापार नहीं करते। कभी तुम किरण से घृणा करती थी, लेकिन जानती हो, वही किरण आज ....

सती बोली — अब तो बस करो! क्या तुम यहाँ भाषण करने आये हो? क्या मैंने तुम्हारा भाषण सुनने के लिए ही तुम्हें बुलाया है?

दीपंकर को मानो होश आया! वह बोला — सचमुच बेकार की बातें बकने लगा था! खैर, यह तो बताओ कि तुम्हें कैसे याद है कि आज मेरा जन्मदिन है। मैं तो खुद भी भूल गया था।

सती हँसकर बोली — औरतों को सब याद रहता है!

— रहता है? सचमुच रहता है?

— हाँ, सब कुछ याद रहता है।

दीपंकर बोला — मुझे भी रहता है। पहले दिन तुमने मुझे कुली समझकर चार पैसे दिये थे, मुझे अब भी याद है।

सती बोली — तुम्हारी याददाश्त तो जबर्दस्त है! लेकिन इतना याद रखना भी अच्छा लक्षण नहीं है। जीवन में तुम कभी सुखी नहीं हो सकोगे।

अचानक एक नौकर कमरे में आया। सती बोली — क्या है शंभु, कुछ कहेगा?

शंभु नाम सुनते ही दीपंकर मन ही मन चौंक उठा। शंभु! लक्ष्मी दी का चेहरा आँखों के सामने तिर गया।

शंभु बोला — ठाकुर पूछ रहा है अभी लूची तैयार करेगा?

दीपंकर की तरफ देखकर सती ने पूछा — तुम अभी खाओगे दीपू? भूख लगी है? मेरा सब तैयार है।

दीपंकर बोला — मेरे लिए मत सोचो, जब हो जायेगा खा लूँगा। मुझसे

क्यों पूछ रही हो ?

सती ने शंभु से कहा। ठीक है लूची तैयार करने को कह दे और टेबुल पर खाना लगा ....

शंभु चला गया। सती बोली — जल्दी-जल्दी खाकर भाग मत जाना ....

— तुम भी तो मेरे साथ खाओगी ?

सती बोली — नहीं, नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है तुम पहली बार आये हो, तुमको खड़े होकर खिलाना पड़ेगा न ! तुम खा लोगे तब मैं खाऊँगी। फिर खाने के बाद कहीं घूमने चला जायेगा, गाड़ी तो है ही ....

— कहाँ ?

— यहीं मैदान की तरफ।

— तुम लोग क्या भोजन करने के बाद घूमने निकलते हो ?

सती बोली —कभी-कभी निकलते हैं। मेरे पास कोई काम नहीं है — क्या किया जाय ?

— फिर इतनी बड़ी गृहस्थी कैसे चलती है ?

सती बोली — बाप-दादे की कमाई से। रुपया जमते-जमते पहाड़ बन गया है। ढेर सारे शेअर खरीदकर रख लिये गये हैं। ऐसे शेअर जो कभी खराब नहीं हो सकते। बस डिविडेंड आता रहता है ! कुछ करना नहीं पड़ता। फिर उन बातों में मैं सिर नहीं खपाती।

— और तुम्हारी सास ?

— सास भी बहू के लिए जान देती है। मेरी सास बहुत अच्छी है।

दीपंकर बोला — अच्छी तो होंगी ही, इतनी दौलत, सास तो प्यार करेंगी ही। फिर तुम इस घर की एकमात्र बहू हो, घर में लोग भी कम हैं, तुम बड़े आराम से हो सती — मैं जाकर माँ से कहूँगा। अच्छा, वे चाचाजी और चाचीजी कहाँ हैं ?

सती बोली — कालीघाट की उस घटना के बाद वे तबादला लेकर बर्मा चले गये हैं।

— फिर बर्मा ?

सती बोली — हाँ, चाचीजी के तो बाल-बच्चा नहीं है, कलकत्ते में रहकर क्या करेंगी ? इसलिए चाचाजी ने बड़ी कोशिश करके तबादला ले लिया।

दीपंकर बोला — जानती हो सती, तुम्हारी शादी के दिन मैं हवालात से छूटा था। वहाँ से बाहर आते ही मैंने सुना कि तुम्हारी शादी हो रही है। सुनते ही मैं यहाँ आया था — इस मकान के सामने देर तक खड़ा था। उस समय बहुत सी गाड़ियाँ आ रही थीं, बहुत-से लोग आ रहे थे। उस समय जरा कष्ट हुआ था।

— क्यों ? कष्ट क्यों हुआ था ?

दीपंकर हँसा। बोला — कष्ट इसलिए हुआ था कि न्योता नहीं मिला।

फिर सोचा कि अमीर के घर तुम्हारी शादी हो रही है, यह तो खुशी की बात है, लेकिन लक्ष्मी दी ....

सती ने पूछा — लक्ष्मी दी ? क्या लक्ष्मी दी से भेंट होती है ?

अचानक शंभु ने पुकारा — बहू दीदी !

शंभु कमरे में आया। बोला — खाना लगा दिया जाय ? टेबिल तैयार है ....

सती उठी। बोली — चलो, चलो, तुम दफ्तर से आये हो, खाना खा लो ....

जिस कमरे में वे बैठे थे, उसी से सटा एक और कमरा है। बगल में बरामदा है। उस कमरे में संगमरमर का टेबिल है। दीवार पर कई स्टिल लाइफ स्टडीज़ हैं। मछली, कटा हुआ तरबूज बगल की दीवार में नीचा मीटसेफ।

सती बोली — बैठो ....

दीपंकर बोला — इतना !

सती ने यह क्या किया है ? थाली के चारों तरफ कितनी ही कटोरियाँ हैं। कितनी तरह की मछलियाँ ! कितनी तरह की सब्जियाँ ! अभी तक इतने जतन से दीपंकर के खाने का इतना आयोजन कभी किसी ने नहीं किया था। सती बोली — लो, वहाँ अच्छी तरह हाथ धो लो, साबुन तौलिया सब है ....

हाथ-मुँह धोकर दीपंकर आकर बैठ गया।

सती स्वयं एक-एक लूची थाली पर रखने लगी। बोली — तुम धीरे-धीरे खाओ, मैं धीरे-धीरे देती जा रही हूँ, जल्दी मत करो। खूब धीरे-धीरे खाओ ....

दीपंकर बोला — तुमने मेरे लिए इतना इंतजाम किया है ?

सती बोली — यह सब तकल्लुफ छोड़ो। खाओ, खाना शुरू करो ....

दीपंकर थाली में हाथ देने जा रहा था कि अचानक शंभु दौड़ता हुआ आया।

— बहू दीदी !

— क्या है रे ?

— माँजी आयी हैं !

— माँजी ! दीपंकर ने सती की तरफ देखा। सती का चेहरा मानो दारुण यंत्रणा से अचानक नीला पड़ गया। मानो थोड़ी देर के लिए वह दीपंकर की उपस्थिति भूल गयी। मानो वह समझ नहीं पायी कि क्या करे।

शंभु बोला — दादा बाबू भी आये हैं ....

— तू जा, उन लोगों का सामान उतारकर रख दे ....

कहकर सती थोड़ी देर गुमसुम रही। उसके बाद अचानक दीपंकर की बात याद पड़ते ही उसने हँसकर उसकी तरफ देखा। दीपंकर भी अपने में बेचैनी महसूस करने लगा।

दीपंकर ने पूछ ही लिया — कौन आया है सती ? कौन आये हैं ? क्या सनातन बाबू पुरी से लौट आये हैं ?

सती बोली — हाँ !

वह और कुछ नहीं बोली। दीपंकर हाथ समेटकर बैठा रहा। मानो उससे खाया न जा सका।

दीपंकर ने पूछा — क्या आज ही उनके लौटने की बात थी ?

सती शायद कुछ कहती लेकिन उसके पहले ही कई लोगों के पाँवों की आवाज सुनाई पड़ी। पहले कई नौकर-चाकर माल-असबाब लेकर बगल वाले बरामदे से चले गये। उसके बाद एक सज्जन आये। गोरा खूबसूरत चेहरा। होंठों पर मुस्कराहट। उन्होंने एक बार इस कमरे की तरफ देखा। उसके बाद जैसे कुछ नहीं हुआ, ऐसे सीधे सामने की तरफ वे चले गये। उन्हीं के पीछे-पीछे एक विधवा महिला आयीं। सफेद धोती पहनी हुई। शायद वे नौकरों से बात करती हुई आ रही थीं। इस कमरे के सामने आते ही दीपंकर को देखकर वे रुक गयीं। उन्होंने आश्चर्य से दीपंकर की तरफ देखा। फिर वे धीरे-धीरे बढ़ गयीं।

दीपंकर ने सती की तरफ देखा। सती का चेहरा जहर के समान नीला दिखाई पड़ा। दीपंकर को सहसा भाग जाने की इच्छा हुई। दौड़कर इस मकान से निकलकर सड़क पर पहुँचने के लिए बेचैन होने लगा।

— बहू !

मानो बाहर अचानक बिजली गिरी। सती उठी। बोली — तुम खाना शुरू कर दो दीपू, मैं सुन लूँ क्या कह रही हैं।

सती बाहर गयी तो सती की सास का वज्र-गंभीर स्वर सुनाई पड़ा — कमरे में कौन है ?

सती मानो आगापीछा करने लगी।

फिर वही स्वर — वह कौन है, बताओ !

सती बोली — वह दीपंकर है, हमारे कालीघाट वाले मकान के बगल में रहता था।

— वह बगलवाले मकान में रहता था ! तो उसे घर में बुलाकर खिलाने का और कोई समय नहीं मिला ? क्या हम लोग घर में नहीं थे, इसीलिए उसे बुला लिया ?

— नहीं, आज उसका जन्मदिन है।

— ऐरे-गैरों का जन्मदिन मनाने के लिए ही क्या मैं तुम्हें घोष बाबू के घर की बहू बनाकर लायी हूँ ?

सती बोली — आप नहीं जानतीं, उसकी माँ को मैं मौसी कहती हूँ और वह मेरे भाई के समान है।

— लेकिन जब तक हम यहाँ थे, तुमने अपने भाई को एक बार भी नहीं बुलाया ! क्या तुम्हारे भाई का आज ही पहली बार जन्मदिन हुआ ?

सती चुप रही। सास की आवाज फिर सुनाई पड़ी। बोली — जाओ, अपने भाई से जो कुछ कहना हो कहकर आओ। मैं अपने कमरे में हूँ, तुमसे बात करनी है। जाओ ....

थोड़ी देर बाद सती कमरे में आयी। दीपकर को लगा कि वह थरथर काँप रही है। फिर भी वह होंठों पर हँसी लाने का दुर्बल प्रयास करने लगी।

सती के कमरे में आते ही दीपकर खड़ा हो गया। बोला—अब मैं जाऊँ सती..

सती का सारा दर्द मानो उसके चेहरे पर सिमट आया। वह बोली — दीप, तुम्हें खाकर ही जाना होगा ....

दीपकर बोला — इसके बाद भी तुम मुझसे खाने के लिए कह रही हो ?

— नहीं, तुम जा नहीं सकते! आज बिना [illegible] सकते!

दीपकर बोला — लेकिन सती, मुझसे [illegible] भी मैं कैसे खा सकूँगा ?

सती एक क्षण में कठोर हो गयी। बोली — [illegible] मुझे भी अधिकार है तुम्हें खिलाने का। तुम आज [illegible] तुम नहीं खाओगे तो मेरा अपमान होगा, यह [illegible]

दीपकर बोला — लेकिन तुम्हारा [illegible]

— वह मैं समझूँगी। मैं तुम्हारे [illegible] हूँ इसलिए तुम्हें खाना पड़ेगा, अच्छा न [illegible] पड़ेगा जाओगे तो मैं तुम्हारे सामने ही आत्महत्या कर [illegible]

देखते-देखते दीपकर को सती का चेहरा [illegible] दिखाई पड़ने लगा।

सती चाबुक लिये पहरा दे रही है !

दीपंकर बोला — अब और नहीं खा सकता ....

— नहीं, मैं कोई बात नहीं सुनूँगी, तुमको खाना पड़ेगा । तुम कुछ भी नहीं छोड़ सकते । मैंने दिन भर खड़ी होकर यह सब बनवाया है । यह सब मैं तुम्हें छोड़ने नहीं दूँगी !

दीपंकर बोला — लेकिन तुम मुझे न्योता क्यों देने गयीं ? इतने सालों में कितनी बार मेरा जन्म दिन आया, लेकिन तुमने कभी बुलाकर नहीं खिलाया तो मुझे कोई अफसोस नहीं था ! मैं तो तुम्हारी बात ही भूल गया था ....

सती ने जोर से पुकारा — शंभु !

शंभु आया । सती बोली — भूती की माँ ने पान लगाया है ?

— नहीं बहू दीदी ।

सती बिगड़ गयी । बोली — क्यों ? क्यों नहीं पान लगाया ?

दीपंकर बोला — छोड़ो सती, न लगाया न सही, मैं तो पान खाता भी नहीं ....

सती मानो बहुत ज्यादा नाराज हो गयी । वह बोली — तुम चुप रहो । .... उसके बाद वह शंभु से बोली — जा तू पान लगाकर यहीं ले आ । तुझे नहीं मालूम कि किसी को घर में न्योता देने पर उसे पान देना पड़ता है !

दीपंकर उठा । उसने हाथ-मुँह धोकर तौलिये से पोंछा । सती पास खड़ी रही । पान आते ही वह बोली — लो, पान खाओ ....

— पान ? दीपंकर ने थोड़ा आगा-पीछा किया । लेकिन सती के चेहरे की तरफ देखकर उसे वैसा करने का साहस नहीं हुआ ।

सती ने फिर शंभु को बुलाया । कहा — रतन से गाड़ी निकालने के लिए कह दे, दीपंकर बाबू को पहुँचा आयेगा ....

शंभु बोला — माँजी ने गाड़ी बंद करने के लिए कह दिया है ।

दीपंकर बोला — गाड़ी क्या होगी, थोड़ी ही दूर तो है, मैं पैदल चला जाऊँगा ।

सती ने डाँट दिया । कहा — तुम चुप रहो ! — फिर शंभु से कहा — तू रतन से कह दे कि गाड़ी बंद करने के लिए हुक्म कोई भी दे मैं कह रही हूँ कि गाड़ी निकलेगी । जाकर कह दे ।

शंभु चला गया । दीपंकर भी उसके साथ जाने लगा था ।

सती बोली — सुनो दीपू ....

दीपंकर पीछे मुड़ा । सती बोली — कल भी तुम ठीक इसी समय यहाँ आओगे ....

— कल ? कल भी खाना पड़ेगा ?

सती बोली — हाँ, कल तुम आना, उसके बाद जो करना होगा, मैं करूँगी ....

दीपंकर बोला — लेकिन ऐसा करना क्या ठीक होगा ?

सती बोली — ठीक होगा या नहीं, यह मैं समझूँगी । मैंने बहुत अपमान किया है । फिर, तुम जल्दी आना, भूलना नहीं, मैं तुम्हारे लिए बैठी रहूँगी ।

सीढ़ी से नीचे आते समय दीपंकर ने सती की सास की आवाज सुनी — बहू, एक बार इधर आना ....

लाल पत्थरवाली सीढ़ी से नीचे आते समय दीपंकर के दोनों पाँव काँपने लगे । बाहर बरामदे के सामने आते ही उसने देखा कि ड्राइवर कार निकालकर खड़ा है । दीपंकर पास गया तो ड्राइवर ने कार का दरवाजा खोल दिया । दीपंकर कार में बैठ गया ।

फिर गड़ियाहाटवाला रास्ता पारकर कार गेट से निकली और प्रियनाथ मल्लिक रोड पर आ गयी ।

• • •

शायद वह सब बता देता। घर के नौकरों के लिए कुछ जानना बाकी नहीं रहता। घर के मर्द क्या करते हैं और औरतें क्या करती हैं, किससे किसका झगड़ा होता है, यह सब नौकरों को पता रहता है।

दीपंकर ने हिम्मत करके उसी से पूछा था — शंभु, तुम्हारी माँजी के क्या आज आने की बात थी ?

— नहीं बाबू आज आने की बात नहीं थी। रेल लाइन पानी में डूब गयी है, इसलिए गाड़ी चल नहीं सकी। सब रास्ते बन्द हो गये हैं। बाबू लोग तीन दिन कटक स्टेशन पर पड़े रहे।

दीपंकर कार में बैठ गया तो शम्भु ने हाथ जोड़कर कहा — बाबूजी, नमस्कार !

सीढ़ी से उतरते समय ही सती की सास की कड़कती आवाज फिर सुनाई पड़ी थी — बहू, एक बार इधर सुनती जाना ....

सती सास के पास जाकर खड़ी हुई। सास बहुत दिन पहले विधवा हो चुकी थी और इस समय वह इस घर की मालकिन हैं। जब इस घर का बोलबाला और ज्यादा था, शान-शौकत और ज्यादा थी, तब वे दूध और अलता पर पाँव धरकर घोष बाबुओं के इस घर में आयी थीं। उस दिन मुहल्ले की औरतें नयी बहू देखने के लिए आकर सहम गयी थीं। अघोर नाना के यजमानों की तरह घोष बाबुओं का भी दबदबा था। बैरिस्टर पालित से उनकी बराबरी होती थी। शिरीष घोष खिदिरपुर डॉक में स्टीवेडोर का काम करते थे। उस जमाने के नामी-गिरामी स्टीवेडोर शिरीष घोष ! प्रियनाथ मल्लिक रोड की शिरीष घोष की फर्म बार्ड कम्पनी, किलबर्न कम्पनी और शॉ वालेस कम्पनी का सारा काम करती थी। साहब लोग भी शिरीष घोष को मानते थे और उनकी इज्जत करते थे। शिरीष घोष भी साहबों का आदर करते थे। शिरीष घोष के लड़के गिरीश घोष की शादी में कलकत्ते की बड़ी-बड़ी कम्पनियों के साहब लोगों ने आकर दावत खायी थी। उस दिन इसी सास का घूँघट में छिपा मुखड़ा देखकर लोगों ने ढेर सारे कीमती उपहार दिये थे। उसके बाद शिरीष घोष बूढ़े होकर मर गये। मरने से पहले उन्होंने बेटे और बहू को अपना कारोबार और चल-अचल सारी सम्पत्ति सौंप दी थी। मरने से पहले उन्होंने बेटे और बहू से कहा था — रुपया बड़ी बुरी चीज है। इसकी जरूरत तो पड़ती है, लेकिन इसी को सब कुछ मत मान लेना। मैंने अपने जीवन में बहुत रुपया इकट्ठा किया है, इसलिए तुम लोगों को अपने लिए कभी सोचना नहीं पड़ेगा। लेकिन हाँ, सँभलकर चलना ....

पता नहीं शिरीष घोष ने और क्या-क्या कहा था। वे सब उनके जीवन के अंत समय की वैराग्यभरी बातें थीं। अंत समय सभी के मन में वैराग्य का उदय होता है। ऐसा होना ही स्वाभाविक है। उस समय बैंक में शिरीष घोष के लगभग बीस लाख रुपये जमा थे। सुन्दरबन में छः हजार बीघा आबाद जमीन थी। संदूक में सोना-चांदी, हीरे-जवाहिरात और कम्पनी के भारी सूदवाले कागज थे। फिर चालू कारोबार तो था

हो। मरने से पहले गिरीश घोष ने अपने उत्तराधिकारियों की सुख-सुविधा में कोई कमी नहीं रहने दी थी। उसी ज़माने में गिरीश बाबू ने बिजली के पंखे की हवा खायी थी, तिमंज़िला मकान बनवाया था और कार में बैठकर घूमने का मज़ा लिया था। इससे ज़्यादा वे और क्या करते!

सती की माँ उस समय इस घर की नयी बहू थी। ससुर के मरने के बाद सब कुछ उन्हीं को सँभालना पड़ा था। पति गिरीश घोष बड़े सीधे-सादे थे। ज़रूरत पड़ने पर भी वे झूठ नहीं बोल सकते थे। कभी-कभी सच्ची बात भी वे ज़ोर से नहीं कह पाते थे। शुरू-शुरू में नयी बहू कहती थी — अगर हर बात में तुम सिर हिला दोगे तो कैसे पता चलेगा कि तुम सचमुच क्या चाहते हो?

पति कहते थे — मैं सचमुच क्या चाहता हूँ, यह न कहना ही अच्छा है, क्योंकि उससे अशांति बढ़ती है।

पत्नी कहती थी — लेकिन इस तरह तुम कब तक टालते रहोगे?

पुरानी कम्पनियों के साहब लोग उस समय भी घोष कम्पनी को काम देते थे। घोष कम्पनी पर उन लोगों का विश्वास था। साहबों में यह बहुत बड़ा गुण है। एक बार वे किसी फ़र्म को पकड़ लेने पर जल्दी उसे छोड़ने का नाम नहीं लेते।

पत्नी कहती थी — क्या हुआ, आज तुम्हारा चेहरा सूखा क्यों है? क्या किसी ने पीटा है?

गिरीश घोष हँसते थे कहते थे — क्या कहती हो? कौन पीटेगा?

— नहीं, तुमने ऐसा मुँह बना रखा है कि मानो किसी ने तुम्हारे गाल पर थप्पड़ मार दिया है।

पति कहते थे — नहीं, बात यह हुई है कि मैंने धोखे से एक आदमी को ठग लिया है। बेचारे के दो हज़ार रुपये निकल गये।

— इसमें क्या हुआ?

— क्या कहती हो? ठगना पाप नहीं है? बहुत बड़ा पाप है। आख़िर मैंने वही पाप कर डाला! अब पता नहीं वह कहाँ मिले ....

— तो फिर क्या करोगे? बैठे-बैठे रोओ। रोने बैठ जाओ!

लेकिन ज़्यादा दिन गिरीश घोष को यह सब सहन करना नहीं पड़ा। एक दिन दफ़्तर से आकर वे सो गये और उनकी वह नींद टूटी नहीं। डाक्टर के पास ख़बर गयी। डाक्टर आया। लेकिन कोई फ़ायदा नहीं हुआ। ससुर ने कहा था — रुपया बड़ी बुरी चीज़ है। आख़िर वही बुरी चीज़ पड़ी रही और गिरीश घोष चले गये। उस समय सोना वाले सनातन घोष छः साल का था। आज सनातन बाबू को उस समय की बात याद नहीं है।

वही सनातन घोष बड़े हुए, बुद्धिमान बने, लेकिन उसके पीछे इसी माँ का दस्तांत परिश्रम है। उसी समय विधवा माँ को स्टीवेडोर का कारोबार बन्द कर

देना पड़ा था। कम्पनी का स्वामित्व-उपस्वामित्व मोटी रकम पर वेचकर रुपया संदूक में भरकर सास इन्तजार करने लगी थीं कि कव वेटे की शादी होगी और कव उसके हाथ सव-कुछ सौंपकर निश्चित हो सकेंगी। वेटे की शादी के लिए चारों तरफ वात चलायी गयी थी। आखिर किसी ने आकर इस लड़की के वारे में कहा था। लड़की ईश्वर गांगुली लेन में वाप के दोस्त के पास रहकर पढ़ती है। वाप वर्मा में रहते हैं। वहाँ उनका लकड़ी का वहुत वड़ा कारोवार है। वेटा नहीं है, वही एक-मात्र वेटी है। वाप की दौलत के वारे में कहने की जरूरत नहीं है। इस लड़की के वाप ने भी कभी रुपये को वड़ा नहीं समझा। सचमुच रुपया वड़ी वुरी चीज है। उन्होंने सिर्फ लड़के का रूप, गुण और खानदान देखा। टेलीग्राम मिलते ही भुवनेश्वर मित्र कलकत्ते आ गये थे। रातों रात लड़का देखना और लड़की देखना हो गया था। सुन्दरवन में छः हजार वीघा आवाद जमीन, मोटी रकम के कम्पनी के कागज और अच्छी-अच्छी विलायती कम्पनियों के शेअर। लेकिन दौलत भी वड़ी चीज नहीं है। असली चीज है खानदान। सवसे वड़ी वात है सामाजिक प्रतिष्ठा। भुवनेश्वर वावू ने ने चाचाजी से पूछा — तुमने कैसा देखा शचीश ?

चाचाजी वोले — मैंने सव देख-सुन कर ही आपको खवर भेजी है। फिर राय वहादुर भी उन लोगों को जानते हैं।

— कौन राय वहादुर ?

— राय वहादुर नलिनी मजूमदार। सव एक मुहल्ले के हैं न। अरे लखा के मैदान के एकादशी वनर्जी, चावल पट्टी के शशधर चटर्जी सव उन लोगों को जानते हैं। शिरीष घोष का नाम लेने पर अव भी सव हाथ जोड़कर माथे से लगाते हैं। कहते हैं कि वे तो देवता थे ....

उसी शिरीष घोष का नाती।

भुवनेश्वर वावू ने कहा था — लेकिन घर में उसकी माँ के अलावा और कोई नहीं है शचीश, सती जैसी लड़की है, क्या वह वहाँ रह पायेगी ?

चाचाजी ने कहा था — और कोई नहीं है तो अच्छा है ! ननद-भौजाई-देवर वह सव न रहना ही ठीक है ! रहने पर झंझट वढ़ता है। आपकी वेटी जिस तरह से पली है, वह यह सव वरदाश्त नहीं कर पाती। यहीं शादी कर दीजिए।

फिर ज्यादा सोचने का समय भी नहीं था। उन्हीं की गलती से एक लड़की घर छोड़कर चली गयी थी। अव इस लड़की के वारे में भुवनेश्वर मित्र ने वह गलती नहीं की। तीन दिन में सव इन्तजाम पूरा हो गया। भुवनेश्वर वावू भवानीपुर में एक दुमंजिला मकान किराये पर लेकर शादी की तैयारी करने लगे। लोगों को न्योता देना और दुनिया भर का सामान खरीदना, सव चाचाजी ने किया। फिर उलू ध्वनि और शंख ध्वनि के वीच वनारसी साड़ी में सिकुड़ी-सिमटी सती इस घर में आ गयी।

उतना कष्ट करके पढ़ने की क्या जरूरत है ?

कभी-कभी माँ नौकरों को डाँटती थीं।

कहतीं — तेरी कैसी अकल है रे शंभु। देख रहा है कि दादा बाबू कमरे में है और तू यहाँ गला फाड़कर चिल्ला रहा है। जा यहाँ से, जा ....

— बहू !

सवेरा होते ही सास कमरे के दरवाजे के पास आकर पुकारतीं।

कहतीं — इतनी देर में सोकर उठना मैं पसंद नहीं करती। रात भर क्या करती रहती हो ? सोना ज्यादा देर तक पढ़ता रहता है, वह देर करके उठ सकता है। लेकिन तुम क्यों इतना सोती रहती हो ? क्या तुम उसके साथ जागती रहती हो ?

सती के मुँह से कोई बात नहीं निकलती। वह गूँगी बनी थोड़ी देर सास के चेहरे की तरफ आश्चर्य से देखती रहती। एक से एक बात होती और वह आश्चर्य से सोचती — यह किस घर में, किन लोगों के बीच वह आ गयी है ! पिताजी मुझे किन लोगों के पास छोड़ गये। सारी दुनिया उसे अपनी आँखों के आगे सूनी लगने लगती। उन दिनों की हर बात, हर छोटी-मोटी घटना के बारे में सती ने बाद में दीपंकर से कहा था। सवेरा होते ही सती को उठना पड़ेगा, उठकर बाथरूम में जाना होगा। उसके बाद पति और सास के लिए चाय और जलपान का इन्तजाम करना पड़ेगा। नौकर-चाकर सब हैं। लेकिन उनके पास कोई खास काम नहीं है। वे लड़ाई, झगड़ा और गुटबंदी करते रहेंगे लेकिन जलपान का इंतजाम सती करेगी। ऐसे ही गृहस्थी के सब गुर उसे सीखने होंगे। कभी सास ने इसी तरह गृहस्थी चलाना सीखा था। उन पर भी बड़ों की डाँट पड़ी थी। तभी तो जरूरत पड़ने पर वे इतनी बड़ी गृहस्थी को इतने दिनों तक संभाल सकी हैं। जब सास नहीं रहेगी, तब तो सती को ही यह गृहस्थी चलानी होगी। सब कुछ नौकर-चाकरों पर छोड़ देने से क्या गृहस्थी की गाड़ी चल सकती है !

बतासी की माँ इस घर में बहुत दिन से है। वह कहती — बहू दीदी, तुम क्यों रसोईघर में आ गयीं ? यहाँ धुएँ और कालिख में तुम्हारा शरीर कितने दिन चलेगा ? रसोइया अकेले सब कुछ कर लेगा ....

हाँ, बतासी की माँ ऐसी बात कर सकती हैं। इस घोष परिवार में जब से लक्ष्मी आयी हैं, तब से वह है। शायद वह अंत तक रहेगी। वह किसी का मुँह देख कर बात नहीं करती। पहली मंजिल में उसी का राज है। वहाँ कोई उसके मुँह पर कुछ कहने की हिम्मत नहीं करता।

बतासी की माँ कहती .... मैं किसी की परवाह क्यों करूँगी। मैं मुफ्त में किसी का दिया नहीं खाती। क्या मैं जाँगर नहीं चलाती ? क्या उस दादा बाबू को मैंने अपनी गोद में नहीं खिलाया ? तुम सब की माँजी कर दें मेरे सामने इन्कार !

बतासी की माँ दूसरी नौकरानियों से बात कर रही थी। इतने में सती को देखकर बोली — क्या तुम्हें फिर उस बुढ़िया ने खबरदारी करने के लिए भेजा है ?

करती। उस समय संसार के किसी कोने से कोई आवाज सुनाई नहीं पड़ती थी। सिर्फ घड़ी के चलने की टिक-टिक आवाज कानों में सुई चुभोती रहती। घंटे और मिनट संगीन ताने स्थिर निश्चल प्रहरी के समान सती की आँखों के आगे आकर खड़े हो जाते। उन्हीं क्षणों में सती को लगता कि अब इस पृथ्वी का घूमना शायद रुक जायेगा और विध्वंसी प्रलय की चपेट में पड़कर हमेशा के लिए वह मिट जायेगी। ऐसी ही कितनी रातें घोष परिवार के नये दम्पति के जीवन में बीती थीं।

— क्या कह रही हो ? मुझे बुला रही हो ?

अचानक सनातन बाबू होश में आते। मानो वे अदृश्य जगत् से अपने सोने के कमरे में लौट आते। वे कुछ शर्मिंदा भी होते। उसके बाद वे जल्दी से बत्ती बुझाकर अपनी जगह पर आकर लेट जाते।

कहते — ओफ्, मैंने बड़ी देर कर दी ....

फिर देर तक सती को नींद नहीं आती और सनातन बाबू सो जाते। उनके श्वास-प्रश्वास की आवाज एक ताल में होती रहती। एक बार लेटने पर उनको नींद आते देर नहीं लगती। वे जिस करवट लेटते उसी करवट सवेरे सोकर उठते। बीच में वे एक बार भी करवट नहीं बदलते। आधीरात को जब एक ही करवट लेटे-लेटे सती का सारा शरीर दुखने लगता तब सती उठती। उठकर वह बगल के बाथरूम में जाकर चेहरे, माथे और गरदन पर पानी छिड़कती, फिर घड़ी देखती। उसके बाद अपने बिस्तर पर आकर चित्त लेट जाती। लेटी-लेटी वह घड़ी का बजना सुनती। एक, दो। दो के बाद तीन, उसके बाद चार .... फिर सवेरा हो जाता। सास भी तड़के उठ जाती हैं। वे दरवाजे के पास आकर पुकारती — बहू, ओ बहू ....

कभी-कभी शाम को सास सीधे लाइब्रेरी में पहुँच जाती।

— सोना ?

सनातन बाबू कुछ पढ़ रहे थे। उन्होंने मुँह उठाकर देखा।

— माँ, तुम ?

— एक बार मेरे साथ तुमको चलना होगा बेटा, छोटी दीदी के नतनी हुई है। उन्होंने जाने के लिए कहा था। समय तो मिल नहीं पाता, आज ही चलो।

सनातन बाबू ने कमरे में आकर कहा — चलो, तैयार हो लो ....

सती ने आश्चर्य से देखा और पूछा — कहाँ ?

सनातन बाबू बोले — माँ ने चलने के लिए कहा है, उनकी छोटी दीदी के नतनी हुई है। दीदी बहुत दिन से जाने के लिए कह रही हैं, मौका नहीं मिल रहा था, इसलिए आज ही चलो ....

सनातन बाबू कपड़े पहन कर तैयार हो गये। सती ने भी आलमारी से गहने निकाले, साड़ी निकाली और ब्लाउज निकाला। पिताजी ने बहुत-सी साड़ियाँ, बहुत-से ब्लाउज और बहुत-से गहने दिये हैं। एक भी पहनना नहीं होता। रिश्तेदार के घर

पहली बार जा रही हूँ, इसलिये जैसे-तैसे जाया नहीं जा सकता। उसने बिस्तर पर सब साड़ियाँ एक-एक कर परखीं।

सनातन बाबू बोले — मैं चलता हूँ, तुम आओ ....

— सुनो, जरा रुको ....

सती ने पीछे से पुकारा। कहा — जरा ठहर जाओ, इधर आओ न ....

सनातन बाबू पास आये। बोले — क्या हुआ ?

सती बोली — कौन-सी साड़ी पहनूँ बताओ न ....

सनातन बाबू बोले — कोई भी पहन लो — सभी साड़ियाँ अच्छी हैं ....

— नहीं, नहीं, ऐसे कहने से नहीं चलेगा, अच्छी तरह सोचकर बताओ —

उसके बाद सती एक साड़ी चुनकर बोली — यह साड़ी अच्छी लगेगी न, बॉटल ग्रीन रंग भी बढ़िया है ....

— हाँ, पहन लो ....

मानो सती के हाथ से छुटकारा पाने के लिए सनातन बाबू ने जवाब दिया। कहा — माँ शायद नाराज हो रही हैं, तुम जल्दी आओ, मैं जा रहा हूँ ....

नया पेटीकोट, नया ब्लाउज और नयी साड़ी। शादी के बाद यह साड़ी पहनने का मौका ही नहीं मिला। ज्यों की त्यों पड़ी थी। साड़ी की तह खोलते समय न जाने कैसी खस-खस आवाज होने लगी। सती को यह आवाज बड़ी अच्छी लगती है। मानो कोई प्यार से फुसफुसाकर बात करता है। उस आवाज में आंतरिकता होती है। शीशे के सामने खड़ी होकर सती ने गहने पहने। चेहरे पर स्नो और पाउडर लगाया। उसके बाद दो भौंहों के बीच बिंदी लगायी फिर शीशे के सामने खड़ी होकर अपने को इधर से-उधर से देख लिया। अब वह अच्छी लग रही है। बाल बचपन से ही घुंघराले हैं। ईश्वर गांगुली लेन का वह लड़का इन बालों की तरफ देर तक देखता रहता था। सती अपना चेहरा बारबार देखने लगी, मानो उसकी तबीयत भर नहीं रही थी। उसके बाद कमरे से निकलकर पहली मंजिल में आते समय सीढ़ी के पास बतासी की माँ से उसकी भेंट हो गयी।

— बतासी की माँ, भूती की माँ कहाँ है ?

— बुला दूँ बहूदीदी ?

सारे शरीर से सेंट की खुशबू निकलकर हवा को महमहाने लगी। सती को भी अपनी देह से निकलनेवाली सुगंध मिली। बोली — मैं जा रही हूँ बतासी की माँ जल्दी में कमरा बंद न कर सकी। कमरे में कपड़े बिखरे हैं। भूती की माँ से कहना, धूप जलाकर कमरे में ताला लगा दे।

फिर जरा रुककर बोली — शंभु कहाँ है ?

शंभु उधर से दौड़ा हुआ आ रहा था। सती बोली — शंभु, कमरे में सब बिखरा है, भूती की माँ धूप जला दे तो तू कमरा बंद कर देना। याद रहेगा न ?

अचानक सिर पर गाज गिरी।

—बहू, इस समय तुम कहाँ जा रही हो ?

सती ने पीछे मुड़कर देखा कि सास सीढ़ी से उतर रही हैं। वे सफेद गरद की साड़ी पहने थीं। सती सहमकर खड़ी हो गयी।

—तुम कहाँ जाने लगी इतनी जल्दी-जल्दी ?

सती ने आश्चर्य से सास की तरफ देखा।

—तुम सजधजकर कहाँ जा रही हो ? क्या मैंने तुमसे चलने के लिए कहा है ?

बतासी की माँ खड़ी थी, शंभु बगल में खड़ा था, दोनों ने यह सुना। सती का शरीर उस समय सिर से पाँव तक काँपने लगा।

सास बोली—मैं सोना के साथ एक काम से जा रही हूँ—घूमने नहीं जा रही हूँ, न्योता खाने भी नहीं, तुम इतना सज-धजकर वहाँ झमेला करने क्यों जाने लगीं ? किसने तुमसे कहा है चलने के लिए ?

कहकर सास आगे बढ़ गयी। बगीचे में कार का दरवाजा खोलने की आवाज हुई। कार स्टार्ट होने की आवाज भी मिली। उसके बाद कार चले जाने आवाज भी सती ने सुनी। लेकिन तब भी वह पत्थर की मूर्ति बनी वहीं खड़ी रही। साड़ी, गहने, स्नो, पाउडर और सेंट मानो उसके शरीर पर अंगार की भाँति जलने लगे। मानो उस आग में उसका सारा शरीर जलकर खाक होने लगा। फिर भी वह जरा भी न टूटी। बतासी की माँ और शंभु दोनों खड़े होकर अपने सामने सती का वह चरम अपमान देख रहे थे। उनकी आँखों के सामने से सती धीरे-धीरे सीढ़ी चढ़कर फिर ऊपर जाने लगी। वह अपने कमरे में गयी। उसने एक-एक कर नयी साड़ी, गहने, ब्लाउज और पेटीकोट सब उतार डाले। फिर उसने पुराना पेटीकोट, ब्लाउज और साड़ी पहन ली। आश्चर्य है, उसकी आँखों से आँसू की एक बूंद भी नहीं गिरी। वह बिस्तर पर नहीं गिर पड़ी। वह हाथों से चेहरा छिपाये रोने भी नहीं बैठी !

यह सब दीपंकर जानता है। सती ने सब कुछ उससे बाद में कहा है।

बर्मा से भुवनेश्वर मित्र की चिट्ठी आयी है—

"बेटी सती,

बहुत-से कामों के बीच हर बार तुम्हें समय से चिट्ठी नहीं लिख सकता। इसलिए तुम दुःखी मत होना। तुमको मैं अच्छे वर के हाथों सौंप सका हूँ, यह मेरे लिए परम सांत्वना है। पति में भक्ति और श्रद्धा रखना, क्योंकि पति के अलावा स्त्री के लिए तीनों लोक में कोई दूसरा देवता नहीं है। सदैव पति का ध्यान रखना ही पत्नी का परम कर्तव्य है—यह हमेशा याद रखना। अपनी सास को तुम अपनी माँ की तरह मानकर उनकी सेवा करना। बचपन में तुमने अपनी माँ को खो दिया था। अब शादी के बाद तुम्हारी सास ही तुम्हारी माँ के स्थान पर है। इसलिए तुम जी-जान से उनको

खुश रखना। आज तुम्हारी माँ नहीं है। अगर वे होती तो तुम्हें यही सलाह देती। उनके न रहने पर मुझको इतनी बातें लिखनी पड रही है। अब मेरा शरीर पहले की तरह परिश्रम सहन नहीं कर सकता। सोचता हूँ कि अब विश्राम करूँ। लेकिन फिर सोचता हूँ कि विश्राम करने पर जिन्दा कैसे रहूँगा? तुम अपने यहाँ का कुशल समाचार लिखना। तुम दोनों मेरा आशीर्वाद लेना। अपनी सास से तुम मेरा नमस्कार कहना। इति ....

शुभाकांक्षी
तुम्हारा पिता"

सनातन बाबू प्रायः किसी मामले में नहीं पड़ते।

सती बोली—पिताजी की चिट्ठी आई है ....

सनातन बाबू ने अब सिर उठाया। कहा—अच्छा ...

सती फिर बोली—जानते हो, पिताजी की तबीयत बहुत खराब है। उनकी तबीयत खराब होने की बात मालूम होने पर रात को मुझे नींद नहीं आती।

सनातन बाबू बोले—हाँ, सचमुच बड़ी चिंता की बात है ....

यह कहने के बाद उनका ध्यान फिर दूसरी तरफ चला गया।

सती बोली—चिट्ठी पढ़ोगे?

—नहीं, तुमने तो पढ़ लिया है, अब मैं पढ़कर क्या करूँगा?

सती का मन करता है कि देर तक पिताजी की बात करती रहे। वह चाहती है कि देर तक बैठकर किसी को पिताजी की कहानी सुनाये। काश, कोई उस कहानी को मन लगा कर सुनता! दोपहर को सती पिताजी को चिट्ठी लिखने बैठ गयी। उसने लंबी चिट्ठी लिख डाली। दो पन्नों की चिट्ठी। वह अपने मन की एक बात लिखना नहीं भूलती।

देर तक बैठी वह लिखती है ....

"परम पूज्य पिताजी,

आपकी तबीयत खराब होने की बात जानकर बड़ी चिंतित हूँ। अब आप थोड़ा आराम कीजिए, नहीं तो कुछ दिनों के लिए कहीं घूमने चले जाइए। लगातार काम करते रहने से आपका शरीर नहीं बचेगा। आपने लिखा है कि आपने मुझे अच्छे वर के हाथों सौंपा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि आपने मुझे अच्छे वर के हाथों सौंपा है। लेकिन कभी-कभी सोचती हूँ कि आपने मुझे इतना पढ़ाया-लिखाया क्यों? क्यों आपने मुझे आत्मसम्मान की शिक्षा दी? क्यों मैं बहरी, गूँगी और अंधी पैदा नहीं हुई। अगर ऐसा होता तो मुझे कुछ देखना और सुनना नहीं पड़ता। फिर मैं इस घर में मुँह बंद कर पड़ी रहती। आपने मुझे इतनी दौलत देकर इतना सुखी क्यों बनाया? मुझे इस दौलत से कष्ट है और मैं जीते जी मरी हुई हूँ। मैं जो अभी तक जी रही हूँ

वह सिर्फ आपका ख़याल करके। और कोई कारण नहीं है। लौटती डाक में जवाब दीजिए। इति ....

आपकी
सती"

सती ने चिट्ठी मोड़कर लिफाफे में रखी और लिफाफे को बंद कर उस पर पता लिखा।

उसके बाद बुलाया — शंभु ....

शंभु कमरे में आया तो सती बोली — यह चिट्ठी तू खुद जाकर लेटरबॉक्स में छोड़ आना। याद रहेगा न ? कहीं इधर-उधर फेंक मत देना।

शंभु बराबर सती की चिट्ठी डाकबक्से में डाल आता है। आज यह पहला मौका नहीं है। फिर भी हर बार सती उसे सावधान कर देती है। सतर्क कर देती है। जब वह लौट आता है। तब सती पूछती है — बक्से में हाथ डालकर चिट्ठी छोड़ी है न ? कहीं बाहर तो नहीं गिर गयी ?

शंभु बोला — नहीं बहूदीदी, मैं बराबर आपकी चिट्ठी छोड़ आता हूँ, और आज नहीं छोड़ पाऊँगा ?

चिट्ठी लेकर शंभु चला गया। वह सीढ़ी से नीचे उतरकर चला गया। अचानक क्या हुआ, सती उठी। उठकर बुलाने लगी — शंभु, ओ शंभु ....

झटपट सती सीढ़ी से उतरकर नीचे चली गयी। वहाँ भी शंभु नहीं है। शायद वह बाहर वाला हिस्सा पार कर एकदम सड़क पर पहुँच गया है। सती जल्दी से गयी और मकान के बाहर वाले हिस्से के आँगन में खड़ी होकर बगीचे के सामने बैठे दरबान को बुलाने लगी — दरबान, जरा सुन तो, शंभु अभी चिट्ठी छोड़ने गया है, उसे जल्दी बुला ला ....

थोड़ी देर बाद दरबान शंभु को बुला लाया।

— क्यों रे, चिट्ठी छोड़ी तो नहीं ?

नहीं, चिट्ठी उसके हाथ में है। उसके हाथ से चिट्ठी लेकर सती ने फाड़ डाली — एकदम उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। चिट्ठी के छोटे-छोटे टुकड़े हवा में उड़कर चारों तरफ जमीन पर गिरने लगे।

सती फिर जल्दी से अपने कमरे में आकर उसने जल्दी से एक और चिट्ठी लिखी।

"पिताजी,

आपकी तबीयत के बारे में जानकर बड़ी चिंता हो रही है। आप कुछ दिन आराम कीजिए। आप हमारे यहाँ आकर भी रह सकते हैं। मेरी सास ने कहा है — तुम अपने पिताजी को यहाँ चले आने के लिए लिख दो। मुझे यहाँ कोई तकलीफ नहीं है। सास मुझे अपनी बेटी की तरह ही देखती हैं। बचपन में मैंने अपनी माँ को खो दिया था,

इसलिए मुझे बड़ा दुःख था, लेकिन शादी के बाद सास ने मेरा वह दुःख मिटा दिया है। आप कैसे हैं, यह लौटती डाक में लिखिए। इति ....

आपकी सती"

दीपंकर यह सब जानता है। सती ने ही सब बताया था।

इसी के बाद पूरी जाने वाली घटना हुई। प्रियनाथ मल्लिक रोड के घोष परिवार का मकान जो लोग बाहर से देखते थे, उनको वहां कुछ और ही दिखाई पड़ता था। फाटक के पास लकड़ी के स्टूल पर खाकी वरदी में दरवान बैठा है। खड़ंजा लगा रास्ता जहां खत्म हुआ है, वहां गैरेज है। गैरेज में दो गाड़ियां है। वही पास में बगीचा है। जहां फूल के पौधों की क्यारियां है। बगल में लाल रंग के मकान के रँगे हुए दरवाजे और खिड़कियां, खिड़कियों में झिलमिली, रोशनी और तड़क-भड़क — किसी बात की कमी नहीं। जो लोग और अन्दर जाते, वे उस मकान का ऐश्वर्य देख कर आश्चर्य में पड़ते। संगमरमर का फर्श, मुरादाबादी गमले में कैक्टस का पौधा और बगीचे के छोर पर एक कोने में राजहंसों का झुंड बनाकर विचरना। शहर कलकत्ते के भवानीपुर इलाके में यह मानो एक अलग दुनिया है। पूरे मकान में किसी भी समय भीड़भाड़ नहीं। दरवान के होशियार करने पर राह-चलते लोग चौंक पड़ते और देखते कि फाटक से बड़ी सी कार निकल आयी। लोग देखते कि कार में गरद की धोती पहने एक विधवा बैठी है। उसके सफेद बालों में जतन से कंघी की गयी है। उस महिला की बगल में एक पुरुष बैठा है। दोनों का रंग बड़ा गोरा है। दोनों बड़े धीर, स्थिर और गंभीर हैं। कार निकलते ही फाटक बंद हो जाता है।

जो लोग देखते, वे आपस में कहते — किसी बड़े अमीर का मकान लग रहा है।

लेकिन उस दिन जब कार निकली तब उसमें कोई और थी। न वह विधवा थी और न ही शांत-गंभीर वह पुरुष। कार में कोई और थी। गोरी खूबसूरत एक बहू। सिर पर घुंघराले बालों का जूड़ा। देह में लहराता रूप।

जिन लोगों ने देखा, आपस में कहा — ये ही लोग मजे में हैं साहब, इन्हीं लोगों का राज है।

शायद इस कथन के साथ लंबी सांस भी निकली। लेकिन जिसको देखकर यह सब कहा गया, उस सती ने कुछ भी नहीं सुना।

ड्राइवर ने एक बार पूछा — किधर चलूं बहूदीदी ?

सती बोली — कालीघाट, ईश्वर गांगुली लेन ...

दिन भर सती बस सोचती रही। पहले सास ने कुछ भी नहीं बताया। बतासी की मां मकान के भीतर वाले हिस्से की सारी खबर रखती है। वह भी न जान सकी। भूती की मां, शंभू, दरबान और घर के दूसरे नौकर-चाकरों को भी पता न चला। घर

का पुराना मुंशी अपने कमरे बैठा हिसाब-किताब लिख रहा था। शायद उसे भी मालूम न था। सनातन बाबू अपनी लाइब्रेरी में थे। बाहर से माँ ने बुलाया — सोना ....

सनातन बाबू बोले — मुझे बुला रही हो माँ ?

— हाँ, आज रात की ट्रेन से पुरी जाऊँगी, मेरे साथ तुम्हें चलना होगा। बहुत दिन से मनौती है, अभी न जाने पर शायद फिर जाना न होगा।

मुंशी को बुलाते ही वह चश्मा पहनकर दौड़ा हुआ आया। सास बोली — कैश में कितना रुपया है मुंशी जी ?

— जी, कितना चाहिए ?

— दो हजार के करीब।

— जी, दो हजार तो न होगा। अच्छा, मैं देखता हूँ कितना है।

सास बोलीं — देखने की जरूरत नहीं है, आप बैंक से निकाल लाइए। सोना दस्तखत कर देगा।

यह सब पहली मंजिल में हुआ। कब मुंशी बैंक से रुपया ले आया, कब ट्रेन के टिकट मँगाये गये, यह सब सती को मालूम न हो सका ! प्रतिदिन की तरह सवेरे उठकर वह बाथरूम गयी। माँग में सिंदूर दिया। फिर रसोईघर में पहुँची। दोपहर को सबने भोजन किया। दोपहर को उसने अपने कमरे में लेटकर किताब के पन्ने भी पलटे। तीसरे पहर कहीं सनातन बाबू एक बार कमरे में आये थे, लेकिन उन्होंने भी कुछ नहीं कहा।

यह खबर सुनायी शंभु ने।

शंभु ने आकर कहा — बहूदीदी, दादाबाबू के कपड़े निकाल दीजिए।

— कपड़े ? कपड़े क्यों निकाल दूँ ? धोबी आया है क्या ?

— जी नहीं, दादाबाबू माँ जी के साथ पुरी जा रहे हैं।

— पुरी ! सती के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। न कहना, न सुनना और सब पुरी जा रहे हैं।

शंभु बोला — हाँ बहूदीदी, भंडारघर में हुक्म चला गया है। घी और मैदा निकाले गये हैं। बतासी की माँ ने रसोइये से लूची तैयार करने को कह दिया है। कैलास बिस्तर बाँध रहा है। अब सूटकेस ठीक किया जायेगा।

सती उठकर बैठी। दोनों जने पुरी जा रहे हैं — और वह ? सती क्या यहाँ अकेली रहेगी ? उसने आलमारी से कपड़े निकाल दिये। ढेर सारे कपड़े। एकाएक उसके दिमाग के भीतर मानो आग की लपट फैल गयी। शंभु कपड़े लेकर चला गया तो वह एक क्षण कमरे में चुपचाप खड़ी रही। उसने एक बार सोचा कि अभी दौड़कर लाइब्रेरी में जाऊँ और उससे पूछूँ। लेकिन वैसा न कर वह खिड़की के सामने जा खड़ी हुई। सामान बाँधे-धरे जा रहे हैं, खाना बन रहा है — लेकिन वह कुछ भी नहीं जानती। उसे मालूम भी हुआ तो एक मामूली नौकर से !

सारा समय सती छटपटाती रही। घड़ी ने चार बजाये। नौकरों के आने-जाने की आवाज सुनाई पड़ रही है। माँ-बेटे के पुरी जाने की तैयारी हो रही है। नीचे रसोई-घर में लूची तली जा रही है। अचानक शंभु सामने पड़ गया तो उसी को सती ने बुला लिया — सुन तो शंभु।

शंभु आया तो सती ने पूछा — तुम सबमें से कौन साथ जा रहा है? क्या तू रहा है?

शंभु बोला — नहीं बहूदीदी, मैं नहीं जा रहा हूँ, कैलास रसोइया और बतासी की माँ, ये ही दोनों जायेंगे।

— अगर रसोइया चला गया तो यहाँ खाना कौन बनायेगा?

— नया रसोइया।

फिर सती को न जाने क्या याद आया। उसने जरा रुककर पूछा — तेरे दादा बाबू कहाँ हैं? लाइब्रेरी में?

— नहीं, माँजी के पास।

सती बोली — ठीक है, तू जा ....

सती समझ नहीं पायी कि क्या करे। एक बार मन में आया, कि अभी पिता जी को टेलीग्राम कर दिया जाय। अब एक क्षण भी इस घर में रहने को मन नहीं करता। उसे जरूरत नहीं है ऐसे घर की! जरूरत नहीं है। जरूरत नहीं है! वह अपने कमरे में बेचैन होने लगी। उसे ऐसा लगा कि जैसे किसी ने जंजीर से उसके पाँवों को बाँध रखा हो। अब उसके यहाँ से निकलने का उपाय भी नहीं है। कपड़े पहनकर सजधज कर सनातन बाबू कमरे में आये।

उनको सामने पाकर सती समझ नहीं पायी क्या कहे। थोड़ी देर तो वह हाँफती रही। उसके बाद बोली — तुम लोग क्या पुरी जाओगे?

सनातन बाबू शायद कुछ सोच रहे थे। बोले — हाँ, क्यों?

— लेकिन तुम लोगों ने मुझसे कुछ नहीं कहा?

— तुम नहीं जानती थी?

मानो सनातन बाबू अभी तक यह नहीं जानते थे। वे बोले — नहीं जानती थी तो क्या हुआ, मैं भी तो नहीं जानता था, अभी मुझसे माँ ने कहा .. .

— मुझसे बताना भी क्या तुम लोगों ने मुनासिब नहीं समझा?

सती यह सब कहती हुई हाँफने लगी।

— क्या मैं तुम लोगों के घर की कोई नहीं हूँ?

सनातन बाबू बोले — ठीक कहती हो, तुमसे कहना चाहिए था।

यह कहकर सनातन बाबू उदासीन बने कमरे से जाने लगे। सती उनके सामने आकर खड़ी हो गयी, बोली — तुम भी कैसे हो। तुम लोगों के चले जाने पर क्या मैं इस मकान में अकेली रहूँगी? मुझे अकेली छोड़कर जाने में तुम लोगों को कष्ट

नहीं होता ?

सनातन बाबू असमंजस में पड़ गये। बोले — हाँ, हाँ, तुम अकेली कैसे रहोगी ? ठीक कहती हो। रुको, मैं माँ से कहता हूँ। मैं अभी जाकर कहता हूँ ....

सती ने एकाएक सनातन बाबू का हाथ पकड़ लिया। क्या — उनसे कहना पड़ेगा। तुम्हें माँ से कुछ कहने की जरूरत नहीं है। मैं नहीं जाना चाहती। मैं अकेली रह लूँगी — अकेली रहने में मुझे कोई तकलीफ नहीं होगी।

सनातन बाबू ने सती की तरफ देखकर कहा — तो माँ से न कहूँ ?

— नहीं, कहने की जरूरत नहीं है। जहाँ इच्छा हो तुम लोग जाओ, जितने दिन इच्छा हो तुम लोग वहाँ रहो, मुझे तुम लोगों की जरूरत नहीं है। मैं यहाँ आराम से रह लूँगी।

लगा कि सनातन बाबू निश्चित हुए। वे बोले — हाँ, माँ भी कह रही थी कि शंभु यहाँ रहेगा, नया रसोइया भी है। फिर हम लोग ज्यादा दिन तो वहाँ रहेंगे नहीं। पाँच-छः दिन में लौट आयेंगे।

सती ने हाथ छोड़ दिया। सनातन बाबू ने फिर कुछ सोचकर कहा — अगर तुम जाना चाहती हो तो चलो न, असल में मुझे तुम्हारी बात याद नहीं थी।

सती बोली — नहीं, रहने दो, मैं नहीं जाऊँगी।

— तो मैं चलूँ, क्यों ?

बाहर से सास की आवाज सुनाई पड़ी — सोना ....

— आया माँ।

और सनातन बाबू चले गये। कुछ देर बाद सास कमरे में आयीं। वही गरद की धोती। सिर पर वही सफेद बाल। सास बड़ी व्यस्त लगीं। सास आयी तो सती ने आगे बढ़कर उनके पाँव छुए। सास बोलीं — होशियारी से रहना बहू, मैंने मुंशी जी से सब कह दिया है। तुम्हें कोई असुविधा नहीं होगी। शंभु यहीं रहेगा, नया रसोइया भी है, दरबान से कह देती हूँ वह बराबर ख्याल रखेगा। और ? और कुछ कहना पड़ेगा ?

सती बोली — नहीं।

—देखो, मेरी मनौती है, इसीलिए जा रही हूँ, नहीं तो इस समय कौन घर छोड़कर जाता है ? तुमको कोई असुविधा हो तो शंभु से कहना। मुंशी जी से मैंने सब कह दिया है।

फिर अचानक उनको कुछ याद आया। वे बोलीं — अच्छा जाऊँ, स्टेशन पहुँचने में देर हो जायेगी।

सास चली गयीं। सनातन बाबू पहले ही जा चुके थे। सती अकेली कुछ देर कमरे में उसी तरह खड़ी रही। उसके बाद बाहर वाला फाटक खोलने की आवाज आयी। गाड़ी निकली। फिर गाड़ी की आवाज भी विला गयी। फिर सब कुछ सूना

और शांत हो गया। सती को लगा कि मकान का कोना-कोना मानो उसकी तरफ देखकर चुपचाप हँस रहा है, दिल खोलकर हँस रहा है। लगा कि यह ऐश्वर्य, यह कार यह सुख, यह आराम, सब झूठ है। मानो सब अन्दर से खाली है। अच्छा होता कि वह बीमार पड़ती। अगर वह बिस्तर पर पड़ी रहती तो उसके लिए बड़ा अच्छा होता। अगर वह किसी छोटे घर में होती और उस घर के छोटे घेरे में उसकी चिंता-भावना बँधी रहती तो इससे बेहतर होता। प्रियनाथ मल्लिक रोड के इस विशाल मकान से तो ईश्वर गांगुली लेन का वह टूटा पुराना मकान भी बहुत अच्छा था।

शंभु कमरे में आया। बोला — बहूदीदी।

— क्यों रे, वे लोग चले गये ?

सती ने रात को न खाने का इरादा किया था। लेकिन फिर सोचा कि वह क्यों न खाये ? क्यों वह अपने को तकलीफ दे ? किससे रूठकर वह ऐसा करे ? उसके रूठने का यहाँ ख्याल भी कौन करेगा ? उसने फिर बुलाया — शंभु।

शंभु फिर कमरे में आया। सती बोली — मैं खाऊँगी . . .

— अभी तो अपने कहा कि नहीं खाऊँगी। नये रसोइये ने चूल्हा बुझा दिया है।

— ठीक है, उससे फिर चूल्हा जलाने को कह दे, मेरे लिए लूची बनेगी।

उतनी रात को फिर चूल्हा जलाया गया। बतासी की माँ उनके साथ गयी है। भूती की माँ पर सारे काम का बोझ पड़ा है। नये रसोइये ने लूची बना दी। बहूदीदी के लिए लूची बनी। फिर सब्जी बनायी गयी। सती ने माँग-माँगकर खाया। उसे क्या हुआ है ? कुछ भी नहीं ! क्यों वह अपने शरीर को तकलीफ दे ? वह तो आराम से रात भर सोयेगी और सवेरे देर करके उठेगी ! अब सास नहीं है कि सवेरे जल्दी उठना पड़ेगा।

खा-पीकर सती बिस्तर पर लेटी।

भूती की माँ बोली — बहूदीदी, अकेले सोने में डर तो नहीं लगेगा ?

— नहीं, डर क्यों लगेगा ?

— नहीं, अगर कहो तो मैं तुम्हारे दरवाजे के पास बाहर लेट जाऊँ ....

— नहीं, नहीं, कोई जरूरत नहीं। तुम अपने कमरे में जाकर सो जाओ भूती की माँ, मेरे लिये तुम्हें तकलीफ करने की जरूरत नहीं।

— तो फिर दरवाजा बंद कर लो बहूदीदी।

हालांकि उस रात सती को नींद नहीं आयी थी। अगर नींद आती तो वही अस्वाभाविक होता। रात भर जागकर वह न जाने कैसी-कैसी आवाजें सुनती रही। रात खतम होने से पहले उसे शायद एक बार झपकी आयी थी। वह भी थोड़ी देर के लिए। उसके बाद उसे फिर घड़ी की आवाज सुनाई पड़ी। तब सती बिस्तर छोड़कर उठी। बाहर बरामदे में आकर उसने देखा कि भूती की माँ दरवाजे के सामने फर्श

पर सो रही थी।

—भूती की माँ। ओ भूती की माँ।

भूती की माँ हड़बड़ाकर उठी। बोली—बहूदीदी ?

—सवेरा हो गया है, उठोगी नहीं ?

उसके बाद सती ने शंभु को बुलाया। कहा—ड्राइवर से कहना आज मैं बाहर जाऊँगी।

—कहाँ जाओगी बहूदीदी ?

—तू सुनकर क्या करेगा ? जहाँ मन होगा जाऊँगी। तुझसे जो कहा, वही कर !

झटपट नहाकर सती ने एक साड़ी पसंद कर पहनी। अच्छी साड़ी। चेहरे पर स्नो और पाउडर लगाया। पहले से कोई तय नहीं था कि कहाँ जायेगी। शंभु ने पूछा था—मैं तुम्हारे साथ चलूँ बहूदीदी ?

—नहीं, तू रहने दे, दरबान मेरे साथ जायेगा।

ड्राइवर ने पूछा था—किधर चलूँ बहूदीदी ?

सती ने कहा—ईश्वर गांगुली लेन, कालीघाट !

उसके बाद न जाने क्या हुआ ! गाड़ी हाजरा रोड से बायें मुड़ने लगी थी। अचानक सती ने कहा—सीधे चलो ....

अभी एकदम सवेरा है। इतने सवेरे वहाँ जाने पर सब हैरान हो जायेंगे। गली में गाड़ी जायेगी भी नहीं। बहुत दिन बाद वह वहाँ जायेगी। शायद सती को देखकर सब आश्चर्य में पड़ जायेंगे। शायद उसके उस पुराने मकान में नया किरायेदार आ गया हो। शायद दीपू लोग भी अब उस मकान में नहीं होंगे। शायद वे कहीं और चले गये होंगे। अब शायद दीपू की माँ दूसरे के घर खाना नहीं बनाती होगी। शायद दीपू की शादी भी हो गयी हो। शायद उसके बालबच्चा भी हो गया होगा।

गाड़ी सीधे जजेज़ कोर्ट रोड से चल रही थी। फिर इधर घूमी। फिर हाज़रा रोड से गाड़ी लौट आयी। हरीश मुखर्जी रोड आया। हरीश मुखर्जी रोड पर जयंती का मकान है। लक्ष्मी दी की सहेली जयंती पालित। बैरिस्टर पालित की लड़की। उसी बैरिस्टर पालित का लड़का है निर्मल पालित। बहुत दिन पहले एक बार लक्ष्मी दी के साथ सती उस मकान में गयी थी।

सती अचानक बोली—रहने दो, सीधे चलो—एकदम सीधे ....

एकदम सीधे। यह रास्ता कितना जाना-पहचाना है। कालेज में पढ़ते समय कालेज की बस से सती कितनी बार इस सड़क से गयी है। वे सब दिन मानो आँखों के सामने तिर रहे हैं। सती गाड़ी में आराम से बैठी सोचने लगी। मन कर रहा है कि सारा कलकत्ता घूम लूँ। मन की इच्छाएँ मानो कार के पहिये हैं, जो तेजी से घूम रही हैं। यह सड़क जहाँ खत्म होगी, वहीं पहुँचने पर मानो ठीक रहेगा। सड़क से झुंड के झुंड दफ़्तर के बाबू लोग जा रहे हैं। थोड़ी देर में दफ्तरों के दरवाजे खुल जायेंगे।

छोटे बच्चे किताब-कापी लेकर स्कूल जा रहे हैं। कभी सती भी इसी तरह स्कूल जाती थी — फिर वह बड़ी हो गयी। उसके बाद उसकी शादी हो गयी। शादी के बाद ही मानो सब गड़बड़ा गया। सब-कुछ उलट-पुलट गया।

अचानक सती बोली — गाड़ी घुमाओ, गाड़ी घुमाओ ....

गाड़ी के चारों पहिये तब तक कलकत्ते की सड़कों पर काफी दौड़ चुके थे। सती के मन की जलन बहुत कुछ कम हो चुकी थी।

— किधर चलूँ बहूदीदी ?

— ईश्वर गांगुली लेन, कालीघाट ....

सती ने कह तो दिया। लेकिन वे लोग वहाँ न हों तो? अगर वे मकान छोड़कर कहीं और चले गये हों तब? खैर, नये मकान का पता भी वहीं से मिल जायेगा। अगर वे लोग मिल गये तो सती जाकर कहेगी — यों ही चली आयी। क्यों, आ नहीं सकती? इतने दिन नहीं आयी तो क्या कभी नहीं आऊँगी? इतने दिन का सम्पर्क क्या एकदम खत्म करना पड़ेगा? यह कहकर वह जरा मुस्करायेगी। फिर सम्पर्क ही तो बड़ी बात नहीं है। घर-गृहस्थी के झमेले में कौन किसकी खबर ले सकता है? सभी अपनी-अपनी समस्याओं में उलझे हुए हैं। अमीर के घर सती की शादी हुई है तो क्या उसकी कोई समस्या नहीं है?

नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट के उस हिस्से में जाकर गाड़ी रुकी तो सती ने न जाने क्या सोचा।

वह बोली — दरबान, उन्नीस बटा एक बी नंबर मकान में जाकर देखो तो वहाँ दीपंकर बाबू हैं या नहीं। अगर हों तो मेरे पास बुला लाना ....

दरबान समझ नहीं पाया। सती ने उसे समझा दिया — वह जो मकान दिखाई पड रहा है, जिसकी ईंटें निकल आयी हैं, वहीं जाकर पूछो . .

उसी के बाद दीपंकर आया था। क्या शकल हो गयी थी दीपू की! सिर के बाल बिखरे थे। सिर पर पट्टी बँधी थी।

आश्चर्य है! उस समय भी सती जानती न थी कि क्यों इतने दिन बाद वह फिर अपने पुराने मुहल्ले में आयी थी! एकाएक उसे खयाल आया। अगर दीपंकर पूछ बैठे कि सती, इतने दिन बाद क्यों आयी हो तो वह क्या जवाब देगी? तभी अचानक सती को याद आया कि दीपंकर की माँ हर साल इसी समय बेटे के लिए खीर बनाती थी। हाँ, तारीख भी याद आयी। उसी दिन दीपू की माँ बेटे के लिए सामान लेने नौकरानी को बाजार भेजती थी। दीपू जो-जो चीजें खाना पसंद करता था, उस दिन वही सब चीजें बनती थीं। कितनी बार दीपू की माँ ने सती से कहा था — जब वह दो महीने का था तभी उसे छाती से चिपटाये यहाँ आयी थी बिटिया! वह कभी बड़ा होगा, पढ़ेगा-लिखेगा, यह मैंने सपने में भी सोचा नहीं था।

इस तरह किसी माँ को बेटे से प्यार करते सती ने कभी नहीं देखा था।

मौसीजी ने कहा था — ठीक अमावस के दिन दीपू पैदा हुआ था। श्रावणी अमावस के दिन। जब वह पैदा हुआ तब लोगों ने कहा कि तुम्हारा बेटा चोर बनेगा। अब पता नहीं, वह क्या होगा! वह जिन्दा रहे, इसी में मुझे शांति है। बाल-बच्चा कैसी चीज है, यह तो जब तुम्हारे होगा तभी समझोगी बिटिया ....

और जब दीपंकर ने पूछा — अरे, सती तुम! तुम कैसे चली आयीं ?

तब सती ने तपाक से जवाब दिया था — सोमवार को तुम मेरे घर आओगे, वहीं खाना खाओगे ....

अचानक ही सती के मुँह से यह बात निकल गयी थी। जब सती घर से चली थी तब दीपू को न्योता देने का उसका कोई इरादा नहीं था। लेकिन न जाने कैसे क्या हो गया! जब नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट से वह लौटी तब भी उसके मन की शंका दूर न हुई। यह काम अच्छा हुआ या बुरा! उसने यह काम सही किया या गलत! लेकिन उस समय और कोई उपाय नहीं था। उस समय दीपू को मना भी नहीं किया जा सकता था। सब इंतजाम पक्का हो चुका था। दीपंकर सोमवार को आयेगा। उस सूने मकान में सती ने बड़ी बेचैनी में वे कई दिन काटे! आखिर क्यों वह दीपू को न्योता देने गयी ? क्यों वह ऐसी बेवकूफी कर बैठी? अब वह सलाह भी किससे ले ? कैसे दीपू को मना करे ?

देखते ही देखते सोमवार आ गया।

सती ने भूती की माँ को बुलाया। कहा — भूती की माँ, आज मैंने यहाँ एक जने को न्योता दिया है, क्या तुम सब इन्तजाम कर सकोगी ?

भूती की माँ बोली — क्यों नहीं कर सकूँगी बहूदीदी, बतासी की माँ नहीं है तो क्या घर का सब कामकाज बंद हो जायेगा ?

— तो तुम शंभु से कह दो भूती की माँ, कि क्या-क्या लाना होगा, ताकि वह सब कुछ समझकर ले आये — कई तरह की मछलियाँ हों, मांस और अंडे। खुशबूदार चावल की खीर भी बनानी पड़ेगी।

सचमुच भूती की माँ ने सती की सारी चिंता दूर कर दी। उसने कहा — तुम घबड़ाओ नहीं, बहूदीदी, हरामजादी बतासी की माँ नहीं है तो तुम यह न समझ लो कि भूती की माँ भी मर गयी है। मेरे रहते तुम्हें जरा भी परेशानी नहीं होगी मैं अभी सब इन्तजाम कर देती हूँ ....

— और रसोई ? नया रसोइया क्या वह सब बना पायेगा ?

मानो भूती की माँ के आत्मसम्मान को ठेस लगी। वह बोली — अगर वह न बना पाये तो मैं किस लिए हूँ ? क्या मैं मर गयी हूँ ?

दिनभर सचमुच सती को बड़ा खटना पड़ा। एक-एक कर सब बनाने पड़े। पता नहीं, एकाएक उसने दीपू को क्यों न्योता दे दिया! लेकिन अब, जब न्योता दे ही दिया गया तब तो पीछे नहीं हटा जा सकता। दिन भर की दौड़धूप के बाद जब

वह नहाकर तैयार हुई, तभी दीपंकर आ गया।

पहले से सती ने दरबान से कह रखा था कि बाबू आ जाय तो उसे ऊपर ले आना। लेकिन उसके पहले ही शंभु आकर खबर दे गया। एक क्षण के लिए सती की छाती के भीतर हलचल हुई। उसने कोई गलत काम तो नहीं किया! लेकिन तभी उसने मन को मजबूत कर लिया। हाँ, उसे भी अधिकार है। उसे भी अधिकार है अपने इष्टमित्रों को न्योता देकर खिलाने का। वह भी इस घर की बहू है। इस घर के और लोगों की तरह उसका भी अधिकार है।

और तभी अंत में वह वाकया हो गया।

उसके बाद भी दीपंकर ने खाया। सती ने उसे खाने के लिए बाध्य किया। फिर भी सती की छाती धड़कने लगी थी। उसका भी अधिकार है। उसने कहा था — इस घर में मेरा भी अधिकार है, तुम खाकर आज इसी का सबूत दे दो ....

जब तक दीपंकर खाना रहा, तब तक सती अस्वाभाविक उत्तेजना से थरथर काँपती रही। उसके बाद जब दीपंकर जाने लगा, तब सती ने सास को सुनाकर ही कहा — तुम कल आना, कल फिर आओगे, समझ गये न ....

दीपंकर के चले जाने के बाद सास ने फिर बुलाया — बहू, एक बात सुन लो, इधर आओ।

सती अपने को मजबूत बनाकर सास के सामने जा खड़ी हुई।

सास तब भी उसी जगह खड़ी थी। तब भी उन्होंने सफर के कपड़े नहीं बदले थे।

सास बोली — मैं अभी तक मरी नहीं बहू! मेरे मरने से पहले ही तुमने मेरे ससुर के घर में मेरे सामने मेरा अपमान किया है।

सती सिर झुकाये चुप खड़ी रही।

सास फिर बोली — तुमने मुझे सुनाकर बाद में उससे जो कहा, वह मैंने सुना है। लेकिन याद रखो कि मैं अभी तक जिंदा हूँ।

फिर जरा रुककर सास बोली थी — जाओ।

सती धीरे-धीरे अपने कमरे में चली आयी। दीवार घड़ी की छाती में उस समय शायद बड़े जोरों की हलचल मची थी। सती पलंग का डंडा पकड़कर देर तक खड़ी रही, मानो उसे छोड़ते ही वह गिर पड़ेगी। मानो वह बेहोश हो जायेगी।

— बहूदीदी!

शंभु कमरे में आया वह बोला — तुम्हारे लिए खाना परोस दूँ बहूदीदी?

सती एकाएक पीछे मुड़ी। वह बोली — नहीं, तू जा, बतासी की माँ से कह दे कि आज मैं खाना नहीं खाऊँगी ....

शंभु चला गया। थोड़ी देर बाद भूती की माँ धीरे-धीरे कमरे में आयी और बोली — क्यों बहूदीदी, तुम क्यों नहीं खाओगी? रात भर भूखी रहोगी तो तुम बीमार

पड़ोगी। चलो, खाना खा लो ....

सती बोली — नहीं भूती की माँ, मुझे भूख नहीं है, मैं सच कह रही हूँ। अब तुम यहाँ से जाओ ....

भूती की माँ तब भी नहीं हिली। बोली — तुम नहीं खाओगी तो हम सब कैसे खायेंगे, बताओ ....

— नहीं, तुम जाकर खा लो भूती की माँ, इसमें कोई हर्ज नहीं है। तुम जाओ, खाना खा लो ....

सती की उन दिनों की बातें दीपंकर को आज भी याद हैं। हर बात और हर घटना के बारे में सती ने उससे विस्तार से बताया था। सती का जीवन भी अद्भुत आराम का था। उस आराम में जितनी जलन थी, उतना ही नशा भी। सती का जीवन मानो दारुण आराम की बहुतायत से जला जाता था। जीवन का हर क्षण दुःखदायी काँटे के समान उसे बींधकर लहूलुहान कर देता था। फिर भी सनातन बाबू के लिए उसके मन में कहीं एक आकर्षण था।

जब रात ज्यादा हो गयी, तब सनातन बाबू कमरे में आये। बड़ा हँसता हुआ चेहरा लेकर वे आये और बोले — देखो, भगवान की इच्छा न रहने पर क्या मनुष्य की आशा पूरी होती है ?

सती ने सोचा था कि सनातन बाबू भी शायद आते ही वह सवाल करेंगे कि कौन आया था ? सती ने किसे न्योता दिया था ? लेकिन वे उस प्रसंग की तरफ गये ही नहीं। वे कहने लगे — बस और चार-पांच घंटे बाद हम पुरी पहुँच जाते, लेकिन अचानक एक जगह ट्रेन रुक गयी, आगे जाना संभव नहीं था। लाइन पानी में डूब गयी थी।

सती कुछ बोली नहीं।

सनातन बाबू कहने लगे — उसके बाद ट्रेन लौटकर कटक स्टेशन पर आयी। सोचा, जब आगे जाया ही नहीं जा सका तब, कलकत्ते लौटना पड़ेगा, लेकिन इधर का भी रास्ता बंद हो चुका था। इधर भी नदी का पानी रेललाइन पर आ गया था। दो दिन ट्रेन में ही बैठे रहना पड़ा — आखिर माँ से कहा ....

पता नहीं सनातन बाबू क्या-क्या कह गये। सती ने कुछ भी नहीं सुना। और दिनों की तरह उस रात सनातन बाबू किताब लेकर टेबिल के पास नहीं बैठे। तीन दिन के परिश्रम से वे थके हुए थे। धीरे-धीरे वे कपड़े उतारने लगे। सती को लगा कि अब शायद वे वह प्रसंग छेड़ेंगे। शायद अब वे पूछेंगे।

लेकिन सनातन बाबू ने वह बात छेड़ी ही नहीं। कपड़े उतारकर बिस्तर पर लेट गये। उसके बाद मानो उन्हें खयाल आया तो वे बोले — तुम नहीं सोओगी ?

— हाँ, सोऊँगी।

सती धीरे-धीरे बगल में जाकर लेट गयी। एक ही बिस्तर। एकदम अगल-बगल।

सती ने बत्ती बुझा दी थी। कमरे में अँधेरा था। सनातन बाबू एक बार हिले। उन्होंने करवट बदली। एक क्षण के लिए सती चौंकी। शायद अब वे पूछेंगे। शायद अब वे पूछेंगे कि वह कौन था? कौन यहाँ आया था? किसको बिठाकर तुम खिला रही थी?

लेकिन सनातन बाबू ने वह सब कुछ भी नहीं पूछा। घड़ी की छाती में धक्-धक् बढ़ने लगी। घड़ी की टिक-टिक आवाज मानो सती की छाती में चुभने लगी। मानो उसे जोर की टीस होने लगी। लगा कि अभी साँस चलना रुक जायेगा।

—अरे, एक बात याद आ गयी है।

सती तो बेचैनी से इंतजार ही कर रही थी कि शायद अब वे वह प्रसंग छेड़ेंगे इसलिए पूछा—क्या?

सनातन बाबू बोले—सन् उन्नीस सौ बत्तीस की वर्षा के समय भी एक बार इसी तरह रेल-लाइन डूब गयी थी। इसलिए सोच रहा था कि बारिश के समय पुरी जाना ही ठीक नहीं हुआ।

इतना कहकर सनातन बाबू चुप हो गये। उसके बाद लगा कि वे सो गये हैं।

अब सती से रहा नहीं गया। बोली—तुम और कुछ नहीं कहोगे?

सनातन बाबू ने नींद में ही जवाब दिया—हूँ...

—क्या तुम सो गये?

सनातन बाबू बोले—नहीं, तुम क्या कह रही हो?

सती बोली—रहने दो। तुम्हें नींद आ रही है, सोओ

—नहीं, नहीं, आँख लग गयी थी, अब जग गया हूँ। बताओ, क्या कह रही थी? कुछ कह रही थी न?

सती जरा रुककर बोली—तुमने तो मुझसे कुछ नहीं कहा?

सनातन बाबू आश्चर्य में पड़ गये। बोले—किस बारे में?

—तुमने जिसको मेरे कमरे में देखा, उसके बारे में तो नहीं पूछा कि वह कौन है?

इतनी देर बाद सनातन बाबू को याद आया। बोले—अरे हाँ, वह कौन है?

—लेकिन तुमने पूछा क्यों नहीं?

सनातन बाबू बोले—मुझे याद ही नहीं था।

—वाह रे, तुम्हारी पत्नी के साथ एक अपरिचित आदमी कमरे में बैठा [illegible] कर रहा था और तुमने एक बार पूछा भी नहीं कि वह कौन है? क्या यह [illegible] भूलता है? भूल भी सकता है?

सनातन बाबू ने मानो अपनी गलती मान ली और कहा—[illegible] न, वह कौन है?

—नहीं, मैं नहीं बताऊँगी। पहले तुम बताओ कि तुमने कुछ [illegible]

शायद सनातन बाबू समझ नहीं पाये कि क्या जवाब दिया [illegible]

सती बोली — तुम्हीं को पहले पूछना चाहिए था कि वह कौन है ?

सनातन बाबू ने मान लिया । कहा — हाँ, मुझको ही पहले पूछना चाहिए था ।

— तो तुमने पूछा क्यों नहीं ?

सनातन बाबू हँसे । बोले — देखो, तुमने मुझे बड़ी मुश्किल में डाल दिया ....

— नहीं, बताओ । तुमको जवाब देना ही पड़ेगा ।

सनातन बाबू बोले — अब से याद रखूँगा और पूछा करूँगा ....

सती बोली — मैंने उससे कल भी आने के लिए कहा है ।

— अच्छा किया है ।

कल आने पर मैं उससे तुम्हारा परिचय करा दूँगी, तुम उससे बात करोगे और मेरी इज्जत बचाओगे । बोलो, मेरी बात रखोगे कि नहीं ?

— जरूर रखूँगा । कल मैं जरूर उससे बात करूँगा ।

सनातन बाबू शायद बहुत ज्यादा थके हैं । वे करवट बदल कर सोने की कोशिश करने लगे । थोड़ी देर बाद वे सो भी गये । साँस चलने की एक समान आवाज होने लगी । सती भी सोने की कोशिश करने लगी । उसने आँखें बंद कर अथाह अँधेरे में अपने को खो देने की कोशिश की । सिर्फ नींद, कहीं कोई अशांति नहीं । संसार में सर्वत्र अखंड शांति है । मैं सुखी हूँ । मुझे कोई भी दुःख नहीं है । इस तरह एकाग्र मन से नींद की उपासना करने पर अनेक बार उसे नींद आयी है । पहले आधा घंटा या एक घंटा प्रयास करना पड़ता है, उसके बाद मन के साथ शरीर के सब अंग-प्रत्यंग न जाने कैसे ढीले पड़ जाते हैं । उसके बाद अविच्छिन्न निद्रा और निस्तरंग विश्राम !

सती फिर चित्त लेटी । लगा, कहीं कोई आवाज हुई । खट-खट आवाज । कहाँ आवाज होगी ? कौन आवाज करेगा ? ऊपर छत पर कोई नौकर-चाकर नहीं सोता । सब पहली मंजिल में मुंशी जी के कमरे के बगल वाले कमरे में सोये हैं । और तो कहीं कोई नहीं है ! तीन-चार कमरों के बाद सास का कमरा है । वे वहीं सो रही हैं । सनातन बाबू बगल में सो रहे हैं । उनकी साँस चलने की आवाज हो रही है ।

बिस्तर से सती उठी । शायद घड़ी की आवाज हो । बड़ी सी घड़ी है । कभी-कभी उसके कल-पुर्जों से खट-खट आवाज होती है । सती घड़ी के नीचे जाकर खड़ी हुई । आश्चर्य है ! घड़ी की टिक-टिक आवाज नहीं हो रही है । अँधेरे में ही सती ने घड़ी की तरफ देखा । घड़ी बंद हो गयी है । रात के एक बजने के बाद वह बंद हो गयी है । दोनों सुइयाँ एक जगह स्थिर हो गयी हैं । शायद चाभी नहीं भरी गयी । शायद उसकी जान खत्म हो गयी ।

सती फिर बिस्तर पर आकर लेटी । पता नहीं कितनी रात हो गयी है ।

बहुत दिन बाद इस घटना के बारे में सुनते हुए दीपंकर ने पूछा था — लेकिन वह आवाज कैसी थी ?

सती ने कहा था — उस समय समझ नहीं पायी थी कि कैसी आवाज है,

लेकिन बाद में समझ गयी थी कि वह आवाज बाहर की नहीं, मेरे अन्दर की थी। मेरे दिल की आवाज थी ....

दीपंकर ने पूछा था — इसका मतलब ?

सती बोली थी — इसका मतलब तुम नही समझोगे, सब लोग समझ भी नही सकते — सुन भी नही सकते। जब जिसका भाग्य फूटने लगता है तब वही वह आवाज सुन सकता है ....

उस दिन बिस्तर पर लेटी-लेटी सती भी यही सोचने लगी थी। शुरू में उसे थोड़ा डर लगा था। फिर उसने सोने की कोशिश की थी। तब भी वह बार-बार सोचती रही थी कि दीपंकर के आने पर उनसे परिचय करा दूँगी। सनातन बाबू दीपंकर से बात करेंगे। तो सती का सम्मान होगा और उसकी इज्जत बचेगी।

जैसे हर रात खत्म होती है और दिन निकलता है, उसी तरह हर दिन रात के अँधेरे में बदल जाता है। फिर भी दीपंकर के लिए यह रात मानो खत्म नही हो रही थी। दीपकर को याद है कि सती की कार जब उसे नेपाल भट्टाचार्य स्ट्रीट में छोड़ गयी तब भी मानो उसे होश नही आया। तब भी मानो सती की बात उसके कानों में गूँज रही है — मेरा भी इस घर में अधिकार है, तुम खाना खाकर आज उसी का प्रमाण दो ....

तब भी मानो सती का काला पड़ा चेहरा दीपकर की आँखों के सामने तिर रहा है। सती का सारा शरीर मानो उसकी आँखों के आगे थरथर काँप रहा है।

एकाएक दीपंकर मानो होश में आया और वह अपने मकान में घुसा। पहले इस समय अँधेरा रहता था। चन्नूनी जल्दी-जल्दी अपने कमरे में जाकर बिस्तर पर लेट जाती थी। बिन्ती दी अपने कमरे में जाकर दरवाजा बद कर लेती थी। उस समय माँ के पास कोई काम नही रहता था। तब वह भी छिटे और फोटा का भात ढककर सो जाती थी। लेकिन अब इस मकान का रंग-ढंग बदल गया है। अब काफी रात तक कमरों में बत्तियाँ जलती है। लक्का और लोटन के हँसने की आवाज सुनाई पड़ती है। लोगों का आना-जाना लगा रहता है। छिटे और फोटा के चेले आकर काफी रात तक जमावड़ा करते है। लेकिन माँ अपना खाना बनाने के बाद बिन्ती को खिलाकर कमरे का दरवाजा बंद कर लेती है। तब आधा मकान अँधेरा हो जाता है।

माँ ने देखते ही पूछा — खा आया ?

बेटे के चेहरे की तरफ देखकर माँ को कुछ चिंता हुई। उसने पूछा — क्यो रे, चेहरा देखकर लग रहा है कि पेट नही भरा . ..

— नही माँ, भरा है।

उसके बाद अचानक दीपंकर ने कहा — कल सवेरे हम लोगों को जाना है, याद है न ? जो-जो सामान ले चलना है, सब ठीक कर लिया है न ?

दीपंकर और उसकी माँ को लेना भी क्या है ? यहाँ जो कुछ है, सब अघोर

नाना का है। जिस तखत पर दीपंकर सोता है, वह भी अघोर नाना का है। जिस थाली में वह खाता है, वह भी उन्हीं की है। यहाँ सब कुछ उन्हीं का है। जिस दिन माँ उसे गोद में लेकर आयी थी, उस दिन उसके साथ जो कुछ था, आज वही साथ जायेगा। सिर्फ पथरपट्टी से माँ लकड़ी का एक बक्सा खरीद लायी थी। वह भी बहुत पहले की बात है। अब उस बक्से का कब्जा टूट गया है और रंग उड़ चुका है। सिर्फ वही साथ जायेगा। उसके अलावा दीपू के थोड़े से कपड़े हैं और माँ की दो-तीन सफेद धोतियां। बस।

दीपंकर ने फिर कहा — कब सबेरे ही मैं गाड़ी ले आऊँगा, देर मत करना। मुझे ठीक समय पर दफ्तर जाना है।

माँ बोली — कल मेरा जाना न होगा ....

— क्यों ?

— क्यों क्या ? इस दुश्मन को छोड़कर कैसे जाऊँ बता ? इसे कहाँ रखूं ?

बिन्ती दी माँ की गोद से सटी बैठी थी। घर में इतनी चहल-पहल है, इतनी खुशी है, लेकिन यह लड़की उस सबमें नहीं है। यह मानो सबसे अलग है।

दीपंकर बोला — बिन्ती दी को हमारे साथ ले चलो न — बिन्ती दी भी रहेगी।

— हट ! ऐसा कैसे हो सकता है। यह इस घर की लड़की है, इसके सगे दोनों भाइयों के रहते मैं इसे कैसे ले जा सकती हूँ, लोग क्या कहेंगे ? फिर भाई भी इसे क्यों जाने देंगे ? हम तो पराये हैं।

— हाँ, यह तो है। खैर, रात किसी तरह बीती। लेकिन सवेरा होते ही सब बदल गया। माँ रात रहते उठ गयी थी। उठकर चन्नूनी के कमरे में गयी। बोली — हम तो जा रहे हैं, तुम कुछ मत सोचना ....

चन्नूनी कोई जवाब नहीं दे सकी, सिर्फ फूट-फूटकर रोने लगी।

माँ ने आँचल से चन्नूनी की आँखें पोंछीं और कहा — अब तुम रोकर क्या करोगी ? इस संसार में हमेशा कौन किसके साथ रहता है ? कभी न कभी सब को जाना पड़ेगा ....

पीछे से दीपंकर ने बुलाया — माँ चलो, टैक्सी आ गयी है ....

माँ बोली — अरे, बुढ़िया रोने लगी है। तू एक बार आ न बेटा, पास आ जा। इसने तुझे बचपन में गोद में खिलाया है। तुझे देखने पर भी इसे शांति मिलेगी।

दीपंकर कमरे में गया। माँ ने झुककर कहा — दीपू आ गया है। दीपू को देखो ....

दीपंकर झुककर खड़ा हुआ। चन्नूनी ने उसके सिर पर हाथ रखा। शायद बूढ़ी ने आशीर्वाद दिया।

माँ बोली — आशीर्वाद दो, मेरा दीपू लायक बने ....

सचमुच, यही इन्सान जब बुढ़ापे में पहुँच जाता है तब कैसा शक्तिहीन हो जाता है। यह कितना बड़ा आश्चर्य है! एक दिन सब लोग चन्नूनी की तरह बूढ़े हो जायेंगे। इसी तरह शक्तिहीन हो जायेंगे। इसी तरह उनका भी बोलना बंद हो जायेगा। अघोर नाना भी अंत में कई घंटे बोल नहीं सके थे। उन्हें भी होश नहीं था। चन्नूनी औरत है, शायद इसलिए इनमें इतनी ताकत है। अब भी वह जी रही है।

दीपंकर बोला—चलो माँ, टैक्सी खड़ी है ....

—चल, चल, बेटा ....

उसके बाद माँ बोलीं—एक बार विन्ती को नहीं बुलाऊँगी? उसे हर बात बहुत जल्दी लगती है। अगर उससे बिना कहे चली जाऊँगी तो पता नहीं वह क्या कर ले ....

हाँ, यह तो है। विन्ती ही शायद अब भी अपने कमरे में दरवाजा बंद किये सो रही है। माँ उसी तरफ जाने लगीं सहसा फोंटा को पता, चल गया। छिटे और फोंटा अक्सर देर करके सोकर उठते हैं। उधर रात को देर करके वे सोते हैं। इसलिए सवेरे आठ-नौ बजे उनकी नींद खुलती है। अब तो अघोर नाना नहीं हैं। जब नाना जिन्दा थे तब तड़के ही उठकर वे बाजार की बस्ती में चले जाते थे। दीपंकर बचपन से उनको देख रहा है। पहले वह उनसे कितना डरता था! अब वे कितने बड़े हो गये हैं, इस मकान के मालिक बन गये हैं और बहुत रुपया उनके हाथ लगा है।

फोंटा दीपू की माँ को देखते ही आ गया। बोला—तुम कहाँ जा रही हो दीदी? क्या तुम मकान छोड़कर जा रही हो?

मानो डाँटता हुआ वह सामने आकर खड़ा हुआ।

दीपंकर बोला—हाँ ....

माँ बोलीं—हाँ बेटा, अब तुम लोग अपनी घर-गृहस्थी सँभालो, मेरा दीपू बड़ा हो गया है, अब वह क्यों तुम लोगों पर बोझ बनकर रहेगा। अब वह नौकरी करने लगा है, अब मैं उसकी शादी करूँगी, मेरी भी तो इच्छा-आकांक्षाएँ हैं ....

फोंटा ने न जाने क्या सोच लिया। उसके बाद चिल्लाकर भाई को बुलाया—छिटे, छिटे ....

आँखें मलता हुआ छिटे अपने कमरे से निकला। फोंटा बोला—यह देख, दीपू का तमाशा देख। अब लायक बन गया है, इसलिए किसी से कुछ कहे बिना माँ को लेकर भाग रहा है। अब तू देख ले ....

छिटे ने पूरा मामला समझ लिया, फिर उसने कहा—मतलब? इसका क्या मतलब है?

माँ बोलीं—तुम लोग नाराज हो बेटे। दीपू मेरा कोई गलत काम नहीं कर रहा है। अब वह अपने पाँवों पर खड़ा हो गया है, इसलिए हम लोगों का जाना ठीक

है। फिर किसके लिए यहाँ रहना है? अघोर नाना तो चले गये हैं ....

छिटे बोला — अघोर भट्टाचार्य चला गया है तो क्या हुआ? उसके दोनों नाती किसलिए हैं?

फोंटा दीपंकर की तरफ बढ़ता हुआ बोला — बता तेरा क्या इरादा है? क्या इरादा है तेरा?

दीपंकर हँसने लगा। बोला — मैंने मकान किराये पर ले लिया है, स्टेशन रोड पर बालीगंज में, पंद्रह रुपये किराया है। मैं पाँच रुपये पेशगी भी दे आया हूँ। बहुत दिन तो हम लोगों ने तुम लोगों को परेशान किया, अब ....

फोंटा बोला — भला चाहो तो यहीं रहो, नहीं तो ठीक न होगा — बताये देता हूँ ....

छिटे बोला — मकान किराये पर लेना है तो वह मकान है। बगलवाला मकान खाली पड़ा है ....

दीपंकर बोला — लेकिन वहाँ मैं पाँच रुपये पेशगी दे आया हूँ ....

— कोई बात नहीं, पाँच रुपये के लिए फटिक भट्टाचार्य गरीब नहीं हो जायेगा। तेरे पाँच रुपये मैं दे दूँगा। तू हमारा मकान किराये पर ले ले; लेकिन तू जा नहीं सकता। टैक्सीवाले से जाने के लिए कह दे ....

उसके बाद जाने क्या सोचकर फोंटा खुद ही बाहर गया। शायद वह टैक्सी वाले को भगाने के लिए गया।

दीपंकर ने माँ की तरफ देखा और माँ ने दीपंकर की तरफ।

छिटे बोला — अब कुछ नहीं सोचना, यहीं रह जाओ ....

माँ बोली — लेकिन भइया, मैं विन्ती के लिए सोचती हूँ। उसकी अभी तक शादी नहीं हुई। तुम लोगों ने उसकी तरफ नहीं देखा, वह हमारे पास रहेगी ....

छिटे बोला — रहे न, लेकिन मैं कह रहा हूँ, उसकी शादी हमीं करेंगे। अपनी बहन की शादी हम करेंगे — और किसी को नहीं करनी पड़ेगी ....

अंत में वही हुआ। सारा इन्तजाम, सारा सोच-विचार और सारी भाग-दौड़ बेकार हुई। सती, लक्ष्मी दी, चाचाजी और इतने दिन जिस मकान में रहे, उसी में दीपंकर रहेगा — यही तय हुआ महीने में दस रुपये किराया। चलो अच्छा हुआ, माँ के मन में अंत तक जरा हिचक थी। गंगा से वह मकान बहुत दूर होता। काली मंदिर भी बहुत दूर हो जाता। आखिर भगवान ने जो कुछ किया, अच्छे के लिए किया। फिर इतने दिन बाद दीपंकर उस मकान में जायेगा, उसी कमरे में रहेगा जिसमें कभी सती रहती थी, सोती थी। इसमें भी एक तरह का मजा है!

माँ ने भी सोचा कि विन्ती ही इससे सबसे ज्यादा खुश होगी। इधर कई दिनों से वह ठीक से बात भी नहीं कर रही थी। न जाने वह लड़की कैसी गुमसुम हो गयी थी। वह जान गयी थी कि दीदी कल सवेरे चली जायेगी, इसलिए शाम से दीदी से

दूर नही हुई।

विन्ती के कमरे के पास जाकर माँ आश्चर्य में पड गयी। बिन्ती कहाँ गयी? दरवाजा चौपट खुला है। ऐसा तो नही होता। अपना कमरा छोडकर वह कही नहीं जाती। आखिर वह गयी कहाँ?

दीपकर बोला — बाथरूम देखा है?

— हाँ, पूरा मकान देख लिया है।

छिटे और फोंटा भी आश्चर्य में पड़ गये। ऐसा तो नही होता। बिन्ती कहाँ गयी! सारा मकान दोबारा देख लिया गया। चन्नूनी का कमरा, आँगन का कोना, हाजी कासिम के बगीचे की चहारदिवारी के आसपास, लेकिन बिन्ती कहीं नही मिली। *गजब हो गया! आखिर उस लड़की को क्या भूत उठा ले गया?* दीपू की माँ के सिर पर मानो आसमान ढह पडा। जरूर उस लड़की ने कोई सर्वनाश कर लिया है। बरामदे में ही दीपू की माँ सिर पर हाथ धरकर बैठ गयी।

दीपंकर बोला — माँ, तुम उठो, में ढूँढता हूँ। वह यही कही होगी, जायेगी कहाँ। मै देखता हूँ ....

माँ चुप बैठी रही। छिटे भी बोला — तुम क्यों सोच रही हो दीदी — वह जायेगी कहाँ मैं देखता हूँ ....

सबेरे से ढूँढना शुरू हुआ लेकिन बिन्ती कही नही मिली। मुहल्ले में आसपास देख आने के लिए छिटे निकला। फोंटा भी सोच में पड़ गया। इतने दिन वे बहुत कुछ सोचते रहे, बहुत कुछ के लिए लड़ते रहे, मारपीट और गाली-गलौज करते रहे। अपने ही अधिकार के लिए उन लोगों ने चारों तरफ सजग दृष्टि रखी। इतने दिन उन लोगों ने जो चाहा था, अब उनको मिल गया है। लेकिन बहन के बारे में उन लोगों ने कभी नही सोचा। एक बहन भी है, यह मानो वे भूल गये थे। उसके बाद हँसती-खेलती वह छोटी-सी लडकी उन्हीं के साथ इस घर में बडी हुई और सयानी हुई। लेकिन उस लड़की ने उनकी तरह किसी चीज का विरोध करना नही सीखा और उनकी तरह लड़ना-झगड़ना भी नहीं सीख सकी। शायद इसीलिए सब लोग उनकी बात भूल गये थे। अब नये सिरे से उसकी बात सबको याद आयी एक दीपू की माँ उसे नही भूलीं। हर समय वह उसे अपनी आड़ में लेकर चलती रहीं। इस ससार में बिन्ती ही [illegible] एकमात्र अचल इन्सान है। वह कुछ छीनना नही जानती, बस गूंगी बनी [illegible] *आँखें फाड़कर देखना और चुपचाप रोना जानती है।*

कल रात बिन्ती मानो रोना भी भूल गयी थी। जब दीपू और दीपू [illegible] मकान बदलने के बारे में बातें हो रही थी और दोनो अपना सामान [illegible] दूसरे दिन सबेरे जाने की तैयारी कर रहे थे, तब भी उसने कुछ नहीं [illegible] मौके पर वह बोलती थी। लेकिन इधर उसने बोलना भी छोड़ दिया [illegible] अपने मन की गहराई में डूब गयी थी। मानो मन की अथाह [illegible]

थी। एक दीपू की माँ के अलावा किसी और को इसका पता नहीं था। इसलिए दीपू की माँ ही पहले माथे पर हाथ धरकर वरामदे में बैठ गयी।

इधर दीपू की माँ भी वहुत दिनों से परेशानियों के थपेड़े सह रही है। एक के वाद दूसरी परेशानी मानो साथ लगी चली आती है। एकमात्र सहारा थे अघोर नाना। उनके चल वसते ही यह सब शुरू हो गया है।

उस मकान का मतलव है वगलवाला वही मकान। एक दिन उस मकान में कितना संभलकर दीपंकर जाता था। उस मकान की हर ईंट में गत दिनों की स्मृति का दुःख-दर्द लिपटा है। अव उसी मकान में दीपंकर रहेगा। चलो अच्छा हुआ। इस मकान से और इस ईश्वर गांगुली लेन से मानो उसका जीवन जुड़ गया है। यहाँ से चले जाना ठीक नहीं है। शायद यहाँ से जाना अव संभव भी न होगा। जीवन से जो कुछ जुड़ जाता है, उससे अलग होना क्या इतना आसान है! इसी मकान में लक्ष्मी दी ने एक दिन उसे पीटा था, इसी मकान में लक्ष्मी दी ने उससे प्यार किया था और उसे चाकलेट दिया था। इसी मकान से कितनी वार तड़के वह लक्ष्मी दी की चिट्ठी लेकर चोरी से मिस्टर दातार को दे आया था। फिर इसी मकान में सती ने उसकी उपेक्षा की थी, अवहेलना की थी और कभी उसपर थोड़ी कृपा भी की थी। और यह मुहल्ला। इस मुहल्ले के इस मकान से उसका जीवन भर का संयोग हो गया है। यहीं किरण के साथ चंदा इकट्ठा कर उसने लाइब्रेरी खोली थी। यहीं के स्कूल में प्राणमथ वावू ने उनको अपने हाथों से गढ़ा था। कहना चाहिए कि कालीघाट की इसी धरती से वह पैदा हुआ है। इस जगह को क्या इतनी जल्दी छोड़ा जा सकता है? इधर-उधर देखकर छिटे लौट आया। वोला — विन्ती नहीं मिली। वह जरूर भाग गई है।

दीपंकर वोला — भाग गई है! वह भागेगी क्यों?

छिटे वोला — अगर वह भागी नहीं तो गयी कहाँ? कहीं ढूंढ़ना तो मैंने वाकी नहीं रखा — पथरपट्टी, हालदार टोला, पंडों के मकान और धर्मशालाएँ। वह कहीं नहीं है। कालीघाट में रहकर कोई साला मेरी आँखों में धूल नहीं झोंक सकता। वह यहाँ नहीं है — जरूर कहीं भाग गई है ....

फोंटा भी लौट आया। वोला — वह कहीं नहीं मिली दीदी, जरूर भागी है ....

दीपंकर ने कहा — पुलिस में खवर की है? थाने में खवर क्यों नहीं कर दी?

फोंटा वोला — थाने की वात फटिक भट्टाचार्य से करने की जरूरत नहीं है, वह तो हम लोगों का ननिहाल है ....

सचमुच विन्ती कहीं नहीं मिली। सवेरे सात, आठ और नौ वज गये। अव तो दीपंकर देर नहीं कर सकता। दफ्तर जाना है।

माँ वोली — जानता है दीपू, इसी लिए कल वह लड़की रोयी तक नहीं।

दीपंकर वोला — तुम क्यों इतना सोच रही हो माँ? पुलिस में खवर कर दी गयी है, पुलिसवाले जरूर उसे ढूंढ़ निकालेंगे ....

माँ बोलीं — इतने दिन उसे अपनी छाती से चिपटाये रखकर वह मेरी कोख से जन्मी बेटी की तरह हो गयी थी, इसलिए मैं नहीं सोचूँगी तो कौन सोचेगा — उसका कौन है ?

सचमुच उसका कौन है ? किसके लिए वह इस घर में रहेगी ? अघोर नाना के मरने के बाद माँ न जाने कैसी हो गयी हैं, अब बिन्ती की इस घटना से वह अपने को काबू में न रख सकीं । कहाँ की, किन लोगों की लड़की, ढूँढ़ने पर उनसे कोई सम्पर्क भी नहीं निकलेगा, फिर भी उसके लिए दीपंकर का मन क्यों बेचैन होने लगा, कौन बता सकेगा ! दीपंकर ने सोचा कि यह मुझे क्या हो गया है ? संसार में सोचने के लिए कितनी बातें हैं और कितनी समस्याएँ । इस विराट विश्व के असंख्य लोग अपनी असंख्य समस्याओं के बोझ से जर्जर हो रहे हैं, दीपंकर अकेले सोचकर उनकी समस्याओं का कितना समाधान कर पायेगा !

दफ्तर जाते समय दीपंकर जब फोंटा से मिला तो उससे कहा — मैं दफ्तर जा रहा हूँ, तुम लोग जरा पता लगाओ ....

फोंटा बोला — तू मत घबड़ा दीपू, हम दोनों भाई उसे जरूर ढूँढ़ निकालेंगे — तू निश्चिन्त होकर दफ्तर जा ....

दीपंकर बोला — बारबार कहकर भी माँ को पानी तक नहीं पिला सका । सवेरे से माँ ने कुछ नहीं खाया — अब भी बिन्ती दी अगर न मिली तो पता नहीं क्या होगा ....

फोंटा बोला — अरे, दीदी ने कुछ नहीं खाया ? क्यों ? भूखों रहने से क्या वह लौट आयेगी ? तू मत घबड़ा, दफ्तर जा, मैं जाकर दीदी से कहता हूँ ....

उसके बाद दीपंकर दफ्तर चला आया । दफ्तर में उसकी जिम्मेदारी बहुत बढ़ गयी है । प्रोमोशन मिलने से क्या होता है । अब भले ही उसे काम नहीं करना पड़ता, लेकिन जिम्मेदारी तो बढ़ गयी है । जो लोग एक दिन दीपंकर के बगल में बैठकर काम करते थे, अब वे अदब से बात करते हैं । जो जापान ट्रैफिक पहले इतना जरूरी काम था, अब उसकी तरफ कोई ध्यान तक नहीं देता । रॉबिन्सन साहब का ध्यान इस समय दूसरी तरफ है । कभी अगर मन हुआ तो फाइल मँगाकर देख लिया, बस ! दिल्ली से कोई जरूरी चिट्ठी न आने पर तो अब कोई उधर ध्यान भी नहीं देता ।

दीपंकर का नया चपरासी आदमी अच्छा है । दीपंकर के दफ्तर में आने से पहले वह उसके कमरे की मेज-कुर्सियाँ साफ करके रखता है । वह मेदिनीपुर का रहने वाला है और नाम है मधु ।

दीपंकर ने उसे बुलाया — मधु ।

मधु झट से अंदर आकर बोला — मुझे बुला रहे थे हुजूर ?

— रॉबिन्सन साहब ने मुझे बुलाया तो नहीं ?

— नहीं हुजूर ।

बस वही एक अफसर है। पता नहीं कब साहब आ जाय। उसके आने का कोई नियम नहीं है। अगर मन हुआ तो तड़के ही साहब कुत्ता लेकर पहुँच गया। फिर किसी दिन दस बज जाने पर भी साहब दिखाई नहीं पड़ता। दूसरी मंजिल से एजेंट का खास चपरासी कई बार आकर रॉबिन्सन साहब का पता लगा गया है। द्विजपद सवेरे से साहब के कमरे के दरवाजे के पास बैठा है, लेकिन साहब का कोई पता नहीं। द्विजपद जानता है कि साहब के आने में क्यों देर हो रही है। कुत्ता बीमार है। कुत्ते को कुछ हो जाने पर साहब का सारा काम गड़बड़ा जाता है। कभी-कभी बाजार में कुत्ते का बिस्कुट न मिलने पर भी साहब बिगड़ जाता है।

कहता है — डू यू नो सेन, बाजार, में बिस्किट नहीं मिल रहा है....

दीपंकर सुनकर हैरान हो गया। बोला — मिल रहा है सर, प्लेंटी मिल रहा है।

साहब कहता है — आलराइट, तुम बता दो किस दुकान में मिल रहा है, मैं चपरासी भेज रहा हूँ....

आखिर द्विजपद कहता है — नहीं, हुजूर। मैं ने चार दिन में कलकत्ते की सभी दुकानें देख ली हैं, वह बिस्कुट नहीं — कुत्ते के खाने का बिस्कुट।

जब बिस्कुट कहीं नहीं मिला, तब मिस माइकेल को बुलाया गया। शार्टहैंड नोट लेना होगा। लिखो लंदन को चिट्ठी। लंदन के सभी बिस्कुट बनाने वालों को। जितनी मशहूर कम्पनियाँ हैं सबको। रेलवे के कागज पर रेलवे की ही स्याही और रेलवे के खर्चे से चिट्ठियाँ लिखी गयीं एक हफ्ते तक दुनिया भर की बिस्कुट कम्पनियों को चिट्ठी लिखते मिस माइकेल के हाथ दुखने लगे। आँखों में दर्द होने लगा। उस समय रेलवे के कामों की तरफ साहब का ध्यान नहीं रहता। मोटी फाइल लेकर कोई कमरे में जाता तो साहब बिगड़ जाता। कहता — नो-नो, नॉट टुडे, माइ डॉग इज सिक नाउ।

लेकिन सिक होने से क्या होगा, वही कुत्ता दफ्तर आता है, आकर टेबिल पर बैठा रहता है। साहब उसके कान के पास मुँह ले जाकर न जाने बड़बड़ाकर क्या कहता है। साहब की बात कोई समझ भी नहीं सकता। द्विजपद सरकार दरवाजे के पीछे से झाँककर देखता है और दंग रह जाता है। कभी तो वह हँस भी देता है।

जर्नल सेक्शन का के० जी० दास बाबू सामने पड़ जाने पर दीपंकर को बड़े अदब से हाथ उठाकर नमस्कार करता है। लेकिन अपने सेक्शन में जाकर दास बाबू कहता है — क्या काम करूँगा गांगुली बाबू, अब काम करने को मन नहीं करता....

गांगुली बाबू पूछता है — क्यों बड़े बाबू ?

के० जी० दास बाबू कहता है — अरे, वह दो दिन का छोकरा, जिसें मैंने हाथ पकड़कर काम सिखाया, आज उसी को गुड मॉर्निंग कहना पड़ता है। अब मान-अपमान कुछ नहीं रह गया।

यह बात गांगुली बाबू ही दीपंकर से जाकर कह देता है। कहता है — देखिए,

सेन बाबू, आपका प्रोमोशन हुआ है तो बड़ा बाबू जला जा रहा है ।

दीपंकर बोला — यह सब छोड़िए गांगुली बाबू, अगर मेरे साथ ऐसा होता तो मैं भी जल जाता ....

उसके बाद जरा रुककर दीपंकर कहता है — मैं जानता हूँ कि कौन मेरे बारे क्या कहता है ?

गांगुली बाबू कहता है — लेकिन आप कहाँ सब जान पाते हैं ? आप सब नहीं जान पाते । आप जो मामूली कोट-पैंट पहनकर दफ्तर आते हैं, उससे भी लोग आपकी बुराई करते हैं ।

— क्या बुराई करते हैं ?

गांगुली बाबू ने कहा — लोग कहते हैं कि वह भी आपकी एक चाल है । घमंड छिपाने के लिए दिखावा है और क्या । लोग कहते हैं कि आप रॉबिन्सन साहब के कुत्ते को टिन-टिन बिस्कुट खरीदकर देते हैं और इसीलिए आपको प्रोमोशन मिला है ।

दीपंकर बोला — लेकिन आप तो जानते हैं गांगुली बाबू कि मैं कितना गरीब हूँ । मैंने तो आपसे सब बताया है । मेरी माँ ने दूसरे के घर खाना बनाकर मेरी परवरिश की है । मैं नहीं जानता था कि माँ ने नृपेन बाबू को तैंतीस रुपये घूस देकर मेरी नौकरी लगायी थी । वह भी तो मैंने आपसे कहा है । मैं किसलिए घमंड करूँगा ? अगर गरीबी की बात करते हैं तो मैंने जैसी गरीबी देखी है वैसी शायद आप लोगों ने कभी नहीं देखी । मैं भला साहब के कुत्ते के लिए बिस्कुट क्यों खरीदूँगा ? और रॉबिन्सन भला साहब भी वह क्यों लेगा ?

सचमुच दीपंकर को लगता था कि यह नौकरी, यह प्रोमोशन, ये साफ कपड़े मानो लज्जा देनेवाले हैं । चपरासी जो सलाम करता है, वह भी मानो उसके प्राप्य से अधिक है । गेट में दाखिल होते समय दरबान आजकल उसे सलाम करता है । के० जी० दास बाबू, रामलिंगम बाबू और दूसरे सब क्लर्क उसे दूसरी ही निगाह से देखते हैं । मानो कहीं सहज सम्पर्क में बाधा आ गयी है और वह सबसे अलग हो गया है । तनख्वाह उसकी जरूर बढ़ी है । अब तनख्वाह के लिए पे-क्लर्क के सामने भीड़ में जाकर खड़ा होना नहीं पड़ता । अब पे-क्लर्क खुद आकर तनख्वाह देकर दस्तखत करा लेता है । यह भी मानो अच्छा नहीं लगता । पद-मर्यादा बढ़ गयी है तो क्या वह सबसे दूर हो जायेगा ? सब से अलग हो जायेगा ? कभी-कभी वह खुद ही सेक्शन में जाता है । उसके जाते ही सब लोग सकपका जाते हैं । कोई कुछ खा रहा होता तो झट थैला छिपा लेता । जो लोग दफ्तर में अखबार पढ़ते हैं, वे अचानक पकड़े जाने पर अखबार को छिपा लेते हैं और सिर झुकाये बैठे रहते हैं । फिर भी दीपंकर कुछ नहीं कहता । क्यों कहे ? इन्सान मशीन तो नहीं है । सबेरे दस बजे से सिर झुकाये काम करते रहने से ही क्या अच्छा काम होता है ? काम के बीच थोड़ा गप लड़ाना भी जरूरी है । कभी दीपंकर भी इन्हीं के बीच बैठकर काम करता था । इसलिए इस सेक्शन में क्या होता है और यहाँ

का काम कैसे चलता है यह दीपंकर जानता है। फिर भी उसे कुछ कहने में संकोच होता है। के० जी० दास बाबू आकर शिकायत करता है। कहता है — सेक्शन में कोई काम नहीं करता। ऐसा होगा तो मैं कैसे काम चलाऊँगा ? आप भी उनसे कुछ नहीं कहते। इसलिए उन लोगों की हिम्मत बढ़ गयी है।

दीपंकर कहता है — उन्हीं से काम लेना होगा के० जी० दास बाबू, गप लड़ाने के बीच ही उनसे काम लेना होगा।

के० जी० दास बाबू से इन बातों को लेकर बात करते हुए भी दीपंकर को शर्म महसूस होती है। यह कुर्सी, इसी कुर्सी की इतनी कीमत है ! इसी कुर्सी को सब सम्मान देते हैं। दफ्तर से निकलने के बाद दीपंकर सड़क के अनगिनत लोगों के बीच फिर से अपने को ढूंढ़ पाता है। वहाँ जाकर मानो दीपंकर जी उठता है। मानो उसकी बेचैनी दूर होती है। लेकिन ऐसा भी एक दिन आयेगा, जब इस कुर्सी से उसे हट जाना होगा, तब फिर बाहर के लोगों की कतार में खड़ा होना पड़ेगा। तब कहाँ रहेगा यह डर, यह रोबदाब और यह कुर्सी ! दफ्तर आते ही मानो दीपंकर सिकुड़ जाता है और जब तक वह वहाँ रहता है, तब तक उसकी यही हालत रहती है। दफ्तर में वह किसी तरह सहज और स्वाभाविक नहीं हो पाता। मानो वहाँ वह दीपू नहीं रहता, मानो वहाँ वह ईश्वर गांगुली लेन की एक विधवा माँ का इकलौता बेटा नहीं रहता, वहाँ मानो वह राजा बन जाता है। नकली राजा। ड्रामा और थियेटर के राजा की तरह नकली जरी और मखमल की पोशाक वाला राजा। रात भर के नाटक के बाद सबेरे उसे फिर फटी कमीज और गंदी धोती में अपनी असली भूमिका अदा करनी पड़ती है। जब दिल्ली बोर्ड से चिट्ठी आती है और सब सेक्शनों के बड़े बाबू सेन साहब की राय जानने के लिए प्रतीक्षा करते हैं, तब दीपंकर को हँसी आती है। उसे लगता है कि ये लोग कितनी आसानी से दूसरों को महत्त्व दे देते हैं। इनके लिए धर्म जाय तो कोई बात नहीं, इन्सानियत चली जाय कोई नुकसान नहीं, बस नौकरी बची रहे, सलाम बना रहे और कुर्सी बरकरार रहे।

कभी-कभी मिस माइकेल कमरे में आती है। दीपंकर को देखकर वह आश्चर्य में पड़ जाती है।

कहती है — यह क्या सेन, क्या सोच रहे हो ? घर नहीं जाओगे ?

मिस माइकेल उसी तरह है। वही कंधे तक गाउन, वही बाँब किये बाल और रंग-पुते होंठ। रोज नयी डिजाइन का वैनिटी बैग उसके हाथ में रहता है। आजकल पहले की तरह उससे रोज-रोज भेंट नहीं होती। जिस दिन दीपंकर उसका कमरा छोड़ कर चला आया था, उस दिन मेमसाहब बड़ी दुखी हुई थी लेकिन वह हँसती हुई बोली थी — लेकिन मैं रीयली ग्लैड हूँ सेन, आइ विश यू मोर सक्सेस !

उसके बाद मेमसाहब ने कहा था — तुम देख लेना सेन, मैं भी ज्यादा दिन इंडिया में नहीं रहूँगी ....

— क्यों, कहाँ जाओगी ?

मिस माइकेल ने कहा था — मैंने विवियन को चिट्ठी लिखी है ....

— विवियन को ? क्यों ?

— मैं अमेरिका चली जाऊँगी । आइ शैल टेक ए चान्स ।

मिस माइकेल समझती हैं कि सारा कष्ट उसी को है । मानो उसके अलावा सब लोग सुखी हैं । वह कहती है — अब मेरे जीवन में क्या है ? हर महीने मुझे लोन लेना पड़ता है । इस तरह कै दिन चलाऊँगी ?

— लेकिन मैं इतने कम रुपये में कैसे चला रहा हूँ ?

मिस माइकेल कहती है — तुम तो ड्रिंक नही करते । बिना ड्रिंक किये जिंदा रहने से क्या लाभ ? तुम ड्रिंक नही करते, सिगरेट नही पीते, तुम्हें किस बात की फिक्र है ?

— लेकिन तुम भी तो इसी तरह रह सकती हो ? फिर तो काफी पैसा बच जायेगा । लोन लेना नही पड़ेगा, हेल्थ ठीक रहेगा और भी कितने फायदे हैं ।

मिस माइकेल हँसती है । कहती है — लाइफ का तुम कितना जानते हो सेन, लाइफ का तुमने कुछ भी नही देखा । मनी इज एवरीथिंग, रुपया ही जीवन में सब कुछ है । अगर विवियन की तरह मेरे पास रुपया होता ....

आश्चर्य है ! अघोर नाना भी यही कहते थे । रुपये से सब कुछ खरीदा जा सकता है । सब कुछ खरीदा जा सकता है इस रुपये से । लेकिन रुपये से ही अगर सब कुछ खरीदा जा सकता है तो लक्ष्मी दी ने मिस्टर दातार जैसे गरीब से क्यों शादी की ? अगर रुपया ही सब कुछ है तो सती ही क्यो उतने ऐश्वर्य के बीच विष की तरह नीली पड़ती जा रही है । कभी दीपंकर भी नौकरी के लिए चक्कर काटता रहा । उस समय तैंतीस रुपये की नौकरी पाकर उसे लगा था कि मानो स्वर्ग मिल गया है । वही तैंतीस रुपये तनख्वाह धीरे-धीरे आज यहाँ तक पहुँच गयी है । लेकिन उस दिन से क्या उसका सुख बढ़ गया है ? क्या उसकी शांति बढ़ गयी है ? अगर विचार किया जाय तो शायद यही साबित होता कि उस समय वह ज्यादा सुखी था । एक पैसे की पकौड़ी खरीदकर किरण के साथ खाते हुए घूमना — वही जीवन मानो ज्यादा आनन्दमय था । उसी ईश्वर गांगुली लेन से वह साफ कपड़े पहनकर निकलता है और दफ्तर जाता है । देखने वालों की निगाह में विचित्र जिज्ञासा रहती है । आज शायद वे दीपंकर की इज्जत करते हैं, आदर करते हैं और शायद उससे डरते भी हैं । शायद उससे कृपा पाने के लिए वे पास नही आ सकते । छोटे बच्चे पहले की तरह आज भी चंदा लेने आते हैं । सरस्वती पूजा का चंदा । दुर्गा पूजा का चन्दा । वे लड़के डरते हुए चंदे की कापी दीपंकर के आगे बढ़ा देते हैं । ठीक दीपंकर जैसा कभी करता था । उन लड़कों की तरफ देखकर दीपंकर न जाने क्यो अनमना हो जाता है । उसे अपने बचपन की बात याद आती है । लेकिन वे बच्चे तो नही जानते कि दीपंकर की उम्र बाहर ही बढ़ी है अन्दर वह अब भी छोटा है । अगर आज भी किरण से भेंट हो जाय तो वह उसके साथ

पकौड़ी खाता हुआ घूम सकता है।

दीपंकर अचानक पूछता है — तुम लोग किस मुहल्ले में रहते हो?

वे बच्चे कहते हैं — हालदार टोले में ....

— तो इतनी दूर ईश्वर गांगुली लेन में क्यों चंदा लेने आये हो?

वे कहते हैं — हम आपका नाम सुनकर आये हैं ....

— मेरा नाम सुनकर? दीपंकर आश्चर्य में पड़ जाता है। क्या वह इस मुहल्ले का नामी-गिरामी आदमी हो गया है?

वे लड़के कहते हैं — जी हाँ, आप रेलवे के बहुत बड़े अफसर हैं। हम जानते हैं। आपको बहुत रुपया मिलता है।

शायद उन बच्चों ने किसी बुरी नीयत से ऐसा नहीं कहा। शायद दीपंकर को सम्मान देने के लिए ही उन सबने ऐसा कहा। लेकिन दीपंकर को ऐसा लगा कि उन बच्चों ने उसे थप्पड़ लगा दिया। दीपंकर ज्यादा तनख्वाह पाता है मानो यही उसका परिचय है! और कुछ नहीं है। उसका और कोई परिचय नहीं है। मानो उसमें और कोई गुण नहीं है। झटपट रुपया देकर दीपंकर सीधे दफ्तर जाता है। अचानक उसे सारी दुनिया की निगाह से छिप जाने की इच्छा होती है। लेकिन वह कहाँ जायेगा? कहाँ जाकर चैन पायेगा? कहाँ जाकर अपने इस परिचय को भुला देगा? दफ्तर पहुँचने से पहले, घर से निकलते समय ही उसका मन न जाने कैसा उदास हो गया। ऐसा रोज होता है। फिर दफ्तर के उस कमरे में जाकर दरवाजा बंद कर के बैठना होगा। फिर वही फाइल। फिर मधु दरवाज़ा खोलकर बड़ी विनय से सलाम करेगा। फिर वही दिल्ली बोर्ड की चिट्ठी, रॉबिन्सन साहब के कुत्ते का प्रसंग और वही मिस्टर घोषाल। दिनभर फाइलों और चिट्ठियों में डूब जाना पड़ेगा। उसके बाद जब वह सिर उठायेगा, जब उसे होश आयेगा, तब शाम हो जायेगी। इसी एक घटना की पुनरावृत्ति प्रतिदिन होती है। वेतन से सम्मान का निर्धारण होता है और मानवता की कीमत रुपये-आने-पाई से आँकी जाती है।

फिर भी काम करना पड़ता है। रोज काम पर जाना पड़ता है। किसी-किसी दिन रॉबिन्सन साहब बुलाता है। द्विजपद आकर बुला ले जाता है। साहब के कमरे में जाकर दीपंकर देखता है कि वहाँ तहलका मचा हुआ है। मिस्टर घोषाल हैं। और भी कई लोग खड़े हैं। साहब का कुत्ता जिमी भी है।

— लुक हियर सेन!

दीपंकर कमरे में घुसा तो रॉबिन्सन साहब ने कहा — लुक हियर। यह देखो। यह चिट्ठी बोर्ड से सात तारीख को आयी है — ऑन सेवेन्थ ऑव दिस मंथ। रिकार्ड सेक्शन में यह तीन दिन पड़ी थी। सो ....

दीपंकर ने देखा। सचमुच डेट स्टैम्प तीन दिन पहले का लगा है। वहाँ से ट्रांज़िट सेक्शन में चिट्ठी पंद्रह दिन बाद आयी है। वहाँ भी वह दो दिन पड़ी थी। वहाँ

से उसके रॉबिन्सन साहब के पास आने में और तीन दिन लगे।

रॉबिन्सन साहब बोला — किस तरह तुम लोगों का एडमिनिस्ट्रेशन चल रहा है, देखो यही दिखाने के लिए मैंने तुम लोगों को बुलाया है। घोषाल, हैव यू सीन? तुमने देखा है?

मिस्टर घोषाल बोला — देखा है....

उसके बाद दीपंकर की तरफ देखकर साहब ने कहा — तुमने देखा है सेन?

दीपंकर ने सिर हिलाया।

रॉबिन्सन साहब बोला — अब बताओ ह्वाट टु डू? मैं क्या करूँ?

मिस्टर घोषाल बोला — सर, आप यह केस मुझे दे दीजिए, मैं डील कर लूँगा....

— कैसे?

मिस्टर घोषाल बोला — आइ शैल पनिश दि कल्प्रिट्स....

— नो!

रॉबिन्सन साहब बोला — तुम साउथ इंडियन हो, गुड नेचर्ड आदमी हो, यह तुमसे न होगा — मैं सबको सजा देना चाहता हूँ, ऐसी सजा कि कोई जिंदगी में भूल नहीं पायेगा....

सबके सामने साहब ने मिस्टर घोषाल को साउथ इंडियन कहा तो सबने आश्चर्य से एक-दूसरे की तरफ देखा। लेकिन मिस्टर घोषाल गंभीर बना बैठा रहा।

रॉबिन्सन साहब बोला — सेन, मैं यह केस तुम्हें दे रहा हूँ, यू मस्ट पनिश देम — आई लीव इट टु यू....

इसी तरह दफ्तर का काम चलता है। एक चिट्ठी के एक कमरे से दूसरे कमरे में जाने में चौदह दिन लग जाते हैं। इस मामूली बात को लेकर दफ्तर भर में तहलका मच जाता है। कौन दोषी है, कौन गिल्टी है, इसी का पता लगाने में सारा काम पिछड़ जाता है। असली काम कुछ नहीं होता। बोर्ड से कोई चिट्ठी आती है तो उसके लिए सब परेशान हो जाते हैं। लेकिन समस्या का समाधान कोई नहीं कर पाता। इसी तरह दफ्तर का काम चलता आ रहा है और हमेशा इसी तरह चलता रहेगा। बहुत कोशिश करके भी दीपंकर काम में कोई उन्नति नहीं कर सका। दीपंकर समझ गया था कि दोष असल में क्लर्कों का नहीं है, अगर दोष कहीं है तो ऊपर से है लेकिन ऊपर के साहबों से कभी कोई दोष नहीं होता। वहाँ हर चीज नजर-अंदाज होती है। वहाँ किसी को जवाब नहीं देना पड़ता। मन हुआ तो साहब लोग मैदान में खेल देखने चले जायेंगे, दफ्तर के चपरासी से वे घर का काम लेंगे, मसाला पिसवायेंगे और खाना बनवायेंगे। वहाँ किसी को कुछ कहने का अधिकार नहीं है। सब जानते हैं। सभी देखते हैं। देखने और जानने पर भी कुछ करने का उपाय नहीं है, कुछ कहने का अधिकार भी नहीं है। वे सब गरीब क्लर्क हैं न!

दीपंकर सबको अपने कमरे में बुला लाया। रिकार्ड सेक्शन, डिस्पैच सेक्शन

और ट्रैफिक ऑफिस के सब बाबुओं को वह अपने कमरे में ले आया ।

सब चुपचाप असामी की तरह दीपंकर की तरफ देखते हुए खड़े रहे ।

दीपंकर कहने लगा — आप लोग क्यों ऐसा काम करते हैं जिससे दूसरे के पास जवाब देना पड़ता है ? क्यों आपलोग अपने काम में गफलत करते हैं ? क्यों पकड़े जाते हैं ? गलती सबसे होती है, गलती करना ही मनुष्य का नियम है, लेकिन आप असावधान क्यों हैं, यह मैं समझ नहीं पाता ।

इतना कहकर दीपंकर सबके चेहरे पर निगाह दौड़ायी ।

वह फिर कहने लगा — आप लोग सरकारी दफ्तर में नौकरी करते हैं, इसलिए नौकरी की कीमत नहीं समझ रहे हैं । जरा मर्चेंट आफिस में जाकर देख आइए । वहाँ आप देखेंगे कि किस तरह सही ढंग से काम हो रहा है । गलती हर जगह होती है, वहाँ भी होती है, क्योंकि वहाँ भी इन्सान काम करते हैं और इन्सान मशीन नहीं हैं । लेकिन यहाँ की तरह लापरवाही वहाँ नहीं चलती, क्योंकि वहाँ सजा का डर है, वहाँ फाइन होता है ....

यह सब कहता हुआ दीपंकर न जाने क्यों अकारण डरने लगा । शायद अभी कोई प्रतिवाद कर बैठेगा । शायद कोई कहेगा — लापरवाही सिर्फ हमीं नहीं करते सर, अफसर लोग भी करते हैं । लेकिन उनसे तो इस तरह नहीं कहा जाता ?

शायद कोई कहेगा — सर, हम पाँच मिनट लेट आते हैं तो हमारे नाम के आगे क्रॉस लग जाता है, लेकिन उस दिन जो क्रॉफोर्ड साहब देर करके दफ्तर आया ? उसके मामले में क्या हुआ ? अफसर भी तो देर करके आते हैं । उनके पास अपनी गाड़ी है, फिर भी उनसे क्यों देर होती है ? वे खेल के मैदान में जाकर आराम से क्रिकेट मैच देखते हैं और दफ्तर आकर कहते हैं कि फाइल लेकर डिस्कशन करने गार्डन रीच गये थे । तब क्या होता है ? वे लोग स्टेशन वैगन से ड्यूटी के बहाने बाल बनवाने चौरंगी जाते हैं — उस समय क्या होता है ? ड्राइवर जब पूछता है कि लॉग बुक में क्या लिखूं तब उससे कहा जाता है — ऑन टेस्ट ! तब कौन देखता है ?

सब चुप खड़े हैं । लेकिन दीपंकर यह सब कहता हुआ मानो डरके मारे अपने में सिटपिटाने लगा । क्यों ये लोग इतने निरीह हैं, क्यों ये लोग इतना बरदाश्त करते हैं और क्यों ये लोग इस तरह गूंगे हैं ! दीपंकर हरेक के चेहरे की तरफ देखने लगा । अब अगर कोई हिम्मत करके कह दे कि सर, आप जो आज इतनी बातें कह रहे हैं, नृपेन बाबू को तैंतीस रुपये घूस देकर नौकरी में आये थे ? रॉबिन्सन साहब के कुत्ते के लिए जब बिस्कुट नहीं मिल रहा था तब क्या आपने ढूंढकर अपने पैसे से बिस्कुट खरीद कर नहीं दिया था ? क्या आप हम लोगों से ज्यादा ऑनेस्ट हैं ?

दीपंकर अचानक डर गया । उसके मुंह से चीख निकलने को हुई, लेकिन उसने अपने को संभाल लिया । उसके मन की हालत कोई न जान सका । कैसे निरीह अपराधी की तरह सब खड़े उसकी तरफ देख रहे हैं । इनमें से हरेक के घर में अभाव है और

दुःख है। अपनी बहन की शादी के लिए लड़का ढूंढते-ढूंढते ये परेशान हो रहे हैं। इनकी बीवी बीमार पड़ती है तो ये उसे शीतलातल्ले का चरणामृत पिलाकर डाक्टर और दवा का पैसा बचाते हैं। एक धोती और एक शर्ट सात दिन पहनकर ये समाज में भद्र बने रहने की कोशिश करते हैं। दीपंकर सेन भी तो इन्हीं की तरह है। वह भी इनसे अलग नहीं है। लेकिन आज ये लोग अपराधी है और इन्हीं का विचार करने के लिए दीपंकर न्यायकर्ता बना गद्देदार कुर्सी पर आराम से बैठा बड़ी-बड़ी बात कर रहा है। आज संयोग से इनके सामने में न्याय करने का अधिकार दीपंकर के साथ में आ गया है, लेकिन दीपंकर के मामले में फैसला कौन करेगा ?

—आप लोग दफ्तर में आकर कितनी देर अखबार पढ़ते हैं और कितनी देर दफ्तर का काम करते हैं, यह मैं जानता हूँ। उसके बाद आप लोग कितनी देर टिफिन रूम में बैठे रहते हैं, यह भी मैं जानता हूँ। लेकिन पाँच बजने ही घर जाते समय आप लोग एक सेकंड की भी देर नहीं करते! लेकिन आप लोग किसको धोखा दे रहे हैं, क्या आप लोगों ने कभी यह सोचा है ? अब अगर मैं हरेक को पाँच रुपये जुर्माना करूँ तो क्या होगा ?

दीपंकर को लगा कि सटाक् से उसकी पीठ पर चाबुक पड़ा! वह यह क्या कह रहा है ? वह किससे यह कह रहा है ? क्या वह गद्देदार कुर्सी पर बैठकर अपने को भूल गया है ? वह भी तो उन्हीं लोगों की तरह है—सड़क का एक अदना आदमी! वह साफ कपड़े पहनकर इस कुर्सी पर बैठा है तो क्या उसका सारा दोष धुल गया है ? वह आश्चर्य में पड़ गया। उन लोगों की तरफ देखकर वह हैरान हो गया! किसी ने दो दिन से दाढ़ी नहीं बनायी, किसी के चश्मे की डंडी टूटी है और किसी की कमीज के नीचे से फटी बनियाइन झाँक रही है। नौकरी इनके लिए जान से भी प्यारी है। नौकरी ने इन लोगों को गुलाम बनाकर रख छोड़ा है। क्या ये दो-टूक बात कर सकते हैं ? क्या ये सही बातें मुँह पर कह सकते हैं ? क्या ये मनुष्य रह गये है ? नहीं, आज ये क्लर्क हैं। दीपंकर की हिम्मत कुछ बढ़ी। ये लोग जानते भी नहीं कि ये चाहें तो दीपंकर को एक क्षण में यहाँ से हटा सकते हैं। सिर्फ दीपंकर को क्यों ? ये चाहें तो इस रॉबिन्सन साहब, इस एजेंट और दिल्ली के उस रेलवे बोर्ड को भी खतम कर सकते है! लेकिन यह खबर ये नहीं रखते। ये खबर रखने की फुरसत भी नहीं पाते। ये सबेरे से खरीद-फरोख्त, घर-गृहस्थी, बाल-बच्चे, नौकरी-चाकरी और वकील-डाक्टर में उलझे रहते हैं। यह सब खबर ये कब रखेंगे! ये नहीं जानते कि इन्हीं की तरह फटी कमीज पहने एक आदमी ने सन् उन्नीस सौ अट्ठारह ईसवी में हजारों और लाखों लोगों को मुक्ति दिलायी थी। उस समय पहला विश्वयुद्ध खतम हो चला था। उस आदमी ने कहा था....

"Comrades, labouring people, you are now the state's supreme power. The revolution has put meaning into life for us first

as it will for millions around the world, who now see no meaning in their eight-hour labour in someone else's factory, at monotonous toil at someone else's machines. We would free man from his enslavement by man."

दीपंकर ने मानों सीना तानकर उन लोगों की तरफ देखा। वे यह खबर नहीं रखते, यही गनीमत है। नहीं तो अब तक वे लोग पलटकर सवाल करते। पूछते —क्यों रॉबिन्सन साहब की उतनी ज्यादा तनख्वाह है और क्यों हमारी इतनी कम ? पूछते —क्यों हमारे बच्चे भरपेट खाना नहीं पाते और रॉबिन्सन साहब का कुत्ता बिस्कुट खा-खाकर ऊब जाता है ? पूछते — क्यों सेन साहब की कुर्सी में गद्दा लगा है और क्यों हम लोगों की कुर्सी में खटमलों की भरमार है ? पूछते — क्यों हमारी भूल-चूक के लिए जवाबतलब किया जाता है और क्रॉफोर्ड साहब देर करके दफ्तर आता है तो उसकी तरफ से आँख बंद कर ली जाती है ?

दीपंकर ने मानो चैन की साँस ली। चलो अच्छा हुआ। अच्छा हुआ कि ये लोग ये सब सवाल नहीं करते। इन लोगों को तो किरण की तरह सब कुछ तिलांजलि देने की दीक्षा नहीं मिली। दीपंकर ने फिर अपने को कठोर बना लिया। ये लोग नहीं जानते कि एक दिन दीपंकर भी फटी कमीज पहनकर कलकत्ते की सड़कों पर लायब्रेरी के लिए चंदा माँगता फिरा है। ये लोग यह सब नहीं जानते, इसीलिए आज दीपंकर बच गया। अगर लोग जानते होते तो भी क्या होता ! दीपंकर अकेला नहीं है। उसके पीछे मिस्टर घोषाल है, एजेंट है, रेलवे बोर्ड है और लेजिस्लेटिव कौंसिल है। उसके पीछे ब्रिटिश गवर्नमेंट है !

— अब अगर हरेक पर पाँच रुपये जुर्माना किया जाय तो आप लोग क्या करेंगे ?

आश्चर्य है ! वे लोग भेड़-बकरियों की तरह टुकुर-टुकुर दीपंकर की तरफ देखने लगे। मानो वे हाथ जोड़कर उससे माफी माँगने लगे। आश्चर्य है ! वे विद्रोह नहीं करते, माफी माँगते हैं। क्या ये लोग इन्सान हैं ?

अब दीपंकर बरदाश्त न कर सका। अपनी ही कड़ी-कड़ी बातें उसे ढोंग से भरी लगीं। इतना छोटा, इतना ओछा और इतना घिनौना काम रॉबिन्सन साहब ने उस पर थोपा है ! आखिर वह किन लोगों को सजा दे रहा है, किन लोगों को पनिशमेंट दे रहा है ? क्या उसे सजा देनेवाला कोई नहीं है ? कितने बड़े-बड़े गलत काम करने के बाद भी वह साफ कपड़े पहनकर दफ्तर में अपनी कुर्सी पर आकर बैठ रहा है। सब उसकी इज्जत भी कर रहे हैं और आदर भी। उसे तो कोई जेल नहीं भेज रहा है। इतना बड़ा ढोंगी होकर भी वह किस तरह सीना तान कर समाज में घूम रहा है। उस पर तो कोई शक नहीं कर रहा है। वह तो सबकी निगाह में साधु, सच्चा और सभ्य है।

—जाइए, अब इस तरह लापरवाही न कीजिए। जाइए ....

धीरे-धीरे सब चले गये। जाते समय कृतज्ञता से उनकी आँखें चमक उठीं। बाहर आकर उन सबने मानो चैन की साँस ली।

एक ने कहा—सचमुच सेन साहब कितना बढ़िया आदमी है। देवता जैसा ....

दीपंकर भी मानो इसका थोड़ा अंदाजा लगा सका। उसका मन बेचैनी से छटपटाने लगा। मानो इतना बड़ा झूठ इस संसार में नहीं है! मानो इतनी बड़ी ठगी दुनिया में नहीं है! लज्जा और घृणा से सिर नीचा कर उसने फाइल के कागजों में अपने को डुबो दिया। वे तो नहीं जानते कि दीपंकर जिंदगी भर ढोंग रचता रहा है। उसने किरण के साथ विश्वासघात किया है, लक्ष्मी दी के आगे भलमनसाहत का नाटक किया है और सती के साथ कपट किया है। शायद दीपंकर ने सज्जन बनना चाहा था, लेकिन किसी ने उसके हृदय को नहीं देखा। नहीं देखा तो अच्छा ही हुआ। उसे नौकरी में प्रोमोशन मिल गया है। सबने उसकी प्रशंसा की है। सबकी निगाह में उसने अपने को महान् साबित किया है। लेकिन वे लोग नहीं जानते कि वह उन्हीं की तरह है। लक्ष्मी दी का साथ उसे अच्छा लगता है। सती के पास रहना वह पसंद करता है। किरण की माँ को वह हर महीने पाँच रुपये देता है, लेकिन वह उसकी उदारता नहीं, अहम्मन्यता है। फिर सच बोलना? वह भी उसका छल है। झूठ बोलने का कलेजा उसमें भी है? झूठ बोलना और छिटे फोटा की तरह समाज व संसार की उपेक्षा करना क्या कम दिलेरी है?

मिस्टर घोषाल अचानक कमरे में आया। उसके मुँह में चुरुट है। जूते की आवाज से ही दीपंकर समझ गया था कि घोषाल साहब आ रहा है! कमरे में आकर एक कुर्सी पर पैर रखकर वह बड़ी अदा से तिरछा खड़ा हो गया। बोला—क्या किया सेन? हाउ डिड यू डील विथ देम?

सहसा घड़ी की तरफ निगाह गयी। पाँच बज गये हैं। ओफ्! आज सारा, दिन इन बेकार के कामों में बीता। दफ्तर का असली काम कुछ नहीं हुआ। ढेर सारी फाइलें इकट्ठी हो गयी हैं। थोड़ी देर में शाम हो जायेगी। उसके बाद? उसके बाद सती के घर जाने की बात है। पता नहीं सती ने उसे फिर क्यों अपने यहाँ बुलाया है, कल कैसी विचित्र परिस्थिति में सती ने उसे डाल दिया था! उसने पान खिलाया, बड़ी खातिरदारी की, लेकिन क्यों—क्या पता?

मिस्टर घोषाल बोला—सब पर फाइन लगाया है न?

दीपंकर बोला—नहीं।

—ह्वाइ? फाइन नहीं लगाया?

मानो घोषाल साहब के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह बोला—मैं देख रहा हूँ कि तुमसे एडमिनिस्ट्रेशन का काम नहीं चलेगा।

चुरुट मुँह से निकालकर मिस्टर घोषाल धप् से कुर्सी पर बैठ गया। वह बोला

— ह्वाट डू यू मीन ?

दीपंकर बोला — वे लोग बड़े गरीब हैं मिस्टर घोषाल, मैं उन सबको जानता हूँ। एक दिन मैं भी उनकी तरह गरीब था। मेरी माँ ने दूसरे के घर खाना पकाकर मेरी परवरिश की है — आइ नो दैम परफेक्टली वेल, दे आर हेल्पलेस क्रीचर्स ....

— लेकिन अब तो तुम पुअर नहीं हो, अब तो उनके बॉस हो।

दीपंकर बोला — लेकिन उनको देखकर मुझे अपनी बात याद आती है।

— क्या मतलब है ?

— मतलब यही है कि मैं भी तो गलती करता हूँ। मैं भी तो फाइल क्लीअर करने में डिले करता हूँ। मैं भी तो कभी-कभी देर करके दफ्तर आता हूँ। मुझे भी तो तैंतीस रुपये घूस देकर यहाँ नौकरी मिली थी ....

दीपंकर की बातें सुनकर घोषाल साहब सकते में आ गया। थोड़ी देर के लिए वह चुरुट पीना भूल गया। बोला — लेकिन यू आर ऐन आफिसर। यहाँ तुम उनके बॉस हो, उनके लार्ड हो ....

— लेकिन मैं भी तो खुद कलप्रिट हूँ मिस्टर घोषाल !

— क्या ?

दीपंकर बोला — उनकी तरह मैंने भी कितनी गलतियाँ की हैं, कितना मिस-बिहेव किया है, मेरी गलतियों के कारण रेलवे को हजारों रुपये का नुकसान उठाना पड़ा है।

— बट किंग कैन डू नो रांग ?

दीपंकर हँसा। इस जमाने में इस बात की कोई कीमत नहीं है मिस्टर घोषाल। चार दिन बाद शायद इस संसार में कोई किंग नहीं रह जायेगा ....

— भले ही किंग न रहे, उसके बदले डिक्टेटर आयेगा, जिस तरह जर्मनी में आया है, इटली में आया है ....

दीपंकर बोला — वह तो ट्रेड डिप्रेशन के कारण। वार के बाद का जमाना है इसीलिए। यह सब वार का एफेक्ट है। लेकिन कभी न कभी आम जनता सिर ऊँचा कर खड़ी हो जायेगी, तब वह हमारे अत्याचार के लिए हमसे जवाब तलब करेगी, तब ....

अचानक स्प्रिंगवाला दरवाजा खुल गया।

— हू'ज दैट !

आज्ञा लिये बिना कमरे में आना अपराध है। दरवाजा खुलते ही दीपंकर आश्चर्यचकित हो गया। सती ! सती यहाँ कैसे ! सती दफ्तर में क्यों आयी है ? घोषाल साहब ने पीछे मुड़कर देखा। वह भी दंग रह गया। ए बेंगाली लेडी ?

दीपंकर ने आश्चर्य से पूछा — तुम ?

सती हँसती हुई कमरे में आयी। आज उसने दूसरी साड़ी पहनी है। नोलो

नही, बॉटल ग्रीन भी नहीं, अजीब नारंगी रंग है। पता नहीं इस रंग का क्या सही नाम है — मेरून या मॉव ? सती को देखकर मिस्टर घोषाल भी जरा असमंजस में पड़ गया। यों मिस्टर घोषाल बहुत जल्दी असमंजस में पड़ने वाला आदमी नहीं है। लेकिन सती की शकल-सूरत में कुछ ऐसी विशेषता है जो मनुष्य को आकृष्ट करती है और दूर भी हटा देती है। सती ने आकर तपाक से कहा — शायद तुम्हारे काम में हर्ज किया दीपू ....

सती खुद एक कुर्सी पर बैठ गयी। वह कुछ उत्तेजित दिखाई पड़ रही है। उसे देखकर दीपंकर जरा मुश्किल में पड़ गया। आखिर एकदम दफ्तर में चली आयी ! फिर मिस्टर घोषाल से उसकी मुलाकात हो जाना दीपंकर को अच्छा नहीं लगा। दीपंकर के पास ढेर सारा काम भी इकट्ठा हो गया है। आज दिन भर कोई काम नहीं हो सका।

— एकाएक मेरे दफ्तर में चली आयी ?

— क्यों, नहीं आना चाहिए ?

— नहीं, ऐसी बात नहीं है। यहाँ तक पहुँचने में तकलीफ तो नहीं हुई ?

सती बोली — तकलीफ क्यों होगी ? ड्राइवर को पता बता दिया था। वही ले आया। सोचा, मेरे घर जाने की बात कहीं भूल न जाओ, इसलिए साथ ले जाने के लिए चली आयी।

— आज फिर ? कल ही तो मैं गया था, आज न सही।

सहसा दीपंकर को मिस्टर घोषाल की बात याद आयी। सती को देखकर दीपंकर मानो उसकी उपस्थिति भूल गया था। उसने मिस्टर घोषाल की तरफ देखकर कहा — आपसे परिचय करा दूँ मिस्टर घोषाल, ये हैं श्रीमती सती घोष, मेरे बचपन की साथी — और ये हैं मिस्टर घोषाल, मेरे बॉस ....

मिस्टर घोषाल को यह सब फार्मलिटी एकदम पसंद नहीं है। विशेष कर महिलाओं के मामले में। अचानक खड़े होकर उसने सती की तरफ हाथ बढ़ा दिया और कहा — मुझे बड़ी खुशी हुई मिसेज़ घोष, मैं रेलवे का मामूली सेवक हूँ। मिस्टर सेन का बॉस होना मेरे लिए गौरव की बात है, ऐसा आप कह सकती हैं।

सती ने भी नियम मुताबिक मिस्टर घोषाल की तरफ हाथ बढ़ा दिया था। दीपंकर ने देखा कि मिस्टर घोषाल ने सती का हाथ जरा जोर से झकझोरा। उसके बाद सती से कहा — बैठिए, बैठिए आप।

सती बैठी जरूर, लेकिन बातें उसने दीपंकर की तरफ देखकर ही कहीं। वह बोली — तुम्हीं ने मुझे दफ्तर आने से मना किया था। कहा था कि यहाँ नौकरी करने पर इज्जत नहीं रहती, यहाँ आदमी जानवर बन जाता है।

मिस्टर घोषाल बोला — अगर सेन ने यह कहा है तो कोई गलत नहीं कहा

हूँ मिसेज़ घोष, अव तक हम इसी पर वात कर रहे थे। आपने तो हमारे क्लर्कों को नहीं देखा, वे असल में मनुष्य नहीं हैं।

—मनुष्य नहीं हैं ? तो वे क्या हैं ?

—वे सव वीस्ट हैं। एक शब्द में उनको वीस्ट कहा जा सकता है। उनकी शकल देखने पर ही आप समझ जायेंगी। उनके कपड़े, उनकी दाढ़ी और उनकी चाल-चलन, कुछ भी मनुष्य की तरह नहीं हैं। वे इतने गंदे और डर्टी रहते हैं कि विना देखे आप समझ नहीं सकतीं।

यह सव सुनते हुए दीपंकर न जाने कैसी वेचैनी महसूस करने लगा। किन लोगों को मिस्टर घोषाल गाली दे रहा है। आज भी दीपंकर को याद है कि सती के आने के वाद से मिस्टर घोषाल वहुत ज्यादा वोलने लगा था। मानो सती से उसका वहुत पुराना परिचय था। विलायत की कहानी और अपनी हैसियत के क़िस्से मिस्टर घोषाल सुनाने लगा था। घोषाल साहव भी इतनी वातें करता है, यह सती के न आने पर दीपंकर कभी नहीं जान पाता।

सहसा द्विजपद कमरे में आया। वोला — हुजूर, साहव ने सलाम कहा है।

— किसको ? मुझे ?

मिस्टर घोषाल जाने के लिए उठा। वोला—मैं आ रहा हूँ मिसेज़ घोष, आप चली मत जाइएगा।

मिस्टर घोषाल के जाते ही सती वोली—तुमने कैसे आदमी से मेरा परिचय करा दिया दीपू, यह तो जवर्दस्ती जान-पहचान करना चाहता है, छोड़ना नहीं चाहता इतने जोर से हैंडशेक किया कि अभी तक मेरा हाथ दुख रहा है ....

दीपंकर ने इस वात का जवाव न देकर कहा — तुम आज अचानक क्यों चलीं आयीं ?

सती वोली — वताया न, तुम्हें ले जाने के लिए····

— अव यदि मैं तुम लोगों के घर न गया तो क्या कोई हर्ज है ? पता नहीं तुम्हारी सास ने मेरे वारे में क्या सोचा है !

सती वोली — क्या सोचेंगी ? घर तो उनका अकेले का नहीं है।

— फिर तुम्हारे पति सनातन वावू ने क्या सोचा होगा ? मेरे चले आने के वाद उन्होंने क्या कहा ?

सती वोली — उन्होंने ही तो मुझसे तुम्हें ले चलने के लिए कहा। कल वे वोले आज उनसे परिचय न हो सका, कल उनको जरूर ले आना। चलो, अव चलो ....

— लेकिन इतनी जल्दी ?

— इससे क्या हुआ ? अभी चलकर गपशप करोगे, चाय पियोगे, उसके वाद रात का खाना खाकर चले आओगे।

— लेकिन।

दीपंकर न जाने क्यो आगा-पीछा करने लगा। बोला — देखो सती, आज हमारे घर में भी एक बात हो गयी है।

— क्या बात हो गयी है ?

— बिन्ती दी सवेरे से नही मिल रही है। माँ इस कदर परेशान है, कि क्या बताऊँ। इधर नया मकान किराये पर लेने के लिए पाँच रुपये पेशगी दी थी, लेकिन वहाँ भी जाना नही हुआ। तुम लोग जिस मकान में किरायेदार थे, अब उसी मकान में माँ को लेकर चला गया हूँ। आज ही सवेरे उस मकान में गया, वहाँ जाते ही तुमलोगों की बातें याद पड़ने लगी थीं।

— लेकिन बिन्ती कहाँ गयी ? वह मिली कि नहीं ?

दीपंकर बोला — दफ्तर आते समय तक तो उसका कोई पता नहीं चला था। पुलिस में खबर कर दी गयी है....

— कहाँ जा सकती है वह ?

दीपंकर बोला — अपने कमरे को छोड़कर वह कही नही जाती थी, इसीलिए माँ ने सवेरे से कुछ नही खाया ....

सती बोली — फिर देर न करो, चलो, जल्दी चलो। मैं तुम्हें जल्दी छोड़ दूँगी। चलो, नही तो अभी तुम्हारा घोपाल आ जायेगा। तुम्हारा यह घोपाल बड़ा विचित्र है ...

दीपंकर भी डरा। अगर सचमुच अभी मिस्टर घोपाल आ जाय, तो जल्दी छोड़ना नही चाहेगा। आखिर उससे छुटकारा पाना मुश्किल होगा। फिर अपने टेबिल पर ढेर सारा काम भी पड़ा है। वह सवेरे से बहुत-सी फाइलें देख नहीं सका। घर में भी अभी तक बिन्ती दी लौट आयी है या नहीं, क्या पता ! न जाने क्यों आज सवेरे से सब गड़बड़ा रहा है ! अब फिर सती के घर जाना होगा। सती अपने घर में अपने पति के साथ सुख से रहे, इसी में दीपंकर को सुख है। अब वह सती के मामले में बेमतलब उलझना नही चाहता।

सती बोली — क्या इतना सोच रहे हो ? चलो ....

— लेकिन अभी तो तीसरा पहर है !

— कोई बात नही, थोड़ा घूम-फिरकर घर चलेंगे, लेकिन अभी ऑफिस से तो निकलो ....

दीपंकर उठा। फिर वह बोला — लेकिन कल की तरह मैं देर नही करूँगा, आज मुझे जल्दी छोड़ देना, क्यों ?

सती बोली — हाँ, छोड़ दूँगी, चलो ....

उस दिन भी दीपंकर नहीं जानता था कि सती उसे कहाँ ले जा रही है !

मनुष्य के जीवन में जब अभिशाप आता है तब वह इसी तरह आशीर्वाद के छद्मवेश में आता है। उसका बाहरी रूप देखकर उसके असली रूप का पता नहीं चलता। लोग उसी को सत्य समझते हैं, उसी को आनन्द समझकर गलती करते हैं और उसी का आवाहन करते हैं। यही हाल दीपंकर का हुआ। वह मजे में था। सबको भूलकर अपने में मशगूल था, अच्छा था। बस, वह और उसकी माँ। बचपन में उसने जो बनना चाहा था, वह तो बन नहीं सका था, लेकिन जो कुछ बना था, वही क्या कम है। उसी से उसने जीवन में संतोष पाना चाहा था। अपने जीवन की असफलता को अनावश्यक अभाव-बोध से उसने भारी नहीं बनाना चाहा था। एक लक्ष्मी दी थी, लेकिन वहाँ से ठुकराये जाने के बाद उसने अपने में ही संतुष्ट रहना चाहा था, ठीक उसी समय सती आ गयी।

बाद में कभी शंभु ने कहा था — आप तो नहीं जानते दीपंकर बाबू, बहू दीदी के लिए मुझे बड़ा कष्ट होता है।

दीपंकर जरा विस्मित हुआ था। उसने पूछा था — क्यों शंभु, तुम्हारे दादाबाबू के पास इतना रुपया है, फिर क्यों कष्ट है?

— उसी माँजी के कारण। क्या आप माँजी को मामूली समझते हैं?

दीपंकर ने पूछा था — लेकिन तुम्हारे दादाबाबू? वे तो अच्छे आदमी हैं ....

शंभु ने कहा था — जी, दादाबाबू तो देवता जैसे हैं, उनकी तुलना नहीं होती।

— फिर तुम्हारी बहूदीदी को क्यों तकलीफ है?

शंभु ने इस सवाल का जवाब दिया था, लेकिन दीपंकर ठीक से समझ नहीं सका था। उस दिन ऑफिस से निकलकर कार में बैठने के बाद वह यही सोचने लगा था। कार सती की थी। इसी कार से सती उस दिन उसे न्योता देने गयी थी।

सती बोली — तुम्हारे दफ्तर के काम में हर्ज तो नहीं किया?

दीपंकर बोला — नहीं, हर्ज क्या है? लोग काम नहीं करते, इसलिए आज मैंने सबको डाँटा है और आज ही मैं अपना काम किये बिना तुम्हारे साथ जा रहा हूँ ....

— चलो, एक दिन मेरे लिए तुमने अपना काम नहीं किया सही ....

दीपंकर बोला — इसलिए नहीं, कल ही तो मैं तुम्हारे घर गया था कल मेरा जन्मदिन था, लेकिन आज कौन-सा बहाना है?

सती बोली — यह तुम्हीं पूछ रहे हो? तुमने अपनी आँखों से मुझे अपमानित होते नहीं देखा।

दीपंकर ने सती की तरफ देखा। कहा — मैं तुम लोगों के घर पहली बार गया था, कुछ भी नहीं समझ पाया। मुझे तुम लोगों के मामले में कोई दिलचस्पी नहीं है।

— दिलचस्पी हो न हो, मेरा उपकार तो कर सकते हो?

—उपकार ?

दीपंकर चौंका। बोला—मुझसे उपकार करने की न कहो सती। बचपन में मैंने एक जने का उपकार किया था। मैं उन दिनों रोज सवेरे मंदिर में फूल चढ़ाने जाता था, उसी समय एक जने का उपकार भी करता था। पहले से कम मैं तो यही समझता था लेकिन बाद में उस उपकार का परिणाम देखकर अब उपकार करने से घृणा हो गयी है।

—किसका उपकार किया था ?

—अब तुम वह सुनकर क्या करोगी ? खैर, तुम उपकार करने के लिए कहती हो तो मुझे हँसी आती है।

सती भी हँसी। बोली—अब तुम वैसी बात नहीं कर सकते, अब काफी बड़े हो गये हो। अब तुम एकदम बदल गये हो, अब तुम वह नहीं हो जो पहले थे ....

दीपंकर सती की बात सुनकर गंभीर हो गया। बोला—क्यों ?

—अब तुम कितनी बड़ी नौकरी करते हो ! अब तुम्हें कितनी ज्यादा तनख्वाह मिलती है !

अब दीपंकर से रहा नहीं गया। वह बोला—क्या अंत तक तुम भी मेरा अपमान करोगी ? मेरी तनख्वाह से तुम मुझे तौलना चाहोगी ? कम से कम तुमसे मुझे ऐसी आशा नहीं थी। मिस्टर घोषाल मुझसे ज्यादा तनख्वाह पाता है। क्या तुम उसकी ज्यादा इज्जत करोगी ?

सती बोली—सचमुच तुम्हारा मिस्टर घोषाल अच्छा आदमी नहीं है ....

दीपंकर बोला—सब लोग एक समान नहीं होते। मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे ऐसे लोगों के साथ काम करना पड़ता है। यही देखो न सती, कभी इस नौकरी के लिए मेरी माँ सिर पटकती थी और कितने ही देवी-देवताओं के पास मनौती मानती थी, लेकिन अब देख रहा हूँ कि रुपये देकर ये लोग मेरी मनुष्यता भी खरीद लेना चाहते हैं।

सती दीपंकर की बातों को ठीक से समझ नहीं सकी। बोली—ऐसा क्यों कह रहे हो ?

दीपंकर बोला—यह मैं ठीक से तुम्हें समझा नहीं पाऊँगा। आज ही मैंने बहुत से लोगों को डाँटा है, खूब डाँटा है, लेकिन उनको डाँटते समय मुझे यही लग रहा था कि मैं अपने को डाँट रहा हूँ। मेरी डाँट-फटकार मेरी ही तरफ लौट रही है। उनको डाँटने के बाद से मैं अपने ही आगे अपराधी बना हुआ हूँ ....

—क्यों ? तुम्हें क्यों ऐसा लगता है ?

दीपंकर बोला—जानती हो सती, बचपन में हमारे क्लास में एक लड़का था लक्ष्मण सरकार। वह मुझे देखते ही चाँटा लगाता था। पता नहीं मुझसे उसकी क्या दुश्मनी थी कि वह मुझे बिना पीटे नहीं मानता था। वह पीटता था तो मैं रोता था और

यही सोचता था कि वह क्यों मुझे मारता है ? बचपन में मैं उसका कारण समझ नहीं पाता था आज बड़ा होकर बड़ी नौकरी करने के बाद समझ गया हूँ।

—क्या समझ गये हो ?

दीपंकर बोला—आज बड़ा होकर मैं भी लक्ष्मण सरकार बन गया हूँ। सिर्फ मैं नहीं, जो भी ज्यादा तनख्वाह की नौकरी करता है, जिसकी हालत थोड़ी सुधर गयी है, वही लक्ष्मण सरकार बन गया है। मौका पाते ही वह दीपंकर को चाँटा लगाकर मजा लेता है।

फिर जरा हँसकर दीपंकर बोला—सिर्फ तुम्हारी सास को दोष देने से क्या फायदा ?

सती बोली—तुम सब कुछ नहीं जानते इसीलिए हँस रहे हो....

दीपंकर बोला—देख लेना, जब कभी तुम भी सास बनोगी तब तुम भी लक्ष्मण सरकार बन जाओगी।

सती बोली—अब मैं सास नहीं बनूँगी।

—क्यों ? जब तुम्हारे बाल-बच्चे होंगे, उनकी शादी हो जायेगी, तब तो तुम सास बनोगी न ?

सती बोली—तुम नहीं जानते, इसलिए ऐसा कह रहे हो।

दीपंकर बोला—कल मैंने जितना देखा, उसी से सब समझ लिया है।

—अगर सब समझ लिया तो तुमने कुछ कहा क्यों नहीं ?

दीपंकर बोला—मैं क्या कहूँगा बताओ, अब मैं क्या कर सकता हूँ ? मैंने सिर्फ खाया, पेट में जा नहीं रहा था, फिर भी खाया—तुम्हारी इज्जत रखने के लिए खाया।

जरा रुककर दीपंकर बोला—उसके बाद तुमने मुझे कार से भेज दिया। लेकिन रात को बिस्तर पर लेटकर मुझे नींद नहीं आयी। किसी तरह मैं सो नहीं सका। आखिर सोचा, यह भी अच्छी झंझट है। तुम्हारी ही बात सोचता हुआ मैं सो नहीं सकूँगा, यह कैसी बात हुई। तुम मेरी कौन हो ? कोई भी नहीं।

सती बोली—मुझे भी नींद नहीं आयी दीपू, परसों रात से अभी तक मैं जरा भी नहीं सो सकी।

दीपंकर बोला—थोड़ा और बरदाश्त कर लो, तुम्हारी सास बूढ़ी हैं, ज्यादा दिन वे जिंदा नहीं रहेंगी, उसके बाद बस तुम और सनातन बाबू ....

सती बोली—आज [illegible] लए तुम्हें लिये जा रही हूँ ....

—लेकिन मैं जाकर तुम्हारी कितनी मदद कर सकूँगा, समझ नहीं पा रहा हूँ। आज मैं न गया तो भी क्या हर्ज है ? फिर आज मुझे घर में काफी काम भी करना है, सवेरे से विन्ती दी नहीं मिल रही है ....

सती बोली—नहीं, नहीं, तुम चलो। मैंने उनसे कह रखा है कि तुम आओगे

और उनसे तुम्हारा परिचय करा दूँगी। आज तुमको चलना ही पड़ेगा। और कुछ नहीं तो कलवाले मसले का निपटारा होना जरूरी है। उसके बाद मैं तुमसे कभी चलने के लिए नही कहूँगी, तुम भी कभी नही आओगे तो बुरा नहीं मानूँगी।

पता नहीं क्यों ऐसा होता है! आश्चर्य की बात है। काश, सती जानती कि मनुष्य के जीवन में किसी समस्या का समाधान इतनी जल्दी नहीं होता। काश, वह जानती कि जिस समस्या को लेकर वह इतनी परेशान हो रही है, उसका समाधान इतनी आसानी से नही हो सकता। मनुष्य के जीवन में जब किसी समस्या का उदय होता है तो पहले वह छोटी ही रहती है, लेकिन बाद में उसको बढ़ा देने पर वह छोटी नहीं रहती। अगर सती यह जानती तो कोई परेशानी न होती। हमेशा एक छोटी समस्या ही बड़ी, और बड़ी बनती जाती है। अगर सती यह जानती तो उस दिन इतनी आफत से कार लेकर दीपंकर के दफ्तर में न पहुँचती।

सती बगल में बैठी है। दीपंकर अपने मन में बहुत कुछ सोच रहा है। इस तरह अपने को सती के हाथ सौंप देना क्या उसके लिए ठीक हो रहा है, सती बड़े घर की बहू है, उसके पास बहुत कुछ है। इसलिए वह छोटी-मोटी चीज के लिए परेशान नहीं होती। उसके पास बहुत है, इसलिए थोड़ा खो देने से वह नहीं डरती, लेकिन दीपंकर क्यों जा रहा है? उसका क्या स्वार्थ है? बस, थोड़ी देर सती के पास रहना। बस, थोड़ी देर उससे बात करना?

सती अचानक बोली — बायें चलो...

कार बायी तरफ मुड़ गयी।

दीपंकर बोला — न जाने मुझे कैसा डर लग रहा है सती

— क्यों, क्या हुआ? डर किस बात का है?

दीपंकर बोला — नहीं, कोई ऐसा डर नहीं है। सिर्फ यही सोच रहा हूँ कि मैं क्यों तुम लोगों के बीच जाकर झंझट पैदा करूँ

सती बोली — नहीं, कोई झंझट न होगी। आज तुमसे उनका परिचय करा दूँगी। कल मुझसे गलती हो गयी थी, कल ही उनको बुलाकर तुमसे परिचय करा देती तो अच्छा रहता।

दीपंकर बोला — तुम कह रही हो इसलिए मैं चल रहा हूँ। लेकिन तुम्हारी सास, तुम्हारे पति और तुम्हारे परिवार की समस्याओं में मुझे घसीटने से क्या कोई हल निकलेगा?

गाड़ी फिर सीधी सड़क पर आ गयी। अब ज्यादा दूर नहीं है। शाम हो गयी है। सड़क की बत्तियाँ जल चुकी हैं। घर में अब तक पता नहीं क्या हो रहा हो। बिन्ती की चिन्ता था नहीं, पता नहीं। आज दीपंकर माँ से कह सोचती रहेगी। अब माँ को पहले की तरह काम नही करना के लोगों का खाना बनाना पड़ता था। आज सवेरे माँ को

सका वह बस रोती रही। अगल-बगल सभी जगह ढूंढा गया लेकिन बिन्ती कहीं नहीं मिली। फिर वही पुराना मकान जिस मकान में जाने पर कभी कितनी खुशी होती थी, आज उसी मकान में दीपंकर रहता है। सती और लक्ष्मी दी जिस कमरे में रहती थीं, उसी कमरे में आज दीपंकर सोयेगा। उसी कमरे की चार दीवारों के बीच उसकी रात बीतेगी।

— आओ दीपू !

एकाएक दीपंकर का होश लौट आया। कल इसी मकान में वह आया था। इसी मकान के गेट से वह अन्दर गया था। आज उसी मकान के फाटक से वह सती की कार में बैठा दाखिल हुआ।

— आओ

ऑफिस से सीधे आना हुआ। दीपंकर सवेरे घर से दफ्तर गया था। दफ्तर में उसे एक मिनट बैठने की फुरसत नहीं मिली। रॉबिन्सन साहब के कमरे में ही दो घंटे बीते। सवेरे पूरा समय बरबाद हुआ। उसके बाद कर्मचारियों को डाँटना-फटकारना। आज दिन भर कोई काम न हो सका। टेबिल पर फाइलों का पहाड़ बन गया है। कल सवेरे जाकर सब साफ करना होगा। बाद में थोड़ा काम निपटा लेने की इच्छा थी। लेकिन सती के पहुँच जाने पर वह भी न हो सका।

सती आगे-आगे चल रही थी। दीपंकर ने खयाल नहीं किया। गाड़ी में वह सती की बगल में बैठा था, फिर भी उसने खयाल नहीं किया था अब लगा कि सती ने कोई सेंट लगाया है। दीपंकर के मन की ग्लानि एक क्षण में ओझल हो गयी। कौन-सा सेंट है! कितनी बढ़िया खुशबू है! कहीं बगीचे में कोई फूल तो नहीं खिला, जिसकी खुशबू आ रही है! बड़ा खूबसूरत है, सती का बगीचा बड़ा खूबसूरत है! वहाँ तरह-तरह के फूल खिले हैं! आज भी वही मार्बल-फ्लोर, आज भी वही कैक्टस और आज भी वही मोनोग्राम वाला गर्दखोर देखने को मिला! आज भी वही झकाझक, चमाचम साफ सुथरा परिवेश है।

लेकिन आज दूसरी मंजिल में जाने के लिए सीढ़ी की तरफ नहीं जाना पड़ा। लगता है, आज नीचे ही बैठना पड़ेगा। सती आगे-आगे चल रही है। सीढ़ी के पास पहुँचते ही उसने पलटकर कहा — इधर से जाओ दीपू ....

सती चलती रही।

दीपंकर बोला — इधर मुझे कहाँ ले जा रही हो ?

पता नहीं सती का कितना बड़ा मकान है। बाहर सड़क पर से पता नहीं चलता। बाहर से पता नहीं चलता कि इस मकान में इतने अधिक कमरे हैं और आदमी इतने कम! बाहर से पता नहीं चलता कि इतने बड़े मकान में इतना बड़ा बरामदा और इतना लंबा कॉरीडोर पार कर तब सनातन बाबू से भेंट हो सकती है!

— और कितनी दूर है सती ?

सती बोली — घबड़ाओ नहीं, आओ ....

● ● ●

बहुत दिन पहले की बात है। उसी समय ईस्ट इंडिया कम्पनी के जमाने में स्टिवेडोर गिरीश घोष कलकत्ते आकर अपना काम करने लगे थे। वहीं सस्ती का जमाना था। दो रुपये-तीन रुपये मन चावल और चार आने सेर दूध था। लेकिन उस सस्ती के जमाने में भी मेदिनीपुर में अकाल पड़ता था और फरीदपुर में भयानक बाढ़ आती थी। सनातन बाबू से ही दीपंकर ने वह सब किस्सा सुना। सनातन बाबू के वंश की पुरानी कहानी। दीवार पर सनातन बाबू के पूर्वजों के चित्र थे। पूर्वजों में कोई ऐसा नामी-गिरामी नहीं था। बर्दवान या हुगली किसी जिले से गिरीश घोष आये थे। खिदिरपुर डॉक उस समय नया बना था। माल उठाने-धरने के लिए कुली-मजूरों से काम कराना बड़ा झमेला था। जहाज आने पर सब भीड़ लगाकर खड़े हो जाते थे। रातों रात साहबों को ठगकर और उनको गलत समझाकर बहुत-सा माल बाहर चला जाता था। अंग्रेजी कम्पनी को इसका पता भी नहीं चलता था। मैनचेस्टर से कपड़ा आता था और लिवरपूल से कल-पुर्जे आते थे। कागज, स्याही, खिलौने, गुड्डा-गुड़िया और टाट का बोरा — सब कुछ जहाज से आता था। उस समय गोदाम भी ठीक से नहीं बना था। पानी बरसता था तो माल भीगता था और धूप निकलती तो सूखता था। साहब लोगों ने आयात-निर्यात के काम में हजारों रुपये लगाये थे लेकिन छोटी-मोटी बातों पर ध्यान न देने से कभी-कभी बड़ा नुकसान होता था। गिरीश घोष उस समय नौजवान थे। रोजी-रोटी की तलाश में वे खिदिरपुर डॉक पर पहुँच गये थे। काम की तलाश में वहाँ वे चक्कर लगाते थे। कभी-कभी वे सोचते थे कि अगर जहाज में बैठकर एक बार विलायत पहुँच जाया जाय तो हमेशा के लिए भाग खुल जाय। लेकिन उनकी वह आशा पूरी न हुई। उनका भाग्य दूसरी तरह से जगा था।

एक बार एक क्रेन जहाज से उतारते समय जेटी पर गिर पड़ा। बड़ा भारी क्रेन था। कलकत्ता बंदरगाह में माल उतारने-चढ़ाने के लिए अंग्रेज कम्पनी ने वह क्रेन मँगाया था! बर्मिंघम में बना क्रेन उतारते समय जेटी में गिर पड़ा। बहुत से लोगों को

चोटें आयीं। अब कोई काम करना नहीं चाहता। शिरीष घोष खड़े होकर वह सब देख रहे थे। अंग्रेज कम्पनी के बड़े साहब मिस्टर पामरस्टोन अलग खड़े चिल्ला रहे थे। लेकिन नेटिव निगर लोग काम करना नहीं चाहते। तब शिरीष घोष आगे बढ़े। उन्होंने टूटी-फूटी अंग्रेजी में साहब से कहा — मैं क्रेन उठवा सकता हूँ हुजूर — मेरे पास कुली हैं।

— तुम कौन हो ? हू आर यू ?

शिरीष घोष बोले — मैं एक पुअरमैन हूँ सर — पुअर मैन्'स सन।

— ठीक है उठवाओ। ले आओ अपने आदमी। ले आओ अपने कुली-मजूर।

शिरीष घोष उसी दम मुंशीगंज गये। उसी चिलचिलाती धूप में। मुंशीगंज में एक खपरैले घर में वे रहते थे। माँ का सोने का एक जोड़ा अनंत बचा था। वही लेकर वे बाजार में गये। सुनार की दुकान में जाकर उन्होंने अनंत का जोड़ा बेच दिया। गिन्नी सोने के अनंत। जब कोई सहारा नहीं रहेगा, उस समय के लिए उन्होंने उनको छिपाकर रखा था। लेकिन उस वक्त ज्यादा सोचने का समय नहीं था। पाँच तोले के अनंत। बारह रुपये तोला सोना। अनंत बेचकर उनको साठ रुपये मिले। रुपये जेब में रखकर वे मुंशीगंज के कुली-टोले में गये। वहाँ कुलियों की कमी नहीं थी। उन्होंने सबको चार-चार आने पेशगी दे दी। फिर सबको लेकर वे जेटी पर पहुँचे। अपने साथ वे डेढ़ सौ मजूर ले आये थे। अभी चार-चार आने ले लो, बाकी पैसा बाद में मिलेगा। जेटी पर उनके पहुँचते ही साहब कुली देखकर बहुत खुश हुए। कड़ी धूप में साहब खड़े थे। उन्होंने लंच भी नहीं लिया था।

शिरीष बाबू को देखते ही पामरस्टोन साहब ने कहा — कहो पुअरमैन, कुली ले आये ?

— जी सर, जरूरत पड़ने पर और ले आऊँगा।

आखिर क्रेन उठाया गया। इस बार कोई बात नहीं हुई। बड़े शोरगुल के बीच क्रेन उठा। पामरस्टोन साहब की खुशी का ठिकाना न रहा। तभी से शिरीष घोष का भाग जगा। क्रेन उठने के साथ-साथ शिरीष घोष भी उठकर खड़े हो गये।

तभी से शुरू हुआ एक नये व्यवसायी का इतिहास। कलकत्ते के दक्षिण इस इलाके में उन दिनों सुर्खी बिछी सड़क थी। कुछ रास्ते कच्चे थे। आसपास बाँस के झाड़ और धान के खेत थे। हाजरा रोड से दक्षिण उस समय पूरा जंगल था। उसी समय यहाँ मैदान के कोने में शिरीष घोष ने अपना मकान बनाया। नये व्यवसायी शिरीष घोष। जब रुपया नहीं था तब मुंशीगंज के खपरैले घर में वे मजे में रह लेते थे। लेकिन जब हाथ में रुपया आ गया तब वहाँ रहना मुश्किल हो गया। रुपये का जादू भी कैसा है! मनुष्य ने यंत्र बनाया, सागर पार किया और मोटरकार बनायी, सब रुपये का ही खेल है। नानी-दादी की कहानियों के दैत्य, दानव और राजकुमार अब इन वाहनों से एक पल में सात कोस जाने लगे। लेकिन यांत्रिक युग के सभी आविष्कारों

को रुपये ने पीछे छोड़ दिया । अब नये समाज की बुनियाद खानदान नहीं, रुपया है । उसी के लिए सारी प्रेरणा, सारी गवेषणा और सारे उद्यम-उद्योग हैं । सभी का उद्गम यही रुपया है । शिरीष घोष ने जब खिदिरपुर में कम्पनी खोली और भवानीपुर में मकान बनवाया तब रुपये को पंख जमने लगे थे । पहले श्यामबाजार में रईसों के घर में रुपया लोहे के संदूकमें पड़ा सोता था । बाईजी के नाच की महफिल और कलवरिया में रुपये की बड़ी कदर थी । लेकिन अब बाईजी नहीं, रुपया खुद नाचने लगा । व्यापारियों का रुपया बैंक के संदूक में सोया न रहा, दुनिया भर में घूमता रहा । रुपया सजीव सचल और सक्रिय बन गया । इस युग में रुपया सिर्फ गतिशील नहीं, बल्कि सर्जनशील बन गया । रुपये से रुपया पैदा होने लगा । रुपया चलता-चलता बढ़ने लगा । इस युग में व्यवसायियों ।को बाईजी के नाच की महफिल में रुपया खर्च नहीं करना पड़ा । रुपया खुद नाच-नाचकर अपनी धाक जमाने लगा । इस युग में सब कुछ खरीदा और बेचा जाने लगा । रुपया खुद बदलकर सबको बदलने लगा । स्नेह, ममता, दया और प्रेम सब रुपये के शिकार बन गये । इन्सान खुद रुपये के आगे सामान बन गया । इसलिए रुपये ने जिस चीज को छू लिया, वही सोना बन गयी । पहले ऋषि-मुनि भी ऐसा जादू नहीं दिखा सकते थे । पहले कहा जाता था, 'डेथ दी लेवेलर' लेकिन अब कहा जाने लगा 'रुपया दी लेवेलर' । पहले मौत सबको बराबर करती थी, लेकिन अब रुपया करने लगा । रुपया मृत्यु से भी कठोर और शक्तिशाली बन गया । रुपये ने सब वर्गभेद मिटाकर अपने को नया कुलीन बना लिया । रुपये से स्वर्ग मिलने लगा और रुपया पैदा करना ही श्रेष्ठ धर्म बन गया । अब रुपया ही वंश, गोत्र और वर्ण का परिचय बन गया । जिस वर्ग में शिरीष घोष को स्थान मिला, वह रुपये के जादूगरों का था । वह सबसे बड़ा कुलीन बन गया और सबसे बड़ा ब्राह्मण (रुपया) रक्त बन गया और वही रक्त समाज की शिरा-उपशिराओं में दौड़ने लगा ।

रुपये में इतनी क्षमता है, यह शिरीष घोष समझ गये थे । इसीलिए वे रुपये के पीछे दौड़े थे । लेकिन वे और भी एक बात समझ गये थे । उस समय दक्षिणेश्वर में परमहंस प्रचार करने लगे थे — रुपया खाक है और खाक रुपया । लेकिन उस समय बहुत देर हो गयी थी । उस समय शिरीष घोष ने रुपये का पहाड़ बना लिया था । मकान, कार, बगीचा, जमींदारी और सुंदरवन की जमीन — सब कुछ उन्होंने रुपये से खरीद लिया था । इससे वे रुपये की ताकत भी समझ गये थे और उसकी परेशानी [illegible] उन्होंने देख लिया था कि कभी जिन लोगों ने उनको शरण नहीं दी थी, रुपये [illegible] पर वही लोग उनकी शरण में आकर खुशामद करने लगे थे । रुपये के [illegible] मित्र और दोस्त-अहबाब भी मिल गये थे । जिस रफ्तार से उनके [illegible] बढ़ी, उसी रफ्तार से उन लोगों की भी जो उनके लिए बोझ के समान थे । [illegible] रुपये की परेशानी समझ गये थे । फिर शिरीष घोष दक्षिणेश्वर पहुँचे [illegible] वहाँ भक्तों की बड़ी भीड़ थी । उन्हें कुछ कहने की हिम्मत नहीं [illegible]

नहीं मिला। अपने अकूत रुपये के अपराध से वे अपराधी बने हुए थे, इसलिए मुंह नहीं खोल सके थे। उसके बाद तो वे मर ही गये!

शिरीष घोष अगर ज्यादा दिन जिंदा रहते तो पता नहीं क्या होता, शायद वे दोनों हाथों से अपनी सम्पत्ति लुटा देते। उनके मरने के बाद उनका रुपया बेटे को को मिला। फिर वह रुपया बेटे के हाथ से निकलकर बहू के हाथ में पहुँचा। तीन पीढ़ियों से इकट्ठा होता रुपया अब इतना बढ़ गया था कि दिल खोलकर खर्च करने और लुटाने पर भी खत्म न होगा।

आते समय गाड़ी में सती ने कहा था — इस घर में इतना रुपया न होता तो शायद ठीक रहता दीपू ....

— क्यों रुपये के लिए ही हम नौकरी कर रहे हैं। इसी के लिए हम गुलामी बरदाश्त कर रहे हैं। अगर रुपये की जरूरत न होती तो कौन इतनी जहमत करता!

— नहीं, तुम नहीं जानते दीपू, हरेक चीज की अति बरदाश्त नहीं होती। इन लोगों को इतना रुपया बरदाश्त नहीं होता।

— क्या ये लोग रुपया बरबाद करते हैं?

सती ने कहा था — अगर ये वैसा करते तो भी ठीक रहता। मैं समझती कि ये लोग जिंदा हैं। लेकिन ये लोग वह भी नहीं कर सकते। रुपया उड़ाने के लिए भी कुछ ताकत चाहिए, हिम्मत और मिज़ाज चाहिए।

कब किस जमाने में शिरीष घोष ने कहा था कि रुपया बड़ी बुरी चीज है। इन लोगों ने उसका उलटा मतलब निकाल लिया। ये लोग उस कर्मठ पुरुष की बात से डर गये। इन लोगों ने रुपये को बैंक डिपाजिट और कम्पनियों के शेअर में बंद कर दिया। अब उससे ये लोग जौ भर भी हट नहीं सकते। शिरीष घोष के उत्तराधिकारियों ने रुपये को केवल क़ैद ही नहीं किया, बल्कि अपनी आतमा को भी इन लोगों ने अपने सम्मान, अपनी प्रतिष्ठा और अपने पौरुष के साथ बैंक में जमा कर दिया है। सब कुछ बैंक में जमा कर ये लोग निश्चित हो गये हैं। प्रतिष्ठा में एक तिल की हानि हो, रईसी में बाल भर फर्क आ जाय तो मानो इनका सर्वनाश हो जाय। अर्थ के साथ इन लोगों ने परमार्थ को भी बैंक में बंद कर दिया था। इन लोगों का सब कुछ बैंक के सेफ डिपाजिट वाल्ट में कैद है। अगर संसार कभी रसातल में चला जाय और प्रलय-पयोधि-जल में सब कुछ समा जाय, तो भी शायद इन लोगों की रईसी खत्म न हो। प्रियनाथ मल्लिक रोड पर गेट के सामने दरबान बिठाकर और बैंक का पास-बुक संदूक में भरकर इन लोगों ने हमेशा के लिए अपनी रईसी को पकड़ रखना चाहा है। कहीं कुछ खो न जाय, कहीं कुछ बिगड़ न जाय। लेकिन किसको मालूम था कि बर्मा में पली एक अजीब लड़की इस घर की बहू बनकर तीन पीढ़ियों की धारणा और मान्यता को इस तरह तहस-नहस कर देगी।

दीपंकर भी नहीं समझ पाया था कि अपने जन्मदिन पर उस घर में न्योता

खाने का परिणाम अब तक भोगना पड़ेगा! और वह परिणाम इतना मर्मान्तक होगा।

सती आगे-आगे चल रही थी। बोली — आओ, अन्दर आओ, वे यहीं हैं।

दीपंकर बोला — मुझे तुम कहाँ ले आयीं?

सती बोली — यही इनकी लाइब्रेरी है। ज्यादातर वे यहीं रहते हैं।

परदा हटाकर अन्दर जाते ही दीपंकर ने देखा कि कमरा बहुत बड़ा है। चारों तरफ बस किताबें ही किताबें। बीच में एक टेबुल के पास [illegible] सज्जन बैठे हुए हैं। इधर उनकी पीठ है।

अन्दर जाकर सती ने बुलाया। कहा — सुनो, दीपू आया है।

वे सज्जन खादी बाँह का कुरता पहने हुए हैं। सती की बात उनके कान में जाते ही उन्होंने पलटकर देखा। दीपंकर की तरफ देखकर वे विस्मित हुए, लेकिन पहचान न सके। सती की तरफ देखकर उन्होंने पूछा — आप कौन हैं?

सती बोली — जिसके बारे में कहा था।

— अच्छा, अच्छा!

कहकर वे दीपंकर के स्वागत में उठ खड़े हुए। बोले — अरे, पहले बताना चाहिए था! बैठिए, बैठिए!

दीपंकर एक कुर्सी पर बैठा। बोला — आप परेशान न होइए।

फिर भी सनातन बाबू मानो परेशान हो गये। बोले — दीपंकर, कल उस समय मैं पुरी से लौटा था। पुरी जाना ठीक न होगा, हम कटक से ही लौट आये थे। वर्षाऋतु में रथयात्रा के समय पुरी नहीं जाना चाहिए था। बाद में मैंने सोचकर देखा कि सितंबर नहीं, मार्च में पुरी जाना ठीक रहता है।

उसके बाद किताबों पर झुककर वे बोले — इन सारे [illegible] हाल ही में मैंने ये किताबें खरीदी हैं। कहने पर आप विश्वास नहीं करेंगे [illegible] सका।

दीपंकर बोला — आप पढ़ रहे थे और मैंने आपके पढ़ने में बाधा डाली ....

— नहीं, नहीं बाधा क्यों डालेंगे ? यह सब क्या एक दिन में पढ़ा जा सकता है ! फिर इन तीन किताबों से क्या होगा ? और भी बहुत-सी किताबें खरीदनी पड़ेंगी। आज मैंने बुकसेलरों को चिट्ठी लिख दी है कि उड़ीसा के बारे में जितनी किताबें हों, भेज दें। मैंने हिसाब लगाकर देखा है कि इस विषय को जानने में कम से कम छः महीने लगेंगे।

दीपंकर सनातन बाबू की बातों और उनकी चाल-चलन पर गौर करता हुआ जरा अनमना हो गया था। वह बोला — किस विषय को ?

सनातन बाबू बोले — यही बाढ़ के बारे में। बाढ़ कोई मामूली चीज नहीं है, वह अक्सर आती है और तबाही होती है। उन्नीस सौ बत्तीस में जो भयानक बाढ़ आयी थी, वह मुझे याद है।

दीपंकर बोला — बाढ़ तो आती ही है, उसके बारे में जानकर आप क्या करेंगे ? आप तो उसका प्रतिकार कर नहीं सकेंगे।

सनातन बाबू सती की तरफ देखकर हँसे। बोले — देखा, तुम जो कहती हो, वही इन्होंने कहा। प्रतिकार न भी कर सका तो भी जानने में क्या कम आनन्द है ? जानने की इच्छा नहीं होती ?

अजीब है यह आदमी ! सती ने दीपंकर से कहा था। सिर्फ बाढ़ नहीं, हर चीज के बारे में सनातन बाबू जानना चाहते हैं। बहुत दिन पहले एक बार तली हुई हिलसा मछली उनको बड़ी अच्छी लगी थी। फिर क्या हुआ, वही किस्सा सती ने दीपंकर को सुनाया था।

रसोइये से सनातन बाबू ने पूछा — यह कौन मछली है ठाकुर ?

रसोइया बोला — हिलसा मछली।

हिलसा मछली ! हिलसा मछली तो पहले भी खायी है, लेकिन इतनी अच्छी कभी नहीं लगी !

सनातन बाबू ने पूछा — किस बाजार से यह मछली लाई गयी है ठाकुर ?

— जी, कैलास बाजार जाता है, वही लाया है।

सनातन बाबू ने कहा — कैलास को बुलाओ ....

कैलास आया तो सनातन बाबू ने पूछा कि किस बाजार से मछली आयी है।

लेकिन कैलास के उत्तर से सनातन बाबू को संतोष नहीं हुआ। आखिर मुंशी को बुलाया गया ! मुंशी अन्दर आया। सनातन बाबू ने पूछा — आज हिलसा मछली कहाँ से खरीदी गयी है मुंशी जी ?

मुंशी थोड़ा डर गया। बोला — हुजूर, मैंने तो ताजा मछली देखकर खरीदी थी। रोज जिससे लेता हूँ, आज भी उसी से मछली खरीदी थी।

सनातन बाबू ने खाना रोककर पूछा — इसीलिए पूछ रहा हूँ कि किस

बाजार की मछली है ?

—जी, जोगू बाबू के बाजार की।

सनातन बाबू ने फिर पूछा —बता सकते है कि यह किस नदी की मछली है ?

—जी, यह तो नही बता सकता। कल मैं मछुआइन से पूछूँगा ....

सनातन बाबू हँसे। बोले —फिर तो हो चुका। नदी के बारे में वह क्या जानती होगी, वह तो बस मछली पहचानती है। उससे पूछने से कोई फायदा नही है। वह तो पढ़ी-लिखी नही है मुंशी जी।

मुंशी बोला —फिर बताइए क्या करूँ ?

सनातन बाबू ने फिर खाना शुरू किया, कहा —नही, आपको कुछ नही करना होगा। जो कुछ करना होगा मैं ही करूँगा।

खा चुकाने के बाद सनातन बाबू अपनी लाइब्रेरी में गये। वहाँ उन्होने अपनी डायरी में लिखा —"आज दिन में बारह बजे तली हिलसा खाने में बड़ी अच्छी लगी। यह मछली सबेरे जोगू बाबू के बाजार की एक मछुआइन से खरीदी गयी थी। किस नदी की मछली है, पता नही चल सका।" डायरी में यह लिख लेने के बाद वे किताब ढूँढने लगे। लेकिन मछली पर कोई किताब नहीं मिली। उन्होने कालेज स्ट्रीट में टेलीफोन किया। पूछा —हिलसा मछली के बारे में आप लोगो के पास कोई किताब है ?

सनातन बाबू ने कई दुकानो में टेलीफोन किया। कहीं वैसी किताब नही है। दुकानदारों ने कहा —हम लोगों के यहाँ ऐसी किताब नही मिलेगी। आप कैलकटा यूनिवर्सिटी के जूलॉजी डिपार्टमेंट में फोन कर सकते है।

आखिर सनातन बाबू ने वहाँ टेलीफोन किया। नो रिप्लाई! काफी देर बाद किसी ने जवाब दिया —लाइब्रेरियन का निधन हो जाने से आज यूनिवर्सिटी में छुट्टी हो गयी है। कल दिन में बारह बजे के बाद आप फोन कीकिए।

लेकिन कल तक इन्तजार नही किया जा सकता। जरूरी मसला है! एकाएक सनातन बाबू को खयाल आया। उन्होने चिड़िया खाने में फोन किया। कई दिन वे बहुत परेशान रहे। वे यहाँ-वहाँ चारो तरफ फोन करने लगे। उनकी माँ ने पूछा —क्या हुआ बेटा, कुछ पता चला ?

सनातन बाबू बोले —नही माँ, अब बताओ क्या किया जाय ?

माँ बोली —अब क्या करोगे बेटा, छोड़ो। खाना खाकर सो जाओ।

लेकिन सनातन बाबू कई दिन सो नहीं सके। सबेरे जोगू बाबू के बाजार से मछली आयी और दिन में बारह बजे वही मछली तली हुई खाने में बेहद अच्छी लगी, इसका कारण तो जानना ही चाहिए।

रात को सती बोली —शायद तुम्हें खूब भूख लगी थी, इसलिए मछली अच्छी

लगी, अब उसके बारे में क्यों इतना सोच रहे हो ?

सनातन बाबू बोले — जानने की इच्छा हो रही है और जान लेने पर खुशी होगी।

सती बोली — संसार में जानने लायक बहुत कुछ है, लेकिन सबके बारे में क्या तुम जान पाओगे ? क्या ऐसा संभव भी है ?

सनातन बाबू बोले — तुमने ठीक कहा है। हिलसा मछली के अलावा बहुत कुछ जानने के लिए है और सबके बारे में जानना संभव भी नहीं है। क्या दुनिया में सब कुछ जाना जा सकता है ?

— हाँ, इसलिए आओ, अब लेट जाओ ....

सती ने सनातन बाबू को जबर्दस्ती लिटा दिया। फिर उन्हें चादर ओढ़ा दी। कहा — अब सो जाओ। तुम्हें नींद भी नहीं लगती ?

सनातन बाबू बोले — कैसी अजीब बात है देखो ! सबने मछली खायी, लेकिन मुझको अच्छी लगी और मैं इसके लिए परेशान हूँ।

बात करते-करते थोड़ी देर बाद सनातन बाबू सो गये। सती को पता चल गया कि उनकी साँस एक समान चल रही है। उसके बाद भी देर तक सती जागती रही। वह काफी देर तक जागती रही। घड़ी की टिक-टिक उसकी छाती में चुभने लगी। धीरे-धीरे उसे भी नींद आने लगी। फिर सवेरा होते ही सास ने दरवाजे पर आकर बुलाया — बहू !

दूसरे ही दिन सनातन बाबू चौरंगी को विलायती किताबों की दुकान से तीन सौ रुपये की किताबें खरीद लाये। मछलियों का विवरण, मछलियों का पालना और दुनिया भर में कितनी मछलियाँ हैं — सब उन किताबों में हैं। समुद्र, नदी और तालाब की मछलियाँ। देश-विदेश की मछलियाँ। वे निशान लगा-लगाकर किताबें पढ़ने लगे। सवेरे से आधी रात तक। अब उनको कोई परेशानी न रही। छः महीने में उन्होंने मछली के बारे में सब कुछ जान लिया। तब उन्होंने चैन की साँस ली और उनकी माँ ने भी।

लेकिन संसार में जानने की चीज़ एक तो नहीं है। सभी चीजों के बारे में सनातन बाबू के मन में अदम्य जिज्ञासा है। एक दिन सवेरे अखबार खोलते ही उन्होंने देखा कि किसी ने 'स्टेट्समैन' के एडीटर पर पिस्तौल से गोली चलायी है। बड़े-बड़े हरफों में वह खबर छपी है। यह उन्नीस सौ बत्तीस की बात है। कलकत्ते के तमाम लोग उस खबर को पढ़कर चौंके। लेकिन सनातन बाबू नहीं चौंके।

शाम छः बजे एडीटर वाटसन साहब अपनी कार में बैठे ऑक्टरलोनी मानूमेंट, इडेन गार्डन और स्ट्रैंड रोड होते हुए नेपियर रोड की तरफ आ रहे थे। गाड़ी जरा धीरे चल रही थी। इतने में किसी ने साहब पर गोली चली दी। वाटसन साहब की स्टेनोग्राफर मिस ग्रॉस बगल में बैठी थी। तीन गोलियों में एक उसे भी लगी। उसके

बाद बहुत कुछ हो गया। वाटसन साहब को पी० जी० हास्पिटल में ले जाया गया। फिर शाम के सात बजे मालेरहाट के बूढ़ाशिवतल्ला में दोनों लड़के मिल गये। दोनों मर चुके थे। एक का नाम था ननी वाहिड़ी और दूसरा था हालदारपाड़ा रोड का गोपाल चौधुरी।

उस समय इस घटना को लेकर कई दिन शहर में खूब हल्ला रहा। पुलिस की दौड़-धूप और घरों की तलाशी खूब हुई। दीपंकर को उन दिनों की बातें याद हैं। उस समय किरण से मिलने-जुलने की मनाही थी। सी० आई० डी० वाले पीछे पड़े हुए थे। आई० बी० आफिस में दीपंकर को पूछताछ के लिए बुलाया गया था। उसी समय सती की शादी हुई थी।

सनातन बाबू ने माँ को बुलाया और उनसे कहा—क्या हो गया है जानती हो माँ?

माँ बोली—क्या?

सनातन बाबू बोले—साहब लोगों का सब खून कर रहे हैं....

माँ बोली—यह सब सुराजियों का काम है। यह सब रोज हो रहा है सोना—इसमें नयी बात क्या है?

सनातन बाबू बोले—यह तो मैं भी जानता हूँ, लेकिन इतने पिस्तौल कहाँ से आ रहे हैं, यह तो जानना होगा न!

माँ बोली—यह सब जानकर तुम क्या करोगे?

सनातन बाबू बोले—नहीं, जानना जरूरी है। पुलिस, पहरा और ब्रिटिश गवर्नमेंट है, फिर भी इतने पिस्तौल कहाँ से आ रहे हैं?

—कहीं से भी आयें, हमारा क्या?

—वाह रे! नहीं जानना है? पिस्तौल यों ही आ जायेगा? फिर पुलिस और मिलिटरी रखने की क्या जरूरत है? वे सब तो हमारे ही देश के लोग हैं और हम भी इसी देश के हैं। इसलिए उन सब के बारे में जानना जरूरी है। सिर्फ खाना और सोना ही तो इन्सान का काम नहीं है। वह तो पशु भी करता है। फिर हम पशुओं से किस बात में अलग हैं?

रात को सनातन बाबू मन लगाकर किताब पढ़ रहे थे कि सती ने कहा—यह सब जानकर क्या होगा?

सनातन बाबू बोले—क्या तुमको जानने की इच्छा नहीं होती?

सती बोली—नहीं।

सनातन बाबू बोले—आश्चर्य है! क्या तुम्हें सचमुच जानने की इच्छा नहीं होती कि किसने पिस्तौल का आविष्कार किया था और पिस्तौल से पहली गोली किस-को मारी गयी थी? पहले पिस्तौल देखने में कैसा था और उस समय के और आज के

पिस्तौल में क्या फर्क है, यह सब तुम नहीं जानना चाहतीं ?

संती बोली — यह सब जानने पर क्या लाभ होगा ?

सनातन बाबू हँसे। बोले — फिर खाने, सोने और जिन्दा रहने से क्या लाभ है ?

फिर उस गोलीकांड के बाद सनातन बाबू ढेर की ढेर किताबें मँगाने लगे। वे सब किताबें वे रातदिन पढ़ते रहे। छः महीने में उन्होंने सब कुछ जान लिया। तब उनको भी चैन मिला और उनकी माँ को भी।

यह सब सुनकर दीपंकर को बड़ा अच्छा लगा। ये भी एक तरह के लोग हैं। संसार में जानने की कितनी चीजें हैं ! एक जीवन में सब कुछ जान लेना संभव नहीं है। संसार में इतनी किताबें हैं कि कोई अपने जीवन में उनको पढ़कर पूरा नहीं कर सकता। फिर भी चारों तरफ लगी हुई किताबें देखकर दीपंकर को सनातन बाबू के प्रति श्रद्धा होने लगी। लेकिन क्या जरूरत है इतना जानने की ! और दस अमीर लोग जो करते हैं वे भी तो वही कर सकते हैं ! फिर क्यों इतनी मेहनत करना ? इतना पैसा खर्च करना ! सनातन बाबू सचमुच विचित्र हैं। यही सब लेकर वे मशगूल हैं, मस्त हैं !

दीपंकर ने पूछा — ये सब कौन किताबें हैं ?

सनातन बाबू बोले — यही सब तो अभी पढ़ रहा था। जरा वार के बारे में जानने की इच्छा हुई तो इनको पढ़ा। फिर मछलीवाली बात दिमाग में आ गयी।

— वार ? युद्ध के बारे में क्यों पढ़ रहे थे ?

— सुना है कि फिर वार शुरू होगा।

— वार शुरू होगा ?

युद्ध। महायुद्ध। बहुत दिन पहले ऐसा युद्ध हुआ था, लेकिन दीपंकर ने उसे नहीं देखा था। उस लड़ाई की उसने कहानी सुनी थी। मधुसूदन के चबूतरे पर बैठकर दूनी चाचा वगैरह उस युद्ध की कहानी सुनाया करते थे। मेसोपोटैमिया और पेरिस की लड़ाइयों के किस्से सुने और सुनाये जाते थे। क्या फिर वैसा ही युद्ध शुरू होगा ? सनातन बाबू क्या कह रहे हैं।

सनातन बाबू बोले — क्या, आपने कुछ नहीं सुना ? क्या आपके दफ्तर के साहब लोग कुछ नहीं जानते ?

दीपंकर बोला — नहीं, मैंने तो कुछ नहीं सुना !

— खैर, आप सुनें या न सुनें, मुझे ऐसा शक हो रहा है कि लड़ाई फिर शुरू होगी। जर्मनी में नाजी पार्टी की शक्ति बढ़ते देखकर ऐसा संदेह हो रहा है। यह जो हिटलर है न, वह खुद उतना बुरा नहीं है। वह अपने देश से प्यार करता है, देश का भला चाहता है, लेकिन उसके पीछे कुछ व्यापारी हैं जो उसको उकसा रहे हैं।

— कैसे ?

— जी हाँ, वे लोग अपने कारखानों में बंदूक-राइफल और गोला-बारूद खूब बना चुके हैं। वे सब बिक नहीं रहे हैं, हथियारों का पहाड़ बन गया है, अब उन सब का इस्तेमाल तो होना ही चाहिए।

सनातन बाबू बहुत-सी बातें बताने लगे। लड़ाई शुरू होने से बहुत पहले उसके कारणों के बारे में बताने लगे। उस समय कोई नहीं जानता था कि लड़ाई शुरू होगी। दीपंकर भी नहीं जानता था। अखबारों में भी वैसी खबर नहीं छपती थी। लेकिन दीपंकर को याद है कि सनातन बाबू ने ही उस दिन पहली बार लड़ाई की बात कही थी। सनातन बाबू भी शायद नहीं जानते थे कि उनकी बात इस तरह अक्षरशः सही निकलेगी और संसार के बहुत बड़े भाग में लड़ाई की आग फैल जायेगी। अंग्रेज, फ्रांसीसी, रूसी आदि सभी उस लड़ाई में शामिल होंगे। संसार का हर आदमी उस युद्ध से प्रभावित होगा और अंत तक उसमें सती को भी भाग लेना पड़ेगा।

— आप तो जानते हैं कि किस तरह हिटलर सत्ता में आया? चुनाव से पहले कम्युनिस्ट पार्टी को बदनाम करने के लिए उसके समर्थकों ने पार्लमेंट हाउस में आग लगा दी। देखिए कितना बड़ा धूर्त! सब पार्टियों की बदनामी हुई। उसी के बाद चुनाव हुआ। उस चुनाव में सभी पार्टियाँ बुरी तरह हार गयी। मैं तभी से वाच कर रहा हूँ, किताबें पढ़ रहा हूँ और तमाशा देख रहा हूँ कि आखिर होता क्या है!

बात शुरू करने पर खत्म नहीं होती। एक बार कोई बात छेड़ देने पर सनातन बाबू को और किसी चीज का ख्याल नहीं रहता। शायद उनको बात करने के लिए कोई मन मुताबिक आदमी नहीं मिलता। आज दीपंकर को पाकर मानो वे दिल खोलकर बात करने लगे। वे खुद कहते जा रहे हैं और दीपंकर और सती दोनों सुन रहे हैं।

सनातन बाबू बोले — क्या मैं यह सब जानता था! स्टेट्समैन के एडीटर को जिस दिन सुराजियों ने गोली मारी, उसी दिन मेरे दिमाग में पहली बार सवाल उठा कि पिस्तौल कब बना। याने बंदूक का आविष्कार कब हुआ। तब मैंने उस विषय पर किताबें मँगवायीं। उन किताबों को पढ़कर देखा कि अरे, जर्मनी ने यह क्या कर डाला है। अब तो संसार में युद्ध छिड़ने में देर नहीं है। तब उसके बारे में और किताबें मँगवायी और देखा कि मैंने जो सोचा था सही है। असल में हिटलर के पीछे है थाइसेन ....

— थाइसेन?

— आपने थाइसेन का नाम नहीं सुना? यों तो वह व्यापारी है। लोहा-लक्कड़, कोयला आदि कई चीजों का वह व्यापार करता है। उसने देखा कि हिटलर बहुत बढ़िया भाषण दे सकता है। चलो, इसी को चान्सलर बनाओ। उसके बाद क्या हुआ जानते हैं? यह एक मजेदार कहानी है। आप सुनेंगे?

समकालीन विश्व इतिहास की सबसे मजेदार कहानी शुरू होने ही वाली थी

कि सती बोली — अब कहानी रहने दो, दीपू दफ्तर से आया है, जानते हो न ? मैं उसे दफ्तर से ले आयी हूँ। अभी तक उसने खाना नहीं खाया।

सनातन बाबू बोले — अरे, अरे, यह तुमने मुझसे पहले क्यों नहीं कहा — फिर वे दीपंकर से बोले — आपने अभी तक खाना नहीं खाया, यह तो आपको बताना चाहिए। नहीं, नहीं, अब मैं आपको नहीं रोकूँगा, आप घर जाइए ! आज आपको बड़ा कष्ट हुआ ....

सती बोली — अरे, क्या कहते हो ? वह घर क्यों जायेगा ? आज मैंने उससे यहीं खाने के लिए कहा है। तुम उससे जाने के लिए क्यों कह रहे हो ?

सती हँसने लगी। दीपंकर भी कुछ शर्मिन्दा हुआ।

सती ने दीपंकर से कहा — तुमने देखा उनका काम। — फिर उसने सनातन बाबू से कहा — आज मैंने उसे यहाँ न्योता दिया है। कल तुमसे इतनी बार कहा।

— अच्छा। अच्छा।

सनातन बाबू को मानो अब होश आया। वे बोले — हाँ, हाँ, अब याद आया। यह तो अच्छा हुआ, देर तक बात होती रहेगी।

सनातन बाबू उठे। बोले — रुकिए, एक किताब लाकर आपको दिखाता हूँ। बगल के कमरे से अभी लाता हूँ ....

सनातन बाबू बगलवाले कमरे की तरफ गये। दीपंकर ने सती की तरफ देखा और कहा — सनातन बाबू बड़े अच्छे आदमी हैं सती ....

सती ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया और कहा — आज तुम खाकर ही जाओगे दीपू, चले मत जाना।

दीपंकर बोला — आज सनातन बाबू से परिचय करके मुझे सचमुच बड़ी खुशी हुई। वे इतनी खबर रखते हैं !

सनातन बाबू आ गये। उनके हाथ में एक किताब थी। वे बोले — मैंने यह नयी किताब मँगवायी है। इसको एक जगह से आपको पढ़कर सुनाता हूँ ....

सती बोली — ठीक है, मैं रसोईघर की तरफ जाती हूँ — तुम बैठो दीपू।

सती उठकर चली गयी।

सनातन बाबू विचित्र आदमी हैं ! दूर-दूर के देशों की सारी समस्याएँ और उन देशों के लोगों का सारा हाल उनको कंठस्थ है। उन्नीस सौ इकतीस में ब्राजील में कितनी लाख बोरी कॉफी समुद्र में फेंकी गयी थी, वह उनको मालूम है। एक तरफ साधारण लोग, उनके धर्म और उनकी जीविका, फिर दूसरी तरफ बड़े लोगों की राजनीति। जर्मनी में यहूदियों पर जैसा अत्याचार होता है, वैसा रूस में महाजनों पर होता है। दोनों ही एक जैसे हैं। कहीं भी विश्वास नहीं है, आस्था नहीं है और सहयोगिता नहीं है। देख लीजिएगा कि युद्ध छिड़ने पर कोई नहीं जीतेगा। आज दोनों तरफ दो दलों के लोग दो तरह की विचारधाराएँ चलाने की कोशिश कर रहे हैं।

एक दल के लोग कह रहे हैं कि सहयोगिता, शांति और तर्क के रास्ते से सभ्यता आगे बढ़ेगी और दूसरे दल के लोग ध्वंस चाह रहे हैं। मृत्यु, अपघात और आत्महत्या के जरिये आत्मविनाश! बताइए, आप क्या चाहते हैं? दोनों तरफ बराबर वोट हैं, दोनों दल समान शक्तिशाली हैं और दोनों के पास सब तरह के हथियार हैं — बम, बारूद, राइफल, बंदूक, गैस आदि सब कुछ! अब बताइए कौन दल जीतेगा?

— सोना!

अचानक सनातन बाबू की बात में बाधा पड़ी। उन्होंने बात बंद कर दरवाजे की तरफ देखा और कहा — क्या है माँ?

दीपंकर ने देखा। सनातन बाबू की माँ अन्दर आ रही हैं। सती की सास। कल भी दीपंकर ने यही शक्ल देखी थी। यही शक्ल देखकर सती डर के मारे पीली पड़ गयी थी।

— यह कौन है सोना?

सनातन बाबू के जवाब देने से पहले ही दीपंकर ने आगे बढ़कर उस महिला के पाँव छुए। फिर वह खड़ा होकर बोला — सनातन बाबू से परिचय कराने के लिए सती मुझे बुला लायी है।

— बहू तुम्हें बुला लायी है? कल तुम्हीं आये थे न?

दीपंकर बोला — जी हाँ ....

— बहू मेरी पागल है, लेकिन एक पागल की बात पर तुम कैसे यहाँ चले आये?

पागल! सती पागल है! दीपकर मानो विचित्र स्थिति में पड़ गया। सनातन बाबू की माँ यह क्या कह रही हैं! सती पागल है! दीपंकर ने एक बार सनातन बाबू की तरफ देखा। सनातन बाबू उस समय किताब देखने में व्यस्त थे।

— तुम बहू के कैसे भाई हो?

दीपंकर बोला — वे लोग कालीघाट में हमारे बगल वाले मकान में रहते थे, इसलिए बचपन से जान-पहचान है। हम लोग एक मुहल्ले में बहुत दिन रहे, सती मेरी माँ को मौसी कहती थी, बस और कुछ नहीं ....

— तुम इतने दिन से उसे देख रहे हो, लेकिन वह पागल है तुम नहीं जानते?

— जी, आप क्या कह रही हैं, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ ....

— अगर समझ नहीं पा रहे हो तो समझने की जरूरत भी नहीं है। मैं इतने दिन से इस बहू को लेकर गृहस्थी चला रही हूँ, मैं समझ गयी हूँ कि वह पागल के अलावा और कुछ नहीं है! खैर, शादी से पहले ठीक से पता नहीं लगाया गया और मैं उसे इस घर की बहू बनाकर ले आयी, लेकिन तुम लोग उसकी बातों में क्यों आते हो? तुम लोग क्यों उसके कहने से मकान में आते हो?

यह अपमान दीपंकर की छाती में बरछी की तरह लगा। है

नहीं पाया कि क्या जवाब दे।

सती की सास कहने लगीं — कल मैंने तुमको देखा था, लेकिन तुम्हारे मुँह पर कुछ नहीं कहा, फिर भी तुम आज कैसे चले आये ?

दीपंकर को लगा कि अब यहाँ एक क्षण भी खड़ा रहना ठीक नहीं है। वह बोला — ठीक है, मैं जा रहा हूँ ....

— हाँ, जाओ। अब उसके बुलाने पर कभी मत आना। वह पागल है, एकदम पागल, एक पगली को मैं बहू बनाकर लायी हूँ।

दीपंकर कमरे के बाहर आ गया था। सनातन बाबू को अब खयाल हुआ, वे बोले — कहाँ जा रहे हैं दीपंकर बाबू ? यह चैप्टर सुन लीजिए, मैं पढ़ रहा हूँ ....

सनातन बाबू की माँ बोलीं — अब तुम उसे मत बुलाओ सोना, जाने दो ....

सनातन बाबू की माँ भी दीपंकर के साथ बाहर आयीं। कमरे से निकलकर दीपंकर समझ नहीं पाया कि किधर जाना होगा। लंबा बरामदा। बरामदे के एक किनारे कमरे और दूसरे किनारे चौकोर खंभों की कतार। खंभों के बीच से बगीचे का कुछ हिस्सा उस अँधेरे में भी दिखाई पड़ा।

शायद सती की सास दीपंकर का मनोभाव ताड़ गयीं। वे बोलीं — तुम बुरा मत मानना ....

दीपंकर ने एक बार पीछे मुड़कर देखा। मानो उसने इस बात का मतलब समझना चाहा।

सती की सास बोलीं — तुमसे चले जाने के लिए कहा तो तुम गलत मत समझना बेटा — हमारे खानदान में ऐसा चलन नहीं है।

दीपंकर ने जरा आगा-पीछा किया, फिर पूछा — लेकिन आप उसे पागल क्यों कह रही हैं, मैं नहीं समझ पा रहा हूँ ....

सती की सास की आवाज अब तेज हुई। वे बोलीं — पागल नहीं है ? पागल न होने पर क्या कोई माँ अपने बेटे की हत्या कर सकती है ?

दीपंकर चौंका ! वह एक कदम पीछे हट आया और बोला — आप क्या कह रही हैं ?

सती की सास बोलीं — जो कह रही हूँ बेटा, वह सही है। उसने अपनी कोख से जन्मे बेटे को मार डाला है।

दीपंकर विस्मय के आवेश में ही था कि सती की सास फिर बोलीं — बड़े दुःख से आज मेरे मुँह से यह बात निकल रही है, नहीं तो बाहरी आदमी के सामने मैं यह सब कहने वाली नहीं नहीं हूँ, मेरी वैसी आदत नहीं है। लेकिन बहू तुम्हें खुद बुला लायी है, इसलिए तुमसे यह सब कहना पड़ा ! मैं यों ही उसको लेकर परेशान हूँ, अब तुम लोग आकर मेरी परेशानी मत बढ़ाना अब जाओ बेटा ....

दीपंकर और भी बहुत कुछ पूछना चाहता था, लेकिन उस महिला के चेहरे

की तरफ देखकर उसे कुछ पूछने की हिम्मत नही पड़ी। यह कैसा घर है! यह किस रहस्य में आकर वह फँस गया है! सती को देखकर उसके पागल होने का कोई लक्षण समझ में नही आता। वह हमेशा सहज और सामान्य लगती है। उसी ने अपने बेटे का खून किया है। फिर उसके बेटा भी हुआ था, यह तो उसने कभी नही बताया।

दीपंकर को लगा कि सचमुच सती की सास का कोई दोष नही है। जिसको गृहस्थी चलानी पड़ती है, वही उसकी परेशानी को समझता है। सती को क्या है? वह तो इस घर की बहू है। विधवा होने के बाद यही सास इस घर को सँभाल रही हैं। भले ही इनके पास अपार धन हो, लेकिन धन ही तो सब-कुछ नही है। जहाज जैसे इस घर को वही तो इतने दिन चलाती आयी है। अब इसका भार वे किसको सौंप दें! किसपर वे भरोसा करें! बेटा तो किताब पढने में मशगूल रहता है। शायद माँ ने सोचा था कि बेटे की शादी के बाद बहू को सब कुछ सौंपकर निश्चित होगी, लेकिन सती उनके मन की नही है। सती का रंग-ढंग उनको पसंद नहीं है। कैसा विचित्र यह संसार है और कितना विचित्र यह मानव-स्वभाव! इस घर में पति शायद पत्नी को पसंद नहीं है या पत्नी ही शायद पति को पसंद नही है। यह भी हो सकता है कि माँ जैसा चाहती है बेटा वैसा नही है या माँ ही बेटे को पसन्द नही है। अब रही बहू! बहू सास को पसंद नही है, इसलिए सास भी शायद बहू को पसद नही आती। फिर भी आये दिन एक घर में एक छत के नीचे एक साथ इनको रहना पडता है। अच्छा न लगने पर भी इनको रहना पडेगा। यह कितना बड़ा कष्ट है! गेट पार करते समय दीपंकर को लगा कि साहब लोगों के मुहल्ले में मिस माइकेल के घर से निकलते वक्त भी कभी उसे ऐसा ही अनुभव हुआ था। लक्ष्मी दी के घर से निकलते समय भी उसे ऐसा ही लगा था। लक्ष्मी दी को देखकर कोई नही समझ सकता, मिस माइकेल को भी देखकर कोई क्या समझता होगा! प्रियनाथ मल्लिक रोड पर सती का मकान देखकर कुछ समझने का उपाय नही है। [illegible] सब एक जैसे हैं? अमीर-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित और भद्र-अभद्र सब एक तरह के हैं? क्या प्रियनाथ मल्लिक रोड, फ्री स्कूलस्ट्रीट, गड़ियाहाटा और ईश्वर गांगुली लेन में कोई अन्तर नहीं है? क्या कलकत्ता, बंबई, मद्रास, इंगलैंड, अमेरिका. [illegible] और [illegible] में कोई फर्क नहीं है? संसार के हर मानव के हृदय में हाहाकार [illegible] है और बाहर से कुछ [illegible] नही चलता!

दीपंकर को लगा कि सब [illegible] है। अन्दर कुछ नहीं है [illegible] अच्छे-अच्छे कपडों की तड़क-भड़क। एक तरफ ईश्वर गांगुली लेन के [illegible] में रह लेने का निर्लज्ज परिहास और [illegible] सूरत मेजों का विलास-वैभव! [illegible] सैंतीस रुपये घूस की क्रांकीट ने [illegible]

दीपू—दीपू ऽऽऽऽ

एकाएक कान खड़े कर दीपंकर रुक गया। लगा कि सती की आवाज आ रही है। मानो मकान के भीतर वाले वरामदे से उसकी आवाज धीरे-धीरे पास आ रही है। मानो वह वहुत दूर से वुला रही है और उसकी पुकार धीरे-धीरे पास आती जा रही है। पास — और पास आती जा रही है। मकान के अन्दर वाले हिस्से से वाहर वाले हिस्से में, वाहर वाले हिस्से से वाहर वाले वरामदे में, वरामदे से वगीचे में और वगीचे से एकदम फाटक तक — मानो अव वह पुकार दौड़ती हुई एकदम सड़क पर आकर उसे पकड़ लेगी।

— दीपू ऽ ऽ ऽ ऽ

उस अँधेरे में दीपू एकाएक तेज चलने लगा — और तेज चलने लगा। हाजरा रोड के मोड़ पर ट्रामवाली सड़क की भीड़ में दीपू पहुँच जाने पर सती उसे नहीं ढूँढ़ पायेगी। दीपू एकदम खो जायेगा। सती के जीवन से हमेशा के लिए वह खो जायेगा। उसे लगा कि इस संसार का कोई अर्थ नहीं है, कोई उद्देश्य नहीं है। मानो सवेरे की जिंदगी सिर्फ दफ्तर जाने की तैयारी के लिए है। मानो दफ्तर वना है दोनों थके पाँवों को थोड़ा आराम देने के लिए। और शाम ? शाम वनी है मानो ऑफिस से घर लौटने के वाद थोड़ी देर फुरसत में विताने के लिए। इसके अलावा और कुछ नहीं है। उसके वाद रात को सोना। न सोने पर दूसरे दिन कोई दफ्तर कैसे जायेगा। सवेरे से शाम तक वस यही चक्कर है। वूढ़े सूरज की तरह वेमतलव चक्कर लगाना !

अव सती की आवाज सुनाई नहीं पड़ रही है। सड़क की भीड़ भी पतली हो गयी है। हाजरा रोड के दक्षिण तरफ इसी फुटपाथ पर वहुत दिन पहले प्रोफेसर अमल रायचौधुरी से भेंट हुई थी। उस दिन दीपंकर ने उनसे जो सवाल किया था, आज वही सवाल किसी और से करने का मन हुआ। सॉक्रेटीज़ की वात से जुड़ा वही सवाल। क्यों संसार में भले लोग कष्ट पाते हैं ? क्यों अच्छे लोग 'सफर' करते हैं ? लेकिन कौन इस प्रश्न का उत्तर देगा ? यह भीड़, ट्राम-वस, दुकान, सड़क-पार्क-घाट, आकाश-चाँद-तारे, किससे दीपंकर को उसका जवाव मिलेगा ! काश, सॉक्रेटीज़ आज जिंदा होते !

— सर, आप यहाँ ?

दीपंकर मानो अचानक होश में आया। सामने एक नौजवान वड़ी विनय से खड़ा है। वह शर्ट और धोती पहने हुए है। उसके हाथ में ऐल्युमिनियम का टिफिन वॉक्स है। लगा, दफ्तर का कोई क्लर्क है।

दीपंकर ने पूछा — तुम इधर कहाँ आये थे ?

उस लड़के ने कहा — एम्प्रेस थियेटर में वायोस्कोप देखने आया था सर।

यह कहकर उस लड़के को चला जाना चाहिए था। लेकिन वह खड़ा रहा। वोला — सर, अगर आप वुरा न मानें तो एक वात कहना चाहता हूँ। मैं दो महीने से लीव वैकेन्सी में काम कर रहा हूँ, लेकिन अभी तक मुझे पर्मानेंट वैकेन्सी में काम नहीं करने दिया गया।

शायद उसी झोंक में वह और बहुत कुछ कहता। अपने दुःख की बात बी० ए० पास करने की बात, अपने घर की बात और अपनी थोड़ी आमदनी की बात।

लेकिन दीपंकर ने अचानक पूछना चाहा—क्या घूस देकर तुम्हें नौकरी मिली है? तैंतीस रुपये की घूस?

पूछना चाहकर भी दीपंकर की जबान पर सवाल अटक गया। उसने गौर से उस युवक के चेहरे को देखा। वह किस सेक्शन में काम करता है, कहाँ रहता है, यह सब दीपंकर ने नहीं पूछा। पूछने की इच्छा ही नहीं हुई। दीपंकर ने सोचा कि यह लड़का तो मुझसे अधिक सुखी है अधिक भाग्यवान, नहीं तो इतने अभाव में वह सिनेमा देखने क्यों आता। यह लड़का दीपंकर की तरह संसार की किसी बात को लेकर परेशान नहीं होता। इस लड़के जैसे लोगों की तादाद ही ज्यादा है। क्या इन लोगों ने सॉक्रेटीज का नाम सुना है? बाबाफ या थाइसीन का नाम सुना है? क्या ये सब दीपंकर की तरफ ट्राम-बस पार्क, दुकान-आदमी और आकाश-चाँद-सूरज लेकर मगज-पच्ची करते हैं? क्या ये लोग सवाल करते हैं कि संसार में क्यों भले लोग तकलीफ पाते हैं? क्या ये लोग जीवन का अर्थ खोजने दीपंकर की तरह अकेले गड़ियाहाटा, फ्री स्कूल स्ट्रीट और प्रियनाथ मल्लिक रोड का चक्कर लगाते हैं? क्या ये लोग उसे इतिहास की किताबों में ढूंढ़ते हैं।

दीपकर ने उस लड़के को हटा दिया। कहा—ये सब बातें सड़क पर नहीं होतीं ऑफिस में मिलना।

आश्चर्य है! यहाँ भी दफ्तर है! यहाँ भी दफ्तर के शिकंजे से छुटकारा नहीं है! दीपकर जल्दी-जल्दी घर की तरफ चलने लगा। अगर वह उस लड़के की तरह होता तो ठीक रहता। इस ससार का देना-पावना लेकर वह सिर नहीं खपाता। हर चीज वह कौड़ी देकर खरीदता और दाम मिलने पर हर चीज बेच भी देता। लेकिन जो आदमी समाज, स्वदेश, और मानव जाति के लिए सोचता है, जिसमें इनकी अच्छाइयाँ और बुराइयाँ निहित है, वह कैसे शांति पा सकता है? उसे कौन शांति देगा?

अपने मकान के पास आते ही दीपंकर चौंका। लगा मकान के सामने कुछ लोगों की भीड़ है। अँधेरे में कोई पहचाना नहीं जाता। लेकिन वह इतना समझ गया कि जरूर कुछ हुआ है। जरूर कोई विपत्ति आयी है।

मकान के और पास आने पर पुलिसवालों की भीड़ देखकर दीपंकर [illegible] में पड़ गया।

क्या छिटे या फोंटा ने कुछ किया है? छिटे-फोंटा के सामने [illegible]

कोई बड़ी बात नहीं है। वे दोनों भाई पता नहीं क्या-क्या करते रहते हैं। पुलिस और दारोगा से उनकी मुलाकात नयी नहीं है। पुलिस से डरने वाले जीव वे नहीं हैं।

दीपंकर भीड़ से बचकर आगे बढ़ना चाह रहा था। अचानक फोंटा ने उसे दूर से बुलाया।

फोंटा ने कहा — अरे, दीपू आ गया है। अरे दीपू ....

दीपंकर भीड़ में धँसकर उसके पास गया।

— यहाँ क्या हुआ है ?

फोंटा बीड़ी पी रहा था। बोला — मालूम है, विन्ती ने क्या कर लिया है ?

विन्ती दी ! विन्ती दी ने क्या किया है ? क्या विन्ती दी मिल गयी है ?

फोंटा बोला — चल, अंदर चलकर देख ....

दीपंकर का हाथ पकड़कर फोंटा उसे आँगन की तरफ ले गया।

आँगन में जाकर दीपंकर खड़ा हुआ तो छाती फाड़कर निकलने वाली रुलाई मानो अँधेरे का हृदय चीरकर उसे ग्रसने दौड़ी। पास ही माँ विन्ती दी का सिर थामकर बैठी थी। एक ही दिन में विन्ती दी के बाल उलझकर-चिपककर जटा जैसे बन गये थे और जमीन पर लोट रहे थे। गले तक उसका शरीर चादर से ढँका था। स्थिर अचल निस्पन्द। मानो वह चित्त लेटी सो रही थी।

दीपंकर को देखते ही माँ रोने लगी।

फोंटा बोला — बेवकूफ लड़की है !

इतनी देर बाद दीपंकर होश में आया। उसने मुड़कर पूछा — कौन ?

— अरे, कहीं कुछ नहीं, चुपचाप जाकर गंगा में कूद पड़ी। हम लोगों को जरा भी पता नहीं चला।

छिटे और फोंटा को यह घटना बड़ी अस्वाभाविक लगी थी। विन्ती दी का आत्महत्या करना उनको बड़ा विचित्र लगा था। मानो उन लोगों को ऐसी आशा नहीं थी। लेकिन आश्चर्य है, उस दिन अँधेरे आँगन में विन्ती दी के नश्वर शरीर के सामने खड़े होकर दीपंकर को उसकी अपमृत्यु बड़ी साधारण और स्वाभाविक घटना लगी थी। वह बचपन से विन्ती दी को देख रहा था। फिर भी उसने मानो उसे नये सिरे से देखा। मानो नये सिरे से उसने उस लड़की को समझने की कोशिश की। जिन्दगी भर जो लड़की कुछ नहीं बोली, आज वही अचानक मुखर हो उठी। अब तक जो लड़की सबसे डरती आयी थी, आज मानो वही ढीठ हो गयी थी। निडर हो गयी थी। मानो यही उसके लिए स्वाभाविक था। इसीलिए वह अकेली चोरी से रात के अँधेरे में घर से निकली थी। शायद इसीलिए पथरपट्टी की अँधेरी गली में उसे रास्ता पहचानते में कोई कठिनाई नहीं हुई। शायद इसीलिए उसने वर्षा की उफनती गंगा की तरफ देखकर एक बार भी आगा-पीछा नहीं किया। अमावस का अंधकार जिस तरह अनंत ज्योतिर्लोक को प्रकाशित कर देता है, शायद उसी तरह निविड़तम

दुःख में उसकी आत्मा आनन्दलोक की ध्रुवदीप्ति देख सकी थी। शायद उसी को देख-कर उसका मन कह उठा था — समझ गयी हूँ, सब दुःखों का रहस्य मैं समझ गयी हूँ, अब मुझे कोई संशय या दुविधा नहीं है। सुखों और दुःखों के आखिरी छोर जहाँ मिलते हैं, वहीं पहुँचने पर मेरा हृदय अनन्त देवता का साक्षात्कार पा सकेगा। अमृत उनकी छाया है तो मृत्यु भी उन्हीं की छाया है। अब मैं उनके अलावा किसी की बात नहीं सोचूँगी, उनको छोड़ मुझे और किसी के पास आश्रय नहीं मिलेगा ....

शायद उसी के बाद गंगा की छाती पर एक आवाज हुई थी।

फिर डूबती-उतराती बिन्ती दी अपने अनन्त देवता के पास पहुँच गयी थी।

थाने से कई पुलिस कान्स्टेबिल आये। वे लोग बिन्ती दी को ले जायेंगे। अब उसके शव का परीक्षण-निरीक्षण होगा।

माँ रोने लगी। बोली — बेटे, उसको चीरना-फाड़ना मत . . .

छिटे बोला — नहीं दीदी, चीरेंगे-फाड़ेंगे नहीं, सिर्फ 'एग्जामिन' कर हमारी लाश हमें लौटा देंगे।

माँ को कौन समझायेगा कि पुलिस की भी एक जिम्मेदारी है; एक फर्ज है। कोई बिन्ती दी को जहर देकर भी तो गंगा में फेंक सकता है! दीपंकर ने पास जाकर धीरे-धीरे माँ को उठाया। कहा — कमरे में चलो माँ, अब उसके बारे में सोचकर क्या करोगी! जो होना था, सो हो चुका।

शायद माँ समझ गयी। माँ ने दीपंकर से ज्यादा देखा है। मृत्युओं और दुःखों के कितने समुद्रों को पार करके ही तो जीवन पूर्ण होता है! अनादि काल से संसार में यह महोत्सव शुरू हुआ है और हम निमंत्रित के समान वहाँ आकर खड़े हैं। सुख-दुःख और आनन्द-वेदना सब उस महोत्सव के अंग हैं। जीवन के उस महोत्सव में सम्मिलित होकर हम अचिंतनीय, अनिर्वचनीय चेतना के विस्मय के विचित्र स्वादों और रूपों से कितनी बार मतवाले हो उठते हैं, इसका कोई ठिकाना नहीं है!

पिछली रात माँ सो नहीं सकी थी। सवेरे से उसने कुछ नहीं खाया था। फिर शाम से यह विपत्ति शुरू हो गयी है। फिर भी एक समय ऐसा आया जब मकान खामोश हो गया।

माँ के कमरे से अपने कमरे में आकर भी दीपंकर सो न सका। बिन्ती दी की अपमृत्यु, लक्ष्मी दी का अधःपतन और सती का नहीं हैं, सिर्फ उपलक्ष्य है। मानो ये सब दीपंकर के जीवन-पथ के जंगल हैं। इनको पथ के किनारे ही छोड़ देना पड़ता है, पथ के समाधि बनती है और पथ की धूल में इनकी परिसमाप्ति होती है!

दूसरे दिन दीपंकर ने किसी को एक न सु

वह खुद टैक्सी बुला लाया। माँ को लाकर

यहाँ रहने पर तुम जिंदा नहीं रहोगी माँ, यहाँ

माँ ने भी अब कोई आपत्ति नहीं की।

छिटे आया, फोंटा आया, लेकिन वे भी बिन्ती दी के मरने के बाद मुरझा गये थे।

उन लोगों ने दीपंकर से कहा — जायेगा ? तू सचमुच जायेगा ?

दीपंकर बोला — अब तुम लोग न रोको, अब यहाँ रहने पर माँ जिंदा नहीं रहेगी।

लेकिन इस मकान को छोड़कर जाना क्या इतना आसान है ! ये बातें कहते हुए दीपंकर का गला भर आया। आज दीपंकर को रोकनेवाला कोई नहीं है। छिटे और फोंटा ने पहले एक बार उसे रोका था, लेकिन आज वे भी न जाने कैसे हो गये हैं। आज वे भी रोक नहीं पा रहे हैं। दीपंकर अपने मन में सोचने लगा कि अगर वे रोकते तभी ठीक रहता। वे जरा भी कहते तो दीपंकर वहीं रह जाता। बचपन से इतने बड़े होने तक की स्मृति इस मकान से लिपटी हुई है न !

दीपंकर कहने लगा — मैंने तो यहीं रहने का निश्चय किया था, लेकिन अब कैसे रहा जा सकता है, तुम्हीं बताओ।

अरे ! छिटे या फोंटा कोई कुछ नहीं कह रहा है। उस बार की तरह वे गाड़ी से खींचकर नहीं उतार रहे हैं ! क्यों वे मना नहीं कर रहे हैं ? क्यों वे नहीं कह रहे हैं कि जाकर क्या होगा ? यहीं रह जाओ। रहते-रहते सब बरदाश्त हो जायेगा। नये मुहल्ले और नयी जगह जाकर अच्छा नहीं लगेगा। वहाँ से गंगा दूर होगी। इसलिए वहाँ जाने में कोई फायदा नहीं है।

दीपंकर बोला — पुलिस क्या कहती है, वह मैं यहाँ आऊँगा तो मालूम हो जायेगा। अघोर नाना के श्राद्ध में भी हम आयेंगे, इसलिए तुम लोग कुछ मत सोचो।

इतनी देर बाद माँ बोली — मैं चन्नूनी से नहीं मिल सकी, तुम लोग उससे ... देना कि हम लोग चले गये हैं।

फिर भी कोई कुछ नहीं कह रहा है। छिटे और फोंटा ने उस बार दीपंकर को जबर्दस्ती रोका था, लेकिन इस बार मानो वे मन ही मन चाह रहे हैं कि दीपंकर चला जाय। दीपंकर यहाँ से दूर हो जाय ! आश्चर्य है ! संसार में शायद ऐसा ही होता है। शायद यही स्वाभाविक है ! दीपंकर को लगा कि वे उसे भगा रहे हैं। वे गरदन पकड़ कर उसे घर से निकाल रहे हैं। वे एक बार कहें, सिर्फ एक बार दीपंकर से रहने के लिए कहें। फिर दीपंकर नहीं जायेगा। फिर उसे बसी-बसायी गृहस्थी छोड़कर नयी जगह गृहस्थी बसानी नहीं पड़ेगी। कम से कम वे लोग यह कहें तो। वे लोग यही कहें कि जाने पर तुम लोगों को कष्ट होगा !

— क्या कहा ?

दीपंकर को लगा कि उन लोगों ने कुछ कहा !

छिटे बोला — नहीं, कुछ नहीं।

दीपंकर बोला — तो चलूँ ?

उसके बाद पंजाबी टैक्सी ड्राइवर ने गाड़ी चला दी। मुहल्ले के एक-दो लोग उतने सबेरे बाहर खड़े उनको देख रहे थे। उन लोगों ने भी कुछ नहीं कहा! उन सबकी आँखों के सामने स्नेह-प्रीति के सारे बंधन तोड़कर दीपंकर चला गया!

याद है, बाद में गांगुली बाबू ने सुनकर पूछा था — क्यों? आपको क्यों तकलीफ हुई ?

दीपंकर ने कहा था — पता नहीं क्यों मुझे ऐसा लगा कि उन लोगों ने मुझे भगा दिया! अगर एक बार भी कोई:कहता तो मैं टैक्सी से उतर जाता और उसी मकान में रहता। फिर मैं कहीं नहीं जाता ....

आश्चर्य है! दीपंकर ऐसा ही है। जहाँ भी कोई सम्पर्क बन जाता है, वहीं वह उसे चिरस्थायी बनाना चाहता है। ऐसा न कर पाने पर उसके मन में टीस होती है, दर्द होता है। लेकिन कोई उस कष्ट को समझ नहीं सकता। सब यही समझते हैं कि यह दीपंकर का ढोंग है। यह भी एक तरह का मिथ्याचार है।

दीपंकर बोला — लेकिन देखिए, इतने दिन हो गये, एक दिन भी मैं उस मकान में नहीं गया। आखिर विन्ती दी का क्या हुआ और अघोर नाना का श्राद्ध कैसे हुआ, यह भी देखने नहीं गया।

छिटे खुद दीपंकर को उसके नये पते पर न्योता देने आया था। उसने कहा था — आना जरूर हम लोगों ने बड़ा अच्छा इंतजाम किया है। सात सौ लोग खायेंगे दीदी को लेकर आना ....

छिटे और फोंटा दोनों एक प्राइवेट गाड़ी किराये पर लेकर घर-घर न्योता देने निकले थे।

फोंटा बोला — मुल्ला के चौक में दही का आर्डर दिया गया है। दत्तपुकुर से छेना आ रहा है। सोमवार को बिरादरी वालों को खिलाया जायेगा। उसके लिए बारासत से तीन मन रोहू मछली आयेगी। रोहू मछली का कलिया और खसी का सालन बनेगा। कैसा रहेगा ?

छिटे बोला — श्राद्ध के दिन छेने का और बेसन के बड़े की तरकारी बनेगी दही, संदेश और रबड़ी रहेगी। उसके बाद एक-एक लंगड़ा आम ठीक रहेगा न ?

दीपंकर ने इसका भी जवाब नहीं दिया।

छिटे बोला — क्यों रे, तू कुछ बोल नहीं रहा है? बता न आइटम कैसे हैं ?

दीपंकर बोला — अब मैं क्या बोलूँ सब कुछ बढ़िया ही है।

छिटे बोला — सब यही 'कह रहे हैं कि इतना खर्च करने की क्या जरूरत थी ?

दीपंकर बोला — हाँ, मैं भी तुम लोगों से यही कहना चाहता था।

छिटे बोला — नहीं रे, तू नहीं जानता। कहने के लिए सब साले यही कहेंगे, लेकिन कोई कमी होगी तो पीठ पीछे बदनामी भी करेंगे। कहेंगे — दोनों नातियों ने नाना के श्राद्ध में एक पैसा खर्च नहीं किया। इन साले शरीफ लोगों को मैंने खूब देखा है। जानता है? इन लोगों से छोटे लोग अच्छे हैं। ये खायेंगे तो तारीफ भी करेंगे!

दीपंकर ने पूछा — उस दिन विन्ती दी का क्या हुआ?

— होगा क्या, तू तो गया नहीं, मुझको ही सब कुछ करना पड़ा। रुपया फेंका तो सब ठीक हो गया!

— कैसा रुपया? रुपया क्यों?

छिटे बोला — रुपया नहीं लगेगा, क्या कहता है तू? रुपया न मिलने पर पुलिस वाले हमें लाश क्यों देते?

दीपंकर को बड़ा आश्चर्य हुआ। इसमें भी रुपया? जिंदा रहने पर भी रुपया और मरने पर भी रुपया? लॉक गेट पर लाश मिली थी। विन्ती दी बहती हुई चेतला नाले के लॉक गेट में जाकर फँस गयी थी। वहीं पुलिस को विन्ती दी का पता चला। साड़ी पानी पर उतराने लगी थी। जो लोग तड़के टहलने निकलते हैं, उन्हीं की निगाह उसपर पड़ी थी। न जाने पानी में क्या उतरा रहा है। फिर देखा तो उनको शक हुआ। किसी औरत की साड़ी क्यों पानी में उतरा रही है? फिर वहाँ देखनेवालों की भीड़ लग गयी। उन्हीं लोगों ने अलीपुर थाने में खबर की। पुलिस ने डोम बुलाकर लाश निकलवायी। उसके बाद पता लगाते-लगाते ईश्वर गांगुली लेन का पता मिल गया। वहाँ से एक लड़की के गायब होने की रिपोर्ट भवानीपुर थाने में लिखायी गयी थी। साफ केस है, कोई चक्कर नहीं है! फिर भी क्यों रुपया लगा?

छिटे बोला — पुलिसवाले यह क्यों सुनेंगे? आखिर उनके आगे पाँच रुपये फेंके और सब काम बन गया। फिर उस लाश को केवड़ातल्ला में जला आया।

छिटे ने कितनी आसानी से यह सब कहा। वह बोला — अब वह सब लेकर मैं नहीं सोचता। भाग में डाँड़ भरना लिखा था, सो भरा, उसे कौन रोक सकता था?

उसके बाद जरा रुककर छिटे बोला — डाँड़ क्या यही पहली बार भरा है, जिंदगी भर भरता रहा। इसीलिए मैं कांग्रेस का मेम्बर बन गया हूँ।

— अरे! तुम कांग्रेस के मेम्बर बन गये हो?

छिटे दाँत निकालकर हँसने लगा। वह बोला — सिर्फ मैं ही नहीं, फोंटा भी बना है। तेरे मास्टर प्राणमथ बाबू के पास गया और चार आने चंदा देकर जय माँ काली कहकर मेम्बर बन गया ....

दीपंकर बोला — अब तो जेल जाना पड़ेगा?

— जाऊँगा, जेल भी जाऊँगा। जेल जाने से छिटे और फोंटा पीछे नहीं हटते। जेल तो हम ऐसे भी जाते हैं, अब वैसे भी चले जायेंगे।

— लेकिन कांग्रेस का मेम्बर बनकर तुम्हें क्या फायदा होगा?

छिटे बोला — देख न, अपने पल्ले से पैसा खर्च कर घर में बैठा माल खिलाऊँगा, उसमें भी घूस देनी पड़ेगी ! क्या, हम कैसे राज में रह रहे हैं। साला स्वराज हो जाने पर कम से कम घूस तो नहीं देनी पड़ेगी। हम लोग सुभाष बोस के साथ एक हवालात में रहे हैं। जे० एम० सेनगुप्त के दलवाले चाहे जो कहें, सुभाष बोस आदमी यार सच्चा है ! स्वराज होने पर कम से कम घूस देने से तो हम बच जायेंगे।

बात करने से छिटे को देर हो रही है। अचानक उसे ध्यान हुआ। वह बोला — अच्छा चला, कई जगह जाना है। हाँ, तू जरूर आना, दीदी को भी ले आना ....

छिटे चलने के लिए उठा। मकान से निकलकर उसने इधर-उधर देखा फिर पूछा — तू इस मकान का कितना किराया देता है ? बीस रुपये ?

दीपंकर बोला — हाँ।

छिटे बोला — बीस रुपये ! किराया थोड़ा ज्यादा है। खैर, स्वराज हो जाने पर हम इस मकान का किराया दस रुपये कर देंगे। ये साले अंग्रेज जब तक नहीं जाते, भले लोग आराम से नहीं रह सकते। अच्छा, चला . . .

छिटे और फोटा गाड़ी में बैठ गये !

शायद दीपंकर अघोर नाना के श्राद्ध में जाता। जाने की इच्छा भी थी। बहुत दिनों का रिश्ता था। अघोर नाना ने बहुत कुछ दिया था। कहना चाहिए कि वे न होते तो दीपंकर खा-पहनकर बड़ा नहीं हो सकता था। शायद दो महीने की उम्र में ही उसकी जीवन-लीला समाप्त हो जाती। अघोर नाना के मन के कोने में जो भी थोड़ा-सा स्नेह था, वह दीपंकर को ही मिला था। उसमें और किसी का हिस्सा नहीं था। इसलिए कम से कम अघोर नाना की आत्मा की सद्‌गति के लिए उनके श्राद्ध में जाना चाहता था। लेकिन सबेरे ही सब गड़बड़ हो गया।

रोजाना सबेरे उठकर दीपंकर सब्जी लाने जाता था, उसके बाद भात खाकर वह दफ्तर चल देता था ! छोटा-सा परिवार। कहना चाहिए कि बस दो प्राणियों का ! ईश्वर गांगुली लेन से आने के बाद माँ एकदम बदल गयी थी। न जाने वह कैसी गुमसुम रहने लगी थी। माँ के मन में न जाने कितनी कल्पना थी, न जाने उसे कितनी साध थी। कितने दिन से उसे आकांक्षा थी कि बेटा किराये पर मकान लेगा और वह उस घर की मालकिन बनेगी। दूसरे के घर खाना पकाने से वह बच जायेगी। उसने सोचा था कि इसी में उसे स्वर्ग-सुख मिल जायेगा। शायद इसी से उसका सारा कष्ट दूर हो जायेगा। लेकिन दीपंकर माँ को देखकर आश्चर्य में पड़ गया। माँ अकेली बैठकर न जाने चुपचाप क्या सोचा करती है। माँ मानो अपने जीवन के बोझ से दिनों दिन दबती जा रही है।

दीपंकर बचपन में जिस तरह पूछा करता था उसी तरह आज भी दफ्तर लौटकर पूछता है — माँ, तुम्हें क्या हुआ है ?

माँ कहती है — कुछ तो नहीं !

— फिर ? क्या यह मुहल्ला तुम्हें अच्छा नहीं लग रहा है ?

— क्यों नहीं अच्छा लगेगा ?

पूरब तरफ रेल लाइन के उस पार जलकुम्भियों से भरे कई तालाब हैं। उनके आसपास कुछ झोपड़ियाँ हैं। बगल में ही रेलवे गुड्स शेड है। वैगनों से यार्ड में माल उतारा जाता है। वहाँ से शेड में माल रखा जाता है। पूरब तरफ के बरामदे में खड़े होने पर रेलवे का काम-काज साफ दिखाई पड़ता है। इतने दिन दीपंकर ने रेलवे में नौकरी की, लेकिन अपनी आँखों से रेलगाड़ी देखने का उसे ज्यादा मौका नहीं मिला। माँ को बड़ी इच्छा थी कि बेटा रेलवे में नौकरी करेगा तो बेटे के पास से तीर्थभ्रमण करेगी। काशी, गया और वृन्दावन जायेगी। इतने दिन माँ अघोर नाना के कारण कहीं जा नहीं सकी। अघोर नाना को वह किसके जिम्मे छोड़कर जाती ! विन्ती दी भी किसके पास रहती ! लेकिन अब ? अब तो कोई बंधन नहीं है, अब तो कोई रोकने वाला नहीं है।

— एक बार कहीं घूम आओगी माँ ? तुम तो तीर्थभ्रमण की बात बहुत करती थी ?

माँ कहती है — नहीं बेटा, मुझे किसी तीरथ की जरूरत नहीं है। तू ही मेरा तीरथ है, तू ही मेरी काशी और गया है।

आश्चर्य है ! माँ अघोर नाना के घर जब खाना पकाती थी तब कितनी बार इसके लिए शिकवा-शिकायत करती थी। अब मैं जिंदगी भर खाना नहीं पका सकती ! माँ रोज चन्नूनी से यही कहती थी। लेकिन आज भी अपने हाथ से खाना पकाने में माँ एकदम नहीं थकती।

दीपंकर कहता है — माँ, कोई आदमी रख लिया जाय, वही खाना पकायेगा और तुम अपना जप-तप और पूजापाठ लेकर रहोगी ....

माँ कहती है —नहीं बेटा, खाना पकाने में मुझे कोई तकलीफ नहीं है। ....

— लेकिन इसी तरह क्या तुम जिन्दगी भर खाना पकाती रहोगी ?

माँ कहती है — मेरे मरने पर तू कोई रसोइया रख लेना ....

अघोर नाना और विन्ती दी के मरने के बाद :न जाने माँ कैसी हो गयी है। याने, इस मकान में आने के बाद ही माँ एकदम बदल गयी है। सवेरे ही नल में पानी आता है और उतने ही सवेरे माँ नहा लेती है। उसके बाद चूल्हा जलाकर पहले की तरह माँ खाना पकाने लग जाती है। दीपंकर नौकर को लेकर बाजार से सब्जी लाने जाता है। नया नौकर छोटा लड़का है। मेदिनीपुर या कांथि में कहीं उसका घर है।

दीपंकर बुलाता है — काशी।

काशी सामने आकर खड़ा होता है।

दीपंकर पूछता है — तेरा असली नाम क्या है रे ? काशीनाथ, या काशीश्वर,

— फिर ? क्या यह मुहल्ला तुम्हें अच्छा नहीं लग रहा है,? जाता ? दीपंकर को

— क्यों नहीं अच्छा लगेगा ?

पूरब तरफ रेल लाइन के उस पार जलकुम्भियों से काम के लिए है ? बाबू के आसपास कुछ झोपड़ियाँ हैं। बगल में ही रेलवे ग लिए बहुत बड़ा पेट है ? माल उतारा जाता है। वहाँ से शेड में माल रखा ब्रुश उठाकर दीपंकर के जूते पालिश में खड़े होने पर रेलवे का काम-काज साफ

ने रेलवे में नौकरी की, लेकिन अपनी आँखों को जरा समझा दे। समझाकर कहे कि नहीं मिला। माँ को बड़ी इच्छा थी कि म की जरूरत है, माँ, वह बच्चा है, उसका भी से तीर्थभ्रमण करेगी। काशी, गया भी वैसा ही अनाथ है, जैसा कभी मैं था।

नाना के कारण कहीं जा नहीं पंकर रुक गया। रहने दो। इतने दिन बाद माँ को कुछ जाती ! बिन्ती दी भी किससे कम एक जने पर तो मालिक बनकर हुक्म चलाने का मौका है, अब तो कोई रोकने में समझाने पर भी माँ समझेगी नहीं। जिन्दगी भर वह दूसरों

— एक बा है। दूसरों का मिजाज देखकर उसे हर काम करना पड़ा है। अब करती थी ? द उसे दूसरों की नौकरी से छुटकारा मिला है तो वह काशी को थोड़ा

माँ हूं तो डाँटा करे। दीपंकर आँख और कान बंद कर कैसे रह सकता है। लेकिन मेरा तीर्थ की हर चीज की तरफ आँख और कान खोल रखने की जिसकी आदत हो, वह त यह सब देखकर चुप रह सकता है !

दीपंकर ने काशी को अलग बुलाकर उससे कहा — क्यों रे काशी, तुझे तक-लीफ हो रही है ?

—नहीं बाबू, तकलीफ क्यों होगी ?

काशी तकलीफ समझ नहीं सकता। दीपंकर की तरह उसका मन संवेदनशील नहीं है, शायद इसीलिए उसका कष्ट-बोध उतना तीव्र नहीं है। लेकिन कष्ट तो कष्ट ही है ! उसका बोध हो, चाहे न हो। काशी अगर जाड़े में ठिठुरता तो दीपंकर को ठंड लगने लगती, काशी अगर बारिश में भीगता तो दीपंकर स्वयं भी तर होने लगता काशी का कष्ट देखने पर दीपंकर को भी कष्ट होने लगता। काशी के लिए न जाने क्यों दीपंकर का मन दया से भर उठता। वह चोरी से बनियाइन खरीदकर लाता और काशी को देता। कहता — ले, इसे पहन ले।

दीपंकर धीरे से उससे कहता — माँ से मत कहना कि यह मैंने तुझे दी है।

फिर काशी को कमरे में ले जाकर दीपंकर कहता — सुन एक बात ....

काशी समझ नहीं पाता कि दादाबाबू क्या कहेगा। चुपचाप पास आकर वह खड़ा हो जाता। शायद वह थोड़ा डरता भी रहा हो।

दीपंकर कहता — देख, माँ अगर तुझे डाँटती है तो तू बुरा मत मानना। माँ की उम्र हो गयी है, माँ बूढ़ी हो गयी है, अगर वह थोड़ा डाँटे भी तो तेरा क्या बिग-

ड़ता है ?

काशी सिर हिला देता।

—और देख, माँ अगर तुझे पेट भर खाने को नहीं देती तो तू मुझसे [illegible]
समझ गया ? मैं तुझे पैसे दूँगा, तू दुकान से खा लेना। समझ गया ? [illegible]
मेरी बात ?

काशी आश्वासन पाकर चला जाता। लेकिन दीपंकर को [illegible]
भी स्वार्थपरता है। एक तरह की स्वार्थपरता! काशी का भला [illegible]
है। असल में दीपंकर अपने ही स्वार्थ में काशी को खुश करना चाहता है। [illegible]
जाने पर उसी का नुकसान है! उसी की माँ का नुकसान है। [illegible]
दीपंकर को खुद दुकान जाना पड़ेगा और सब्जी के लिए [illegible]
काशी का भला चाहता है, यानी स्वयं अपना भला ? वह [illegible]
इसीलिए वह काशी को इतना प्यार दिखाता है। प्यार [illegible]
असल में वह स्वयं अच्छा नहीं है—स्वार्थी, [illegible]
सिद्धि के लिए वह काशी के आगे भला बनता है।

यह सब सोचकर दीपंकर न जाने कैसा [illegible]
थोड़ी देर निस्तेज-सा बैठा रहा। फिर कई दिन [illegible]
समय वह यही सोचता है कि वह साफ कपड़े पहनकर [illegible]
असल में है वह नीच, कमीना और जानवर!

* * *

उसी दिन सवेरे [illegible]
सामने रुकी।

काशी ने [illegible]
रहते हैं।

लेकिन [illegible]
तैयार है। [illegible]

बुलावा आता है। मिस्टर घोषाल जैसा आदमी भी परेशान-सा भागता फिरता है। दिल्ली से कोई-न-कोई जरूरी चिट्ठी आती है और दफ्तर भर में तहलका मच जाता है। नया साइडिंग कहाँ बनेगा और कहाँ नब्बे पौंड की रेललाइन उखाड़कर एक सौ बीस पौंड की बैठेगी, उसी की जल्दीबाजी है। जरा भी देर होने से काम नहीं चलेगा। मिस माइकेल का काम भी बढ़ गया है। डिस्ट्रिक्ट इंजीनियर, चीफ इंजीनियर, ट्रैफिक सुपरिंटेंडेंट वगैरह की मीटिंग होती है। उसके बाद दो-तीन दिनों की लगातार कान्फ्रेंस के बाद चिट्ठी ड्राफ्ट होती है। लेकिन एक झंझट खत्म होते न होते दूसरी आ जाती है। तब फिर मीटिंग और कान्फ्रेंस शुरू होती है!

मीटिंग में कोई बात उठती है तो रॉबिन्सन साहब कहता है — ऑलराइट, सेन कैन डू इट।

सेन सब कर सकता है!

उसके बाद सेन पर सब काम लाद दिया जाता है। रोज डॉक को कितने वैगन हैंडओवर किया जाता है उसका स्टेटमेंट तैयार करना होगा। वह सेन तैयार करेगा। लास्ट इयर कितने वैगनों की डेलिवरी दी गयी है और इस साल इन छः महीनों में कितने की दी गयी, उसका पक्का हिसाब चाहिए। और वह भी एक दिन में।

चीफ इंजीनियर ने कहा — ट्रीट दिस ऐज मोस्ट अर्जेंट!

दीपंकर ने रामलिंगम बाबू को बुला भेजा। रामलिंगम बाबू बोला — यह काम आज कैसे होगा सर? तीन बजे हैं....

दीपंकर बोला — तो बताइए क्या करूँ, बोर्ड को कल ही जवाब भेजना होगा। दीपंकर के सामने रामलिंगम बाबू ने कुछ नहीं कहा। अपने सेक्शन में आकर उसने कहा — आज पाँच बजे कोई घर नहीं जा सकता। वीरेश बाबू, पंचानन बाबू, कालीपद बाबू, आप लोग यहाँ आइए।

— क्यों?

— सेन साहब का आर्डर है। यह स्टेटमेंट बनाकर ही सब जायेंगे।

सब झुंझला उठे। इसका मतलब? पाँच बज कर तेइस मिनट पर पाँशकुड़ा लोकल छूट जाने के बाद हम किस ट्रेन से घर लौटेंगे? फिर छः बजकर छप्पन मिनट पर ट्रेन मिलेगी। उस ट्रेन से जाने पर घर लौटते-लौटते रात नौ बज जायेंगे। उसके बाद फालतू खर्च नहीं है? घरवाले नहीं सोचेंगे? दफ्तर में नौकरी करने आये हैं तो क्या साहबों ने हम लोगों को खरीद लिया है? तीन बजे डेढ़ साल पुराना स्टेटमेंट तैयार करना होगा? साहबों को क्या है? उनको घर की तरफ देखना नहीं पड़ता, उनको बाजार दौड़ना नहीं पड़ता, वे लोग हम लोगों की तकलीफ कैसे समझ सकते हैं!

— फिर आप लोग सेन साहब से जाकर कहिए। मैं क्या करूँगा?

— हाँ, अभी जाता हूँ, अभी जाकर उनसे कहता हूँ।

लेकिन आश्चर्य है। कोई सेन साहब के पास नहीं जाता। साहब के सामने

जाकर कुछ कहने की हिम्मत किसी में नहीं है। सब सिर झुकाकर स्टेटमेंट बनाने लग जाते हैं। सब काम छोड़कर सेक्शन भर के लोग स्टेटमेंट बनाने बैठ जाते हैं। डेढ़ साल पुरानी फाइलें निकाली जाती हैं। फाइलों पर धूल जम गयी है। धूल झाड़ते-झाड़ते बाबू लोगों के कुर्ता-धोती-शर्ट गंदे हो जाते हैं।

उधर से क्रॉफोर्ड साहब ताकीद करता है — इज़ इट रेडी मेन ? क्यों इतनी देर हो रही है ?

साहब लोगों के कमरे में टी आती है, कॉफी आती है, स्नैक्स आते हैं और मीटिंग होती है। उसके बाद एक ऐसा समय आता है, जब किसी में धीरज नहीं रहता। साहब लोग चले जाते हैं। दूसरे दिन आने पर अर्ली आवर्स में सब तैयार मिल जाना चाहिए। उस वक्त मिल जाने पर काम चलेगा। सेक्शन में पूरी तेजी से काम चल रहा है। शाम के छः बजे, सात बजे और रात आठ बज गये।

रामलिंगम बाबू कमरे में आया। उसके हाथ में दस रुपये का नोट है।

वह बोला — सेन साहब ने आप लोगों को मिठाई खाने के लिए दिया है। लीजिए ....

इतना सारा गुस्सा और इतना झल्लाना, दस रुपये की घूस मिलते ही पानी-पानी हो गया। बाबू लोगों के चेहरे पर मुस्कराहट दिखाई पड़ी। रात आठ बजे चपरासी उस दस रुपये से समोसा, कचौड़ी, पपड़ी, रसगुल्ला और चाय ले आया। बाबू लोग गपागप उस घूस को मुँह में ठूँसने लगे। दस रुपये की घूस देकर दीपंकर ने सेक्शन के बाबुओं को खरीद लिया। देखते-ही-देखते दीपंकर बड़ा भला आदमी बन गया। देखते-ही-देखते वह देवता हो गया। रात नौ बजे वही स्टेटमेंट बनाकर बाबू लोग उछलते-कूदते घर चले गये। लेकिन जिस स्टेटमेंट के लिए इतना समोसा-चाय-कॉफी-पपड़ी-रसगुल्ला खर्च हुआ, उसी की फिर जरूरत नहीं रही। दूसरे ही दिन बोर्ड से टेलीग्राम आया प्रोजेक्ट कैन्सिल्ड ! लेटर फालोज़

इसी तरह रोज एक-न-एक झमेला लगा रहता है। लगता है कि अब नहीं चल सकता — नौकरी शायद नहीं रहेगी। उसके बाद फिर सब ठंडा पड़ जाता है। फिर धीमी रफ्तार का काम चलता है। फिर हृदय चपरासी, बकरे का चाप और पुदीने लेकर दफ्तर के हर कमरे में फेरी करता है। फिर रॉबिन्सन साहब का कुत्ता बीमार पड़ता है। फिर रिकार्ड सेक्शन से एक चिट्ठी ट्रांजिट सेक्शन पहुँचने में चौदह दिन लग जाते हैं। फिर सबको कमरे में बुलाया जाता है। फिर बोर्ड से जरूरी चिट्ठी आती है। फिर मीटिंग होती है, फिर कान्फ्रेंस बुलायी जाती है। फिर चाय-समोसे-कचौड़ी-रसगुल्ले की घूस देनी पड़ती है और फिर बाबू लोग खुश हो जाते हैं।

इसी तरह चला आ रहा है। शायद इसी तरह चलता रहेगा। फिर भी नया एजेंट आने के बाद दफ्तर [illegible] हाँक-पुकार होने लगी है।

उस दिन दीपंकर जल्दी दफ्तर जा रहा था। अचानक काशी ने आकर कहा —घोड़ागाड़ी से एक बाबू आया है।

—बाबू! कौन बाबू?

काशी बोला—साथ में औरत भी है।

तब तक वह सज्जन घोड़ागाड़ी का किराया दे चुका था। हावड़ा स्टेशन से कालीघाट तक का किराया तीन रुपये। कालीघाट में ईश्वर गांगुली लेन तक जाना पड़ा था। फिर वहां से पता लेकर यहां तक आना पड़ा है।

इस पर उस सज्जन से गाड़ीवान की तकरार शुरू हो गयी। वह सज्जन बोला—साढ़े तीन रुपये दे रहा हूं, फिर भी कम है? क्या मुझे गांव-देहात का आदमी समझ लिया है। लेना है तो ले लो, नहीं तो चले जाओ, अब मैं एक पैसा ज्यादा नहीं दूंगा।

गाड़ीवान ने कहा—पूरे चार रुपये दीजिए बाबू, नहीं तो मैं नहीं जाऊंगा। चार ही रुपये लूंगा। बहुत घूमना पड़ा है।

—यह तो अच्छा झमेला हुआ....

बगल में खड़ी लड़की की तरफ देखकर उस सज्जन ने कहा—अरी क्षीरी, तू जा। तू मकान के अन्दर जा और अपनी ताई से जाकर बोल कि गाड़ीवान बड़ा झमेला कर रहा है।

दीपंकर की मां आयी, आकर वह आश्चर्य में पड़ गयी! यह कौन है? ये दोनों कौन हैं।

लेकिन उस सज्जन ने दीपंकर की मां को देखते ही पहचान लिया और कहा —मुझे पहचान नहीं रही हो भाभी, मैं संतोष हूं...

संतोष! फिर भी मां पहचान नहीं पायी। उसने चेहरे पर घूंघट खींच लिया। उस सज्जन के बदन पर छींट की कमीज है, पांवों में डर्बी जूते और धोती उठी हुई। घुटनों तक धूल है। बगल में एक खूबसूरत लड़की खड़ी है। सिर पर चोटी लपेटकर जूड़ा बनाया गया है। माथे में नीली गिट़ की टिकुली। धारीदार साड़ी पहनी हुई। पांवों में आलता।

संतोष ने कहा—अरी क्षीरी, ताई को परनाम कर—परनाम करना भी तुझे सिखाना पड़ेगा?

—बस, बस, बिटिया....

मां ने उसकी ठुड्डी छूकर हाथ होंठों से लगाया और आशीर्वाद किया।

संतोष बोला—कुछ भी कहो भाभी, तुम्हारे कलकत्ते के गाड़ीवान सब बड़े बदमाश हैं। तीन रुपये में तै हुआ, मैं आठ आने बख्शिश दे रहा हूं, फिर भी खुश नहीं है।

फिर कमरे का बैग निकालकर संतोष ने पूरे चार रुपये ही दिये। उसके बाद

उसने कहा — अपने नौकर से कह दो भाभी, सामान उतार ले ....

सामान का मतलब है टीन का एक बक्सा, एक पक्का कोहड़ा और कई सूखे नारियल। काशी खड़ा ही था। उसने बक्सा और गठरी उतार ली।

मकान के अन्दर जाकर संतोष ने कहा — तुम मुझे नहीं पहचान पायीं भाभी ....

सचमुच माँ अब भी नहीं पहचान पायी।

संतोष बोला — बताओ तो मैं कौन हूँ ?

माँ बेवकूफ बनी देखती रही। संतोष बोला — यह आज की बात थोड़े है भाभी, तुम अगर सम्पर्क नहीं रखती तो क्या हुआ, हम क्यों नहीं रखेंगे ? इसलिए क्षीरी को साथ लिये रेलगाड़ी में बैठकर चला आया।

माँ बोली — तुम रसूलपुर के संतोष हो न ?

— अब देखो ! पहचानने में इतनी देर लग गयी। खैर, तुम पहचान गयी यही बहुत है।

माँ बोली — यही तुम्हारी लड़की है ?

संतोष बोला — लड़की नहीं भाभी, गले में फँसा काँटा है

— मेरी देवरानी कहाँ है ? देवरानी को नहीं ले आये ?

संतोष बोला — अब देवरानी कहाँ है भाभी। गले का काँटा यहाँ छोड़कर मुझे जलाने के लिए वह भागी है . .

— अरे ! तुमको मैंने कितना छोटा देखा था संतोष, कब तुमने शादी की और कब तुम्हारे लड़की हुई, मैं कुछ भी नहीं जान सकी।

संतोष बोला — समय भागा जा रहा है भाभी समय किसी के लिए रुका नहीं रहता ! खैर, मकान तुम्हारा बड़ा है भाभी, कम से कम कलकत्ते आने पर कहीं ठहरने का ठिकाना तो हो गया। बड़ा बुरा वक्त आ गया है। हाँ, यह तो बताओ भाभी, पानी कहाँ है, पाँव धो लूँ। कल रात घुटने भर कीचड़ पार कर रेलगाड़ी में बैठा था और पाँव धोने के लिए कहीं पानी नहीं मिला।

काशी ने पानी दिया। संतोष पाँव धोने लगा। उसने दोनों जूते भी धोये। फिर बेटी से कहा — अरी क्षीरी पाँव धोना है तो धो ले

दीपकर दफ्तर जाने के लिए कपड़े पहन रहा था। माँ उसके पास गयी तो उसने पूछा — ये कौन हैं माँ ?

माँ बोली — तू उनको नहीं पहचानेगा दीपू रसूलपुर से आये हैं। रिश्ते में मेरा देवर लगता है।

तब तक संतोष नीचे से पुकारने लगा था — ओ भाभी, तुम कहाँ ...

माँ बोली — अभी दीपू दफ्तर जा रहा है लाला, तुम बैठो ...

दीपकर बोला — माँ, तुम जाओ, मुझे कोई जल्दी ...

उनके खाने का इंतजाम करना होगा ....

माँ नीचे आयी तो संतोष बोला — यह कोंहड़ा मेरे घर का है। सोचा, घर का कोंहड़ा खाने में भाभी को अच्छा लगेगा। खाकर देखना भाभी, बहुत मीठा है, एकदम गुड़ जैसा। अरी क्षीरी, गट्ठर खोलकर कोंहड़ा निकाल दे बेटी ....

फिर थोड़ा सोचकर संतोष बोला — सोचा था, दो कोंहड़े लेता आऊँ भाभी, लेकिन लाना क्या हँसी-खेल है। घर से रेल स्टेशन कम दूर नहीं है। दो मील पैदल चलकर स्टेशन आना पड़ता है — तिस पर कीचड़ ....

माँ बोली — लड़की की शादी कहीं तय हुई ?

संतोष बोला — उसी के लिए तुम्हारे पास आया हूँ भाभी, अगर तुम्हारी मदद से कोई इन्तजाम हो जाय ....

— गाँव में कोई पात्र नहीं मिला ? वहाँ तो दत्त लोगों का खानदान बहुत बड़ा है। उनसे कहकर किसी अच्छे से लड़की की शादी क्यों नहीं कर दी ?

संतोष बोला — गाँव की बात मत करो भाभी, गाँव का नाम मत लो। अब गाँव पहले जैसा गाँव नहीं है। हाँ, कोई चारा नहीं है, इसलिए वहाँ पड़ा हूँ, नहीं तो वैसे गाँव के मुँह में झाड़ू ! वहाँ कोई किसी का भला नहीं देख सकता, वहाँ कोई किसी का नाम लेना पसंद नहीं करता, लड़की की शादी हो जाय तो मैं वहाँ से दूर ही रहूँगा — देख लेना भाभी ....

माँ बोली — दूर कहाँ रहोगे ?

— रहने के लिए क्या जगह की कमी है ? जहाँ मन होगा, पड़ा रहूँगा। मैं तो यही सबसे कहता हूँ। कहता हूँ कि एक सती लक्ष्मी को तुम लोगों ने गाँव में रहने नहीं दिया, इस गाँव का क्या भला होगा ? सब जहन्नुम में चला जायेगा — और वही हो रहा है।

माँ बोली — मेरी बात छोड़ो संतोष। मैंने जिन्दगी में कभी किसी का बुरा नहीं किया, किसी से एक बुरी बात भी नहीं कही, ऊपर भगवान हैं, उन्हीं के भरोसे चल रही हूँ ....

जरा रुककर माँ बोली — आज तो तुम रहोगे ?

संतोष बोला — तुम भी क्या कहती हो भाभी, नहीं रहूँगा तो कहाँ जाऊँगा ? रहने के लिए ही आया हूँ ....

माँ बोली — फिर नहा-धो लो, मैं तुम लोगों के लिए खाना बना लूँ ....

संतोष बोला — हाँ, हाँ, खाना बनाओ भाभी, थोड़ा ज्यादा बनाना, मैं भात जरा ज्यादा खाता हूँ, यह तो तुम जानती हो। हाँ, लाई है ?

— लाई ?

— हाँ, कल रात को निकला हूँ, उसके बाद पेट में कुछ पड़ा नहीं। मुझे भी दो, क्षीरी को भी दो ....

क्षीरी दरवाजे का चौखट पकड़कर चुपचाप खड़ी थी और बाप की बातें सुन रही थी। इतनी देर बाद वह बोली — मुझे मत दीजिए ताई, पिताजी को दीजिए ....

संतोष बोला — क्यों ? खा ले न, खाने में क्या हर्ज है ? रसूलपुर की लाई खायी है, अब कलकत्ते की लाई खाकर देख। देखेगी, कलकत्ते की लाई कितनी मीठी है।

दीपंकर सीढ़ी से उतर रहा था। सीढ़ी से उतरकर बरामदा पार कर सदर दरवाजे की तरफ जाना होगा। संतोष ने दीपंकर की तरफ देखा। कहा — यही *तुम्हारा लड़का है भाभी ?*

दीपंकर की माँ बोली — हाँ।

फिर माँ दीपंकर से बोली — दीपू, ये रिश्ते में तुम्हारे चाचाजी हैं, इनको प्रणाम करो ....

संतोष पाँव मोड़कर बैठा था। सुनते ही उसने दीपू की तरफ पाँव बढ़ा दिये।

दीपू ने *चाचाजी के धूलभरे पाँवों को छूकर हाथ सिर से लगाया। संतोष* बोला — वाह, तुम्हारा लड़का बड़ा अच्छा है भाभी। जब यह दो महीने का था, तब देखा था और आज देखा ....

माँ बोली — हाँ, आशीर्वाद दो लाला, उसे राजी-खुशी रखकर मैं जा सकूँ....

— वाह, भाभी, तुम्हारा बेटा बहुत अच्छा है। — फिर उसने दीपंकर से कहा — क्या नाम है तुम्हारा बेटा ?

माँ ने संतोष से कहा — याद है ? जमींदार के घर नाती पैदा हुआ था और उसका नाम दीपंकर रखा गया था। उसी के नाम पर मैंने अपने बेटे का नाम रखा *था दीपंकर। अब यह रेल की नौकरी कर रहा है ....*

— वाह, वाह, अभी कितनी तनख्वाह पा रहा है ?

संतोष ने पाँव समेट लिये। उसने फिर एक बार दीपंकर को सिर से पाँव तक देखा। गाँव से भगायी गयी भाभी का बेटा ऐसा हीरा निकलेगा, यह मानो संतोष चाचा सोच नहीं पाया था। सुना था, वह लड़का नौकरी करता है, किसी बाभन के घर खिदमत करके भाभी ने लड़के को पाला-पोसा है। उसी लड़के के बारे में पता लगाने संतोष आया है। लेकिन वह लड़का इतना लायक निकलेगा, यह रसूलपुर का संतोषविहारी मजुमदार कैसे जान सकता है।

—यह बड़ा अच्छा हुआ भाभी। मैं कितना परेशान हो रहा था। क्षीरी के लिए पात्र ढूँढने मैं कहाँ-कहाँ नहीं दौड़ा, इधर तुम्हारा लड़का है, यह मेरे दिमाग में आया ही नहीं। — फिर उसने दीपंकर से कहा — जाओ बेटा, दफ्तर जाओ। देर मत करो। नौकरी लक्ष्मी है। लक्ष्मी की कदर करनी पड़ती है। गाँववाले क्षीरी का भाग्य देखकर वाह-वाह करेंगे। गाँव में ऐसा दामाद किसी का नहीं हुआ भाभी ..

दीपंकर तव तक सदर दरवाजे से निकलकर सड़क पर आ गया ।

संतोष बोला — समझ गयी भाभी ? कहाँ गयी तुम ? अरी भाभी, देख तो क्षीरी, तेरी ताई किधर गयी ?

माँ तब तक रसोईघर में जाकर चूल्हे पर चावल चढ़ाने लगी थी ....

क्षीरी पर भरोसा किये बिना संतोष खुद रसोईघर के पास गया और बोला — भाभी, तुम कहाँ हो ? रसोईघर में हो क्या ?

— हाँ लाला, यहीं हूँ ....

संतोष बोला — मैंने तय कर लिया है भाभी — इसी लड़के को मैं दामाद बनाऊँगा ! ऐसा पात्र यहाँ पड़ा है और मैं क्षीरी की शादी के लिए परेशान हो रहा हूँ।

माँ रसोईघर से बोली — तुम नहा लो लाला, चहबच्चे में पानी है ।

— वह मैं नहा लूंगा, पहले लाई खा लूं । लाई खाता हुआ तेल लगाऊँगा । — अरी क्षीरी, क्षीरी, कहाँ गयी तू ? इधर आ । लाई खायेगी तो इधर आ — ले, आँचल फैला ....

सिर्फ लाई नहीं, लाई के साथ कसी हुई गरी और हरी मिर्च । उसके बाद नहाना, फिर खाना, फिर गप लड़ाना ।

संतोष बोला — ओफ ! इतने दिन बाद चिंता दूर हुई । समझ गयो भाभी, आज थोड़ा आराम से सो सकूंगा ।

फिर जरा रुककर वह बोला — समझ लो कि तुम्हारी भी परेशानी खत्म हो गयी भाभी । अब तुमको हाथ जलाकर खाना नहीं पकाना पड़ेगा, दीपू के दफ्तर जाने के लिए भात नहीं बनाना पड़ेगा । क्यों री क्षीरी, तुझसे नहीं होगा ? दीपू के दफ्तर जाने से पहले भात नहीं बना सकेगी ?

अब क्षीरी से रहा नहीं गया । वह बोली — पिताजी, आप चुप रहिए तो !

संतोष आश्चर्य में पड़ गया । बोला — क्यों री, तू क्या कह रही है ? मैं क्यों चुप रहूँ ? क्या ऐसा वर तुझे रसूलपुर में मिलेगा ? फिर तू कलकत्ते में रहेगी तो देखेगी कि यहाँ के पानी से तेरा रंग कैसा गोरा हो जाता है । बड़ी तपस्या करने पर तब किसी को मेरी भाभी जैसी सास मिलती है !

माँ बोली — ये सब बातें बाद में होंगी संतोष, आज तो तुम रहोगे ....

संतोष बोला — अब मैं कहाँ जाऊँगा भाभी, इसका कौन ठिकाना है ? लड़की की शादी करके मैं यहीं दामाद के पास पड़ा रहूँगा । क्या तुम्हारा बेटा मुझे दो-मुट्ठी खाने को नहीं देगा ?

दोपहर को इस नये मुहल्ले में शोर-शराबा जरा ज्यादा होता है । ईश्वर गांगुली लेन में इतना शोर नहीं होता था । घड़घड़ाती रेलगाड़ियाँ आती हैं —

सवारी और मालगाड़ियाँ। धुएँ से आसमान काला पड़ जाता है। आँगन में तार पर सूखने के लिए कपड़ा डालने पर उसमें कोयले का चूरा भर जाता है। उसी समय महरी बरतन मलने आती है। उसी समय फिर काशी कमरों में झाड़ू लगाता है। दीपंकर कब लौटेगा, इसका कोई ठीक नहीं रहता। नौकरी में तनख्वाह बढ़ जाने के बाद उसके घर आने में अक्सर देर हो जाती है। कभी रात के नौ बज जाते हैं तो कभी दस। माँ उतनी देर तक बेटे के लिए भात अगोरती बैठी रहती है। धीरे-धीरे मुहल्ले में खामोशी छा जाती है और तभी चारों तरफ मच्छर भनभनाने लगते हैं। उसी समय कोई रेलगाड़ी सीटी बजाती घड़घड़ाती हुई स्टेशन की तरफ आती है और पूरा मकान थरथराकर काँपने लगता है।

दोपहर को संतोष बिना कुछ बिछाये फर्श पर पड़ा खर्राटा लेता रहा। उसकी नाक से विचित्र खर्र-खर्र आवाज निकलती रही। काशी नौकर है और छोटा-सा लड़का, वह उस खर्राटे को सुनकर हँस पड़ा।

माँ ने उसको अच्छी तरह डाँट दिया। कहा—तू क्यों हँस रहा है रे? क्यों हँस रहा है? तेरी नाक आवाज नहीं करती? तू क्या एकदम महापुरुष होकर पैदा हुआ है?

क्षीरी संकोच में पड़कर बोली—पिताजी को जगा दूँ ताई?

—क्यों? क्यों जगायेगी उसे? कल रातभर वह सो नहीं सका, जरा उसे सो लेने दो।

क्षीरी बोली—नहीं, जोर-जोर से खर्राटा ले रहे हैं न?

—खर्राटा लेने दो न, आदमी बूढ़ा होने पर खर्राटा लेगा ही, उससे क्या हुआ! तुम भी जरा सो लो। तुम भी बिटिया, रात भर जागती आयी हो, थोड़ी देर सो लो....

—आप नहीं सोयेंगी ताई?

—अगर मेरे सोने पर ही तुम सोओगी तो मैं भी सो लूँगी। लेकिन मेरे सोने पर काम नहीं चलता बिटिया। अभी नल में पानी आयेगा, अगर उधर न देखूँगी तो रसोई के लिए पानी नहीं भरा जायेगा। महरी आकर लौट जायेगी। गृहस्थी का झमेला कुछ कम नहीं है।

कहती हुई माँ फर्श पर लेट गयी।

बोली—तुम वह चटाई खींच लो बिटिया, जमीन पर सोने से कपड़े गंदे हो जायेंगे।

लेकिन इसके पहले ही क्षीरी माँ की बगल में लेट गयी। माँ को लगा कि यह संतोष की लड़की नहीं, बिन्ती है। बिन्ती की तरह जल्दी परचने वाली है और उसी की तरह सटकर बगल में लेट गयी।

माँ बोली—तुम्हारा बढ़िया नाम क्या है बिटिया?

क्षीरी बोली — क्षीरोदा ....

— वड़ा अच्छा नाम है। क्या माँ ने रखा था ?

क्षीरी बोली — मैंने माँ को नहीं देखा ताई, होश सँभालने के वाद मैं पिताजी को ही देख रही हूँ।

लेटी-लेटी माँ को अचानक विन्ती की वातें याद आने लगीं। हाय रे! वह लड़की भी इसी तरह रात-दिन वगल में सटी रहती थी। शुरू-शुरू में गोद से उतरती न थी। न जाने उस पर कैसी ममता हो गयी थी! अगर अंत तक उस तरह वह अपनी जान न लेती तो क्या माँ उस मकान को छोड़ती ? लेकिन गजव की हिम्मत थी उसमें! जिस लड़की के मुँह से वात नहीं निकलती थी, उसी ने वैसी हिम्मत का काम कैसे किया, कौन वता सकता है ? यह सव सोचती हुई माँ लेटी रही। फिर उसे झपकी सी आ गयी। सवेरे उसे दो वार खाना पकाना पड़ा था, इसलिए वह थकी तो थी ही।

— ताई, ओ ताई!

उधर वाले वरामदे में संतोष की नाक अव भी जोर-जोर से आवाज कर ही थी। लग रहा था। कि मकान एकदम खाली-खाली नहीं है!

— ताई, ओ ताई!

माँ हड़वड़ाकर उठ वैठी। वोली — क्या है विटिया ? क्या हुआ ?

क्षीरी वोली — शायद कोई दरवाजे की कुंडी खटखटा रहा है, जाकर खोल दूँ ?

शायद महरी आयी है। माँ वोली — रुको, मैं देखती हूँ ....

एकाएक कैसी नींद आँखों में भर आयी थी! माँ को पता नहीं चला था कि कव वह सो गयी है। वालीगंज स्टेशन पर इतनी रेलगाड़ियाँ आती-जाती हैं कि और दिन माँ सो ही नहीं पाती। लेकिन आज वह नींद में एकदम वेहोश हो गयी थी। पाँच वजे तक वह वेखवर सोती रही थी।

वाहर वाला दरवाजा खोलते ही माँ एक कदम पीछे हट आयी। किसके घर का नौकर है।

— दीपंकर वावू हैं ?

— तुम कहाँ से आ रहे हो ?

उसने कहा — मैं प्रियनाथ मल्लिक रोड वाले घोष वावू के मकान में काम करता हूँ, दीपंकर वावू से मिलने आया था ....

लेकिन वावू तो नहीं हैं। वावू दफ्तर में हैं। क्या जरूरत है वता दो, वावू के आने पर वता दूँगी।

उस आदमी ने फिर पूछा — वावू दफ्तर से कव आयेंगे ?

— अरे, इसका कोई ठीक नहीं है। काम रहता है तो वावू रात के नौ या दस

बजे लौटता है। जैसा काम रहेगा, वैसी देर होगी। कितनी ही बार तो वह रात दस बजे के बाद भी दफ्तर से लौटा है। माँ खिड़की के पास सड़क की तरफ ताकती बैठी रहती हैं। इस सड़क पर लोग-बाग कम चलते हैं। दीया जलने के बाद इधर बहुत कम लोग आते हैं। यह कालीघाट नहीं है कि रात बारह बजे भी लगेगा कि अभी-अभी दीया जला है। बस, रेल इंजन की सों-सों और मालगाड़ी की शंटिंग की आवाज चौबीस घंटे यहाँ खामोशी तोड़ती रहती है।

काशी आया। छोटा-सा लड़का। वह कहीं मुहल्ले में घूमने गया था।

माँ ने पूछा — तू कहाँ गया था? दोपहर भर तू मारा-मारा फिरता रहेगा और कोई आकर कुंडी खटखटाने पर मैं आकर दरवाजा खोलूँगी। फिर तुझे तनख्वाह देकर रखने से क्या फायदा है बता?

वह आदमी अब भी खड़ा था। बोला — मैं जा रहा हूँ माँ, बाबू को आने पर बता दीजिएगा कि मैं प्रियनाथ मल्लिक रोड के घोष बाबू के मकान से आया था।

कहकर वह चला गया। उसके बाद माँ काशी के पीछे पड़ी। ऐसा नौकर मिला है कि न कोई काम न धाम, बस खाना और घूमना।

लेकिन थोड़ी ही देर बाद काम की फरमाइश हुई। काशी को सब्जी लाना पड़ेगा। आलू, बैंगन, परवल और इसी तरह की और दो-चार चीजें। घर में मेहमान आये हैं। उन्हीं के लिए इन चीजों की जरूरत पड़ी है। थैला लेकर बाहर निकलते ही उस आदमी से भेंट हो गयी। स्टेशन का फाटक पार कर उधर जाना होगा। उस पार कसबा है। वह आदमी ट्राम के लिए खड़ा है। काशी ही उसके पास गया और बोला कल सवेरे जल्दी आ जाना, बाबू के दफ्तर जाने से पहले ....

— बाबू कब दफ्तर जाते हैं?

काशी बोला — सवेरे नौ बजे से पहले। नौ बजने से पहले आने पर बाबू से भेंट होगी।

— और शाम को?

काशी बोला — शाम को कोई ठीक नहीं रहता, कभी बाबू के आने में रात के नौ बज जाते हैं कभी दस ....

इतना कहकर काशी जाने लगा। बालीगंज लाइन में अब कोई गाड़ी नहीं है। लोहेवाला फाटक खुला है। उस पार बाजार है। अचानक भीड़ में से किसी ने पुकारा — काशी।

अपना नाम सुनकर काशी ने इधर-उधर देखा। उसके बाद अचानक दादाबाबू को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गया। दीपंकर को याद है कि उस दिन उस तरह बालीगंज स्टेशन पर वह न आता तो काशी से भेंट न होती तो शंभु से बात करने का उसे मौका नहीं मिलता।

दीपंकर ने पूछा — अभी तू कहाँ जा रहा है? वे सब अभी तक हैं? रसूलपुर

से जो दोनों आये थे ?

इसका जवाब न देकर काशी बोला — दादाबाबू, आपको एक आदमी ढूंढ़ने आया था।

— कौन आया था ?

काशी बोला — प्रियनाथ मल्लिक रोड के घोष बाबू के मकान से एक आदमी आया था।

— प्रियनाथ मल्लिक रोड के घोष बाबू के मकान से ? कौन ? क्या कहने आया था ? कब आया था ? कौन था ? क्या नाम है उसका ? देखने में कैसा है ?

एक साथ इतने सवालों की भीड़ में दीपंकर मानो बेचैन हो उठा।

काशी बोला — रुकिए, मैं बुला लाता हूँ ....

शायद वह आदमी उस समय ट्राम का इंतजार कर रहा था। काशी बड़ी तेजी से दौड़ा। दीपंकर के मन में सवालों की आँधी चलती रही। क्या सती ने किसी को भेजा है ? लेकिन सती को उसके मकान का पता कैसे मालूम हुआ ? शायद उसने ईश्वर गांगुली लेन में छिटे या फोंटा से पता पूछ लिया हो ! लेकिन सती खुद क्यों नहीं आयी ? अचानक ऐसी क्या जरूरत पड़ गयी कि उसने आदमी भेजा ! उसी दिन दीपंकर को अच्छा सबक मिल गया था। उसकी सारी आशा और कामना की समाधि हो गयी थी ! सती की सास ने ही उसे उस घर में आने से मना कर दिया था। इस हालत में वह उस मकान में कैसे जा सकता है ? कैसे वह सती से मिलने की हिम्मत कर सकता है ? सती तो पागल है ! खुद उसी की सास ने कहा है कि वह पागल है। उसके बाद कितने दिन दीपंकर दफ्तर जाकर सोचता रहा है कि सती शायद फिर उस दिन की तरह दफ्तर में आ जायेगी। कितनी बार उसने सती को टेलीफोन करने की बात सोची थी। उसने टेलीफोन करके सती को उस दिन की सारी बातें बता देना चाहा था। उसने चाहा था कि सती की सास ने उसे कैसी मीठी-मीठी बातें कहकर घर से भगा दिया था, उसका सारा हाल सती के आगे बयान कर दे। लेकिन बहुत कुछ सोचकर दीपंकर ने वैसा साहस नहीं किया। फिर इतने दिन बाद क्यों सती ने उसके पास आदमी भेजा ? बालीगंज स्टेशन के उस ढलवे प्लैटफार्म पर खड़ा होकर वह दूर सड़क की तरफ देखता रहा। साइडिंग पर रॉबिन्सन साहब का सैलून है। उसमें साहब हैं, मेमसाहब हैं और जिमी है। बिना मतलब सारे वैगन यहाँ घंटों पड़े रहते हैं। वही मिस्टर रॉबिन्सन अपनी आँखों से देखने आया है। फिर यहाँ से मोटर ट्राली का इन्तजाम हुआ है। मोटर ट्राली से साहब लाइन देखता हुआ गड़ियाहाटा लेवल क्रॉसिंग तक जायेगा। उस लेवल क्रॉसिंग पर ऐक्सिडेंट हुआ है। भैंसागाड़ी से थर्टी-सेवन अप टकरा गयी है। साहब खुद जाकर स्पॉट देखेगा।

— दादाबाबू, यह आ गया है।

दीपंकर ने देखा कि शंभु है। उसे ढूंढ़ने आया है।

शंभु भी दीपंकर को देखकर आश्चर्य में पड़ गया।

शंभु बोला — आपको ढूंढने आपके घर गया था।

— क्यों रे, क्या हुआ है ?

उसके बाद काशी की तरफ देखकर दीपंकर बोला — अब तू जा काशी, माँ से कह देना कि साहब के साथ मैं दफ्तर के काम से इधर आया था, आज मेरे लौटने में देर होगी ....

काशी चला गया। शंभु बेचैनी से इंतजार कर रहा था। बोला — बड़ी मुश्किल हो गयी है दादाबाबू, बहूदीदी ने मुझे आपके पास भेजा है।

दीपंकर डर गया। बोला — क्या हुआ है ?

शंभु बोला — आप जो उस दिन चले आये, उसी के बाद यह सब हुआ।

— क्या हुआ ?

— माँ जी बहूदीदी को एकदम घर से निकलने नहीं देतीं। बहूदीदी पर हर वक्त निगाह रखी जा रही है। बतासी की माँ, भूती की माँ, दरवान और कैलास सबसे माँजी ने कह दिया है।

शाम के ढलते सूरज की रोशनी में बालीगंज स्टेशन के ढलवे प्लैटफार्म पर खड़े दीपंकर को लगा कि सती इस समय भी मानो प्रियनाथ मल्लिक रोड के अपने मकान में बरामदे की तरफ दौड़ती हुई आ रही है और पुकार रही है — दीपू .... दीपू ....

अचानक पास ही इंजन की सीटी से दीपंकर की चिंता का तार टूटा। वह बोला — तुम्हारी बहूदीदी ने मुझसे क्या करने को कहा है ?

शंभु बोला — क्या कहेंगी बहूदीदी, उसने सिर्फ आपको यह खबर देने के लिए कहा है।

दीपंकर समझ नहीं पाया। बोला — लेकिन यह खबर सुनकर मैं क्या करूंगा भला बताओ ?

शंभु बोला — जी हाँ, यह तो है। आप भी क्या करेंगे ? माँजी औरत अच्छी नहीं है दादाबाबू, वही सारी खुराफात की जड़ है। वैसी अच्छी बहू मिली है न, इसलिए वह उसे उतना सता रही है !

जरा रुककर शंभु बोला — जानते हैं दादाबाबू, कभी-कभी हम लोगों के सामने, नौकर-चाकरों के सामने माँजी बहूदीदी को जली-कटी बातें सुनाती रहती है। उस दिन आपके चले जाने के बाद उसने बहूदीदी से कहा — तुमने घोष खानदान का नाम डुबा दिया है बहू। तुम बाहरी लोगों घर में बुलाकर प्यार जताती हो, तुम्हें गले में फाँसी लगाने के लिए रस्सी नहीं मिलती ?

आसपास लोगों की भीड़ है। दीपंकर बोला — यहाँ खड़े होकर बात नहीं हो सकती। तुम मेरे साथ आओ शंभु ....

दीपकर शंभु को साथ लिये लाइन पार कर अपने सैलून में गया। बोला —

बैठो शंभु ।

डब्बे में घुसकर शंभु ने आश्चर्य से चारों तरफ देखा । गद्देदार दो कुर्सियाँ, गद्देदार बिस्तर । एकदम सजा हुआ सोने के कमरा जैसा । बगल में खाना पकाने के लिए जगह नहीं है ।

दीपंकर बिस्तर पर बैठ गया । बोला — तुम्हीं लोगों के सामने वह बहू को इस तरह ताने मारती है ?

— हाँ दादाबाबू, हमीं लोगों के सामने । और यह सब सुनकर बहूदीदी की आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगती हैं । माँजी की बातें सुनकर हमीं लोगों को शरम लगती है दादा बाबू, और हम वहाँ हट जाते हैं ।

— उस दिन फिर क्या हुआ ? जिस दिन तुम्हारी माँजी ने मुझे भगा दिया ....

शंभु बोला — माँजी की आँखों का पानी ढल चुका है दादाबाबू । वह बड़ी बेशरम औरत है । अगर इज्जत-आबरू हो तो क्या कोई उस तरह बात कर सकता है ? मैं भी बहूदीदी को यही समझाता हूँ । कहता हूँ — तुम क्यों सोचती हो बहूदीदी ? तुम बाप के घर चली जाओ, तुम्हारे बाप के पास उतना रुपया है, तुम आराम से वहाँ रहोगी । तुम्हारे भाग में ससुराल में रहना नहीं लिखा तो तुम क्या करोगी ?

दीपंकर ने पूछा — और तुम्हारी बहूदीदी क्या कहती है ?

— कहती है, मैं चली जाऊँगी शंभु, आखिर पिताजी के पास ही चली जाऊँगी । बहूदीदी कहती है और उसका चेहरा न जाने कैसा उदास हो जाता है । असल में बहूदीदी की माँ नहीं है, इसलिए बाप के पास जाकर रहने में भी उसे तकलीफ है । खैर, बाप भी बेटी को बहुत चाहता है ।

— तुम इतना सब कैसे जान गये शंभु ?

शंभु बोला — मैं नहीं जानूंगा तो कौन जानेगा दादाबाबू ? जब इतना छोटा था, तब से मैं उस मकान में हूँ । मेरी माँ उस घर में नौकरानी थी और मैं माँ के साथ बचपन से उस घर में हूँ ! मेरी माँ मर चुकी है, लेकिन मैं वह घर छोड़ नहीं सका । बहूदीदी की शादी के समय मैं ही चढ़ावा ले गया था । मैंने तभी बहूदीदी के बाप को देखा ।

— अच्छा शंभु ....

इतना कर दीपंकर आगा-पीछा करने लगा ।।वह समझ नहीं पाया कि कहना उचित होगा या नहीं । यह सब एक नौकर से पूछना चाहिए या नहीं, यह भी वह समझ नहीं पाया ।

— कहिए दादाबाबू, क्या कहना चाहते हैं ?

दीपंकर बोला — क्या तुम्हारी बहूदीदी के लड़का हुआ था ?

शंभू बोला — क्या आप नहीं जानते ? उसी डायन सास के कारण वह बच्चा मर गया । कैसा गोरा खूबसूरत हुआ था कि क्या बताऊँ ! एकदम बहूदीदी की तरह

देखने में था। लेकिन उस सास से बरदाश्त नहीं हुआ। रात-दिन बहू से किचकिच शुरू हो गयी। हर घड़ी वह बहू से बस यही कहने लगी — बहू, यह मत छुओ, बहू, वह मत छुओ। एक दिन कौवे ने बच्चे की कथरी रसोईघर के सामने बरामदे में फेंक दी थी। उस बात को लेकर सास ने बतासी की माँ को बुरी तरह डाँटा-फटकारा और बहू से भी जो मन में आया वही कहा। बतासी की माँ मेदिनीपुर की है, वह भला क्यों सुनती? उसने भी हजारों बातें सुना दीं। तब सास का गुस्सा बहू पर उतरा।

—बहूदीदी क्या बोली?

—बहूदीदी क्या बोलेगी! उसकी आँखों से बस चिनगारी निकलने लगी, लेकिन वह मुँह से कुछ नहीं बोली। फिर आप तो जानते हैं कि बहूदीदी बड़े घर की बेटी है, उसके मुँह से गाली-गलौज कैसे निकलती?

—क्या तुम्हारी माँजी बहूदीदी को गाली देती है?

शंभु बोला — दिन-रात गाली देती है दादा बाबू! हम सबको वह गाली देती है। लेकिन हम लोगों को गाली देती है तो कोई बात नहीं, हम नौकर-चाकर है, जवाब नहीं दे सकते। हम लोगों का कोई चारा नहीं है। हम दूसरों के घर खिदमत करते हैं, तनख्वाह पाते हैं, खाने को मिल जाता है और उसी से हम खुश रहते हैं। लेकिन बहूदीदी को क्यों बरदाश्त होगी? बहूदीदी तो उस औरत की तनख्वाह खानेवाली मजूरनी तो है नहीं!

—उसके बाद क्या हुआ?

—उसके बाद माँजी के मारे बहूदीदी बच्चे को छू नहीं पाती थी। माँजी बस बहूदीदी से कहती थी — रात का कपड़ा पहनकर बच्चे को मत छुओ। अगर बच्चे को छू लिया तो घर का कोई सामान मत छुओ। बस, हर घड़ी यह मत करो, वह मत करो। बच्चे के लिए रात-दिन की एक नौकरानी थी, उसे भी सास चौबीसों घंटे ताना मारती थी। ऐसा करने पर कोई कैसे काम करेगा दादाबाबू?

—क्या तुम्हारी माँजी छुआछूत बहुत मानती है?

शंभु बोला — नहीं दादाबाबू, छुआछूत वह नहीं मानती। वह खूब खा-पी रही है और मोटी होती जा रही है। फिर बलिहारी है उस औरत की पैनी निगाह की दादा बाबू, तीसरी मंजिल पर ठाकुरघर में बैठी वह घर में कहाँ क्या हो रहा है सब देखती है। कब कौन सूखा गमछा लपेटकर नल के पास से अन्दर आया, रसोइये ने नौकरों की दाल में कितने चम्मच घी छोड़ा और बतासी की माँ ने भंडारघर से कितने बरतन निकालकर दिये, यह सब वह बुढ़िया जान जाती है! बड़ी चालाक और खुसट औरत है दादाबाबू!

—लेकिन वह बच्चा कैसे मर गया?

शंभु बोला — मर नहीं जायेगा! उतनी छुआछूत और उतनी किचकिच-

उसमें क्या छोटा बच्चा जिंदा रहता है ? तीन ही महीने में उस बच्चे को सूखा लग गया। हमारे दादाबाबू डाक्टर बुला लाये, बड़े-बड़े डाक्टर आये, लेकिन उस वक्त डाक्टर बुलाने से क्या होता ?

—फिर ?

—फिर उस मुँहजली सास की जबान की कतरनी और तेज हो गयी। रात दिन कहने लगी कि बहू, तुमने अपनी कोख की संतान को मार डाला ! तुम डायन हो या पिशाची ? बात-बात पर बुढ़िया बहूदीदी की तौहीन करने लगी। उसके बाद वह पुरी गयी। जगन्नाथ धाम में जगन्नाथ जी के पास उसकी न जाने कौन-सी मनौती थी। उस मुँहजली के कारण उसका पोता मरा और वह गयी मनौती उतारने ! वैसी मनौती के मुँह में मैं झाड़ू मारूँ दादाबाबू। जब वह जाने लगी तब बहूदीदी ने कितनी बार उससे कहा कि मुझे भी जगन्नाथ धाम ले चलो, मैं भी जगन्नाथ जी के चरणों में मनौती उतारूँगी, लेकिन वह औरत कब सुनने वाली थी ? वह बहू को नहीं ले गयी।

दीपंकर अब तक मन लगाकर बड़ी उत्सुकता से सब सुन रहा था। वह बोला—लेकिन तुम्हारे दादाबाबू कुछ नहीं कहते ? वह उन्हीं की तो माँ है ? क्या वे अपनी माँ से कुछ नहीं कह सकते ?

शंभु बोला—तब तो हो चुका ! बेचारा वैसी माँ के मुँह पर कैसे कुछ कहेगा ? सात जनम में भी किसी को वैसी माँ न मिले दादाबाबू ! माँ नहीं, साली डायन है ! बहुत पाप करने पर कोई वैसी माँ की कोख से जनम लेता है—छी-छी !

बड़ी संजीदगी से बड़े-बूढ़े की तरह बात कहकर शंभु मुँह लटकाये बैठा रहा।

फिर वह बोला—उस दिन आपके चले आने के बाद मैंने बहूदीदी को जाकर खबर दी। सुनते ही बहूदीदी दौड़ी हुई आयी। तब तक आप जा चुके थे। बहूदीदी आपका नाम लेकर आपको पुकारती हुई बाहरवाले फाटक की तरफ दौड़ी जा रही थी, तभी अचानक माँजी ने उसे पकड़ लिया। कहा—कहाँ जा रही हो बहू ?

बहूदीदी बोली—आपने दीपू को भगा दिया ?

माँजी बोली—बहुत अच्छा किया है भगा दिया है, मैंने अपने मकान से उसे भगा दिया है।

बहूदीदी यह सुनकर थोड़ी देर चुप खड़ी रही। मानो वह क्या कहे समझ नहीं पायी। मानो उसकी जबान पर बात आकर अटक गयी।

माँजी बोली—तुम जो कर रही थी, वही करो, अंदर जाओ।

बहूदीदी धीरे-धीरे अन्दर की तरफ जाने लगी। उसके बाद न जाने क्या सोचकर वह सीढ़ी से ऊपर न जाकर लाइब्रेरी की तरफ जाने लगी।

माँजी ने पुकारा—बहू, उधर कहाँ जा रही हो ?

बहूदीदी ने एक बार पीछे मुड़कर देखा। फिर वह जिस तरह आ रही थी, जाने लगी।

मांजी भी जल्दी-जल्दी बहूदीदी के पीछे चलने लगी। बोली — अब उधर कहाँ जा रही हो बहू ?

लेकिन तब तक बहूदीदी सीधे दादाबाबू की लाइब्रेरी में पहुँच गयी। दादाबाबू किताब पढ रहा था। दादाबाबू जब किताब पढता है तब किसी तरफ उनका होश नही रहता। बहूदीदी सीधे दादाबाबू के सामने टेबिल के पास जाकर खड़ी हो गयी। आंधी की तरह उसने किताब को पलटकर कहा — बताओ तो तुम कैसे हो ?

दादाबाबू चौंक उठा। बोला — क्यों, क्या हुआ ?

— तुम्हारी आँखों के सामने माँ ने दीपू को भगा दिया और तुमने कुछ नही कहा ? तुम मुँह बंद किये रहे ? तुम कैसे हो ? तुम उसे रोक नहीं सके ? मैं रसोईघर में खाने का इंतजाम करने गयी और इसी बीच यह सब हो गया ? तुम कुछ बोल नही सके ? तुम्हारा मुँह नही है ?

— बहू !

अचानक कमरे में आकर सती की सास खड़ी हो गयी। मांजी की आवाज सुनकर सनातन बाबू ने पीछे मुड़कर देखा। माँ के चेहरे की तरफ देखकर वे हैरान हो गये। वे एक बार माँ के चेहरे की तरफ देखने लगे तो एक बार सती के चेहरे की तरफ।

सास बोली — आजकल क्या तुम्हारे कानों में बात नही पहुँचती बहू ? मैंने तुमसे कहा कि रसोईघर की तरफ जाओ और तुम यहाँ आ गयी ? जाओ, अंदर जाओ।

सती खड़ी-खड़ी तेज-तेज साँस ले रही थी। बोली — मैं नही जाऊँगी !

— इसका मतलब ?

— आप पहले जवाब दीजिए कि आपने दीपू को क्यों भगा दिया ? उसने क्या किया है ? उसने आपका क्या बिगाड़ा है ?

अब सनातन बाबू मानो सारी बात समझ सके। वे बोले — नही माँ, दीपंकर बाबू ने तो कुछ नहीं बिगाड़ा। वे बड़े अच्छे आदमी हैं माँ। लेकिन वे तो खुद चले गये।

— तुम चुप रहो सोना ! मैं बहू से बात कर रही हूँ, तुम क्यों बीच में बोल रहे हो ? तुमसे बोलने के लिए किसने कहा है ? बहू, तुम इस कमरे से निकलो, सोना के पढने में हर्ज हो रहा है।

सती ने एक बार सनातन बाबू की तरफ देखा। सनातन बाबू बोले — नही माँ, मैं पढ़ चुका हूँ, बाकी कल पढ लूँगा। जो कुछ कहना है, तुम मेरे सामने कहो, मैं भी सुनूँ ....

माँजी बोली — नहीं, तुम्हारे सुनने की जरूरत नहीं है। हर बात में तुम्हारा रहना ठीक नहीं है सोना।

सती बोली — हाँ, वे भी सुनेंगे, वे भी हर बात में रहेंगे। मैं इस घर में कितने आराम से हूँ यह उनको भी जानना चाहिए। वे भी देखें कि आपने मुझे कितने आराम से रखा है। आज वे अपनी आँखों से देखें ....

सनातन बाबू बोले — छी, माँ से इस तरह मत बोलो सती, वे माँ हैं। क्या उनसे इस तरह बोलना चाहिए ?

माँजी बोलीं — इस बात में तुम मत पड़ो सोना, जो कुछ कहना होगा मैं कहूँगी।

उसके बाद सती की तरफ देखकर गंभीर स्वर में माँजी बोलीं — बहू, इधर आओ ....

सनातन बाबू बोले — जाओ, माँ बुला रही हैं। क्यों नहीं सुन रही हो ? जाओ, माँ की बात माननी चाहिए न ?

सती ने सास की तरफ देखकर कहा — क्या कहेंगी, कहिए ?

— पहले तुम इस कमरे से निकलो।

सती बोली — क्या यह कमरा मेरा नहीं है ? क्या मुझे इस कमरे में आने का अधिकार नहीं है ? क्या मैं इस घर में शांति से नहीं रह सकती ? क्या आप यही कहना चाहती हैं कि मैं इस घर की कोई नहीं हूँ ?

यह कहती हुई सती एकाएक बहुत ज्यादा उत्तेजित हो उठी। उसका सारा शरीर थरथर काँपने लगा। प्रियनाथ मल्लिक रोड के उस प्रासाद में उस दिन ईश्वर गांगुली लेन की बस्ती का अँधेरा उतर आया। ईश्वर गांगुली लेन की तरह वहाँ का माहौल भी घिनौना और अश्लील हो गया। सती कहती गयी — क्या आप लोगों ने सोच लिया है कि इसी तरह मुझे तंग करके मेरा गला घोंटकर मुझे मार डालेंगे ? मेरा कोई नहीं है, इसीलिए क्या आप लोग मुझे इस तरह सतायेंगे ? क्या मुझमें भी मन नाम की कोई चीज नहीं हो सकती ? मैं भी तो इन्सान हूँ ! जिस तरह आप लोगों को कष्ट होता है, उसी तरह मुझे भी हो सकता है। मुझे भी तकलीफ होती है, मुझे भी नींद आती है। मैंने क्या किया है कि आप मुझे इस तरह सतायेंगी ?

जब तक सती बोलती रही, सास कुछ नहीं बोली। सती चुप हुई तो सास बोली — क्या तुम्हारी बात खत्म हुई ?

सती बोली — मेरी बात खत्म नहीं होगी, आपलोग जब तक जिंदा रहेंगे तब तक मेरी बात खत्म नहीं होगी। जब आप लोग मरेंगे तब मेरी बात खत्म होगी, तभी मैं चुप करूँगी।

— क्या कहा ?

सास मानो लड़ने की मुद्रा में खड़ी हो गयी। वह बोली—तुमने क्या कहा बहू ?

—मैंने जो कुछ कहा, आपने नही सुना ?

सनातन बाबू अब बोले —छी ! इस तरह नही कहना चाहिए सती ! यह तुमने क्या कहा देखो तो, गुस्सा होने पर तुम्हें होश नही रहता ?

—तुम चुप रहो सोना, जो कुछ कहना होगा मैं उससे कहूँगी । तुमको कुछ नही कहना पड़ेगा ।

उसके बाद सास सती की तरफ देखकर बोली —बहू, मैंने बहुत बरदाश्त किया है, मुँह बन्द रखकर अब तक बहुत बरदाश्त किया है, फिर भी तुमसे कुछ नहीं कहा । मेरा एक लड़का है, मैंने सोचा था कि उस लड़के की शादी करके मैं निश्चित हो सकूँगी, लेकिन मेरे भाग्य में वैसा होना नही है । मैंने अच्छी तरह समझ लिया है कि मेरे भाग्य में सुख नहीं है । लेकिन अब मैं बरदाश्त नहीं करूँगी । तुम्हारे बाप मेरे सामने होते तो मैं उनसे भी यही कहती । कहती कि आपने इस तरह क्यों मेरा सर्वनाश किया ? तुम्हारी बहन घर से भाग गयी थी, वह भी उन्होंने मुझसे नही कहा । शायद उन्होंने यही सोचा था कि मैं एक औरत हूँ, मेरे सिर पर कोई नही है, इसलिए मुझे कुछ पता नही चलेगा । खैर, जो कुछ होना था, हो चुका है । लेकिन तुम घोष वंश का नाम डुबाओगी, यह मैं जिंदा रहते नही होने दूँगी । अब तुम आओ ।

फिर सनातन बाबू की तरफ देखकर माँजी बोली —सोना, बहू को मैं इतनी बातें सुना रही हूँ, इसलिए तुम बुरा मत मानना बेटा ! मैं बहू की भलाई के लिए यह सब कह रही हूँ। इसमें तुम्हारी भी भलाई है ।

सनातन बाबू बोले —नही माँ, मैं इसके लिए बुरा नही मान रहा हूँ ।

अचानक सती बोली —फिर मुझे यहाँ से जाने दीजिए . .

सास इसका मतलब समझ नही पायी । बोली —कहाँ जाने दूँगी ? तुम्हारे बाप के पास ?

सती बोली —मेरा जहाँ मन होगा, मैं जाऊँगी, यह सब आपको जानने की जरूरत नही है !

—तुम क्या कह रही हो ? जब जहाँ मन होगा तुम जाओगी और मुझे जानने की जरूरत नही है ?

इतनी देर बाद सनातन बाबू फिर बोले । सती की बात सुनकर वे भारी आश्चर्य में पड गये । बोले —इतनी रात को तुम कहाँ जाओगी ?

—मैं कही भी जाऊं तुमसे मतलब ? क्या तुमलोग मेरे लिए सोचते हो ? क्या मेरे सुख-दुःख पर तुम लोग ध्यान देते हो ?

सास बोली —कहाँ जाओगी ? देखूँ कैसे जाती हो ! जाओ ....

सती बोली —क्या आप समझ रही हैं कि मैं नही जा सकती ?

—जाओ न, वही तो मैं देखना चाहती हूँ । जाओ ....

सती ने थोड़ी देर न जाने क्या सोच लिया । उसकी आँखों में आँसू उमड़

आया लेकिन उसने तुरंत अपने को सँभाल लिया और कहा — ठीक है, मैं जा रही हूँ ....

यह कहकर सती सचमुच जाने लगी। वह सचमुच कमरे से निकली। सास खड़ी-खड़ी देखने लगी लेकिन ज्यादा देर वे खड़ी नहीं रह सकीं। सती के पीछे-पीछे वे भी कमरे से निकलीं। सनातन वावू भी कुर्सी से उठकर माँ के साथ कमरे से निकले। सास ने देखा कि सती सीढ़ी से ऊपर नहीं गयी। वह वरामदे से रसोईघर की तरफ भी नहीं गयी। वह सीधे दायें हाथ चलने लगी और एकदम चलती चली गयी।

सास वहुत पीछे थीं। वहीं से उन्होंने पुकारा — वहू!

सती ने जवाव नहीं दिया। वह जिस तरह चल रही थी, उसी तरह चलती रही। वह सीधे चलती गयी।

सास ने फिर पुकारा — वहू, रुको!

अव सती वरामदे से वायीं तरफ की सीढ़ी से वगीचे की तरफ गयी।

उसी अँधेरे में सती सीढ़ी से उतरकर वगीचे में पहुँची। वगीचे के किनारे से खड़ंजा विछा रास्ता है। अनेक वर्ष पहले इस घर के एक पूर्वज ने इसी रास्ते से कभी अपनी गृहलक्ष्मी को साथ लिये इस घर में प्रवेश किया था, लेकिन उस रात उसी घर की एक गृहलक्ष्मी उसी रास्ते से वाहर की तरफ जाने लगी। कभी खिदिरपूर डॉक के पामरस्टोन साहव ने इस घोप परिवार के उस पूर्वज को लक्ष्मी के आवाहन का मंत्र सिखा दिया था, लेकिन उस लक्ष्मी को किस तरह अचल वनाकर रखा जाता है उसका उपाय उसने उस परिवार के वंशज को नहीं वताया। साहव ने यह नहीं वताया था कि लक्ष्मी का आवाहन करना सरल है, लेकिन उसको वाँधकर रखना कठिन है। उसने यह नहीं वताया था कि वैंक के सेफ डिपाजिट वॉल्ट में चाभी घुमाकर कागज के नोटों को वंद रखा जा सकता है, टकसाल में वने सोने के सिक्कों को भी सुरक्षित रखा जा सकता है, लेकिन लक्ष्मी तो नोट नहीं है न सोने का सिक्का ही है। उसकी भी आत्मा है, उसके भी प्राण हैं और उसका भी हृदय है। फौलादी चाभी घुमाकर उसे वंदी नहीं वनाया जा सकता। लोहे की जंजीर से उसे जकड़ा नहीं जा सकता। सुख देकर ही उसे वश में किया जा सकता है, वंधनहीन करके ही उसे वाँधना पड़ता है।

सास ने फिर एक वार, शायद अंतिम वार पुकारा — वहू, सुनो।

सनातन वावू ने भी पुकारा — सती लौट आओ।

लेकिन पृथ्वी अव एक कक्षपथ से दूसरे कक्षपथ की ओर भागी जा रही थी। सन् सत्रह सौ नवासी ईसवी में किसी समय फ्रांस में क्रांति हुई थी। लोगों के मन में उसकी याद वाकी नहीं है। लेकिन सन् उन्नीस सौ चौदह ईसवी के विश्वयुद्ध की याद ताजा है। लेकिन अव भी संसार से फ्रांस के चौदहवें लुई और मैडम द वारी जैसे लोग समाप्त नहीं हुए हैं। उनमें से आज कोई इंगलैंड के सिंहासन पर, कोई जर्मनी में, कोई

अमरीका में और कोई फांस में है। कभी अमरीका के एक ऋषि ने कहा था—"That Government is best which governs not at all", कभी एक जर्मन ऋषि ने कहा था—"Workers of the world unite. You have nothing to lose but your chains, and have a world to win", अभी तक इनमें से कोई बात सही नहीं निकली। मनुष्य के कुरुक्षेत्र में विश्वयुद्ध आरंभ होता है, फिर वह समाप्त भी होता है। हजारों, लाखों और करोड़ों लोगों की अपमृत्यु से भी मनुष्य को वैसी गवर्नमेंट नहीं मिली, जैसी वह चाहता है। मजदूर भी अपना बंधन तोड़ नहीं सके। मनुष्य के घर-घर से लक्ष्मी शायद सती की तरह ही लापता हो गयी है। इंडिया के रुपये, इंगलैंड के पौंड, अमरीका के डालर, फ्रांस के फ्रांक, जर्मनी के मार्क, रूस के रूबल और इटली के लीरा को सबने टैरिफ बोर्ड की चाभी से सेफ डिपाजिट वॉल्ट में बंद रखने की कितनी बार कोशिश की है, फिर भी वहाँ स्ट्राइक बंद नहीं हुई, हड़ताल बंद नहीं हुई और रंच मात्र भी असंतोष कम नहीं हुआ। साइंस और इंडस्ट्री दिनों दिन उछलते-कूदते आगे बढ़ते जा रहे हैं और समाज स्तंभित जड़वत् एक जगह खड़ा देख रहा है। सनातन बाबू और उनकी माँ को इसीलिए उस दिन सती को हरकत देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था।

सास ने फिर पुकारा—बहू, इधर सुनो!

अब सती फाटक की तरफ दौड़ने लगी थी। अगर वह एक बार फाटक पार कर गयी तो शायद घोष वंश की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जायेगी। गिरीश घोष की गृहलक्ष्मी अगर प्रियनाथ मल्लिक रोड से हाजरा रोड पहुँच गयी तो वह शहर की मध्यमवर्गीय गंदगी में हमेशा के लिए खो जायेगी।

सास डरकर चिल्लायी—दरवान, गेट बंद करो। दरवान ....

सनातन बाबू चिल्लाये—दरवान, गेट बंद करो!

चिल्लाहट सुनकर घोष बाबू के मकान में जहाँ जो था, दौड़कर आया। बनारसी की माँ, भूती की माँ, रसोइया, कैलाश और ड्राइवर—सब। घोष बाबू के फाटक पर दरवान हर वक्त सावधान रहता है। सती गेट तक पहुँचती कि उसके पहले झनझनाकर एक यांत्रिक आवाज हुई और सती उस बंद फाटक से टकराकर गिर पड़ी।

बालीगंज स्टेशन के साइडिंग में दरवाजा-बंद सैलून में बैठकर यह किस्सा सुनते हुए दीपंकर का मानो दम घुटने लगा। वह मानो भूल गया कि बगल के सैलून में ही रॉबिन्सन साहब और मिसेस रॉबिन्सन हैं। उनके साथ उनका कुत्ता जिमी भी है। वह भूल गया कि वह ड्यूटी पर आया है।

शंभु चुप हुआ तो दीपंकर ने कहा—उसके बाद?

शंभु बोला—उसके बाद क्या है दादाबाबू, उसके बाद हुक्म हो गया कि अब

वहूदीदी को वाहर निकलने नहीं दिया जायेगा ।

और भी वहुत-सी वातें शंभु ने वतायीं । सास ने किस तरह सती को रातदिन नजरबंद रखा है । उसे कहीं निकलने नहीं दिया जाता । अब प्रियनाथ मल्लिक रोड के उस फाटक में रातदिन ताला बंद रहता है । जब कोई बाहर जाना चाहता है तब दरबान से कहकर ताला खुलवाता है । मकान के पिछवाड़े एक दरवाजा है, उसमें भी ताला लगा है । उसकी चाभी माँजी के पास रहती है । किसी को उस चाभी की जरूरत नहीं पड़ती । पहले उसी दरवाजे से मेहतर अन्दर आकर नालियाँ साफ करता था, लेकिन अब वह सामने वाले फाटक से आता है । मुंशी जी जब कैलास को साथ लिये सब्जी लाने जाता है, तब वह दरबान से फाटक खुलवाता है । उसके जाते ही ताला लग जाता है । बतासी की माँ भंडार घर में बैठी अपने आप बड़बड़ाती है — बाप रे, कैसी खतरनाक सास है ! यह क्या तुम्हारी गाँठ की कौड़ी है कि संदूक में रखकर ताला बंद कर दोगी !

जब कोई आसपास नहीं रहता तब कभी-कभी बतासी की माँ सती के पास आ जाती है । कहती है — तुम्हें किस बात की फिकर है वहूदीदी ? तुम्हें किस बात की फिकर है ? तुम बाप के पास खत लिख दो, बाप आकर तुम्हें ले जाय, तब देखूँ, वह औरत तुम्हें किस तरह रोकती है ! बहू बनाकर घर में लायी है तो क्या उसने तुमको खरीद लिया है ?

इस पर सती कहती है — अभी तुम जाओ बतासी की माँ, मुझे यह सब सुनना अच्छा नहीं लग रहा है ।

भूती की माँ छिपकर सती के पास आती है । चारों तरफ देखकर वह सती के कमरे में जाती है । कहती है — रहा नहीं गया वहूदीदी, इसलिए चली आयी ।

सती कहती है — क्यों तुम आयी भूती की माँ, आखिर तुम्हारी नौकरी चली जायेगी ।

भूती की माँ कहती है — अभी वह औरत नहीं है, बाहर गयी है, इसलिए हिम्मत करके चली आयी ।

सती कहती है — सास रहे या न रहे, तुम लोग मेरे पास मत आओ भूती की माँ, अगर किसी तरह उनको पता चल गया तो तुम्हीं लोगों पर कड़ाई होगी और वे सोचेंगी कि मैं ही तुम लोगों को बुलाती हूँ ।

भूती की माँ कहती है — जो कुछ होगा, देखा जायेगा वहूदीदी, अगर तुमको कोई काम है तो बताओ, कर दूँ । अगर किसी के पास चिट्ठी-पत्री भेजना चाहती हो तो मुझसे कहो ।

अगर सास कहीं बाहर जाती हैं तो ज्यादा देर नहीं लगातीं । कलकत्ते में ही आस-पास उनके सब रिश्तेदार हैं । उन्हीं से वे मिलने जाती हैं । जब जाती हैं तब दर-बान को होशियार कर देती हैं । कहती हैं — मेरे जाने के बाद गेट में ताला बंद रखना

दरवान, चारों तरफ निगाह रखना और खूब होशियार रहना। समझ गये?

दरवान कहता है — समझ गया माँजी।

जाते वक्त वे सनातन बाबू से भी कहती हैं। सनातन बाबू के पास जाकर वे कहती हैं — सोना, मैं बाहर जा रही हूँ, दीदी के घर जा रही हूँ। तुम तो घर में रहोगे न?

पूरा दिन कैसे बीतता है, यह सिर्फ सती जानती है। सास बगलवाले कमरे में रहती हैं। सोने के कमरे की बगल में उनका पूजा का कमरा है। उस कमरे में बैठकर वे पूजापाठ करती हैं, लेकिन उनकी निगाह चारों तरफ रहती है। पूजा करते समय न जाने उनको क्या खयाल होता है और वे पुकारती हैं — बहू! ओ बहू!

सती पास जाकर खड़ी होती है।

सास पूछती है — कहाँ थी? मैं कब से तुम्हें बुला रही हूँ।

सती इस बात का जवाब नहीं देती। वह कहती है — कहिए, क्या कहेंगी।

सास बिगड़ जाती है। कहती है — तुम इस तरह क्यों बात कर रही हो? तुम्हें क्या हो गया है? बताओ तुम्हें क्या हुआ है?

सती कहती है — आपने किसलिए बुलाया है, वही बताइए।

अब सास और ज्यादा बिगड़ जाती है। कहती है — तुमको क्या छोटे-बड़े का भी खयाल नहीं है? किनसे किस तरह से बात की जाती है, वह भी तुम नहीं जानती?

किस बात से कौन-सी बात निकल आयी। मामूली सी बात का बतंगड़ बनने लगा। सास कहती है — बहू, तुम बाप के घर चाहे जो करती रही हो, लेकिन यहाँ इस घोष परिवार में वह सब नहीं चलेगा। बस, मैंने कह दिया।

सती कुछ समझ नहीं पाती। कहती है — क्या नहीं चलेगा?

सास कहती हैं — देख बहू, तुम पढ़ी-लिखी लड़की हो तो यह मत समझ लो कि मैं मूर्ख हूँ....

सती कहती है — आप मुझसे यह सब क्यों कह रही हैं? मैंने क्या किया है? आपने मुझे बुलाया ही क्यों? मैं चोर हूँ या डाकू?

सास कहती हैं — देखो बहू, मैं इस समय पूजा करने बैठी हूँ। मुझे तंग न करो, जाओ।

— लेकिन आपने ही तो मुझे बुलाया था!

— फिर बात कर रही हो?

इसके बाद सती वहाँ नहीं रुकती। लेकिन सास फिर बुलाती हैं। कहती हैं — मत जाओ बहू, सुनो ....

सती फिर आकर खड़ी हो जाती।

सास बोली — मैं बूढ़ी हूँ तो यह मत समझो कि आँख-कान गँवाये बैठी हूँ। मैं सब देख सकती हूँ, सब सुन पाती हूँ।

फिर जरा रुककर सास वोलीं — नौकर-चाकरों से ज्यादा सलाह-मशविरा करना ठीक नहीं है । वे सब छोटे लोग हैं। उनसे ज्यादा वात करोगी तो वे ही एक दिन तुम्हारे सिर चढ़ जायेंगे। क्या वह तुम्हारे लिए ठीक होगा ?

सती थोड़ी देर सास के चेहरे की तरफ देखती रही, उसके वाद वोली — और कुछ कहेंगी ?

सास वोली — मुझे वहुत-सी वातें कहनी हैं वहू, लेकिन अभी मैं पूजा करने वैठी हूँ, इसलिए ज्यादा कह नहीं सकी। अभी तुम जाओ। तुम्हारे कारण मेरा पूजापाठ करना भी मुश्किल हो गया है।

यह कहकर वे फिर पूजापाठ में ध्यान देने की कोशिश करने लगीं। सती अव सीधे नीचे गयी। सनातन वावू अपनी लाइब्रेरी में वैठे पढ़ रहे थे। सती आँधी की तरह उस कमरे में गयी।

सनातन वावू चौंक पड़े । वोले — आ गयी ? मैं अभी तुम्हारी वात सोच रहा था।

— मेरी वात सोच रहे थे ? क्या तुम मेरी वात सोचते हो ?

सनातन वावू वोले —उस दिन तुम कह रही थी न कि कहीं जा नहीं सकती, कहीं घूम-फिर नहीं सकती, इसलिए मैं सोच रहा था कि तुमसे कहूँगा कि तुम मेरी तरह कितावें पढ़ा करो। यह देखो, यह किताव कितनी अच्छी है।

सती वोली — क्या तुम लोग चाहते हो कि मैं आत्महत्या कर लूँ ?

सनातन वावू का चेहरा वदरंग हो गया। वे वोले — हम लोग ?

— हाँ, तुम लोग क्या मैं वाघ हूँ या भालू ? क्या मैं चोर-डाकू हूँ ? क्यों इस तरह मुझे वन्द रखा गया है ?

— तुमको वंद रखा गया है ? हमने वंद रखा है ?

— क्या वंद नहीं रखा गया ? क्या तुम कुछ नहीं जानते ? नौकर-चाकरों से मैं वात नहीं कर सकती मेरे कारण वाहर वाले फाटक में ताला वंद रहता है! कहीं मैं चिट्ठी नहीं लिख सकती! टेलीफोन हटाकर कमरे में वंद रखा गया है। क्यों ? क्या मैं भाग जाऊँगी ? अगर मैं सचमुच भाग जाऊँ तो क्या तुम लोग मुझे रोक सकोगे ? क्या इतनी क्षमता तुम लोगों में है ?

— यह सव तुम क्या कह रही हो ? तुम किसलिए भागोगी ?

सती वोली — अगर मैं मर भी जाऊँ तो तुम लोगों का क्या विगड़ता है ? कोई तुम लोगों की तरफ उँगली भी नहीं उठा सकेगा! तव तो तुम लोग छुटकारा पा जाओगे! तुम लोगों के पास रुपया है, तुम लोगों की इज्जत है और तुम लोगों का खानदान वहुत ऊँचा है।

— छी, छी, तुम यह सव क्या कह रही हो ? देख रहा हूँ कि तुम वहुत ज्यादा विगड़ गयी हो। आओ, यहाँ वैठो, जरा अपना मिज़ाज ठंढा करो।

सती बोली — मैं तुम्हारे कमरे में बैठने के लिए नहीं आयी ....

सनातन बाबू बोले — खैर, बैठने के लिए नहीं आयी तो क्या हुआ ? जब आ गयी हो तब थोड़ी देर बैठो ! अभी तो तुम्हारे पास कोई काम नहीं है ....

— काम ? कौन-सा काम तुम लोगों ने मुझे करने के लिए दे रखा है ? क्या इस घर में मुझे कोई काम करने का भी अधिकार है ?

— ठीक है, कोई काम न करो तो क्या हर्ज है, मैं भी तो कोई काम नहीं करता। कोई काम न रहे तो थोड़ी देर मेरे पास बैठा करो।

सती मानो आश्चर्य में पड़ गयी। वह आश्चर्य से सनातन बाबू की तरफ देखती रही। बोली — आज तुमने ऐसी बात कही ?

— क्यों ? मैंने ऐसी बात तुम से बहुत बार कही है ?

— क्या कहा है ?

सनातन बाबू बोले — मैंने तुमसे तो कहा है कि तुम भी मेरे साथ किताबें पढ़ा करो, इससे कितनी बातें जान सकोगी और कितना आनन्द मिलेगा। आओ न, मेरे साथ यह किताब पढ़ो — डिक्लाइन ऑव दि वेस्ट। जानती हो, इसमें कितनी अच्छी-अच्छी बातें लिखी है। एक बार पढ़ना शुरू करोगी तो छोड़ नहीं सकोगी। सन् उन्नीस सौ अठारह ईसवी में यह किताब पहली बार छपी।

सती बोली — तुम्हारे पास आने पर क्या ये ही सब बातें सुननी पड़ेंगी ? क्या तुम्हारे पास कहने के लिए और कोई बात नहीं है ?

— क्या ये सब बातें तुम्हें अच्छी नहीं लगती ?

सती बोली — क्या तुमसे मेरी शादी ये ही सब बातें करने के लिए हुई है ?

आश्चर्य से सनातन बाबू सती की तरफ देखने लगे। मानो वे कुछ समझ नहीं सके।

सती बोली — जब तक तुम जागते रहोगे तब तक किताब पढ़ोगे, सोते हुए भी किताब का सपना देखा करोगे, बताओ फिर तुमने शादी क्यों की थी ? फिर जिसकी माँ ऐसी है, वह शादी क्यों करता है ?

— माँ की बात कर रही हो ? माँ ने कोई गलत काम तो नहीं किया। माँ जो कुछ कहती है तुम्हारी भलाई के लिए कहती है। माँ तुम्हारी भलाई ही चाहती है।

माँ अचानक कब चुपचाप पीछे आकर खड़ी हो गयी थी, यह दोनों को पता नहीं चला था।

माँ बोली — बहू, क्या तुम शिकायत करने के लिए सोना के पास आयी हो ?

सनातन बाबू बोले — नहीं माँ, यह शिकायत नहीं कर रही है, यह शिकायत नहीं है।

—तुम चुप रहो। मैं बहू से कह रही हूँ, बहू, मेरी बात का जवाब दोगी ?

सती चुपचाप पत्थर की मूर्ति बनी खड़ी थी। अब उसने सिर उठाकर सीधे सास की तरफ देखा। शायद वह कुछ कहने जा रही थी। लेकिन इसके पहले ही सास बोलीं — मेरी तरफ देखकर आँख क्यों तरेर रही हो ! तुम किसको आँख तरेर रही हो ? तुम्हारे आँख तरेरने से मैं नहीं डरूँगी बहू, मैं वैसी औरत नहीं हूँ। आओ, चली आओ कमरे से। मैंने तुमसे कह दिया है न कि जब तब सोना के पास मत आया करो, जब चाहो तब तुम सोना के पास आ जाओ, यह मैं नहीं चाहती।

सती ने सिर झुका लिया। उसके बाद बिना कुछ कहे वह धीरे-धीरे कमरे से निकल गयी।

सास बोली — देख लिया सोना, बहू का घमंड तुमने देख लिया ? देखा तुमने कि किस तरह वह पाँव रगड़-रगड़कर गयी। अब तुमने अपनी आँखों से देख लिया न ?

सनातन बाबू समझ नहीं पाये। उन्होंने पूछा — पाँव रगड़कर चलना क्या होता है ?

माँ बोली — यही तो हुआ पाँव रगड़कर चलना ! तुमने तो दुनिया का हाल कुछ नहीं जाना, कुछ नहीं देखा, खैर, अब सब देखो।

— सब कुछ देखना अभी बाकी है माँ !

मानो अकस्मात् वज्रपात हुआ। सास ने भी देखा और सनातन बाबू ने भी देखा कि सती दरवाजे से बाहर जाकर भी उनकी बातें सुन रही थी। माँ-बेटे को पता भी नहीं चल पाया था। सती दरवाजे के सामने आकर बोली — सब कुछ देखने में अभी बहुत देर है।

— क्या कहा ?

— मैं कह रही हूँ कि अभी क्या हुआ अभी बहुत कुछ देखना बाकी है।

— इसका मतलब ?

सती बोली — मैं कह रही हूँ कि आप लोगों को सब कुछ देखने को मिल जायेगा और सारा संसार भी वह देखेगा।

— तुम्हारी हिम्मत तो कम नहीं है बहू ? तुम मेरे मुँह पर ज़वाब दे रही हो ?

लेकिन जिससे यह सब कहा गया, वह तब तक धम-धम करती सीढ़ी से ऊपर जा चुकी थी। सास भी पीछे-पीछे गयीं। सीढ़ी के बाद बरामदा है। इस बरामदे के आखिर में बायीं तरफ सती का कमरा है। अपने कमरे में जाकर सती ने धड़ाम से दरवाजा बंद कर लिया। सास बहू के पीछे-पीछे जाकर उस बंद दरवाजे के सामने थोड़ी देर खड़ी रहीं। निराशा और क्रोध से वे पागल-सी होने लगीं। असहाय और किंकर्तव्यमूढ़ वे खड़ी रहीं। थोड़ी देर के लिए वे गूँगी बन गयीं। फिर वे चिल्लाकर

पुकारने लगी ....

— शंभु, शंभु, अरे शंभु

— उसके बाद ?

शंभु बोला — जी, हम सब उस समय छिपकर तमाशा देख रहे थे। बतासी की माँ, भूतो की माँ, कैलास, मैं और मुंशीजी सबके कानों में बात पहुँच रही थी। माँजी की आवाज तो कम तेज नहीं है। बड़ी तीखी आवाज है उस औरत की !

बतासी की माँ बोली — छी, छी, मैं होती तो वैसी सास के मुंह में आग ठूंस देती।

भूतो की माँ बोली — बहूदीदी ने ठीक किया है। माँजी को उसने अच्छा जवाब दिया है। अब उस औरत का घमंड चूर होगा।

दीपंकर ने कहा — तो फिर तुम्हारी बहूदीदी पर बड़ा अत्याचार हो रहा है ?

— जी। अत्याचार का हाल आपसे बताया भी कितना ? दूर से आप उसका कितना समझ पायेंगे ? हम लोग घर में रहते हैं, इसलिए थोड़ा-बहुत देख-सुन पाते हैं। ओफ ! उस घर में बहूदीदी के लिए एक शब्द बोलने वाला कोई नहीं है।

यह सब सुनता हुआ दीपंकर मानो प्रियनाथ मल्लिक रोड के उस मकान में पहुँच गया। मानो अपनी आँखों से वह सब-कुछ देखने लगा। सती के भाग्य में इतना दुःख है, इतना कष्ट है, इसकी कल्पना क्या कोई कर सकता था ?

शंभु कहने लगा — उसके बाद माँजी ने जब मुझे बुलाया, तब मैं उनके पास गया। बोला — क्या कह रही हैं माँजी ?

माँजी बोली — बतासी की माँ कहाँ है ? उसे बुला। फिर भूतो की माँ, कैलास, सबको मेरे पास बुला ला। सबको मेरे कमरे में बुला ला। अभी ....

शंभु सबको बुलाकर माँजी के कमरे में ले आया। माँजी के अपने कमरे में। माँजी अपमान और उपेक्षा से अब भी मानो थरथर काँप रही हैं। लेकिन देखकर कोई नहीं समझ सकता। वे बाहर से एकदम धीर, स्थिर और गंभीर लगी ! अपने कमरे में कार्पेट के आसन पर वे बैठी हैं। सबको देखकर वे बोली — सब आ गये ?

बतासी की माँ, भूतो की माँ, कैलास और शंभु सब मौजूद हैं।

माँजी बोली — दरबान कहाँ है ? उसको भी बुला ....

शंभु जाकर दरबान को बुला लाया। *माँजी बोली — दरबान, गेट में रोज* ठीक से ताला लगाया जा रहा है न ?

दरबान बोला — जी हाँ।

माँजी बोली — अगर ताला खुला रहे और बहू बाहर निकल जाय, तो मैं तुम्हें नौकरी से अलग कर दूँगी दरबान, याद रखना !

दरबान बोला — ऐसा कभी नहीं होगा माँजी।

—और शंभु तू वहू का कोई काम मत करना। अगर मैंने देख लिया कि तू उसका काम कर रहा है तो तेरी भी नौकरी चली जायेगी। और सुन लो वतासो की माँ ....

वतासी की माँ चुपचाप एक किनारे खड़ी थी।

माँजी उसकी तरफ देखकर वोलीं — वतासी की माँ, तुम बूढ़ी हो गयी हो, तुमको भी सावधान कर रही हूँ, अगर तुम अपना भला चाहोगी तो वहू के कानों में मंत्र फूँकना वंद कर दोगी। वस इतना सुन लो !

वतासी की माँ मानो हाय-हाय कर उठी। वह वोली — हाय अम्मा, मैं कहाँ, जाऊँ, मैं कव वहूदीदी के कानों में मंत्र फूँकने गयी ? मैं खुद गठिये के दर्द से परेशान हूँ, मैं किसके कानों में मंत्र फूँकूँगी ?

माँजी वोलीं — वहू के कान में कौन क्या मंत्र फूँकता है, यह सब मैं जानती हूँ। मेरे कान में हर वात पहुँचती है। हर तरफ मेरी निगाह रहती है ! मेरे पास दस आँखें हैं। नहीं तो मैं इस घर को इतने दिन कैसे चलाती। कभी का यह घर तवाह हो गया होता मालूम है ?

वतासी की माँ कहने लगी — यह कैसी खतरनाक वात कह रही हो माँ मैं वुढ़िया हूँ, मेरे दिन पूरे हो चले हैं, मैं तुम्हारी वहू के कान में मंत्र फूँकूँगी ! क्या मुझे परलोक का डर नहीं है ?

माँजी वोलीं — यहाँ अपनी रुलाई वंद कर नीचे जाकर रोओ वतासी की माँ, मुझे तंग न करो, जाओ ....

वतासी की माँ वड़वड़ाती हुई चली गयी।

—और शंभु, तू सुन। अगर कभी मैंने सुना कि तू वहू की चिट्ठी छोड़ने गया है तो मैं तुझे खतम करूँगी या खुद खतम हो जाऊँगी। अगर वहू के लिए तेरे मन में इतना दर्द है तो तेरा इस घर में रहना संभव नहीं है।

देर तक काफी डाँट-फटकार के वाद माँजी ने सव को जाने दिया। उसके वाद रसोईघर के वरामदे में वैठक शुरू हो गयी। पहले फुसफुसाना, वाद में वड़वड़ाना। वतासी की माँ वोली — मैं किसी की परवाह नहीं करती। क्यों मैं किसकी परवाह करूँगी ? किसकी परवाह करनी है ? मैं मेदिनीपुर की हूँ मुझे धौंस देना क्या इतना आसान है ! मैं मजा न चखा दूँगी !

भूती की माँ वोली — लेकिन उस समय तो माँजी के सामने मुँह से एक वात नहीं निकली और अव गुर्रा रही हो ?

—तू चुप रह ! छोटा मुँह वड़ी वात न कर ! क्या तेरी करतूत मैं नहीं जानती ? तू किसके स्वरग में दीया जलाने के लिए वाँझ औरत वनी थी, वताऊँ ? दस जने के सामने राज खोल दूँ ?

दीपंकर ने रोककर कहा — वह सव वात रहने दो शंभु, उसके वाद क्या हुआ

नहीं बताऊँ। तुम्हारी बहूदीदी दिनभर दरवाजा बंद करके कमरे में पड़ी रहीं ?

मैंने कहा — वही तो कह रहा हूँ दादाबाबू, यही कहने के लिए मैं आया हूँ।

रात को रसोइये ने पूछा — बहूदीदी नहीं खायेंगी ? हमारे दादाबाबू ने खाना खाया भाभी ने पत्तें लगा लिये, लेकिन बहूदीदी के खाने की बात किसी ने नहीं की। मैंने भाभी से जाकर पूछा — बहूदीदी को खाने के लिए बुलाऊँ भाभी ?

भाभी बोली — अब नखरा करके बुलाने की जरूरत नहीं है। जिसको भूख लगेगी, वह खुद आकर खायेगी। तुम्हें क्यों तकलीफ हो रही है ?

मुझे भी हिम्मत नहीं पड़ी कि जाकर बहूदीदी को बुलाऊँ ! आखिर बतासी की माँ गयी। बहूदीदी के कमरे के सामने जाकर उसने बुलाया — बहूदीदी, खाना नहीं खाओगी ?

अंदर से किसी ने जवाब नहीं दिया। कुछ भी आवाज नहीं मिली। मुझे सचमुच बड़ा डर लगने लगा। कितनी तरह की बातें हो सकती हैं। औरत का मन है, कुछ भी नहीं कहा जा सकता। बच्चा मर जाने के बाद बहूदीदी ने तीन दिन खाना नहीं खाया था। तीन रात उसने कमरे का दरवाजा नहीं खोला था। वह सब तो मैं जानता हूँ। वह भी उस घर के लिए कैसा बुरा वक्त था। बच्चे को जब श्मशान ले जाया गया, तब बहूदीदी रोती-रोती बेहोश हो गयी थी। फिर वह किसी तरह होश में नहीं आयी। डाक्टर ने आकर दवा दी तब उसे होश आया। उस समय [illegible] सास ने बहू की क्या दुर्गति की थी, वह सबको याद है। इसलिए मुझे बड़ा डर लगने लगा। मैं दरवाजे के सामने खड़ा होकर बुलाने लगा — बहूदीदी [illegible] क्या खाना नहीं खाओगी ? दरवाजा तो खोलो।

धीरे-धीरे रात ज्यादा होने लगी।

कहती है कि सारा संसार देखेगा ! इतनी बड़ी हिम्मत है उस औरत की ! जिसमें इतना घमंड हो, वह इस घर में क्यों रहे !

सनातन बाबू ने माँ की तरफ देखकर न जाने क्या सोच लिया। अगल-बगल दो पलंग हैं। अभी तक इस कमरे में एक ही पलंग था। दीवार पर देवी-देवताओं के चित्र टंगे हैं। माँ दिन-रात पूजापाठ लेकर रहती हैं। फिर भी वहीं अपने सोने का इन्तजाम देखकर सनातन बाबू विस्मित हो गये। बोले — तुमने बहू से कह दिया है ?

— क्या कहूँगी ?

सनातन बाबू बोले — यही कि अब से मैं तुम्हारे पास सोया करूँगा ?

—क्या इसके लिए भी बहू से आज्ञा लेनी पड़ेगी। क्या मैं कोई नहीं हूँ ? क्या मेरी बात की कोई कीमत नहीं है ? बहू इस घर में नयी आयी है। क्या उसकी आज्ञा लेकर मुझे कोई काम करना पड़ेगा ?

सनातन बाबू मुश्किल में पड़ गये। वे बोले — नहीं माँ, मैं यह नहीं कह रहा हूँ ....

— फिर ? मेरा आदेश है कि आज से तुम मेरे पास सोओगे। इससे कौन क्या सोचेगा, यह मैं क्यों देखने जाऊँगी ? जब तुम छोटे थे, और मैंने तुम्हें अपनी गोद में खिलाकर पाल-पोसकर बड़ा किया, तब बहू कहाँ थी ? आज वही बहू तुम्हारी अपनी हो गयी है और यह अभागी माँ परायी ?

सनातन बाबू झटपट बिस्तर पर बैठ गये। बोले — क्या मैंने यही कहा है ?

— कहोगे क्यों ? चेहरा देखकर भी तो मन की बात भाँप ली जाती है ? तुम्हारे सामने उसने मुझसे कहा कि संसार देखेगा। अब किसको संसार देखता है, यही देखा जाय। मैं इतनी जल्दी मरूँगी नहीं। मैं भी दिखा दूँगी कि संसार को दिखाना मैं भी जानती हूँ कि नहीं ! मैं भी घोष खानदान की बहू हूँ ! दीदी ने मुझसे ठीक कहा है कि तूने अपनी बहू को ज्यादा प्यार देकर बिगाड़ा है ....

हाँ, तो उसी कमरे में सनातन बाबू की रात कटी और सवेरा हुआ। उसी कमरे में। वे लेटे और सो गये। कब रात बीती वे जान भी नहीं पाये। रोज तड़के सास बहू के कमरे के सामने जाकर बुलाती थीं। लेकिन उस दिन वे बुलाने नहीं गयीं। सती ने भी कमरे का दरवाजा नहीं खोला।

शंभु ने जाकर धीरे-धीरे दरवाजे पर ठहोका मारा।

— बहूदीदी, बहूदीदी, मैं शंभु हूँ।

फिर भी किसी ने दरवाजा नहीं खोला। किसी ने जवाब नहीं दिया।

शंभु बोला — मेरी छाती डर के मारे धड़कने लगी हुजूर। मुझे यही लगने लगा कि कहीं कोई बात न हो गयी हो ! अगर। आगे मैं कुछ सोच नहीं सका। बड़ा डर लगने लगा। डर के मारे मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम होने लगी।

मैं बोला — बहूदीदी, दरवाजा खोलिए, माँजी बाथरूम में नहाने गयी हैं।

लेकिन किसी तरह दरवाजा नहीं खुला हुजूर। कल शाम को दरवाजा बंद हुआ है और आज इतना समय गुजर गया है, बहूदीदी ने न खाना खाया, न कुछ किया। मुझे बड़ा डर लग रहा हुजूर, इसलिए दोपहर में मौका पाकर मैं आपको ढूंढ़ने निकल पड़ा।

दीपंकर बोला — लेकिन अभी तो तुमने कहा कि बहूदीदी ने तुम्हें मेरे पास भेजा है ?

शंभु बोला — हुजूर, मैं उस समय गलत कह गया था। मेरा दिमाग ठीक नहीं था। कल से मुझे बड़ा डर लग रहा है। मैं किसके पास जाऊँगा, किसको खबर दूँगा, कुछ नहीं समझ पा रहा हूँ। एक बेचारी औरत कमरे में बंद पड़ी रहे, और मैं कैसे चुप रहूँ बताइए ? इसीलिए मैं आपके पास दौड़ा हुआ आया। कालीघाट से मुझे यहाँ का पता मिला।

— लेकिन उस घर का कोई कुछ नहीं कर रहा है ? कोई कुछ नहीं पूछ रहा है ?

— कौन क्या कहेगा हुजूर, कौन पूछेगा ? बहूदीदी के लिए कौन परेशान होगा, बताइए ?

दीपंकर देर तक न जाने क्या सोचता रहा। उसके बाद बोला — लेकिन इस मामले में मैं भी क्या कर सकता हूँ शंभु ? उन लोगों के घर के अंदर का मामला है, उसमें वे लोग मेरी बात क्यों मानेंगे ?

शंभु बोला — लेकिन आप कुछ नहीं कहेंगे तो कौन कहेगा ? यहाँ बहूदीदी का और कौन है ? आपके कहने पर बहूदीदी दरवाजा खोल सकती है ! अगर वह जिंदा है तो सिर्फ आपकी बात मानेंगी, और किसी की बात नहीं सुनेंगी।

दीपंकर बोला — तुमसे किसने कहा है कि वह मेरी बात सुनेंगी ?

शंभु बोला — हाँ दादाबाबू, मैं सब जानता हूँ। अगर बहूदीदी किसी की बात सुनेंगी तो बस आपकी। हमारे दादाबाबू या माँजी, किसी की बात वह नहीं सुनेंगी। बतासी की माँ, भूती की माँ, सबने मुझसे यही कहा है। सबने कहा है — शभु, तू उस दिन के उस दादाबाबू को बुला ला, वही आयेगा तो बहूदीदी का गुस्सा कम होगा ....

— लेकिन मैं तुम्हारी बहूदीदी का गुस्सा कम करने जाकर क्या तुम्हारी माँजी की गाली खाऊँगा ?

शंभु बोला — जी, बहूदीदी की जिंदगी के बारे में न सोचकर आप माँजी की गाली की बात सोच रहे हैं ? अगर बहूदीदी का कुछ हो गया तो ?

अब दीपंकर अपने मन में इस बात पर गौर करने लगा। उसके जाने पर शायद सती पर अत्याचार बढ़ जायेगा। फिर सती का पति तो है। उन लोगों से बढ़कर क्या वही सती का भला-बुरा ज्यादा समझेगा ? वह कौन है ? सती का वह कौन है ? कोई

नहीं है। इष्ट-मित्रों में भी उसकी गिनती नहीं है। कहना चाहिए कि इस मामले में दखल देने का उसे कोई अधिकार नहीं है। फिर किस अधिकार से वह वहाँ जायेगा? वह जाकर सती की सास से क्या कहेगा? वह सती के पति सनातन वाबू से क्या कहेगा? फिर सती भी उसकी वात सुनेगी, इसीका क्या ठिकाना है? अगर सती किसी से रूठी भी है तो वह दीपंकर नहीं है। फिर दीपंकर के कहने से उसका गुस्सा क्यों कम होगा?

शंभु वोला — अभी चलेंगे दादावाबू? आप अभी नहीं जायेंगे तो वहुत देर हो जायेगी। वाद में शायद मुलाकात न हो।

दीपंकर तुरंत कोई जवाव नहीं दे सका। शंभु उसके चेहरे की तरफ एकटक देखता रहा। दीपंकर वाहर प्लेटफार्म पर अगणित लोगों की भीड़ की तरफ देखता चुपचाप वैठा रहा।

— कल रातभर मैं सो नहीं सका। मैं कुछ समझ नहीं पा रहा था कि क्या किया जाय। इसलिए सवेरे ही मैंने वतासी की माँ को वुलाया। वतासी की माँ पुरनियाँ औरत है और माँजी से वहुत खार खाती है। भूती की माँ की वहीं थी। सवने कहा — उस दिन वाले दादावाबू को खवर दे, वह कम से कम वहू के वाप को एक चिट्ठी लिख देगा। मैं आपका पता नहीं जानता था। मैंने ड्राइवर से पूछा तो उसने वता दिया। फिर वहीं से यहाँ आ रहा हूँ।

दीपंकर वोला — देखो शंभु, अभी तो मैं नहीं जा सकता, अभी अपने दफ्तर के साहव के साथ काम से आया हूँ....

— काम खतम करके ही आप आइए।

दीपंकर वोला — काम खतम होने में आज देर हो जायेगी। अभी साहव के साथ गड़ियाहाटा की लाइन देखने जाना होगा। वहाँ से मैं कव लौटूंगा, कोई ठिकाना नहीं है।

— हुजूर, साहव ने वुलाया है।

अचानक द्विजपद सैलून के दरवाजे के पास आकर खड़ा हो गया। दीपंकर उठा। वोला — कहो, आ रहा हूँ....

शंभु इच्छा न रहते हुए भी उठा। वोला — फिर मैं जा रहा हूँ दादावाबू।

दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या जवाव दे। थोड़ी देर वाद वोला — तुमने मुझे क्यों खवर दी शंभु। मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि मैं तुम्हारी वहूदीदी का कोई उपकार कर सकूंगा या नहीं। तुम वेकार तकलीफ करके मुझसे कहने के लिए इतनी दूर आये!

शंभु सैलून से नीचे उतरता हुआ वोला — आप जो अच्छा समझेंगे करेंगे, मैं अव कुछ नहीं कहूँगा।

शंभु चला जा रहा था। दीपंकर सैलून के दरवाजे पर खड़ा था। उसने उसे

बुलाया। कहा —अंत तक क्या होता है मुझे खबर करोगे न ?

लगा, शंभु बहुत खुश नहीं है। वह बोला — कोशिश करूँगा ....

शंभु धीरे-धीरे लाइन पार कर चला गया। दीपंकर वहीं, सैलून के दरवाजे का हैंडिल पकड़कर थोड़ी देर खड़ा रहा। बाहर स्टेशन के प्लैटफार्म पर भीड़ है। अभी लक्ष्मीकांतपुर लोकल आयेगी। बहुत लोग जमा हुए हैं। उधर चाय का स्टाल है। उसे फिर भी मानो सब सूना-सूना लगा। अचानक उसे वह जगह बड़ी वीरान लगी। मानो फिर आँधी आयेगी। मानो बैशाख की आँधी से फिर सब तहस-नहस हो जायेगा। ऐसी आँधी उसके बचपन में ईश्वर गांगुली लेन में उठा करती थी। आँधी चलते ही हाजी कासिम के बाग के नारियल के पेड़ इधर से उधर हिलने लगते थे। उस समय उसे बड़ा डर लगता था। सचमुच, बहुत दिन हो गये कलकत्ते में आँधी नहीं आयी। मानो बहुत दिन हो गये सारी दुनिया में कहीं आँधी नहीं चली। मानो इतने दिन, इतने बरस सिर्फ आँधी की तैयारी में ही लग गये। अब पछाहीं आसमान में थोड़ा-थोड़ा करके बादल इकट्ठा होने लगा है। बादल जमा हुआ है फ्री स्कूल स्ट्रीट के आसमान में, गड़ियाहाटा में लक्ष्मी दी के मकान के आसमान में और प्रियनाथ मल्लिक रोड के आसमान में। अनंत राव भावे मानो उसी आँधी का अगुआ है, विवियन ले मानो उसी आँधी की खबर लाया है और सनातन बाबू मानो उस आँधी के आगे-आगे चले आ रहे हैं। क्या दीपंकर ही किसी दिन सोच सका था कि उस आँधी की चपेट में कभी सब लोग आ जायेंगे। क्या वह जान पाया था कि उस आँधी से वह खुद भी नहीं बच पायेगा ?

दीपंकर का सारा जीवन मानो तीन स्थानों से एकाकार हो गया था। वह पैदा हुआ था कहीं, पढ़-लिखकर बड़ा हुआ था कहीं और विचित्र अनुभवों की धूप-छाँह में जीवन को कहीं और जीने लगा था। लेकिन वह किसी को त्याग नहीं सका। बचपन के उस छोटे घेरे से आज के इस बड़े आदमी की कोई दूरी नहीं रह गयी। उसकी सिर्फ उम्र बढ़ी, अनुभव बढ़े लेकिन जीवन बड़ा नहीं हुआ। उसकी दृष्टि साफ नहीं हुई और उसके दृष्टिकोण में फैलाव नहीं आया। नहीं तो सब जानकर भी क्यों उसने अपने मन की छोटी परिधि में सती को समेट लिया था ? सती तो दूसरे की पत्नी है। वह तो प्रियनाथ मल्लिक रोड के घोष बाबू के घर की बहू है ! यह सब जानकर भी क्यों सती के भले बुरे की जिम्मेदारी दीपंकर ने अपने पर ले ली ?

लेकिन वह बात अभी नहीं।

रॉबिन्सन साहब अपने सैलून में तैयार था। मिसेज रॉबिन्सन तैयार थी। जिमी भी तैयार था।

रॉबिन्सन साहब ने पूछा —आर यू रेडी सेन ?

—येस सर !

—हम लोग भी तैयार हैं।

रॉबिन्सन साहब उठा। मिसेज रॉबिन्सन भी साहब के साथ खड़ी हुई।

रॉबिन्सन साहब बोला — जिमी इज वेरी जॉली टुडे। जिमी आज बहुत खुश है, सेन!

दीपंकर ने पूछा — ह्वाई सर?

साहब बोला — बिकॉज़ मिसेज़ हमारे साथ है।

मेमसाहब सिगरेट पीने लगी थी। बोली — जानते हो सेन, हि लाइक्स मी मोस्ट ....

उसके बाद मेमसाहब जिमी को गोद में लेकर मोटर ट्राली में गयी। सचमुच जिमी उसका कितना प्यारा कुत्ता है! साहब मोटर ट्राली चलाने लगा। विचित्र आवाज करती हुई मोटर ट्राली चल पड़ी। मजुमदार बाबू ने लाइन क्लीयर देने की व्यवस्था की थी। साउथ केबिन पर कराली बाबू ने खिड़की से झाँककर देखा। बड़ा साहब इन्स्पेक्शन करने जा रहा है। लेवल क्रॉसिंग पर अक्सर दुर्घटना होती है। उस दिन शराब पीकर कुछ लोग लाइन पार कर रहे थे, इतने में गुड्स ट्रेन ने आकर सबको दबा दिया। बहुत दिन से साहब ने सोच रक्खा था कि सेफ्टी मेजर्स को और अच्छा करना होगा। वहाँ लेक भी बन गया है। अब वहाँ की दलदली जमीन को पाटकर और बड़ा लेवल क्रॉसिंग बनाना होगा। गेटमैनों की संख्या बढ़ानी होगी। लोगों की जिन्दगी से खेलना ठीक नहीं है। इसके लिए काफी समय तक बोर्ड से करेस्पॉण्डेन्स करना पड़ा। इसलिए साहब के लिए खुद उस स्पॉट को देखना जरूरी था।

दोनों तरफ जलकुंभियों से भरे तालाब, खड्ड और कच्चे रास्ते हैं। तीसरे पहर का सूरज पश्चिम दिशा में झुकने लगा था।

साहब मोटर का लीवर दबाये बैठा था और इंजन से फट-फट आवाज निकल रही थी।

रॉबिन्सन साहब ने दोनों तरफ निगाह दौड़ाकर कहा — सी हाउ डर्टी! इसीलिए मच्छर होता है। सी० एम० ओ० को एक नोट भेजना पड़ेगा, टेक यू डाउन, सेन!

दीपंकर के हाथ में फाइल थी। उसने उसे खोलकर नोट ले लिया। सी० एम० ओ० को चिट्ठी भेजने पर मेडीकल डिपार्टमेंट स्टैप लेगा। मलेरिओलॉजिस्ट को खबर करते ही वह यहाँ तेल का छिड़काव करा देगा। जलकुंभियों से भरे इन गंदे तालों में तेल का छिड़काव होगा! यहीं के मच्छर स्टाफ को काटते हैं। केबिन के लोग मच्छर के मारे ठीक से काम नहीं कर सकते। आखिर गेटमैन जैसे लोग भी इन्सान हैं, मच्छर न रहने पर उनकी भी जान बचेगी! रॉबिन्सन साहब ने मैप खोलने के लिए कहा। मैप देखता हुआ साहब ट्राली चलाने लगा। दिस एरिया! पहले यहाँ कितना जंगल था! साहब को उन दिनों की बात याद थी। उस समय दीपंकर नौकरी करने नहीं आया था। अब यह इलाका कितना बदल गया था। कभी यह और साफ-सुथरा हो जायेगा। इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट इधर शहर बनायेगा।

वही गड़ियाहाट लेवल क्रॉसिंग।

भूपण माली ड्यूटी पर है। साहब और मेमसाहब के ट्राली से उतरते ही भूपण ने जमीन पर माथा टेककर साहब को सलाम किया। उसके बाद उसने मेम साहब को भी सलाम किया। मेम साहब ने कुत्ते के गले से चेन खोल दी। चेन खोलकर उसने सिगरेट जलायी।

रॉबिन्सन साहब ने दीपंकर को पास बुलाया — कम हियर सेन, जरा डायग्राम खोलो ....

मैप खोलते ही साहब हर चीज मिलाकर देखने लगा ट्रैफिक वाल्यूम की माँग के मुताबिक इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट ने ब्लूप्रिंट बनाकर दिया है। यह देखो, यहाँ से लेक शुरू हुआ है। यह रेल लाइन के पैरेलल पश्चिम में रसा रोड तक चला जायेगा। एकदम उधर ओवरब्रिज तक। उसके बाद कभी दोनों तरफ शहर बस जायेगा। ट्रैफिक बढ़ जायेगा। तब इस लेवल क्रॉसिंग पर चहलपहल बहुत बढ़ जायेगी। इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट से हुए पत्र-व्यवहार की फाइल भी दीपंकर लाया था। इस गुमटीघर को भी बड़ा करना होगा। काफी बड़ा। गुमटीघर में बैठकर लीवर खींचते ही गेट बंद हो जायेगा। उधर ईस्ट केबिन है और इधर वेस्ट केबिन — इनके बीच एक फर्लांग जमीन लेकर और चौड़ा रास्ता बनाना होगा। एक साथ दो कार्ट आ-जा सकें — अप ऍण्ड डाउन! रॉबिन्सन साहब ने बहुत कुछ सोच रखा है। रेलवे से वह बहुत प्यार करता है। रात-दिन वह रेलवे की भलाई की ही बात सोचा करता है — रेलवे और रेलवे स्टाफ। स्टाफ की तकलीफ वह बर्दाश्त नहीं कर सकता। और मेमसाहब? भूपण तो मेमसाहब के नाम पर जान देता है। मानो मेमसाहब उसकी माँ हैं। सिर्फ मेमसाहब का सिगरेट पीना उसे पसंद नहीं है। साहब की इच्छा है कि वह इस रेलवे को अपने मन मुताबिक बनायेगा। अच्छे-अच्छे स्टाफ क्वार्टर होंगे। सबको बढ़िया यूनिफार्म मिलेगा। स्टाफ के बच्चों की पढ़ाई मुफ्त होगी। अगर साहब रहता तो शायद होता, या नहीं भी होता, लेकिन उसे यह मालूम नहीं था कि बिना नोटिस के इतनी जल्दी उसके जाने का हुक्म आ जायेगा। बिना नोटिस के दुनिया में लड़ाई छिड़ जायेगी और बिना नोटिस के उसे रेलवे छोड़कर जाना पड़ेगा। और वह लड़ाई भी कोई मामूली नहीं होगी! साहब नहीं जानता था कि यह लड़ाई [illegible] घण्टे तेईस मिनट चलेगी। और सचमुच यह सब बिना [illegible] के ही हुआ।"

दीपंकर को अचानक याद आया कि पास ही तो लक्ष्मी दी रहती हैं [illegible] बहुत पास। क्या एक बार लक्ष्मी दी के पास नहीं जाया जा सकता? [illegible] थोड़ी दूर जाने पर दाहिने हाथ वह मकान है। मिस्टर दातार क्या कभी [illegible] हुए? अनंत बाबू क्या अब भी [illegible] लक्ष्मी दी के साथ [illegible] है? क्या अनंत बाबू अब भी उसी तरह शराब पीकर आते हैं और [illegible] उससे बात करती है? एक बार [illegible] था जब लक्ष्मी दी के [illegible] नहीं था और लक्ष्मी दी के लिए दुर्गेश्वर मित्र

प्रियनाथ मल्लिक रोड पर सती के घर जाना पड़ा था। उस दिन सती से मिले विना और पता लिये विना ही वह लौट आया था। और आज लक्ष्मी दी के पास भुवनेश्वर वावू का पता जानने के लिए जाना पड़ेगा ! लेकिन लक्ष्मी दी अगर पता न दे तो ! यदि वह पूछे कि पता लेकर क्या होगा ? किसके लिए पते की जरूरत पड़ गयी ? क्या सती का सारा हाल वताने पर भी वह पता नहीं देगी ? दीपंकर वेचैन हो उठा। वहुत दिन से वह इधर नहीं आया था। आने की इच्छा होने पर भी वह नहीं आया था। जान-वूझकर वह नहीं आया था। क्या जरूरत थी आने की ? लेकिन इतने पास आने के वाद दीपंकर का मन वेचैन होने लगा।

मैप हाथ में लेकर देखता हुआ साहव कितनी ही वातें कहता जा रहा है। इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, वेस्ट केविन, रौंगमैन, डवल लाइन और व्लूप्रिंट के वारे में सारी टेकनिकल वातें। लेकिन दीपंकर एक भी वात नहीं सुन रहा है। मानो सुनने की इच्छा ही नहीं हो रही है। इतना पास आकर भी क्या वह लक्ष्मी दी से नहीं मिल सकेगा ?

अचानक मेमसाहव को खयाल आया।

— जिम्मी, माइ जिम्मी ....

रॉविन्सन साहव चौंका। दीपंकर ने पलटकर देखा।

छोड़ दिये जाने पर गेट के उस पार दलदल के पास जिमी थोड़ा घूम-टहल रहा था। अचानक जिमी की चीख सुनकर मेमसाहव चौंकी। मानो मेमसाहव के प्राण उड़ गये। वह दौड़कर जिमी के पास गयी। साहव भी दौड़कर गया। वहाँ आसपास नरकट के कुछ पौधे हैं, जमीन ढलवी और गीली है और उसके वाद जलकुंभियों से भरा पानी।

मेमसाहव ने पास जाकर कुत्ते को पकड़ा ही था कि दीपंकर ने देख लिया। उसी ने पहले देखा। हलके अँधेरे में सव कुछ साफ दिखाई नहीं पड़ रहा था, फिर भी उसने देख लिया।

— स्नेक है सर, स्नेक ....

साहव और मेमसाहव दोनों घवड़ाकर तीन कदम पीछे हट आये। काला करैत साँप तव तक रेंगता हुआ उस दलदल में उगे नरकटों की झाड़ी में छिप गया। मेमसाहव अपना सिल्क गाउन सँभाले विना वहीं कीचड़ में वैठ गयी और कुत्ते को गोद में लेकर जोर-जोर से रोने लगी।

— जिम्मी, माइ जिम्मी ....

रॉविन्सन साहव, दीपंकर और भूषण, सव अवाक् देखते रह गये। उनके मुँह से एक शब्द भी नहीं निकला। थोड़ी देर के लिए तीनों अपनी भाषा भूल गये। मेमसाहव कुत्ते के मुँह पर हाथ रखकर रोती रही। कोख की संतान मर जाने पर भी शायद कोई स्त्री उस तरह नहीं रोती।

● ● ●

हर इन्सान का कोई-न कोई सहारा रहता है। यह उसके लिए सहारा भी होता है और बोझ भी। यही बोझ ढोता हुआ जब तक वह चलता है, तब तक उसे अपार शांति मिलती है। यही आनन्द का बोझ है और यही विषाद का बोझ भी। कम हो या ज्यादा, यही बोझ उसकी जिंदगी का खजाना होता है। इसी खजाने को अगोरता हुआ इन्सान जीता है और ज्यादा दिन जीना चाहता है। रात के अँधेरे में मौका पाकर वह यादों के इस खजाने को खोलकर देखता है। एक-एक चीज को वह उठाता-धरता, धूल झाड़ता और सरियाकर जतन से स्मृति की आलमारी में सजाता है। एक-दो घड़ी के लिए कब किसे कौन अच्छा लगा था, कब किसने हँसकर किससे बात की थी और कब किसने किसे दुःख दिया था, उसी की छोटी-मोटी यादें। उम्र जितनी बढ़ती जाती है, यादों का खजाना उतना बड़ा होता जाता है। ढेर की ढेर यादें जम जाती हैं। ढेर जितना बड़ा होता है, इन्सान कंजूस की तरह उतना ही बटोरता जाता है। अपने मन के कोने में वह उनको छिपा कर रखता है — कहीं कोई जान न जाय, कहीं कोई देख न ले। यह खजाना उसका अकेले का है, एकदम उसका अपना। वहाँ किसी को झाँकने का अधिकार नहीं है।

ईश्वर गांगुली लेन में बिताये बचपन के उन दिनों में छोटी-छोटी स्मृतियाँ जमती रहीं और कभी उनका ढेर बन गया था। दीपंकर जब बड़ा हुआ था, उसकी उम्र ज्यादा हुई थी, तब कभी-कभी वह उन स्मृतियों का बोझ लेकर सोचने बैठ जाता था। वह उनको सरियाता, सजाता और ठीक से रखता था। कभी-कभी वह सोचता था कि ऐसा क्यों हुआ? क्यों ऐसा हुआ? किसकी गलती से ऐसा हुआ? इसके लिए कौन जिम्मेदार है। किन लोगों के कारण ऐसा हुआ? लेकिन लाख सोचकर भी वह किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाता था।

याद है, दूसरे दिन दफ्तर जाकर दीपंकर को पहले ही रॉबिन्सन साहब की बात याद पड़ी थी। साहब दफ्तर नहीं आया था। साहब या मेमसाहब कोई रात को सो नहीं सका था। मेमसाहब खूब रोयी थी। कोई मेमसाहब भी इस तरह रोती है, यह दीपंकर नहीं जानता था। उसने मिस माइकेल को पहली बार रोते देखा था। उसके बाद मिसेज़ रॉबिन्सन को देखा।

— माइ जिम्मी, माइ जिम्मी —

मरे कुत्ते को गोद में लेकर मेमसाहब फूट-फूटकर रोयी थी। यह देखकर सूपण की आँखें भर आयी थीं। रॉबिन्सन साहब रोया नहीं, लेकिन उसका चुप रहना रोने से भी अधिक करुण था।

साहब के घर टेलीफोन कर क्रॉफोर्ड साहब ने शोक प्रकट किया। साहब के

कुत्ते के शोक में सारा दफ्तर मानो हाहाकार करने लगा था। उसके बाद एक दिन साहब ने नौकरी भी छोड़ दी थी। कुत्ते के मरने के बाद साहब फिर दफ्तर नहीं आया। वह दफ्तर में अपने कमरे में नहीं घुसा।

उस दिन बहुत रात हो गयी थी। उसी मोटर ट्राली से बालीगंज लौटना पड़ा था। उसी सैलून में बैठकर स्यालदा के अस्पताल जाना पड़ा था। उस कुत्ते के इलाज का इन्तजाम करना पड़ा था। खबर पाते ही सी० एम० ओ० आया। डी० एम० ओ०, असिस्टेंट सर्जन, कम्पाउंडर, नर्स, ऐसा कोई नहीं था जो नहीं आया। सब आकर इकट्ठा हुए। लेकिन उस समय कुछ नहीं करना था। उस समय सारी आशाओं की समाप्ति हो चुकी थी। रॉबिन्सन साहब बेचैनी से सी० एम० ओ० के चेहरे की तरफ देख रहा था। दीपंकर ने भी देखा।

डाक्टर ने कहा—ही इज डेड ऐंड गॉन।

उसके बाद सांत्वना देना था। दीपंकर ने कई लोगों की मृत्यु देखी है। किरण के बाप की मृत्यु, अघोर नाना की मृत्यु और विन्ती दी की अपमृत्यु। उसके लिए रॉबिन्सन साहब के जिमी की मृत्यु कोई नयी बात नहीं है, अस्वाभाविक भी नहीं। लेकिन जिमी एक कुत्ता है। उसके मरने पर साहब को इतना शोक हो सकता है, यही दीपंकर के लिए नया था। उसी दिन दीपंकर ने समझा था कि जिमी शायद अघोर नाना से अधिक भाग्यवान है। अघोर नाना जिस दिन मरे थे, वह दिन उसे याद आया। उस दिन रोने के लिए कोई नहीं था। उस दिन गेंदे की एक माला खरीदने में भी छिटे और फोंटा ने एतराज किया था। लेकिन जिमी के लिए साहब और मेमसाहब का शोक देखकर कौन कहेगा कि जिमी मनुष्य नहीं, मामूली कुत्ता है। उस कुत्ते के लिए कॉफिन आया और फूल आये। उसी कुत्ते के लिए उस दिन शवयात्रा निकली। साहब, मेम-साहब, घोषाल साहब, दीपंकर और रेलवे के लगभग सभी आफिसर काला सूट पहन कर ताबूत के साथ कब्रिस्तान तक गये।

हाँ, गांगुली बाबू ही पहले वह खबर लाया लाया था। बोला था—जानते हैं सेन बाबू, रॉबिन्सन साहब नौकरी छोड़ रहे हैं। शायद नौकरी छोड़कर वे विलायत चले जायेंगे।

—आपसे किसने कहा ?

गांगुली बाबू बोला—के० जी० दास बाबू से सुना। सुना कि घोषाल साहब रोज रॉबिन्सन साहब के पास जा रहा है, ताकि उसे वह पोस्ट मिल जाय।

दीपंकर बोला—हो सकता है, मैं कुछ नहीं जानता, मुझे कुछ भी नहीं मालूम है।

—आप साहब के पास नहीं जाते ?

दीपंकर ने कहा—मैं शुरू में कई दिन गया था, बाद में नहीं गया। सब लोग सोचने लगे थे कि मैं शायद प्रोमोशन के लिए जा रहा हूँ। ऐसे ही मैं बदनाम हूँ कि

साहब के कुत्ते के लिए बिस्कुट खरीद देने पर मुझे प्रोमोशन मिला है।

सचमुच दीपंकर ने सोचा था कि प्रोमोशन से अब क्या होगा, क्या होगा ज्यादा रुपये मिलने से! क्या और बड़ा प्रोमोशन मिलने पर और बड़ा सुख मिलेगा! क्या ज्यादा रुपया हो जाने पर ज्यादा शांति मिलेगी? माँ का सुख तो नहीं बढ़ा, माँ को अधिक शांति भी नहीं मिली। लगता है, माँ नये मकान में आने के बाद ज्यादा चिड़चिड़ी हो गयी है। बात-बात पर माँ काशी को डाँटती है और अपना मिजाज खराब करती है। लेकिन अब तो माँ की अपनी गृहस्थी है, अब तो माँ ही मालकिन है और माँ ही सब कुछ है। अब माँ की बात पर कोई कुछ नहीं कह सकता। घर में माँ का एकछत्र अधिकार है। दीपंकर भी माँ से पूछे बिना कोई काम नहीं करता। माँ से आज्ञा लिये बिना मानो वह कुछ सोच भी नहीं सकता। कहीं माँ के मन को ठेस न लगे, कहीं भी माँ का मन दुःखी न हो, इसका वह बराबर ख्याल रखता है। फिर भी माँ की शिकायत कम नहीं होती। मानो अशांति और हजारों हजार शिकायतों से माँ घिरी हुई है।

संतोष चाचा घर में है और उसकी लड़की भी। शायद बिना किसी उद्देश्य के वे दोनों रसूलपुर से यहाँ आये थे। या हो सकता है कि उनका कोई निश्चित उद्देश्य रहा हो। लेकिन आने के बाद वे गये नहीं। संतोष चाचा रसोईघर के बरामदे में पाँव पसारकर बैठ जाता है और माँ से बातें करता है। क्षीरोदा मसाला पीसती है और माँ के काम में मदद करती है। माँ इससे खुश है, क्योंकि उसके काम में हाथ बटानेवाली एक लड़की मिल गयी है। माँ खाना बनाती है और कहती है— भंडार घर से सरसों का तेल तो लाना बिटिया।

संतोष चाचा बरामदे में बैठा रहता है। कहता है— बहुत दिन हो गये मांस नहीं खाया भाभी, किसी दिन मांस पकाओ न। देखता, तुम्हारे कलकत्ते का मांस कैसा लगता है! खूब तीता डालना और गरम मसाला ....

फिर क्षीरो की तरफ देखकर संतोष चाचा कहता है— क्यों री क्षीरो, एक बार रसूलपुर में बकरा कटा था, तुझे याद है न? तू उस समय बहुत छोटी थी। ओफ! तेरी माँ ने गोश्त में कैसा तीता डाला था! तेरे तो मुँह से लार झरने लगी थी।— तुम्हारी देवरानी खाना बहुत बढ़िया पकाती थी भाभी। इतना बढ़िया खाना पकाती थी कि मैं लालच के मारे सारा भात खा जाता था। आखिर भात नहीं बचता था तो वह दोबारा चावल चढ़ा देती थी।

अपने ही मजाक से संतोष चाचा खूब हँसने लगता।

संतोष चाचा से कोई बात करे या न करे, कोई फर्क नहीं पड़ता।

दीपंकर को देखते ही वह कहता— आओ बेटा, अब दफ्तर से लौटे? हाँ बेटा, खूब मन लगाकर नौकरी करना, नौकरी ही लक्ष्मी है, लक्ष्मी [illegible]
मत करना। मेरी इस बात को गाँठ बाँध लो।

दीपंकर पूछता — आपको यहाँ कोई असुविधा तो नहीं हो रही है ?

— अरे, असुविधा होने पर क्या मैं चुप रहूँगा ? मैं वैसा जीव नहीं हूँ वेटा। देखो न, उस दिन भाभी से कहा कि मैंने सुना है कि कलकत्ते के लोग चाय पीते हैं, लेकिन तुम्हारे यहाँ तो चाय नहीं वनती। वस, उसी दिन से मुझे चाय मिलने लगी और मैं रोज चाय पी रहा हूँ। सवेरे सोकर उठता हूँ तो भाभी चाय वना देती है। कल मांस भी खाया। मुझे कोई असुविधा नहीं है वेटा।

फिर जरा रुककर संतोष चाचा वोला — लेकिन तुम तो दिखाई नहीं पड़ते वेटा ! तुम कव दफ्तर जाते हो और कव वहाँ से आते हो, पता नहीं चलता।

दीपंकर वोला — आजकल दफ्तर में वहुत ज्यादा काम पड़ा है, इसलिए लौटने में देर हो जाती है।

— लेकिन वेटा, तुम तो रेल में नौकरी करते हो, हम लोगों को पास-ओस नहीं दे सकते, वुढ़ापे में थोड़ा तीरथ-धरम कर आते। सुना है, भाभी भी कहीं नहीं गयी ....

इस वात का क्या जवाव दे, दीपंकर समझ नहीं पाता।

संतोष चाचा फिर वोला — तुम वेटा रेल में नौकरी करोगे और तुम्हारा चाचा पैसा खर्च कर टिकट लेकर रेलगाड़ी में वैठेगा, यह तो वड़ी शरम की वात है। लोग क्या कहेंगे ? फिर मेरे पास इतना पैसा भी कहाँ है ?

दीपंकर इसका कोई जवाव नहीं दे सका। ऐसे लोगों को यह समझाना मुश्किल है कि गाँव के रिश्ते के चाचा के लिए पास मिलना कठिन है। सिर्फ गाँव का रिश्ता क्यों अपने चाचा, ताऊ और वाप के लिए भी किसी को पास नहीं मिलता। लेकिन संतोष चाचा से इतनी वातें करना वेकार होता। दफ्तर से लौटकर रोज दीपंकर देखता कि घर में खूव खाना-पीना चल रहा है। संतोष चाचा लाई, पराँठा या और कुछ खा रहा है। माँ पास में वैठी है। कहती है — नौकरी तेरी है कि नहीं ?

दीपंकर हंसता है। कहता है — नौकरी मेरी नहीं जायेगी माँ घवड़ाओ नहीं। माँ कहती है — फिर भी डर लगता है वेटा, नृपेन वावू ने तेरी नौकरी लगवा दी थी, इसलिए यह सव चल रहा है। लेकिन आजकल कौन किसको नौकरी देता है ?

ये सव वहुत पुरानी वातें हैं। फिर भी माँ को सव याद है। माँ मन ही मन अतीत के वारे में सोचती है, वर्तमान को टटोलती है और भविष्य की ओर देखती है। दीपंकर कभी-कभी सोचता है कि माँ न रहती तो कौन इस तरह उसकी वात सोचता। माँ के अलावा उसका और तो कोई नहीं है।

दीपंकर पूछता है — तुम कहीं जाओगी माँ ? काशी, वृन्दावन या गया ? संतोष चाचा कह रहा था ....

माँ वोली — जा तो सकती हूँ, लेकिन यहाँ तुझे कौन देखेगा ?

— क्यों ? काशी तो है। वही मेरा भात वना देगा।

माँ बोली — तब तो हो चुका, काशी तुझे भात बनाकर देगा और तू खाकर दफ्तर जायेगा।

दीपंकर बोला — दो-चार दिन वह किसी तरह चला लेगा माँ। फिर क्या तुम जिंदगी भर यहाँ रहकर मेरे लिए खाना पकाया करोगी ?

माँ बोली — फिर तू भी हमारे साथ चल न ....

लेकिन दीपंकर अभी कैसे जा सकता है ! इस समय दफ्तर छोड़कर एक दिन के लिए भी कहीं जाया नहीं जा सकता। दिन पर दिन काम बढ़ता जा रहा है। दीपंकर बोला — इस समय मैं दफ्तर छोड़कर कहीं नहीं जा सकता माँ। बहुत काम है। साहब भी दफ्तर नहीं आ रहा है।

सचमुच काम बहुत बढ़ गया है। रॉबिन्सन साहब आजकल दफ्तर नहीं आता। मिस्टर घोषाल रोज रॉबिन्सन साहब के घर जाकर न जाने उससे क्या कह रहा है। न जाने वह साहब के कान में क्या भर रहा है। दफ्तर में तरह-तरह की बातें सुनने को मिलती हैं। क्रॉफोर्ड साहब कुछ नहीं कह रहा है। दफ्तर में अनिश्चयता का माहौल है। उस दिन दफ्तर जाते ही दीपंकर ने पास सेक्शन के बड़े बाबू को बुला भेजा। हरीश बाबू बूढ़ा है और एक नंबर का काइयाँ। पास का धंधा कर वह चार पैसे कमाया करता है। वह कार्ड पास किराये पर दिया करता है और कभी-कभी पास बेचता भी है। सेन साहब के बुलाते ही वह दौड़ा हुआ आया। बोला — आपने मुझे बुलाया सर ?

यही हरीश बाबू पास देने का मालिक है। क्लर्कों के सामने वह अलग रूप धरता है। उनके आगे उसका मिजाज दूसरी तरह का रहता है। दीपंकर के सामने आकर वह बोला — आपको पास चाहिए सर ?

दीपंकर बोला — मुझे नहीं, माँ के लिए चाहिए। माँ काशी जायेंगी।

हरीश बाबू बोला — मैं फार्म ला रहा हूँ, आपसे पूछकर खुद फिल-अप कर लूँगा।

फिर हरीश बाबू भागा-भागा फार्म ले आया और खुद उसे भरने लगा। बोला — सिर्फ आपकी माँ जायेंगी ? और कोई नहीं ? भाई, बहन, चाचा, ताऊ या और कोई ?

दीपंकर जरा मुस्कराया। दीपंकर के मुस्कराने पर हरीश बाबू मानो गद्गद हो गया।

दीपंकर ने पूछा — क्या आजकल चाचा-मामा के लिए भी पास मिल रहा है हरीश बाबू ?

हरीश बाबू बोला — आप अगर चाहें तो वह भी मैं कोई ढंग निकालकर कर सकता हूँ। मेरे हाथ में सब कुछ है। अभी उस दिन घोषाल साहब ने वाइफ के लिए पास लिया।

—घोषाल साहब की वाइफ ! मिस्टर घोषाल ने तो शादी ही नहीं की ?

हरीश बाबू बोला — वे तो अक्सर लेते हैं । वे कभी अकेले बाहर नहीं जाते । उनके साथ वाइफ रहती है और कभी-कभी दो-तीन सिस्टर-इन-लॉज भी रहती हैं । मैं तो सर, आप लोगों की सेवा करने के लिए हूँ, फिर भी दफ्तर में सब लोग मुझे बदनाम करते हैं, कहते हैं कि मैं पास बनवाकर किराये पर देता हूँ ।

दीपंकर सुनकर आश्चर्य में पड़ गया । बोला — क्या आजकल सिस्टर-इन-लॉज़ का भी पास मिलने लगा है ?

हरीश बाबू बोला — नहीं मिलता सर, रूल नहीं है । लेकिन मैं जब तक हूँ, तब तक कौन बोलने वाला है ? मैं अनमैरेड सिस्टर लिख देता हूँ । बताइए, कौन पकड़ेगा ? मैं आपलोगों की सेवा के लिए सब कर सकता हूँ । आप भी लीजिए न, मदर के साथ अनमैरेड सिस्टर का पास । अंकल-ऑंकल हो तो उसका भी लीजिए । मैं ऐसे कायदे से बना दूँगा कि कोई पकड़ नहीं पायेगा ।

—चुप रहिए !

दीपंकर की कड़कती आवाज से हरीश बाबू के हाथ से कलम एकाएक गिर पड़ी । उसने सेन साहब की तरफ देखा । यह सेन साहब की कैसी मूर्ति है ! हरीश बाबू ने जल्दी से आँखें नीची कर लीं । दीपंकर हरीश बाबू की हिम्मत देखकर आश्चर्य में पड़ गया । आखिर इन लोगों ने क्या सोच रखा है ! क्या सभी घोषाल साहब हैं ? जब दीपंकर क्लर्क था, तब यही हरीश बाबू उससे दूसरी तरह का व्यवहार करता था । हरीश बाबू उसे टके का आदमी भी नहीं समझता था । आज वह गद्देदार कुर्सी पर बैठ गया है तो क्या हरीश बाबू एकदम बदल जायेगा । उसकी खुशामद में गद्गद हो उठेगा । उसकी पदोन्नति हुई है, इसीलिए उसकी इतनी खातिर होगी ? सिर्फ उसकी तनख्वाह बढ़ गयी है, इसलिए उसकी इतनी इज्जत होगी ?

—क्या आप सबको अपने समान समझते हैं हरीश बाबू ?

—सर, मुझे माफ कीजिए । मुझसे गलती हो गयी है ।

दीपंकर ने फार्म पर दस्तखत कर दिया तो हरीश बाबू फार्म लेकर ग्वालिन नामक बरसाती कीड़े की तरह रेंगता चुपचाप खिसक गया । फिर आधे घंटे बाद वह पास लेकर पहुँच गया । पास देखकर दीपंकर बोला — ठीक है, आप जाइए ।

स्काउंड्रल ! दीपंकर मन ही मन बोला । लेकिन दूसरे ही क्षण वह चौंक पड़ा । कौन स्काउंड्रल नहीं है ? सभी तो स्काउंड्रल हैं ! फिर दीपंकर लज्जित हुआ । वह भी तो खुद स्काउंड्रल है ! आखिर वह क्यों इतना बिगड़ गया ! क्यों ? नृपेन बाबू को तो वह इस तरह अपमानित नहीं कर सका था । उस समय तो उसने नृपेन बाबू की बदतमीजी को खामोशी से बरदाश्त कर लिया था ! उसने जल्दी से मधु को बुलाया । कहा — मधु, पास बाबू को बुला ला ....

पास बाबू फिर सिर नीचा किये कमरे में आया । बोला — आपने मुझे बुलाया

सर ?

दीपंकर बोला — मैंने आपको अकारण डाँटा है हरीश बाबू, आप बुरा न मानिएगा ।

हरीश बाबू हँसा । मानो कुछ नहीं हुआ । बोला — नहीं, नहीं, आप मुझे शर्मिंदा न कीजिए सर ! आपने तो सही बात कही है । यही देखिए न, अक्सर लोग आकर मुझसे कहते हैं और दूसरों के लिए मुझे कितना गैरकानूनी काम करना पड़ता है ! यही घोषाल साहब और क्रॉफोर्ड साहब, सबको यही हालत है । ये लोग अक्सर गैरकानूनी पास लेते हैं । सिर्फ ये ही लोग नहीं, सभी लोग लेते हैं सर ! रेल की नौकरी करके कौन गलत पास नहीं ले रहा है ? आखिर वे पैसे देकर टिकट कटाकर क्यों गाड़ी में बैठेंगे सर ? सिर्फ आपको मैंने देखा ....

— खैर !

दीपंकर ने फाइल की तरफ ध्यान दिया तो हरीश बाबू सलाम करके चला गया ।

घर जाते ही माँ आयी । दीपंकर बोला — माँ, तुम्हारे लिए पास लाया हूँ । तुमने कहा था न कि विश्वनाथ दर्शन करने जाओगी ....

— अरे !

माँ भी आश्चर्य में पड़ गयी । बोली — अरे ! मैंने तुझसे कब कहा कि मैं विश्वनाथ दर्शन करने जाऊँगी ?

दीपंकर बोला — तुमने कहा था माँ, तुम्हें याद नहीं है । नृपेन बाबू को मैंने जिस दिन नौकरी के लिए दरख्वास्त दी थी, उसी दिन तुमने कहा था ....

— लेकिन मैं किसके साथ जाऊँगी ! मैं वहाँ का कुछ नहीं जानती, वहाँ किसी को नहीं पहचानती — कहाँ जाऊँगी, कहाँ रहूँगी और यहाँ तेरी देखभाल कौन करेगा ?

— क्यों ? संतोष चाचा जायेगा, संतोष चाचा की लड़की जायेगी — तुम लोग तीन जने जाओगे । मैं सब इंतजाम करके गाड़ी में बिठा दूँगा । फिर मेरे लिए तुम मत सोचो ।

— उन लोगों के लिए भी पास है क्या ?

दीपंकर बोला — उन लोगों के लिए पास नहीं मिलेगा माँ, मैं उन लोगों को टिकट कटाकर दूँगा ।

— तू क्या कह रहा है ? पैसे खर्च कर उन लोगों के लिए टिकट कटाना पड़ेगा ? फिर रेल की नौकरी करने से क्या फायदा हुआ ?

माँ भी उस दिन दीपंकर की बात सुनकर विस्मित

करके क्या कोई रेलगाड़ी का टिकट कटाता है ? गांगुली वावू और हरीश वावू भी आश्चर्य चकित हुए थे। गांगुली वावू ने कहा था — सव ले रहे हैं साहव, आपके लेने में क्या दोप है ? कौन देखेगा ?

दीपंकर ने कहा था — लेने :दीजिए, लेकिन मेरे मन को गवारा नहीं है। मैं वैसा करूँगा तो रात को मुझे नींद नहीं आयेगी।

— अरे ! उस दिन घोपाल साहव रेल कम्पनी की वड़ी घड़ी घर ले गया है। आपको पता है ?

— वही वड़ी घड़ी ? जो उनके कमरे में लगी थी ?

गांगुली वावू वोला — उन्हीं को क्यों वुरा कहा जाय, हम सव तो ले जाते हैं सेन वावू। क्या आप समझते हैं कि दफ्तर का कोई आदमी कागज, कलम या स्याही खरीदता है ? कोई नहीं खरीदता। सवके लड़के-लड़कियों की पढ़ाई उसी से चल रही है। हमेशा से ऐसा होता आ रहा है ! फिर इसमें हर्ज क्या है वताइए, साहवों का माल, जितना लिया जाय उतना अच्छा है। वे लोग भी तो हमारे देश से सव कुछ लूटकर ले जा रहे हैं।

क्या कह रहा है ? गांगुली वावू की वात सुनकर दीपंकर का सिर से पाँव तक सारा शरीर सिहर उठा। हमेशा सव लोग कागज, कलम और स्याही ले जा रहे हैं !

— सिर्फ कागज, कलम और स्याही नहीं ! पेन्सिल, व्लाटिंग पेपर, आलपीन सव कुछ ! क्या आप इतने दिन तक नहीं जानते थे ? आश्चर्य की वात है !

खैर, दीपंकर ने टिकट कटा लिया। संतोप चाचा और उसकी लड़की के लिए टिकट कटा लिया। काफी रुपया खर्च हुआ। काशी में पंडे के पास चिट्ठी लिख दी गयी थी। माँ को किसी तरह की परेशानी नहीं होगी। गांगुली वावू का पंडा स्टेशन आकर ले जायेगा। दीपंकर ने माँ को भी रुपया दे दिया। कहा — साथ में कुछ रुपया रहना ठीक है माँ, पता नहीं कव कैसी जरूरत पड़ जाय। तुम अपने पास यह रुपया रख लेना।

जिन्दगी में ऐसी रेलगाड़ी में माँ कभी नहीं चढ़ी थी। अरे, यह तो साहव लोगों की गाड़ी है दीपू। संतोप चाचा और उसकी लड़की को भी वड़ा आश्चर्य हुआ। डिव्वे में दोनों चारों तरफ देखने लगे। वगल में ही वाथरूम है। हर समय दरवाजा वंद रखियेगा। किसी को डिव्वे में आने मत दीजिएगा। पूरा डव्वा रिजर्व किया हुआ है। इसमें कोई आ नहीं सकता। सिर्फ आप तीनों इस डिव्वे में रहेंगे।

माँ वोली — खूव होशियारी से रहना वेटा। काशी से कह देना हर वक्त दरवाजा वंद रखे ....

दीपंकर वोला — आप पहुँचते ही चिट्ठी दीजियेगा चाचा, नहीं तो मुझे चिंता होगी।

संतोप चाचा वोला — तुम घवड़ाओ मत वेटा, क्षीरी तो है। वह चिट्ठी लिखना

जानती हूँ। इसीलिए तो मैंने उसे पढ़ाया-लिखाया है। क्यों री क्षीरी, तू चिट्ठी नहीं लिख सकेगी ?

याद है, ट्रेन के चले जाने के बाद काफी देर तक दीपंकर वहाँ खड़ा रहा। माँ चली गयी, मानो यह बात वह सोच ही नहीं सकता। बचपन से इतने दिन वह माँ के साथ रहता रहा, एक साथ एक घर में दोनों के दिन कटे। माँ के बिना दीपंकर मानो अपने अस्तित्व की कल्पना नहीं कर सकता। घर जाकर आज ही वह पहली बार देखेगा कि माँ नहीं है। आज ही रात पहली बार माँ का बिस्तर खाली पड़ा रहेगा। आज ही पहली बार दीपंकर को अपना जीवन सूना लगा। रोज घर जाकर वह पहले माँ को देखता है, तब कोई और काम करता है। वह जहाँ भी गया और जब भी उसने घर लौटने की बात सोची, तभी उसे माँ पहले याद आयी। आज रात शायद उसे नींद भी नहीं आयेगी। शायद माँ भी वहाँ जाकर रात को नहीं सो सकेगी। जो बात ईश्वर गांगुली लेन वाले मकान में थी, वही बात स्टेशन रोड के मकान में है। तड़के ही उसे माँ जगा देती है। बचपन में वह कालीघाट के मंदिर में फूल चढ़ा आता था, लेकिन अब भी माँ उसे पहले जगाकर तब कोई काम करती है। प्लेटफार्म से पाँव-पाँव चलकर बाहर आते समय दीपंकर ने सोचा कि आखिर यह ट्रेन ठीक पहुँचेगी तो ! अगर कोई आदमी डिब्बे का दरवाजा धकेले और माँ अगर खोल दे तो ? अगर वह आदमी माँ से रुपया छीन ले ! ठीक से माँ को समझा भी नहीं दिया गया ! फिर माँ को थोड़ा ज्यादा रुपया देना चाहिए था ! माँ शायद अपनी तबीयत भर खर्च नहीं कर सकेगी। फिर माँ को ज्यादा रुपये की जरूरत भी क्या है ! क्या खरीदेगी ? शायद वह कलछी खुरचनी, चकला-बेलन और इसी तरह घर की छोटी-मोटी चीजें खरीदेगी। अपने लिए तो माँ कुछ खरीदेगी नहीं—खरीदना भी नहीं चाहेगी। शायद माँ एक पैसे में तेल निकालने का चम्मच खरीदेगी या लोहे की चद्दर की भारी कड़ाही। बहुत खरीदेगी तो एक ऊँची कोरवाली थाली। ऐसी ही मामूली चीजें माँ खरीदेगी।

प्लेटफार्म के बाहर काफी भीड़ थी। दीपंकर चुपचाप खड़ा रहा।

—गाड़ी चाहिए हुजूर, फिटन गाड़ी ?

—रिक्शा चाहिए हुजूर ?

—टैक्सी चाहिए सर ?

दो-तीन दलालों ने दीपकर को घेर लिया। दीपंकर ने उनकी तरफ देखा। चिलचिलाती धूप है। उस समय भी मानो वह बनारस एक्सप्रेस की हिस-हिस सुन रहा है। ट्रेन चली जा रही है। पहियों की अविराम आवाज आ रही है—घट-घट-घटाघदा। शायद माँ बर्थ पर लेट गयी है। आज ही उसके जीवन में पहला विश्राम है। आज ही दीपू नहीं है, खाना नहीं बनाना है और भी कोई काम नहीं है। संतोष चाचा और उनकी लड़की के लिए माँ ने लूची, परांठे और आलू की सब्जी पोटली में ले ली थी।

—और तुम्हारा खाना ? तुम रात को क्या खाओगी माँ ?

—मैं क्या खाऊँगी ? रेलगाड़ी में मैं कुछ नहीं खाऊँगी बेटा—खाने को मन नहीं करता।

—लेकिन डाभ खाने में तो कोई आपत्ति नहीं है ! गाड़ी कल भोर में काशी पहुँचेगी। रात को विना कुछ खाये रहा जा सकता है क्या ! दीपंकर से चार डाभ और चार संतरे खरीदकर माँ के साथ दे दिये थे। डाभों का मुँह वह काटकर लाया था। संतोष चाचा गाँव का आदमी है, वह डाभ का मुँह खोल देगा—गाड़ी में वासी कपड़े-ओपड़े की झंझट मत करना माँ ! दीपंकर ने बहुत कुछ समझा दिया था। गांगुली वावू ने कहा था—पंडा हम लोगों की जान-पहचान का है। मेरे ससुर जी हमेशा उसी के पास जाकर ठहरते हैं। मैंने चिट्ठी लिख दी है, आपको किसी वात की तकलीफ नहीं होगी।

—लौटते समय रिजर्वेशन की वात भी लिख दी है न ?

—आप क्या कहेंगे, वह मैंने पहले लिख दिया है। लिख दिया है कि हमारे सेन साहव की माँ जा रही हैं, उनकी कोई असुविधा न होने पाये ....

फिर जरा रुककर गांगुली वावू वोला—मैं भी ।एक वार घूमने जाऊँगा सेन वावू, वहुत दिन से मेरी पत्नी कह रही है।

—कहाँ जायेंगे ?

गांगुली वावू वोला—काशी या पुरी या मधुपुर, गिरीडीह, कहीं भी जाना पड़ेगा। वार-वार कह रही है। दिमाग भी तो ठीक नहीं रहता उसका, डर लगता है कि कहीं ज्यादा न विगड़ जाय। कुछ कहा तो नहीं जा सकता।

हाँ, तो गांगुली वावू ने सारा प्रबंध कर दिया था। पंडा उसका परिचित था, उसी को पहले से चिट्ठी लिखकर उसने सारा इंतजाम कर दिया था। माँ की वहुत दिनों की इच्छा थी। भले ही माँ कहती थी कि दीपू ही मेरी काशी और गया है, दीपू ही मेरा तीरथ-धरम है, फिर भी मन ही मन उसे तीर्थ भ्रमण की इच्छा जरूर होती थी। शायद इसीलिए आजकल उसका मिज़ाज ज्यादा चिड़चिड़ा हो गया था। रात दिन वह काशी को डाँटती थी। अच्छा ही हुआ। थोड़ा वाहर घूम आने पर शायद माँ का मिज़ाज ठीक हो जायेगा। फिर कितने दिन दीपंकर स्वार्थी को तरह माँ को गृहस्थी के कामों में फँसाकर रखेगा ! कल सवेरे धुंधलका रहते गाड़ी मुगलसराय पहुँच जायेगी। अब तक शायद गाड़ी वर्दवान पहुँच गयी होगी। माँ शायद अब सो रही हो। गाड़ी की गरमी में झपकी आ गयी होगी। आते समय दीपंकर ने विजली का पंखा माँ की तरफ खींच दिया था। माँ जहाँ वैठी थी, वहाँ शीशे की खिड़की उसने वंद कर दी थी। नहीं तो अन्दर धूल आयेगी। अगर धूप आये तो झिलमिली वंद करने के लिए दीपंकर ने कह दिया था। उसने यह सब संतोष चाचा को समझा दिया था। कैसे खिड़की खोलनी और वंद करनी पड़ती है, सब उसने

संतोष चाचा को बता दिया था।

संतोष चाचा ने अपनी लड़की से कहा था — अरी क्षीरी, ठीक से देख ले बिटिया, कैसे खिड़की बन्द करेगी और खोलेगी, सीख ले....

दीपंकर ने कहा था — अन्दर की तरफ यह सिटकिनी बंद [illegible], तो कोई अन्दर आ नहीं पायेगा।

— यह सब क्षीरी को बता दो बेटा, वही सब समझ लेगी, इसकी बुद्धि बड़ी तेज है, एक बार कहने पर वह सब समझ लेती है। क्यों री क्षीरी, [illegible] पायेगी ?

क्षीरी कुछ नहीं बोली थी। लज्जा से सिकुड़कर [illegible] था।

संतोष चाचा ने उसे और लज्जित किया था। कहा था — [illegible] समझ रहे हो बेटा दीपू, वह वैसी नहीं है। वह बड़ी चालाक [illegible] है। यही देखो न, तुम्हारी चाचीजी के मरने के बाद यही [illegible] सँभाल रही है।

फिर माँ की तरफ देखकर संतोष चाचा बोला था — तुम क्या कहती हो भाभी, तुम तो कई दिन से क्षीरी को देख रही हो, बताओ, मैंने ठीक कहा है या नहीं ?

माँ ने कोई उत्तर नहीं दिया था।

लेकिन संतोष चाचा [illegible] छोड़नेवाला जीव नहीं है। उसने [illegible] से कहा था — तुमने तो उस दिन [illegible] था, बताओ कैसा [illegible] था न ? तुम समझ पाये थे कि वह किसका बनाया था ?

संतोष चाचा हो-हो कर हँसने लगा था। फिर उसने क्षीरी से [illegible] क्षीरी, मेरा दीपू समझ ही नहीं पाया था।

उसी समय गाड़ी ने सीटी बजायी थी।

माँ बोली थी — अब गाड़ी छूटेगी बेटा, तुम उतर [illegible]

तब दीपंकर गाड़ी से उतर गया था। गाड़ी धीरे-धीरे [illegible] धीरे, उसके बाद तेज। दीपंकर दो कदम गाड़ी के साथ [illegible] चली गयी। मानो कोई उससे माँ को छीनकर ले गया [illegible] लगा था — मानो कोई जबर्दस्ती उसकी माँ को उससे [illegible]

दीपंकर हाथ उठाकर हिलाने लगा था। [illegible] डिस्टेंट सिगनल को पीछे छोड़ टेढ़ी-मेढ़ी [illegible] गयी थी।

काशी !

अपने मकान के सामने पहुँचकर दीपंकर ने काशी को पुकारना चाहा तो उसकी छाती एकाएक धड़क उठी। और दिन मकान के भीतर पहुँचते ही वह माँ को देख पाता था, लेकिन आज वैसा नहीं होगा। आज पूरा मकान खाली है। सारा कलकत्ता घूमकर भी मानो उसका अकेलापन दूर नहीं हुआ। मानो सब कुछ रहते हुए भी उसका कुछ नहीं है। एकाएक उसे ऐसा लगा कि वह असहाय हो गया है। मानो उसका जीवन बेमजा हो गया है। मानो उसका कोई नहीं है, कुछ नहीं है।

— काशी !

शायद काशी सो रहा था। कोई काम तो था नहीं। घर की पहरेदारी करते-करते शायद वह सो गया था। उसकी तरफ देखकर दीपंकर को सहसा लगा कि वह काशी से एकाकार हो गया है। उसकी भी माँ नहीं है और काशी की भी नहीं। काशी की तरफ वह थोड़ी देर देखता रहा। काशी कुछ समझ नहीं पाया। उसके बाद दीपंकर ने पूछा — क्यों रे, तुझे डर लग रहा था क्या ?

— नहीं।

ठीक तो है। उसे क्यों डर लगेगा ? काशी बोला — डर नहीं लगा।

— वाह, वाह, तुझमें तो बड़ी हिम्मत है। अकेले रहने में तुझे जरा भी डर नहीं लगा ? तू तो बड़ा बहादुर है रे ?

यह सब कहकर मानो दीपंकर ने अपने को ही हलका करना चाहा। ठीक तो है, उसे डर क्यों लगेगा ? शायद दीपंकर खुद ही डर रहा था। पूरा मकान खाली हो गया है। उसे घर का माहौल अजीब लगने लगा। आखिर क्यों ऐसा होता है ! माँ तो किसी की भी हमेशा नहीं रहती। जब माँ नहीं रहेगी तब तो दीपंकर को अकेला रहना ही पड़ेगा। पूरे मकान में उसे अकेला रहना पड़ेगा। लेकिन काशी बड़े काम का निकला। वह मजे में अपना काम करने लगा। दूसरी मंजिल पर जाकर दीपंकर सब देखता रहा। आँगन में कपड़े सूखने के लिए डाले गये थे, काशी ने उन कपड़ों को उठाकर रखा। उसने नल से बाल्टी भरकर रसोईघर में पानी रखा। दीपंकर अपने कमरे में आकर खड़ा हुआ। फिर वह माँ के कमरे में गया। दूसरी मंजिल पर दोनों कमरे अगल-बगल हैं। आज माँ का कमरा खाली है। माँ ने दीवार पर देवी-देवताओं की कई तस्वीरें टाँगी हैं। माँ सवेरे उठकर पहले उन तस्वीरों को प्रणाम करती हैं, तब नीचे जाती हैं। नीचे जाते वक्त माँ बगल के कमरे में जाकर रोज दीपंकर को जगाती है। बेटे के बिस्तर के पास जाकर माँ बुलाती है — दीपू, अरे दीपू, उठ बेटा।

दीपंकर को पास के बालीगंज स्टेशन से इंजन के शंटिंग की, और उत्तर तरफ से ट्राम चलने की आवाज सुनाई पड़ती है। पहले ये आवाजें उसके कानों में पहुँचती हैं। फिर वह उस ओर में पश्चिम आकाश की तरफ देखता खड़ा रहता है। तब उसे मानो फिर सारी बातें याद पड़ती हैं। अतीत, वर्तमान और भविष्य की सारी समस्याएँ उसके *दिमाग में भीड़ करने लगती हैं। तभी अखबार वाला अखबार दे जाता है।* माँ नाश्ता बनाकर दीपंकर को दे जाती है। उसके बाद शुरू होती है दिनभर की लड़ाई। जीवन-धारण और जीविकोपार्जन की लड़ाई। यही प्रतिदिन का नियम है। सूरज प्रतिदिन पूरब से ही निकलता है, जैसे ईश्वर गांगुली लेन में निकलता था। लेकिन दीपंकर कितना बदल गया है। दीपू दीपंकर हो गया है। वह काशी भी अब बड़ा हो गया है। उसकी भी जिम्मेदारी बढ़ गयी है। इसी तरह इस दीपंकर के बाद हजारों हजार दीपंकर इस धरती पर पैदा होंगे और बड़े होंगे, लेकिन सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र कुछ भी नहीं बदलेंगे। सूर्य रोजाना ठीक उसी जगह से निकला करेगा। ठीक समय पर सवेरा होगा, ठीक समय पर रात का अँधेरा कलकत्ते पर उतर आयेगा, नियम से जाड़ा पड़ेगा, गरमी आयेगी, पानी बरसेगा, फूल खिलेंगे और वे फूल झड़ जायेंगे। फिर भी दीपंकर को लगा कि कल सवेरे शायद कुछ भी न होगा। सवेरे उठकर माँ नहीं बुलायेंगी और वह सामने नाश्ता नहीं ले आयेगी। अब माँ भी शायद दीपू की बात सोचने लगी हैं। *अब पता नहीं ट्रेन कितनी दूर, कहाँ पहुँच रही हो? इंजन और पहियों की* अविराम झक-झक आवाज हो रही हो। माँ शायद बाहर अँधेरे में एकटक देख रही है।

काशी अचानक कमरे में आया। बोला — एक बात कहना भूल था दादाबाबू।

— कौन-सी बात?

काशी बोला — वही आदमी फिर आपको ढूँढने आया था। वही उस दिन जो प्रियनाथ मल्लिक रोड से आया था।

— कब? कब आया था?

—आपके आने से पहले, दोपहर को।

दीपंकर मानो बिस्तर से उछल पड़ा। आश्चर्य है, शंभु आया था और उससे भेंट न होने पर लौट गया।

दीपंकर ने पूछा — उसने क्या कहा? उसने तुझसे कुछ कहा है?

काशी बोला — मैंने कहा कि दादाबाबू रात को आयेंगे। यह सुनकर [illegible] कुछ कहे चला गया।

— तूने उससे बैठने के लिए क्यों नहीं कहा? आज तो मैं [illegible] तू तो सब जानता है, तूने उससे थोड़ी देर बैठने के लिए क्यों नहीं [illegible] भी बुद्धि नहीं है!

दीपंकर काशी पर नाराज हुआ। शंभु आया लेकिन

लिए नहीं कहा। अब क्या होगा ? क्या वह अब भी सड़क पर होगा ? शायद वह सती की खबर देने ही आया था। दीपंकर उठा। लेकिन अब वह कहाँ जायेगा ? कहाँ जाने पर शंभु का पता चलेगा ? अब वह कहाँ होगा ? शायद वह कुछ बताने आया था। शायद वह दीपंकर को कोई नयी खबर देने आया था।

—फिर कहाँ जा रहे हैं दादाबाबू ?

दीपंकर बोला—तू बैठ, मैं अभी आ जाऊँगा।

कपड़े पहनकर दीपंकर निकल रहा था। काशी बोला—खाना तैयार है दादा-बाबू, खाकर जा सकते हैं।

दीपंकर बोला—नहीं, अभी नहीं, अगर मेरे लौटने में देर हो तो तू खा लेना ....

सड़क पर आकर दीपंकर ने सोचा कि अब कहाँ जाया जाय। कहीं तो नहीं जाना है। सड़क पर ट्राम-बसें बड़े वेग से आ-जा रही हैं। इस भीड़ में क्या वह शंभु को ढूँढ़ पायेगा ? शायद सती ने शंभु को उसके पास भेजा था। शायद इतने दिन बाद सती ने अपने कमरे का दरवाजा खोला है। शायद इतने दिन बाद उस पर सास की दया हुई है। शायद इतने दिन बाद सास पर सनातन बाबू की बात का असर हुआ है। शायद सनातन बाबू ने अपनी माँ से कहा है—जो होना था, हो चुका, अब उसे जाने दो, उसकी जहाँ इच्छा हो जाय।

शायद सनातन बाबू ने सती से पूछा है—तुम कहाँ जाओगी ? तुम कहाँ जाना चाहती हो ?

सती ने शायद कहा है—मैं कहीं भी चली जाऊँगी, लेकिन अब यहाँ नहीं रहूँगी। मेरी भलाई और बुराई के बारे में तुमलोगों को नहीं सोचना पड़ेगा।

—हमलोग तुम्हारी भलाई-बुराई के बारे में नहीं सोचेंगे तो कौन सोचेगा ? तुमने भी खूब कहा !

शायद सती ने कहा—मेरे भले-बुरे के बारे में सोचनेवालों की कमी नहीं है। मैं पिताजी के पास चली जाऊँगी।

—लेकिन पिताजी के पास क्या अकेली जा सकोगी ? उनको चिट्ठी लिख देता ', वे आ जायें। वे आकर तुम्हें ले जायेंगे।

दीपंकर अपने मन में बहुत-सी बातों की कल्पना कर अशांति भोगने लगा। ऐसा भी हो सकता है कि सती की तबीयत बहुत ज्यादा खराब हो गयी हो। अत्या-चार, अनियम, क्रोध और आक्रोश से उसका शरीर एकदम पंगु हो गया हो। शायद वह बिस्तर पर पड़ गयी हो। शायद डाक्टर ने कह दिया हो—अब यह नहीं बचेगी। शायद वही खबर देने शंभु भागा-भागा आया था।

दीपंकर ट्राम में बैठा था। हाजरा रोड का मोड़ आते ही वह ट्राम से उतरा। चारों तरफ हलका अँधेरा छाया थी। दुकानों में एक-दो करके बत्तियाँ जलने लगी थीं।

इधरवाले फुटपाथ पर खड़ा होकर दीपंकर बार-बार सोचने लगा। फिर इसी सती के घर वह जायेगा? अगर फिर सती की मान उसे भगा दे? अगर दरबान उसे अन्दर जाने न दे? न जाने कैसी दुविधा होने लगी। फिर उसने सोचा कि सती शायद उसकी प्रतीक्षा में बैठी है। उसके अलावा सती का मानो कोई और नहीं है। उसने सोचा कि भले ही मेरा अपमान हो, भले ही मुझ पर अत्याचार हो लेकिन यह बरदाश्त करना गलत है। चाहे घर की बहू हो या बेटा हो, किसी को भी सताने का किसी को क्या अधिकार है?

सामने से कोई आ रहा है। दीपंकर को लगा कि चेहरा जाना-पहचाना है। वे सज्जन पास आये तो दीपंकर ने आगे बढ़कर उनके पाँव छूए।

—कौन हो बेटा? मैं तुम्हें ठीक से पहचान नहीं रहा हूँ।

बदन पर खद्दर का कुर्ता, पाँवों में शू, जो एड़ी के पास मुड़कर चप्पल बन गये हैं। मुँह में पान भरा हुआ है। लेकिन वे पहले से ज्यादा बूढ़े हो गये हैं।

दीपंकर बोला—सर, मैं दीपंकर हूँ।

—अरे! तुम दीपंकर हो! कैसे हो बेटा? आजकल तुम क्या कर रहे हो?

उनके साथ और दो-चार लोग हैं वे भी खद्दर की धोती और कुर्ता पहने हुए हैं। शायद वे सब कांग्रेसी हैं। प्राणमय बाबू ने सब सुनकर कहा—मुझे बड़ी खुशी हुई। तुम्हारी माँ ने बड़ी तकलीफ उठाकर तुम्हें पढ़ाया-लिखाया था। आज उनकी तकलीफ सार्थक हुई है।

दीपंकर बोला—आप न मदद करते तो मेरा कुछ न होता....

प्राणमय बाबू ने मानो इस बात को सुना ही नहीं। कहा—हाँ, एक बात याद पड़ गयी। वहीं तुम्हारे अघोर भट्टाचार्य के घर के दोनों लड़के उस दिन आकर कांग्रेस के मेम्बर बने। उन लोगों ने तुम्हारा नाम लिया।

प्राणमय बाबू को देखकर दीपंकर को उतने दिन बाद वही पुरानी बातें याद आने लगी थीं। वही किरण! उस किरण की बात भी उतने दिन बाद याद आयी थी। प्राणमय बाबू का जेल जाना, 'बन्दे मातरम्' का नारा लगाना और उनको फूलों की माला पहनाना। सारी बातें याद आयी थीं। इस समय सुभाष बोस को तीन साल के लिए कांग्रेस से निकाला गया था। उसी को लेकर अखबारों में खूब टीका-टिप्पणी होने लगी थी।

दीपंकर प्राणमय बाबू से बात करता हुआ चलने लगा।

प्राणमय बाबू कहने लगे—तुम सब मेरे छात्र हो। तुम लोग बड़े हुए हो, योग्य बने हो, यह देखकर मुझे बड़ी खुशी होती है।

दीपंकर बोला—क्या योग्य बना हूँ सर! आपका स्नेह मिला था, फिर भी मैं जीवन में कुछ नहीं कर सका। अब रेल की नौकरी करके जीवन बिताना पड़ रहा है।

—इससे क्या हुआ बेटा? मैं क्या सबसे कांग्रेस का काम करने के लिए कहता

हूँ ? कांग्रेस का मेम्बर बने बिना भी देश का काम किया जा सकता है । अच्छे रास्ते पर चलोगे, आचरण अच्छा रखोगे और उसी से देश की सेवा होगी । रेल की नौकरी हो मन लगाकर करो, वह भी एक तरह की देशसेवा है !

दीपंकर को इन बातों से मन में बड़ा उत्साह मिला । वह बोला — लेकिन बड़ी नीचता और हीनता के बीच नौकरी कर रहा हूँ सर !

प्राणमथ बाबू बोले — लेकिन नीचता कहाँ नहीं है ? वह हर जगह है । राजनीति में क्या नीचता और हीनता नहीं है ? यही देखो न, सुभाष बाबू को किस तरह कांग्रेस से हटाया गया । जब ग्रेव इण्डिसिप्लिन का चार्ज लगाकर उनको कांग्रेस से तीन साल के लिए निकाला गया — यह भी तो एक तरह की नीचता ही थी । लेकिन यह सब सोचने पर नहीं चलेगा, इसी के बीच रहकर हमें काम करना होगा ।

उसके बाद जरा रुककर वे बोले — और हाँ, वह किरण, किरण इस समय कहाँ है ?

दीपंकर बोला — उसका कोई पता नहीं है सर । वह टेररिस्ट पार्टी में था, तभी अचानक गायब हो गया था, फिर उसका पता नहीं चला ।

— अब देखो, वह भी एक लड़का है, अपने विश्वास के अनुसार चल रहा है । मैं उसे गलत नहीं कह सकता । अपने मन के आगे पक्का रहने पर कोई भी काम गलत नहीं है बेटा । अपने मन में पक्का रहना, उसी से देश की सेवा होगी ।

उस दिन और भी बहुत-सी बातें हुई थीं । वही प्राणमथ बाबू ! जिन्दगी भर कांग्रेस का काम करते रहे, लेकिन अंत में उनके भाग्य में वैसा मर्मांतक परिणाम लिखा है, यह भी क्या वे जानते थे ! लेकिन वह तो बहुत बाद की बात है ।

प्राणमथ बाबू अपने साथियों के साथ चले गये । दीपंकर उनकी बात सोचता हुआ फिर हाजरा रोड के मोड़ की तरफ लौट आया । अपने मन के आगे पक्का रहने पर वह किससे डरेगा ? याद है, वह धीरे-धीरे मोड़ पार कर प्रियनाथ मल्लिक रोड की तरफ बढ़ने लगा । अपने विश्वास के अनुसार वह चल रहा है । अपने मन में वह पक्का है । इसलिए उसकी कोई गलती नहीं है । शायद सती के घर में डाक्टर आया है । घर के सामने जाते ही पता चल जायेगा । मकान के सामने डाक्टर की गाड़ी खड़ी मिलेगी । अगर मकान के अंदर जाने की आज्ञा न भी मिले, शंभु से तो भेंट हो सकती है ! उसे देखकर शंभु जरूर पास आयेगा ।

लेकिन मकान के सामने जाकर दीपंकर ने देखा कि वहाँ कोई गाड़ी नहीं है । इक्के-दुक्के लोग आ-जा रहे हैं । पूरा मकान खामोश है । हर खिड़की से रोशनी दिखाई पड़ रही है । लेकिन फाटक पर ताला लटक रहा है । दूर से दीपंकर ने देखा कि ताला-बंद फाटक के पीछे वही दरबान चुपचाप बैठा पहरा दे रहा है ।

दीपंकर सामने गया तो दरवान ने पहचान लिया। वह खड़ा हो गया। दीपंकर को उसने सलाम किया। लेकिन उसने फाटक का ताला नहीं खोला।

दीपंकर ने पूछा — सनातन बाबू हैं ?

— जी हाँ, हैं।

दीपंकर बोला — उनको खबर दो। उनसे जाकर कहो कि दीपंकर बाबू आये हैं।

दरवान खबर देने अन्दर चला गया।

थोड़ी देर बाद दरवान लौट आया। बोला — नहीं हुजूर, अभी भेंट नहीं होगी।

— क्यों ? सनातन बाबू घर में है ?

— हैं, लेकिन भेंट नहीं होगी।

दीपंकर ने फिर भी पूछा — सनातन बाबू से तुमने मेरा नाम कहा है ?

— दादाबाबू से नहीं कहा, माँजी से कहा है। माँजी का हुक्म मिले बिना मैं गेट नहीं खोल सकता हुजूर।

दीपंकर थोड़ी देर न जाने क्या सोचता रहा। बड़ा आग्रह और बड़ा उत्साह लेकर वह आया था। आते समय वह अपना सकल्प दृढ़ करता रहा था। उसने सोचा था कि उस दिन की बात शायद अब खत्म हो चुकी है। शायद सती अपने घर में अपना न्यायसंगत अधिकार पा गयी है। शायद सास अपनी गलती महसूस कर चुकी है। शायद उन्होंने सबको मना लिया है। अगर ऐसा हुआ है तो शंभु क्यों उसे ढूंढ़ने गया था ? क्यों अभी तक फाटक में ताला पड़ा है ? क्या अभी तक सती पर वैसा ही अत्याचार चल रहा है ?

दीपंकर वहीं खड़ा-खड़ा अपने मन में यही सब सोचता रहा। यह सब देखकर भी क्या उसका लौट जाना उचित होगा ? कम से कम सनातन बाबू से मिलकर सारी बात साफ कर लेनी चाहिए। दीपंकर कम से कम उनसे कहेगा कि अगर मेरे कारण सती के साथ कोई अन्याय हो रहा है या उस पर कोई अत्याचार हो रहा है तो उसका सारा उत्तरदायित्व मेरा है। दीपंकर कम से कम सती की सास से मिलकर उनसे कह देगा कि आप सती को इतना सताया न कीजिए। मैं सती का कोई नहीं हूँ, सती भी मेरी कोई नहीं है। आप समझदार हैं, सब कुछ समझ सकती हैं। मैं सती का शुभाकांक्षी हूँ, और कुछ नहीं। मैं चाहता हूँ कि सती सुखी हो और उसे शांति मिले। उसका कोई दोष नहीं है। उसकी माँ नहीं है। आप उसकी माँ के समान हैं। आप ही उसके भले-बुरे का जिम्मा लीजिए। अगर उससे कोई गलती होती है तो उसे समझाइए। मैं आपके पाँवों पड़ता हूँ, अब उसे इस तरह तकलीफ मत दीजिए।

सास शायद कहेगी — यह मेरी बहू का मामला है, मैं समझूँगी, तुम बोलने वाले कौन होते हो ? तुम क्यों हमारे घर के मामले में दखल देने आते हो बेटा ?

हूँ ? कांग्रेस का मेम्वर वने विना भी देश का काम किया जा सकता है। अच्छे रास्ते पर चलोगे, आचरण अच्छा रखोगे और उसी से देश की सेवा होगी। रेल की नौकरी ही मन लगाकर करो, वह भी एक तरह की देशसेवा है !

दीपंकर को इन वातों से मन में वड़ा उत्साह मिला। वह वोला — लेकिन वही नीचता और हीनता के वीच नौकरी कर रहा हूँ सर !

प्राणमथ वावू वोले — लेकिन नीचता कहाँ नहीं है ? वह हर जगह है। राज-नीति में क्या नीचता और हीनता नहीं है ? यही देखो न, सुभाष वावू को किस तरह कांग्रेस से हटाया गया। जव ग्रेव इण्डिसिप्लिन का चार्ज लगाकर उनको कांग्रेस से तीन साल के लिए निकाला गया — यह भी तो एक तरह की नीचता ही थी। लेकिन यह सव सोचने पर नहीं चलेगा, इसी के वीच रहकर हमें काम करना होगा।

उसके वाद जरा रुककर वे वोले — और हाँ, वह किरण, किरण इस समय कहाँ है ?

दीपंकर वोला — उसका कोई पता नहीं है सर। वह टेररिस्ट पार्टी में था, तभी अचानक गायव हो गया था, फिर उसका पता नहीं चला।

— अव देखो, वह भी एक लड़का है, अपने विश्वास के अनुसार चल रहा है। मैं उसे गलत नहीं कह सकता। अपने मन के आगे पक्का रहने पर कोई भी काम गलत नहीं है वेटा। अपने मन में पक्का रहना, उसी से देश की सेवा होगी।

उस दिन और भी वहुत-सी वातें हुई थीं। वही प्राणमथ वावू ! जिन्दगी भर कांग्रेस का काम करते रहे, लेकिन अंत में उनके भाग्य में वैसा मर्मांतक परिणाम लिखा है, यह भी क्या वे जानते थे ! लेकिन वह तो वहुत वाद की वात है।

प्राणमथ वावू अपने साथियों के साथ चले गये। दीपंकर उनकी वात सोचता हुआ फिर हाजरा रोड के मोड़ की तरफ लौट आया। अपने मन के आगे पक्का रहने पर वह किससे डरेगा ? याद है, वह धीरे-धीरे मोड़ पार कर प्रियनाथ मल्लिक रोड की तरफ वढ़ने लगा। अपने विश्वास के अनुसार वह चल रहा है। अपने मन में वह पक्का है। इसलिए उसकी कोई गलती नहीं है। शायद सती के घर में डाक्टर आया है। घर के सामने जाते ही पता चल जायेगा। मकान के सामने डाक्टर की गाड़ी खड़ी मिलेगी। अगर मकान के अंदर जाने की आज्ञा न भी मिले, शंभु से तो भेंट हो सकती है ! उसे देखकर शंभु जरूर पास आयेगा।

लेकिन मकान के सामने जाकर दीपंकर ने देखा कि वहाँ कोई गाड़ी नहीं है। इक्के-दुक्के लोग आ-जा रहे हैं। पूरा मकान खामोश है। हर खिड़की से रोशनी दिखाई पड़ रही है। लेकिन फाटक पर ताला लटक रहा है। दूर से दीपंकर ने देखा कि ताला-वंद फाटक के पीछे वही दरवान चुपचाप वैठा पहरा दे रहा है।

दीपंकर सामने गया तो दरवान ने पहचान लिया। वह खड़ा हो गया। दीपंकर को उसने सलाम किया। लेकिन उसने फाटक का ताला नहीं खोला।

दीपंकर ने पूछा—सनातन बाबू हैं ?

—जी हाँ, हैं।

दीपंकर बोला—उनको खबर दो। उनसे जाकर कहो कि दीपंकर बाबू आये हैं।

दरवान खबर देने अन्दर चला गया।

थोड़ी देर बाद दरवान लौट आया। बोला—नहीं हुजूर, अभी भेंट नहीं होगी।

—क्यों ? सनातन बाबू घर में हैं ?

—हैं, लेकिन भेंट नहीं होगी।

दीपंकर ने फिर भी पूछा—सनातन बाबू से तुमने मेरा नाम कहा है ?

—दादाबाबू से नहीं कहा, माँजी से कहा है। माँजी का हुक्म मिले बिना मैं गेट नहीं खोल सकता हुजूर।

दीपंकर थोड़ी देर न जाने क्या सोचता रहा। बड़ा आग्रह और बड़ा उत्साह लेकर वह आया था। आते समय वह अपना संकल्प दृढ़ करता रहा था। उसने सोचा था कि उस दिन की बात शायद अब खत्म हो चुकी है। शायद सती अपने घर में अपना न्यायसंगत अधिकार पा गयी है। शायद सास अपनी गलती महसूस कर चुकी हैं। शायद उन्होंने सबको मना लिया है। अगर ऐसा हुआ है तो शम्भु क्यों उसे ढूंढ़ने गया था ? क्यों अभी तक फाटक में ताला पड़ा है ? क्या अभी तक सती पर वैसा ही अत्याचार चल रहा है ?

दीपंकर वहाँ खड़ा-खड़ा अपने मन में यही सब सोचता रहा। यह सब देखकर भी क्या उसका लौट जाना उचित होगा ? कम से कम सनातन बाबू से मिलकर सारी बात साफ कर लेनी चाहिए। दीपंकर कम से कम उनसे कहेगा कि अगर मेरे कारण सती के साथ कोई अन्याय हो रहा है या उस पर कोई अत्याचार हो रहा है तो उसका सारा उत्तरदायित्व मेरा है। दीपंकर कम से कम सती की सास से मिलकर उनसे कह देगा कि आप सती को इतना सताया न कीजिए। मैं सती का कोई नहीं हूँ, सती भी मेरी कोई नहीं है। आप समझदार हैं, सब कुछ समझ सकती हैं। मैं सती का शुभाकांक्षी हूँ, और कुछ नहीं। मैं चाहता हूँ कि सती सुखी हो और उसे शांति मिले। उसका कोई दोष नहीं है। उसकी माँ नहीं है। आप उसकी माँ के समान हैं। आप ही उसके भले-बुरे का जिम्मा लीजिए। अगर उससे कोई गलती होती है तो उसे समझाइए। मैं आपके पाँवों पड़ता हूँ, अब उसे इस तरह तकलीफ मत दीजिए।

सास शायद कहेंगी—यह मेरी बहू का मामला है, मैं समझूँगी, तुम बोलने वाले कौन होते हो ? तुम क्यों हमारे घर के मामले में दखल देने आते हो बेटा ?

फिर दीपंकर क्या कहेगा ? तब वह जवाब देगा ? क्या सचमुच सती की भलाई-बुराई के मामले में उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है ! उसी गेट के सामने खड़ा होकर वह दूर-दूर की बातें सोचता रहा। इतना डरपोक है वह ! इतना कमजोर ! मामूली बाधा को ठेलकर अन्दर जाने की हिम्मत उसमें नहीं है ! किस बात का डर है ? सनातन बाबू का नाम लेकर बाहर से चिल्लाकर भी पुकारा जा सकता है ? इस मकान के अन्दर एक स्त्री पर अत्याचार हो रहा है, इसकी घोषणा वह यहीं खड़ा होकर ऊँची आवाज में कर सकता है। प्राणमथ बाबू की बात सही है। अगर अपने मन के पास पक्का रहा जाय तो सब ठीक है। लेकिन इस त्रिपुरी कांग्रेस में वह भी देखा जा चुका है। सरदार वल्लभ भाई पटेल, गोविंद वल्लभ पंत, मौलाना अबुल कलाम आजाद, डा० राजेन्द्रप्रसाद, भूलाभाई देसाई, सरोजिनी नायडू और पंडित नेहरू आदि पंद्रह में से लगभग तेरह मेम्बर वर्किंग कमेटी से अलग हो गये। सुभाष बोस अगर कांग्रेस प्रेसिडेंट रहेगा तो हम कमेटी में नहीं रहेंगे। हम कांग्रेस का काम ठप कर देंगे।

प्राणमथ बाबू जैसे आदमी ने भी कहा था — ठीक उसी वक्त महात्मा गांधी हंगर स्ट्राइक करने राजकोट चले गये — त्रिपुरी कांग्रेस के बाद भी तो जाया जा सकता था ! लेकिन ....

प्राणमथ बाबू के साथ के एक आदमी ने कहा था — लेकिन मास्टर साहब, सुभाष बाबू ने दो सौ पाँच वोटों से पट्टाभि सीतारमैया को हरा दिया फिर भी महात्माजी ने कहा —After all, Subhas Babu is not an enemy of his country.

आज की बात शायद कल लोग भूल जायेंगे। कल नयी समस्याओं की भीड़ में आज के इस अभिमन्यु-वध की कहानी शायद किसी को याद नहीं रहेगी। लेकिन आज से दस, बीस या पचास साल बाद शायद कोई लेखक इसी घटना पर उपन्यास लिखेगा। सन् उन्नीस सौ पचास, साठ या सत्तर में शायद इसी घटना को कोई इतिहासकार नये सिरे से लिपिबद्ध करेगा। क्या उस दिन इतिहास-विधाता मुँह बंद कर चुप बैठा रहेगा ! चित्रगुप्त की बही में तो सब लिखा जा रहा है। शायद उस समय दीपंकर नहीं रहेगा, शायद प्राणमथ बाबू भी नहीं रहेंगे, मौलाना अबुल कलाम आजाद, भूलाभाई देसाई, सरदार वल्लभभाई पटेल, सरोजिनी नायडू या और कोई नहीं रहेगा। उस समय कौन किसका मुँह बंद करेगा ? इतिहास तो किसी के हाथ का खिलौना नहीं है। ऋग्वेद के काल से शुरू कर समुद्रगुप्त और अशोक के बाद मुहम्मद गोरी का काल पार कर ब्रिटिश काल आया है। लेकिन क्या कोई भारत-विधाता को अपने वश में रख सका है ! क्या कोई भारत-भाग्य-विधाता को घूस दे सका है ! क्या कोई उसे हमेशा के लिए कौड़ियों के मोल खरीद सका है ? क्या लार्ड लिनलियगो या लार्ड इरविन—कोई खरीद भी सका है ? क्या

कभी कोई खरीद सकेगा ?

दरवान अब भी दीपंकर के चेहरे की तरफ देखता चुपचाप खड़ा है।

दीपंकर अब भी प्राणमथ बाबू की बात सोच रहा है। प्राणमथ बाबू जैसे आदमी ने भी कहा—अपने मन के पास सच्चा रहना ही असली बात है ! सच ही तो है, किरण ने कोई गलती नहीं की। वह तो अपने विश्वास के अनुसार चल रहा है। अपने मन के पास वह सच्चा है ! आज अगर कोई दीपंकर को यहाँ देख ले तो शायद सोचेगा कि दीपंकर यहाँ क्यों खड़ा है ? ऐसे समय वह इस मकान के सामने क्यों है ? ताला-बंद फाटक के सामने वह अकेला क्या कर रहा है ? आज इस समय उसका अपना घर खाली है। शायद काशी अब तक बरामदे में लेटा सो गया हो। शायद उसने खाना भी न खाया हो ! दीपंकर के पास कोई काम नहीं है, उस पर कोई जिम्मेदारी भी नहीं है। शायद अब तक माँ ट्रेन में सो गयी होगी। शायद उसने संतरा या डाभ भी नहीं खाया होगा। क्या संतोष चाचा माँ को खिलाने के लिए जबर्दस्ती करेगा ! आखिर संतोष चाचा को क्या गरज पड़ी है !

सहसा दीपंकर के कान खड़े हो गये। कोई रो रहा है न ! मानो बहुत दूर आसमान की ऊँचाई से किसी की खामोश रुलाई की आवाज हवा के संग बहती आ रही है ! अघोर नाना, तुमने गलत कहा था। मुझे नादान समझकर तुमने बेवकूफ बनाया था, मुझे बच्चा समझकर तुमने गलत समझाया था। कौड़ियों के मोल कुछ भी नहीं खरीदा जा सकता। मैं तुम्हारी बात नहीं मानूँगा। मैं तुम्हारी बात नहीं सुनूँगा। तैंतीस रुपये घूस देकर सिर्फ रेल की नौकरी खरीदी जा सकती है, आदर-सम्मान ही खरीदा जा सकता है, लेकिन उससे ज्यादा कुछ नहीं खरीदा जा सकता। कौड़ी देकर आजादी नहीं खरीदी जा सकती, सुकून नहीं खरीदा जा सकता। कौड़ियों के बल दूसरे का दुःख दूर नहीं किया जा सकता और दूसरे को सुखी नहीं किया जा सकता !

—हटिए बाबूजी, हट जाइए !

सहसा दीपंकर का ध्यान टूटा। न जाने अब तक वह कैसी बेसिर-पैर की बातें सोचने लगा था। अचानक बहुत बड़ी लंबी मोटरकार आकर एकदम उसके पीछे उससे सटकर खड़ी हो गयी। गेट के सामने गाड़ी आते ही दरवान ने ताला खोल दिया। गाड़ी मकान के अन्दर चली गयी। किसी की आज्ञा लेनी नहीं पड़ी, किसी से कहना-सुनना नहीं पड़ा। गेट के सामने कार आते ही दरवान ने झटपट उठकर ताला खोला और सलाम किया। सड़क पर गैस बत्ती जल रही है। उसकी रोशनी कार के अन्दर पड़ी तो दीपंकर ने आश्चर्य से देखा कि निर्मल पालित था। निर्मल पालित कार में बैठा सिगरेट पी रहा था !

इतनी रात को निर्मल पालित इस मकान में क्यों आया होगा ? निर्मल पालित ने शायद दीपंकर को नहीं देखा। अगर वह दीपंकर को यहाँ देखता तो जरूर विस्मित होता। शायद हाईकोर्ट में कोई मुकदमा है, शायद जमीन-जायदाद को लेकर

घोष परिवार का कोई मुकदमा चल रहा है। शायद घोष परिवार की तरफ से निर्मल पालित बैरिस्टर है।

दीपंकर लौटने लगा। यहाँ इस तरह खड़े रहने से कोई लाभ नहीं है। गली के बाहर शोर-शराबे की दुनिया मानो और बेचैन हो उठी है। सड़क पर दफ्तर से लौट रहे लोगों की भीड़ है। दीपंकर लौट चला। इतने में अचानक शंभु से एकदम आमने-सामने भेंट हो गयी।

दीपंकर ने ही पहले पहचाना। कहा — अरे, शंभु हो न?

शंभु के हाथ में न जाने किस चीज का दोना है। शायद वह दुकान से कुछ खरीदकर ला रहा है। बोला — मैं आपके पास गया था दादाबाबू!

दीपंकर बोला — मैं भी तो इसीलिए आया हूँ — क्या खबर है शंभु? तुम्हारी बहूदीदी कैसी है?

शंभु बोला — जी, खबर ठीक नहीं है। बहूदीदी कुछ खाती-पीती नहीं, एकदम सूखकर काँटा हो गयी है। इसीलिए मैं आपके पास गया था।

दीपंकर बोला' — लेकिन मैं क्या कर सकता हूँ, बताओ? मैं तो तुम्हारे दादाबाबू से मिलने आया था, लेकिन उनके पास खबर ही नहीं पहुँच सकी। तुम्हारी माँजी ने दरबान को गेट खोलने से मना कर दिया है। तुम्हीं बताओ, मैं कितनी देर खड़ा रहूँगा, इसलिए चला आ रहा था। इतने में तुमसे भेंट हो गयी ....

शंभु बोला — आप बहूदीदी से मिलना चाहते हैं?

— बहूदीदी से मिलूंगा? मैं? तुम क्या कह रहे हो शंभु?

दीपंकर शंभु की बात सुनकर आश्चर्य में पड़ गया।

शंभु बोला — मैं आपको बहूदीदी से मिला सकता हूँ, लेकिन उनमें खतरा है। अगर माँजी को पता चल गया तो आपकी भी खैर नहीं, मेरी भी नहीं और बहूदीदी की भी नहीं।

दीपंकर बोला — रहने दो, इसकी जरूरत नहीं है। अगर माँजी से मेरी मुलाकात करा सकते हो तो ठीक है।

शंभु बोला — माँजी आपसे मुलाकात नहीं करेंगी हुजूर।

— तो फिर दादाबाबू से ही मुलाकात करा दो। कम से कम तुम्हारे दादाबाबू से ....

शंभु बोला — माँजी नहीं कहेंगी तो दादाबाबू आपसे मुलाकात नहीं करेगा। माँजी से पूछे बिना दादाबाबू कोई काम नहीं करता ....

— तुम्हीं बताओ, फिर मैं क्या कर सकता हूँ? इस हालत में मुझसे क्या हो सकता है?

शंभु इसका कोई उत्तर नहीं दे सका।

दीपंकर ने पूछा — आज तुम मेरे पास किसलिए गये थे?

शंभु बोला — यही सब कहने गया था बतासी की माँ, भूती की माँ, सब परेशान हैं। उन्हीं लोगों ने मुझसे आपके पास जाने के लिए कहा। सब डर गये हैं न ?

— क्यों ? किस बात का डर है ?

शंभु बोला — जी, डरने की बात नहीं है ? क्या बहूदीदी कुछ खा रही हैं ? वह न कुछ खाती हैं न पीती हैं, सिर्फ चुपचाप रहती हैं। बताइए, बिना खाये-पिये कैसे कोई ज़िंदा रहेगा ?

दीपंकर ने पूछा — बहूदीदी ने दरवाजा खोला है ?

शंभु बोला — जी हाँ, खोला है। एक दिन बाद माँजी ने जाकर कहा तो बहूदीदी ने दरवाजा खोल दिया।

— तुम्हारा दादाबाबू कहाँ सोता है ? किसके कमरे में ?

शंभु बोला — माँजी क्या दादाबाबू को बहूदीदी के पास जाने देती हैं ? वह हम लोगों को भी बहूदीदी के पास फटकने नहीं देतीं। सिर्फ भूती की माँ बहूदीदी को खाना दे आती है। लेकिन बहूदीदी कुछ भी नहीं खातीं, कहने भर को भात छूकर हाथ समेट लेती हैं !

— तुम्हारी माँजी क्यों बहूदीदी से कुछ नहीं कहतीं ?

शंभु बोला — यही लेकर तो फिर नया झगड़ा शुरू हुआ है। माँजी उस दिन बहूदीदी के कमरे में गयीं। बहूदीदी के कमरे के सामने जाकर माँजी दरवाजे में धक्का मारने लगीं। बोलीं — दरवाजा खोलो बहू, दरवाजा खोलो ....

हम लोग दूर खड़े सब देखते रहे।

सास सती के कमरे के दरवाजे में धक्का मारती रहीं। सती ने दो दिन पानी तक नहीं पिया।

— दरवाजा खोलो बहू ! मेरे घर में रहकर तुम आत्महत्या करोगी, यह मैं नहीं होने दूँगी। दरवाजा खोलो ....

सती ने दरवाजा खोला। उसने दो दिन से कुछ नहीं खाया। दो दिन में ही वह मानो सूखकर काँटा हो गयी है। दरवाजा खोलकर वह सास के सामने खड़ी हो गयी।

सास बोलीं — यह बताओ बहू कि तुमने क्या सोच रखा है ? तुमने क्या सोच लिया है ? दो दिन खाना न खाकर तुमने किसका क्या बिगाड़ लिया है ? क्या तुम समझ रही हो कि मैं तुम्हारी चालाकी समझ नहीं सकती ? क्या तुम मेरे हाथों में पुलिस की हथकड़ी डलवाना चाहती हो ?

सती चुपचाप खड़ी रही। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

— किस पर गुस्सा दिखाकर तुम दरवाजे में सिटकिनी लगाकर उपवास करती रहीं ? बताओ, मैंने तुम्हारा कौन—ऐसा नुकसान किया है ? मैंने तुमसे ऐसा क्या कहा है ? मैं तुमसे बड़ी हूँ, तुम्हारी माँ की तरह हूँ, अगर मैंने तुम्हारी भलाई के लिए कुछ

दो चार कड़ी बातें कह दी हैं, तो बताओ, कौन-सा अन्याय किया है ?

जरा रुककर सास फिर कहने लगी — तुम्हारा क्या है बहू, तुम खाती-पीती हो, सोती हो और उसी में तुम्हारा काम खत्म हो जाता है, लेकिन मुझे रात-दिन हजारों झमेले सहने पड़ते हैं, उसकी खबर तो तुमलोग नहीं रखते ! उसके लिए तो तुमलोग कभी नहीं कहते कि माँ, आप बैठी रहिए, अपना पूजा-पाठ कीजिए, हम गृहस्थी का जुआ खींच रहे हैं। यही देखो न, हाईकोर्ट में मुकदमे चल रहे हैं, वकील-मुहर्रिर-बैरिस्टर सब का इन्तजाम मैं कर रही हूँ, सब कुछ मैं सँभाल रही हूँ। उसके लिए तो तुम कभी एक बात कहकर भी सास की मदद करने नहीं आतीं। मैं यही सोचकर पढ़ी-लिखी बहू घर में लायी थी कि मैं विधवा हूँ और मुझे उससे थोड़ी मदद मिलेगी। खैर, जैसा मैंने सोचा था वैसा खूब हुआ है और मुझे काफी सबक मिल गया है। मैं पढ़ी-लिखी नहीं हूँ, यह भगवान की बड़ी दया है, क्योंकि पढ़ने-लिखने की महिमा तो देख रही हूँ। जैसा मेरा बेटा है, वैसी ही मुझे बहू भी मिली है। भाग्य से मुझे बड़ा सुख मिला है, अब सुख की जरूरत नहीं है बहू, मैं ऐसे सुख को दूर से प्रणाम करती हूँ।

सती दरवाजे के दोनों किवाड़ पकड़कर खड़ी रही। सास की बात उसके कानों में गयी या नहीं, हम समझ नहीं पाये।

सास बोली — अब बताओ, खाना खाकर मेरा उद्धार करोगी या नहीं ? मेरे पास बहुत काम हैं। सवेरे से ठीक से पूजापाठ भी नहीं कर सकी। उधर मुंशी भी हिसाब की खाता-बही लेकर मेरा इंतजार कर रहा है। बताओ, मैं क्या-क्या देखूँ।

उसके बाद सास ने भूती की माँ को बुलाकर उससे कहा — जा, बहू को एक कप चाय लाकर दे भूती की माँ, भूखी रहने से बेचारी का चेहरा सूख गया है।

फिर जाने से पहले सास बोली — तुम्हारी माँ नहीं है न, माँ रहती तो तुम समझतीं। लेकिन मुझे देखकर जरा समझा करो बहू, मुझे माँ और बाप दोनों बनकर दोनों तरफ सँभालना पड़ रहा है। लेकिन तुमसे यह सब कहना बेकार है बहू, तुम यह सब नहीं समझोगी। बाप बराबर रुपया भेजते रहे और तुम दूसरे के घर रहकर पढ़ती-लिखती रही, जमीन-जायदाद का झमेला कैसे समझ सकोगी ? तुम्हारे बाप यहाँ होते तो मेरी परेशानी समझते, क्योंकि वे जानते हैं कि रुपया कमाना जितना कठिन है, उससे कठिन है उसे रखना ! मैं जो यह सब कर रही हूँ, किसके लिए ? अपने लिए ? मैं तो दो दिन बाद मजे से चल दूँगी, तब तुम्हीं लोगों को भोगना पड़ेगा। तुम्हीं लोगों का घर बरबाद होगा। मैं और कितने दिन रहूँगी ? पुआ खाने में सबको मजा आता है, लेकिन उसके बनाने में कितनी जहमत है, यह वही जानता है जो बनाता है।

सास यह सब कहकर जाने लगी।

सती अचानक बोली — आप मेरे पिताजी को चिट्ठी लिख दीजिए कि वे आकर मुझे ले जायँ।

सास पलटकर खड़ी हो गयी। बोली — क्या कहा ?

— कह रही हूँ कि आप मेरे पिताजी को चिट्ठी लिख दीजिए वे आकर मुझे यहाँ से ले जायें। मैं यहाँ रहूँगी तो मुझे भी तकलीफ होगी और आपलोगों को भी।

सास ने कुछ सोच लिया और कहा — इससे तुम्हारे पिताजी की परेशानी बढ़ जायेगी, कम नहीं होगी! क्या तुम समझ रही हो कि बाप के पास चले जाने पर तुम्हारी तकलीफ कम होगी? तब खुद भी तकलीफ भोगोगी और बाप को भी तकलीफ दोगी।

— मेरे भाग्य में अगर तकलीफ होगी तो मैं खुद भोग लूँगी और अपने बाप को तकलीफ दूँगी, लेकिन आपलोगों को तकलीफ देने नहीं आऊँगी।

सास बोली — तुम्हारे बाप ने अच्छी लड़की पैदा की थी! एक लड़की ने घर से भागकर उनको जलाया, अब तुम भी ससुराल से भागकर उनको जलाओ। मैं होती तो ऐसी लड़कियों को झाड़ू मारकर दूर कर देती।

सती कड़ी पड़ गयी। बोली — आप मेरे पिताजी को खबर देंगी कि नहीं, यह बताइए।

— क्या तुम मुझे डरा रही हो?

सास ने अब कठोर दृष्टि से सती की तरफ देखा।

सती इससे घबड़ायी नहीं। बोली — अगर आप इसे डराना समझती हैं तो मैं डरा रही हूँ। नहीं तो मैं आपके पाँवों पड़ती हूँ कि मुझे पिताजी के पास भेज दीजिए। अब मुझसे बरदाश्त नहीं हो रहा है।

सास बोली — बहू, तुम्हारा यह नखरे का रोना देखकर मेरे बदन में आग लग जाती है। मैंने तुम्हें क्या तकलीफ दी है कि तुमसे बरदाश्त नहीं हो रहा है। यहाँ तुम्हें किस बात की कमी है, बताओ? क्या मैं तुम्हें भरपेट खाना नहीं देती? क्या मैं तुम्हें साड़ी-गहने पहनने को नहीं देती? कैसे तुम एक बूढ़ी के मुँह पर ऐसी बात कह सकी?

सती ने कोई जवाब नहीं दिया।

सास फिर कहने लगी — मैंने सोना को तुम्हारे कमरे में सोने से मना नहीं किया। तुम्हीं नखरा दिखाने के लिए दरवाजा बंद कर पड़ी रही। फिर बताओ, मेरा बेटा कहाँ सोता! वह मेरा बेटा है तो क्या रात को सो नहीं सकेगा? इसीलिए मैंने उससे कहा कि वह दरवाजा बंदकर सो रही है तो सोने दो, तुम मेरे कमरे में सो जाओ। मैं अभी तक मरी तो नहीं। मैं जब तक जिंदा हूँ, तब तक तुम्हें कोई परेशानी नहीं है, लेकिन मेरे मरने के बाद बहू तुम्हें ठोकर भी लगायेगी तो मैं देखने नहीं आऊँगी।

रात को माँजी ने बेटे से कहा — सोना, आज तुम अपने कमरे में जाकर सोओ।

सनातन बाबू बोले — क्यों माँ? मुझे कोई असुविधा नहीं हो रही है।

— न हो, बहू ने दरवाजा खोला है, इसलिए तुम अपने कमरे में जाओ।

सनातन बाबू ने जाकर सती के कमरे के दरवाजे पर दस्तक दी। बहुत देर बाद सती ने दरवाजा खोला। कहा — यह क्या ? तुम यहाँ आये हो ?

सनातन बाबू बोले — हाँ, आज मैं इस कमरे में ही सोऊँगा।

यह कहकर सनातन बाबू कमरे में घुसने लगे। सती उनका रास्ता रोककर खड़ी रही।

सनातन बाबू बोले — क्या हुआ ? रास्ता छोड़ो न !

सती बोली — नहीं, इस कमरे में तुम सो नहीं सकते। तुम जहाँ सोते हो, वहीं जाओ।

— क्या मतलब ?

सनातन बाबू विचलित नहीं हुए। वे मानो सती के सामने अकड़कर खड़े हो गये।

सती बोली इसका मतलब यही है कि मैं तुम लोगों की दया का दान लेकर जिंदा रहना नहीं चाहती। क्या तुम यही सोचते हो कि तुम्हारी बगल में सोने से मैं कृतार्थ हो जाऊँगी ? क्या तुम समझते हो कि तुम्हारी बगल में सोने पर मैं धन्य हो जाऊँगी ? मेरा नारी-जन्म सार्थक हो जायेगा ?

यह कहती हुई सती सनातन बाबू के वक्ष पर सिर रखकर फूट-फूटकर रोने लगी। मानो वह रोना किसी तरह बंद होना नहीं चाहता ! सती बेचैन-सी सनातन बाबू के सीने पर सिर रगड़ने लगी।

सनातन बाबू असमंजस में पड़ गये। बोले — अरे, छी-छी, यह क्या ? तुमने रोना क्यों शुरू कर दिया है ? मैंने क्या किया है ?

सती ने सिर उठाकर देखा और कहा — आज तुम्हीं कह रहे हो कि तुमने क्या किया है। तुम अगर दूसरी तरह के होते तो मुझे क्या चिंता रहती ? तुम अगर मेरी तरफ होते तो क्या मैं इस तरह घुट-घुटकर मरती ? अगर तुम मेरे सहायक होते तो मैं सारी तकलीफ हँसकर सह लेती।

सनातन बाबू बोले — लेकिन मैं तो तुम्हारी ही तरफ हूँ, मैं तो तुम्हारा ही हूँ — तुम भी क्या बचपना करती हो !

सती बोली — अगर तुम मेरे हो तो मेरा अपमान होने पर तुम्हें क्यों नहीं बुरा लगता ? तुम अगर मेरे हो तो तुम मेरे लिए जरा भी क्यों नहीं सोचते ?

— किसने कहा है कि मैं तुम्हारे लिए नहीं सोचता ?

— तुम सोचते हो ? मेरे लिए तुम सोचते हो ? क्या दिनभर में एक बार भी तुम्हें मेरी बात याद पड़ती है ? मैं अपने कमरे में बाहरी आदमी लाती हूँ तो तुम क्यों नहीं पूछते कि वह कौन है ? जब मैं कहीं घूमने जाती हूँ, तब तुम क्यों नहीं पूछते कि कहाँ गयी थी ? अभी जो मुझे घर में बंद करके रखा गया है, मैं किसी को चिट्ठी नहीं लिख सकती, किसी से बात नहीं कर सकती, इसके लिए भी तो तुम कुछ नहीं कहते।

तुम न तो मुझे डाँटते हो, न फटकारते हो ....

सनातन बाबू आश्चर्य में पड़ गये। बोले — मैं तुम्हें क्यों डाँटूंगा-फटकारूँगा ? तुमने क्या किया है ?

सती बोली — अगर नही डाँटोगे-फटकारोगे तो प्यार तो करोगे ?

— वाह रे ! कही कोई बात नहीं, मैं क्यों अचानक प्यार करने जाऊँगा ?

— अगर प्यार नही करोगे तो तुम क्यों शादी करने गये थे ? किसने तुमसे कसम देकर कहा था कि शादी कर लो ? किसी ने तुम्हारे हाथ-पांव बाँधकर तो जबर्दस्ती मुझे तुम्हारे गले मढ़ नही दिया ?

सती अब भी सनातन बाबू के सीने पर सिर रखकर खड़ी थी। सनातन बाबू बोले — यह सब तुम क्या ऊटपटांग बकने लगी हो ? मैं तुम्हारी एक भी बात नहीं समझ पा रहा हूँ।

अचानक सती अलग खड़ी हो गयी। सनातन बाबू को दूर हटाकर बोली — इतना भी नही समझ सकते हो तो जाओ, समझने की जरूरत भी नही है। तुम्हें नही समझना पड़ेगा। तुम क्यों मेरे कमरे में सोने आये। तुम जहाँ सोते थे, वही जाकर सोओ — किसने तुम्हें यहाँ बुलाया था ? किसने तुमसे यहाँ आने के लिए कहा है ? तुम जाओ ! मैं तुम्हारी शक्ल भी नही देखना चाहती।

यह कहकर सती ने धडाम से सनातन बाबू के मुंह पर दरवाजा बंद कर दिया। उसके बाद अन्दर सिटकिनी लगाने की आवाज हुई।

सनातन बाबू वही थोड़ी देर अवाक् खडे रहे।

अचानक फाटक का ताला खुल गया। दीपंकर ने देखा कि निर्मल पालित की जो कार थोड़ी देर पहले अन्दर गयी थी, वह निकलकर सड़क पर आयी। सड़क पर आकर कार सीधे हाजरा रोड की तरफ चली।

शंभु बोला — बैरिस्टर बाबू की कार है।

दीपंकर ने पूछा — बैरिस्टर बाबू क्या रोज तुम लोगों के यहाँ आता है ?

शंभु बोला — हाँ, रोज आता है। मुकदमा चल रहा है न। बैरिस्टर बाबू माँजी से सलाह-मशविरा करता है। दादाबाबू तो मुकदमें का कुछ नही समझता, सब माँजी को ही करना पड़ता है।

— कैसा मुकदमा चल रहा है ? किस बात को लेकर चल रहा है ?

— यह सब मैं नही जानता। इस घर में तो हमेशा मुकदमा लगा हुआ है। जमीन-जायदाद रहने पर मुकदमा तो चलता ही है।

देर हो रही थी, इसलिए दीपंकर ने पूछा — खैर, उसके बाद क्या हुआ ?

— जी, उसके बाद क्या होगा। दादाबाबू धीरे-धीरे वहाँ से निकलकर

बरामदे से सीढ़ी की तरफ गया। फिर सीढ़ी से नीचे जाकर अपनी लाइब्रेरी में किताब पढ़ने बैठ गया। पढ़ने बैठ जाने पर दादाबाबू को किसी बात का होश नहीं रहता।

—तुम्हारे दादाबाबू कब सोये ?

शंभू बोला—कुर्सी पर बैठा किताब पढ़ता हुआ दादाबाबू टेबिल पर सिर रखकर सो गया था। दादाबाबू को खयाल भी नहीं था। जब मैं सवेरे उस कमरे में भाड़ू लगाने गया, तब भी कमरे की बत्ती जल रही थी और दादाबाबू टेबिल पर सिर रखकर सो रहा था।

मैंने दादाबाबू को ठेलकर जगाया। कहा—दादाबाबू, गिर पड़ेंगे, उठिए। उठिए दादाबाबू।

दादाबाबू हड़बड़ाकर उठा। चारों तरफ देखकर मानो खयाल आया। बोला—कितने बज गये शंभु ? कितनी रात हुई ?

मैंने कहा—अब रात कहाँ है दादा बाबू, सवेरा हो गया है। मैं कमरे में झाड़ू लगाने आया हूँ। उठिए। आप तो अभी सोते-सोते गिर पड़ते।

मेरी बात सुनकर दादाबाबू उठ खड़ा हुआ और आँखें मलने लगा। दादाबाबू का तमाशा देखकर मुझे बड़ी दया आयी। सोचा, दादाबाबू का भी यह कैसा करमभोग है ! उसका तो कोई दोष नहीं है। फिर दोष भी किसका है बताइए ! सब करम का फल है।

घर लौटते समय रास्ते में दीपंकर वही सोच रहा था। किसका दोष है ? कौन दोषी है ? सती या सनातन बाबू ? या सती की सास ? किसे दोष दिया जा सकता है ? सती की सास तो मामला-मुकदमा लेकर परेशान हैं। पता नहीं किस जमाने से उनको यह सब सँभालना पड़ रहा है। ऐसे कठोर हाथ से सब न सँभालने पर क्या इतने दिन यह घर टिकता ! पुरखों के जमाने से सभी रीति-रिवाज, नियम-कानून और क्रिया-कर्म वे चलाये जा रही हैं। मुकदमों की देखभाल भी वे करती हैं। घर के किस कोने में क्या हो रहा है, सब कुछ पर उन्हें निगाह रखनी पड़ती है। उनके अलावा इस घर में है भी कौन ? अगर वे पतवार न सँभाले तो गृहस्थी का बेड़ा पार न लगे ! अगर वे बहू को न डाँटें और उसे अपने मन मुताबिक सिखा-पढ़ा न लें तो उनके मरने के बाद सब चौपट हो जायेगा ! गृहस्थी चलाना कोई खेल नहीं है। उसमें एक तरफ जितना आराम है, दूसरी तरफ उतना कर्तव्य भी। माँ है, इसलिए दीपंकर गृहस्थी का दूसरा पहलू इतने दिन समझ नहीं सका। फिर दीपंकर की गृहस्थी है भी कितनी बड़ी ! किराये का मकान और कुल दो प्राणी। फिर भी इसी गृहस्थी को लेकर माँ रात-दिन परेशान रहती है। लेकिन सती के मकान में नौकर, नौकरानियाँ माली, ड्राइवर, दरवान, मेहतर, रसोइये, गाड़ी, बगीचा, मुकदमा, टैक्स, पूजा-पाठ सभी कुछ है और इस 'सब कुछ' के पीछे वही एक औरत। वही एक औरत जब बहू बनकर इस घर में आयी थी, तब से अकेले दम सब सँभाल रही है। वह औरत अगर कड़ाई

न करे तो कैसे काम चले।

शंभु ने कहा था — आप अगर बहूदीदी से मुलाकात करना चाहते हैं तो बताइए, मैं उसका इंतजाम कर सकता हूँ।

आश्चर्यचकित होकर दीपंकर ने पूछा था — कैसे इन्तजाम करेगा?

शंभु ने कहा था—मैं कर सकता हूँ। पीछे के दरवाजे की मैं डबल चाभी बनवा सकता हूँ। फिर जब सब लोग सो जायेंगे, तब उस दरवाजे से मैं आपको बहूदीदी के कमरे में ले जाऊँगा।

दीपंकर बोला — नहीं, इसकी जरूरत नहीं है। बल्कि तुम एक काम करो।

— क्या?

— तुम्हारी बहूदीदी के पिताजी का पता किसी तरह लाकर मुझे दे सकते हो? फिर मैं उनको एक चिट्ठी में सारा हाल लिख दूँगा! अगर इसी तरह चलता रहा तो तुम्हारी बहूदीदी कितने दिन जिंदा रहेंगी? बहूदीदी के पिताजी ही आकर कोई न कोई इन्तजाम कर सकते हैं। जरूरत समझूँगा तो मैं उनको टेलीग्राम कर दूँगा, ताकि वे जल्दी चले आयें।

शंभु ने कुछ सोचा, फिर कहा — कोशिश करूँगा!

दीपंकर बोला — पता मिल जाने पर तुम मेरे घर दे आना!

शंभु बोला — फिर मैं जाऊँ दादाबाबू, भूती की माँ के लिए लाई लेने गया था, अब तक लाई मुलायम पड़ गयी होगी। मैं कल ही बहूदीदी से पता लेकर आपको दे जाऊँगा।

● ● ●

शंभु चला गया। गड़ियाहाट तक आकर भी दीपंकर वही बात सोच रहा था। आसपास कितने लोग ट्राम और बस से चल रहे हैं, क्या ये सभी अपनी-अपनी समस्याओं से जर्जर हैं? क्या सब लोग दीपंकर की तरह बहुत सारी बातें सोच रहे हैं? क्या वे सभी चिंताओं से घिरे हैं? सभी साफ-सुथरे कपड़े पहने हुए हैं और सभी की दाढ़ी ढंग से

बनी हुई है। क्या ये सब दीपंकर की तरह सुबह से आधीरात तक अविराम चिंता से बेचैन रहते हैं? लेकिन किसी का भी चेहरा देखकर ऐसा नहीं लग रहा है! कोई आराम से किताब पढ़ रहा है, कोइ खिड़की से बाहर देख रहा है और कोई बगलवाले से हँसी-मजाक कर रहा है। फिर भी, हो सकता है कि सब दीपंकर जैसे हों, या हो सकता है कि कोई भी उसकी तरह न हो। सुबह से शाम तक खटकर सब अपनी जीविका कमा रहे हैं और सहज ढंग से ही जीवन को जी रहे हैं। बिन-माँगे जो मिल जाता है, उसे ये नहीं ठुकराते और जो लाख माँगने पर भी नहीं मिलता, उसके लिए अफसोस भी नहीं करते! ऐसा होना ही अच्छा है। फिर क्यों दीपंकर दूसरी तरह का हो गया? क्यों विधाता ने दीपंकर को ऐसा बनाया! क्यों वह सहज-सरल ढंग से सब कुछ ग्रहण नहीं कर सकता? क्यों वह कुछ भी भूल नहीं पाता? आखिर क्या करने पर सब कुछ भूला जा सकता है? भूल के देवता भोलानाथ हैं। क्या करने पर वे प्रसन्न हो सकते हैं? क्या करने पर दीपंकर भोलानाथ बन सकता है?

गाड़ियाहाट के मोड़ पर आते ही अचानक खयाल आया।

पास ही तो है! थोड़ी दूर पैदल चलने पर लक्ष्मी दी का मकान है। अभी जाने पर लक्ष्मी दी से भुवनेश्वर बाबू का पता मिल सकता है। लेकिन लक्ष्मी दी क्या उनका पता देगी।

सामने ही एक टैक्सी खड़ी थी। दीपंकर उसका दरवाजा खोलकर अन्दर बैठ गया। बोला — ठाकुरिया लेवल क्रॉसिंग ....

टैक्सी ड्राइवर पंजाबी है। कतारों में बहुत-सी टैक्सियाँ खड़ी थीं। लेकिन एक का भाग्य खुल गया। टैक्सी चलने लगी तो दीपंकर ने सोचा कि जो कुछ करना है, जल्दी कर लेना होगा। शायद काशी बहुत देर से जगा बैठा हो, या बिना खाये सो गया हो। दीपंकर ने सोचा कि काशी को एक बनियाइन खरीदकर देनी है। उसके पास सिर्फ दो बनियाइनें हैं। दो बनियाइनों से उसका ठीक से काम नहीं चलता। काशी की उम्र में दीपंकर ने बड़ी तकलीफें उठायी हैं। लेकिन काशी की तरह उसे दूसरे के घर नौकरी नहीं करनी पड़ी।

— अरे, रोको!

टैक्सी लेवल क्रॉसिंग पार गयी थी और दीपंकर को खयाल नहीं था। जब सड़क मुड़ने लगी तब उसे अचानक खयाल हुआ। वह बोला — अरे, पीछे चलो, आगे निकल आये हैं।

फिर दीपंकर ने सोचा कि टैक्सी लौटाने की जरूरत नहीं है। उतनी दूर पैदल जाया जा सकता है। फिर उसने सोचा कि टैक्सी छोड़ देने से क्या फायदा, पहले देख लिया जाय कि लक्ष्मी दी यहाँ है या नहीं। शायद लक्ष्मी दी यहाँ न हो। लेकिन वह मकान तो उसी तरह है। सामने वही नाली है। नाली पार कर एक गलियारे से मकान में जाना पड़ता है। गलियारे के सामने दरवाजा है। दरवाजा अब भी खुला है। लेकिन

अंदर जाने में दीपंकर को संकोच होने लगा। बहुत दिन बाद वह उस मकान में जा रहा है। उसे उस दिन की बात याद आयी। क्या अब भी अनंत बाबू यहाँ हैं ? सच-मुच वह एक स्काउंड्रल है! और मिस्टर दातार ?

गलियारे से थोड़ा आगे बढ़ते ही कई लोगों के बोलने की आवाज सुनाई पड़ी। गलियारे के बाद ही कमरा है। वहीं से आवाजें आ रही थीं।

मानो कोई चिल्ला रहा था। साथ ही साथ हँसी की आवाज गूँजी। फिर एक साथ कई लोगों के बोलने की आवाज आयी। लोग विभिन्न भाषाएँ बोल रहे हैं। इस मकान में इतने लोग कहाँ से आ गये ? ये सब कौन हैं ? यहाँ किसलिए आये हैं ? क्या लक्ष्मी दी के चले जाने के बाद दूसरे लोग इस मकान में आये हैं ? क्या कोई दूसरे लोग यहाँ रह रहे हैं ?

थोड़ा आगे बढ़ने पर एक खिड़की है। खिड़की खुली हुई है। खुली खिड़की के रास्ते एक क्षण में सब कुछ दिखाई पड़ गया।

आश्चर्य है! बहुत दिन बाद यह घटना दीपंकर को याद आयी ? वह आश्चर्य-चकित हो गया है। जिस हालत में लक्ष्मी दी रह रही थी, उस हालत में वह अपने जीवन में यह नया मोड़ कैसे ले आयी! कौन-सा मन्त्र उसे मालूम था! कौन-सा जादू वह जानती थी! दीपंकर ने कितनी बार सोचा है कि लक्ष्मी दी ने यह क्या किया है। यह तो सर्वनाश के चरम पर पहुँच गयी है। यहाँ से पाँव फिसलने पर वह एकदम रसातल में पहुँच जायेगी। उन दिनों उसके चेहरे की तरफ ठीक से देखा भी नहीं जा सकता था। देखने पर घिन लगती थी। उसकी आँखों के चारों तरफ काले दाग उभर आये थे। बालों की वह लाली गायब हो गयी थी। सोचा भी नहीं जा सकता था कि कभी यही लक्ष्मी दी पाँवों में घुँघरू बाँध कर नाचा करती थी। वह साड़ी को खोंचकर आँचल कमर में लपेट लेती थी और नाचती थी। उस समय उस लक्ष्मी दी के हाथों पिटने के लिए भी दीपंकर का मन ललचाता था। उस लक्ष्मी दी को देखने के लिए उसके कालेज जाने के रास्ते में मुहल्ले के लड़के भीड़ करके खड़े हो जाते थे। जो लड़के बाढ़पीड़ितों की राहत के लिए गाना गाकर चंदा इकट्ठा करने आते थे वे भी दूसरी मंजिल पर खड़ी लक्ष्मी दी को देखकर गाना भूल जाते थे। क्या उन दिनों की बात भी दीपंकर कभी भूल सकेगा ?

आज इतने दिन बाद फिर उसी लक्ष्मी दी के पास आना पड़ा है। हालाँकि अब दीपंकर भी वही दीपंकर नहीं है। उन दिनों का वह गरीब दीपंकर अब नौकरी कर रहा है—अच्छी नौकरी कर रहा है। वह बहुत से लोगों के ऊपर चला गया है। अब सब उसकी इज्जत करते हैं, सब उसे नमस्कार करते हैं। अब लोग इसका आदर करते हैं। नौकरी, प्रोमोशन और कनफर्मेशन के लिए बहुत से लोग उसकी खुशामद करते हैं। लेकिन यह कोई भी नहीं जानता कि वह बदला नहीं है। उसके अन्तर में अब भी उसका शिशु रूप छिपा हुआ है। अब भी वह शिशु

चटपटा खाना चाहता है, अब भी वह खुशी के मारे अपने को भूल जाता है और अब भी दुःख से उसकी छाती चीरकर रुलाई निकलती है।

खिड़की से देखते हुए दीपंकर का हृदय लज्जा और घृणा से विदीर्ण होने लगा।

शायद पाँच-छः लोग फर्श पर चटाई बिछाकर बैठे हैं वे बैठकर ताश खेल रहे हैं! वे सिर्फ ताश ही नहीं खेल रहे हैं, सबके सामने गिलास भी हैं। गिलासों में क्या है, यह दीपंकर समझ गया। उन लोगों के बीच रुपये, रेजगारी और नोट रखे थे। एक हाथ से रुपया फेंका जा रहा था और दूसरे हाथ में ताश थे। लक्ष्मी दी उन लोगों से सटकर बैठी हैं। लक्ष्मी दी उन लोगों का खेल देख रही है और खिलखिलाकर हँस रही है।

जो लोग खेल रहे हैं, उनको दीपंकर पहचान नहीं पाया। ये सब कौन हैं? अनंत बाबू तो इनमें नहीं हैं। वह कहाँ गया?

इतने में एक आदमी चिल्लाया — क्वीन ऑव स्पेड्स ....

पता नहीं उसने और क्या-क्या कहा। दीपंकर समझ नहीं सका। वह ताश खेलना ही नहीं जानता था तो ताश की भाषा कैसे समझता? समझने का कोई उपाय भी नहीं था। उस आदमी के चिल्लाने के साथ ही साथ शोर-सा मच गया। वह शोर रुकना नहीं चाहता था।

एक ने कहा — मैंने 'सीन' खेला है, मेरी क्या गलती है?

लेकिन शोर रुका नहीं। एक साथ सब बोल रहे थे, चिल्ला रहे थे। लक्ष्मी दी अचानक एक आदमी की तरफ खिसककर उससे सटकर बैठ गयी और उसके दोनों हाथ पकड़कर बोली — तुम चुप रहो सुधांशु।

सुधांशु बोला — वाह रे, तुम मुझसे चुप रहने के लिए कह रही हो! मैंने 'ब्लाइंड' खेला है — मैं क्यों चुप रहूँगा?

— मैं कह रही हूँ, तुम चुप रहो!

लक्ष्मी दी ने इस तरह सुधांशु की तरफ देखा कि दीपंकर भी देखकर चौंक पड़ा। लक्ष्मी दी तो ऐसी नहीं थी! लक्ष्मी दी की आँखों की तरफ देखकर वह आदमी चुप हो गया। बोला — ठीक है, मिसेज दातार जब कह रही हैं तब मैं छोड़ देता हूँ, लेकिन चौधुरी, अब से तुम केअरफुल होकर खेलना।

— अब किसका 'डील' है?

लक्ष्मी दी बोली — अब चौधुरी का 'डील' है।

एक आदमी फिर से ताश बाँटने लगा। फिर से सबने ताश उठा लिये। लक्ष्मी दी सबसे सटकर सबके ताश देखने लगी। फिर से बोली बोली गयी। रुपये, रेजगारी, नोट फिर चटाई पर पड़ने लगे। एक नौकर आकर फिर गिलास भरकर चला गया। फिर हँसी, फिर बहस और फिर झगड़ा। जिसने बाजी जीती वह रुपये, रेजगारी और नोटों का ढेर बटोरने लगा। उसमें से लक्ष्मी दी को हिस्सा मिलने लगा। लक्ष्मी दी

फिर ये रुपये एक बैग में रखने लगी। देर तक यही चलता रहा। सभी मालदार, पढ़े-लिखे और भले घर के लगे। वे लोग बड़े मजे में हैं! खेलने में उनका कितना उत्साह है! दुनिया में कहाँ क्या हो रहा है, कौन काम कैसे चल रहा है, किसी तरफ उनका ध्यान नहीं है। मानो सब एक ढर्रे में बँधे हैं। क्या ये सब इसी मकान में रहते हैं? कहाँ सोते हैं? कहाँ खाते हैं? कहाँ नौकरी है? कौन हैं ये लोग?

—ट्रायो।

एक आदमी चिल्लाया। साथ ही साथ हँसी गूँज उठी। उस आदमी ने झटपट रुपये-पैसे अपने पास बटोर लिये। लक्ष्मी दी ने उसमें भी हिस्सा लिया और रुपया बैग में रखा।

लक्ष्मी दी बोली—आज चौधुरी की तकदीर खुल गयी है सुधांशु, आज उसे तुम हरा नहीं सकते!

सुधांशु बोला—मेरी तकदीर तो हमेशा से खराब है मिसेज दातार।

—रुको, मैं तुम्हारी तकदीर अच्छी कर देती हूँ।

कहकर लक्ष्मी दी हटकर सुधांशु के पीछे एकदम उसकी पीठ से सटकर बैठ गयी। फिर खेल चालू हो गया। साथ ही साथ रुपये-पैसे सुधांशु की जेब में पहुँचने लगे।

चौधुरी बोला—आप उसको जिताने लगीं मिसेज दातार जरा हमलोगों पर भी कृपा कीजिए।

लक्ष्मी दी बोली—तुम्हारी किस्मत भी चमका दूँगी लेकिन तुम क्या दोगे पहले यह तो बताओ?

खेलता हुआ चौधुरी बोला—मैं आपको सब-कुछ दे सकता हूँ मिसेज दातार....

लक्ष्मी दी उसी तरह हँसती हुई बोली—अगर सब कुछ मुझे दे दोगे तो तुम्हारी बीवी के लिए क्या बचेगा चौधुरी?

—बीबी के लिए मेरा कर्ज बचा रहेगा।

कहकर चौधुरी ठहाका लगाकर हँसा। उसकी देखादेखी सब हँस पड़े। नौकर आकर फिर गिलास भरकर चला गया। लक्ष्मी दी सुधांशु की पीठ से सटी मन लगाकर उसका खेल देखने लगी।

सुधांशु लक्ष्मी दी की तरफ एक सिगरेट बढ़ाकर बोला—सिगरेट पियोगी मिसेज दातार?

लक्ष्मी दी बोली—जब तुम दे रहे हो तब जरूर पिऊँगी....

कहकर सचमुच लक्ष्मी दी ने सिगरेट को होंठों में दबाया और सुधांशु ने दियासलाई निकालकर उसे जला दिया। फिर सचमुच लक्ष्मी ने सिगरेट का कश लगाना शुरू किया! मुँह से धुआँ भी निकलने लगा। लक्ष्मी दी जिस तरह छोड़ने लगी

उससे लगा कि वह सिगरेट पीना जानती है। सिगरेट पीने की अच्छी-खासी आदत है उसे। मानो सिगरेट के धुएँ से उसे आराम मिलने लगा।

अब दीपंकर खड़ा न रह सका। उसके सारे बदन में मानो आग लग गयी। उसने सोचा कि यहाँ न आना ही ठीक रहता। यहाँ न आता तो उसे यह सब देखना न पड़ता। आखिर वह क्यों आया? उसे यहाँ आने की क्या जरूरत पड़ गयी थी? किसने कसम दिलाकर उसे यहाँ भेजा था?

टैक्सी का किराया चुकाया नहीं गया था। टैक्सी अब भी सड़क पर खड़ी थी।

दीपंकर उसी गलियारे से फिर लौटने लगा। यह सब क्या हो गया है। मानो मानव समाज आमूल बदल गया है। लक्ष्मी दी तो अच्छी थी! सती भी अच्छी थी! मिस माइकेल भी अच्छी थी! छिटे-फोंटा भी अच्छे थे! विन्ती दी भी अच्छी थी! लेकिन पता नहीं किसने डोर खींची और सब-के-सब बदल गये। दीपंकर की आँखों के सामने सब कुछ बदल गया। मानो सारा कलकत्ता शहर ही बदल गया। सिर्फ भूगोल नहीं बदला, इतिहास नहीं बदला, लेकिन भूगोल और इतिहास की धारणाएँ मानो बदल गयीं! सिर्फ कालीघाट या बालीगंज ही नहीं बदला, कालीघाट और बालीगंज के लोग भी बदल गये। सिर्फ लोग क्या बदले, लोगों का मन भी बदल गया। मानो किसी अदृश्य शक्ति के इशारे से कालीघाट, बालीगंज, कलकत्ता यहाँ तक कि सारी दुनिया बदलकर एकदम दूसरी तरह की हो गयी! सिर्फ दुनिया ही नहीं बदली। विगत, वर्तमान और अनागत सभी कुछ बदलकर क्या से क्या हो गया। कितना आश्चर्य लगता है! दीपंकर स्वयं भी क्या पहले जैसा है? अब दीपंकर की उम्र वह नहीं है जो पहले थी, तो क्या उसकी आँखें भी वे नहीं हैं? क्या वह अब भी पहले की तरह फटी कमीज और फटे चप्पल पहनकर सड़क पर घूम सकता है? क्या वह पहले की तरह पकौड़ी या मूँगफली चबाता हुआ मारा-मारा फिर सकता है? अब तो उसे साफ कपड़ों की जरूरत पड़ती है — साफ कोट-पैंट या धोती-शर्ट! क्या साफ कपड़ों के साथ उसका मन भी ज्यादा साफ हो सका है? उसकी इज्जत बढ़ गयी है, तनख्वाह बढ़ गयी है, लेकिन उसका मनुष्यत्व क्या तिलमात्र भी बढ़ा है? अगर उसका मनुष्यत्व बढ़ा होता तो आज वह सनातन बाबू से मिलकर बात कर लेता। सनातन बाबू से बात करके वह सती के अपमान का प्रतिकार करता! इसी तरह बात करके वह लक्ष्मी दी के पतन का भी प्रतिकार करता!

दीपंकर बाहर आकर फिर टैक्सी में बैठ गया। सिक्ख ड्राइवर उसकी राह देख रहा था। टैक्सी का किराया मीटर में चढ़ रहा था।

दीपंकर बोला — चलो ....

अगर असहाय के समान सिर्फ देखने के अलावा वह कुछ भी नहीं कर सकता, तो फिर वह आया ही क्यों? क्या वह डर गया था? क्या वह लक्ष्मी दी से अब भी डरता है? लेकिन अब लक्ष्मी दी में डरने लायक है भी क्या? क्या अब भी लक्ष्मी दी

उससे बड़ी है ? क्या अब भी लक्ष्मी दी पहले की तरह उसे चाँटा लगा सकती है ? आश्चर्य है ! लक्ष्मी दी का चेहरा उसकी आँखों के आगे तिर गया। मानो अब भी लक्ष्मी दी उसकी आँखों के सामने बैठी सिगरेट पी रही हो और खिलखिलाकर हँस रही हो। मानो अब भी लक्ष्मी दी उसके सामने बड़ी अदा से सिगरेट का धुआँ छोड़ रही हो। अपनी कमजोरी पर दीपंकर खुद शर्मिन्दा हो गया। आखिर उसका भी तो कुछ अधिकार है ! प्रतिकार करने का अधिकार, प्रतिवाद करने का अधिकार है।

अचानक दीपंकर चिल्लाया — घुमा लो टैक्सी, लौट चलो ....

ड्राइवर के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने पीछे मुड़कर दीपंकर को देखा।

दीपंकर बोला — अभी जहाँ से चले थे, फिर वहीं चलो ....

टैक्सी फिर मुड़ी। फिर वह लक्ष्मी दी के मकान के सामने आ खड़ी हुई।

ठीक तो है। दीपंकर को भी प्रतिकार करने का अधिकार है ! अधिकार है प्रतिवाद करने का !

फिर वही गलियारा। दरवाजा अब भी खुला है। दीपंकर गलियारे के आखिरी छोर तक चला गया। खुली खिड़की के पास अब भी सुधांशु की पीठ से सटी लक्ष्मी दी बैठी थी। अब भी वह खिलखिलाकर हँस रही थी। अब भी वह जीती रकम का हिस्सा ले रही थी। अब भी नौकर आकर सबके गिलास भर रहा था। कुछ देर पहले जैसा ही सब कुछ चल रहा था। अब यह महफिल कब तक जमी रहेगी, क्या पता ?

अचानक दीपंकर ने बुलाया — लक्ष्मी दी !

पुकार सुनकर लक्ष्मी दी ने चौंककर पीछे देखा।

फिर कहा — कौन ?

वह उठकर बाहर चली आयी।

अँधेरे में पहले लक्ष्मी दी पहचान नहीं पायी या इतने दिन बाद वह दीपंकर को देख रही थी, इसलिए पहचान न सकी। दीपंकर भी तो बहुत दिनों बाद लक्ष्मी दी को देख रहा था। थोड़ी देर लक्ष्मी दी आश्चर्य से दीपंकर के चेहरे की तरफ देखती रही।

बोली — आप कौन हैं ? किसको चाहते हैं ?

— मैं हूँ लक्ष्मी दी, दीपू ....

— अरे तू ? क्या बात है रे ? इतने दिन बाद तू कैसे आ गया ?

मानो लक्ष्मी दी असमंजस में पड़ गयी। दीपंकर को कहाँ बिठाये, यही सोचकर वह मानो परेशान होने लगी लेकिन बस एक क्षण के लिए। अचानक दीपंकर बोला — काफी देर से मैं आया हुआ हूँ लक्ष्मी दी। मैंने सब देखा है।

लक्ष्मी दी ने गौर से दीपंकर के चेहरे की तरफ देखा। मानो वह [illegible] लगी। दीपंकर बोला — मैं एक काम से आया था।

लक्ष्मी दी ने दीपंकर की इस बात पर ध्यान नहीं दिया। कहा — तूने क्या देखा है ?

दीपंकर ने कहा — अब वह मुझसे सुनकर आप क्या करेंगी ?

लक्ष्मी दी बोली — मैं सिगरेट पीती हूँ, शराब पीती हूँ, यही तो ?

— सिर्फ यही नहीं, और भी बहुत कुछ देखा है।

लक्ष्मी दी बोली — तू छिपकर दूसरे के घर में झाँकता है, तुझे शर्म नहीं आती ?

लक्ष्मी दी की आवाज उसे कुछ तीखी लगी। दीपंकर बोला — अगर इसे पराया घर समझता तो मैं कभी न झाँकता। आपको अगर पराया समझता तो मैं आपसे बात किये बिना वापस चला जाता। लेकिन मैं जाना चाहकर भी जा न सका लौटकर मैंने आपको बुलाया ....

यह सुनकर लक्ष्मी दी थोड़ी देर चुप रही। फिर बोली — बता, किस काम से आया था।

दीपंकर बोला — आप बहुत व्यस्त हैं, यह मैं समझ रहा हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि मुझसे बात करने में आपका वक्त बरबाद होगा। इसलिए मैं अपना काम करके शीघ्र ही चला जाऊँगा और फिर कभी आपको तंग करने आपके घर नहीं आऊँगा ....

— लेकिन मुझसे क्या काम है बता न ?

दीपंकर बोला — आप अपने पिताजी का पता दे दीजिए, मुझे जरूरत है !

इतने में अंदर से किसी ने पुकारा — मिसेज दातार !

लक्ष्मी दी ने उस पुकार का जवाब न देकर कहा — क्यों ? पिताजी का पता लेकर तू क्या करेगा ?

— मिसेज दातार, आप कहाँ चली गयीं ?

कहता हुआ वही आदमी — सुधांशु बाहर आ धमका उसके पीछे चौधुरी और उसके बाद और भी दो आदमी आये। दीपंकर को देखकर वे सब आश्चर्य में पड़ गये।

लक्ष्मी दी उन लोगों की तरफ बिना देखे कहने लगी — क्या तू यही सोच रहा है कि पता लेकर मेरे पिताजी को चिट्ठी लिखेगा ? क्यों ? पिताजी को यह सब लिखने से तुझे क्या मिलेगा ? उनको चिट्ठी लिखकर क्या होगा ? क्या तू मेरा अपमान करना चाहता है ? मुझे सुधारना चाहता है ? तू किस मतलब से यहाँ आया है, बता तो ?

दीपंकर के मुंह से कोई जवाब नहीं निकला। कई लोग खड़े थे, वे भी कुछ समझ नहीं पा रहे थे। कौन था वह लक्ष्मी दी से उसका क्या सम्पर्क था, यह सब वे लोग नहीं जानते।

लक्ष्मी दी ने फिर पूछा — तू जवाब क्यों नहीं दे रहा है ? कुछ बोल न ....

वे लोग मुँह बाये दीपंकर की तरफ देख रहे थे। सब सिगरेट पी रहे थे।

नहीं है। सारे संसार में ये लोग फैले हैं। सारे संसार में इनका राज चल रहा है।

सुधांशु ने ही अचानक कहा — क्या आप मिसेज दातार को अकेले में पाना चाहते थे ?

लक्ष्मी दी इस बात पर बिगड़ गयी और बोली — तुम चुप रहो सुधांशु ! किससे किस तरह की बात की जाती है, तुम नहीं जानते —

फिर दीपंकर की तरफ देखकर लक्ष्मी दी बोली — अभी तू जा दीपू, अभी यहाँ से जा। रात को कभी मेरे घर मत आना ....

दीपंकर ने लक्ष्मी दी के चेहरे की तरफ देखा। लक्ष्मी दी की कही हुई बातें उसे रुलाई सी लगीं। लक्ष्मी दी दीपंकर की पीठ पर हाथ रखकर उसे दरवाजे की तरफ ले चली ! यह जगह काफी अँधेरी है।

दरवाजे के पास आकर दीपंकर रुका। बोला — इसके बाद भी आप मुझसे यहाँ आने के लिए कहती हैं ?

लक्ष्मी दी बोली — नहीं, अब तू कभी मत आना ....

दीपंकर बोला — आते समय बहुत कुछ सोचकर चला था, आपसे बहुत सी बातें भी करनी थीं, लेकिन अब वे बातें नहीं हो सकती।

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन जान निकल जाने पर भी मैं तुझे पिताजी का पता नहीं दे सकती ....

दीपंकर बोला — विश्वास कीजिए, मैं आपके बारे में आपके पिताजी को कुछ भी नहीं लिखूंगा। मुझे पते की जरूरत सती के लिए थी ....

— सती ? सती कहाँ है ?

लक्ष्मी दी सती का नाम सुनते ही चौंक पड़ी।

बोली — सती के लिए तू पिताजी को चिट्ठी लिखेगा ? क्यों सती को क्या हुआ ?

दीपंकर बोला — सती आपसे भी ज्यादा कष्ट में है। आपको तो अपनी इच्छा से सब कुछ करने की आजादी है, लेकिन उसे तो वह भी नहीं है। उसके कष्ट का प्रतिकार सिर्फ आपके पिताजी ही कर सकते हैं।

—लेकिन सती की शादी तो अमीर के घर में हुई है ? पिताजी ने खुद देख-सुनकर अच्छी जगह उसकी शादी की है। सती के ससुरालवाले बहुत धनी हैं, हैं न ?

— क्या धन से ही संसार में सुख मिलता है ?

लक्ष्मी दी बोली — मेरे पास अगर धन होता तो क्या इस तरह गृहस्थी चलानी पड़ती ? धन नहीं है, इसीलिए मुझे इतना कष्ट है।

दीपंकर बोला — अभी ये सब बातें रहने दीजिए। आप पता दे दीजिए तो मैं आज ही पत्र लिख दूं। मैं वादा करता हूं कि आपके बारे में चिट्ठी में कुछ भी नहीं लिखूंगा।

लक्ष्मी दी ने कुछ सोच लिया, फिर कहा — मुझसे तेरी भेंट हुई है यह तो नहीं लिखेगा ?

दीपंकर बोला — नहीं।

— मेरी शादी से पहले तू शंभु को चिट्ठी दे आता था, वह भी नही लिखेगा ?

— नहीं, वह भी नहीं लिखूंगा ....

लक्ष्मी दी फिर बोली — मैंने सोचा था कि पिताजी के पास से चले आने के बाद में अपना नया घर बसाऊँगी, अपना अभिमान और अहंकार बरकरार रख सकूंगी और सिर ऊँचा कर अपने पाँवों पर खड़ी होऊँगी, लेकिन मेरी सारी साध मिट्टी में में मिल गयी। मैं एकदम नष्ट हो गयी रे ....

यह कहकर लक्ष्मी दी थोडी देर तक सिर झुकाकर चुपचाप खड़ी रही।

दीपंकर बोला — आपका रोना सुनने के लिए मेरे पास समय नही है। आप पता देती हों तो दीजिए। मेरी अपनी भी बहुत सी समस्याएँ हैं, मेरे अपने भी बहुत से काम हैं ....

लक्ष्मी दी ने सिर उठाकर दीपंकर की तरफ देखा। दीपंकर बोला — मैं आपको देख रहा हूँ और सोच रहा हूँ कि आप उसी तरह हैं, लेकिन यह दुनिया दिनों दिन कितनी बदलती जा रही है। उस तरफ आपका कोई खयाल नही है। हर इन्सान रूठता और गुस्सा करता है, लेकिन एक उम्र के बाद वह शोभा नही देता।

लक्ष्मी दी शायद दीपंकर की बात समझ नही पायी।

दीपंकर बोला — लोगों की उम्र बढ़ती है और उसके साथ उनका ज्ञान भी बढ़ता है, लेकिन आप न जाने कैसी हैं ! आपकी उम्र जितनी बढ़ती जा रही है, आप उतनी ही बच्ची बनती जा रही हैं।

— इसका मतलब ?

— इसका मतलब मैं आपको बारबार नही समझा सकूंगा और आप भी नही समझ सकेंगी। अभी आपके मुँह से शराब की बदबू आ रही है। अगर इस समय आप सही हालत में होतीं तो मैं आपको समझाने की कोशिश करता ....

लक्ष्मी दी अचानक गंभीर हो गयी। बोली — जब तूने यह कहा तब मेरे साथ आ और देख ....

कहकर लक्ष्मी दी ने झट से दीपंकर का हाथ पकड़ लिया।

दीपंकर बोला — छोड़िए, हाथ छोड़िए ....

— नहीं, तुझे देखना ही पड़ेगा, तू अपनी आँखों से देख ले ....

दीपंकर बोला — मैंने देखा है। जो कुछ देखना था, मैंने देख लिया है।

— नहीं, तू ने कुछ भी नहीं देखा, अभी बहुत कुछ देखना बाकी है ....

कहकर लक्ष्मी दी दीपंकर को खींचकर अन्दर ले चली।

दीपंकर बोला — तुम्हारे कमरे में वे सब हैं, वे सब क्या सोचेंगे, जरा

तो ख्याल कीजिए। छोड़िए ....

लक्ष्मी दी दीपंकर को सीधे कमरे में ले गयी। दीपंकर को याद है, उस हालत में उसे देखकर कमरे में जो लोग थे, सब उस दिन आश्चर्य में पड़ गये थे। शायद उन लोगों ने सोचा था कि उनकी तरह दीपंकर भी एक तमाशबीन था। शायद सबने सोचा था कि दीपंकर भी उनकी तरह रोज यहाँ आकर ताश खेलेगा, बाजी लगायेगा और समय का सदुपयोग करेगा।

लेकिन लक्ष्मी दी की बात सुनकर सब चौंक गये। लक्ष्मी दी बोली — अब तुम लोग जाओ सुधांशु — चौधरी तुम भी उठो — अब तुमलोग सब जाओ ....

चौधुरी बोला — आप क्या कहती हैं मिसेज़ दातार, अभी तो नाइट इज़ यंग ....

— होने दो, आज दीपू आया है, उससे मेरा थोड़ा काम है — अब तुम सब जाओ ....

लक्ष्मी दी की दृष्टि में शायद रूखापन था। किसी ने ज्यादा आपत्ति नहीं की। धीरे-धीरे सब उठने लगे। मानो किसी की उठने की इच्छा नहीं थी। सब सूट पहने हुए थे। शायद सभी अच्छी नौकरी करते हों। शायद वे सब दफ्तर के बड़े बाबू थे। शायद वे गवर्नमेंट आफिस के बिग बॉसेज़ थे। शायद इन्हीं के डर से दफ्तर के क्लर्क काँपते हैं। सब कीमती सिगरेट पी रहे थे, सबकी उँगलियों में कीमती अँगूठी थी और सबको समय का बड़ा खयाल था। वक्त बरबाद न कर वे सब यहाँ रुपया कमाने आये थे। लेकिन लक्ष्मी दी के सामने सबने सिर नीचा कर लिया।

सुधांशु बोला — गुड लक टु यू बॉय ....

लक्ष्मी दी बोली — चुप रहो सुधांशु, दीपू मेरे भाई के समान है।

अचानक चौधुरी के मुंह से निकला — भाई भी और भतार भी ?

लक्ष्मी दी से अब रहा नहीं गया। उसने चौधुरी के गाल पर तड़ से थप्पड़ जड़ दिया। अचानक थप्पड़ खाकर चौधुरी लड़खड़ा गया। लेकिन उसने अपने को सँभाल लिया! लक्ष्मी दी बोली — किससे कैसी बात की जाती है तुम नहीं जानते तो चुप क्यों नहीं रहते ?

चौधुरी अब कुछ नहीं बोला। वह चोट खाये कुत्ते की तरह धीरे-धीरे जूते पहनने लगा! सुधांशु भी सिगरेट का टीन लेकर बाहर जा खड़ा हुआ। फिर सबके चले जाने के बाद लक्ष्मी दी बोली — केशव, बाहर वाला दरवाजा बंद कर दे ....

केशव के जाने के बाद दीपंकर ने लक्ष्मी दी के चेहरे की तरफ देखा। अब लक्ष्मी दी की शकल एकदम दूसरी तरह की हो गयी थी। अब मानो वह एकदम दूसरी बन गयी थी। अब उसके सामने खड़े रहने में भी दीपंकर को डर लगने लगा। केशव लौट आया तो लक्ष्मी दी ने उससे कहा — यह सब उठा ले जा, जगह एकदम साफ कर दे ....

थोड़ी देर में सब साफ हो गया। प्लेटें, शराब के गिलास और चाय के कप हटा लिये गये। लक्ष्मी दी बक्से में न जाने क्या ढूँढने लगी। रुपये-पैसे की तलाश हुई। उसने केशव को एक रुपया दिया और कहा — जा रे केशव, दुकान से मिठाई ले आ, रसगुल्ला या गुलाबजामुन जो मिले ....

दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया और बोला — मिठाई क्या होगी ? मेरे लिए ?

लक्ष्मी दी बोली — हाँ, तू खायेगा।

दीपंकर बोला — लेकिन मैं तो अभी घर जाऊँगा, पास ही मेरा मकान है।

— पास ही ? कहाँ ?

दीपंकर बोला — यही स्टेशन रोड पर किराये का मकान लिया है। माँ है और एक नौकर। अब मैं ईश्वर गांगुली लेन में नहीं रहता।

लक्ष्मी दी बोली — ठीक है, लेकिन अभी तो तू सीधे दफ्तर से आ रहा है न, इसलिए दीदी के घर थोड़ा खा ले ....

उसके बाद अचानक लक्ष्मी दी बोली — इन के रुपये की मिठाई खाने में अगर तुझे आपत्ति हो तो मैं जबर्दस्ती नहीं करूँगी ....

दीपंकर बोला — आप भी तो उन के रुपये से ही खाती हैं ?

— मेरी बात अलग है। मुझमें और तुझमें क्या कोई समानता है ? तुझे तो अन्दर यहाँ बैठने में भी घृणा लग रही होगी।

— आप भी तो घृणा करती हैं, फिर उन लोगों को यहाँ क्यों आने देती हैं ?

लक्ष्मी दी बोली — मैं क्यों उन लोगों को यहाँ आने देती हूँ, यही दिखाने के र तुझे अन्दर बुला लायी हूँ ! अनंत भी एक दिन मेरा उद्धार करने और मेरी द करने ही आया था ! वही मेरा सारा खर्च दे रहा था — मकान का किराया, ने का खर्च और मेरे बेटे का खर्च ....

— आपका बेटा ?

दीपंकर चौंका। क्या लक्ष्मी दी के बेटा हुआ है ?

इतने में केशव आया। उसने रकाबी में मिठाई रखकर दीपंकर की तरफ बढ़ा दी। एक गिलास पानी भी दिया। उसके बाद वह चला गया।

लक्ष्मी दी बोली — केशव जाकर बाबू के कमरे का दरवाजा खोल दे।

दीपंकर बोला — आपका बेटा ? क्या आपके बेटा हुआ है लक्ष्मी दी ?

लक्ष्मी दी बोली — मिठाई खा ले। मेरा बेटा भी इन्हीं रुपयों से खाता है और इन्हीं रुपयों से पढ़ता है। जब मैं उसे दे सकती हूँ तब तुझे देने में कोई आपत्ति नहीं है।

— लेकिन आपका लड़का कहाँ है ?

लक्ष्मी दी बोली — वह बहुत दूर देहरादून में है। उसे मैंने बहुत दूर रखा है, ताकि उसे मेरी छूत न लग जाय।

— लेकिन यह तो मैं जानता नहीं था।

लक्ष्मी दी हँसने लगी और बोली — एक मनुष्य का कितना कुछ जाना जा सकता है ?

फिर दीपंकर के चेहरे का भाव देखकर लक्ष्मी दी बोली — लेकिन वह लड़का किसका है, यह तो तूने नहीं पूछा ?

दीपंकर मिठाई मुँह में रखकर भी निगल नहीं पाया। वह आश्चर्य से लक्ष्मी दी के चेहरे की तरफ देखने लगा।

— किसका लड़का मतलब ?

लक्ष्मी दी बोली — मतलब शंभु का है या अनंत का ?

दीपंकर के आश्चर्यचकित होने से पहले एक आदमी धीरे-धीरे कमरे में आया। लक्ष्मी दी ने उसकी तरफ देखकर कहा — आओ, आओ, बैठो ....

लक्ष्मी दी ने आगे बढ़कर उसे पकड़ लिया।

भूत जैसा वह छाया-मानव आगे बढ़ आया। लगा जैसे वह हवा में तैर रहा हो। उसके बदन पर मोटा अधमैला कुर्ता था और वह वैसी ही धोती पहने हुए था। सिर के बाल काफी झड़ चुके थे। गाल पिचके हुए और आँखें धँसी हुई थीं। वृद्ध, जर्जर और पंगु एक आदमी। दीपंकर मानो डर गया उसे देखकर।

लक्ष्मी दी ने दीपंकर की तरफ इशारा कर उस आदमी से पूछा — इसको तुम पहचान रहे हो ?

उस आदमी ने दीपंकर की तरफ देखा। धुँधलायी दृष्टि। मानो उन आँखों में कोई दृष्टि ही न हो।

दीपंकर की तरफ देखकर लक्ष्मी दी बोली — तू पहचान सकता है इन्हें ?

दीपंकर ने पूछा — कौन हैं ये ?

लक्ष्मी दी ने उस आदमी से कहा — यही दीपू है, हम लोगों का दीपंकर। यही तुम्हें कालीघाट के मंदिर में चिट्ठी दे आता था। याद नहीं है ?

मानो वह कई युग पहले की बात थी। लेकिन वह आदमी ऐसा कैसे हो गया ? उस आदमी की शकल ऐसी क्यों हो गयी ? कहाँ गया उसका बार-बार सिगरेट पीना वह सूट और वह टाई ? बीसवीं सदी के ट्रेड डिप्रेशन का भूत मानो मूर्तिमान होकर दीपंकर के सामने प्रकट हो गया था। सारी दुनिया की पीड़ित मानवात्मा मानो उस दिन खामोशी से मिस्टर दातार के माध्यम से चीख उठी थी। लक्ष्मी दी की बात सुनकर मिस्टर दातार ने ऊपर ताका। उनके होंठ कुछ फैल गये। लेकिन वे पहचान सके या नहीं, यह समझ में नहीं आया।

दीपंकर की तरफ देखकर लक्ष्मी दी बोली — पहले से अभी यह बहुत ठीक हो गया है। पहले तो यह दिनभर चिल्लाया करता था, अब चुपचाप रहता है।

फिर मिस्टर दातार की तरफ देखकर लक्ष्मी दी बोली — भूख लगी है ?

मिस्टर दातार ने सिर हिला दिया।

लक्ष्मी दी ने पूछा —भात खाओगे ?

हर बात में मिस्टर दातार सिर हिलाने लगे।

लक्ष्मी दी ने अब दीपंकर से कहा — देख रहा है न, अब तो फिर भी पहचान जाता है, अब तो फिर भी पता चलता है कि जिंदा है, लेकिन पहले तो मैंने आशा ही छोड़ दी थी। डाक्टर ने कहा है कि पूरी तरह ठीक होने में अब भी साल भर लगेगा ....

दीपंकर ने पूछा — आपने इन्हें कैसे ठीक किया लक्ष्मी दी ?

लक्ष्मी दी बोली — रुपये के बल पर ....

रुपये के बल पर ! बात दीपंकर के कान में खट् से लगी। क्या रुपये के बल पर किसी आदमी को जिंदा भी किया जा सकता है ? फिर क्या दुनिया में रुपया ही सब कुछ है ? फिर तो अघोर नाना ने सही ही कहा था ! !फिर अघोर नाना ने उसे गलत नहीं सिखाया था ? लेकिन नाना की बात अगर सही थी तो अंत में उनका ही परिणाम वैसा मर्मांतक क्यों हुआ ?

— लेकिन इतने रुपये आपको कहाँ से मिले ?

लक्ष्मी दी बोली — अनंत देता था। वह तो बहुत रुपये कमाता था। तेर घोषाल साहब को घूस देकर वह बहुत-से कांट्रेक्ट पा गया था। सब रुपये वह मुझे देता था। उसी के रुपये से मैं मकान का किराया अदा करती थी, हर महीने लड़के को रुपया भेजती थी और शंभु के इलाज का खर्च चलाती थी।

— लेकिन वह अनंत बाबू अब कहाँ हैं ? उसे तो यहाँ नहीं देख रहा हूँ।

मिस्टर दातार ने अचानक कुछ कहा। लेकिन उनकी बात ठीक से समझ में नहीं आयी। दीपंकर समझ नहीं पाया। लक्ष्मी दी भी समझ नहीं पायी। मिस्टर दातार के मुँह के पास मुँह ले जाकर लक्ष्मी दी ने पूछा — क्या कह रहे हो ? कुछ कह रहे हो क्या ?

मिस्टर दातार ने फिर कुछ कहा।

दीपंकर फिर भी नहीं समझ पाया।

लक्ष्मी दी ने दीपंकर से कहा — कह रहा है कि नींद लगी है।

फिर लक्ष्मी दी मिस्टर दातार को बगल के कमरे में ले गयी। जाते समय वह बोली — तू जरा बैठ दीपू, मैं शंभु को सुलाकर आती हूँ ....

दीपंकर अकेला बैठा रहा। थोड़ी देर बाद लक्ष्मी दी लौट आयी। दीपंकर के पास बैठकर वह बोली — अभी तो वह काफी ठीक है। और सुन, उस कमरे में जाकर उसने तेरा नाम लिया — तुझे वह पहचान सका है।

दीपंकर बोला — मिस्टर दातार ठीक हो जायें तो आप उन्हें लेकर कहीं दूर चली जायें। यह कलकत्ता आपके लिए नहीं है ?

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन कलकत्ता छोड़ जाने पर इतना रुपया कहाँ से

आयेगा ? कलकत्ते की तरह इतने जुआड़ी कहाँ मिलेंगे ?

दीपंकर बोला — रुपया मैं दूँगा ....

— तू क्यों देगा ? तुझे क्या गरज पड़ी है ?

दीपंकर बोला — कोई गरज नहीं पड़ी, समझ लो यों ही ....

— लेकिन यों ही मैं कुछ नहीं लूँगी । जीवन में मैंने किसी से भीख नहीं ली । बिना कुछ दिये मैंने किसी से कभी कुछ नहीं लिया ।

दीपंकर बोला — फिर अनंत बाबू ? अनंत बाबू ने भी क्या आपसे कुछ लिया था ?

लक्ष्मी दी बोली — जरूर लिया था । उसने लिया भी है और उसे मिला भी है ।

— क्या कह रही हैं आप ?

लक्ष्मी दी बोली — सही बात कह रही हूँ, लेकिन गलती अनंत की थी । उसने सोचा था कि शायद रुपया ही मेरे लिए सब से बड़ा है ! वह नहीं जानता था कि रुपये की मुझे जरूरत तो है, लेकिन पहले है शंभु, पहले है मेरा बेटा और उसके बाद कहीं है रुपया । उसने चाहा था कि मैं अपने बेटे को भूल जाऊँ, मैं एक माँ हूँ, यह भी मैं भूल जाऊँ । उसने मुझे एक बाजारू औरत समझ लिया था ।

— उसके बाद ?

— उसके बाद एक दिन मैंने उसे जूता मारकर भगा दिया । मुझे तो वह पहचानता नहीं था ! मैं बाजारू औरत हो सकती हूँ लेकिन मैं माँ भी हूँ और पत्नी भी हूँ । यही उस दिन उसे जूता मारकर मैंने समझा दिया ।

— इसका मतलब ?

लक्ष्मी दी बोली — अनन्त ने सोचा था कि वह चला जायेगा तो मैं भूख मरूँगी, शंभु का इलाज नहीं होगा और मेरे बेटे के लिए देहरादून रुपया नहीं भेजा जायेगा — लेकिन तब तक मैं कलकत्ता शहर को अच्छी तरह पहचान गयी थी । कलकत्ते के सभ्य और शिक्षित लोगों को मैंने समझ लिया था । मैंने अनंत को जूते लगाकर भगा दिया । कहा — तुम्हारे साथ मैंने शराब पी है तो क्या मैं तुम्हारी बाँदी हो गयी हूँ ?

लक्ष्मी दी की बातें सुनता हुआ दीपंकर मानो उस दिन दूसरी ही दुनिया में पहुँच गया था ।

सन् उन्नीस सौ सैंतीस, अड़तीस और उन्तालिस ईसवी का वह कलकत्ता । एक तरफ कांग्रेस की मीटिंग और स्वराजियों की सभा-समितियों का दौर-दौरा और दूसरी तरफ उच्छृंखल मनुष्यों का नैश विहार । एक तरफ प्राणमथ बाबू जैसों की अथक निष्ठा और किरण जैसों का आत्मोत्सर्ग और दूसरी तरफ छिटे-फोंटा जैसों का उत्पात ।

चौरंगी से म्यूजियम तक सीधे लंबे फुटपाथ पर घोड़ागाड़ियों के कोचवानों की भीड़। वहाँ से कोई गुजरता तो कोचवान लोग उसके कान में न जाने फुसफुसाकर क्या कहते। नया आदमी थोड़ा घबड़ा जाता। उसके सारे बदन में सनसनी दौड़ जाती। हर गली के सामने खामोश खड़ी फीटन गाड़ी ऊँघती रहती। जब भी कभी कोई शिकार फँसता तो उसे गाड़ी से सीधे पार्क स्ट्रीट या फ्री स्कूल स्ट्रीट जैसे मिस माइकेलों के मुहल्ले के किसी फ्लैट में पहुँचा दिया जाता। फिर वहाँ रुपये का लेन-देन चलता, मांस की खरीद-फरोख्त होती और कभी-कभी ब्लैकमेलिंग का तमाशा चलता।

हाँ, तो उस दिन लक्ष्मी दी सजधजकर वहीं जाकर खड़ी हुई। होंठों को लिपस्टिक से रँगकर और आँखों में सुर्मा लगाकर वह व्यस्ततम राजमार्ग पर दफ्तरों से लौट रहे दिलफेंक जवानों के एकदम आमने-सामने खड़ी हो गयी, ट्राम और बस वाली सड़क के मोड़ पर। फिर एक-दो लोग उसके आस-पास चक्कर लगाने लगे। पास ही खड़ा होकर कोई सिगरेट पीने लगा। लक्ष्मी दी ने एक की तरफ कनखियों से देखा और देखकर वह दायें चलने लगी। वे लोग भी उसके पीछे चलने लगे।

—उसके बाद ?

लक्ष्मी दी कल क्या खायेगी, इसका ठिकाना नहीं था। लड़के को देहरादून रुपया भेजना था। हर महीने पचास रुपये भेजने पड़ते थे। उसका भी जुगाड़ नहीं था। मिस्टर दातार ताला-बंद कमरे में बैठे चिल्ला रहे थे। रात को उसे लक्ष्मी दी क्या खाने को देगी, इसका भी इंतजाम नहीं था।

लक्ष्मी दी बोली—उस वक्त मेरे पास सोचने के लिए मौका नहीं था। जैसे भी हो, जिस तरह से भी हो मुझे जिंदा रहना था। अपने पाँवों पर खड़ा होना था! मैंने साड़ी को बदन पर कसकर सोचा और एक बार कनखियों से देख लिया। देखा कि वह आदमी मेरे पीछे-पीछे आ रहा था। मैं धीरे-धीरे चलने लगी। तब तक वह आदमी पास आ गया—एकदम मेरे पास। एक टैक्सी जा रही थी, उसे रोककर मैं उसमें बैठ गयी। वह आदमी भी हिम्मत करके टैक्सी में आकर बैठ गया।

—फिर ?

लक्ष्मी दी अपनी कहानी सुनाती हुई अचानक उठी और बोली—तू मेरे पिताजी का पता माँग रहा था न ?

दीपंकर ने पूछा—उसके बाद क्या हुआ, आपने नहीं बताया ?

लक्ष्मी दी बोली—उसके बाद यही सुधांशु पहली बार मेरे घर आया। फिर वही चौधुरी को ले आया। फिर एक-एक कर बहुत लोग आने लगे। ताश का अड्डा जमने लगा। वे सब बड़े-बड़े अफसर हैं। मैं फिर अपने लड़के को रुपया भेजने लगी और शंभु का इलाज चलने लगा।

— अच्छा, आपके लड़का भी है, यह मैं नहीं जानता था।

— कोई नहीं जानता। यहाँ तक कि शंभु भी नहीं जानता। अगर लड़का न रहता तो अब तब मैं न जाने कहाँ चली गयी होती, किसी को मेरा पता भी न चलता और शंभु भी शायद जिंदा न रहता।

याद है, उस दिन लक्ष्मी दी के कमरे में बैठकर दीपंकर को बड़ा रहस्यमय लगा था। कालेज में पढ़ने वाली वह लड़की न जाने कहाँ खो गयी थी! उस समय वह भाग्य की राह-कुराह पार कर अपने बल पर जीने की भरपूर कोशिश कर रही थी। दूर से दीपंकर यह सब नहीं जान सका था। उस समय तक दीपंकर बस उससे घृणा करता रहा था। लेकिन उस दिन दीपंकर के मन में उसके लिए कौतूहल जगा। यहाँ तक तो ठीक है, लेकिन इसके बाद वह कहाँ जायेगी? कहाँ पहुँचेगी वह? पता नहीं किस घाट-कुघाट में उसकी नाव लगेगी?

लक्ष्मी दी बोली — इसके बाद कभी मानस बड़ा होगा।

— मानस कौन?

— मैंने बेटे का नाम मानस रखा है। मैं दिखाती हूँ उसकी तस्वीर।

कहकर लक्ष्मी दी ने बक्से से एक फोटो निकाला। दीपंकर ने देखा। आश्चर्य! सुन्दर गोल-मटोल एक शिशु। बड़ी-बड़ी आँखें।

लक्ष्मी दी पास खड़ी हो गयी और बोली — बता, देखने में किसकी तरह है? मेरी तरह या शंभु की तरह?

लक्ष्मी दी का चेहरा एकदम दूसरी तरह का दिखाई पड़ा। अचानक वह माँ की तरह मनोरम दिखाई पड़ी। आश्चर्य है। थोड़ी देर पहले जिसे शराब पीते देखकर दीपंकर ने घृणा से मुँह फेर लिया था, उसी के चेहरे से सौम्य लावण्य झलकने लगा। निष्पाप निष्कलंक मातृमूर्ति।

— माँ।

केशव आकर बाहर रुक गया। लक्ष्मी दी बोली — क्या है रे?

केशव बोला — बाबू बुला रहे हैं।

— मुझे?

लक्ष्मी दी बोली — ठहर दीपू, मैं आ रही हूँ। सुन लूँ, शंभु क्या कह रहा है। शायद उसे फिर भूख लगी है।

दीपंकर बोला — अब मैं भी चलूँ लक्ष्मी दी, काफी रात हो गयी है। मैं किसी और दिन आऊँगा। आप पिताजी का पता दे दीजिए।

लक्ष्मी दी बोली — मेरे बारे में तो नहीं लिखेगा न?

दीपंकर बोला — नहीं। मैंने तो आपसे कहा है।

— मेरा पता भी उनको नहीं देगा?

— कह तो रहा हूँ, नहीं दूँगा। मैं सिर्फ सती के बारे में लिखूँगा। सिर्फ यही

लिखूँगा कि आप आकर सती को अपने साथ ले जाइए, उसे ससुराल में बड़ी तकलीफ है ....

लक्ष्मी दी ने एक कागज पर झटपट पता लिख दिया। उसके बाद उसने वह कागज दीपंकर की तरफ बढ़ाकर कहा — देखना, मेरे बारे में कुछ मत लिखना ....

दीपंकर कागज लेकर उठा।

लक्ष्मी दी बोलीं — जा केशव, दरवाजा बंद कर आ ....

कहकर लक्ष्मी दी बगलवाले कमरे में चली गयी।

● ● ●

स्टेशन रोड पर दीपंकर को अपना मकान बड़ा सूना लगने लगा। अब तक ट्रेन शायद धनबाद पार कर गयी हो। माँ शायद बिना खाये सो गयी हो। शायद माँ दीपंकर की ही बात सोच रही हों। दीपंकर को छोड़ कर यही पहली बार माँ बाहर गयी हैं। माँ के न रहने पर दीपंकर को न जाने क्यों सब कुछ बड़ा सूना-सूना लगता है। बगल में ही माँ का कमरा है। दीपंकर जब तक नहीं आता माँ जागती रहती है। बिस्तर पर लेटी-लेटी माँ बेचैन होती रहती है। बारबार माँ काशी से कहती है — अरे देख तो, शायद दीपू आया है। शायद वही कुंडी खटखटा रहा है।

कभी-कभी माँ फर्श पर पाँव पसारकर बैठी दीये के लिए बत्तियाँ बनाती है। प्रतिदिन संध्या को माँ ठाकुरघर में दीया जलाती है। दीपू के आने पर माँ उसे खाना देती है। बगल में बैठकर खिलाती है। माँ निरामिष भोजन करती है, लेकिन दीपू के लिए मछली और माँस बनाती है।

दीपंकर कहता — मेरे लिए क्यों यह सब अलग से बनाती हो माँ ?

— क्यों रे ? ठीक नहीं बना है क्या ?

— नहीं, बनने की बात नहीं है माँ, क्यों अलग से मेहनत करती हो ?

— माँ कहती — मैंने नहीं बनाया, छीरोदा, संतोष की लड़की ने बनाया है।

दीपंकर पूछता — क्या वे सब यहीं रहेंगे ?

माँ कहती — रहने के लिए ही आये हैं। अब संतोष कह रहा है कि तुमसे

अपनी लड़की की शादी करेगा। खैर, लड़की वड़ी अच्छी है। जब वह वहुत छोटी थी तब उसकी माँ मर गयी थी, इसलिए उसने केवल खाना वनाना भर सीखा है ....

दीपंकर माँ की इन वातों को अनसुनी कर देता।

माँ कहती — क्यों रे, विना पढ़ी-लिखी लड़की क्या तुझे पसंद नहीं है? ये लोग कुछ दे नहीं सकते। संतोष के पास रुपया-पैसा कुछ नहीं है। वह सिर्फ लाल धागा लड़की के हाथ में वाँधकर मुझे दान करेगा।

इस पर भी दीपंकर कुछ नहीं कहता।

थोड़ी देर वाद फिर पूछती — अव संतोष से क्या कहूँ, वता? वह तो वड़ा जोर दे रहा है। कह रहा है — क्षीरी की तरह वहू तुम्हें नहीं मिलेगी भाभी, वह अकेली तुम्हारे घर का सारा काम कर लेगी।

दीपंकर फिर भी चुपचाप खाता रहता। माँ फिर पूछती — तेरी क्या राय है दीपू? मैं संतोष को क्या जवाव दूँ?

दीपंकर वोला — मैं इसके वारे में क्या कहूँगा माँ? मैं तो यह सव सोचता ही नहीं ....

— नहीं सोचता तो अव सोच ले ....

दीपंकर वोला — अभी सोचने के लिए फुर्सत कहाँ है माँ, रॉविन्सन साहव नौकरी छोड़कर चला जायेगा, इसी से सव परेशान हैं।

—लेकिन संतोष को तो कोई जवाव देना ही होगा, वह तो किसी तरह नहीं छोड़ेगा। वह कहता है कि तुझसे अपनी लड़की की शादी जरूर करेगा। वेचारा वहुत गरीव भी तो है। लड़की भी उसकी वड़ी सुशील है। इन थोड़े से दिनों में ही वह मुझसे खूव हिल-मिल गयी है, ठीक विन्ती की तरह ...

कहकर माँ आँचल से आँखें पोंछने लगी।

इस पर उस दिन दीपंकर ने कहा था — तुम जो चाहो जवाव दे दो माँ, क्या मैंने कभी तुम्हारी किसी वात में आपत्ति की है?

रात के अँधेरे में विस्तर पर लेटे दीपंकर को वही सव वातें याद आने लगीं। शायद वाराणसी से लौटकर माँ फिर वही वात छेड़ेगी। खैर, संतोष चाचा जव हैं, तव माँ को वहाँ कोई परेशानी नहीं होगी। फिर पंडा भी जान-पहचान का है। गांगुली वावुओं का पुराना पंडा। दीपंकर की तरफ से उसे सहेज दिया गया है कि माँ वूढ़ी है, हाथ पकड़कर उसे सड़क पार कराई जाय। फिर वाराणसी की सँकरी गलियाँ। दीपंकर ने सुना है कि उन गलियों में वड़ी भीड़ रहती है। वड़े-वड़े साँड़ उन गलियों में खड़े रहते हैं।

दीपंकर ने घड़ी की तरफ देखा, रात के ग्यारह वज गये थे। काशी रसोईघर में खाना खाकर वाहर वरामदे में सो गया था। वेचारा!

दीपंकर ने वाहर जाकर देख लिया कि वाहर वाला दरवाजा वंद है कि नहीं।

अगर चोर घुस आवे तो वागी को दोष नहीं दिया जा सकता। वह तो छोटा बच्चा ही है। बालीगंज स्टेशन की तरफ से बहुत दूर से एक डन ट्रेन आने की आवाज सुनाई पड़ी। कौन ट्रैफिक है। कोयले के ओपन वैगन जा रहे हैं। डॉक में इनका अनलोडिंग होगा।

दीपंकर ने जेब से पता निकाला। लक्ष्मी दी के पिताजी का पता।

चिट्ठी लिखने का पैड उठाकर दीपंकर लिखने बैठा। कल सवेरे दफ्तर जाते समय वह चिट्ठी लेटर-बॉक्स में डाल देगा। एक हफ्ते में वह चिट्ठी भुवनेश्वर बाबू को मिल जायेगी।

दीपंकर लिखने लगा....

प्रिय महोदय,

आप मुझे नहीं पहचानेंगे। मैं ईश्वर गांगुली लेन में अघोर भट्टाचार्य के मकान में रहता था। आपकी पुत्री श्रीमती सती घोष से मेरा वहीं परिचय हुआ था। सतीश बाबू को मैं चाचाजी और उनकी पत्नी को चाचीजी कहता था। वे लोग मुझसे विशेष स्नेह रखते थे। आज एक विशेष कारण से बाध्य होकर मैं आपको यह पत्र लिख रहा हूँ। आपकी कन्या श्रीमती सती का जीवन अपनी ससुराल में अनेक कारणों से अत्यंत कष्टमय हो उठा है। उसकी सारी स्वतंत्रता पर अंकुश लगा है। वह आपको पत्र भी नहीं लिख सकती। सारी घटना से अवगत होने के बाद अन्य कोई उपाय न देखकर मैं आपको यह पत्र लिख रहा हूँ। आप अविलंब कलकत्ते चले आयेंगे तो सब कुछ जान जायेंगे। सती का विशेष शुभाकांक्षी होने के नाते मैंने आपको यह लिखना उचित समझा है। पत्र मिलने पर आप जैसा उचित समझें करेंगे।

भवदीय

दीपंकर सेन

दीपंकर ने बार-बार इस पत्र को पढ़ा। शायद पत्र मिलते ही भुवनेश्वर बाबू अपनी बेटी को टेलीग्राम करेंगे। अगर तुरन्त जहाज मिल जायेगा तो वे चले आयेंगे। कम से कम इस चिट्ठी से वे बहुत ज्यादा चिंतित होंगे। बहुत सारा काम उनको करना पड़ता है, इस चिट्ठी को पढ़कर उनकी परेशानी बढ़ जायेगी। फिर वे अचानक सती की ससुराल पहुँच जायेंगे। सती की सास चौंक जायेंगी। सनातन बाबू आश्चर्य में पड़ जायेंगे। सती भी कम आश्चर्यचकित न होगी! किसने उनको पत्र लिखा? किसने उनको खबर दी? भुवनेश्वर बाबू कहेंगे — कोई दीपंकर सेन है, मैं उसे पहचान नहीं पाया।

दीपंकर फिर पत्र को पढ़ने लगा। मानो पत्र उसे पसंद नहीं आया। बंगला में पत्र लिखने की उसे आदत भी नहीं थी। बंगला में चिट्ठी लिखने पर लगता है कि मतलब साफ नहीं हुआ। उसने फिर शुरू से पत्र को पढ़ा — कई बार पढ़ा। नहीं, ठीक नहीं लिखा गया। उसने पत्र को फाड़ डाला। कागज के टुकड़ों को उसने मसलकर [illegible]

से वाहर सड़क पर फेंक दिया। सड़क पर गिरकर कागज की गोली लुढ़कती हुई गैस वत्ती के नीचे नाली में जा गिरी।

सारे प्लैटफार्म पर अव भी तेज रोशनी थी। दूसरी मंजिल से प्लैटफार्म साफ दिखाई पड़ता है। आखिरी पैसेंजर ट्रेन डायमंड-हार्वर की तरफ चली गयी थी। कई आवारा कुत्ते लाइन के पास कुछ खा रहे थे और आपस में भूंक-भूंककर लड़ रहे थे। यात्रियों ने खाना खाकर जो पत्तल फेंके थे, अव उन्हीं पत्तलों को लेकर कुत्ते छीना-झपटी कर रहे थे।

वत्ती वुझाकर दीपंकर विस्तर पर लेट गया। माँ अव कितनी दूर पहुँची होगी? शायद माँ वर्दवान पार कर गयी हो, हो सकता है धनवाद भी पार कर गयी हो। शायद माँ ने डाभ का पानी नहीं पिया, संतरा भी नहीं खाया। शायद शाम होते ही माँ चादर ओढ़कर लेट गयी हो। आखिर माँ को उसने क्यों भेजा। अगर भेजा भी तो खुद क्यों नहीं साथ गया? रॉबिन्सन साहव के चले जाने के वाद दफ्तर का झमेला खत्म हो जाता और तव वह स्वयं माँ को ले जाता! माँ ने भी तो दीपंकर के साथ जाना चाहा था।

अव दूसरी तरह से पत्र लिखना होगा। सीधा साधारण पत्र। मन ही मन दीपंकर उस पत्र की रूपरेखा वनाने लगा।

प्रिय महोदय,

आप शीघ्र ही कलकत्ते आ जायँ तो अच्छा हो। आपकी पुत्री श्रीमती सती घोष के अनुरोध पर मैं आपको यह पत्र लिख रहा हूँ। आप मुझे पहचान नहीं पायेंगे। यहाँ आने पर आपको सारी वात मालूम होगी। इति ....

— दीपंकर सेन

वस, और कुछ लिखने की जरूरत नहीं है। इतना ही लिखना काफी है। इससे अधिक कुछ भी लिखने पर सारा मसला जटिल हो जायेगा।

अचानक कोई आवाज हुई तो दीपंकर चौंक पड़ा।

— दीपू, अरे दीपू!

विस्तर से उठते ही दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया।

— माँ, तुम? लौट कैसे आयी?

माँ वोली — नहीं वेटा, अव मुझे काशी और गया की जरूरत नहीं है, मैं चली आयी। तेरे लिए न जाने मेरा मन क्यों वेचैन होने लगा था।

— क्या कह रही हो माँ? मैंने तो इतना सारा इन्तजाम कर दिया था पर तुम आखिर लौट आयीं?

माँ वोली — मैं वर्दवान स्टेशन पर ही उतर गयी वेटा। मैंने संतोष से

कहा कि मुझे कलकत्ते वापस ले चलो संतोष, मैं बाबा विश्वनाथ को छोड़कर अब कहीं नहीं जाऊँगी। दीपू ही मेरा विश्वनाथ है। दीपू ही मेरा ठाकुर-देवता है....

कहकर माँ बिस्तर पर बैठ गयी।

दीपंकर बोला — लेकिन लौटने में तुम्हें बड़ी तकलीफ हुई होगी! ट्रेन में जगह मिल गयी थी न ?

— मिल तो गयी थी बेटा, अगर न मिलती तो भी मैं लौट आती। तुझे छोड़कर बाबा विश्वनाथ के पास जाकर भी मेरा मन न लगता। तुझे छोड़कर अब मैं कहीं नहीं जाऊँगी ....

कहकर माँ दीपू के सिर पर हाथ फेरने लगी। दीपंकर ने भी सोचा कि चलो अच्छा हुआ, माँ लौट आयी है। माँ को छोड़कर उसका भी मन घर में नहीं लग रहा था। माँ को छोड़कर वह भी दिनभर न जाने कैसा निस्संग हो गया था। माँ को स्टेशन में पहुँचा आने के बाद उसके भी मन में शांति नहीं थी। वह एक बार सती के मकान तक गया था और एक बार लक्ष्मी दी के घर। इतनी देर बाद वह मानो शांत हुआ।

दीपंकर ने पुकारा — माँ, ओ माँ ....

— माँ कहाँ है, मैं, मैं आयी हूँ ....

तब तक दिन की रोशनी ठीक से नहीं निकली थी। कमरे में अब भी अँधेरा था। दीपंकर ने धीरे-धीरे आँखें खोलीं।

— मैं आयी हूँ, मैं ....

दीपंकर अपने सामने सती को देखकर अवाक् हो गया।

वह झटपट बिस्तर छोड़कर उठ खड़ा हुआ। बोला — तुम ? कहाँ से आ रही हो ? इतने सबेरे ?

सती बोली — चली आयी।

फिर क्या इतनी देर तक दीपंकर सपना देख रहा था !

सती बोली — बुलाते ही तुम्हारे नौकर ने दरवाजा खोल दिया। शंभु से तुम्हारा पता लेकर मैं चली आयी।

— लेकिन तुम कैसे आयी ? तुम्हें आने कैसे दिया गया ?

सती ने सारे बदन में चादर अच्छी तरह लपेट रखी थी। सिर्फ घूंघट के बीच उसका गोरा चेहरा दिखाई पड़ रहा था।

वह बोली — दरबान सो गया था। मैं एक टैक्सी लेकर चली आयी। मौसीजी कहाँ हैं ?

दीपंकर बोला — माँ तो तीर्थ करने काशी गयी है। इस समय घर में नौकर के अलावा और कोई नहीं है।

— खैर, न रहे। मौसीजी कब तक लौट आयेंगी ?

—माँ तो कल ही बोलपुर को गयी हैं, लौटने में पाँच-सात दिन लग ही जायेंगे ।

सती कुर्सी पर बैठ गयी । बोली—तुम क्या एक-दो दिन मुझे अपने यहाँ रहने नहीं दोगे ? मैं एक-दो दिन यहाँ रहकर कोई-न-कोई इन्तजाम कर लूँगी ।

—लेकिन घर में कोई नहीं है ।

सती बोली—इससे क्या हुआ, मैं तुम्हारे लिए असुविधा का कारण नहीं बनूँगी । बाहर टैक्सी खड़ी है, तुम जाकर उसका किराया दे दो ।

बात करती हुई सती मानो थरथर काँप रही थी । दीपंकर समझ नहीं पाया कि वह क्या करे और क्या कहे । कुरते से मनीबैग लेकर वह धीरे-धीरे नीचे चला गया ।

● ● ●

बचपन में स्कूल की किताब में दीपंकर ने पढ़ा था कि मनुष्य का जीवन नदी के समान है । दोनों बगल दोनों किनारे बड़े ऊँचे हैं और उन्हीं के बीच नदी की गति बँधी है । उसे सिर्फ सामने की तरफ तीव्र वेग से दौड़ना पड़ता है । जरूरत पड़ने पर बाधा-विपत्ति पार कर उसे अपने गंतव्य पर पहुँचना होता है । जीवन भी न रात देखता है न दिन, अविराम बहता चला जाता है । कभी-कभी उस जीवन में बाढ़ आती है, उस बाढ़ से खेत-खलिहान बह जाते हैं, लेकिन फिर उसका प्रवाह मंद पड़ जाता है । फिर भी वह दूर समुद्र की तरफ बहता जाता है ।

बचपन में दीपंकर ने इस बात पर विश्वास किया था । ईश्वर गांगुली लेन से उसकी शुरुआत हुई थी । उसके बाद दिन-रात दुर्निवार गति से वह आगे ही बढ़ता गया । पहले कालीघाट, फिर भवानीपुर, टालीगंज, बालीगंज, फिर सारे कलकत्ते और सारी दुनिया में वह व्याप्त होता चला गया ।

लेकिन बड़े होने के बाद दीपंकर को लगा था कि वह नदी नहीं, आकाश है । मनुष्य का जीवन मानो आकाश है । जो आकाश खिड़की के घेरे में दिखाई पड़ता है, वह नहीं । जो आकाश दुनियावाले छोटे-से छेद में से देखते हैं, वह भी वह नहीं है । वह

वह आकाश है, जिसके क्षितिज की अंतिम सीमारेखा भी दीप्तिमान है, जहाँ दिन में सूरज निकलने पर प्रकाश फैलता है, अस्पष्टता दूर होती है और रात होने पर जिसके रहस्यमय इशारों से रोमांचित होना पड़ता है। मनुष्य के उस आकाश में सुख-दुःख और स्मृति-विस्मृति के अनगिनत ग्रह, तारे, नक्षत्र-नीहारिका और धूमकेतु कितने ही खेलते रहे हैं। शीत, शरद् और वर्षा की धूपछाँह में उस आकाश के कितने ही रूप दिखाई पड़ते हैं। कभी वहाँ दुःख के बादल घिर आते हैं तो कभी सुख की उज्ज्वल सूर्य-किरणें छिटकने लगती हैं। कभी वहाँ वर्षा का सघन रूप प्रकट होता है तो कभी ग्रीष्म की कराल कर्कशता कठोर हो उठती है। क्या वह आकाश किसी को भूल सकता है? क्या वह किसी को छोड़ सकता है? सबको लेकर ही तो इन्सान है! सबको लेकर ही तो दीपंकर है। दीपंकर के आकाश में भी इसी तरह कितनी ही वर्षाएँ और शरद् ऋतुएँ आयी हैं और गयी हैं और कितने धूमकेतुओं का उदय व अस्त हुआ है। क्या उनमें से किसी को भी वह भूल सका है? आज इतने दिन बाद उस आकाश की तरफ देखने से लगता है कि सभी तो वहाँ हैं। कोई भी तो नहीं खोया है! मनुष्य के जीवन से शायद कुछ भी नहीं खोता! नहीं तो इतनी बातें कैसे याद रह गयीं?

शायद उस दिन धूमकेतु की तरह ही सती उसके घर में आयी थी। कम से कम दीपंकर को तो ऐसा ही लगा था। नीचे जाकर टैक्सी का किराया चुकाने के बाद दीपंकर थोड़ी देर चुपचाप उस चबूतरे पर खड़ा रहा था। सती आयी थी! सती आयी थी! सती सचमुच आयी थी! अब दीपंकर क्या करे?

बर्मा से पहली बार सती जिस दिन ईश्वर गांगुली लेन के मकान में आयी थी, उस दिन के आने और आज के आने में कितना अन्तर था!

दीपंकर ने कहा — तुम इस तरह चली तो आयी लेकिन अब?

सती बोली — अब क्या?

दीपंकर बोला — वाह! अब क्या होगा, इसके बारे में नहीं सोचा? सनातन बाबू, तुम्हारी सास और तुम्हारी ससुराल की मान-मर्यादा के बारे में क्या कुछ भी नहीं सोचना पड़ेगा?

काशी भी न जाने कैसी तीक्ष्ण दृष्टि से सती की तरफ देखने लगा। [illegible] लिए सती एकदम नयी थी। उसने सती को पहले कभी भी नहीं देखा। दीपंकर [illegible] से कहने गया था कि झटपट चाय-नाश्ता बना दे।

तब तक ठीक से सबेरा नहीं हुआ था। दीपंकर का बिस्तर [illegible] था। मानो अब भी वह सती के सामने खड़े होने के लिए ठीक [illegible] अब भी उसका आकाश धुँधला था। मानो अब भी उस आकाश [illegible] घड़ी नहीं आयी थी। उसके पहले ही मानो घटा घिर आयी [illegible]

सती दीपकर के बिस्तर पर [illegible]

गयी।

सती बोली — मैं तुम्हारे विस्तर पर जरा सो लूँ, कितने दिन हो गये डर के मारे सो नहीं पायी।

— लेकिन उन लोगों को अगर खबर मिल जाय, अगर वे जान जायँ कि तुम यहाँ आयी हो, तो ?

इस बात का जवाब न देकर सती बोली — तुमने अपने नौकर से कुछ खाना बनाने के लिए कह दिया है न ? जानते हो कई दिनों से मैंने कुछ भी नहीं खाया ....

दीपंकर बोला — इस समय माँ होती तो बड़ा अच्छा रहता। खैर, मैं चाय नहीं पीता, नाश्ता बनाने के लिए कह दिया है ....

सती बोली — आज भात भी मैं जल्दी ही खाऊँगी — बहुत दिन बाद भरपेट भात खाऊँगी।

दीपंकर बोला — उसका इन्तजाम मैं कर रहा हूँ, तुम बल्कि माँ के विस्तर पर जाकर सो जाओ।

— क्यों, इस विस्तर पर सोने में क्या हर्ज है ?

दीपंकर बोला — तकिया-चादर सब गंदा है, मैं साफ चादर माँ के विस्तर पर बिछा देता हूँ, वहीं सोना तुम्हारे लिए ठीक रहेगा — आओ।

सती बोली — अब उठने की इच्छा नहीं हो रही है ....

कहकर सती ने चादर ओढ़कर आराम से आँखें बंद कर लीं।

फिर लेटे-लेटे आँखें बंद किये हुये ही वह बोली — बहुत दिन से मैं सोच रही थी कि तुम्हारे यहाँ चली आऊँगी, लेकिन किसी तरह मौका नहीं मिल रहा था। चारों तरफ बड़ा कड़ा पहरा था। आज दरवान जरा सो गया था और मैं मौका पाते ही चली आयी। हाजरा रोड के पास टैक्सी के लिए कुछ देर रुकना पड़ा था, नहीं मैं तो रात के साढ़े तीन बजे ही निकल पड़ी थी।

दीपंकर बोला — सनातन बाबू को पता नहीं चला ?

सती बोली — उस समय तो उसकी आधी रात थी, खर्राटा लेता हुआ वह आराम से सो रहा था।

— लेकिन सोकर उठने के बाद जब वे देखेंगे कि तुम बगल में नहीं हो, तब ?

सती बोली — तब वह फिर करवट बदल कर सो जायेगा ....

— अरे ? तुम्हारे लिए वे घबड़ायेंगे नहीं ? अपनी बीवी कहाँ चली गयी, वे क्या एक बार भी नहीं ढूँढ़ेंगे ?

सती हँसी। बोली — मैं क्या उसके कमरे में सोती थी कि उसे पता चलेगा ? फिर अगर वह मेरी इतनी ही फिकर करता तो परेशानी किस बात की थी ? अगर वह मुझे ढूँढ़ता तो फिर अफसोस किस बात का रहता ? फिर तो मैं समझती कि मेरे लिए भी सोचनेवाला कोई है।

— तुम क्या कह रही हो सती ? अपनी पत्नी कहाँ चली गयी, इसका वे पता

नहीं लगायेंगे ? क्या ऐसा भी कभी होता है ?

सती आँखें बंद किये ही बोली — हाँ, हाँ, होता है। तुमने कितने पति देखे हैं और कितनी पत्नियाँ देखी हैं ?

— लेकिन मैं तो विश्वास नहीं कर पा रहा हूँ। तुम बगैर कुछ कहे-सुने अचानक एकदम मेरे यहाँ चली आयी ! इस समय मेरी माँ भी घर में नहीं है, यह तो बड़ी मुश्किल हो गयी ....

सती बोली — मौसीजी तो दो-चार दिन में आ जायेंगी, उसके लिए इतनी जल्दी क्या पड़ी है ? मेरे खाने-पीने के लिए सोच रहे हो ? तुम जो खाओगे, मैं भी वही खा लूँगी ....

दीपंकर असली बात खुलकर कह न सका ! बोला — नहीं, वह बात मैं नहीं सोच रहा हूँ।

सती बोली — फिर खर्चे के लिए सोच रहे हो ? जो खर्चा होगा, मैं बाद में चुकता कर दूँगी।

दीपंकर नहीं हँसा। सती के मजाक पर हँसने लायक उसके मन की हालत नहीं।

सती फिर कहने लगी — सिर्फ एक साड़ी पहनकर चली आयी हूँ। एक-दो साड़ियाँ भी खरीदनी पड़ेंगी ! वह सब रुपया मैं पिताजी से लेकर तुम्हें चुका दूँगी।

काशी अपनी अकल से नाश्ता बनाकर ले आया। नाश्ते की खुशबू पाकर सती उठ बैठी। बोली — ये सभी मेरे लिए हैं न ?

दीपंकर बोला — हाँ, सभी तुम्हारे लिए है। अगर पेट न भरे तो और देने के लिए कह दूँगा।

सती बोली — हाँ, तुम्हारे सिर पर जब आ ही गयी हूँ, तब तुम्हें थोड़ा तो कष्ट भोगना ही पड़ेगा ...

दीपंकर बोला — क्या अब लौटकर नहीं जाया जा सकता ?

सती खाती हुई बोली — कहाँ ?

दीपंकर बोला — प्रियनाथ मल्लिक रोड, तुम्हारी ससुराल में।

सती बोली — जब एक बार वहाँ से चली ही आयी हूँ, तब लौटकर फिर वहाँ नहीं जाऊँगी।

— फिर कहाँ रहोगी ?

— क्यों, यहीं रहूँगी और कहाँ।

दीपंकर चौंक उठा। बोला — मेरे यहाँ ?

सती बोली — डरो मत, खर्चा जो लगेगा, मैं दूँगी ....

दीपंकर बोला — खर्चे की बात मत करो, लेकिन मेरे यहाँ तुम्हारा एक दिन भी रहना संभव नहीं है।

—क्यों ? जब मुझे कोई असुविधा नहीं है, तब तुम्हें किस बात की असुविधा है ?

दीपंकर बोला—मुझे असुविधा है।

—कैसी असुविधा ? तुम्हारे यहाँ तो कई कमरे हैं।

दीपंकर बोला—लेकिन रात में तुम कहाँ रहोगी ?

सती बोली—क्यों ? इसी कमरे में। अगर इस कमरे में मेरे रहने पर तुम्हें कोई असुविधा हो तो बगल के कमरे में मौसीजी का बिस्तर लगा है।

—फिर भी दिक्कत है।

—क्यों ? मौसीजी का बिस्तर तो खाली हो पड़ा है, उस पर सोने में क्या हर्ज है ?

दीपंकर बोला—हर्ज है। घर में अगर माँ होती तो मैं कुछ नहीं कहता, लेकिन जब तक माँ नहीं आ रही हैं, तब तक तुम मेरे साथ एक मकान में अकेली नहीं रह सकतीं। अगर तुम यहाँ रहोगी तो मैं रात को दूसरी जगह जाकर रहूँगा, नहीं तो ....

सती बोली—रात से ही तुम घबड़ाते हो न ?

दीपंकर बोला—घबड़ाऊँ या न घबड़ाऊँ, तुम इस मकान में रहोगी तो मैं नहीं रहूँगा। फिर तुम अचानक इस तरह चली क्यों आयी ? सभी सासें उसी तरह होती हैं, लेकिन सनातन बाबू ने तो कोई गलती नहीं की ? वे तो देवता के समान सज्जन हैं, उनसे भी तुम्हारी पटरी नहीं बैठ सकी ? फिर तुम इस दुनिया में किसके साथ निभाओगी ? अगर थोड़ा बरदाश्त न कर सकीं तो तुम औरत होकर पैदा ही क्यों हुई थीं ?

सती अचानक गंभीर हो गयी। उसने एक बार दीपंकर के चेहरे की तरफ देखा, फिर कहा—तुमने ठीक कहा है दीपू, औरत होकर पैदा होना ही मेरा अपराध है।

यह कहकर सती उठकर खड़ी हो गयी। बिस्तर की चादर दूर हटाकर वह बोली—मुझसे गलती हुई है। मैंने सोचा था कि कलकत्ते में कम से कम एक ऐसी जगह तो है, जहाँ मुझे आश्रय मिलेगा।

दीपंकर बोला—क्या हुआ ? उठी क्यों ?

सती बोली—कृपा करके सिर्फ एक टैक्सी बुला दो और अगर संभव हो तो मुझे कुछ रुपये दो। बाद में मैं सब चुकता कर दूँगी। आते समय मैं अपने साथ कुछ रुपये भी नहीं ला सकी।

—लेकिन तुम जाने कहाँ लगीं ?

सती ने बदन पर साड़ी ठीक कर ली और कहा—यह तो बड़ा मुश्किल है। तुम रहने भी नहीं दोगे और जाने पर कैफियत भी तलब करोगे ?

दीपंकर बोला—लेकिन मैंने तुमसे अभी चले जाने के लिए तो नहीं कहा,

सिर्फ यही कहा है कि रात में तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं है।

सती बोली — तुम अब भी बच्चे ही रह गये हो दीपू। इतनी उम्र हो गयी है, अब भी तुम इतना डरते हो? अब भी तुम इतने डरपोक हो? तुम मेरे साथ एक मकान में रात बिताओगे तो क्या तुम्हारा चरित्र भ्रष्ट हो जायेगा? क्या यही तुम्हारा पौरुष है? इतना ही कमजोर है तुम्हारा चरित्र? अपने पर जरा भी विश्वास नहीं है तुम्हें?

यह कहती हुई सती सचमुच दरवाजे की तरफ चल पड़ी। वह फिर बोली — मुझसे सचमुच गलती हो गयी है। मैंने सोचा था कि चाहे जहाँ जो कुछ हो जाय, कम से कम तुम्हारा दरवाजा मेरे लिए खुला है ....

दीपंकर बोला — सुनो सती, सुनो ....

सती तब तक सीढ़ी से नीचे उतरने लगी। बोली — आज ही कोई न कोई इन्तजाम करना होगा। जब तुमने भगा ही दिया है तब आज ही मुझे कोई और जगह तो तलाश करनी ही होगी।

दीपंकर सती के पीछे-पीछे सीढ़ी उतरता हुआ बोला — तुमने मुझे गलत समझ लिया है सती, मैंने तुमसे जाने के लिए नहीं कहा।

सती तब तक नीचे चली गयी थी। वह सीधे सदर दरवाजे की तरफ बढ़ी। उसके पीछे-पीछे जाकर दीपंकर बोला — लेकिन तुम जा कहाँ रही हो?

सती ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। सवेरा होने से पहले वह जिस तरह अपने मकान से चली आयी थी, उसी तरह यहाँ से जाने भी लगी। अब भी ठीक से सवेरा नहीं हुआ था। क्या सचमुच सती का दिमाग खराब हो गया है? क्या सच-मुच सती अकेली सड़क पर निकल जायेगी? सती आगे बढ़कर दरवाजे की सिटकिनी खोलने लगी तो दीपंकर ने उसका हाथ पकड़ लिया।

दीपंकर ने पूछा — कहाँ जाओगी तुम? कहाँ जाओगी?

सती ने पलटकर दीपंकर की तरफ देखा।

दीपंकर फिर बोला — क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है? जाना है तो बाद में जाना। क्या मैंने तुमसे अभी चले जाने के लिए कहा है? मैंने तुमसे रात में यहाँ रहने के लिए मना किया है तो क्या अभी जाना पड़ेगा?

सती बोली — तुम बचपना कर सकते हो, लेकिन मैं नहीं कर सकती। मुझे जाने दो ....

— लेकिन तुम जाओगी कहाँ?

सती बोली — कहीं भी जाऊँ, तुम इसे जानकर क्या करोगे?

दीपंकर बोला — पागलपन की भी एक हद होती है। आखिर कोई अंधेर करना चाहती हो क्या? इस शहर में तुम अकेली कहाँ जाओगी? किसके पास जाओगी? यहाँ तुम्हारा कौन है?

सती बोली — तुम मेरा हाथ छोड़ दो, मैं खुद टैक्सी बुला लूँगी।

दीपंकर ने अब थोड़ी कड़ाई की। उसने जरा जोर से सती का हाथ पकड़ा और कहा — मैं तुम्हें जाने नहीं दूंगा ....

सती दीपंकर की तरफ देखती चुप खड़ी रही।

दीपंकर बोला — चलो, ऊपर चलो, अभी रात होने में बहुत देर है। तब तक सोचने के लिए काफी समय मिलेगा। एक बार जब अपना घर छोड़कर चली ही आयी हो, तब दिमाग ठंढा कर के ही सब कुछ सोचना पड़ेगा। चलो, चलो, ऊपर चलो।

सती बोली — लेकिन मैं वहाँ वापस नहीं जाऊँगी।

— क्यों ? उन लोगों ने कौन ऐसी गलती की है ? इस दुनिया में रहना है तो यह सब थोड़ा बरदाश्त करना ही पड़ेगा।

सती बोली — वह तुम नहीं समझोगे।

दीपंकर बोला — फिर तुम यहीं रहो, मैं बल्कि सनातन बाबू को बुला लाता हूं। फिर तुम दोनों के आपस में बात कर लेने के बाद जो तय होगा, वही किया जायेगा।

सती बोली — आपस में बात करने का वक्त अब गुजर गया है।

दीपंकर बोला — पति-पत्नी में ऐसा गुस्सा होता ही है, कितना झगड़ा होता है, मनमुटाव होता है, उसके लिए क्या घर छोड़कर चले आना ठीक है ?

सती बोली — मैं तुमसे बहस करने नहीं आयी दीपू। मैं जब आयी हूं तब भला-बुरा सब सोचकर आयी हूं, इसलिए अब तुम मुझे समझाने मत लगो। अगर तुम मुझे यहाँ रहने नहीं देना चाहते तो मुझे जाने दो। जहाँ मन होगा, मैं वहीं चली जाऊँगी। इतने बड़े कलकत्ते शहर में एक प्राणी के लिए जगह की कमी नहीं होगी।

दीपंकर बोला — मैंने तुम्हें निकाल तो नहीं दिया। मैं तो कह रहा हूं कि ऊपर चलो —

सती बोली — पहले तुम वादा करो कि मुझे यहाँ रहने दोगे, जब तक मैं चाहूंगी, तब तक रहने दोगे ?

दीपंकर बोला — तुम रहो न, मुझे क्या आपत्ति है ? माँ यहाँ नहीं है, यही मैं तुमसे कह रहा था। माँ यहाँ होती तो तुम्हें यहाँ रहने देने में मैं क्यों आपत्ति करता ? तुम जितने दिन चाहो यहाँ रहो, खाओ-पियो, मैं क्यों मना करूँगा ? मुझे कौन-सी परेशानी है ?

फिर दीपंकर सती का हाथ पकड़कर खींचने लगा। बोला — चलो, ऊपर चलो —

सती ऊपर चली। दीपंकर बोला — अब भी तुम्हारा वही बचपनवाला मिज़ाज है, एकदम पहले की तरह ....

ऊपर आकर सती एक कुर्सी पर जा बैठी।

दीपंकर बोला — ज्यादा थकावट महसूस हो रही हो तो सो जाओ न, रात-भर तो सोयी न होगी। खाने के समय बुला लूँगा ....

सती फिर बिस्तर पर जाकर तकिये से टिककर बैठ गयी। सचमुच वह बड़ी थकी हुई लगी। उसने फिर आँखें बंद कर लीं।

आँखें बंद किये ही सती ने पूछा — आज तुम दफ्तर नहीं जाओगे?

दीपंकर बोला — वह तो जाना ही पड़ेगा।

सती ने फिर पूछा — मौसीजी कब आयेंगी?

दीपंकर बोला — माँ आज अभी काशी पहुँच गयी होंगी। वहाँ से अगर आज माँ चिट्ठी डालें तो कल मिल जायेगी। तीन-चार दिन में ही माँ आ सकती है। मुझे छोड़कर यही पहली बार वह बाहर गयी है, वहाँ एक दिन भी उनका मन नहीं लगेगा।

फिर थोड़ा मुस्कराकर दीपंकर बोला — जानती हो, तुम्हारे आने से पहले मैं माँ को ही सपने में देख रहा था। मानो बीच रास्ते से माँ लौट आयी है। इतने में नींद खुल गयी तो देखा कि तुम आयी हो ....

सती कुछ नहीं बोली।

दीपंकर बोला — माँ के कमरे में तुम्हारा बिस्तर लगा दूँ?

सती बोली — क्यों? मुझे यहाँ कोई असुविधा नहीं है।

दीपंकर बोला — नहीं, वहाँ एकांत में आराम से सोओ।

सती बोली — नहीं, मैं यहीं ठीक हूँ।

दीपंकर बोला — फिर तुम सोओ — मैं जाकर देखूँ, काशी क्या कर रहा है।

जाते-जाते भी दीपंकर पलटकर खड़ा हो गया! बोला — हाँ, एक बात पूछ लूँ, आज तुम क्या खाओगी? मछली या मांस या और कुछ? बताओ। माँ तो घर में है नहीं, इसलिए मुझे ही सब देखना पड़ेगा।

— जैसी तुम्हारी मर्जी। जो तुम खाओगे, वही मैं भी खा लूँगी।

कहकर सती करवट बदलकर लेट गयी। दीपंकर का गाव-तकिया खींचकर उसने उसी में सिर धँसा दिया।

काशी बड़ा होशियार है। उसने हिसाब से ज्यादा चावल लिया है। अब वह दाल चढ़ाने लगा। उससे कुछ भी नहीं कहना पड़ा। उसने समझ लिया है कि सती को इस घर में रहने का अधिकार है। वह दादाबाबू की कोई रिश्तेदार होगी। काशी तो नहीं जानता कि सती से दीपंकर का कोई मामूली रिश्ता नहीं है, बड़ा गहरा रिश्ता है — एकदम बचपन में ही जब सती पहली बार कलकत्ते आयी थी, तभी से, उसी पहले दिन से। कहना चाहिए कि सती जब कलकत्ते नहीं आयी थी, तभी से उसका रिश्ता दीपंकर से जुड़ गया था। दीपंकर के लिए सती उतनी ही अपनी है,

जितना अपना है किरण। दीपंकर ने किरण से जितना प्यार किया था, उतना ही सती से भी किया था। दीपंकर सती से प्यार करता था, फिर सती भी उसके लिए बहुत दूर थी। वह सती का सपना देखा करता था। आखिर वही सती एकदम पास आ गयी है। एकदम उसकी पहुँच के भीतर!

काशी बोला — मछली लानी पड़ेगी दादाबाबू ....

दीपंकर बोला — मछली तो लानी ही पड़ेगी, मांस तू बना पायेगा?

काशी बोला — मांस तो मैंने कभी नहीं बनाया ....

दीपंकर बोला — तब रहने दे। वह अमीर घर की हैं, तेरा पकाया मांस क्या खा सकेंगी? हाँ, मछली कौन-सी लायेगा?

— जो आप कहें!

दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या करे। वह बड़े असमंजस में पड़ गया। सती आयी भी तो इस तरह क्यों आयी? इस तरह धूमकेतु की तरह क्यों आयी? अब वह यहाँ कहाँ रहेगी और कहाँ सोयेगी? वह बगल के कमरे में रहेगी! लेकिन वह भी कैसे हो सकता है? उसके साथ एक मकान में रहने पर दीपंकर को किसी तरह नींद नहीं आयेगी। बगल के कमरे में सती के रहने पर क्या उसे नींद आ सकती है?

— क्या आज आप दफ्तर नहीं जायेंगे दादाबाबू?

— दफ्तर नहीं जाऊँगा! क्या कहता है काशी! सती आयी है तो क्या दफ्तर जाना बंद हो जायेगा?

क्या काशी ने दीपंकर की कमजोरी भाँप ली है? क्या उसे पता चल गया है? दीपंकर ने उसकी तरफ अच्छी तरह से देखा। वह मानो पूरे रसोईघर में फैलकर खाना बना रहा है। रसोईघर में दीपंकर कभी नहीं आता। खास कर संतोष चाचा और उसकी लड़की के आने के बाद तो वह कभी इस तरफ नहीं आया। सिल-बट्टे से काशी ने मसाला पीस लिया है और बालटी में पानी भर रखा है। अब वह झाड़ू से कमरे, बरामदे और आँगन साफ करने लगा। दीपंकर बाथरूम से झाड़ू लगाने की आवाज सुनता रहा। आज सवेरे ही बर्मा में भुवनेश्वर बाबू को एक खत भेजना होगा। वहाँ चिट्ठी पहुँचने में भी तीन-चार दिन लग जायेंगे। उसके बाद सब काम-काज सहेजकर उनके आने में और कुछ दिन लगेंगे। बर्मा पास तो नहीं है कि चिट्ठी मिलते ही कोई दौड़ा चला आयेगा। जहाज में ही चार-पाँच दिन लग जायेंगे। तब तक सती कहाँ रहेगी? अगर तब तक माँ न आ गयी तो क्या होगा? माँ अगर आज इसी वक्त आ जाती तो बड़ा अच्छा होता।

— काशी, ऊपर से मेरे कपड़े तो ला।

नहाने के बाद साफ कपड़े पहनकर अगर वह सब्जी लाने चला जाय तो कैसा हो। दीपंकर के लिए काशी चाहे जैसा खाना बनाये, कोई बात नहीं है। लेकिन सती कैसे ऐसा-वैसा खाना खा सकती है। वह बड़े अमीर बाप की बेटी है। ईश्वर गांगुली लेन

काशी ने रुपया दिखाया और कहा — ले लिया है।

— मछली ठीक से देखकर लेना, आलू और परवल भी लेना — पैसे के लिए मत सोचना, समझ गया न ? फिर लौटते समय दही और मिठाई ले लेना। मैं तेरे साथ चलता, लेकिन खाली मकान छोड़कर कैसे जाऊँ?

काशी चला गया। सदर दरवाजा बंद कर दीपंकर खिड़की से बाहर देखने लगा। माँ अब तक काशी पहुँच गयी होगी। इस समय काशी का क्लाइमेट अच्छा है। गांगुली बाबू के पुराने पंडे ने शायद माँ को धर्मशाला में ले जाकर टिकाया होगा। दीपंकर ने माँ को अलग से रुपया दे दिया है। माँ जो चीज चाहेगी खरीद सकेगी। अपनी पसंद की गृहस्थी की छोटी-मोटी चीजें। फिर माँ तो सीधे विश्वनाथ दर्शन करने जायेगी, क्योंकि विश्वनाथ नगरी में पहुँच कर पहले उनके दर्शन के लिए जाने का नियम है!

एक डाकिया चिट्ठियों का थैला लेकर सड़क से उधर चला गया। आज अगर माँ चिट्ठी डाले तो कल इसी समय चिट्ठी यहाँ पहुँच जायेगी। माँ के अलावा दीपंकर को कौन चिट्ठी लिखेगा! हाँ, किरण अगर कभी लिखता है तो अलग बात है! नहीं तो और कौन दीपंकर को खत भेजेगा? किसी से उसका पत्र-व्यवहार का सम्पर्क नहीं है। छोटे से वह बड़ा बना है, लायक बना है और नौकरी कर रहा है। नौकरी को ही उसने जीवन का सार बना लिया है। अखबार पढ़ने पर मालूम होता है कि संसार में कितने देश हैं और कितने लोग हैं। दीपंकर के समान लोग सारे संसार में फैले हुए हैं। पोलैंड, इंगलैंड, जर्मनी और बर्मा, सभी जगह दीपंकर जैसे लोग ही दफ्तर जाते हैं और अखबार पढ़ते हैं। उन जगहों में भी शायद सती जैसी लड़कियाँ सास का अत्याचार बरदाश्त न होने पर घर छोड़कर भागती हैं। उन जगहों में भी शायद लक्ष्मी दी जैसी स्त्रियाँ घर में जुए का अड्डा चलाकर गृहस्थी चलाती हैं। शायद वहाँ भी विन्ती दी की तरह लड़कियाँ निराशा से आत्महत्या करती हैं। उन स्थानों पर भी जरूर छिटे और फोंटा हैं। जवाहरलाल नेहरू की भाषा में जिनको इतिहास का डस्टबिन कहा गया है, वे सब शायद वहाँ भी हैं। वहाँ भी प्राणमथ बाबू, किरण, राय बहादुर नलिनी मजुमदार, निर्मल पालित और लक्ष्मण सरकार जैसे लोग हैं। वहाँ भी के० जी० दास बाबू, मिस माइकेल, रॉबिन्सन साहब और रामलिंगम बाबू हैं। शायद नाम अलग-अलग हैं, लेकिन इन्सान सब एक जैसे हैं। इन्सान एक ही है, सिर्फ बाहरी रूप-रंग, रंग-ढंग में अंतर है। उन स्थानों पर भी लोग युद्ध, देश, रुपया, पार्टी और नौकरी के पीछे परेशान हो रहे हैं। वहाँ भी शायद तैंतीस रुपये घूस देकर दीपंकर जैसे लोगों की नौकरी लगी है, और अब वे सेन साहब बन बैठे हैं। लेकिन कोई भी एक-दूसरे को नहीं जानता। फिर यही एक सूरज वहाँ भी सवेरे प्रकाश बिखेरता है और यही एक चाँद वहाँ भी रात होने पर आकाश में दिखाई पड़ता है!

अचानक दूसरी मंजिल में कोई आवाज हुई।

शायद सती अब सोकर उठी थी।

दीपंकर सीढ़ी से ऊपर गया। दूसरी मंजिल में। दरवाजा उसी तरह खुला हुआ था।

बिस्तर पर सती उसी तरह बेखबर सो रही थी। अब इधर करवट बदलकर सो रही थी। उसका चेहरा बड़ा ही शांत और निश्चित दिखाई पड़ा। दीपंकर को लगा कि वह दीपंकर के बिस्तर पर सो कर परम निर्भरता का उपभोग कर रही है। कम से कम उसका मुख देखकर तो ऐसा ही बोध होता था। उसके सिर के घुंघराले बालों का भारी जूड़ा तकिये पर अलसाया पड़ा था। मांग में सिंदूर की हलकी रेखा भी साफ दिखाई पड़ रही थी। दो भौंहों के बीच सिंदूर की बिंदी थी। ज्यामितिक रेखा-सी पतली नाक सांस छोड़ने के साथ जरा फूल रही थी। आंखों की पलकें बंद और दोनों पतले होंठ सटे हुए। दीपंकर एकटक देखने लगा। सती को इस तरह एकटक देखने का मौका उसे पहले कभी नहीं मिला था। सती इतनी सुन्दर है! वह देखने में इतनी खूबसूरत है! लेकिन उसने तो कुछ भी साज-सज्जा नहीं की। कल रात वह जिस हालत में थी, उसी हालत में चली आयी। दीपंकर उसे सिर से पांवों तक देखने लगा। उसने रंगीन साड़ी पहनी हुई थी। नींद की बेखबरी में आंचल बदन पर से सरक गया था। साड़ी का किनारा मोटा, चौड़ा और लाल रंग का था। टखने दिखाई पड़ रहे थे। पांव कितने खूबसूरत थे। तलवे की गोराई अधिक थी। उसने पांवों में महावर लगाया था, जिसका निशान अब भी बाकी था। पांवों के नाखून पतले और शंख जैसे सफेद थे। बदन के रंग से नाखूनों का रंग एकजान हो गया है। नींद की बेखबरी में सांस चलने के साथ-साथ छाती एक ताल में ऊपर-नीचे हो रही थी। आश्चर्य! ऐसी सुन्दर बहू पाकर भी सास सुखी न हो सकी! ऐसी पत्नी को भी सनातन बाबू घर में नहीं रख सके! ऐसी अच्छी लड़की के भाग्य में इतना कष्ट! दीपंकर सांस रोककर एकटक देखता रहा।

इस लड़की को किस बात की कमी थी। भुवनेश्वर बाबू के रुपये की थाह नहीं है। उनका सारा रुपया इसी लड़की को मिलेगा। उनके लड़का नहीं है, लक्ष्मी दी उनके जीवन से मिट गयी है। सनातन बाबू के पास भी बहुत रुपये हैं, बड़ी दौलत है। कलकत्ते में मकान, नौकर, नौकरानी, रसोइया, बगीचा, माली, दरवान, जमींदारी, किस चीज की कमी थी? अघोर नाना ने जिन्दगी भर की कोशिश से जितना इकट्ठा किया है, सती को उतना पैदा होते ही मिला है। इसके अलावा उसे कितना सुन्दर रूप मिला है। संगमरमरी रंग, सुगठित स्वास्थ्य, घुंघराले काले बाल, गुलाबी होंठ और बड़ी-बड़ी नशीली आंखें, सभी कुछ तो ईश्वर ने मानो दिल खोलकर सती को दिया था।

कहीं से एक मक्खी आकर सती के गाल पर बैठी।

खिड़की से सवेरे की धूप आने लगी थी। शायद इसीलिए वह मक्खी भी

कमरे में चली आयी और अब सती के गाल पर बैठी पंख हिला रही थी। नन्ही-सी टाँगों से पंख साफ कर रही थी।

कितने आराम से सती सो रही है और यह मक्खी उसे जगा देगी।

दीपंकर ने पंखा तेज कर दिया। सती के सिर के ऊपर पंखा सर-सर कर चलने लगा। सती के घुँघराले बाल धीरे-धीरे काँपने लगे। फिर भी वह मक्खी बैठी ही रही।

दीपंकर सती के पास गया। एकदम उसके चेहरे के पास। उसने सती के चेहरे के पास हाथ ले जाकर मक्खी को भगाने की कोशिश की। मक्खी उड़ी लेकिन फिर नाक पर बैठ गयी। फिर वह नाक पर से उड़ी तो माथे पर बैठ गयी।

भूरे रंग की छोटी-सी मक्खी।

दीपंकर ने झुककर मक्खी को भगाने की कोशिश की। लेकिन वह डरा कि सती कहीं जाग न जाय, कहीं उसके गाल पर हाथ न लग जाय! कहीं वह किसी तरह का शक न कर ले!

अब दीपंकर को एक उपाय सूझा। कमरा अँधेरा कर देने पर शायद मक्खी भाग जायेगी। दीपंकर ने धीरे से पूरब तरफ की दोनों खिड़कियाँ बंद कर दीं। कमरे में अँधेरा हो गया। दिन में ही रात जैसा अंधेरा हो गया! उस अँधेरे में खड़े होकर दीपंकर को लगा कि सती उसके बहुत निकट आ गयी है। बहुत पास आ गयी है। अभिन्न हो उठी है। अब मक्खी दिखाई न पड़ी। दीपंकर उसी अँधेरे में उसके चेहरे पर झुककर देखने लगा कि मक्खी कहाँ गयी है। वह अब भी सो रही थी उसके अंग-अंग में परिपूर्ण निर्भरता के लक्षण स्पष्ट थे। दीपंकर ने उसकी साँस चलने की हलकी अविराम आवाज सुनी। दीपंकर चोर के समान वहाँ खड़ा रहा और एकटक उसे देखने लगा, उसकी साँस चलने की आवाज को अपनी सभी इंद्रियों से अनुभव करने लगा।

साथ ही साथ दीपंकर की इतने दिनों की शिक्षा, दीक्षा, शिष्टता और सात्विकता मानो किसी बाढ़ में वह जाने को हुई! उसे लगा कि कुछ भी न पाने के क्षोभ से किसी आदिम मनुष्य की आत्मा हाहाकार कर उठी। लंबे अरसे की निराशा के बाद आज मानो उस मानवात्मा को आशा का निमंत्रण मिला है। प्रतीक्षा की क्लांति में उसने अनेक युग बिताये थे। पता नहीं कब अतृप्ति की बुभुक्षा लिये मनुष्य पैदा हुआ था। पता नहीं कब वन्य समाज के छोर पर एक मानव-शिशु का जन्म हुआ था और उसके जन्म की घड़ी में ही उस क्षुधा ने आशा और प्रकाश के लिए आकाश में हाथ फैला दिये थे। इतने दिन किसी ने उसकी वह आशा पूरी नहीं की और उसे परितृप्ति और परित्राण की भाषा नहीं सुनायी। आज मानो वही अमृत अप्रत्याशित रूप में उसके हाथ के पास आ गया है! इतने दिनों तक सिर्फ उसकी उम्र ही बढ़ती गयी है और वह घिसी-पिटी बातें रटकर अपनी व्यर्थता को बढ़ाता रहा है! इतने दिनों तक वह जीवन, धर्म, देश, प्रकृति आदि की दुहाई देकर अपनी विडंबना बढ़ाता गया है। फिर भी ....

अचानक सती हिली।

सती के हिलते ही दीपंकर दो कदम पीछे हट आया। आशंका और आतंक से उसका सारा शरीर थरथर काँप उठा।

सती ने धीरे-धीरे आँखें खोलीं। उसने अँगड़ाई लेकर न जाने क्या सोचने की कोशिश की। फिर दीपंकर को देखकर वह बोली — क्या हुआ? कौन है?

सहज होने की कोशिश करता हुआ दीपंकर बोला — कुछ नहीं है, तुम सोओ, मैं हूँ ....

सती बोली — रात कितनी हुई? तुम दफ्तर नहीं गये?

दीपंकर बोला — रात कहाँ, सवेरा है।

— फिर इतना अँधेरा क्यों है?

दीपंकर बोला — मक्खियाँ आ रही थीं, इसलिए मैंने खिड़कियाँ बंद कर दी हैं।

जरा रुककर सती बोली — वहाँ से तो कोई नहीं आया?

— कहाँ से?

— प्रियनाथ मल्लिक रोड से और कहाँ से!

दीपंकर समझ नहीं पाया, बोला — कौन आयेगा?

सती बोली — शंभु या और कोई?

— नहीं, कोई नहीं आया! क्या किसी के आने की बात थी?

सती बोली — नहीं, यों ही पूछ रही हूँ। खिड़की खोल दो, बड़ा अँधेरा लग रहा है। कुछ देख नहीं पा रही हूँ —

दीपंकर बोला — क्या जरूरत है खिड़की खोलने की, तुम सोओ न मैं आ रहा हूँ ....

सती ने अचानक पूछा — अँधेरे में तुम अकेले क्या कर रहे थे?

दीपंकर सोचने लगा। एकाएक कोई जवाब उसकी जबान पर नहीं आया। फिर भी वह बोला — मैं कुछ नहीं कर रहा था, बस ....

— फिर तुम इस तरह खड़े क्यों थे? मुझे लगा कि बहुत रात हो गयी है और कमरे में कोई घुस आया है। मैं बहुत डर गयी थी। खोल दो, खिड़कियाँ खोल दो। तुम्हें देख नहीं पा रही हूँ ....

कहती हुई सती उठ बैठी। बोली — पता नहीं, उस मकान में अब क्या हो रहा हो ....

दीपंकर खिड़कियाँ खोलने के लिए आगे बढ़ा। सती फिर बोली — अगर सच-मुच कोई मुझे ढूँढने चला आये तो क्या होगा? तुम क्या कहोगे?

दीपंकर ने कोई जवाब नहीं दिया।

सती बोली — कह देना कि यहाँ कोई नहीं

दीपंकर बोला — यह मैं नहीं कह सकूँगा। इससे बेहतर होगा कि चलो, मैं तुम्हें सनातन बाबू के पास ले चलता हूँ और सब झगड़ा निपटा देता हूँ। अगर इस पर भी तुम राजी नहीं होती तो मैं सनातन बाबू को यहीं बुला लाता हूँ।

सती बोली — अगर तुम्हें वहीं भेजना होता तो मैं यहाँ क्यों चली आती? मैं खुद क्यों तुम्हारे पास इस तरह चली आती?

दीपंकर ने दोनों खिड़कियाँ खोल दीं। पूरब से सवेरे की धूप कमरे में आ गयी। दीपंकर एक कुर्सी पर बैठ गया। बोला — फिर क्या करोगी?

अचानक नीचे कुंडी खटखटाने की आवाज हुई। शायद काशी आया था।

जल्दी-जल्दी नीचे जाकर दीपंकर ने दरवाजा खोल दिया। माँ के चले जाने के बाद यह एक मुसीबत हो गयी थी। बाहरवाला दरवाजा जाकर खोलो और बंद करो — यह भी अच्छा काम है! जब अपना कुछ नहीं था, तब दीपंकर के पास कोई काम भी नहीं था। उसने किराये का मकान लिया है, बरतन-भाड़ा हुआ है, आलमारी आयी है, ट्रंक आये हैं। कपड़े-लत्ते बढ़ गये हैं। घर-गृहस्थी के लिए जो भी सामान जरूरी हैं सब आ गये हैं। इस तरह दिनों दिन धीरे-धीरे गृहस्थी का जंजाल बढ़ता गया है। कलकत्ता शहर के चार भले लोगों की तरह अब दीपंकर के पास भी धन-दौलत और आराम के सब साधन हैं। इसके साथ ही परेशानी भी बढ़ी है। अकेला दीपंकर क्या-क्या देखे! आश्चर्य है! जो लोग और धनी हैं, और भी समृद्धिशाली हैं और जिनके पास काफी धन-दौलत है, वे किस तरह जीते होंगे और कैसे उनको शांति मिलती होगी?

दीपंकर ने सब्जीवाला झोला देखा। काशी देख-सुनकर बहुत कुछ लाया था। आलू, बैंगन, मछली और पता नहीं क्या-क्या ....

दीपंकर बोला — आज अच्छी तरह खाना बनाना, समझ गया? नमक, तेल, मसाला ठीक से छोड़ना, नहीं तो वह नहीं खा सकेगी। वह बड़े अमीर घर की है!

फिर जरा रुककर वह बोला — मैं एक जगह जा रहा हूँ काशी ....

काशी बोला — आज आप दफ्तर नहीं जायेंगे?

दीपंकर बोला — दफ्तर क्यों नहीं जाऊँगा? मैं अभी लौट आऊँगा, फिर खाना खाकर जाऊँगा।

सड़क पर निकलकर दीपंकर थोड़ी देर चुपचाप खड़ा रहा। इतने ही सवेरे कुछ लोग दफ्तर जाने के लिए निकल पड़े थे। सड़क पर धीरे-धीरे भीड़ बढ़ रही थी। लेकिन दीपंकर कहाँ जायेगा? किसके पास जायेगा? सनातन बाबू के पास? सनातन बाबू से जाकर वह क्या कहेगा?

दीपंकर अपने घर में सती को बिस्तर पर बिठाकर चला आया था। नींद की खुमारी में सती उस समय बड़ी अच्छी लग रही थी। दीपंकर मन ही मन शरमा गया। उस तरह छिपकर देखना उचित नहीं हुआ। सती को उस तरह छिपकर

देखना पाप था।

पहले सनातन बाबू के पास जाना ही ठीक होगा। वे सज्जन बड़े सीधे हैं। किसी की किसी बात में वे नहीं पड़ते। वे हर समय किताबों में और चिंतन की दुनिया में खोये रहते हैं। बाहरी दुनिया से उनका कोई सरोकार नहीं है।

उसी सवेरे दीपंकर को सारे कलेकत्ते के लोग बड़े दिग्भ्रमित-से लगे। इतने सवेरे वह कभी सड़क पर नहीं निकलता। कम से कम इतने सवेरे उसे कभी इधर आना नहीं पड़ा। उसका जीवन-संघर्ष और भी एक-दो घंटे बाद शुरू होता है। फिर भी घर से निकलकर उसने जितने लोग देखे सब विभ्रांत-से लगे! क्या सभी लोग उसके समान अस्थिर-चित्त घबड़ाये हुए से घूम रहे हैं? क्या सभी के घर में माँ नहीं है! आज अगर माँ होती तो वह इतना परेशान न होता। पता नहीं क्यों उसने इसी समय माँ को काशी भेज दिया!

प्रियनाथ मल्लिक रोड जहाँ शुरू होता है, वहीं एक मंदिर है। पता नहीं वह किस देवी या देवता का मन्दिर है। वहाँ बड़ी धूम-से पूजा हो रही थी। होगी किसी देवी या देवता की पूजा! दीपंकर बहुत दिन से इस मंदिर को देख रहा है। इस समय वहाँ शंख बज रहा है, घंटा बज रहा है। उसने पहले कभी उस मंदिर की तरफ विशेष ध्यान नहीं दिया था। सिर्फ बचपन में ही वह प्रतिदिन कालीजी के मंदिर में जाकर फूल चढ़ाता था और सिर नवाता था। उसके बाद कितने दिन और कितने साल बीत गये — कालीघाट के मंदिर में जाने का मौका ही नहीं मिला। उसने किसी देवी-देवता के आगे सिर भी नहीं नवाया। आखिर किसके लिए वह यह सब करता?

मंदिर के सामने खड़े होकर दीपंकर ने देखा!

भीतर अँधेरा है। दीपंकर जेब से एक पैसा निकालने लगा! देवता के लिए चढ़ावा।

— बाबू, एक पैसा!

दीपंकर ने बगल में देखा। भिखारी की छोटी-सी लड़की। दाहिना हाथ नहीं है। चेहरे पर चेचक के दाग हैं। बायें हाथ में डब्बा लिये वह भीख माँग रही है।

— हट! पैसा नहीं है। भाग यहाँ से — दीपंकर की फटकार सुनकर भी वह हटना नहीं चाहती।

दीपंकर ने फिर डाँटा — भाग यहाँ से, हट ....

भिखारी लड़की निराश होकर चुप रही। शायद वह सचमुच निराश हो गयी थी।

दीपंकर ने मंदिर के भीतर निगाह डाली। जेब से पैसा निकालना चाहकर भी उसे संकोच होने लगा। फिर भी पैसा मंदिर के भीतर फेंका बचपन में वह इसी तरह मंदिर में पैसा फेंकता था। आदत के मुताबिक उसने दोनों हाथ जोड़े। ठन-ठन झाँझ और घंटे बज रहे हैं। देवी या देवता के सामने खड़े होकर प्रार्थना करनी पड़ती है।

कुछ माँगना पड़ता है। लेकिन वह क्या माँगे ? यों तो माँगने के लिए संसार में बहुत कुछ है। लेकिन वह उसमें से क्या माँगे ? किसका मंगल चाहे ? माँ का ? माँ भी तो शायद अब तक विश्वनाथ के मंदिर में खड़ी होकर दीपंकर की मंगल-कामना कर रही होगी। माँ भी शायद इसी तरह देवता के स्थान पर एक पैसा दक्षिणा देकर बेटे की भावी सुख-शांति के लिए देवता से गारंटी माँग रही होगी। आश्चर्य है ! इस तरह कितने लोग कितने पैसे प्रति दिन; प्रति क्षण देवी-देवता को चढ़ा रहे हैं ! लेकिन देवी-देवता क्या कर रहे हैं ?

मंदिर में दीया टिमटिमा रहा था। सिर के ऊपर बिजली का बल्ब लटक रहा था। पुरोहित दाहिने हाथ में पंचप्रदीप उठाये बायें हाथ से घंटी हिला रहा था। घंटी की आवाज से सड़क पर बहुत-से लोग इकट्ठा हो गये। धूप और अगरबत्ती की सुगंध आ रही है।

अब किसकी मंगल-कामना करे, दीपंकर ? माँ के लिए वह ठाकुर जी से प्रार्थना कर चुका। अब क्या वह सती के लिए प्रार्थना करे ?

अचानक दीपंकर को लगा कि वह दिन पर दिन अविश्वासी होता जा रहा है। बचपन का वह विश्वास अब धीरे-धीरे खोता जा रहा है। मानो अब उसमें ठाकुर देवताओं के प्रति वैसी भक्ति नहीं है। मानो अब ठाकुर-देवताओं को प्रणाम करते समय उसका सिर पहले की तरह भक्ति से झुक नहीं जाता। आखिर ऐसा क्यों हुआ ? क्या यह अधःपतन का लक्षण है ? ठाकुर देवता तो उसी तरह हैं। पत्थर की वही अपलक आँखें और वही स्तब्ध दृष्टि। फिर क्या दीपंकर नास्तिक होने लगा है ! लेकिन वह क्यों नास्तिक होने लगा ? आजकल वह किस देवता की पूजा कर रहा है ? कौन उसका मंगल करेगा ? अपने मंगल के लिए अब वह किसके मंदिर में जाकर खड़ा होगा ?

इतने में एक आदमी चिल्लाया — मारो साले को। साला गाडी चला रहा है तो क्या एकदम नवाब बन गया है ?

एक-दो पुलिस वाले भी आये। वे भीड़ में घुसकर आगे बढ़े।

दीपंकर अब भी कुछ नही देख पा रहा था। हाजरा रोड के मोड पर सवेरे भी भीड करने के लिए लोगों की कमी नही रहती।

बगल के एक आदमी ने कहा — अरे अंधा है क्या ? देख नही पाता ?

दूसरे ने कहा — ये सब तो गाडी से दबने के लिए ही पैदा हुए हैं सा'ब, मर गयी हैं, अच्छा हुआ।

दोनों सिपाही भीड़ में घुसे तो लोग इधर-उधर होने लगे। भीड़ कुछ कम हुई। तभी दीपंकर ने देखा कि गाड़ी के दोनों पहियों के बीच एक छोटी-सी लड़की पड़ी थी। उसके एक हाथ में अभी तक वही खाली डब्बा था। उसके होंठों के बीच से खून की धार डामरवाली सडक पर बह रही थी।

— अगर गाडी नही चलाना जानता, तो उसकी गाड़ी का लाइसेन्स क्यों नही छीन लिया जाता ?

दूसरे ने कहा — ऐसे आदमी को जेल में भरकर फांसी पर लटकाना चाहिए ....

दीपकर एकटक उस खाली डब्बे को तरफ देखता रहा। इसी लड़की ने उससे *एक पैसा मांगा था। इसी को उसने डाँट-फटकार कर भगा दिया था। उसका हाथ* मानो अब भी दीपंकर की तरफ फैला हुआ था। मानो अब भी खाली डब्बा आगे बढ़ाकर यह धीरे से कह रही थी — बाबू, एक पैसा !

आश्चर्य है ! दीपकर की पीठ पर मानो किसी ने चाबुक से मारा। दीपंकर ने ही मानो उस लड़की का खून किया था। एक पैसा दे देने पर कौन ऐसी हानि होती। ठाकुरजी को न चढ़ाकर वही पैसा उस लडकी को दिया जा सकता था ! ठाकुरजी को पैसा चढ़ाकर उसे क्या मिला ? किसका मगल हुआ ? कौन स्वर्ग में पहुँच गया ? दीपंकर का सारा शरीर थरथर काँपने लगा। बगल में ही शायद उस लडकी की माँ चीख उठी — क्या सर्वनाश हो गया रे, तू कहाँ चली गयी मेरी बिटिया ....

हाजरा रोड का वायुमंडल उस रुलाई से भारी हो गया। उस रुलाई से लोगो की उत्तेजना बढती गयी। वह लड़की उसी तरह पड़ी थी। जिसकी गाडी थी, वह अब भी गाड़ी में बैठा था। सबने उसको घेर लिया। पीछे का सब कुछ साफ दिखाई नहीं पड़ता। गाड़ी के ड्राइवर को भी सबने पकड़ लिया था। सब लोग उन्ही को लेकर व्यस्त हो गये। लेकिन उस लड़की के बारे में कोई नही सोच रहा था। दीपंकर सोचने लगा कि अगर इसी क्षण वह लड़की जिन्दा हो जाये और उससे पैसा माँगे तो जेब में जो कुछ है वह सब उसे दे दे। मानो वह लड़की दीपकर की परीक्षा लेने आयी थी। मानो अपना जीवन देकर वह दीपकर को शिक्षा दे गयी। क्या हुआ ठाकुर

को पैसा देकर ? सचमुच क्या लाभ हुआ ?

दीपंकर के दिमाग में चिंता के कई तार आपस में उलझ गये । क्यों उसने ऐसा किया ? उसे लगा कि उस लड़की की आत्मा उसकी तरफ देखती खिलखिलाकर हँस रही है और कह रही है — वड़ा अच्छा हुआ । कैसा मजा आया । वड़ा अच्छा हुआ कैसा मजा आया । लेकिन दीपंकर यहाँ किसलिए आया था ? कौन-सा काम पड़ गया था ? क्या वह सनातन वावू से मिलने आया था ? अगर वह सनातन वावू से मिलने आया था तो उनके पास न जाकर इस मन्दिर के सामने खड़े होकर क्यों भक्ति का ढोंग रचने लगा था ? क्यों वह धरती की इस वेटी की उपेक्षा कर पत्थर की वनी मूर्ति के पीछे पागल होने लगा था ? उसे लगा कि इतनी वड़ी गलती उसने कभी नहीं की थी । उसे लगा कि उसका पाखंड सहसा सवके सामने खुल गया था । मानो उसके पाखंड का भण्डाफोड़ करने के लिए ही वह लड़की भिखारिन वनकर उससे भीख माँगने आयी थी । मानो देवता ने ही अपना परिचयपत्र देकर अपने दूत को उसके पास भेजा था ! अरे, वह तो ईश्वर को नहीं मानता । वह तो ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास भी नहीं करता । वह जो वचपन से देवी-देवताओं को फूल चढ़ाता रहा, वह सिर्फ आदत पड़ जाने के कारण ही ! उसे लगा कि इतने दिनों तक वह जिस ईश्वर को फूल चढ़ाता रहा , वही ईश्वर मानो डामरवाली सड़क पर मरा पड़ा था । ईश्वर के ही होठों के वीच से खून भलभला रहा था । फटा कुरता पहने ईश्वर ही मानो जमीन पर लोट रहा था । अमरीका में वनी इस मोटरकार ने उसी ईश्वर को कुचलकर मार डाला था ।

दीपंकर आगे वढ़ा । लड़की की माँ अव भी सड़क पर वैठी छाती पीटकर रो रही थी । दीपंकर ने जेव से कुल रुपये निकाले । जेव में दस-वारह रुपये पड़े थे । पाँच रुपये के दो नोट और दो रुपये की रेजगारियाँ सव उसने उस भिखारिन माँ के हाथ पर रख दिया ।

कहा — यह लो माँ ....

रोना वंदकर उस लड़की की माँ ने दीपंकर की तरफ देखा । रोने में एक क्षण का विराम पड़ा । पहले तो वह विश्वास ही न कर सकी । उसने एक वार उन रुपयों की तरफ देखा । जिसकी लड़की मरी हो उसे क्या रुपया देकर खुश किया जा सकता था ? क्या रुपये से वेटी की कमी पूरी हो जायेगी ?

दीपंकर वोला — जो होना था हुआ, तुम गरीव हो इस लिए ये रुपये रख लो । मैं दे रहा हूँ....

आश्चर्य है ! लड़की की माँ ने रुपये रख लिये । उसके वाद दीपंकर उस भीड़ में से भागने लगा । उसकी आँखों के सामने अघोर नाना का चेहरा झलका । दोनों हाथों से अपना चेहरा ढँककर दीपंकर भीड़ में से वाहर आने लगा ।

सहसा उसे सुनाई पड़ा — देवता, आप ?

सड़क पर विना मतलव घूमनेवाले कुछ लड़के । अव तक ये ही ज्यादा विगड़

रहे थे। इतनी देर बाद उन सबने पहचाना। जाते-जाते भी दीपंकर ने पीछे मुड़कर देखा। उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। फोंटा! अरे, कार का मालिक फोंटा था! आश्चर्य है! वह एकदम पहचाना नहीं जाता। थोड़े ही दिनों में वह कैसा मोटा हो गया था। कार से बाहर निकलकर वह सबको शांत करने की कोशिश कर रहा था।

फोंटा बोला — भाइयो मैं भी तुम लोगों की तरह सड़क का आदमी हूँ। गाड़ी खरीद लेने पर मैं कोई बड़ा आदमी नहीं बन गया। मैं विलायती कपड़ा नहीं पहनता; यह देखो, मैं खद्दर पहनता हूँ — माँ का दिया हुआ मोटा कपड़ा ....

यह कहकर फोंटा ने खद्दर की चादर दिखायी!

दीपंकर भी देखकर वह भी स्तंभित हो गया। फोंटा की शक्ल मानो रातों रात बदल गयी थी। चुन्नटदार धोती, चमचमाता सफेद कुरता — लेकिन सब खद्दर के ही। उसके बदन पर साफ सफेद चादर भी थी। सिर के बड़े-बड़े बाल हवा में उड़ रहे थे।

फोंटा कहने लगा — क्या तुमलोग समझते हो कि मुझे तकलीफ नहीं हुई? किसी मानव-संतान को गाड़ी से दबाने पर किसे कष्ट नहीं होता? ऐसा कौन नीच मनुष्य है? इसके अलावा मैं तो कांग्रेस का आदमी हूँ। भाइयो, मैं यहाँ की कांग्रेस का वाइस-प्रेसीडेंट हूँ ....

— देवता आप?

शायद इतनी देर बाद पुराने चेलों में से किसी ने फोंटा को पहचान लिया। कहा — अरे, ये तो हमारे देवता हैं!

— देवता कौन?

— देवता को नहीं जानते? फटिक बाबू! फटिक बाबू को आप नही जानते?

फोंटा बोला — छोड़ो भाई, वह सब बताने की जरूरत नही है। भाइयो, मैं तो देश-माता की मामूली संतान और कांग्रेस का सेवक हूँ

लोग फिर भी बिगड़े लेकिन अब उनका बिगड़ना दूसरी तरह का है। इतनी देर तक लोग एक कांग्रेसी कार्यकर्ता को अकारण परेशान कर रहे थे!

एक ने कहा — अरे जनाब ये सब छोटे लोग क्या सडक पर चलने का ढंग जानते हैं? आप जाइए सर, आप से कोई कुछ नही कहेगा।

फोंटा बोला — नही भाई, कानून मानने के लिए मैं बाध्य हूँ। फाइन देना पड़े तो मैं फाइन दूँगा। किसी की भी जिंदगी से खिलवाड नही किया जा सकता, चाहे वह गरीब हो या अमीर। मेरे लिए सभी प्राणो का मूल्य समान है।

फोंटा की बात सुनकर दीपकर और भी आश्चर्य में पड़ गया।

अब उस लडकी को उठाकर कार में रखा गया। लड़की की माँ [illegible]

बैठ गयी। दोनों पुलिसवाले पायदान पर खडे हो गये।

फोटा बोला — भाइयो, पुलिस की हवालात में बंद होने से [illegible]

को पैसा देकर ? सचमुच क्या लाभ हुआ ?

दीपंकर के दिमाग में चिंता के कई तार आपस में उलझ गये । क्यों उसने ऐसा किया ? उसे लगा कि उस लड़की की आत्मा उसकी तरफ देखती खिलखिलाकर हँस रही है और कह रही है — बड़ा अच्छा हुआ । कैसा मजा आया । बड़ा अच्छा हुआ कैसा मजा आया । लेकिन दीपंकर यहाँ किसलिए आया था ? कौन-सा काम पड़ गया था ? क्या वह सनातन बाबू से मिलने आया था ? अगर वह सनातन बाबू से मिलने आया था तो उनके पास न जाकर इस मन्दिर के सामने खड़े होकर क्यों भक्ति का ढोंग रचने लगा था ? क्यों वह धरती की इस बेटी की उपेक्षा कर पत्थर की बनी मूर्ति के पीछे पागल होने लगा था ? उसे लगा कि इतनी बड़ी गलती उसने कभी नहीं की थी । उसे लगा कि उसका पाखंड सहसा सबके सामने खुल गया था । मानो उसके पाखंड का भण्डाफोड़ करने के लिए ही वह लड़की भिखारिन बनकर उससे भीख माँगने आयी थी । मानो देवता ने ही अपना परिचयपत्र देकर अपने दूत को उसके पास भेजा था ! अरे, वह तो ईश्वर को नहीं मानता । वह तो ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास भी नहीं करता । वह जो बचपन से देवी-देवताओं को फूल चढ़ाता रहा, वह सिर्फ आदत पड़ जाने के कारण ही ! उसे लगा कि इतने दिनों तक वह जिस ईश्वर को फूल चढ़ाता रहा , वही ईश्वर मानो डामरवाली सड़क पर मरा पड़ा था । ईश्वर के ही होठों के बीच से खून भलभला रहा था । फटा कुरता पहने ईश्वर ही मानो जमीन पर लोट रहा था । अमरीका में बनी इस मोटरकार ने उसी ईश्वर को कुचलकर मार डाला था ।

दीपंकर आगे बढ़ा । लड़की की माँ अब भी सड़क पर बैठी छाती पीटकर रो रही थी । दीपंकर ने जेब से कुल रुपये निकाले । जेब में दस-बारह रुपये पड़े थे । पाँच रुपये के दो नोट और दो रुपये की रेजगारियाँ सब उसने उस भिखारिन माँ के हाथ पर रख दिया ।

कहा — यह लो माँ ....

रोना बंदकर उस लड़की की माँ ने दीपंकर की तरफ देखा । रोने में एक क्षण का विराम पड़ा । पहले तो वह विश्वास ही न कर सकी । उसने एक बार उन रुपयों की तरफ देखा । जिसकी लड़की मरी हो उसे क्या रुपया देकर खुश किया जा सकता था ? क्या रुपये से बेटी की कमी पूरी हो जायेगी ?

दीपंकर बोला — जो होना था हुआ, तुम गरीब हो इस लिए ये रुपये रख लो । मैं दे रहा हूँ....

आश्चर्य है ! लड़की की माँ ने रुपये रख लिये । उसके बाद दीपंकर उस भीड़ में से भागने लगा । उसकी आँखों के सामने अघोर नाना का चेहरा झलका । दोनों हाथों से अपना चेहरा ढँककर दीपंकर भीड़ में से बाहर आने लगा ।

सहसा उसे सुनाई पड़ा — देवता, आप ?

सड़क पर बिना मतलब घूमनेवाले कुछ लड़के । अब तक ये ही ज्यादा बिगड़

रहे थे। इतनी देर बाद उन सबने पहचाना। जाते-जाते भी दीपंकर ने पीछे मुड़कर देखा। उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। फोंटा! अरे, कार का मालिक फोंटा था! आश्चर्य है! वह एकदम पहचाना नहीं जाता। थोड़े ही दिनों में वह कैसा मोटा हो गया था। कार से बाहर निकलकर वह सबको शांत करने की कोशिश कर रहा था।

फोंटा बोला — भाइयो मैं भी तुम लोगों की तरह सड़क का आदमी हूँ। गाड़ी खरीद लेने पर मैं कोई बड़ा आदमी नहीं बन गया। मैं विलायती कपड़ा नहीं पहनता; यह देखो, मैं खद्दर पहनता हूँ — माँ का दिया हुआ मोटा कपड़ा ...

यह कहकर फोंटा ने खद्दर की चादर दिखायी!

दीपंकर भी देखकर वह भी स्तंभित हो गया। फोंटा की शक्ल मानो रातों रात बदल गयी थी। चुन्नटदार धोती, चमचमाता सफेद कुरता — लेकिन सब खद्दर के ही। उसके बदन पर साफ सफेद चादर भी थी। सिर के बड़े-बड़े बाल हवा में उड़ रहे थे।

फोंटा कहने लगा — क्या तुमलोग समझते हो कि मुझे तकलीफ नहीं हुई? किसी मानव-संतान को गाड़ी से दबाने पर किसे कष्ट नहीं होता? ऐसा कौन नीच मनुष्य है? इसके अलावा मैं तो कांग्रेस का आदमी हूँ। भाइयो, मैं यहाँ की कांग्रेस का वाइस-प्रेसीडेंट हूँ ....

— देवता आप?

शायद इतनी देर बाद पुराने चेलों में से किसी ने फोंटा को पहचान लिया। कहा — अरे, ये तो हमारे देवता हैं!

— देवता कौन?

— देवता को नहीं जानते? फटिक बाबू! फटिक बाबू को आप नहीं जानते?

फोंटा बोला — छोड़ो भाई, वह सब बताने की जरूरत नहीं है। भाइयो, मैं तो देश-माता की मामूली संतान और कांग्रेस का सेवक हूँ ...

लोग फिर भी बिगड़े लेकिन अब उनका बिगड़ना दूसरी तरह का है। इतनी देर तक लोग एक कांग्रेसी कार्यकर्ता को अकारण परेशान कर रहे थे।

एक ने कहा — अरे जनाब ये सब छोटे लोग क्या सड़क पर चलने का ढंग जानते हैं? आप जाइए घर, आप से कोई कुछ नहीं कहेगा।

फोंटा बोला — नहीं भाई, कानून मानने के लिए मैं बाध्य हूँ। फाइन देना पड़े तो मैं फाइन दूँगा। किसी की भी जिंदगी से खिलवाड़ नहीं किया जा सकता, चाहे वह गरीब हो या अमीर। मेरे लिए सभी प्राणों का मूल्य समान है।

फोंटा की बात सुनकर दीपंकर और भी आश्चर्य में पड़ गया।

अब उस लड़की को उठाकर कार में रखा गया। लड़की की [illegible]
बैठ गयीं। दोनों पुलिसवाले पायदान पर खड़े हो गये।

फोंटा बोला — भाइयो, पुलिस की हवालात में बंद [illegible]

मेरी सारी जिंदगी ही शायद देश के लिए जेल में कट जाय ! मैं कांग्रेस का आदमी हूँ, जेल जाने से मैं नहीं डर सकता । चलो ....

फोंटा के चेले चिल्लाये — वन्दे मातरम् !

उसी सुर में सुर मिलाकर सब चिल्लाये — वन्दे मातरम् !

फोंटा ने कार की खिड़की में से हाथ निकालकर कहा — भाइयो, तुम लोग शांत हो जाओ, उत्तेजित मत होओ । हम सब अहिंसा के पुजारी हैं । इसलिये भाइयो, पुलिसवालों पर कोई ढेले मत चलाना । अगर मुझसे अपराध हो गया है तो मैं दंड भुगतने को वाध्य हूँ ।

उसी वक्त अचानक भीड़ में दीपंकर को देखकर फोंटा चौंका ।

— अरे दीपू वावू, क्या खवर है ? तुम यहाँ कैसे ?

दीपंकर वोला — मैं इधर एक काम से आया था । तुम्हारी क्या खवर है ?

फोंठा वोला — खवर तो देख रहे हो, देश-सेवा का पुरस्कार मिला ! कांग्रेस आफिस जा रहा था, हमलोगों की मीटिंग थी, अव रास्ते में यह झमेला हो गया । खैर, वाद में मुलाकात होगी ।

फिर खास अंदाज में प्रशांत करुण हँसी हँसकर फोंटा ने कार स्टार्ट कर दी । अघोर नाना का वही फोंटा ! उसने कार कव खरीदी ! अव तो वह शिष्ट सज्जन वन गया है ! शायद हाथ में पैसा आने पर इसी तरह शरीफ वना जा सकता है ! अच्छी-अच्छी वातें भी मुँह से निकलती हैं । अव तो फोंटा कांग्रेस का वाइस-प्रेसीडेंट भी वन गया था ! कितने वढ़िया ढंग से उसने भीड़ को शांत किया । वंदे मातरम् का नारा अव भी हवा में गूँज रहा था । धीरे-धीरे भीड़ छँटने लगी । सव अपने-अपने काम से जाने लगे ।

एक ने कहा — देखो भाई, कांग्रेस का आदमी है न, इसलिए कितना सज्जन है ! और कोई होता तो उस लड़की को दवाने के वाद गाड़ी लेकर भाग जाता ।

दूसरे ने कहा — अरे साहव, गलती तो इन्हीं लोगों की थी । हमीं सड़क पर चलना नहीं जानते । वताइए, उन सज्जन का क्या दोष है ?

वगल से किसी ने टिप्पणी की — यही तो वंगालियों का दोप है जनाव, हम दूसरे का भला देख नहीं सकते । हमीं लोगों में यूनिटी नहीं है । हम अच्छी वात सीखना नहीं चाहते, लेकिन स्वराज माँगने लगते हैं — छी: !

तरह-तरह के मन्तव्य प्रकट करते हुए सव चले गये । दीपंकर को अचानक खयाल हुआ कि अव उसके आसपास कोई नहीं था । वह अकेला खड़ा था । जिस जगह वह लड़की कार से दवी थी, वहाँ खून का गहरा दाग अभी भी था । आश्चर्य है ! कोई नहीं जान पाया, फोंटा भी नहीं जान पाया कि इस मौत के लिए कौन जिम्मेवार था !

दीपंकर धीरे-धीरे फुटपाथ से चलकर फिर रसा रोड पर आ गया।

● ● ●

उस दिन उस घटना के बाद सनातन बाबू के घर जाने की इच्छा नहीं हुई थी। दीपंकर वहाँ से सीधे लौट आया था। दफ्तर जाने में देर हो रही थी। शायद सती की सास दीपंकर की बातें ठीक से समझती भी नही। वे जिस जमाने की हैं और जिस परिवार में पली हैं उसके हिसाब से इतने बड़े अपराध की कोई क्षमा नहीं है।

दीपंकर वहीं से सीधे लक्ष्मी दी के घर चला गया।

इसके पहले दीपंकर कभी सवेरे वहाँ नहीं गया था।

यह वही सन् १६३६ ई० था। दुनिया भर के लोगों के जीवन का वह चरम संक्रमण काल था। जिंदगी की सारी गंदगी और ग्लानि को लोगों की निगाह से छिपाने के लिए जी जान से कोशिश करने का वह युग था। मानो कुछ भी प्रकट न हो जाय! मानो सब कुछ ढँका-छिपा रहे। सारा कलंक परदे के पीछे रहे और कोई कुछ जान न सके। मुखौटा मत खोलो! नहीं तो लोग तुम्हारी विद्या-बुद्धि की थाह लगा लेंगे। सभ्य समाज का जो ऐतिह्य है उसी को अपने घाव पर पट्टी की तरह बाँधे रहो। खोदने-खादने की जरूरत नहीं है। अगर सती जैसी लड़कियाँ घर से निकल जाती हैं तो जाने दो, बस किसी को पता न चलने पाये। अगर तुम्हें खाना न मिले तो मुँह से मत कहो, सड़क की दुकान से एक पैसे का पान खरीदकर होंठों को रँग लो। साफ कपड़ों से अपने को सजा लो, तभी लोग तुम्हें शिक्षित और सभ्य कहेंगे। रुलाई आये तो आँसू मत बहाना, क्योंकि उससे कोई सहानुभूति नहीं दिखायेगा। जमाना बड़ा ही नाजुक है। वही सन् १६३६ ई०। कहीं कोई लड़ाई नहीं थी, लेकिन हजारों लोग मरने लगे थे — कॉलरा, चेचक और मलेरिया से। कहीं अकाल नहीं था लेकिन लोगों के घर चूल्हा जलना बंद था। क्या अकेले किरण ने ही सड़क से डाभ उठाकर खाया था? कितने ही लड़के कितनी तरह से दाँत भींचकर दिखावटी हँसी हँसे थे। कितने ही गांगुली बाबुओं ने कोआपरेटिव [illegible] बीवी के लिए

गहने खरीदे थे और अपनी इज्जत बचायी थी। कितनी ही किरण की माँओं ने घर में एक गमछा पहनकर समय काटा था और जनेऊ बनाये थे। लक्ष्मी दी जैसी कितनी ही लड़कियाँ चौरंगी से सरकारी अफसरों को फाँसकर अपने घर ले गयी थीं। विन्ती दी जैसी कितनी ही लड़कियों ने आदिगंगा के कालियदह में आत्मविसर्जन किया था। फिर भी कितने ही छिटे-फोंटा खद्दर पहनकर महामानव बन गये थे। उन लोगों ने चरखे का धंधा और नेशनल फ्लैग का कारोबार किया था। उन्हीं लोगों ने स्वदेशी के नाम पर कॉटन मिल खोली और वंदे मातरम् का नारा लगाया था। वे बिला वजह जेल गये, खून लगाकर शहीद बने और प्रातःस्मरणीय हुए। उधर साहबी मुहल्ले में कितनी ही मिस माइकेलों ने विवियन ले का सपना देखा। कितने ही घोषाल साहबों ने साउथ इंडियन बनकर पैलेरा कोर्ट में क्लाउन का पार्ट अदा किया। बचपन से सन् १९३९ ई० तक दीपंकर ने कितने ही जीवन, कितने ही लोग, कितने ही चरित्र और कितने ही घरबार देखे थे — सब, उसे सब याद है। हे भोलानाथ! तुमने भूलने की अपनी कला दीपंकर को क्यों नहीं सिखा दी? तुम्हारी तरह सब कुछ भूलकर वह भी मजे में अपनी जिंदगी बिता देता! जैसे और अफसर नौकरी, वैगन, घूस, ग्रेड, प्रोमोशन और साहब के पीछे पागल रहते हैं, वैसे ही वह भी रहता। प्रोमोशन और ग्रेड के लिए साहबों की खुशामद का रास्ता ढूंढ़ने में ही वह अपना जीवन बिता देता। इसको उससे लड़ाकर वह भी स्वार्थसिद्धि के शिखर पर पहुँच जाता। लेकिन पता नहीं क्यों वह भूल नहीं सकता! पता नहीं क्यों वह हर बात को याद रखता है! पता नहीं क्यों हर चीज उसे याद रही आती है!

लेकिन एक दिन सब कुछ प्रकट हो गया।

एक दिन सारी आबरू मिट्टी में मिल गयी। सारा जख्म बेनकाब हो गया। चैम्बरलेन से लेकर ईश्वर गांगुली लेन के छिटे-फोंटा तक सब नंगे हो गये। उसी सन् १९३९ ई० के सितम्बर की पहली तारीख को ऐसा हुआ था।

लेकिन वह बात अभी नहीं।

याद है। दरवाजे की कुंडी खटखटाते ही केशव ने दरवाजा खोल दिया था।

दीपंकर ने पूछा — लक्ष्मी दी है?

सँकरे गलियारे के बाद आँगन। दिन की रोशनी में वह जगह दीपंकर को बड़ी अपरिचित-सी लगी। रात को यह गलियारा कितनी बार दीपंकर को सुरंग जैसा लगा था। मानो इसी सुरंग से सभ्यता के सारे पाप और कलंक यहाँ घुसते हैं। मानो यहीं से रात के अँधेरे में लक्ष्मी दी की आत्मा व्यभिचार करने निकलती है। लेकिन आज यह जगह अजीब नहीं लगी। ऐसा गलियारा तो बहुतों के घर में है। उस गलियारे की लम्बाई में तिकोनी जगह पर गमले में फूल का पौधा है। एक गमले में तुलसी का पौधा है। आश्चर्य है! क्या लक्ष्मी दी ने इतने जतन से तुलसी का पौधा भी लगाया है! क्या तुलसी पर भी लक्ष्मी दी की श्रद्धा है! यह तो आश्चर्य

की बात है ! जुआ, शराब और तुलसी का पौधा ! आश्चर्य !

आँगन में जाकर खड़ा होते ही दीपंकर और भी विस्मित हुआ।

लक्ष्मी दी दीपंकर की तरफ पीठ किये खड़ी थी। उसने उसी तरह खड़ी रह कर पूछा — कौन है केशव ? कौन आया है ?

सीमेंट के पक्के फर्श पर मिस्टर दातार पलथी मारकर बैठा है। लक्ष्मी दी लोटे में पानी लेकर मिस्टर दातार को नहला रही है। उसने साड़ी कमर के आस पास खोस ली है। सिर पर गीले बालों का जूड़ा है। पीठ पर आँचल के कोने से बँधा चाभियों का गुच्छा लटक रहा है। वह झुककर मिस्टर दातार पर पानी डाल रही है। साबुन लगा रही है। गमछे से रगड़-रगड़कर उनका बदन साफ कर रही है।

अचानक पीछे मुड़कर दीपंकर को देखते ही लक्ष्मी दी बोली — अरे, तू ! इतने सवेरे ?

दीपंकर सहसा कुछ बोल नही पाया। कौन कहेगा कि कल रात की लक्ष्मी दी यही है !

लक्ष्मी दी बोली — बैठ उस कुर्सी को खींचकर बैठ जा। रात में आने को मना किया था, क्या इसीलिए तू सवेरे आया ?

दीपंकर फिर भी नही बैठा। खड़ा ही रहा। बोला — एक जरूरी काम से आपके पास आया हूँ।

मिस्टर दातार को नहलाती हुई पीछे मुड़कर लक्ष्मी दी बोली — क्या काम है रे ? आज तेरा दफ्तर नही है ?

फिर एक लोटा पानी मिस्टर दातार के सिर पर डालकर लक्ष्मी दी उनकी पीठ पर साबुन रगड़ने लगी।

बोली — तू तो नही जानता, पहले शम्भु नहाना एकदम नही चाहता था, पानी देखते ही चिल्लाने लगता था, लेकिन अब देख, कैसा चुपचाप बैठा नहा रहा है।

लक्ष्मी दी ने फिर दीपंकर से पूछा — तूने पिताजी को चिट्ठी लिखी है ?

दीपंकर बोला — इस बीच बड़ा बवाल हो गया है ! आज तड़के ही अचानक सती मेरे घर आ पहुँची है ....

— सती ?

लक्ष्मी दी के हाथ का लोटा एकाएक काँपकर रुक गया।

दीपंकर बोला — आपके पिताजी को चिट्ठी लिखने के लिए मैं आप से छुट्टी ले गया। घर पहुँचते ही मैंने एक चिट्ठी लिखी। लेकिन वह चिट्ठी पसन्द नहीं आयी तो मैंने उसे फाड़ दिया और सोचा कि कल सवेरे दूसरी लिखूंगा, लेकिन सवेरा होने से पहले ही सती आ गयी। उसको बिठाकर मैं आपके पास चला आया —

— क्यों ? सती क्यों चली आयी ?

दीपंकर बोला — ससुराल में उसे बड़ी तकलीफ थी। [illegible]

उसके कमरे में नहीं सोने दिया जाता था ।

—क्यों ? सती ने क्या किया था ?

दीपंकर बोला — वह लम्बी कहानी है । वह सब कहने के लिए अभी समय नहीं है ।

—तो क्या इसीलिए सती एकदम ससुराल छोड़कर चली आयी ?

दीपंकर बोला — मैंने उसे बहुत समझाया है । मैंने उससे कहा कि चलो, मैं तुम्हें तुम्हारी ससुराल पहुँचा आता हूँ, लेकिन वह किसी तरह राजी नहीं हुई । सोचा, उसके पति को खबर दूँ, लेकिन वहाँ भी न जा सका । इस समय मेरे घर में माँ भी नहीं है । माँ काशी गयी है । मैं अकेला हूँ । बताइए, अब मैं क्या करूँ ? इसीलिए मैं आपके पास आया ....

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन सती बच्ची तो नहीं है, पढ़ी-लिखी है, होशियार है, वहाँ से चली क्यों आयी ? अब ? अब क्या होगा ? उसने एक बार भी नहीं सोचा ? अगर वह ससुराल में नहीं रहेगी तो कहाँ जायेगी ? किसके पास रहेगी ? वह यह सब वह नहीं सोच रही है ?

मिस्टर दातार ने अभी तक किसी तरफ ध्यान नहीं दिया । अब अचानक वह बोल उठा — दी-पू-बा-बू !

लक्ष्मी दी बोली — देखा ? देखा न ! तुझे वह पहचान गया है ।

फिर मिस्टर दातार के मुँह के पास मुँह ले जाकर लक्ष्मी दी बोली — उसे पहचान रहे हो ? वही तो हम लोगों का दीपू है । जब बहुत छोटा था तब तुमने उसे देखा था । अब वह कितना बड़ा हो गया है, कितना पैसा कमाता है । आफिसर बन गया है ...

मिस्टर दातार अब भी दीपंकर की तरफ देखकर सूनी हँसी हँस रहे हैं । उनके दाँत दिखाई पड़ रहे हैं । मानो दीपंकर को देखकर उन्हें बड़ी खुशी हुई है ।

मिस्टर दातार नहा चुके थे । गमछे से उनका बदन पोंछती हुई लक्ष्मी दी बोली — इस आदमी को लेकर मुझे कितनी चिंता हुई थी कि तुझे क्या बताऊँ — अब तो यह फिर भी बात समझ सकता है, तुझे पहचान भी सका ।

मिस्टर दातार का बदन पोंछकर लक्ष्मी दी उन्हें पकड़कर कमरे में ले गयी । बोली — यहीं रह, मैं अभी आती हूँ ....

दीपंकर आँगन में खड़ा चारों तरफ देखने लगा । सीमेंट का पक्का आँगन ! एक कोने में तुलसी के पौधे वाला गमला रखा था । लौकी की लतर रसोईघर के छप्पर पर चढ़ गयी थी । दीपंकर की आँखों के आगे बड़ी अच्छी गृहस्थी का रूप प्रकट हुआ । लेकिन रात को तो इस घर का रूप कुछ और ही रहता है । फिर भी दीपंकर को इस समय बड़ा अच्छा लगा । रसोईघर में चूल्हा जल रहा था । चावल पक रहा था । बगल में हँसिया रखी थी । वहीं कुछ कटी हुई सब्जियाँ रखे केशव

रसोईघर में कुछ कर रहा था।

लक्ष्मी दी आयी। बोली — जानता है, आज मानस की चिट्ठी आयी है।

मानस ! एकाएक याद आया। लक्ष्मी दी के बेटे का नाम मानस है !

लक्ष्मी दी बोली — आज ही सवेरे चिट्ठी मिली है। वह अच्छी तरह पास हो गया। मुझे कई दिनों से बड़ी चिंता थी। कितनी तकलीफ उठाकर रुपया भेज रही हूँ। अगर वह इम्तहान में पास न होता तो बता, कितनी तकलीफ होती।

पति और पुत्र के बारे में लक्ष्मी दी कितनी ही बातें कहने लगी। लक्ष्मी दी कितना सपना देखा करती है। उसे कितनी आशा है। कैसा छोटा-सा घर उसने बसा लिया है। दीपंकर को तब उसी क्षण लक्ष्मी दी को क्षमा करने की इच्छा हुई। मानो लक्ष्मी दी का कोई दोष नहीं है। कितनी बढ़िया गृहस्थी है ! बेटे की चिट्ठी आयी है। बेटा पास हुआ है। शंभु पहले से काफी ठीक है। वह फिर कारोबार शुरू करेगा। वह फिर अपने पाँवों पर खड़ा होगा। इससे माँ को कितनी खुशी है, पत्नी को कितनी आशा बँधी है।

आखिर सती के मामले में लक्ष्मी दी बोलीं — बता, फिर मैं क्या करूँ ?

दीपंकर बोला — मैं समझा-बुझाकर उसे ससुराल भेज नहीं सका। मैंने कहा तो वह मेरे घर से ही जाने लगी थी। इसीलिए मैं तुम्हारे पास आया।

— लेकिन वह ससुराल नहीं जायेगी तो कहाँ जायेगी ?

दीपंकर बोला — वह कह रही है कि दो-चार दिन मेरे घर रहेगी, उसके बाद कोई इंतजाम कर लेगी। फिर आपके पिताजी को चिट्ठी लिखने पर जवाब आने में भी तो कई दिन लग जायेंगे। इन कई दिनों तक वह कहाँ रहेगी ?

— लेकिन वह ससुराल क्यों नहीं जायेगी ? शादी के बाद क्या कोई लड़की हमेशा बाप के घर पड़ी रहती है ?

दीपंकर बोला — वह कह रही है कि जान निकल जाने पर भी वहाँ नहीं जायेगी।

लक्ष्मी दी बोलीं — इसका क्या माने है ? उस लड़की को किस बात की तकलीफ है ? इतनी भी तकलीफ सती बरदाश्त नहीं कर पा रही है ? सास तो किसी की हमेशा नहीं रहती ?

दीपंकर बोला — वह सनातन बाबू के पास भी नहीं रहेगी।

लक्ष्मी दी बोली — आखिर इतना पढ़-लिखकर सती को यही अक्ल मिली ? जिन्दगी में किसे तकलीफ नहीं है ? सभी को तकलीफ है, दुःख है, लेकिन ससुराल से कौन लड़की चली आती है ! क्या मैंने तकलीफ नहीं सही ? क्या मैं तकलीफ नहीं सह रही हूँ ?

दीपंकर बोला — बताइए मैं क्या करूँ ? इस समय घर में माँ नहीं है, इस

समय अगर वह मेरे पास रहेगी तो लोग तरह-तरह की बातें करने लगेंगे। इसलिए मैं कह रहा हूँ कि आप उसे अपने ही पास दो-चार दिन रख लें।

—मेरे पास ? तू क्या कह रहा है ?

दीपंकर बोला —जब तक आपके पिताजी नहीं आ जाते, कम से कम तब तक उसे रख लीजिए।

लक्ष्मी दी बोली — मेरे पास कैसे रहेगी ? यहाँ भले घर की कोई लड़की रह सकती है ? रात को क्या यह जगह किसी के रहने लायक रहती है ? तू तो सब कुछ जानता है फिर भी ऐसा कह रहा है ?

फिर जरा रुककर लक्ष्मी दी बोली — इसके अलावा मेरा चाहे जो कुछ हो, लेकिन सती का मैं नुकसान क्यों होने दूँगी ? वह भले घर की बहू है, क्या उसकी इज्जत-आबरू नहीं है ?

— फिर मैं क्या करूँ ?

दीपंकर फिर बोला — उसके रहने की और कोई जगह नहीं है, इसीलिए वह मेरे पास आयी है। आपके बारे में मैंने अभी तक उससे कुछ नहीं कहा —

लक्ष्मी दी अब सचमुच चिंता में पड़ गयी।

दीपंकर बोला — फिर क्या वह मेरे ही घर रहेगी ?

लक्ष्मी दी बोली — क्यों रे ? तेरे घर वह क्यों रहेगी ? अभी तेरे घर में माँ भी नहीं है। तूने अभी तक शादी नहीं की। इस हालत में वह तेरे पास कैसे रह सकती है ? खास कर रात के वक्त ?

दीपंकर बोला — मैं भी तो यही कह रहा हूँ।

लक्ष्मी दी बोली — इससे तो हमेशा के लिए ही उसका ससुराल का रास्ता बन्द हो जायेगा।

— फिर ?

बहुत सोचकर लक्ष्मी दी बोली — जब तक पिताजी नहीं आते तब तक वह ससुराल में रहे। एक स्त्री का ससुराल के अलावा कहीं और रहना ठीक नहीं है।

दीपंकर बोला — मैंने उससे यह कहा है।

लक्ष्मी दी बोली — तू जाकर उससे फिर यही कहना।

— लेकिन सती किसी तरह नहीं जायेगी। अगर आप चलकर कहें तो कुछ हो सकता है।

— मैं ?

आश्चर्य से लक्ष्मी दी ने दीपंकर की तरफ देखा, फिर उसने कहा — मैं ? मैं चलकर उससे कहूँगी ? लेकिन वह मेरी बात क्यों मानेगी ? जिन्दगी में कभी उसने मेरी बात नहीं मानी और आज वह मान लेगी ? बल्कि वह तेरी बात थोड़ी बहुत मान भी सकती है !

— मेरी बात ?

लक्ष्मी दी बोली — हाँ मैं जानती हूँ, वह बराबर तुझे पसंद करती थी, तू उसे बड़ा अच्छा लगता था।

दीपंकर लक्ष्मी दी की बात सुनकर स्तंभित हो गया। लक्ष्मी दी यह क्या कह रही है।

लक्ष्मी दी बोली — हाँ, वह मेरी आँखों में कभी धूल नहीं झोंक सकी। वह तुझसे बराबर प्यार करती थी।

यह सुनकर सहसा दीपंकर का सिर झुक गया।

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन उसके लिए अब तो वह तेरे घर में नहीं रह सकती। अब उसकी शादी हो गयी है। खैर, तू जरा रुक, मैं तेरे साथ चल रही हूँ। मैं ही चल कर उससे समझाकर कहती हूँ ....

फिर लक्ष्मी दी झटपट कमरे में गयी और चादर ओढ़कर आ गयी। उसने साड़ी का किनारा सिर पर रख लिया। फिर नौकर से कहा — केशव, तू बाबूजी का ख्याल रखना, मैं अभी तुरंत चली आऊँगी। ज्यादा देर नहीं लगेगी। भात पक जाय तो हाँड़ी उतार कर रख देना।

लक्ष्मी ने कमरे में ताला लगाया।

चादर को बदन पर अच्छी तरह लपेटकर वह बोली — चल, जल्दी चल ....

दीपंकर अब भी मन-प्राण से पूरी तरह आश्वस्त नहीं था। बहुत कुछ देखने के बाद भी उसे बहुत कुछ देखना बाकी है। इसलिए जब भी वह किसी को सहज रूप में पाना चाहता है तभी अपने को जटिलता में उलझा लेता है। सुख-दुःख को वह सुख-दुःख ही समझता है। सुख-दुःख के बीच सुख-दुःखातीत हो पाने की बात उसे कभी याद नहीं आती। फिर जमाना भी तो तुरन्त सुख पाने के जंजाल से भारी हो गया है।

मधुसूदन के चबूतरे पर फिर लोग इकट्ठा होने लगे हैं। शायद दूनी चाचा अखबार लेकर बहस छेड़ने लगा है। लेकिन दीपंकर के पास यह सब देखने का मौका कहाँ है ? लेकिन और लोगों के पास तो इसके लिए भी वक्त है। जो अखबार दे जाता है, उस दिन वह भी अखबार देकर खड़ा रहा। बोला — बाबूजी ...

वह रोज अखबार अन्दर फेंककर चला जाता है। उस दिन उसे खड़ा देखकर दीपंकर को थोड़ा आश्चर्य हुआ। बोला — क्या है ?

उसने कहा — क्या लड़ाई शुरू होगी बाबूजी ?

दीपंकर बोला — क्यों ? किसने तुमसे कहा है ?

उसने कहा — सब लोग यही बातचीत कर रहे हैं। कह रहे हैं कि जबर्दस्त लड़ाई छिड़ेगी ....

आश्चर्य है ! वह आदमी खुद अखबार बाँटता है, लेकिन वही कोई खबर नहीं रखता ! लड़ाई छिड़ने पर क्या होगा, यह भी शायद वह नहीं जानता। फिर

भी उसने सुना है कि लड़ाई छिड़ेगी ! अभी उस दिन काशी ने यही पूछा था।

इस पर दीपंकर ने काशी से पूछा था — किसने तुझसे कहा है ?

काशी ने कहा था — बाजार में आलूवाला कह रहा था कि आलू का दाम बढ़ जायेगा, क्योंकि लड़ाई छिड़ेगी।

कुंडी खटखटाते ही काशी ने आकर दरवाजा खोल दिया। कुछ कहने से पहले ही दादाबाबू के साथ लक्ष्मी दी को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गया। उसके मुँह से कोई बात नहीं निकली। वह इतने दिनों से इस मकान में है, लेकिन इस तरह बारबार अजनबी लड़कियों को आते उसने कभी नहीं देखा था।

दीपंकर ने पूछा — बहूदीदी क्या कर रही है ?

काशी बोला — आपके चले जाने के बाद बहूदीदी रसोईघर में आयी थी, आकर पूछ रही थी — क्या खाना बना रहे हो ?

दीपंकर के जाने के बाद सती कमरे से निकलकर बाहर आयी थी। उसने सब कुछ अच्छी तरह देखा-भाला था। वह रसोईघर में भी गयी थी। उसने काशी को खाना बनाते देखा था। फिर उसने काशी से पूछा था — तुम्हारा क्या नाम है ?

काशी ने कहा था — काशी।

— तुम यहाँ कितने दिन से काम कर रहे हो ?

काशी ने फिर कहा था — यह कोई आज की बात नहीं है बहूदीदी, इस घर में मुझे बहुत दिन हो गये हैं। जब मैं बच्चा था, तभी से इस घर में हूँ।

फिर जरा रुककर सती ने पूछा था — अलगनी में जो साड़ी लटक रही है, किसकी है ?

— साड़ी ? माँजी के कमरे में ? वह तो दीदी की है।

— दीदी कौन ?

काशी ने कहा था — संतोष चाचा की लड़की। वे सब काशी गये हैं !

— संतोष चाचा कौन हैं ? वे यहाँ क्या करते हैं ?

काशी ने कहा था — जी, यह सब मैं नहीं जानता। दीदी के साथ हमारे दादाबाबू की शादी होगी न। शादी के बाद चाचाजी भी यहाँ रहेंगे ....

शादी होगी ?

काशी की बात सुनकर दीपंकर को बड़ा गुस्सा हुआ। पता नहीं हर बात में यह अपनी टाँग क्यों अड़ाता है ? शायद लक्ष्मी दी के सामने ही वह काशी को डाँट देता। घर के अन्दर की बातें सती से कहने की क्या जरूरत थी ! सती तो बाहरी है। उससे कहा जा सकता था — मुझे नहीं मालूम ....

दीपंकर बोला — यह सब तूने क्यों कहा ? किसने तुझसे बढ़ा-चढ़ाकर बातें करने को कहा है ?

काशी चुपचाप खड़ा रहा।

—मैंने तुझसे कितनी बार कहा है कि तू नौकर है और उसी तरह रहा कर! लेकिन तू हर बात में दखल देने लगता है। तू अपना काम कर और तनख्वाह ले, बस! समझ गया न?

बहुत दिन बाद जब भी दीपंकर को यह घटना याद आयी, तभी उसे बड़ा पश्चात्ताप हुआ। अबोध अपराधी के समान काशी का ताकना और अपनी गलती की गुरुता न समझना दीपंकर को अपने मन की आँखों के सामने बहुत दिनों तक दिखाई पड़ा। उसके बाद वही काशी सब कुछ समझ गया, वह सती को पहचान गया, लक्ष्मी दी और दीपंकर को भी पहचान सका। दिन पर दिन वह होशियार होता गया। दीपंकर जब चुपचाप खिड़की के पास बैठकर सोचता रहता था या कमरे में लेटा चुपचाप छत की तरफ देखता था, तब काशी उसके पास नहीं जाता था। उन दिनों, जब लोभ-मोह-द्वन्द्व के बीच दीपंकर का जीवन जटिल हो उठा था, जब हर क्षण उसकी आत्मा यंत्रणा से जर्जर हो रही थी, जब सती ने ही उसे धोखा दिया था, तब अकेले इस काशी ने सब कुछ देखा था। सिर्फ काशी ही उन दिनों का मूक साक्षी है। जब माँ भी इस दुनिया में नहीं रहीं, जब दीपंकर का कोई नहीं रहा, तब भी यही काशी था। काशी था, इसीलिए दीपंकर उस दिन सती के हाथों अपमानित होना बरदाश्त भी कर सका था।

सती ने कहा था—दीपू, तुम पशु हो, जानवर हो, नीच हो, गँवार हो ....

उसने न जाने और भी कितनी गालियाँ दी थी। सुनी नहीं जा सकती, ऐसी गालियाँ! लेकिन दीपंकर ने सिर नीचा किये वह सब किस तरह बरदाश्त किया था, यह काशी ही जानता है। और कोई नहीं जानता।

लेकिन यह सब दीपंकर की माँ मरने के बाद हुआ! इसलिए वह प्रसंग अभी नहीं।

उधर सती दीपू के कमरे में बैठी न जाने क्या-क्या सोचने लगी थी। उसका मन छटपटाने लगा था। पता नहीं, दीपू कहाँ चला गया है। शायद वह प्रियनाथ मल्लिक रोड गया है। शायद वह वहाँ जाकर सब बतायेगा! शायद वह सारी घटना सबको सुनायेगा।

उस समय भी रात का अँधेरा था। प्रियनाथ मल्लिक रोडवाले शिरीष घोष के वंश की कुललक्ष्मी ने बीसवीं सदी के चौथे दशक में अचानक बाहर की तरफ रुख किया। चारों तरफ घोर अंधकार था। उसने धीरे-धीरे कमरे का दरवाजा खोला। बरामदे में बत्ती जल रही थी। रातभर यह बत्ती जलती थी। सती ने ही उस दिन वह बत्ती धीरे से बुझा दी थी।

—कौन?

सती की आत्मा ने मानो चौंककर पूछा था—कौन?

भी नहीं मिलता। बीसवीं सदी के चौथे दशक में ही शिरीष घोष की कुललक्ष्मी उनके मकान से निकलकर सड़क की धूल में आकर खड़ी हो गयी थी।

लक्ष्मी दी ने पूछा — उसके बाद ?

इतने दिन बाद लक्ष्मी दी को देखकर सती अवाक् हो गयी थी। बोली — उसके बाद यहाँ चली आयी, और क्या ?

लक्ष्मी दी बोली — लेकिन तू क्या समझ रही है कि यहाँ रहने पर तेरी इज्जत बढ़ेगी ?

सती बोली — दूर से यह बात सभी कह सकते हैं, लेकिन उस घर में मेरी हालत देखने पर समझ में आ सकता है। मैं कोई बच्ची नहीं हूँ, सब समझती हूँ, इसलिए तुम मुझे इज्जत की बात मत सिखाओ।

लक्ष्मी दी बोली — अगर इतना समझती है तो तूने मुँह में इस तरह कालिख क्यों लगायी ?

सती बोली — मैंने किसके मुँह में कालिख लगायी है ?

— तूने अपने मुँह में कालिख लगायी है, और किसके मुँह में लगायेगी ?

शुरू में सती ने सहज ढंग से बात शुरू की थी, लेकिन अब वह बात दूसरा मोड़ लेने लगी। बहुत दिनों बाद दोनों बहनों में भेंट हुई है। दीपंकर ने सोचा था कि सती कम से कम दीदी की बात मानेगी। वह दोनों बहनों के बीच चुपचाप खड़ा उनकी बातें सुनने लगा।

सती अब सचमुच गुस्से में आ गयी और अपनी दीदी से बोली — तुम्हें शरम नहीं आती ? तुम चली हो आज मुझे इज्जत की बात सिखाने ?

लक्ष्मी दी बोली — मैं तुझसे बड़ी हूँ न ? तेरी बड़ी बहन हूँ न ?

सती बोली — बड़ी बहन की मर्यादा तो तुमने खूब निभायी है ! आज तुम्हारे ही कारण मेरी यह दुर्दशा है। तुम अगर हमारे खानदान के मुँह पर कालिख न लगातीं तो क्या मेरा भाग्य ऐसा होता ? सारी बुराई की जड़ तो तुम्हीं हो !

दीपंकर ने लक्ष्मी दी की तरफ देखा। लक्ष्मी दी को देखकर उसके मन में दया आने लगी।

अब दीपंकर आगे आया। बोला — अब वह बात रहने दो सती, उस बात को लेकर चिल्लाने से क्या फायदा ?

सती बोली — तुम हटो दीपू ! मैं क्यों नहीं कहूँगी ? मेरी सास तो इसी बात को लेकर ताना देती रहती है। खैर, वह कुछ गलत नहीं कहती। इसी कारण मैं किसी को मुँह नहीं दिखा सकती। ससुराल के नातेदार-रिश्तेदार और इष्टमित्र किसी के पास मैं जा नहीं सकती। आज यह आयी है मुझे इज्जत सिखाने !

लक्ष्मी दी बोली — यह तो मैं जानती हूँ कि कुछ कहने लायक मेरा मुँह नहीं है इसीलिए मैं नहीं आ रही थी, सिर्फ दीपू के कहने पर चली आयी।

दीपंकर ने लक्ष्मी दी से कहा — आप बुरा न मानें लक्ष्मी दी, अभी वह छोटी है, आप उसकी बात का खयाल न करें....

सती बोली — हाँ, मैं तो छोटी हूँ। छोटी हूँ, इसीलिए अपनी ससुराल से भाग आयी हूँ। छोटी हूँ, इसीलिए अपने पति को छोड़कर चली आयी हूँ।

दीपंकर बोला — तुम छोटी हो या न हो, लेकिन काम तुमने छोटी बच्ची जैसा ही किया है, यह तो सब कहेंगे।

लक्ष्मी दी बोली — मैंने बुरा काम किया है तो क्या मैं किसी से अच्छी बात भी नहीं कह सकती ?

दीपंकर बोला — अभी वे सब बातें छोड़ो लक्ष्मी दी।

सती बोली — क्यों, छोड़ेगी क्यों ? किसलिए वह छोड़ेगी ? आज जब वह सर्वनाश पूरा कर चुकी, तब आयी है दीदी बनकर उपदेश देने ! अब आयी है घड़ियाली आँसू बहाने ! जड़ काटकर अब आयी है डालियों पर पानी छोड़ने।

लक्ष्मी दी बोली — मैं तो मान रही हूँ कि मैंने गलती की है, अपराध किया है, पाप किया है। इसके लिए तू मुझे जो सजा देना चाहती है, दे ले ! मैं सिर झुकाकर खड़ी हूँ। मैंने पिताजी के मुँह पर कालिख लगायी है और तेरा भी सर्वनाश किया है। अपने पति तक को मैं सुखी न कर सकी और अपने बेटे को अपने पास नहीं रख सकी। अपने सुख की बात तो मैं सोचती ही नहीं। इसके लिए तू मुझे जो सजा देना चाहती है, दे। मैं सब कुछ सिर झुकाये बरदाश्त करूँगी।

सती बोली — अब तुम नखरा न दिखाओ लक्ष्मी दी, तुम्हारा नखरा देखने पर मेरा बदन सुलगने लगता है।

दीपंकर ने सती से कहा — क्यों इस तरह की बातें कर रही हो सती ? क्या तुम्हारे मन में स्नेह-ममता भी नहीं है ?

सती बोली — स्नेह-ममता ? जब मैं दिन-दिन भर रोती रही, रो-रोकर रात बिताती रही, रोज सास का ताना बरदाश्त करती रही और जब मरे हुए बेटे को छाती से लगाकर हाहाकार करती रही, तब तो मुझे स्नेह-ममता दिखाने कोई नहीं आया !

दीपंकर ने देखा, लक्ष्मी दी साड़ी के आँचल से आँखें पोंछ रही है।

अब लक्ष्मी दी ने दीपंकर की तरफ देखकर कहा — मैं जा रही हूँ दीपू, अब मैं यहाँ खड़ी नहीं रह सकती।

दीपंकर समझ नहीं पाया कि क्या जवाब दे।

सती बोली — हाँ, तुम जाओ, अब कभी अपनी शकल दिखाने मत आना।

शायद लक्ष्मी दी चली जाती, लेकिन दीपंकर उसका रास्ता रोककर खड़ा

हो गया। बोला — आप मत जाइए लक्ष्मी दी, इस समय सती का दिमाग ठीक नहीं है। वह क्या कह रही है, समझ नहीं पा रही है। वह अपना भला-बुरा भी नहीं समझ सकती। आप उसकी बातों पर ध्यान न दें।

लक्ष्मी दी बोली — तू ऐसा कह रहा है दीपू, लेकिन अब तो वह छोटी नहीं है, उसकी उम्र हो गयी है। मेरी भी उम्र हुई है और तेरी भी। अब एक नादान की तरह बात करना हमें शोभा नहीं देता। नादानी करने की अब हमारी उम्र नहीं है।

दीपंकर बोला — नहीं, आप फिर भी उस पर नाराज नहीं हो सकतीं। आप उसे समझाइए!

लक्ष्मी दी दीपंकर की बात नहीं समझ सकी। बोली — क्या समझाऊँगी?

दीपंकर बोला — आप उसे समझा-बुझा ससुराल भेजिए। ससुराल के अलावा और कहीं रहने में उनका मंगल नहीं है, आप उसे यही समझा दीजिए। वहाँ लाख अत्याचार होने पर भी वह उसके पति का घर है और लाख ताना देने पर भी वह उनकी सास ही है! फिर वह कहाँ रहेगी, यह भी तो सोचना होगा।

सती बोली — क्यों? मैं यहाँ रहूँगी!

— यहाँ? यहाँ तुम कैसे रहोगी?

दीपंकर ने सती की तरफ देखकर कहा — यहाँ मेरी माँ नहीं है। अगर माँ होतीं तो मैं कुछ न कहता।

लक्ष्मी दी बोली — मुँहजली, दीपू के साथ एक ही मकान में तेरा रहना क्या ठीक है या अच्छा लगता है?

सती बोली — क्यों, क्या हर्ज है?

— तू कह भी रही है कि क्या हर्ज है। क्या दीपू तेरा सगा भाई है, या कोई रिश्तेदार? अगर तेरी ससुराल में इस बात को लेकर कोई कुछ कहे तो तू क्या जवाब देगी? अगर उन लोगों को यह मालूम हो जाय तो क्या वे तुझे अपने घर में जगह देंगे?

सती बोली — अगर वे अपने घर में मुझे जगह देना भी चाहें तो क्या फिर मैं वहाँ जाऊँगी?

लक्ष्मी दी बोली — न जायेगी तो तू क्या करेगी, यहीं बना? क्या मेरी तरह ही सबके मुँह में कालिख लगायेगी?

यह कहती हुई लक्ष्मी दी बुरी तरह हाँफने लगी। वह बोली — तू मुझे नहीं देख रही है? आँखों के आगे तू मेरी दुर्गति नहीं देख रही है? मुझे देखकर भी क्यों तू सबक नहीं लेती? तू कैसी है रे सती? तू क्या है?

सती इतनी देर चुप थी, अब बोली — तुम अपने साथ मेरी तुलना न करो लक्ष्मी दी। मैं तुम्हारी तरह नहीं हूँ। मुझमें आत्मसम्मान का बोध है। मैं जानती हूँ कि क्या सही है और क्या गलत।

लक्ष्मी दी बोली — मैं मानती हूँ कि तुझमें आत्मसम्मान है, तू सही और गलत समझ सकती है, फिर भी बड़ी बहन की बात एक बार मानकर देख न! मैं जिन्दगी में बहुत ठगी गयी हूँ, बहुत कष्ट भोग चुकी हूँ और इसीलिए तुझसे यह कह रही हूँ। भगवान न करे कि तुझे भी मेरी तरह जीवन भर दुःख उठाना पड़े। मैं नहीं चाहती कि मेरा दुश्मन भी मेरी तरह दुःख उठाये। तू छोटी है, अभी दुनिया का कुछ नहीं समझती, पति और सास की आड़ में रहती रही है इसलिए तुझे आँधी-तूफान अपने ऊपर झेलना नहीं पड़ा। लेकिन मैं जानती हूँ कि दुनिया क्या है और दुनियादारी क्या है! मैंने ऐसे कितने ही दिन बिताये हैं जब मेरे हाथ में एक पैसा भी नहीं था, घर में एक दाना चावल भी नहीं था कि उबालकर खाऊँ और ऐसा भी वक्त आया है जब मैं रात-रात भर रोती रही। मेरा रोना सुनने के लिए कोई भी पास नहीं था। अब तो उन दिनों के बारे में सोचने पर ही मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। इसीलिए मैं नहीं चाहती कि मेरा बहुत बड़ा शत्रु भी वैसा कष्ट उठाये।

यह सब कहते हुए लक्ष्मी दी ने अचानक सती के दोनों हाथ पकड़ लिए, फिर कहा — मेरी बात मान ले। मैंने जो गलती की है, तू भी वही गलती मत कर! हर सास ऐसा कहती है, लेकिन कोई सास हमेशा नहीं रहती। फिर जब तेरे बाल-बच्चे होंगे, घर भरा-पूरा बन जायेगा, तब तू कहेगी कि दीदी ने कभी सही कहा था! तुझे सुखी देखने पर मुझे भी सुख मिलेगा। मुझे तो जिन्दगी में सुख नहीं मिला, लेकिन तू अगर सुखी होती है तो उसी में मेरा भी सुख है।

दीदी की ये बातें सुनती हुई सती न जाने कैसी हो गयी। उसने दीदी की छाती में अपना मुँह छिपा लिया।

दोनों बहनों की उस दिन की वह तस्वीर आज भी दीपंकर के मानस-पटल पर बनी हुई है। अब भी वह आँखें बंद करता है तो वही तस्वीर उसके मन की आँखों के आगे उभड़ने लगती है।

थोड़ी देर बाद काशी बुलाने आया था। दफ्तर जाने का समय हो गया था। झटपट नीचे जाकर खाना खाकर जब वह दुबारा ऊपर आया था तब भी उसने दोनों बहनों को उसी हालत में देखा था। दोनों बहनें एक-दूसरी से लिपटी हुई थीं। लक्ष्मी दी की छाती में सिर गड़ा कर सती रो रही थी।

दीपंकर दफ्तर जाने के लिए कपड़े पहनकर एकदम तैयार होकर आया था। उसने कमरे में आकर कहा था — फिर मैं जा रहा हूँ लक्ष्मी दी, मेरे दफ्तर जाने में देर हो रही है।

लक्ष्मी दी बोली — अब मैं भी ज्यादा देर नहीं रुक सकूँगी दीपू मैं तो बिना शम्भु को खिलाये ही चली आयी हूँ। अपने घर में मैं भी तो अकेली ही हूँ ....

दीपंकर बोला — फिर आप उसे समझा-बुझाकर ससुराल भेज दीजिए न। आप टैक्सी से उसे एकदम उसके घर तक पहुँचाकर तभी अपने घर जाइएगा।

फिर जेब से दस रुपये का नोट निकालकर दीपंकर बोला — यह रुपया रख लीजिए। बाद में सारी बातें होंगी। सती खाना खाकर यहाँ से जायेगी, उसे बिना खिलाये जाने मत दीजिएगा ....

दफ्तर जाने के लिए नीचे जाकर दीपंकर ने काशी को बुलाया। काशी पास आया तो दीपंकर बोला — ठीक से खाने को देना, भरपेट खिलाना, न कहने पर भी मत सुनना ....

फिर घड़ी की तरफ देखकर दीपंकर चौंका। इतनी देर हो गयी है! सड़क पर निकलकर उसे एक बात याद आयी। कल ही तो माँ की चिट्ठी आनी चाहिए! आज शायद स्टेशन पर उतरते ही माँ चिट्ठी छोड़ेगी। पहुँचने की खबर देने के लिए माँ चिट्ठी लिखेगी। सकुशल पहुँचने की खबर मिलना भी तो जरूरी है।

काशी बाहरवाला दरवाजा बन्द करने आया था।

सहसा दीपंकर लौटा। उसने काशी से कहा — तू यहीं रह, मैं एक चीज भूल गया हूँ ....

दीपंकर मकान के अन्दर आकर सीढ़ी से ऊपर गया। सती लक्ष्मी दी की गोद में मुँह छिपाये पड़ी थी। दीपंकर को देखकर लक्ष्मी दी बोली — क्या हुआ? तू लौट क्यों आया?

दीपंकर बोला — आपके पिताजी को खत तो लिखा नहीं गया! एक चिट्ठी लिख देतीं तो दफ्तर जाते समय मैं डाकबक्से में छोड़ देता।

लक्ष्मी दी बोली — हाँ, कागज और लिफाफा दे ....

दीपंकर ने चिट्ठी लिखने के लिए कलम, पैड और लिफाफा दिया। लक्ष्मी दी ने सती को अपनी गोद से उठाकर उससे कहा — ले, पिताजी को चिट्ठी लिख दे। मेरे बारे में कुछ मत लिखना, तू अपनी ही तकलीफ के बारे में लिख। लिख दे कि चिट्ठी मिलते ही वे चले आयें! और ज्यादा कुछ लिखने की जरूरत नहीं है। ज्यादा लिखने पर वे अकारण परेशान होंगे।

सती पैड लेकर चिट्ठी लिखने लगी। फिर उसने चिट्ठी अन्दर रखकर लिफाफा बन्द कर दिया।

लक्ष्मी दी बोली — तूने लिख दिया है न कि तुझे यहाँ बहुत तकलीफ है और वे आकर तुझे ले जायें।

सती बोली — हाँ ....

लक्ष्मी दी बोली — यही ठीक है। ये कुछ दिन तू तकलीफ करके रह ले। फिर पिताजी के आ जाने पर कोई चिंता नहीं रहेगी। इतनी-सी बात के लिए इतना घबड़ाने से कैसे काम चलेगा? अगर तू मेरी हालत में होती तो पता नहीं क्या करती!

दीपंकर की तरफ देखकर लक्ष्मी दी बोली — तू जा दीपू, तेरे दफ्तर जाने में शायद देर हो गयी है। मैं उसे उसके घर पहुँचा कर ही जाऊँगी ....

फिर दीपंकर वहाँ नहीं रुका था। चिट्ठी लेकर वह सीधे दफ्तर चला गया था।

उसी दिन दफ्तर में रॉबिन्सन साहब का फेअरवेल था। दीपंकर ने भी चंदा दिया था। मिस्टर घोषाल सब इंतजाम कर रहा था। ट्रैफिक ऑफिस के हर सेक्शन के सुपरवाइजर को बुलाकर मिस्टर घोषाल ने चंदा वसूला था। के० जी० दास बाबू और रामलिंगम बाबू हर सेक्शन से चंदा इकट्ठा कर मिस्टर घोषाल को दे आये थे। यूरोपियन इन्स्टीट्यूट में मीटिंग होगी। खाने का आर्डर दिया जा चुका था। एजेंट खुद भी रहेगा। क्रॉफोर्ड साहब रहेंगे। मिस्टर घोषाल रहेगा। डिपार्टमेंट के सब बड़े-बड़े अफसर रहेंगे। साहबों:के लिए एक तरह का और क्लर्कों के लिए दूसरी तरह का खाना होगा। मीनू में सब कुछ तय कर दिया गया था।

दफ्तर के काम का सारा बोझ दीपंकर पर था क्योंकि रॉबिन्सन साहब तो कई दिनों से नहीं आ रहा। उसका सारा काम मिस्टर घोषाल के टेबिल पर आकर जमा था मिस्टर घोषाल खुद 'फेअरवेल' को लेकर व्यस्त था। इसलिए उसका सारा काम दीपंकर की मेज पर आ गया था।

कमरे में घुसते ही मधु ने सलाम किया। कहा — हुजूर, घोषाल साहब दो बार ढूँढ़ने आये थे।

— क्यों ? कुछ कहा था।

मधु बोला — जी नहीं।

दीपंकर ने घड़ी की तरफ देखा। दफ्तर आने में पूरी आधा घन्टा देर हुई थी। एकदम घर के पास से सीधे टैक्सी से आना पड़ा था। गांगुली बाबू बहुत दिन से कह रहा था — अब एक कार ले लीजिए सेन बाबू। अब आपका इस तरह आना अच्छा नहीं लगता ....

दीपंकर ने कहा है — कार लेकर क्या होगा गांगुली बाबू। मैं गरीब घर का लड़का हूँ, मुझे उतनी रईसी सहन न होगी।

— लेकिन रुपया तो आपका लग नहीं रहा है। दफ्तर से ही आपको छः हजार रुपये एडवान्स मिलेगा ! इसपर भी अगर आप कार नहीं खरीदेंगे तो लोग आपको कंजूस न कहेंगे ? ऐसे ही लोग कहते हैं कि आप रुपया इकट्ठा कर रहे हैं। इसके अलावा अब तो आपका प्रोमोशन भी हो रहा है, इस पर भी आप कार नहीं खरीदेंगे तो यह सचमुच बुरा लगेगा।

दीपंकर ने गांगुली बाबू की तरफ देखा था, गांगुली बाबू को देखकर उसे बड़ी दया आयी थी। दीपंकर की पोस्ट अगर गांगुली बाबू को मिल जाती तो शायद वह सचमुच सुखी होता।

—मेरे सेक्शन में ग्रेड ही नहीं है। सभी ग्रेड एस्टैब्लिशमेंट सेक्शन ने ले लिये हैं।

—कैसे ले लिये ?

के० जी० दास बाबू बोला—जी, यह मैं कैसे बताऊँगा, सब कुछ एस्टैब्लिशमेंट सेक्शन के हाथ में है। वे लोग चाहें तो ह्वाइट को ब्लैक कर सकते हैं और ब्लैक को ह्वाइट। उन लोगों ने ऊपरवालों को समझाया है कि जर्नल सेक्शन सबसे अनइम्पॉर्टेन्ट सेक्शन है, इसलिए पहले जो दो ग्रेड थे, वे भी अब नहीं रहे।

बहुत सोचने के बाद दीपंकर ने पूछा था—हाँ, एक बात है। गांगुली बाबू को क्या ट्रैफिक में ट्रान्सफर नहीं किया जा सकता ?

के० जी० दास बाबू ने कहा था—वहाँ तो वैकेन्सी भी नहीं है, अगर वैकेन्सी हो तो आप कोशिश कर सकते हैं।

दीपंकर ने कहा था—ठीक है, आप जाइए। गांगुली बाबू के बारे में आप मुझे बढ़िया नोट दीजिए, उसमें लिखिए कि गांगुली बाबू बड़े एफिशियेंट आदमी हैं। उसके बाद मैं देखूंगा कि क्या कर सकता हूँ....

बहुत दिन बाद बहुत कोशिश करके दीपंकर ने उस गांगुली बाबू को ग्रेड दिलवाया था, लेकिन गांगुली बाबू उस समय सभी ग्रेडों के ऊपर चला गया था। आज दीपंकर बहुत दूर से उन दिनों की बातें सोचना चाहकर भी चिताओं की भीड़ में लापता हो जाता है। और क्या सिर्फ वही एक गांगुली बाबू वैसा था ? पूरा दफ्तर ही मानो वैसे लाचारों का एक गिरोह बना हुआ था। उस गिरोह के साथ मानो सभी बँधे हुए थे। सबके भविष्य, वर्तमान और अतीत मानो दीपंकर की चिंता के विषय बन गये थे। वह किसी का भी उपकार नहीं कर सका। वह किसी का भला नहीं कर सका। कानून की जंजीर से उन लोगों ने मानो उसके हाथ-पाँव जकड़ दिये थे। फिर भी वैकेन्सी न रहने पर भी ट्रान्सफर हुआ और न सैंक्शन होने पर भी ग्रेड प्रोमोशन हुआ। न जाने किसके गुप्त इशारे पर किसी का भाग खुला और किसी का भाग फूटा। उतने दिन नौकरी करने के बाद भी दीपंकर यह सब समझ नहीं सका था। और भी बहुत दिन तक नौकरी करने पर शायद वह समझ नहीं सकता था।

गांगुली बाबू ने ही अफसोस किया था और कहा था—अब आप भी क्या करेंगे सेन बाबू, आपने तो हर तरह से मेरे लिए कोशिश की। मेरा भाग्य ही खोटा हो तो आप क्या करेंगे।

दीपंकर ने फिर भी कोशिश की। रॉबिन्सन साहब से उसने नोट दिलवाया। लेकिन एस्टैब्लिशमेंट से वह ज्यों का त्यों लौट आया है, वही नो वैकेन्सी। या, नो ग्रेड एट प्रेजेन्ट रिमार्क के साथ अंत तक कुछ भी नहीं हो सका।

जीवन भर दीपंकर ने बहुत कुछ करने की इच्छा की थी। उसने बहुत कुछ

र करना चाहा था। सिर्फ स्टाफ की स्थिति में ही सुधार नहीं। ट्रेन क्यों समय
ही आती ? ट्रेन क्यों समय से नहीं पहुँचती ? सबेरे आठ बजे के बाद ट्रेन हावड़ा
न पर पहुँचने से टी० ए० मिलता है। लेकिन ट्रेन पहुँच रही है सात बजकर
पन मिनट पर। इससे तो अफसर का टी० ए० नहीं बनेगा। इससे उसे साढ़े आठ
पये का नुकसान है और इसीलिए वे अचानक एलार्म चेन खींच देते हैं। अब कौन
रेगा उनके खिलाफ रिपोर्ट ? किसमें है इतना साहस ?

कमरे में घुसते ही दीपंकर ने मधु को बुलाया। कहा — देख तो मिस्टर
घोषाल कमरे में है या नहीं।

किसी-किसी दिन मिस माइकेल कमरे में घुसती है तो निकलना ही नहीं
चाहती। रॉबिन्सन साहब दफ्तर नहीं आता तो मेमसाहब के पास भी कोई काम
नहीं रहता।

वह कहती है — मे आइ कम इन सेन ?

मिस माइकेल की उम्र कम नहीं है। फिर भी उसकी हँसी वैसी ही मीठी
है। वैसी ही मीठी है लिपस्टिक और वैसा ही मीठा है उसका फीगर। हँसती हुई वह
कमरे में आती है।

— आज इतनी देर क्यों हो गयी मिस्टर सेन ?

फिर ढेर सारी इधर-उधर की बातों के बाद वह कहती है — तुम सुनकर खुश
होगे सेन, मैं अमेरिका जा रही हूँ।

— अरे कब ?

विवियन ने मुझे चिट्ठी लिखी है मिस्टर सेन। एवरीथिंग इज़ रेडी। हाँ, जरा
देखो तो, आज मैं ब्यूटिफुल लग रही हूँ कि नहीं ?

दीपकर उसपर अच्छी तरह निगाह डालकर कहता है — आज तुम बहुत खूब-
सूरत लग रही हो। रियली हैंडसम। क्या बात है ?

इस तरह की बात करने पर मिस माइकेल बहुत खुश होती है। बहुत खूबसूर
लग रही हो कहने पर वह खुशी से फूल उठती है। उसे खूबसूरत कहने पर वह मा
अपना सब कुछ दे दे सकती है।

मिस माइकेल कहती है — मैंने दफ्तर से तीन हजार रुपये लोन लिया
मिस्टर सेन। उस रुपये से मैंने अपना बाल कर्ल कराया है, यह देखो फ्रांस से क
टिक्स मँगाया है, एक गर्ल मैसेजिस्ट रखी है, जिसे महीने में हड्रेड चिप्स देती
और कितना करूँगी। हाँ, यह तो बताओ, मैं कैसी सुन्दर लग रही हूँ ?

दीपंकर ने कहा — तुम्हारी तरह सुन्दरी मैंने कभी अपने जीवन में नह
सिर्फ तस्वीर में देखी है ....

मिस माइकेल इससे भी खुश नहीं होती। पूछती है — क्या मैं क्ला

—मेरे सेक्शन में ग्रेड ही नहीं है। सभी ग्रेड एस्टैब्लिशमेंट सेक्शन ने ले लिये हैं।

—कैसे ले लिये ?

के० जी० दास वावू वोला—जी, यह मैं कैसे बताऊँगा, सब कुछ एस्टैब्लिशमेंट सेक्शन के हाथ में है। वे लोग चाहें तो ह्वाइट को ब्लैक कर सकते हैं और ब्लैक को ह्वाइट। उन लोगों ने ऊपरवालों को समझाया है कि जर्नल सेक्शन सबसे अनइम्पॉर्टेन्ट सेक्शन है, इसलिए पहले जो दो ग्रेड थे, वे भी अव नहीं रहे।

वहुत सोचने के वाद दीपंकर ने पूछा था—हाँ, एक वात है। गांगुली वावू को क्या ट्रैफिक में ट्रान्सफर नहीं किया जा सकता ?

के० जी० दास वावू ने कहा था—वहाँ तो वैकेन्सी भी नहीं है, अगर वैकेन्सी हो तो आप कोशिश कर सकते हैं।

दीपंकर ने कहा था—ठीक है, आप जाइए। गांगुली वावू के वारे में आप मुझे वढ़िया नोट दीजिए, उसमें लिखिए कि गांगुली वावू वड़े एफिशियेंट आदमी हैं। उसके वाद मैं देखूँगा कि क्या कर सकता हूँ....

वहुत दिन वाद वहुत कोशिश करके दीपंकर ने उस गांगुली वावू को ग्रेड दिलवाया था, लेकिन गांगुली वावू उस समय सभी ग्रेडों के ऊपर चला गया था। आज दीपंकर वहुत दूर से उन दिनों की वातें सोचना चाहकर भी चिंताओं की भीड़ में लापता हो जाता है। और क्या सिर्फ वही एक गांगुली वावू वैसा था ? पूरा दफ्तर ही मानो वैसे लाचारों का एक गिरोह वना हुआ था। उस गिरोह के साथ मानो सभी वँधे हुए थे। सवके भविष्य, वर्तमान और अतीत मानो दीपंकर की चिंता के विपय वन गये थे। वह किसी का भी उपकार नहीं कर सका। वह किसी का भला नहीं कर सका। कानून की जंजीर से उन लोगों ने मानो उसके हाथ-पाँव जकड़ दिये थे। फिर भी वैकेन्सी न रहने पर भी ट्रान्सफर हुआ और न सैंक्शन होने पर भी ग्रेड प्रोमोशन हुआ। न जाने किसके गुप्त इशारे पर किसी का भाग खुला और किसी का भाग फूटा। उतने दिन नौकरी करने के वाद भी दीपंकर यह सव समझ नहीं सका था। और भी वहुत दिन तक नौकरी करने पर शायद वह समझ नहीं सकता था।

गांगुली वावू ने ही अफसोस किया था और कहा था—अव आप भी क्या करेंगे सेन वावू, आपने तो हर तरह से मेरे लिए कोशिश की। मेरा भाग्य ही खोटा हो तो आप क्या करेंगे।

दीपंकर ने फिर भी कोशिश की। रॉविन्सन साहव से उसने नोट दिलवाया। लेकिन एस्टैब्लिशमेंट से वह ज्यों का त्यों लौट आया है, वही नो वैकेन्सी। या, नो ग्रेड एट प्रेजेन्ट रिमार्क के साथ अंत तक कुछ भी नहीं हो सका।

जीवन भर दीपंकर ने वहुत कुछ करने की इच्छा की थी। उसने वहुत कुछ

दीपंकर ने कहा — क्लारा वो को तो मैंने देखा नहीं ....

— लिलियन गिश को देखा है ?

दीपंकर इनका नाम भी नहीं जानता। वह सिनेमा देखता ही नहीं तो भला कैसे जानेगा ! पता नहीं मिस माइकेल और क्या-क्या कह गयी। एक-एक कर कितने ही नाम उसने गिनाये ! अब तो कलकत्ता शहर सिनेमाघरों से भर गया है। ग्रेटा गार्बो, जेनेट गेइनर, इस तरह और भी न जाने कितने नाम हैं। लेकिन दीपंकर किसी को नहीं जानता।

मिस माइकेल ने कहा — विवियन की चिट्ठी देखोगे ? मैं लायी हूँ मिस्टर सेन !

कहकर मिस माइकेल ने इस तरह बैग से चिट्ठी निकाली, मानो वह बहुत ही कीमती चीज हो, कोई बहुमूल्य रत्न है। कितने जतन से मिस माइकेल ने उसे रखा था। यह उसका कितने ही दिनों का स्वप्न था। यह उसके जीवन की बहुत बड़ी साध थी। विवियन ले उसका रूम-मेट था। उसी ने उसे अमेरिका बुलाया था। इंडिया के रेल दफ्तर में अब उसे नौकरी नहीं करनी पड़ेगी। अमेरिका ही उसका स्वर्ग है और वहीं उसका सुख है। दीपंकर ने उसके चेहरे की तरफ देखा। दीपंकर को बड़ी खुशी हुई। गांगुली बाबू को जीवन में सुख नहीं मिला, लेकिन मिस माइकेल को तो मिला। सुखी लोगों को देखने से भी सुख मिलता है।

दीपंकर बोला — वहाँ जाकर मुझे भूल मत जाना मिस माइकेल।

— नहीं, नहीं, तुम क्या कह रहे हो सेन ? अमीर बन जाऊँगी तो क्या सबको भूल जाऊँगी ? जानते हो, यू आर दि ओनली इंडियन जिसे मैं पसंद करती हूँ। तुम मेरे घर गये थे, फिर भी तुम उस मुहल्ले में दोबारा नहीं गये। लेकिन मिस्टर घोषाल ....

— क्या मिस्टर घोषाल अब भी तुम्हारे मुहल्ले में जाता है ?

मिस माइकेल बोली — रोज ! वह डेली जाता है और मैं ही उसे एनटर्टेन करती हूँ। आइ कांट रिफ्यूज। ही इज ए बीस्ट !

ढेर सारा काम रहने पर भी मिस माइकेल से बातें करनी पड़ती हैं। दीपंकर बातें न करे तो मिस माइकेल को तकलीफ होगी। दीपंकर भी किसी को तकलीफ देना नहीं चाहता। इसलिए मिस माइकेल भी मौका पाते ही चली आती है और थोड़ी देर बातें करके चली जाती है। दीपंकर को कहना पड़ता है कि मिस माइकेल अपूर्व सुन्दरी है। अगर सुन्दरी है तो किससे ज्यादा सुन्दरी। क्लारा वो, विवियन गिश, जेनेट गेइनर या ग्रेटा गार्बो, वह किससे ज्यादा सुन्दरी है। किसकी तरह उसकी भौंहें हैं। किससे उसका फीगर मेल खाता है और किससे उसके होंठ मिलते-जुलते हैं। इसी तरह और भी बहुत कुछ। मिस माइकेल मानो शिशु जैसी सरल है। मानो मोम जैसी मुलायम ! उसे देखकर दीपंकर को विन्ती दी की बात याद पड़ती है। ऐसी ही शिशु की तरह

विन्तो दी। इसी तरह वह भी पूछती थी कि वह सुन्दर है कि नहीं।

उस दिन मधु के लौटने से पहले ही मिस्टर घोपाल कमरे में आया। बाहर से आवाज मिलते ही दीपंकर समझ गया था कि मिस्टर घोपाल आ रहा है। गज दूर से मिस्टर घोपाल के जूते की आवाज मिल जाती है।

—यू आर लेट टु-डे सेन!

कुर्सी पर पाँव रखकर मिस्टर घोपाल चुरुट पीने लगा। कैफियत तलब करने तरह उसकी आवाज सुनाई पड़ी।

दीपंकर बोला—येस, मैं लेट हूँ।

—नहीं, नहीं, मैं यह नहीं कह रहा हूँ। रॉबिन्सन साहब तुम्हें ढूँढ रहा था। ही बैडली नीडेड यू।

दीपंकर बेचैन हो उठा। बोला—कहाँ हैं? वे कहाँ हैं? क्या दफ्तर आये हैं?

मिस्टर घोपाल बोला—नहीं, नहीं, यहाँ नहीं आये। मैं उनके बंगलो पर गया था। रॉबिन्सन साहब का क्या दोष है जानते हो, बड़ा गुडनेचर्ड आदमी हैं, वेरी माइ डियर—न जाने कब मैंने मजाक किया था, आज भी उसी पर विश्वास करता है कि आइ ऐम ए साउथ इंडियन। मैं भी उसकी गलतफहमी दूर नहीं करता....

यह कहकर मिस्टर घोपाल ने चुरुट का कश खींचा और ढेर-सारा धुआँ छोड़ा।

फिर मिस्टर घोपाल बोला—रॉबिन्सन मुझसे पूछ रहा था कि व्हेयर इज सेन? मैं इतने दिन से घर पर हूँ तुम रोज आते हो घोपाल, लेकिन सेन एक बार भी नहीं आया। ओल्ड मैन तुम पर बहुत नाराज है।

दीपंकर बोला—अगर वे मुझे न बुलायें तो मैं कैसे जा सकता हूँ बताइए? लोग कहेंगे कि मैं प्रोमोशन के लिए उनकी खुशामद करने जा रहा हूँ।

—एक्जैक्टली सो। तुमने ठीक किया है कि तुम नहीं गये। ओल्ड मैन तुमको किसी तरह प्रोमोशन नहीं देगा और मैं भी नहीं छोड़ूँगा—सेन इज क्वाइट आल-राइट! आखिर बड़ी मुश्किल से मैंने उस बूढ़े को राजी किया। आखिर उसने क्रॉफोर्ड को लिखकर दे ही दिया।

—मेरे प्रोमोशन के लिए? दीपकर अवाक् रह गया।

मिस्टर घोपाल ने कहा—हाँ, तुम्हारे बारे में क्रॉफोर्ड साहब के पास न गया है। तुम मेरी जगह प्रोमोटेड होगे। तुमको मुझे धन्यवाद देना चाहिए। तु मेरे आगे ग्रेटफुल रहना चाहिए।

दीपंकर बोला—लेकिन मैं तो प्रोमोशन नहीं चाहता सर!

—क्या कहते हो सेन? आर यू आलराइट?

मानो मिस्टर घोपाल के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। चुरुट की राख

टेबिल पर गिरी। मिस्टर घोपाल बोला — यह तुम क्या कह रहे हो? प्रोमोशन नहीं चाहते? यू डोंट वांट प्रोमोशन?

दीपंकर बोला — जी हाँ।

फिर भी मिस्टर घोपाल को मानो विश्वास नहीं हुआ। वह बोला — ऐम आइ टु बिलीव यू? सचमुच तुम प्रोमोशन नहीं चाहते?

दीपंकर बोला — जी हाँ। प्रोमोशन से क्या होगा? प्रोमोशन पाकर मैं किसका भला कर सकूँगा? मुझसे कितने अच्छे क्लर्क्स इस दफ्तर में हैं, उनका तो प्रोमोशन नहीं होता! वे चुपचाप मन लगाकर काम करते हैं, अफसरों की खुशामद नहीं करते, इसीलिए उन पर किसी की निगाह नहीं पड़ती। पास-क्लर्क हरीश बाबू का प्रोमोशन होता है। प्रोमोशन होता है के० जी० दास बाबू, रामलिंगम बाबू और निवारण बाबू का! क्योंकि वे लोग बैक-बाइट और एक्सप्लॉयट करते हैं। और हमलोग? हमलोग अपनी जरूरत के समय क्लर्कों को रसगुल्ला-कचौरी घूस देकर उनसे काम निकालते हैं। क्या यही जस्टिस है? क्या यही कानून है? क्या यही ऑनेस्टी है?

यह सब कहता हुआ दीपंकर अचानक अपने को भूल गया। वह एकाएक उत्तेजित हो उठा। घोपाल साहब आश्चर्य से दीपंकर की बातें सुनता रहा। दीपंकर के रुकते ही वह बोला — क्या तुम प्रोमोशन नहीं चाहते? सही कह रहे हो? क्या तुम रुपया नहीं चाहते?

दीपंकर बोला — नहीं। मैं रुपया नहीं चाहता। रुपये से क्या होता है! रुपये से कुछ भी नहीं होता मिस्टर घोपाल। मेरी एक सिस्टर है, बड़े अमीर के घर उसकी शादी हुई है, उसका बाप भी बड़ा अमीर है और उनके पास गाड़ी, मकान, दरबान और जमींदारी सब कुछ है। उनके पास बहुत रुपये हैं, रुपये की थाह नहीं है। फिर भी मेरी सिस्टर सुखी नहीं है। जानते हैं मिस्टर घोपाल, लाखों लाख रुपये देकर भी किसी को सुखी नहीं किया जा सकता। आज सबेरे वह मेरे घर चली आयी है — ससुराल से भागकर चली आयी है।

— वह कौन है?

कहना न चाहकर भी दीपंकर ने कह दिया — मिसेज घोष, आप उनको जानते हैं।

मिस्टर घोपाल ने चुरुट को ठीक से पकड़ लिया। एकाएक कुर्सी पर बैठकर वह बोला — ह्वाट डू यू मीन?

मिस्टर घोपाल का आग्रह देखकर उस दिन दीपंकर की घृणा सौ गुनी बढ़ गयी थी। दीपंकर को यह आज भी अच्छी तरह याद है।

मिस्टर घोपाल ने पूछा — वह क्यों भाग आयी है? क्या हुआ था?

दीपंकर बोला — वह लंबी कहानी है, आप समझ नहीं पायेंगे। उतना रुपया उतना बड़ा खानदान है, लेकिन सुख जरा भी नहीं है। इसीलिए मैं आपसे कह रहा

लेकिन चिट्ठी पढ़ते ही दीपंकर के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। सती ने लिखा है ....

पूज्य पिताजी,

बहुत दिन हो गये आपको मैं चिट्ठी नहीं लिख सकी। आप मेरे लिए चिंतित न हों। मुझे यहाँ कोई तकलीफ नहीं है। फिलहाल हम लोग कई महीने के लिए बाहर घूमने जा रहे हैं। इसलिए मैं समय से आपको चिट्ठी नहीं लिख सकूँगी। आप परेशान तो नहीं होंगे? आशा है, आप सकुशल हैं। प्रणाम लीजिए।

आपकी सती

न जाने दीपंकर को क्या हो गया। उसने चिट्ठी को फाड़कर वेस्टपेप-रवास्केट में फेंक दिया। मधु अब भी खड़ा था। वह खड़ा-खड़ा सेन साहब का तमाशा देख रहा था। उसकी तरफ निगाह जाते ही दीपंकर बोला — अब चिट्ठी छोड़ने की जरूरत नहीं है, तू जा ....

अचानक द्विजपद कमरे में आया। बोला — हुजूर, रॉबिन्सन साहब ने आपको सलाम बोला है ....

दीपंकर चौंका। बोला — कहाँ हैं? ऑफिस में या बँगले पर?

— बँगले पर।

दीपंकर झटपट उठकर बाहर चला गया।

रॉबिन्सन साहब के फेअरवेल के दिन की बात दीपंकर को साफ-साफ याद है। नृपेन बाबू के फेअरवेल के दिन जैसा इंतजाम हुआ था, वैसा ही उस दिन भी हुआ था। लेकिन आज प्रबंध अधिक व्यापक था। धूम-धड़क्का ज्यादा। सभी साहब और सभी क्लर्क आये थे। सबने चंदा दिया था। इसी चहल-पहल में दीपंकर के प्रोमोशन की बात भी फैल गयी थी। तभी से दफ्तर भर के क्लर्क उसकी तरफ उँगली से इशारा करने लगे थे। जूनियर ऑफिसर लोग काँग्रैचुलेट भी करने लगे थे।

सारे समय दीपंकर काठ बना कुर्सी पर चुपचाप बैठा रहा था। किसने भाषण किया और किसने क्या कहा, यह सब उसके कानों में नहीं गया। क्यों ऐसा हुआ? ऐसा दीपंकर को ही क्यों होता है और दस जनों की तरह वह भी क्यों हर चीज को सहज ढंग से ग्रहण नहीं कर पाता?

रॉबिन्सन साहब की बातें मानों उस समय भी उसके कानों में गूंज रही थीं।

अपने बँगले में बैठे रॉबिन्सन साहब ने कहा था — मैं सबकी इच्छा के विरुद्ध तुम्हें प्रोमोशन दे रहा हूँ सेन, यू मस्ट ऐक्सेप्ट इट। यू मस्ट ....

साहब की बातें सुनता हुआ दीपंकर सिहरने लगा।

साहब ने फिर कहा — आज घोपाल ने तुम्हारे खिलाफ बहुत कुछ कहा। घोपाल इज ए साउथ इंडियन, मैं उस पर विश्वास करता हूँ, लेकिन उसकी भी बात मैंने नहीं मानी। तुम तो जानते ही हो कि घोपाल इज फ्रेंडली टु ब्रिटेन, उन्नीस सौ

ाम की स्ट्राइक के समय उसने इंगलैंड में सर्विस की थी, फिर भी मैं उसकी बात
नहीं सका। मैंने तुम्हारे बारे में क्रॉफोर्ड साहब को नोट दिया है। आइ विश यू
सिन ऐंड हैपिनेस...

अब दीपंकर बोला — लेकिन सर, व्हाई? व्हाई दिस मच ऑफ फेवर?

— बिकॉज यू डिजर्व इट। यू आर इंटेलिजेंट ऐंड एफिशियेंट....

दीपंकर बोला — आप नहीं जानते सर, मेरी तरह हजारों हजार इंटेलिजेंट
और एफिशियेंट लोग हमारे रेलवे में हैं लेकिन उनका तो प्रोमोशन नहीं होता।
उनकी तरफ कोई नहीं देखता। मुझसे भी ज्यादा इंटेलिजेंट कई लोग हैं और कई
तो मुझ से भी ज्यादा एजुकेटेड पड़े हैं...

रॉबिन्सन साहब दीपंकर की बात सुनकर दंग रह गया। बोला — इम्पॉसिबिल
ऐसा नहीं हो सकता। मैं अपने दफ्तर में सबको जानता हूँ। सबकी योग्यता मुझे
मालूम है। मेरा जितनी उन लोगों से ज्यादा इंटेलिजेंट था — पूअर साल।

यह कहते हुए साहब ने दोनों हाथ क्रॉस की तरह छाती पर रखे। उसके बाद
साहब को न जाने क्या हो गया। वह बोला — दि रस्कल्स आर वर्स देन वॉस्टर्स।
मिस्टर घोषाल ने मुझसे सब कहा है। वह कभी झूठ नहीं बोलता — ही इज ए
साउंड इंडियन।

दीपंकर बोला — लेकिन सर, मैं प्रोमोशन नहीं चाहता। मुझे प्रोमोशन की
जरूरत नहीं है। मुझे जो तनख्वाह मिल रही है, मैं तो उसी के लायक नहीं हूँ।

— तुम क्या कह रहे हो सेन?

दीपंकर बोला — मेरी बात पर विश्वास कीजिए सर, मैं आपके स्नेह के
योग्य भी नहीं हूँ....

साहब अवाक् हो गया। बोला — क्यों?

दीपंकर को शुरू में जरा दुविधा हुई। फिर उसने सिर ऊँचा करके कहा —
आज मैं आपसे बता रहा हूँ, ट्रैफिक सुपरिंटेंडेंट नृपेन बाबू को तीस रुपये घूस देकर
मुझे यहाँ नौकरी मिली थी। वह रुपया और वह कलंक मैं जिन्दगी में कभी
नहीं सकूँगा।

साहब नृपेन बाबू का नाम सुनकर अवाक् हो गया। दि नाटोरियस स्का...
साहब ने बहुत कुछ कहकर अदृश्य नृपेन बाबू को गंदी गालियाँ दीं।

साहब बोला — मैं तो नृपेन बाबू को भला आदमी समझता था, लेकिन
हो अन्दर वह भी एक शैतान निकला

— शायद घूस मैंने अकेले नहीं दी... शायद इस दफ्तर के...
परमेंट लोग घूस देकर नौकरी में आये हैं... लेकिन मेरा मन पर...
की घूस भारी चट्टान की तरह पड़ा हुआ है। वह बात याद करते...
ठग हैं, दगाबाज हैं और स्काउंड्रेल हैं। ...

काँपता है और मैं सोचता हूँ कि मैं रेलवे को ठग रहा हूँ।

साहब ने देर तक दीपंकर की वातें सुनीं और उसके वाद कहा — फॉरगिव एंड फॉरगेट सेन — भगवान नृपेन को सजा देगा।

दीपंकर वोला — नहीं सर, मैंने देखा है कि उसी नृपेन वावू ने रिटायर होने के वाद घूस के पैसे से वहुत बड़ा दुमंजिला मकान वनवाया है, वे रोज कालीघाट के मंदिर में जाते हैं, रोज गंगा नहाते हैं, उनके लड़के वड़े हो गये हैं और सव वड़ी वड़ी नौकरियाँ कर रहे हैं। नृपेन वावू खूव हैपी लाइफ लीड कर रहे हैं। भगवान ने उनको कोई सजा नहीं दी।

साहव वोला — यू वेट एंड सी, लेकिन तुम प्रोमोशन क्यों नहीं चाहते? क्या तुम्हें सुखी होना पसंद नहीं है? क्या तुम कम्फर्ट और लग्जरी नहीं चाहते?

अव दीपंकर चुप हो रहा। साहव को यह समझाना वेकार था कि राजा के वेटे सिद्धार्थ को क्या अभाव था कि वह सारा सुख और सारा ऐश्वर्य छोड़कर जंगलों और पहाड़ों पर घूमता फिरा। अलेक्जेंडर को किस चीज की कमी थी कि अचानक उसे दुर्गम पहाड़-नदी-जंगल पार कर दिग्विजय पर निकलने की इच्छा हुई थी? राज्य और सिंहासन का आराम छोड़कर कोई क्यों इस तरह घर छोड़ता है? क्या रुपये के लिए? ख्याति, शांति या सुख के लिए? दीपंकर जब स्वयं ही ठीक से नहीं समझ पाया था तो वह साहव को क्या समझाता?

साहव वोला — खैर, मैं नोट लिख चुका हूँ, मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे नोट की इज्जत करो। मिस्टर क्रॉफोर्ड से मैंने वात की है और हम दोनों की राय एक ही है।

साहव के फेअरवेल की सभा में वैठे-वैठे दीपंकर वे ही सव वातें सोच रहा था। सचमुच, क्यों ऐसा होता है? जिस नौकरी के लिए कभी उसकी माँ रात-दिन भगवान को पुकारती थी, जिस नौकरी के लिए उसकी माँ ने कालीघाट के कितने ही लोगों की खुशामद की, उसी नौकरी की चोटी पर पहुँचकर आज उसके मन में क्यों ऐसी वितृष्णा पैदा हो गयी है? क्या यह उसका पागलपन है? क्या इसके मूल में भी सती है? क्या इसके मूल में भी लक्ष्मी दी है? क्या इसके मूल में भी अघोर नाना ही हैं? क्या इसके मूल में छिटे-फोंटा भी हैं? वही छिटे-फोंटा जो कांग्रेस के वाइस-प्रेसीडेंट हो गये हैं! जिस कुर्सी पर इतने दिन प्राणमय वावू वैठे थे, क्या उसी कुर्सी पर अव छिटे-फोंटा वैठ रहे हैं? क्या दीपंकर की वितृष्णा के यही सव कारण हैं?

न जाने किस वात पर सवने तालियाँ वजायीं।

दीपंकर फिर सचेत होकर वैठा। इतनी देर वह चिंता की गहराई में खोया हुआ था। अव उसने चारों तरफ देखा। सव लोग उसी को देख रहे हैं। शायद रॉविन्सन साहव इतनी देर तक उसी के वारे में कह रहा था। लेकिन वे वातें उसने नहीं सुनीं। अच्छा ही हुआ! आश्चर्य है, सव उससे ईर्ष्या करने लगे थे। सव उसको

:तरफ देख रहे थे। आज के फेअरवेल समारोह में मानो मिस्टर घोषाल और मिस्टर सेन ही सबके आकर्षण के केन्द्र थे। खैर, मिस्टर घोषाल तो बॉर्न आफिसर है। आफिसर बनकर ही वह यहाँ आया है। लेकिन दीपंकर की तरक्की मानो सबकी आँखों में खटक रही है। इसमें दीपंकर को तकलीफ होने लगी। मानो उसका सारा शरीर दुखने लगा। बिस्मार्क ने जर्मनी को ऊँचा उठाकर जर्मन जाति को नीचा दिखाया था। आज रॉबिन्सन साहब ने दीपंकर को प्रोमोशन देकर मानो सम्पूर्ण मानव जाति को नीचा दिखा दिया!

घर लौटते समय यही बात बारबार दीपंकर के मन में उठने लगी।

बहुत देर बाद अचानक सती की बात याद आयी। शायद सती प्रियनाथ मल्लिक रोड चली गयी हो। शायद उसे देखते ही दरवान ने फाटक खोल दिया हो। शायद उसे पहुँचाकर लक्ष्मी दी अपने घर चली गयी हो।

सती के मकान में फाटक पार करते ही बगीचा है। बगीचा पार करने के बाद बायें हाथ एक कतार में कई कमरे हैं। उसके बाद नौकर-चाकर, दरवान आदि के रहने की जगह है। फिर काफी दूर जाकर बरामदे के आखिरी छोर पर सनातन बाबू की लाइब्रेरी है।

सती वही जाकर एक बार सीढ़ी के सामने खड़ी हुई।

अब वह कहाँ जायेगी? ऊपर अपने कमरे में? क्या सास के पास जाकर वह माफी माँगेगी? कितना घमंड करके निकली थी, क्या इसीलिए वह सास के पाँवों पर माथा रखेगी?

लेकिन सती वैसी लड़की नहीं है।

दीपंकर घर लौटते समय ये ही बातें सोचने में लगा रहा। सचमुच, सती वैसी लड़की नहीं है। उसे जबर्दस्ती ससुराल भेजकर दीपंकर ने शायद गलती ही की थी। अगर उसे दीपंकर अपने घर में रहने देता तो ही ठीक होता। सती को शांति मिलती।

दीपंकर को लगा कि सती धीरे-धीरे लाइब्रेरी के सामने जाकर खड़ी हुई है।

सनातन बाबू रोज की तरह अन्दर बैठे पढ़ रहे हैं। वे कोई मोटी किताब पढ़ रहे हैं। उनकी निगाह किताब के पन्ने पर है। उनको पता भी नहीं चला कि कौन आकर खड़ा हो गया है।

सती धीरे-धीरे अन्दर गयी। उसके बाद बिना कुछ कहे-सुने उसने अचानक सनातन बाबू के पाँव छुए। तुरत सनातन बाबू चौंक उठे। अचानक पाँवों में क्या लगा?

उन्होंने पूछा — कौन? कौन है?

सती कुछ नहीं बोली।

ठीक से देखते ही सनातन बाबू ने सती को देखा। उन्होंने कहा — अरे तुम? देखो तो, इधर तुम्हारी कैसी ढूँढ़ाई मची है। माँ कह रही थी — तुम कहाँ चली गयी

हो ! मैंने कहा — अरे ! वह क्यों कहीं जायेगी । जरूर कहीं घर में ही छिपी होगी। चारों तरफ अच्छी तरह ढूंढ़कर देखो।

सती अब भी कुछ बोल नहीं रही है।

सनातन बाबू बोले — मैं तभी जानता था कि तुम कहीं जा नहीं सकतीं। कहाँ जाओगी तुम ? बताओ न ! मैंने माँ से कहा कि कैलास को अब जरूर कम दिखाई पड़ने लगा है। लेकिन तुम कहाँ थी बताओ न ?

सती बोली — तुमने सचमुच मुझे ढूंढ़ा था ?

— तुम भी क्या कहती हो ! एक बिल्ली या कुत्ता भी घर से चला जाता है तो लोग सोचते-सोचते परेशान हो जाते हैं, और तुम तो इन्सान और घर की बहू हो, कोई तुम्हें कोई क्यों नहीं ढूंढ़ेगा ?

सती इस प्यार से मानो गद्गद हो गयी और बोली — बताओ न, क्या सच-मुच तुम मुझे ढूंढ़ने लगे थे ?

सनातन बाबू बोले — अरे, मैं क्यों ढूंढ़ूंगा, कैलास ढूंढ़ रहा था। मैं इधर पढ़ने में व्यस्त था न !

सती बोली — तुमने नहीं ढूंढ़ा ?

सनातन बाबू बोले — रुको, मैं कैलास को बुलाता हूँ। वह सब जानता है। मैंने उससे कहा कि तुम जरूर यहीं कहीं हो, अच्छी तरह ढूंढे। खैर, उसने माँ से आकर कहा कि बहूदीदी कहीं नहीं है। रुको, मैं कैलास को बुलाता हूँ।

सनातन बाबू उठकर कैलास को बुलाने के लिए जाने लगे।

सती बोली — रहने दो।

— क्यों रहने दूं ? मैं अभी कैलास को बुलाता हूं। तुम खुद उससे पूछो न कि मैंने उससे ढूंढ़ने के लिए कहा था या नहीं ?

सती फिर बोली — नहीं, रहने दो, पूछने की जरूरत नहीं है।

सनातन बाबू कुर्सी पर बैठ गये और बोले — माँ से कहना पड़ेगा।

— क्या कहना पड़ेगा ?

सनातन बाबू बोले — माँ से कहना पड़ेगा कि कैलास कोई काम भी ठीक से नहीं करता।

सती बोली — नहीं, यह कहने की जरूरत नहीं है ! मैं सचमुच चली गयी थी। जब तुम लोग सो रहे थे, तभी रात तीन बजे मैं तुम लोगों का मकान छोड़कर चली गयी थी — तुमलोगों को पता नहीं चला।

सनातन बाबू सिर्फ बोले — अच्छा ....

सती फिर कहने लगी — जिस लड़के को मैंने न्योता दिया था, मैं उसी के घर गयी थी। मैंने सोचा था कि मैं फिर कभी नहीं आऊँगी, तुमलोगों को मैं अपना मुँह कभी नहीं दिखाऊँगी !

मिली ।

सनातन बाबू बोले — अच्छा, इसीलिए तुम कैलास को नहीं मिली ।

सती उसी तरह कहने लगी — मैंने सोचा था कि तुमलोगों के पास तुमलोगों घर की बहू बनकर रहने से सड़क पर रहना हजार गुना अच्छा है । मैंने सोचा था अपने मुँह में कालिख लगाकर तुमलोगों का मुँह भी काला कर दूँगी, तुमलोगों ने जो सजा दी है, तुमलोगों के खानदान का नाम डुबाकर उसका बदला लूँगी और खुद मरकर तुमलोगों को भी मारूँगी ....

फिर सनातन बाबू की तरफ देख कर वह अचानक बोली — क्यों ? किसलिए चुप हो ? कुछ बोलते क्यों नहीं ?

सनातन बाबू मानो अचानक सचेत हो उठे । बोले — क्या कह रही थी, फिर कहो, मैं जरा अनमना हो गया था ....

सनातन बाबू को देखकर मानो अचानक सती को बड़ी घृणा हुई । सनातन बाबू पर मानो बड़ा गुस्सा आया । कैसा है यह आदमी ! क्या यह आदमी पत्थर है ? क्या यह आदमी जानवर है ?

— अच्छा, मैं जो चली गयी थी, उसके लिए तुमलोगों को जरा भी चिंता नही हुई ?

इस बात का जवाब न देकर सनातन बाबू कुर्सी छोड़कर उठे ।

सती ने अचानक उनका हाथ पकड़ लिया और कहा — कहाँ जा रहे हो ?

सनातन बाबू बोले — जाऊँ, माँ से कहूँ ....

— क्या कहोगे ?

सनातन बाबू बोले — सवेरे माँ ने कैलास को बहुत डाँटा था न, इसलिए माँ से जाकर कहूँ कि कैलास का दोष नही है, सती ही घर से चली गयी थी ।

सती बोली — रहने दो, कहने की जरूरत नही है — तुम बैठो । मैं तुम्हीं से बात करने आयी हूँ ।

सनातन बाबू बोले — खैर, मैं बैठ रहा हूँ, लेकिन तुम माँ से मिल चुकी हो न ?

सती बोली — नहीं, उनसे मिलने की जरूरत नही है । मेरी शादी तुमसे हुई है, मेरे पति तुम हो, पहले तुमसे मिल लेना जरूरी है ।

सनातन बाबू बोले — लेकिन मेरे भी ऊपर माँ है — माँ तो मुझसे भी बड़ी है

अब सती से रहा नहीं गया । वह बोली — तो तुम्हारे लिए मुझसे ब
तुम्हारी माँ हो गयी ? मैं कोई नहीं हूँ ?

सनातन बाबू बोले — नही, ऐसा क्यों होगा ?

— फिर ? फिर क्यों तुम बार-बार माँ की बात कर रहे हो ? मेरे बा
तुमको देखकर मेरी शादी की है या तुम्हारी माँ को देखकर ? बताओ, तुम्हें
बताना ही होगा !

सनातन बाबू बोले — यह तो मैं नहीं जानता। रुको, माँ से पूछकर आता हूँ ....

फिर सती से रहा नहीं गया। वह बोली — क्या यह भी तुम्हें माँ से पूछना पड़ेगा ?

सनातन बाबू बोले — माँ से नहीं पूछूंगा तो किससे पूछूंगा ? और कौन जानता है यह सब ?

— क्या तुम खुद नहीं बता सकते ?

सनातन बाबू बोले — मेरे पास इतना सोचने का समय ही कहाँ है। यह देखो न, कई दिन हो गये यह किताब खरीद लाया हूँ, लेकिन अभी तक पूरी नहीं पढ़ सका। कब यह किताब खतम होगी कह नहीं सकता। सवेरे से मैं इसे पढ़ने की कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन एक न एक बाधा आती रही है।

क्या कहे सती समझ नहीं पायी। जरा रुककर वह बोली — मैंने भी तुम्हारे पढ़ने में बाधा डाली। ठीक है, मैं जा रही हूँ।

सनातन बाबू बोले — कहाँ जाओगी ?

— जहाँ गयी थी, वहीं लौट जाऊँगी।

सनातन बाबू बोले — अब क्यों लौट जाओगी, बल्कि चाय-ओय पीकर अपने कमरे में थोड़ा आराम करो, माँ से मिल लो। आज तुम्हारे कारण कैलास पर बहुत डाँट पड़ी है।

सती बोली — अब मेरी वजह से किसी पर डाँट नहीं पड़ेगी, मैं चली जा रही हूँ। अब मैं कभी तुमलोगों के घर लौटकर नहीं आऊँगी। कल मैं बिना कहे चली गयी थी, आज कहकर जा रही हूँ ....

सनातन बाबू बोले — लेकिन मुझसे कहकर जाना ही काफी नहीं है, माँ से भी कहकर जाओ।

सती पलटकर खड़ी हो गयी। बोली — क्या कहा ?

— कहा कि मेरी माँ से कहकर जाओ। कितने बजे लौटोगी, यह भी बता देना, नहीं तो माँ परेशान होंगी।

यह सुनकर सती स्तम्भित हो गयी। वह थोड़ी देर चुपचाप खड़ी सनातन बाबू की तरफ देखती रही। उसके बाद वह अचानक दौड़कर सनातन बाबू के पास गयी और उनके हाथ से मोटी किताब छीनकर उसके पन्नों को टुकड़े-टुकड़े करने लगी। उसे लगा कि जैसे वह सनातन बाबू को ही नाखूनों से चीर-फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर रही है।

सनातन बाबू कुछ नहीं बोले वे चुपचाप अनासक्त दृष्टि से सती का तमाशा देखने लगे।

थोड़ी देर बाद सती मानो अपना काम देखकर स्वयं ही आश्चर्य में पड़ गयी।

उसने सनातन बाबू के चेहरे की तरफ देखा। उस चेहरे पर कहीं विस्मय नहीं है, अभियोग नहीं है, क्रोध नहीं है अनुराग भी नहीं है। सती को अपनी असहाय दशा पर दया आने लगी। उसके बाद वह अचानक सनातन बाबू के वक्ष पर गिर पड़ी और कहने लगी — मुझसे गलती हो गयी है, अन्याय हो गया है, मुझे माफ कर दो। मैं तुम्हारे पाँवों पड़ रही हूँ, मुझे क्षमा कर दो। मैंने आवेश में आकर तुम्हारी किताब फाड़ डाली है, मुझसे बहुत बड़ी गलती हो गयी है। अगर तुम मुझे माफ न कर सको तो डाँटो — सिर्फ एक बार मुझे डाँटो। मुझे क्षमा करने की जरूरत नहीं है, मुझसे प्यार करने की भी जरूरत नहीं है, तुम सिर्फ एक बार मुझे डाँटो। तुमलोगों के घर से बिना कहे चले जाने के लिए डाँटो, तुम्हारी किताब फाड़ देने के लिए डाँटो और तुम्हें मैं अपने कमरे में सोने नहीं देती, उसके लिए डाँटो। तुम कुछ तो करो।

यह सब कहती हुई सती सनातन बाबू से लिपटकर फूट-फूटकर रोने लगी।

ठीक उसी समय अचानक पीछे से किसी की आवाज सुनाई पड़ी — सोना!

— सेन बाबू!

दीपंकर को लगा कि उससे सुनने में गलती हुई है। मानो 'सोना' की जगह उसने 'सेन बाबू' सुन लिया है। चौंककर चारों तरफ देखते ही उसे ख्याल आया। अरे, वह कहाँ चला आया है? यह तो बहूबाजार है!

गांगुली बाबू बोला — आप इधर कहाँ जा रहे हैं?

दीपंकर घर लौट रहा था और अपनी धुन में सती की बात सोचता हुआ गलती से इधर चला आया था! बोला — बस, यों ही जरा घूम रहा हूँ — आप कहाँ जा रहे हैं?

गांगुली बाबू बोला — अरे, मेरा तो घर ही इधर है, मैं यहीं पास में उतर जाऊँगा।

जरा रुककर गांगुली बाबू बोला — आज मीटिंग में रॉबिन्सन साहब ने जो बातें कहीं, मुझे बहुत अच्छी लगीं।

— क्या कहा रॉबिन्सन साहब ने?

गांगुली बाबू ने कहा — क्यों, आपने नहीं सुना? आप भी तो मीटिंग में थे?

दीपंकर बोला — आज मेरा मन बहुत अच्छा नहीं है। मीटिंग में जाने की भी इच्छा नहीं थी। आज तो मैं दफ्तर ही न आता, सिर्फ बूढ़ा जा रहा है, इसलिए चला आया ....

— क्यों? तबीयत खराब है?

दीपंकर बोला — तबीयत खराब नहीं है। माँ नहीं है, इसलिए मकान बड़ा

— काश्मीर ! दीपंकर ने गांगुली बाबू की तरफ देखा। गांगुली बाबू हँसने लगा। वह कुछ बोल न सका।

भाभी बोली — जानते हैं, काश्मीर बड़ी अच्छी जगह है। सब बड़े-बड़े लोग काश्मीर जाते हैं। मेरी दीदी और जीजा गये थे। मेरा जीजा नौ सौ रुपये तनख्वाह पाता है। बताइए, नौ सौ रुपये क्या कम हैं ?

इतना कहकर भाभी जरा रुकी। उसने एक बार दीपंकर को देख लिया, फिर कहा — नौ सौ रुपये तनख्वाह के अलावा अपनी गाड़ी है — मोटरकार। दफ्तर से मिली है। मेरी दीदी को बड़ा आराम है। जानते हैं, मेरी दीदी ने पिछली दुर्गापूजा में साढ़े तीन सौ रुपये की बनारसी साड़ी खरीदी है। असली कौड़ियाल बनारसी ! मैंने छूकर देखी थी। आजकल की टिशू बनारसी नहीं, उसपर सोने की असली जरी से फूल बने थे। खैर, मेरी यह साड़ी देख रहे हैं ....

दीपंकर ने साड़ी की तरफ गौर से देखा।

भाभी कहने लगी — बताइए तो यह कौन साड़ी है ?

दीपंकर ने जीवन में कभी भी साड़ी को लेकर माथापच्ची नहीं की थी। वह साड़ियों के नाम और किस्में भी नहीं जानता था।

भाभी बोली — नहीं बता सके न ? कोई नहीं बता सकता। सिर्फ जो लोग काश्मीर जाते हैं, वे ही बता सकते हैं। दीदी ने कहा है — यह साड़ी उसने डेढ़ सौ रुपये में ली है। दीदी ने सभी बहनों को ऐसी ही एक-एक साड़ी दी है। खैर, जीजा नौ सौ रुपये तनख्वाह पाता है, दीदी क्यों नहीं बहनों को ऐसी साड़ी देगी ? बताइए, ठीक कह रही हूँ न ?

अब कुछ कहना जरूरी था, इसलिए दीपंकर बोला — यह तो है ही।

भाभी बोली — आप इसी साड़ी को देखकर हैरान हो रहे हैं, लेकिन मेरे पिताजी ने मेरी शादी में जो बनारसी साड़ी दी थी, वह देखेंगे तो आप हैरान हो जायेंगे। लाऊं वह साड़ी ? आप देखेंगे ?

यह कहकर गांगुली बाबू की पत्नी सचमुच अंदर जाने लगी।

दीपंकर बोला — रहने दीजिए, अभी आप तकलीफ न कीजिए, और किसी दिन देख लूंगा ....

भाभी शांत हुई। शांत होकर वह बैठ गयी और बोली — हाँ, तो आपने इस बार पूजा में पत्नी के लिए कौन-सी साड़ी ली ?

गांगुली बाबू बोला — वे साड़ी क्या खरीदेंगे ? उन्होंने अभी तक शादी ही नहीं की।

— आपने शादी नहीं की ?

गांगुली बाबू की पत्नी को थोड़ा आश्चर्य हुआ। वह बोली — क्या कम तनख्वाह होने से ही आपने शादी नहीं की ? अच्छा, आपलोगों के दफ्तर में तनख्वाहें

तनी कम क्यों है ? मेरे जीजा के दफ्तर में सभी को खूब ज्यादा-ज्यादा तनख्वाह
लती हैं ।

फिर जरा रुककर भाभी हँसी । भाभी देखने में सचमुच अच्छी है । कितना
बढ़िया स्वास्थ्य है और स्वभाव कितना मिलनसार । दीपंकर को लगा कि मानो इन
लोगों से उसका परिचय बहुत पुराना हो । भाभी में कहीं सकोच या लज्जा नहीं थी ।
एक अपरिचित आदमी से वह किस तरह दिल खोलकर बातें कर रही थी ।

भाभी अचानक बोली — जानते हैं, मेरे पिताजी की इच्छा मेरी शादी इनसे
करने की नहीं थी । लेकिन ....

गांगुली बाबू ने टोका । कहा — अभी वे सब बातें रहने दो न । सेन बाबू
आज पहली बार आये हैं और तुमने पुरानी बातें छेड़ दीं ।

भाभी बोली — क्यों ? तुम्हारे गुण की बात बता रही हूँ, इसीलिए क्या शरम
लग रही है ? मैं पुरानी बातें जरूर छेड़ूँगी, हजार बार छेड़ूँगी, देखूँ तुम मेरा क्या
कर सकते हो ! आप सुनिए लाला, मैं उनके गुण की बात बता रही हूँ ....

फिर दीपंकर की तरफ देखकर वह बोली — आप बर्दवान के सरकार बाबुओं
को जानते हैं न ?

दीपंकर बर्दवान के सरकार बाबुओं को नहीं जानता था । क्या उत्तर दे वह
समझ नहीं पाया ।

गांगुली बाबू बोला — सेन बाबू, मैंने तो आपसे सरकार बाबुओं के बारे में
कहा है ....

दीपंकर बोला — हाँ, सुना है ।

भाभी बोली — कलकत्ते के सभी बड़े आदमी बर्दवान के सरकार बाबुओं को
जानते हैं । पिताजी से सुना है, पहले हम लोगों के घर में तीन-तीन हाथी थे । लेकिन
मेरा भाग्य देखिए, जब मैं बड़ी हुई तब हम लोगों की माली हालत बिगड़ गयी ।
खैर, पिताजी ने कहा कि रेल की नौकरी करता है, अपना घर-द्वार नहीं है, ऐसे
लड़के से मैं अपनी लड़की की शादी नहीं करूँगा । लेकिन माँ बोली — रेल की नौक
क्या बुरी है ? पिताजी बोले — भले लोग रेल की नौकरी नहीं करते । उस समय
तैंतीस रुपये पा रहे थे । माँ बोली — तनख्वाह क्या हमेशा तैंतीस ही रुपये रहेंगे
और आखिर शादी हो गयी । शादी के बाद पहली बार ससुराल आयी तो देखा .. .

दीपंकर को वे सब बातें सुनना अच्छा नहीं लग रहा था । यह सब गा
बाबू का एकदम व्यक्तिगत और पारिवारिक मामला था ।

गांगुली बाबू बोला — क्या तुम सारे समय सेन बाबू से यही सब
रहोगी ?

भाभी अचानक उत्तेजित हो गयी । बोली — क्यों नहीं कहूँगी ? क
क्या हर्ज है ? पिताजी तुमसे तो मेरी शादी करना नहीं चाहते थे । मेरे जी

दीदियों को कितने गहने और कितनी साड़ियाँ देते हैं, लेकिन तुम क्या दे पाते हो ? मेरे जीजा लोग दीदियों को हर छुट्टी में कितनी जगह घुमाने ले जाते हैं, क्या तुम ले जा सकते हो ? क्या तुम्हारे पास रुपया है ? तुम तो सिर्फ एक सौ दस रुपये तनख्वाह पाते हो, तुम्हें शरम नहीं आती ?

फिर अचानक दीपंकर को दिखाकर वह बोली — लाला को देखो न, कम तनख्वाह पाते हैं, इसलिए इन्होंने अभी तक शादी नहीं की। जिसकी तनख्वाह इतनी कम है, उसे शादी करने का शौक क्यों चर्राता है ?

गांगुली बाबू का धैर्य असामान्य था। इतना सुन लेने के बाद भी उसने कुछ नहीं कहा। वह सब कुछ हँसकर बरदाश्त करता रहा। सचमुच, गूँगे का कोई दुश्मन नहीं होता।

भाभी बोली — देख रहे हैं लाला, फिर बेवकूफ की तरह कैसे हँस रहा है, शरम भी नहीं आती। जो अपनी बीवी को खाने-पहनने को नहीं दे सकता, जो अपनी बीवी को साड़ी-गहने नहीं दे सकता और जो अपनी बीवी को कहीं घुमाने भी नहीं ले जा सकता, वह डूब मरे, डूब मरे, डूब मरे।

गांगुली बाबू के चेहरे की तरफ देखकर दीपंकर डर गया था। उसके चेहरे पर हँसी नहीं थी, वह भोलापन भी नहीं था। गुस्से से उसकी दोनों आँखें बड़ी-बड़ी हो गयी थीं! गोरे-गोरे कान लाल हो आये थे।

दीपंकर बोला — अच्छा भाभी, अब मैं चलूँगा, रात हो गयी है, मुझे काफी दूर जाना है।

गांगुली बाबू ने भी दीपंकर को रोकने के लिए फिर जोर नहीं दिया।

गांगुली बाबू की पत्नी ने पूछा — आप फिर कब आयेंगे ?

दीपंकर बोला — किसी दिन मौका मिलेगा तो आ जाऊँगा ....

भाभी बोली — ठीक है। अच्छा, आपने पाँचूलाल का नाम सुना है ?

पाँचूलाल ! नाम सुनकर दीपंकर रुक गया। गांगुली बाबू भी रुका।

— आपने पाँचूलाल का नाम नहीं सुना ? कलकत्ते के सब बड़े लोग पाँचूलाल का नाम जानते हैं। बनारस जाने पर सभी पाँचूलाल के हाथ को बनी साड़ी देख आते हैं। मेरी दीदियों की सभी साड़ियाँ पाँचूलाल की बनायी हुई हैं। हर कोई तो पाँचूलाल से साड़ी खरीद नहीं सकता। हरेक के पास उतना रुपया भी कहाँ होता है, बताइए ?

गांगुली बाबू बोला — चलिए सेन बाबू, आपके लौटने में रात हो गयी ....

गांगुली बाबू की पत्नी बोली — अब आप जिस दिन आयेंगे, उस दिन आपको वह चीज दिखाऊँगी। याद रहेगा न ?

दीपंकर समझ नहीं पाया। बोला — कौन सी चीज़ ?

भाभी बोली — आप इतनी जल्दी भूल गये ?

दीपंकर भी जरा झेंप गया। बोला — बताइए न क्या चीज दिखायेंगी, मुझे

ठीक से याद नहीं पड़ रहा है।

—देखिए। आप कितनी जल्दी भूल जाते हैं। वही बनारसी साड़ी, जो मेरी शादी में पिताजी ने दी थी। पाँचूलाल के हाथ की बनायी साड़ी है। पिताजी ने खुद पाँचूलाल को आर्डर देकर वह साड़ी मँगवायी थी। आप तो मेरी यही साड़ी देखकर हैरान हो रहे हैं, वह साड़ी देखेंगे तो आँखें नहीं फेर सकेंगे।

बाहर उस समय और ज्यादा अँधेरा हो गया था। दुकानों में भीड़ [illegible] थी। दीपंकर के कानों में अब भी गांगुली बाबू की पत्नी की बातें गूँज रही थीं।

बगल में गांगुली बाबू चल रहा था। वह बोला — देख लिया न [illegible] आज तो आपने सब कुछ अपने कानों से सुना। अभी तो बहुत ठीक है। पहले तो [illegible] में जो आता था, वही कहकर गाली बकती थी।

दीपंकर कुछ नहीं बोला।

गांगुली बाबू कहने लगा — आजकल थोड़ा गुस्सा होने से [illegible] है कि जो अपनी बीवी को खाने-पहनने को नहीं दे सकता, जो अपनी बीवी को गहने नहीं दे सकता और जो अपनी बीवी को कहीं घुमाने नहीं ले जा सकता, वह डूब मरे, डूब मरे, डूब मरे। बस, तीन बार पाँव पटककर यही कहती है।

सान्त्वना देते हुए दीपंकर ने कहा — आप उन बातों पर ध्यान मत दीजिए।

गांगुली बाबू बोला — लेकिन कितना बरदाश्त किया जा सकता है — बताइए? इसलिए कभी-कभी सोचता हूँ कि डूब मरूँ और मेरे डूब मरने से उसकी क्या दशा होती है, उसे भी पता चल जाय।

दीपंकर बोला — आप हर्गिज ऐसा काम न कीजिएगा। आप इन्हें जरा कारमीर ले जाइए, शायद इससे वे ठीक हो जायें।

गांगुली बाबू बोला — लेकिन कैसे ले जाऊँ बताइए, कहाँ से [illegible] रुपया? एक तो पचासी रुपये तनख्वाह पाता हूँ, उससे घर चलता है, [illegible] उसे दिखाने के लिए पचीस रुपये उधार लेने पड़ते हैं।

— लेकिन चुकाते कैसे हैं?

गांगुली बाबू बोला — कहाँ चुकाता हूँ? इसीलिए अब चारों तरफ उधार हो गया है। अब काबुली लोग सूद माँगने आते हैं। मूल की बात कौन करे, किसी को सूद भी नहीं दे सकता। कैसे दूँगा? इसीलिए भागा-भागा फिरता हूँ और दो-दो चार-चार रुपये करके देता हूँ।

दीपंकर देर तक सोचता रहा। फिर वह बोला — खैर, आप पत्नी को कारमीर ले जाइए।

गांगुली बाबू ने कहा — आप क्या कह रहे हैं? मैं कारमीर जाऊँगा? उसके

बहनोई सब बड़े आदमी हैं, नौ सौ और हजार रुपये तनख्वाह पाते हैं, इसलिए वे लोग जायँ, लेकिन मैं किसलिए जाऊँगा ?

दीपंकर बोला — फिर आपकी पत्नी ने क्यों कहा कि आप लोग काश्मीर जा रहे हैं ?

— वह, वह तो मैंने ही उसे झाँसा दिया है, और क्या। झाँसा न दूँ तो वह फिर पागल न हो जायेगी सेन बाबू !

— लेकिन इस तरह झाँसा देकर आप उन्हें कब तक रोक रखेंगे ?

गांगुली बाबू बोला — जब तक हो सके। उसके बाद जो होगा, देखा जायेगा। अब मैं ज्यादा सोच नहीं सकता सेन बाबू। नहीं तो, मैं भी पढ़ा-लिखा हूँ, मैंने भी एम० ए० पास किया है, लेकिन कौन जानता था कि जर्नल सेक्शन में एक बार पहुँचने पर वहाँ से निकला नहीं जा सकेगा।

दीपंकर बोला — वहाँ जो करना होगा मैं करूँगा, लेकिन आप अपनी पत्नी को लेकर काश्मीर जाइए।

— लेकिन खर्च कौन देगा ? यह एक-दो रुपये की तो बात नहीं है, कम से कम आठ-नौ सौ रुपये लगेंगे।

दीपंकर बोला — इसके लिए आप मत सोचिए, मैं दूँगा ....

— लेकिन उतने रुपये मैं आपको कैसे लौटाऊँगा ?

— जब होगा तब लौटाइएगा। अगर नहीं लौटा सके तो कोई बात नहीं।

उसके बाद गांगुली बाबू की तरफ देखकर दीपंकर बोला — संयोगवश मैं आपसे ज्यादा तनख्वाह पाता हूँ और संयोग से ही मैं आपके ऊपर जा बैठा हूँ। भले ही कोई और न जाने, लेकिन मैं तो जानता हूँ कि इसमें मेरी कोई योग्यता नहीं है। वह सरकारी दफ्तर है, वहाँ तो मेरी कुर्सी पर मेरे चपरासी मधु को बिठा देने पर वह भी काम चला लेगा, लेकिन वह बात नहीं है, अभी मेरे पास कुछ रुपये हैं, आप काश्मीर चले जाइए। समझ लीजिए कि यह भी आपकी पत्नी का एक रोग है। अगर सचमुच कोई रोग होता तो आप को डाक्टर और दवा के पीछे खर्च करना पड़ता न। देख लीजिए, शायद इसी से उनका रोग ठीक हो जाय।

●●●

जो अपनी बीवी को साड़ी-गहने नही दे सकता, जो अपनी बीवी को खाने-पहनने को नही दे सकता और जो अपनी बीवी को कहीं घुमाने नही ले जा सकता, वह डूब मरे, डूब मरे, डूब मरे....

अब भी दीपंकर के कानों में वे बातें गूंज रही हैं। सचमुच यह भी तो एक रोग है। ट्राम में बैठा वह बहुत सारी बातें सोचने लगा। कल फिर नये कमरे में और नयी कुर्सी पर जाकर बैठना होगा। मिस्टर घोषाल रॉबिन्सन साहब के कमरे में जाकर बैठने लगेगा। फिर नये सिरे से उत्तरदायित्व लेना होगा। फिर नये सिरे से रेलगाड़ी के पहिये घूमने लगेंगे। अभी तक रॉबिन्सन साहब का राज था। क्रॉफोर्ड साहब सिर्फ नाम के वास्ते सिर के ऊपर था। असल में रॉबिन्सन साहब ही सब कुछ था।

फेयरवेल मीटिंग में साहब ने बहुत-सी बातें बतायी थीं। लेकिन दीपंकर के कानों में वे सब बातें नहीं गयी थी। साहब इंडिया से प्यार करने लगा था। लेकिन अयोग्य पात्र से साहब का प्यार था। सात समन्दर तेरह नदी पार का वह आदमी किस आकर्षण से यहाँ आया था, क्या पता! शायद वह रुपये के आकर्षण से आया था। शायद रुपया ही उसे इंडिया में खींच लाया था। उसके बाद यहाँ रहते हुए उसने इंडिया का जितना देखा था, अच्छा लगा था। वह किसी को खाली पेट नही रहने देना चाहता था। वह किसी का दुःख बरदाश्त नही कर सकता था। उसके नजदीक थोड़े से लोग आये थे और उन्ही पर अपना सारा प्यार उँडेलकर वह चला गया। उसके बाहर उसने और कुछ नहीं देखा। वह जान भी न सका कि जिस रेल की नौकरी करने वह इंडिया में आया था, उस रेल का अविष्कार गरीबों को अमीर बनाने के लिए नहीं हुआ था। वह नही जान सका कि सिर्फ रेल ही नही, जितने भी पेंच-पुरजे बने, सब गरीबों के मुँह की रोटी छीनने के लिए हैं। टेलीग्राफ, स्टीम-इंजन और पुतलीघर, सब अमीरों को और अमीर और गरीबों को और गरीब बनाने के लिए हैं। जब १८ वीं सदी के यूरोप में कल-पुरजों का ज्वार आया, उससे भी बहुत पहले की बात है। कोपर्निकस, कैप्लर, गैलिलियो और न्यूटन — कितने ही प्रातः स्मरणीय नाम हैं! लेकिन कौन जानता था कि उन्ही के आविष्कार अठारहवीं सदी में अफ्रीका और एशिया में गरीबों के मुँह का कौर छीन लेंगे। क्या वे जानते थे कि उन्ही के आविष्कारों के आशीर्वाद से रेल दफ्तर के जर्नल सेक्शन का बी ग्रेड का बाबू पी० के० गांगुली हर महीने कर्ज ले-लेकर उसी में गले तक डूब जायेगा? क्या वे जानते थे कि सन् १९४० ई० में उसी रेल की नौकरी के प्रोमोशन को भूल-भुलैया में फँसकर दीपंकर सारी शाम सड़कों पर घूमता रहेगा? क्या फिर भी लोगों की हालत

में सुधार हुआ ? जरूर हुआ है। जूलियस सीज़र, कैथेरिन-द-ग्रेट, लुई फोर्टीन्थ या अकवर बादशाह जिस सुख-सुविधा की कल्पना भी न कर सकते थे, आज वीसवीं सदी का एक मामूली अमीर उसी का उपभोग कर रहा है। रॉविन्सन साहव के ब्रेकफास्ट टेवुल पर ब्रिटिश कोलम्विया का सेव, तन्जानिया का संतरा, ब्राजील की कॉफी, दार्जिलिंग की चाय, आस्ट्रेलिया का वीफ और डेनमार्क का वेकन रहता था। साहव जो अखवार पढ़ता था उसमें जैसे चौवीस घंटे पहले के तिव्वत के भूकंप की खवर रहती थी, वैसे ही शिकागो के शेअर मार्केट की खवर भी। फिर हालीवुड के एकदम नये फिल्म स्टार विवियन ले की खवर भी उसमें रहती थी। लेकिन साहव वह खवर कभी नहीं जान सका कि कहाँ से कितनी जहमत उठाकर और किन लोगों के मुँह का कौर छीनकर उसके खानसामाँ ने उसके लिए ब्रेकफास्ट का इंतजाम किया है। किस रेलगाड़ी से खाने की वे चीजें उसके टेवुल पर पहुँची हैं ! वह यह भी नहीं जान सका कि कौन उस ट्रेन का ड्राइवर था और कौन खलासी। उन सवने भी ब्रेकफास्ट खाया था या नहीं। क्या रॉविन्सन साहव ने कभी सोचा था कि अखवार के वाहर भी वहुत सारी खवरें होती हैं, जो नहीं छपतीं या जो छप नहीं सकतीं ! क्योंकि वे सव खवरें छप जाने पर तो ब्रेकफास्ट टेवुल का मजा ही किरकिरा हो जायेगा ! साहव हमेशा के लिए ब्रेकफास्ट खाना भूल जायेगा।

आश्चर्य है। माँ के पाँव छूकर दीपंकर ने प्रतिज्ञा की थी कि वह कभी स्वराज नहीं करेगा। रॉविन्सन साहव भी मानो उन्हीं स्वराजियों का विरोध करने के लिए जाते-जाते दीपंकर को प्रोमोशन दे गया। ताकि दीपंकर भी ब्रेकफास्ट खा सके। ताकि उसके ब्रेकफास्ट टेवुल पर भी वे सव चीजें पहुँचे ! लेकिन वह तो प्रोमोशन नहीं भी ले सकता है ! किसने उसे प्रोमोशन लेने के लिए कसम खिलायी है ! किसने उससे कहा है कि प्रोमोशन लेना ही पड़ेगा !

रॉविन्सन साहव जाते समय मानो अपने सारे पापों का उत्तराधिकारी दीपंकर को वना गया। किरण की माँ को दीपंकर दस रुपये माहवारी देता आ रहा है, लेकिन उससे क्या उसका पाप धुल जायेगा ? उसका सारा कलंक पुँछ जायेगा ? क्या गांगुली वावू को काश्मीर जाने का खर्च देने पर ही उसके सारे दुष्कर्मों का प्रायश्चित हो जायेगा ?

— दादावावू !

शंभु को देखकर दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया। शंभु ट्राम के सेकंड क्लास में था और दीपंकर फर्स्ट क्लास में। सड़क पर उतरते ही भेंट हो गयी।

शंभु वोला — मैं तो आपके ही घर जा रहा था।

दीपंकर वोला — अच्छा हुआ कि तुम मिल गये, मुझे भी पूरी खवर जानने की वेचैनी थी। वहूदीदी घर लौटी तो वड़ा हो-हल्ला हुआ न !

शंभु वोला — हो-हल्ला। आप क्या कह रहे हैं ?

शंभु कुछ समझ नहीं पाया। उसने कहा — कैसा हो-हल्ला ?

दीपंकर बोला — सबेरे से तुम्हारी बहूदीदी कहाँ थी, किसी ने नहीं ढूँढा ? तुम्हारी बहूदीदी घर लौटी तो तुम्हारी माँजी ने उससे कुछ नहीं कहा ?

शंभु मानो हकबका गया। बोला — आप किसकी बात कर रहे हैं ? कौन घर लौटा है ?

— क्यों, तुम्हारी बहूदीदी ?

शंभु बोला — बहूदीदी के बारे में पता लगाने के लिए ही मैं आपके पास जा रहा था। सबेरे से ही बहूदीदी नहीं मिल रही हैं। कल उन्होंने मुझसे आपका पता लिया था। इसलिए मैंने सोचा कि वह जरूर आपके पास आयी हैं। दिन भर मौका नहीं निकाल सका, इसलिए खबर लेने जा रहा था।

दीपंकर बोला — लेकिन तुम्हारी बहूदीदी तो लौट गयी हैं! तुम नहीं जानते ?

— जी नहीं। कब ?

— तुम कब चले हो ?

शंभु बोला — मैं तो खाना खाकर मुंशीजी के साथ पंसारी की दुकान गया था। महीने भर के लिए चावल-दाल-तेल-नमक-मसाले वगैरह लेकर मैं तीसरे पहर घर लौटा। उस समय भी मैंने बहूदीदी को नहीं देखा। कुछ सुना भी नहीं।

दीपंकर बोला — वह तो दोपहर को ही तुमलोगों के घर पहुँच गयी हैं। तुम उस समय बाजार गये थे, इसलिए तुम्हें पता नहीं चला ....

— तीसरे पहर लौटने के बाद मैं बहुत देर तक घर में रहा, लेकिन कुछ भी नहीं सुना।

दीपंकर ने पूछा — तुम ऊपर गये थे ?

शंभु बोला — नहीं, ऊपर जाने का मौका कहाँ मिला ? भंडार घर का सामान बाहर निकाला था, वह सब मैंने कैलास को लेकर अन्दर रखा। फिर शाम को बतासी की माँ के लिए लाई खरीदने भी गया था।

दीपंकर बोला — इसीलिए तुमको पता नहीं चला। अभी जाओ, जाकर बहूदीदी के कमरे में देखोगे कि सब ठीक है।

— हाँ, जाता हूँ ....

कहकर शंभु जाने लगा, लेकिन दीपंकर ने कहा — क्या सबेरे तुम्हारी माँजी ने खूब हल्ला मचाया था ?

शंभु बोला — जी नहीं, कैलास ने जब उसे खबर दी, तब उस बुढ़िया ने हाँ-ना कुछ भी नहीं कहा।

— अरे !

— जी हाँ, घर भर के सभी लोग आश्चर्य में पड़ गये। बतासी की माँ ने

कहा — बुढ़िया बड़ी काइयाँ है ....

भूती की माँ ने कहा — अच्छा तमाशा है ! कोई भी उसकी खबर नहीं लेगा ? आखिर वहू गयी कहाँ ?

रसोईघर में जितनी नौकरानियाँ हैं, सब आपस में कानाफूसी करने लगीं। कैलास सती के कमरे में चाय देने गया था। उसने जाकर देखा कि कमरा खाली है। उसने जल्दी-जल्दी सती को दूसरे कमरों में ढूंढ़ा। जब सती नहीं मिली, तब उसने जाकर माँजी से कहा।

माँजी ने सुनकर सिर्फ कहा — दरवान को बुला दे ....

दरवान आया। बोला — मैं बाहर चारपाई पर सोया था, जब नींद टूटी तब देखा कि फाटक खुला है !

— तुमने चाभी कहाँ रखी थी ?

दरवान बोला — हुजूर अपने पास ....

— अगर चाभी तुम्हारे पास थी तो फाटक का ताला कैसे खुला ?

दरवान इसका कोई उत्तर नहीं दे सका।

माँजी ने उससे कहा — ठीक है, तुम जाओ ....

डाँट खाकर दरवान चला गया। फिर माँजी ने कैलास से पूछा — सोना कहाँ है ? सोना को बुला दे ....

सनातन बाबू उस समय चाय पी चुके थे। उन्होंने आकर कहा — क्या हुआ है माँ ?

माँजी बोलीं — सुनो यहाँ बैठो ....

सनातन बाबू बैठे। माँजी बोलीं — वहू चली गयी है, तुमने सुना है ?

सनातन बाबू बोले — अरे !

— हाँ, वह तो गयी। खैर, एक बला टली। अब मैं नहीं चाहती कि इस बात को लेकर कोई हो-हल्ला करे। वहू के गहने-जेवर सब मेरे पास हैं। उसके पास एक-दो चूड़ियाँ हैं, उन चूड़ियों के लिए मैं नहीं सोचती। अब तुमको जिसलिए बुलाया है, वह यह है कि तुम इस बात को लेकर माथापच्ची मत करना। समझ गये ?

सनातन बाबू बोले — हाँ, समझ गया ....

सनातन बाबू जाने लगे। माँजी ने उनको फिर बुलाया और उनसे कहा — वहू कहाँ गयी है, किसलिए गयी है, यह सब लेकर कोई न सिर खपाये। मैं देखूँगी, वह कहाँ जाती है ! कहाँ जाकर उसे इतना सुख मिलता है ! मैंने बहुतों का बहुत घमंड देखा है, अब मैं वहू का घमंड भी देख लूँगी ....

सनातन बाबू बोले — ठीक है ....

— अगर वह कभी लौट आती है, तो तुम उससे कुछ मत कहना बेटा। जो कुछ कहना होगा, मैं कहूँगी। मैं ही पसंद कर उसे इस घर में लायी थी, अब मुझे ही

जलना पड़ेगा। इसके पहले बड़ी लड़की घर से भागी थी, अब छोटी लड़की ने भी वही रास्ता अख्तियार किया, और क्या! खानदान का ढंग कैसे छूट सकता है! हाँ, एक बात और है....

सनातन बाबू रुक गये।

माँजी बोली — समधीजी को तुम इस बारे में कुछ मत लिखना। जो कुछ करोगे, तुम मुझसे पूछकर करोगे। समझ गये न?

सिर्फ दरबान नहीं। सिर्फ सनातन बाबू नहीं। एक-एक कर सभी को बुलाया गया। बहूदीदी को किसने कहाँ देखा था, सबने उसका बयान किया। लेकिन किसी से कोई सुराग नहीं मिला। असल में किसी ने बहूदीदी को देखा ही नहीं था। जब सब लोग सो रहे थे, तभी बहूदीदी मकान से निकली थी!

माँजी ने शंभु को भी डाँटा-फटकारा। कहा — तू ही सारी खुराफात की जड़ है। तेरे साथ ही वह ज्यादा सलाह-मशवरा करती थी। इसलिए तुझे होशियार कर देती हूँ शंभु, अगर इस घर का अन्न तुझे खाना है तो मेरा हुक्म मानकर चलना, नहीं तो तुझे जूते मारकर यहाँ से निकाल दूँगी। तू जिस पत्तल में खाये, उसी में छेद करे, यह मैं बरदाश्त नहीं करूँगी। अब तुम सब यहाँ से जाओ। दूर हो जाओ ....

शंभु बोला — उसके बाद मैं खाना खाकर मुंशीजी के साथ बाजार गया। फिर मौका मिला तो भागा-भागा आपके पास आया ....

दीपंकर बोला — तुम घबड़ाओ मत शंभु, मैंने तुम्हारी बहूदीदी को घर भेज दिया है, अब उस घर में क्या हो रहा है, वह कल सवेरे मुझे बता जाना ....

जाते-जाते शंभु ने कहा — वह !तो मैं आ ही जाऊँगा, मौका पाते ही चला आऊँगा ....

दीपंकर बोला — और देखो, तुम अपनी बहूदीदी से कहना कि वह जरा धीरज धरकर रहे, फिर कभी यहाँ न चली आयें — और कह देना कि मैं बहूदीदी के बाप को चिट्ठी लिख रहा हूँ — वह घबड़ायें नहीं!

शंभु जाने लगा।

दीपंकर ने उसे फिर !स्मरण करा दिया। कहा — कल आकर तुम खबर दे जाना कि बहूदीदी कैसी है। समझ गये?

शंभु चला गया। ट्रामवाली सड़क से सीधे दीपंकर अपने मकान के पास आया तो न जाने उसे कैसा सूनापन महसूस होने लगा। माँ नहीं है। शायद माँ इस समय काशी की धर्मशाला में सो रही होंगी। शायद उसने दिन भर घूम-घूमकर मंदिरों में दर्शन किये होंगे। शायद उसके पाँव दुखने लगे हों। कल सवेरे शायद चिट्ठी आ जायेगी। साढ़े आठ-नौ बजे तक इस सड़क पर डाकिया आता है। उस समय खिड़की के पास खड़ा रहना पड़ेगा।

अब तक सती थी, इस वक्त वह भी नहीं है। सती होती तो अच्छा रहता।

कम से कम इतना सूनापन तो महसूस न होता। विचित्र लड़की है! उसने बाप को चिट्ठी लिखी, लेकिन अपनी तकलीफ की बात तक नहीं लिखी। अजीब जिद्दी लड़की है सती! इतनी भी जिद किस बात की? किसने उसे इतनी जिद सिखायी?

बाहर वाले दरवाजे की कुंडी खटखटाते ही काशी ने दरवाजा खोल दिया।

दीपंकर ने पूछा — क्यों रे, सबेरे तूने बहूदीदी को ठीक से खिलाया था न?

काशी बोला — नहीं दादाबाबू, उन्होंने नहीं खाया ....

— क्या कहता है रे, बिना खाये वह चली गयी?

काशी बोला — नहीं, मैंने बहुत कहा, लेकिन किसी तरह नहीं खाया। फिर दोनों खूब चिल्लाती रहीं। ऐसी चिल्लाहट कि सुनने वाला परेशान हो जाय। एक चिल्लाती थी तो दूसरी उससे भी ज्यादा चिल्लाती थी।

दीपंकर सुनकर अवाक् हो गया। दफ्तर जाते समय उसने देखा था कि लक्ष्मी दी की गोद में सिर रखकर सती रो रही थी। उसने सोचा था कि चलो, दोनों बहनों में मेल तो हो गया।

— फिर?

काशी बोला — फिर एक तो बिगड़कर यहाँ से चली गयी और दूसरी यहीं है ....

— कौन है?

काशी बोला — एकदम सबेरे जो बहूदीदी आयी थी, वही ....

आश्चर्य है! फिर क्या सती नहीं गयी? झटपट उसी हालत में ऊपर कमरे के सामने जाकर दीपंकर ने देखा कि सती उसी के बिस्तर पर आँखें बंद कर लेटी है। दीपंकर के जूते की आहट पाकर उसने आँखें खोलीं।

दीपंकर बोला — क्या हुआ? तुम गयी नहीं?

सती बोली — मैं कहीं नहीं जाऊँगी, देखूँ लक्ष्मी दी क्या करती है!

— क्यों? लक्ष्मी दी ने क्या किया है? दफ्तर जाते समय तो देखा था कि तुम दोनों का सारा झगड़ा खत्म हो गया था, फिर एकाएक क्या हुआ? फिर तुमने खाया क्यों नहीं? लड़कर दिनभर भूखी रही। पता नहीं तुम्हें क्या हो गया है? दफ्तर से निकलकर मैं सोच रहा था कि तुम ससुराल चली गयी होगी और अब तक सब कुछ ठीक हो गया होगा।

सती बोली — नहीं, आज रात मैं यहीं रहूँगी।

यह कहकर उसने आँखें बन्द कर लीं।

दीपंकर बोला — लेकिन तुमने खाया क्यों नहीं? किसपर गुस्सा होकर तुम भूखी रही?

सती बोली — तुम पर ....

दीपंकर हँसकर बोला — तुम गुस्सा करके खाना नहीं खाओगी तो मेरा क्या

बिगड़ेगा ? मैं तो भरपेट खाकर दफ्तर गया, वहाँ मैंने टिफिन भी खाया — चलो, उठो, उठो, खाना खा लो ....

काशी भी दीपंकर के पीछे-पीछे दरवाजे के पास आकर खड़ा हो गया था। दीपंकर ने उससे कहा — हम दोनों का खाना परोस दे, हम एक साथ खायेंगे ....

काशी चला गया तो दीपंकर बोला — कितने आश्चर्य की बात है देखो, मैं समझ रहा था कि तुम चली गयी होगी। अभी थोड़ी देर पहले शंभु तुम्हें ढूंढने आया था।

— शंभु ?

इतनी देर बाद सती ने चौंककर सिर उठाया। कहा — शंभु आया था ? मुझे ढूंढने ? क्या कहा उसने ? वहाँ तो मुझे ढूंढने के लिए काफी दौड़धूप मची होगी ?

दीपंकर बोला — वह तो मचेगी ही। तुम्हारी सास ने सबको बुलाकर कह दिया है कि इस बात को लेकर कोई तिल का ताड़ न बनाये। उन्होंने सनातन बाबू को समझा दिया है।

सती ने पूछा — शंभु ने और क्या कहा ?

दीपंकर बोला — उसने और कुछ नहीं कहा।

सती बोली — तुम शंभु को यहाँ क्यों नहीं बुला लाये ?

दीपंकर बोला — लेकिन मैं कहाँ जानता था कि तुम अब भी यहाँ हो। मैं समझ रहा था कि तुम लक्ष्मी दी के साथ चली गयी होगी। लक्ष्मी दी ने तुम्हें प्रियनाथ मल्लिक रोड पहुँचा दिया होगा। मेरे दफ्तर जाने से पहले तो यही तय हुआ था न ?

सती ने फिर पूछा — शंभु ने उनके बारे में क्या कहा ? क्या वे बहुत ज्यादा उदास हो गये हैं ?

— *किसकी बात कर रही हो ? सनातन बाबू की ?* उनके बारे में तो शंभु ने कुछ भी नहीं कहा।

सती ने फिर पूछा — कुछ नहीं कहा ? अब वे किस कमरे में सो रहे हैं ?

— यह तो मैंने नहीं पूछा !

सती बोली — फिर तुमने पूछा क्या ? तुमको तो पूछना चाहिए कि मेरे चले आने के बाद उस मकान में क्या हो रहा है ? दरवान की नौकरी गयी या नहीं, बतासी की माँ क्या कहती थी, भूतो की माँ क्या कह रही थी — यही सब तो पूछना चाहिए था। लेकिन तुमने असली बातें तो पूछी ही नहीं।

दीपंकर बोला — ठीक है, मैंने शंभु से कल आने के लिए कह दिया है, वह आयेगा तो तुम उससे सब कुछ पूछ लेना।

फिर जरा रुककर दीपंकर ने पूछा — *यह सब तो हुआ, लेकिन तुम गयी क्यों नहीं ?*

सती ने एकाएक कोई उत्तर नहीं दिया। जरा रुककर उसने कहा — क्या मेरे

चले जाने से ही तुम खुश होते ?

अचानक सती के ऐसे सवाल के लिए दीपंकर तैयार नहीं था। उसने कहा—ससुराल में सबसे तुम्हारी पटरी बैठ जाय और वहाँ तुम आराम से रहो, यही तो स्वाभाविक है, यही तो हम लोग चाहते हैं।

—लोगों की बात छोड़ो, तुम क्या चाहते हो ? क्या तुम चाहते हो कि मैं वहाँ उस जेलखाने में सड़ा करूँ ? जहाँ मेरी बात की कोई कीमत नहीं है, जहाँ मेरा सुख और आराम नाम की कोई चीज नहीं है, जहाँ मैं सिर्फ कहने भर के लिए वहू हूँ और जहाँ मेरा कोई अधिकार नहीं है, मैं वहीं जाकर रहूँ, क्या तुम भी यही चाहते हो ? तुम तो जानते हो कि मैंने सिर्फ एक दिन तुम्हें वहाँ खाने के लिए बुलाया था तो किस कदर मेरी तौहीन हुई थी और वह तौहीन मुझे तुम्हारे ही सामने बरदाश्त करनी पड़ी थी। इस पर भी तुम मुझसे वहीं जाने के लिए कह रहे हो ?

दीपंकर बोला—लेकिन तुम वहाँ नहीं जाओगी तो क्या करोगी ?

सती बोली—इतने दिन यही सब सोचने के लिए मुझे मौका नहीं मिला, अब मुझे सोच लेने दो ....

दीपंकर बोला—सवेरे मैंने तुमसे कहा कि तुम अपने पिताजी को खत लिख दो, लेकिन तुमने खत में अपने बारे में कुछ नहीं लिखा।

सती ने सीधे दीपंकर के चेहरे की तरफ़ देखा और कहा—यह तुमने कैसे जान लिया ? क्या तुमने मेरी चिट्ठी पढ़ी थी ?

—हाँ, पढ़ी थी। लेकिन यह बताओ कि तुमने अपने बारे में क्यों कुछ नहीं लिखा था ?

सती बोली—तुम मेरे पिताजी को नहीं जानते, इसीलिए ऐसी बात कर रहे हो। लक्ष्मी दी के मामले में पिताजी को काफी सदमा पहुँच चुका है, इसलिए मैं अपने बारे में लिखकर उनको और दुःखी नहीं करना चाहती।

दीपंकर बोला—वे दुःखी होंगे, इसलिए तुम अपनी तकलीफें छिपाकर रखोगी ? यह क्या छिपानेवाली बात है ? क्या तुम समझ रही हो कि यह सब छिपा रहेगा ?

सती बोली—यह मैं नहीं जानती, लेकिन जितने दिन यह सब छिपा रहे, उतने दिन ही अच्छा है।

—लेकिन उसके बाद ?

सती बोली—उसके बाद क्या होगा, मैं अभी से सोच नहीं सकती।

यह कहकर सती ने दूसरी तरफ मुँह फेर लिया। दीपंकर बोला—तुम सोच नहीं सकती, लेकिन मुझे तो सोचना पड़ेगा।

सती ने अब भी कुछ नहीं कहा। दीपंकर बोला—मेरी बात का जवाब तो दोगी। तुम्हारा भला-बुरा अब मेरी जिम्मेदारी हो गयी है। दैव ने तुम्हारा भाग्य मेरे भाग्य से जोड़ दिया है।

अब सती ने सिर उठाकर देखा। कहा — इसका मतलब?

दीपंकर बोला — तुम अगर उस दिन अपने घर में मुझे निमंत्रण देकर न खिलाती तो कोई बात न होती। अगर तुम्हारे साथ मेरी फिर मुलाकात न होती तो मैं तुम्हारी बात लेकर सिर न खपाता। लेकिन अब वैसा नहीं हो सकता। अब तो तुम मेरे घर आ गयी हो, एक मकान के एक कमरे में मेरे साथ बैठी हो और यह बात चार दिन बाद सबको मालूम हो जायेगी।

सती होंठों को दबाकर हँसी। बोली — सबको यह बात मालूम हो जायेगी, क्या इसीलिए तुम इतना डर रहे हो?

दीपंकर बोला — मेरे लिए डरने की क्या बात है, मैं मर्द हूँ, लेकिन तुम तो औरत हो। तुमको तो डरना चाहिए!

सती बोली — मैं डरूँ या न डरूँ, यह तुमको नहीं सोचना पड़ेगा।

दीपंकर बोला — तुम्हारे लिए मैं नहीं सोचूँगा तो कौन सोचेगा? यहाँ तुम्हारा कौन है?

सती बोली — अगर मेरे लिए तुम इतना ही सोचते हो तो मुझे अपने घर में दो दिन रहने दो, मैं भी अपने बारे में अच्छी तरह सोच लूँ।

इतने में काशी कमरे में आया। बोला — खाना परोस दूँ दादाबाबू?

दीपंकर ने सती से पूछा — अब तो खाओगी न? इस वक्त तो मुझपर नाराज होकर उपवास नहीं करोगी?

सती मुस्कराकर बोली — सचमुच मैं सवेरे तुम पर बहुत नाराज हो गयी थी। बताओ, सवेरे तुम लक्ष्मी दी को क्यों बुला लाये थे? तुम क्या यही समझते हो कि तुम्हारी बात न मानकर मैं लक्ष्मी दी की मानूँगी? क्या मेरे लिए लक्ष्मी दी तुमसे भी बड़ी हो गयी?

दीपंकर ने काशी से कहा — हाँ, खाना परोस दे . . .

फिर सती की तरफ देखकर दीपंकर बोला — लक्ष्मी दी क्या तुम्हारी माँजाई बहन नहीं है? उसके आगे मैं तुम्हारा कौन हूँ?

सती अचानक खड़ी हो गयी! बोली, सवेरे से तुमने मेरा काफी अपमान किया है दीपू, मैंने मुँह बंद करके सब बरदाश्त किया है, लेकिन अब मुझे बरदाश्त नहीं हो रहा है — तुम चुप रहो।

इसका कोई उत्तर दिये बिना बगल के कमरे में जाकर दीपंकर ने कपड़े बदल लिये और हाथ-मुँह धोये। फिर इस कमरे में आकर वह संतोष चाचा की लड़की की साड़ी सती की तरफ बढ़ाकर बोला — तुम इसे पहन लो।

सती ने साड़ी ले ली और कहा — जिसकी साड़ी है उसे पता चल जाने पर वह नाराज तो नहीं होगी?

दीपंकर बोला — यह तुमको नहीं सोचना पड़ेगा। अगर वह नाराज होगी भी

दीपंकर बोला — फिर ऐसा करती क्यों नहीं ? क्या मौका नहीं मिलता ?

सती बोली — अरे, मौका क्यों नहीं मिलेगा ? वहाँ तो फुरसत ही फुरसत है, उनके पास भी वक्त काफी है और मेरे पास भी कोई काम नहीं रहता।

— फिर क्या दिक्कत है ?

सती बोली — उन लोगों में यह सब नियम नहीं है। पहले पति खायेंगे, तब सास खायेंगी, फिर बहू खायेगी और उसके बाद नौकर-चाकर खायेंगे।

दीपंकर बोला — यह सब नियम तो पुराने जमाने में था, अब यह सब कौन मानता है ?

सती बोली — कोई माने या न माने, वे लोग तो मानते हैं !

दीपंकर बोला — लेकिन वह नियम तुमलोग क्यों मानते हो ? तुम सनातन बाबू के साथ कार में बैठकर घूमने जा सकती हो। तुमलोगों के पास कार है, नौकर-चाकर हैं, रसोइया है, फिर तुमलोगों को किस बात की परेशानी है ?

सती बोली — ऐसा ही यदि होता तो रोना किस बात का था दीपू ? अगर वे मुझे जरा डाँटते, किसी बात के लिए मना करते तो भी अच्छा लगता, कम से कम मैं यह तो समझती कि इस घर में मेरा अस्तित्व है। लेकिन वे तो कभी-कभी भूल ही जाते हैं कि मैं जिंदा हूँ और मेरा भी कोई नाम है ! लेकिन नहीं, मैं तो इस घर में मेज, कुर्सी या अलगनी की तरह की कोई चीज हूँ — मानो एक फर्नीचर के अलावा कुछ नहीं हूँ ....

फिर सती जरा हँसी।

दीपंकर बोला — क्या हुआ ? अचानक हँस क्यों रही हो ?

सती बोली — अचानक हँसी आ गयी — जानते हो दीपू, एक दिन मैंने पूछा, बताओ तो मेरा क्या नाम है ? मैंने सिर्फ मजाक करने के लिए उनसे यह पूछा था, लेकिन ताज्जुब की बात है भाई, वे मेरा नाम ही भूल गये थे ....

दीपंकर ने कहा — अरे ! ऐसा भी कभी हो सकता है ?

सती बोली — सच कह रही हूँ दीपू भाई, तुम्हें छूकर कह रही हूँ इसमें झूठ जरा भी नहीं है।

सचमुच सती ने एक उँगली से दीपंकर का हाथ छुआ।

दीपंकर ने कहा — क्या हुआ था, बताओ ....

— क्या बताऊँ ! अचानक मैंने पूछ लिया तो वे सोचने लगे, फिर बोले नाम ? हाँ, तुम्हारा नाम बड़ा अच्छा-सा तो है, क्या है नाम ?

वे सोचने लगे।

मैंने कहा — रहने दो, अब तुम्हें तकलीफ करके याद करने की जरूरत नहीं है, बहुत हुआ ....

तब वे बोले — हाँ, हाँ, याद आया है — सती, सती ....

मैंने कहा — बहुत खूब ! तुम्हारी याददाश्त बड़ी तगड़ी है। यह याददाश्त लेकर तुम एम० ए० तो पास कर सके लेकिन मेरा नाम भूल गये !

वे बोले — मैं जरा दूसरी बात सोच रहा था, इसलिए....

मैंने कहा — फिर तुम दूसरी बात ही सोचो, अब मैं तुम्हें तंग नहीं करूंगी —

— और मैं क्या बताऊँ दीपू, ज्यों ही मैंने यह कहा, त्यों ही वे करवट बदलकर खर्राटा लेने लगे। अब सोच सकते हो दीपू, ऐसे आदमी को लेकर कोई स्त्री कैसे निभा सकती है ! या निभाना क्या उसे अच्छा लगता है ! लेकिन वे आदमी बुरे हैं यह भी मैं नहीं कहूँगी। ऐसे उनमें कोई दोष नहीं है। और लोगों में तो कितने ही दोष रहते हैं, वे सब उनमें नहीं हैं। कोई चारित्रिक दोष नहीं है। बड़े घर के लड़के हैं, ऐसा कोई दोष उनमें होता तो मैं क्या कर लेती ? वे शराब भी पी सकते थे। लेकिन वह सब दोष भी उनमें नहीं हैं। एकदम जिसको साधु कहना चाहिए, वही वे हैं। यहाँ तक कि वे पान तक नहीं खाते। घर में रहते हैं इसलिए सफेद धोती-कुर्ता पहनते हैं, अगर वे गेरुआ पहनते तो मैं उन्हें सन्यासी ही कहती। अगर वे पूरे सन्यासी होते तो मुझे कोई अफसोस न रहता। सोचती कि चलो, मेरी शादी एक सन्यासी से हुई है। लेकिन वे न इधर के हैं, न उधर के। इसलिए कभी-कभी मैं सोचती हूँ कि अगर वे मद्यप, लम्पट और भ्रष्टाचारी होते तो शायद इससे अच्छा होता। फिर भी मैं समझ सकती कि वे एक इन्सान हैं। लेकिन यह तो विचित्र स्थित है। न वे पूरे देवता हैं और न पूरे मनुष्य। वह मानो दोनों के बीच स्थित हैं।

फिर अचानक दीपंकर की तरफ देखकर सती बोली — तुम्हीं बताओ न दीपू, पुरुष अगर पुरुष की तरह न हो तो किसको अच्छा लगता है ?

दीपंकर इस बात का कोई उत्तर न दे सका। सती की आवाज में न जाने कैसी रुलाई घुली-मिली थी। वह आवाज शिकायत की नहीं, उलाहने की नहीं, बस रोने की है। दीपंकर को सचमुच सती पर बड़ी दया आयी।

— मैं यह सब कह रही हूँ, इसलिए तुम बुरा मत मानना दीपू ....

— नहीं, नहीं, तुम कहो ...

सती बोली — फिर मैं तुमसे न कहूँगी तो और किससे कहूँगी बताओ ? आखिर वह सब कौन सुने और समझेगा ? फिर मेरे बारे में कौन इतना सिर खपाता है ! पिताजी से यह सब कहा नहीं जा सकता। रही लक्ष्मी दी। अगर लक्ष्मी दी जहन्नुम में न गयी होती तो शायद वह समझती ! लेकिन यह तो मेरी वैसी दीदी नहीं है। वह तो एकदम बरबाद हो चुकी है। आश्चर्य की बात है, वह शराब पीती है ! आज क्या मैं यों ही उससे लड़ी थी ?

दीपंकर बोला — तुमसे किसने कहा है कि वह शराब पीती है ? .

सती बोली — मैं जान गयी हूँ।

— लक्ष्मी दी ने तुमसे कहा है ?

सती बोली — नहीं, उसके मुँह से शराब की बू निकल रही थी। तुम दफ्तर चले गये तो वह मुझे उपदेश देने बैठ गयी। मैंने सोचा कि अनेक कष्ट भोगकर दीदी को पश्चात्ताप हुआ है। लेकिन उसके मुँह से शराब की बू निकलते ही मैंने पकड़ा। कहा — तुम शराब पीती हो लक्ष्मी दी? तुम्हारे मुँह से शराब की बू आ रही है।

लक्ष्मी दी बोली — नहीं, यह होमियोपैथिक दवा की गंध है।

— जानते हो दीपू, पहले उसने छिपाने की कोशिश की! फिर उसने समझ लिया कि मैं समझ नहीं पाऊँगी। लेकिन मैंने तो रंगून में बर्मियों को देखा है। वे लोग शराब पीकर सड़क पर ऊधम मचाते हुए चलते थे। इसलिए शराब की बू मैं पहचानती हूँ। मैंने धक्के देकर लक्ष्मी दी को गिरा दिया। कहा — निकल जाओ इस घर से। तुम शराब पीकर मुझसे बातें करने आयी हो?

धक्का देते ही लक्ष्मी दी एकदम उस दीवार से टकराकर फर्श पर गिर पड़ी।

दीपंकर बोला—अरे! तुमने तो अंधेर कर दिया। उसे चोट तो नहीं आयी?

सती बोली — आयी क्यों नहीं! खूब आयी है। शायद सिर थोड़ा कट गया है। मुझे उस समय गुस्सा आ गया था, होश नहीं था, हम दोनों की चिल्लाहट से तुम्हारा नौकर भी दौड़कर आया था। उसी हालत में मैंने लक्ष्मी दी को लात मारी थी, जो मन में आया था गाली बकी थी और जो मन आया था वही कहकर चिल्लायी भी थी।

दीपंकर का मानो दम घुटने लगा। बोला — छी, छी, तुमने लक्ष्मी दी को मारा? लक्ष्मी दी पर लात चलायी?

सती बोली — मैं क्या करती! उस समय क्या मुझे होश था? मैं उस समय अपनी परेशानी झेल रही थी, कई दिन सोयी नहीं थी, खा भी न सकी थी, नहा न सकी थी, उस हालत में लक्ष्मी दी का तमाशा देखकर मेरे सिर पर खून सवार हो गया था।

— फिर क्या हुआ?

सती बोली — फिर मैं चिल्लाकर कहने लगी — निकल जाओ तुम — शायद लक्ष्मी दी के सिर में ज्यादा चोट लगी थी। वह दोनों हाथों से सिर दाबकर धीरे-धीरे सीढ़ी से नीचे उतर गयी। शायद उसके सिर में चोट लगी है।

दीपंकर बोला — छी! तुमने लक्ष्मी पर हाथ चला दिया? मुझे पहले मालूम होता तो मैं उसे देख आता। मैं उसे खुद बुला लाया था, नहीं वह तो आना ही नहीं चाहती थी। देखो तो तुमने क्या गजब कर दिया! उसे कितनी तकलीफ है, तुम क्या जानती हो? जानती हो, अगर उसकी जगह कोई और स्त्री होती तो न जाने अब तक कहाँ विला जाती!

— विला जाने में अब भी कुछ बाकी है क्या?

दीपंकर बोला — इस तरह नहीं कहते सती — छी! चाहे दीदी हो या न

हो, एक इन्सान तो हूँ। लक्ष्मी दी भी मनुष्य हैं! गलती मनुष्य से होती है, पाप मनुष्य ही करता है, तुम अपनी बात एक बार क्यों नहीं सोचती?

सती बोली—तो क्या लक्ष्मी दी शराब पियेंगी? क्या भले घर की स्त्रियाँ शराब पीती हैं?

दीपंकर बोला—लेकिन क्यों पीती है, यह तो तुमने लक्ष्मी दी से पूछा नहीं? अगर तुम पूछती तो इस तरह गुस्सा न होती।

सती बोली—लेकिन इसके लिए तो लक्ष्मी दी खुद जिम्मेदार है। अगर कोई आगे बढ़कर अपना दुर्भाग्य बुला लाये तो किसको दोष दिया जा सकता है? यह तो बताओ?

दीपंकर बोला—मान लेता हूँ कि अपने दुर्भाग्य के लिए लक्ष्मी दी खुद जिम्मेदार हैं। उसने घर से भागकर असामाजिक काम किया जिससे वह तकलीफ पा रही है, लेकिन तुम? काफी देख-सुनकर, बहुत रुपये खर्च कर तुम्हारे पिता ने तुम्हारी शादी की है, तुम्हारे ससुरालवाले बहुत बड़े आदमी हैं, उनके खानदान का बड़ा नाम है, कहीं कोई कमी नहीं है—फिर भी तुम क्यों कष्ट पा रही हो? तुमको क्यों ससुराल छोड़कर आना पड़ा? इसका भी तो जवाब दो!

सती को मानो इसका सचमुच कोई जवाब नहीं मिला।

थोड़ी देर रुककर सती अचानक बोली—सचमुच बताओ तो मैं क्या करूँ?

दीपंकर बोला—वह तो मैंने तुमसे पहले कहा है ....

—क्या? क्या कहा है?

दीपंकर बोला—तुम्हें ससुराल लौट जाना चाहिये ....

सती बोली—लेकिन वहाँ मुझे जरा भी सुख नहीं है, शांति नहीं है। वहाँ रहूँगी तो मैं पागल हो जाऊँगी, आत्महत्या कर लूँगी ....

दीपंकर बोला—इतना न सोचो। जितना सोचोगी, उतनी ही अशांति बढ़ेगी।

—लेकिन सोचे बिना मैं रह नहीं सकती दीपू। अपने पति की बात और अपने सुख-दुःख की बात ही नहीं सोचूँगी तो क्या लेकर जिंदा रहूँगी? क्या मेरा बेटा या बेटी धरी है कि उसे छाती से लगाये सब भूली रहूँगी?

दीपंकर ने देखा कि सती अपनी बात कहती हुई धीरे-धीरे उदासी में डूबने लगी थी। अगर और थोड़ी देर वह अपनी बात करती तो एकदम उदासी में खो जाती। इसलिए दीपंकर ने कहा—चलो, अब जाकर सो जाओ। कई दिनों से तुम सोयी नहीं, बिना सोये तुम्हारी सेहत बिगड़ जायेगी।

सती बोली—लेकिन तुम बताओ न दीपू, मैं क्या करूँ? मेरा अन्तिम परिणाम क्या होगा? मैं कहाँ रहूँगी और कौन मुझे सम्हालेगा?

दीपंकर बोला — इन बातों को लेकर जितना सोचती रहोगी, इन बातों की जितनी चर्चा करोगी, उतना ही मन खराब होगा, स्वास्थ्य बिगड़ेगा, इसलिए चलो, उठो — उस कमरे में जाकर सो जाओ ....

नीचे काशी शायद रसोईघर धो रहा था। झाड़ू की आवाज ऊपर आ रही थी। बाहर सड़क पर से ट्राम की आवाज भी आ रही थी। थकावट के मारे दीपंकर की आँखें बन्द होने लगीं। एकदम सवेरे से इतनी रात तक वह न जाने कहाँ-कहाँ घूमता रहा। कितना लम्बा रास्ता वह चला था! कितने आनन्द, कितनी व्यथा और कितनी उत्तेजना के संघातों से वह जर्जर हुआ था। इसलिए इतनी देर बाद उसका शरीर थकावट से भर उठा था।

सती बोली — अपने लिए मैं तुम्हें भी कितना कष्ट दे रही हूँ दीपू, शायद तुम्हें नींद आ रही है — सवेरे से तुम न जाने कहाँ-कहाँ तुम घूमते रहे, उसके बाद दफ्तर में काम भी करते रहे ....

दीपंकर बोला — मेरी बात रहने दो, एक दिन जरा ज्यादा खटने पर मेरा कोई नुकसान नहीं होगा।

सती बोली — लेकिन मैं क्या करूँ किसी तरह समझ नहीं पा रही हूँ। देखो दीपू, इस बात को लेकर मैं अकेली बैठी कितना सोचती रही, तुमसे क्या बताऊँ। आज तो फिर भी तुम हो, इसलिए तुमसे बात कर अपने को हलका महसूस कर रही हूँ। लेकिन मैं इसी तरह रोज सोचती रहती हूँ भाई। बिस्तर पर लेटते ही मेरी चिंताएँ पंख फैलाना शुरू कर देती हैं। लेकिन सोच-सोचकर भी उनका कोई ओर-छोर नहीं मिलता। घड़ी में ठन-ठन दस बजते हैं, ग्यारह बजते हैं, बारह बजते हैं, एक बजता है — इस तरह एक-एक कर कब सब घन्टे बज जाते हैं और अब रात ख़त्म होती है, लेटे-लेटे मुझे सब पता चल जाता है—लेकिन सोच-सोचकर कोई उपाय नहीं निकाल पाती....

दीपंकर बोला — कल सवेरे उठकर जो कुछ सोचना होगा सोचना, अभी जाकर सो जाओ ....

सती बोली — नींद से मेरी भी पलकें झपी जा रही हैं, लेकिन लेटते ही नींद न जाने कहाँ भाग जायेगी — तब चित्त लेटी दुनिया भर की ऊलजलूल बातें सोचने लगूँगी ....

— लेकिन सोचकर कुछ कर तो नहीं सकोगी?

सती बोली — हाँ, कुछ भी नहीं कर सकूँगी, फिर भी सोचती रहूँगी — यही तो मेरी बीमारी है।

दीपंकर बोला — शंभु से कल सवेरे आने के लिए कह दिया है, वह आकर जैसा कहे, उसी हिसाब से कुछ करना ....

सती बोली — उस आदमी को तो तुम नहीं जानते दीपू, इसीलिए ऐसी बात कर रहे हो।

दीपंकर बोला — मैंने अच्छी तरह जान लिया है, सनातन बाबू जैसा पति किसी को जल्दी नसीब नहीं होता।

सती बोली — हाँ, वैसा पति तो किसी को भी नसीब न हो दीपू, किसी को भी नहीं! अगर मेरे पिताजी उसकी जगह एक गरीब क्लर्क से मेरी शादी कर देते तो मैं सुखी होती भाई! छोटा मकान, छोटा परिवार, कम तनख्वाह, लेकिन उसी कम आमदनी में हम सुख से नहीं तो शांति से तो अपना जीवन बिताते। वह दिनभर दफ्तर में खटकर शाम को मेरे पास आकर आराम चाहता और मैं भी उसे उस वक्त आराम देने के लिए दिनभर बेचैन रहती। ईश्वर गांगुली लेन में रहते समय दूसरी मंजिल की खिड़की से मैंने ऐसे छोटे परिवार बहुत देखे हैं। आज मेरा मन करता है कि फिर उसी ईश्वर गांगुली लेन में लौट जाऊँ। लेकिन न जाने क्यों इतने बड़े घर में शादी हुई, न जाने क्यों उन लोगों के पास इतने रुपये हैं और न जाने क्यों उनको कुछ नहीं करना पड़ता! जानते हो दीपू, उस घर में प्यास लगने पर कोई अपने हाथ से पानी भी लेकर नहीं पीता। मैं न रहूँगी तो भी उस आदमी को कोई तकलीफ नहीं होगी — पाँव दबाने के लिए नौकर हैं, बीमार पड़ने पर डाक्टर और नर्सें हैं, एक गिलास पानी पीने की इच्छा होने पर भी उसके लिए उस घर में नौकर हैं — मैंने देखा है दीपू, उस आदमी के लिए मैं एकदम फालतू हूँ....

दीपंकर बोला — छोड़ो, वह सब सोचने पर तकलीफ ही होती है, इसलिए क्यों वही सब सोच रही हो?

सती बोला — लेकिन सोचे बिना क्या करूँ बताओ?

— क्या सोचकर भी तुम कोई रास्ता निकाल सकोगी?

सती फिर कहने लगी — जानते हो दीपू, कभी-कभी मन करता है कि मैं सचमुच कहीं चली जाऊँ — जैसे आज तुम्हारे पास चली आयी हूँ, ऐसे छिपकर नहीं, *बल्कि उन लोगों को बताकर एकदम उनकी आँखों के सामने से कहीं चली जाऊँ*, फिर देखूँ कि वे लोग क्या करते हैं?

दीपंकर कुछ समझ नहीं पाया। बोला — इसका क्या मतलब है? कहाँ जाओगी?

सती बोली — यही समझ लो कि उन्हीं के मकान के सामने, एकदम दूसरी पटरी पर किसी मकान का कमरा किराये पर लेकर रहूँ और जिस तरह लक्ष्मी दी रह रही हैं, उसी तरह मैं भी अपना जीवन बिताऊँ। मन करता है कि उन्हीं की आँखों के सामने अपने घर में बाहरी लोगों को लाकर बिठाऊँ, ताश खेलूँ, गाना गाऊँ और जो मेरे मन में आये सो करूँ। ठीक लक्ष्मी दी जिस तरह पान और जर्दा खाकर बाहरी लोगों से हँस-हँसकर बात करती हैं, उसी तरह उन लोगों को सुनाकर मैं भी करूँ और वे लोग खिड़की से यह सब देखें — फिर वे लोग क्या करते हैं, सिर्फ यही जानने को मन करता है....

दीपंकर बोला — कितनी विचित्र कल्पनाएँ तुम्हारे दिमाग में आती हैं, न जाने तुम कितना सोच सकती हो !

सती बोली — नहीं दीपू, ये विचित्र कल्पनाएं नहीं हैं, सचमुच मेरा मन करता है कि उन लोगों के मकान के सामने ही कोई मकान किराये पर लूं और वहीं उनकी आँखों के आगे मौज उड़ाऊँ। फिर वे देखें कि मैं भी बदला ले सकती हूँ। उनके व्यवहार का जवाब दे सकती हूँ।

दीपंकर उठा। बोला — चलो, उठो, जाकर सो जाओ — जितनी बातें तुम्हारे दिमाग में आती हैं, सब फालतू ही हैं।

सती उठी। बोली — तुम फालतू बातें कह रहे हो दीपू, लेकिन एक दिन तुम देखोगे कि मुझे वही रास्ता अख्तियार करना पड़ेगा।

— छीः सती ! तुम अपने पिताजी की बात याद करो !

सती बोली — पिताजी के पास तो मैं अभी जा सकती हूँ। पिताजी को चिट्ठी लिख देने पर वे आकर मुझे ले जायेंगे, लेकिन उससे तो मैं हार जाऊँगी दीपू, वे ही लोग जीत जायेंगे ....

यह कहकर सती देर तक सिर नीचा किये कुछ सोचती रही। रात काफी हो गयी थी। बाहर धीरे-धीरे खामोशी छाती जा रही थी। काशी बगलवाले कमरे में सती के लिए बिस्तर लगा गया था।

दीपंकर बोला — अब चलो सती, उठो ....

सती मानो अनिच्छा से उठी। बोली — जानते हो दीपू, विश्वास करो, अगर एक गरीब क्लर्क से मेरी शादी होती तो शायद मुझे ज्यादा ही सुख मिलता ! छोटा-सा एक कमरेवाला किराये का घर, साल में दो साड़ियाँ, लकड़ी का एक तख्त और रात-दिन लेनदारों का तगादा शायद इससे अच्छा होता।

यह कहती हुई सती बगल के कमरे में चली गयी। कमरे में जाकर वह चारों तरफ देखने लगी।

दीपंकर बोला — उधर देखो, दायें हाथ दरवाजा है, रात को अगर जरूरत पड़े तो उधर से बाहर जा सकती हो।

सती ने अच्छी तरह देख लिया। दीपंकर बोला — और इधर मेरा कमरा है, इधरवाले दरवाजे में सिटकिनी लगा देना ....

सती बोली — क्यों ? सिटकिनी लगाने की क्या जरूरत है ?

दीपंकर बोला — मुझे इस कमरे में कोई जरूरत नहीं है, तुम सिटकिनी लगा कर आराम से सो सकोगी।

सती मानो समझ नहीं पायी।

दीपंकर बोला — सिटकिनी लगा कर रोशनी बुझा दो और सो जाओ ....

सती बोली — लगा दूँ सिटकिनी ? इस कमरे में तुम्हें कोई जरूरत तो नहीं

पड़ेगी ? ठीक कह रहे हो न ?

— हाँ, हाँ, लगा लो सिटकिनी — अच्छी तरह लगा लो — मुझे कोई जरूरत नहीं है।

दीपंकर ने खुद दरवाजा बंद कर इधर से कहा — हाँ, अब सिटकिनी लगा लो ....

लेकिन उधर से कोई आवाज नहीं हुई।

दीपंकर ने थोड़ी देर इंतजार किया। उसके बाद कहा — अरे, तुमने दरवाजा बंद नहीं किया ?

सती ने फिर भी सिटकिनी नहीं लगायी। दीपंकर ने दरवाजा खोलकर देखा कि सती बिस्तर पर बैठ गयी थी। शायद वह सोने की बात सोच रही थी। दीपंकर बोला — क्या हुआ ? दरवाजा तो बंद कर लो।

सती बोली — बाप रे बाप ! तुम तो मुझपर अब भी विश्वास नहीं कर पा रहे हो ....

दीपंकर बोला — विश्वास करने की बात नहीं है, मैं तुम्हारे भले के लिए कर रहा हूँ, नहीं तो मेरा क्या ?

अंत में सती ने उठकर अन्दर से दरवाजा बंद कर लिया। उधर से सिटकिनी लगाने की आवाज आयी। अब जाकर मानो दीपंकर निश्चिंत हुआ।

अब दीपंकर भी सोने का इंतजाम करने लगा। आज खूब खटना पड़ा था। दौड़-धूप भी खूब हुई थी। नींद के मारे उसकी आँखें मानो बंद होने को आयी। इतने में काशी अचानक कमरे में आया। बोला — दादाबाबू, वही दूसरी बहूदीदी आयी है ....

— कहाँ ? कौन आयी है ?

तब तक लक्ष्मी दी कमरे में आ गयी। लक्ष्मी दी की शकल देखकर दीपंकर आश्चर्य में पड़ गया। बोला — लक्ष्मी दी, आप इतनी रात को ?

लक्ष्मी दी के सिर पर पट्टी बँधी थी। पट्टी को उसने घूंघट से ढँक रखा था।

वह बोली — सती कहाँ है ?

दीपंकर बोला — बगल के कमरे में सो रही है। क्यों ?

लक्ष्मी दी बोली — मैं आना नहीं चाहती थी। लेकिन आये बिना रह [illegible] भले ही सती मुझे नहीं सह सकती, लेकिन जानता है [illegible] घर जाकर भी मन [illegible] करने लगा। सोचा, मेरे ही कारण आज उसे यह सजा मिल रही है ! [illegible] देखने चली आयी। फिर यह रुपया भी तू रख ले [illegible] मुझे इसकी जरूरत [illegible]

यह कहकर लक्ष्मी दी ने दीपंकर की तरफ दस रुपये का नोट [illegible]

दीपंकर बोला — क्या इसीलिए आप इतनी रात को आयी हैं [illegible] में भी लौटाया जा सकता था।

लक्ष्मी दी बोली — नहीं, असल में तो मैं सती के लिए [illegible]

लड़की के भाग्य में भी कितना कष्ट है। आज घर लौटकर मैं दिनभर उसकी बात सोचती रही। उसकी बात सोचते-सोचते आज कुछ खा भी नहीं सकी।

दीपंकर बोला — इतनी रात को आप किसके साथ आयी हैं ?

लक्ष्मी दी बोली — आज सुधांशु अपनी कार लाया था। उसी ने मुझे पहुँचा दिया है, अब मुझे मेरे घर छोड़कर अपने घर जायेगा। वह सड़क पर इंतजार कर रहा है। काफी देर से आने के लिए सोच रही थी। शाम होते ही सब लोग आ गये, फिर देर तक उन लोगों का खेल चलता रहा। आखिर मैंने जबर्दस्ती उन लोगों को उठाया। क्या सती सो गयी है ?

दीपंकर बोला — हाँ, बहुत पहले सो गयी है।

लक्ष्मी दी बोली — कमरा बंद करके सोने के लिए कह दिया है न ?

दीपंकर बोला — हाँ, सिटकिनी लगाकर सोयी है —

लक्ष्मी दी ने न जाने क्या सोच लिया, फिर कहा — ठीक है, अभी मैं जाऊँ दीपू, वे लोग मेरे लिए कार में इंतजार कर रहे हैं। मैं तो सती को ससुराल न भेज सकी, अब देख, तू अगर भेज सके तो कोशिश करना ....

दीपंकर बोला — मैं कैसे भेजूंगा बताइए ? क्या वह मेरी बात मानेगी ?

लक्ष्मी दी बोली —भई, मैं तो हार गयी हूँ। जितनी हो सकती थी, मैंने कोशिश की। आखिर उसने मुझे गाली दी और खींचकर फर्श पर गिरा दिया। अब मैं क्या कर सकती हूँ ? मैं मुँह बन्द कर सब बरदाश्त करती गयी। अब पिताजी के पास चिट्ठी गयी है, वे ही आकर जैसा उचित समझेंगे करेंगे।

दीपंकर बोला — लेकिन वह चिट्ठी मैंने आपके पिताजी के पास नहीं भेजी।

— क्यों ?

दीपंकर बोला — चिट्ठी छोड़ने जाकर मुझे न जाने क्यों शक हुआ, मैंने सोचा कि देख लिया जाय सती ने पिताजी को क्या लिखा है ! देखा कि चिट्ठी में सब झूठी बातें लिखी हुई हैं। फिर मैंने वह चिट्ठी फाड़कर फेंक दी।

— अरे ! तू क्या कह रहा है ? फिर क्या होगा ?

दीपंकर बोला — मैं सोच रहा हूँ कि सती तो अपनी हालत के बारे में पिताजी को कुछ नहीं लिखेगी, इसलिए मैं ही सारी बात लिखकर एक खत डाल दूँ। सोच रहा हूँ कि कल एक टेलीग्राम ही भेज दूँ ताकि उनको जल्दी से जल्दी खबर मिल जाय।

लक्ष्मी दी बोली — तू जैसा ठीक समझता है कर, मैं तो कुछ भी समझ नहीं पा रही हूँ।

यह कहकर लक्ष्मी दी कमरे से निकलकर नीचे जाने लगी।

दीपंकर बोला — आज अगर आप यहाँ रह जातीं लक्ष्मी दी, तो मैं कम से कम निश्चिंत हो जाता ....

लक्ष्मी दी बोली — मैं कैसे रह सकती हूँ बता, मेरी परेशानी तो तू नहीं

समझ सकेगा। सबेरे सती ने मुझसे जैसा व्यवहार किया है, कोई और होता तो फिर इस घर में आने का नाम न लेता। सिर में दो इंच लम्बा घाव हो गया है, भनभना कर खून निकलने लगा था। मैं सीधे यहाँ से डाक्टर के पास गयी तब राहत मिली।

बाहर सड़क पर मोटर का हार्न बजा। याने इंतजार करने वाले ऊब रहे हैं।

लक्ष्मी दी बोली — वह देख, वे लोग लौटने के लिये जल्दी मचा रहे हैं। हां, एक बात याद आयी, सती तो अपने साथ साड़ी-ओढ़नी लायी न होगी? एक बार सोचा कि मैं अपने कुछ कपड़े लेती आऊँ, लेकिन फिर सोचा कि सती तो मुझे देख भी नहीं सकती, क्या वह मेरे कपड़े छुएगी, शायद गुस्सा होकर दूर फेंक देगी।

दीपंकर बोला —आप इसके लिए मत सोचिए, जरूरत पड़ेगी तो मैं खरीद दूँगा।

सीढ़ी से उतरते वक्त लक्ष्मी दी ने पूछा — मौसीजी कब लौटेंगी?

दीपंकर बोला — आज तो माँ बनारस पहुँची हैं, कल सवेरे खत मिलने की उम्मीद कर रहा हूँ।

लक्ष्मी दी बोली — अगर हो सका तो कल सवेरे एक बार मैं फिर आ जाऊँगी।

दीपंकर फिर बोला — लेकिन आज रात आप रह जाती तो बड़ा अच्छा होता।

लक्ष्मी दी बोली — फिर तेरे मिस्टर दातार को कौन देखेगा? वैसे आदमी को, अकेले मकान में छोड़कर मैं यहाँ कैसे रह सकती हूँ भला?

यह कहकर लक्ष्मी दी दरवाजा खोलकर बाहर सड़क पर चली गयी। अंधेरे में ही दीपंकर ने देखा कि बाहर एक कार खड़ी थी। उसमें बैठे कई लोगों की धुंधली शक्लें नजर आयीं। सभी के मुँह में सिगरेट थे। सब जोर-जोर से हँस रहे थे। लक्ष्मी दी जाकर कार में बैठ गयी तो कार एक बार चीख उठी। फिर वह धुआँ उड़ाती हुई मुहल्ले की खामोशी को झकझोरती हुई दूर जाकर ओझल हो गयी। कार चले जाने के बाद भी उतनी रात को उस अंधेरे में दीपंकर काफी देर वहाँ चुपचाप खड़ा रहा।

अगर कभी किसी दिन किसी के पास दीपंकर को जवाबदेही करनी पड़े कि क्यों उस दिन उसने मनुष्य की आत्मा की पुकार को उस तरह अनसुनी कर दिया था तो उसके पास पेश करने लायक कोई जवाब ही न होगा। शायद अपने को क्षमा करने का मौका भी उसे कभी नहीं मिलेगा। इतने दिनों तक वह छोटा था। उस छोटे की दृष्टि बड़े की तरफ जमी थी। छोटे से बड़ा बनना होगा। सिर्फ मानसिकता में नहीं, दुर्लभ मानवता को पाकर भी नहीं, बल्कि प्रेम, ज्ञान, सहयोगिता और सहानुभूति के खुले आंगन में कदम रखकर बड़ा होना होगा।

लेकिन मां की निगाह में तो दीपंकर बड़ा ही हुआ था। मां ने जैसा चाहा था, दीपंकर वैसा ही बना था। वैसी छोटी हैसियत से वह और कितना धन-दौलत, मान-मर्यादा और रोब-दाब हासिल कर सकता था? इतना भी कितने लोगों ने किया है? कितने लोग दीपंकर की तरह बड़े बने हैं? दीपंकर को देखते ही दफ्तर के फाटक पर गोरखा दरबान उसे सैलूट करता है। मधु झटपट आकर स्विंगडोर खोलकर खड़ा हो जाता है। क्लर्क लोग दीपंकर का आदर और सम्मान करते हैं। दीपंकर से बात करते समय वे डरते रहते हैं। अभी तो दीपंकर की उम्र भी कम है। धीरे-धीरे उसकी और तरक्की होगी, तब उसका सम्मान और बढ़ेगा, क्लर्क उससे और डरेंगे और गेट पर गोरखा दरबान उसे देखकर और जोर से सैलूट मारेगा। जब वह दफ्तर जाता है, तब मुहल्ले के चार भले लोग अभी से उसकी तरफ ललचायी आंखों से देखते हैं। वह कितनी बड़ी नौकरी करता है और कितनी ज्यादा तनख्वाह पाता है! इस मुहल्ले के लड़के भी चंदा मांगते समय उससे कितनी इज्जत से बात करते हैं! शायद उन लड़कों को भी उसकी तनख्वाह का पता चल गया है। शायद वे लड़के उसकी पद-मर्यादा भी जान गये हैं। लेकिन इसी को क्या बड़ा होना कहा जाता है?

कभी-कभी दीपंकर मां से पूछता था — मां, तुमने जो चाहा था, वह तो तुम्हें मिल गया है न?

मां बेटे की बात समझ नहीं पाती थी। इसलिए वह कहती थी — मैं तेरी बात का ओर-छोर समझ नहीं पाती। तू क्या कह रहा है?

दीपंकर पूछता था — अगर मैं अदना किरानी होता, हर महीने उधार लेकर घर का खर्च चलाता और साबुन से साफ किये कपड़े पहनकर दफ्तर जाता, लेकिन सही रास्ते चलकर सही ढंग से जीवन बिताता तो क्या तुम मुझसे कम प्यार करती मां?

मां हंसती थी और कहती थी — क्या ऐसा कोई मां कर सकती है?

दीपंकर कहता था — लेकिन तुमने तो मां, यही चाहा था कि मेरे पास खूब

रुपया हो। तुमने तो चाहा था कि मैं बहुत बड़ी नौकरी करूँ और साहब मुझसे खुश रहे, यह सब तो हुआ है माँ। हमारी अलग गृहस्थी हो गयी है और तुम्हें दूसरे के घर खिदमत नहीं करनी पड़ती, तुमने तो यही चाहा था।

माँ कहती थी — आज अचानक तू यह सब क्यों पूछ रहा है?

दीपंकर कहता था — नहीं माँ तुम मेरी बात का जवाब दो। तुम्हीं ने तो कभी अपने पाँव छुआकर प्रतिज्ञा करायी थी कि मैं कभी स्वराज न करूँ और कभी जेल न जाऊँ। मैंने वह प्रतिज्ञा निभायी है। लेकिन मैं यह पूछ रहा हूँ कि क्या इससे तुम सुखी हो?

माँ बेटे की बात सुनकर आश्चर्य में पड़ जाती थी और कहती थी — लो, अब बेटे की बात सुनो! क्या मैंने तेरा बुरा किया था? क्या उससे तेरा भला नहीं हुआ? तू क्या कह रहा है?

दीपंकर कहता था — तुम मेरी बात छोड़ो माँ, मैं अगर सुभाषचन्द्र बोस की तरह होता तो क्या तुम नाराज होती?

— क्यों न नाराज होती? भले घर का लड़का होकर तू जेल जायेगा? क्या भले घर का लड़का जेल जाता है? देख न नृपेन बाबू को, जिन्होंने तुझे नौकरी दिलायी थी, उस दिन देखा, उन्होंने कितना बढ़िया मकान बनाया है, देखते ही तबीयत खुश हो गयी। इसलिए उस दिन मैंने उनसे कहा — भैया, आप बराबर गरीबों का भला करते आये हैं, आपको सुख नहीं मिलेगा तो किसको मिलेगा?

दीपंकर हँसता था और कहता था — अगर मैं किरण की तरह होता माँ?

— हट! तू किसका नाम ले रहा है! वह क्या अच्छा लड़का है? अगर तू उसका साथ करता तो उसी तरह बिगड़ जाता और उसकी माँ की तरह मुझे भी भुगतना पड़ता। बड़ा पाप करने पर वैसा लड़का कोख में आता है।

दीपंकर कहता था — अगर माँ, मैं छिटे-फोटा की तरह होता?

माँ बिगड़ जाती थी। कहती थी — अब तू उन लोगों का नाम मत ले! उस मकान से चली आयी हूँ तब जाकर जान बची है।

— लेकिन तुम तो नहीं जानतीं माँ, उन लोगों ने भी मकान बनाया है।

— मकान बनाया है! कहाँ मकान बनाया है?

माँ के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

दीपंकर बोला — अघोर नाना का वही मकान तोड़कर उन लोगों ने वहाँ कांक्रीट का बहुत बड़ा मकान बनाया है। अब तो उनलोगों के पास मोटरकार भी है, वे कांग्रेस के मेम्बर बन गये हैं। उनलोगों ने अपने मकान को रोशनी और फूलों के पौधों से इस तरह सजाया है कि अब तुम उस मकान को देखकर पहचान भी नहीं पाओगी।

माँ बोली — अरे! मैंने तो यह सब कुछ नहीं सुना।

दीपंकर बोला — अब छिटे-फोंटा की शकल-सूरत भी अच्छी हो गयी है, अब उनकी बीवियाँ मोटरगाड़ी में बैठकर घूमती हैं और उस मकान पर नाम लिखा गया है — 'अघोर सौध'। अब उस मकान में जाओगी तो तुम्हें डर लगने लगेगा — इतना बड़ा मकान है!

माँ यह खबर सुनकर चकित हुई थी और उसने पूछा था — क्या तू उधर गया था? कब गया था?

इस सवाल का जवाब न देकर दीपंकर ने कहा — अगर मैं उनकी तरह होता तो क्या तुम खुश होतीं?

माँ बोली — अब मैं तुझसे बहस नहीं कर सकती। तेरी बात विचित्र होती है।

यह कहकर माँ काम के बहाने रसोईघर में चली गयी थी। शायद तर्क के आगे माँ हार गयी थी, लेकिन दीपंकर को अपने प्रश्न का उत्तर नहीं मिला था। किरण अपने जीवन में कुछ नहीं बन सका था, क्या इसीलिए वह छोटा है? और छिटे-फोंटा? उनका मकान बड़ा है और उनकी प्रतिष्ठा बड़ी है — क्या यही उनके बड़े होने की सनद है?

अभी उस दिन उस मुहल्ले में दीपंकर गया था। हालाँकि महीने में एक बार उसे उस मुहल्ले में जरूर जाना पड़ता है। जाकर किरण की माँ के हाथ पर दस रुपये रख आना पड़ता है। हर महीने दफ्तर से लौटते समय वह दरवाजे पर जाकर पुकारता है — मौसीजी।

अब किरण की माँ का स्वास्थ्य पहले का-सा नहीं है। अब उसमें पहले की-सी शक्ति भी नहीं है। अब वह जनेऊ नहीं बना सकती। बनाने पर बेचनेवाला भी कोई नहीं है। शायद अब जनेऊ पहनने का रिवाज भी खत्म हो चला है। शायद अब कलकत्ते में गरीब और गरीबी से नफरत करने का युग शुरू हो गया है। यह सब सन् १९४० की बात है। उस समय जिनके पास रुपया नहीं था, उनको दया दिखाने के लिए मुहल्लों में संस्थाएँ बनने लगी थीं। उसी समय मानव-सेवा संस्थाओं की आड़ में गरीबी के प्रति सभ्य जनों की घृणा और उपेक्षा इकट्ठा होने लगी थी। उसी समय नृत्य-गीत-जलसा आदि समारोहों के नाम पर सेवा-कार्य चालू हुआ। किरण की माँ जैसों के लिए ही वे संस्थाएँ बनीं। लेकिन किरण की माँ जैसों को वहाँ से अनुग्रह के बदले निग्रह ही मिला!

दीपंकर पूछता — क्या किरण की कोई खबर मिली मौसीजी?

बाद में तो किरण की माँ मानो किरण का नाम भी भूल गयी थी। किरण नाम का कोई व्यक्ति कभी इस दुनिया में था, यह भी मानो किरण की माँ बाद में भूलने लगी थी। किरण का नाम सुनकर मानो धीरे-धीरे फिर वह सब उस माँ को याद पड़ने लगता था। लेकिन दीपंकर तब भी किरण की बात भूल नहीं सका था।

— क्या तुम्हें उसकी कोई खबर मिली है बेटा ?

मानो दुनिया में उस समय सिर्फ एक आदमी ने किरण को याद रखा था। उसके अलावा किरण को रायबहादुर नलिनी मजूमदार के आई० बी० आफिस की पुरानी रेकार्ड फाइल ने याद रखा था।

दीपंकर कहता — सुनने में आया है कि किरण इंडिया छोड़कर चला गया है ....

— तब तो वह जान से बच गया होगा बेटा।

मानो जान से बच जाना ही काफी है। मानो किरण जिंदा रहे तो माँ को शांति मिले। माँ इससे अधिक की आशा कर भी नहीं सकती।

— अब की बार दो नोट दिये बेटा ? मैं तो आँखों से देख नहीं सकती, इस बार कितना दिया ?

दीपंकर बोला — मेरी तनख्वाह बढ़ी है मौसीजी, दफ्तर में तनख्वाह काफी बढ़ गयी है, इसलिए अब से आपको बीस रुपये करके ही दिया करूँगा ....

शायद कृतज्ञता से बुढ़िया की आँखों में आँसू उमड़ आते थे। या अपने बेटे की नालायकी की बात याद कर और दीपंकर से उसकी तुलना कर बुढ़िया को बड़ा कष्ट होता था। वह कहती थी — अब ज्यादा दिन तुम्हें नही देना पड़ेगा बेटा, अब मैं ज्यादा दिन तुम्हें तंग नही करूँगी — अब ज्यादा दिन तुम्हें तंग नहीं कर सकूँगी ....

यह कहकर मौसीजी आँचल से आँखें पोंछती थीं।

लेकिन किरण की माँ नही जानती थी कि दीपकर का यह रुपया देना उसकी कृतज्ञता का दान नही है, यह उसकी दया का बहिर्प्रकाश भी नही। अथवा यह दान उसके अहंकार का आत्मप्रचार भी नहीं है। सिर्फ किरण की माँ क्यों, यह कोई भी नहीं समझता था। अगर किसी से कहा भी जाता तो कोई नही समझ सकता था। कोई नही जानता था कि क्यों हर महीने को पहली तारीख को दफ्तर से घर लौटते समय दीपंकर कालीघाट के मोड़ पर आकर ट्राम से उतर पड़ता है। क्यों वह उस भीड़ भरी सड़क से धीरे-धीरे सबकी निगाह बचाकर नेपाल भट्टाचार्य लेन की बस्ती में आकर खड़ा होता है। कोई नही जानता था कि क्यो वह उस मकान के सामने जाकर दरवाजे की कुंडी खटखटाता है। भले ही कोई न जाने, लेकिन दीपकर खुद तो जानता था। वह अपने आप से विश्वासघात नहीं कर सकता था। वह तो जानता था कि महीने भर दफ्तर में मनुष्य की हीनता और नीचता के घेरे में काम करते हुए उसके जीवन में जितना पाप और जितना कलंक जम जाता था, उसको हर महीने की इसी पहली तारीख को वह धो डालता था। यह मानो दिन भर के बाद संध्या में देवता के मंदिर में जाकर आत्मनिवेदन करना है। दीपंकर मौसीजी के हाथ पर रुपया रखकर धीरे-से कहता था — किरण, मुझसे तो नही हो सका भाई, मैं तो हार गया हूँ, इस लिए तू मुझे क्षमा कर ....

उसके बाद मानो अपनी ही अयोग्यता से लज्जित होकर दीपंकर झटपट बाहर गली में आ जाता था। उस समय उसे अपने आप पर लज्जा आती थी। अपने ही पौरुष पर उसके मन में धिक्कार उठता था। उसे लगता था कि मानो हर चीज की कोई सीमा है। धन, गौरव, स्वास्थ्य और अहंकार — सब कुछ की सीमा है। महाभारत की अक्षौहिणी सेना की भी संख्या की कोई सीमा है। लेकिन उसकी लज्जा की तो मानो कोई सीमा ही नहीं है। तैंतीस रुपये घूस देने की लज्जा असीम है। पैंतीस रुपये में अपने को बेच देने की लज्जा की मानो कोई इंतिहा नहीं है।

इसी तरह उस दिन किरण के घर से निकलकर दीपंकर मानो रास्ता भूल गया था। उस दिन भी महीने की पहली तारीख थी। सचमुच रास्ता भूलने लायक उसकी हालत थी। जिस मुहल्ले में वह बचपन से बड़ा हुआ है, उसी मुहल्ले की उस जगह आकर मानो वह रास्ता भूल गया। यह कहाँ पहुच गया वह! कहाँ गया उन्नीस बटा एक-बी ईश्वर गांगुली लेन वाला मकान? कहाँ गया वह जाना-पहचाना दरवाजा, सती के मकान की वह सीढ़ी, ईंट निकली हुई वह दीवार और उसके पीछे वाला अमड़े का वह पेड़? वह पेड़ जिस पर एक कौआ दिन भर चुपचाप बैठा रहता था? वह सब कहाँ गया? कहाँ गया वह मकान?

दीपंकर ने ऊपर की तरफ देखा! मकान में लोहे का फाटक लगा था। बगल में गैरेज था। पीले रंग का चमचमाता नया मकान। ऊपर से नीचे तक कांक्रीट का बना। दूसरी मंजिल में रेडियो बजने की आवाज सुनाई पड़ी। दीपंकर उस आलीशान इमारत की तरफ से जल्दी आंखें न फेर सका।

लेकिन कहाँ गया अघोर नाना का वह पुराना मकान? कहाँ गया वह कमरा जहाँ दीपंकर सबेरे से रात तक छोटे से बड़े होने की यंत्रणा भोगता रहा था? क्या वह सब कुछ उसके जीवन से धुल-पुंछ गया? लेकिन किसने वह सब धो-पोंछ दिया? किसने इस तरह दीपंकर को विस्मृति की अतल गहराई में धकेल दिया? दीपंकर के सारे अस्तित्व को इस तरह धरती पर से समाप्त कर दिया? दीपंकर ने ऊपर की तरफ देखा। देखते ही उसे उस मकान के सिर पर पत्थर में खुदे बड़े-बड़े हर्फ दिखाई पड़े — 'अघोर सौध'।

उसी समय दीपंकर को लगा कि उस ऊँचाई पर से अघोर नाना ने मानो ठहाका लगाया।

मानो अघोर नाना बोल उठे — मुँहजले! देख लिया न! कौड़ियों से सब कुछ खरीदा जा सकता है, सब कुछ कौड़ियों के मोल बिकता है। देख मुँहजले, देख ले!

दीपंकर भी मानो विरोध में मुखर हो उठा — नहीं-नहीं, नहीं-नहीं ....

नींद में नहीं, जगा ही था दीपंकर। जगा हुआ ही वह चिल्ला पड़ा था।

इतनी देर बाद मानो दीपंकर को ख्याल हुआ। जैसे सब कुछ याद आया। याद आया कि वह दीपंकर सेन है। ऑफिस का सेन साहब। कल से वह ऑफिस का असिस्टेंट ऑफिसर बन जायेगा। ए० टी० एस०। कल से उसे और तरह, और झुका हुआ सेल्यूट मिलेगा। उसे याद आया कि लक्ष्मी दी इस मकान में आयी थी। फिर याद आया कि उसकी माँ चली गयी है। याद आया कि सती इसी मकान में है। इसी बगलवाले कमरे में। बगलवाले कमरे में सती दरवाजे में सिटकनी लगाकर सो रही है।

क्या संबंध हो गया है? क्या लक्ष्मी दी के जाने के बाद से वह अब तक बराबर जागता ही रहा? जागकर जलता रहा है? रात भर ऊलजलूल बातें सोचता रहा है?

दीपंकर उठा। उठकर वह गिलास में ढककर रखा पानी पूरा पी गया। फिर घड़ी की तरफ देखते ही वह अवाक् हो गया। रात के दो बजे थे।

दीपंकर फिर बिस्तर पर आकर बैठा। लेकिन सोना चाहकर भी वह सो न सका। किसी तरह उसे नींद नहीं आयी। लेकिन रातभर जागने से तबीयत खराब हो जायेगी। सवेरे बहुत काम करना है। सवेरे ही शंभु आयेगा। सवेरे ही सती को समझा-बुझाकर भेजना होगा। शायद उसके बाद लक्ष्मी दी आयेगी। फिर दफ्तर जाना पड़ेगा। कल से ही मिस्टर घोषाल की कुर्सी पर बैठना पड़ेगा। कल से ही दीपंकर को नयी जिम्मेदारी और नयी भूमिका निभानी पड़ेगी।

अचानक सट् से बगल के कमरे में कोई आवाज हुई।

दीपंकर फिर उठकर बैठ गया। क्या सती भी अभी तक जाग रही है! क्या सती को भी नींद नहीं आ रही है! दीपंकर देर तक कान लगाकर सुनता रहा। नहीं, फिर कोई आवाज नहीं सुनाई पड़ी। शायद दीपंकर को भ्रम हुआ था। सती क्यों उसकी तरह जागती रहेगी! शायद वह बेखबर सो रही है। उठकर दीपंकर ने फिर एक बार पानी पिया। फिर वह बिस्तर पर आकर बैठ गया। फिर उसने बत्ती बुझा दी।

लेकिन फिर वह उठकर बिस्तर पर बैठ गया।

आज न जाने क्या हो गया है। दीपंकर को लगा कि वह एकदम अकेला है। मानो जिंदगी भर वह एकदम अकेला रहा। अभी वह किसी से बात कर सकता तो किसी हद तक उसका अकेलापन दूर होता। कम से कम अगर माँ बगल के कमरे में होती तो वह उसी को बुलाकर उससे बातें करता। कभी-कभी माँ अचानक दरवाजा खोलकर इस कमरे में आती थी। उससे पूछती थी — क्यों रे? नींद में क्या बक रहा था?

दीपंकर कहता — नहीं माँ, नींद में नहीं, मैं ज

लेकिन आज माँ नहीं है। कोई भी नहीं है।

बरसों से प्यास सहते-सहते वह मानो अंदर ही अंदर रेगिस्तान बन गया है। फिर वह बिस्तर पर आकर बैठना चाहकर भी बैठ न सका। उसने खड़े होकर थोड़ी देर सोच लिया। अगर इस समय वह सती को बुलाये और बुलाकर उससे बातें करे तो क्या हर्ज है। किस बात का हर्ज है।

लेकिन खुद उसी ने तो सती से कहा है कि सिटकिनी बंद करके सो जाओ। इसलिए अब उसे बुलाना ठीक न होगा।

दीपंकर फिर बिस्तर पर बैठने जा रहा था। लेकिन न जाने क्यों वह पाँव-पाँव चलकर फिर दरवाजे के पास गया। शायद सती बेखबर सो रही है। अनेक रातें जागने के बाद आज वह आराम से, शांति से सो रही है। इसलिए अपने स्वार्थ के लिए उसे जगाना दीपंकर ने उचित नहीं समझा।

फिर भी दीपंकर दरवाजे के सामने जाकर खड़ा हुआ। अगर जाग रही है तो हलका-सा ठहोका देते ही सती जवाब देगी। एक बार टहोका देते ही पता चल जायेगा कि सती उसकी तरह जाग रही है या नहीं।

दरवाजे पर हाथ रखना चाहकर भी दीपंकर को संकोच होने लगा। रात दो बजे इस तरह सती को बुलाना क्या ठीक होगा। अगर वह दीपंकर पर शक कर बैठे। अगर वह सोच ले कि दीपंकर बुरा है, लोभी है, गिरा हुआ है, जानवर है तो? छी! छी! बंद दरवाजे के सामने दीपंकर चोर के समान खड़ा रहा और उसका मन दुविधा और द्वन्द्व में करवटें बदलने लगा।

—खट्!

दरवाजा अचानक उधर से खुल गया।

उस अँधेरे में ही दीपंकर ने देखा कि दरवाजा खोलकर सती सामने खड़ी थी। लज्जा और धिक्कार से दीपंकर का सारा शरीर थरथर काँपने लगा।

सती बोली—अरे। तुम यहाँ खड़े हो? क्या कर रहे थे?

अपराधी की तरह दीपंकर ने अपने को अँधेरे में छिपाना चाहा। लेकिन सती के आगे वह रंगे हाथों पकड़ा गया था।

सती ने फिर कहा—अचानक लगा कि तुम चिल्ला उठे—नहीं, नहीं, नहीं! क्या हो गया था तुम्हें? क्या सपना देख रहे थे? तुम्हारे चिल्लाने से मेरी नींद टूट गयी। क्या तुम डर गये थे?

क्या जवाब दे दीपंकर सहसा समझ नहीं पाया। वह बेवकूफ की तरह वहीं खड़ा रहा। सती की तरफ देखने में उसे संकोच हुआ। उसे लगा कि सती उसकी तरफ तीखी निगाह से देख रही है। मानो सती उस पर शक कर रही है। क्या उसका विश्वासघात सती ने पकड़ लिया है?

अचानक सती ने दीपंकर के दोनों हाथ पकड़कर उसे झकझोरा। झकझोरे जाने पर मानो दीपंकर होश में आया।

सती बोली — क्या हुआ ? तुम्हें क्या हो गया है ? तुम ऐसा क्यों कर रहे हो दीपू ?

दीपंकर के मुँह से फिर भी कोई बात नहीं निकली।

दीपंकर को धीरे-धीरे उसके बिस्तर के पास ले जाकर सती ने बिठा दिया। खुद भी वह उसकी बगल में बैठ गयी। बोली — ऐसा क्यों कर रहे हो दीपू ? बताओ न तुम्हें क्या हो गया है ?

दीपंकर को लगा कि उसके स्नायु मानो किसी नशे से सुन्न पड़ गये हैं। उसने कहा — मुझे नींद नहीं आयी ....

सती बोली — नींद नहीं आयी ? नींद तो मुझे भी नहीं आयी। लेकिन तुम ऐसा क्यों कर रहे हो ?

दीपंकर बोला — मैंने कई बार पानी पिया, कई बार सोने की कोशिश की, लेकिन नींद नहीं आयी।

सती बोली — तुमने मुझे क्यों नहीं बुलाया ?

फिर वह बोली — नींद मुझे भी नहीं आयी। मानो जागकर मैं सपना देख रही थी। मैं देख रही थी कि उस मकान में मुझे न पाकर लोग बहुत परेशान हैं, उन सबने पुलिस में खबर की है और पुलिसवाले मुझे ढूंढने यहाँ आये हैं। वे सब तुम्हारे कमरे में घुसकर तुमसे पूछने लगे कि मैं यहाँ हूँ या नहीं। इसपर तुम बहुत बिगड़ गये और चिल्लाये — नहीं-नहीं-नहीं। उस चिल्लाहट से मेरी नींद टूट गयी।

दीपंकर चुप रहा। थोड़ी देर बाद वह बोला — तुम अपने कमरे में जाकर सो जाओ — अभी रात के दो बजे हैं।

— क्यों ? तुम नहीं सोओगे ?

दीपंकर बोला — नहीं। लेकिन तुम नहीं सोओगी तो तुम्हारी तबीयत खराब हो जायेगी। न सोने पर सर्वनाश हो जायेगा।

सती ने पूछा — किसका ? किसका सर्वनाश होगा ? तुम्हारा ?

दीपंकर बोला — मेरा नहीं, तुम्हारा ....

सती जोर से हँस पड़ी। बोली — मेरे लिए सोच-सोचकर तुम अपनी सेहत मत बिगाड़ो। मेरा जो सर्वनाश होना था, हो चुका है।

दीपंकर बोला — नहीं, कल तुम्हें लौट जाना होगा। अब यहाँ रहना तुम्हारे लिए ठीक नहीं है। कल मैं खुद जाकर तुम्हें छोड़ आऊँगा। रात को तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं हुआ सती। अब तुम इस तरह कभी मत आना। अगर ससुराल में न रह सको तो कहीं और चली जाना — मेरे यहाँ मत आना।

दीपंकर की बातें सुनकर सती अवाक् हो गयी। दीपंकर के स्वर में आज उसे दूसरा ही सुर सुनाई पड़ा।

दीपंकर अपनी धुन में कहता गया — मन

अत्याचार सहकर भी रहना, उसी में तुम्हारा मंगल है। अगर वहाँ तुम नहीं रह सकती तो पिताजी के पास चली जाना या जहाँ तुम्हारा मन चाहे चली जाना, लेकिन कृपा करके मेरे पास मत आना ! माँ के लौट आने के बाद भी मत आना !

यह कहता हुआ दीपंकर उठ खड़ा हुआ। वह कमरे में इधर से उधर चहल-कदमी करने लगा। उसने कहा — मैंने कल ही तुमसे कह दिया था कि यहाँ रहने पर तुम्हारा भला न होगा। अभी मेरी माँ नहीं है, लेकिन लक्ष्मी दी ने तुम्हें कितना समझाया, फिर भी तुमने उसकी बात नहीं सुनी। तुम क्यों आयी ? तुम क्यों मेरे घर आयी ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था ?

सती हकबकायी-सी दीपंकर की तरफ देखती रही।

दीपंकर कहने लगा — क्या मैंने तुम्हें यहाँ आने से बारबार मना नहीं किया था ? मैंने तुमसे बारबार नहीं कहा था कि तुम्हारी शादी हो गयी है, इसलिए ससुराल से बाहर और किसी के घर तुम्हारा रहना ठीक नहीं है। क्या तुम नहीं जानती कि यहाँ मेरी माँ नहीं है, मैं इस मकान में अकेला हूँ और कोई दूसरी औरत भी नहीं है, फिर तुम क्यों यहाँ रह गयी ? क्यों तुम यहाँ रात को रह गयी ?

सती अब भी आश्चर्य से दीपंकर के चहरे की तरफ देख रही थी।

— कहीं तुम मेरी बात न मानो, इसीलिए मैं लक्ष्मी दी को यहाँ बुला लाया था। मैंने सोचा था कि तुम अगर मेरी बात नहीं मानोगी तो कम से कम अपनी बड़ी बहन की बात को नहीं ठुकराओगी। लेकिन तुमने उसे भी अपमानित कर भगा दिया। क्या तुम पढ़ी-लिखी नहीं हो? क्या तुम्हारे पिताजी ने तुम्हें बहुत सारा रुपया खर्च करके नहीं पढ़ाया-लिखाया ? वह सब क्या इसीलिए ? अगर तुम अपने पति से प्यार नहीं कर सकी, अपनी सास का आदर नहीं कर सकी तो इसके लिए कौन जिम्मेदार है ? तुम्हीं जिम्मेदार हो न ? क्या तुमने सोचा है कि उन लोगों से लड़कर कभी तुम्हें जीवन में शांति मिलेगी ?

याद है, उस अँधेरी खामोश रात में दो बजे दीपंकर चिल्ला-चिल्लाकर जो मन में आया वही कहकर सती को डाँटने लगा था। सती चुपचाप उसकी बातें सुनती रही फिर अचानक कुछ कहे-सुने बिना वह बिस्तर से उठी वह किसी तरफ आँख उठाये बिना सीधे दीपंकर की माँ के कमरे में चली गयी। उस कमरे में जाकर उसने जोर से सिटकिनी लगा ली। फिर उसकी कोई आहट नहीं मिली।

सती के इस प्रकार के व्यवहार से दीपंकर भी इतनी देर बाद आश्चर्य में पड़ गया। क्या जोश में आकर उसने सती से कुछ गलत कहा है ? इतनी देर बाद दीपंकर मानो होश में आया। न जाने क्यों उसने सती को उतनी कड़ी बातें सुना दीं ? क्या सती ने सचमुच उसका कुछ बिगाड़ा है ?

अचानक सती के लिए दीपंकर के मन में दया हो आयी। सती ने उसका कोई नुकसान नहीं किया। सती ने उसके साथ कोई अन्याय भी नहीं किया, उसे अपना समझकर

ही सती उसके पास आयी थी। अचानक वह इतना उत्तेजित क्यों हो उठा? यहाँ सती का कौन है? दीपंकर के पास न आकर वह और जा भी कहाँ सकती थी?

दीपंकर जल्दी-जल्दी दरवाजे के पास जाकर दस्तक देने और पुकारने लगा — सती! सती! दरवाजा खोलो। दरवाजा खोलो।

उधर से कोई आवाज नहीं मिली।

दीपंकर दरवाजे पर धक्का मारने लगा — सती! सती! दरवाजा खोलो।

फिर भी कोई आहट नहीं मिली। दीपंकर कान लगाकर सुनता रहा। रात के दूसरे पहर की आत्मा मानो खिन्न-अवसन्न होकर मूक भाषा में दीपंकर की हँसी उड़ाने लगी। दीपंकर लज्जा, अपमान और ग्लानि से भरकर पत्थर बना चुपचाप वहीं खड़ा रहा।

● ● ●

याद है, उस दिन शंभु की पुकार से दीपकर की चेतना लौट आयी थी। शंभु को भी अपनी शक्ल दिखाने में मानो दीपंकर को संकोच होने लगा था। स्टेशन रोड की दुनिया में उस समय सबेरा हो चुका था। धूप कमरे के फर्श पर आ पड़ी थी। दीपंकर मानो अपनी तुच्छता में अपने को छिपाने के लिए बेचैन हो उठा।

शंभु बोला — मैं शंभु हूँ ....

मानो शंभु ने आकर दीपंकर को और अधिक अवसन्न बना दिया — और अधिक असहाय। दीपंकर मानो सिर उठाकर देखने में भी डरने लगा। शभु बोला — बहूदीदी तो वहाँ नहीं गयी दादाबाबू!

दीपंकर ने पूछा — वहाँ की क्या खबर है?

शंभु बोला — घर पहुँचते ही मैंने बतासी की माँ से पूछा — बहूदीदी आयी है? देखा कि सब लोग कानाफूसी कर रहे हैं, लेकिन खुलकर कोई कुछ नहीं कह रहा है। आज माँजी सबेरे पूजा करने बैठी तो मैं सीधे यहाँ चला आया।

— तुम्हारा दादाबाबू क्या कर रहा है?

—जी, दादावावू तो उसी समय नीचे आया। मैं जव वहाँ से चलने लगा, तभी वैरिस्टर वावू की गाड़ी अन्दर आयी। वैरिस्टर वावू को आप जानते हैं न ?

वैरिस्टर वावू ! निर्मल पालित ? निर्मल पालित नया वैरिस्टर है। घोष परिवार के अन्त समय के भाग्य से निर्मल ने भी अपने को जोड़ लिया था। उस परिवार के वंशानुक्रम से संचित धन का वह सिर्फ रक्षक नहीं, अंत तक पोषक भी वन गया था। कहाँ किस जमीन का दाम वढ़ गया है और कौन-सी जमीन किसको वेचने पर तीन परसेंट प्रॉफिट अधिक मिलेगा, यह सव अक्ल वही घोष-गृहिणी को देता था। विधवा घोष-गृहिणी का एकमात्र सहाय सनातन वावू नहीं, वही था।

निर्मल पालित के लिए घोष परिवार के घर का दरवाजा वरावर खुला था। जव सती के कारण फाटक में ताला लगाने का इंतजाम हुआ था और किसी को अन्दर आने देने की मनाही हो गयी थी तव भी निर्मल पालित की कार आते ही दरवान लंवा सलाम ठोंककर वाहर का फाटक खोल देता था। वैरिस्टर वावू के आने की खवर मिलते ही माँजी ऊपर से नीचे आ जाती थीं। फिर चाय आती थी, शरवत आता था, स्नैक्स आते थे। नौकर-चाकर सावधान हो जाते थे। घर भर में मानो हलचल मच जाती थी। वैरिस्टर वावू वड़े रोवदाव वाला आदमी है। एक मिनट भी वह चुप नहीं रह सकता। या तो वह वात करेगा नहीं तो चुरुट चवायेगा। और कोई काम नहीं रहेगा तो सीटी ही वजायेगा। पाँवों को हिलाता हुआ वह सीटी वजायेगा। फिर माँजी के कमरे में आते ही वह खड़ा हो जायेगा। कहेगा—आइए माँजी, आइए, वैठिए ....

यह कहकर निर्मल पालित कुर्सी आगे रख देगा। गरद की विना किनारे की साड़ी पहने माँजी अपनी कुर्सी पर आकर वैठ जायेगी। तव मुंशीजी वहीखाता लेकर पहुँच जायेगा। सुंदरवन का इलाका लेकर कोई-न-कोई झमेला लगा ही रहता है। फिर श्यामवाजार में कई मकान हैं। उन मकानों में किरायेदार रहते हैं। कोई मकान वेचकर ज्यादा प्रॉफिट मिलने पर उस रकम से दूसरा मकान खरीदा जाता है। कभी-कभी जमीन खरीदने के वाद पता चलता है कि वह दो भाइयों की है। फिर एक भाई श्रीमती नयनरंजिनी दासी के नाम मुकदमा दायर कर देता है। यह मुकदमा खत्म होते न होते वहूवाजार की प्रॉपर्टी को लेकर मुकदमा शुरू हो जाता है। स्वर्गीय गिरीश-चन्द्र घोष की विधवा श्रीमती नयनरंजिनी दासी की प्रॉपर्टी लेकर हाईकोर्ट के ओरिजिनल साइड में वैरिस्टर पालित का लड़का वैरिस्टर निर्मल पालित मुकदमा लड़ता है !

निर्मल पालित कहता है—जो प्रॉपर्टी जितनी एनकम्वर्ड है, उसमें उतना ही फायदा है ....

माँजी कहती हैं—लेकिन मेरे लिए तो सव फायदा नुकसान वनता जा रहा है वेटा। अव मैं यह सव झमेला नहीं झेल सकती !

निर्मल पालित कहता है—झमेला विना झेले काम नहीं चल सकता माँजी, वह तो झेलना ही पड़ेगा। फिर मैं किसलिए हूँ ? आप मुझपर सव छोड़ दीजिए, मैं

आपकी सारी प्रॉपर्टी गोल्ड में कनवर्ट कर दूँगा। तब आप पाँव पर पाँव धरकर जिन्दगी भर आराम कर सकेंगी।

माँजी कहती हैं — जीते जी मेरे भाग्य में आराम नहीं है बेटा, मरने के बाद ही मुझे आराम मिलेगा।

— आप यह क्या कह रही हैं माँजी? आराम के लिए ही तो लोग प्रॉपर्टी बनाते हैं और प्रॉपर्टी लेकर बॉदरेशन न भोगना पड़े, इसीलिए बैरिस्टर और एटार्नी हैं। यह आप क्या कह रही हैं? अगर यह थोड़ा-सा झमेला भी आप नहीं चाहती तो जंगल में चली जाइए और वहीं फल-मूल खाकर पड़ी रहिए। वहाँ कोई बॉदरेशन नहीं है। वहाँ ओरिजिनल, डिफेंस या अपीलेट कुछ भी नहीं है। मुद्दई, मुद्दालेह, गवाह, जूरी, जज, कोर्ट और पुलिस भी नहीं है। क्या आप वही चाहती हैं?

माँजी कहती हैं — यह तो तुम्हारे पिताजी भी कहते थे।

निर्मल पालित कहता है — यह सिर्फ पिताजी क्यों, हर समझदार आदमी ही कहेगा। जानती हैं, अंग्रेजी में एक बात है — **Put not your trust in money but put your money in trust**। यह लाख रुपये की बात है, लेकिन हर कोई इसे ठीक से नहीं समझता। सुना है, आपके ससुरजी कहा करते थे कि रुपया बड़ी गंदी चीज है। लेकिन रुपया किसके लिए गंदा है? हमारे और आपके लिए रुपया गंदा नहीं है माँजी, वह तो उनके लिए है, जो मुकदमेबाज हैं, फोर-ट्वेंटी हैं, डिबॉच और पूअर हैं! हाथ में रुपया आते ही वे ज्यादा शराब पियेंगे और आँख मूँदकर रेस खेलेंगे! रुपये की महिमा तो हमी लोग समझेंगे। हमारे लिए रुपया रूट ऑव ऑल ईविल नहीं है। हमारे लिए मनी पावर है। आपका बेटा कहिए या आपकी बहू, वे अब भी आपका आदर और इज्जत किसलिए करते हैं? सिम्पली रुपया!

माँजी कहती हैं — मैंने भी यही सोचा था कि मैं औरत हूँ, स्टीवेडोर का कारोबार कैसे सँभालूँगी। इसलिए सब बेच-बाचकर मैंने नगद रुपया बैंक में रख दिया था। लेकिन तुम्हारे पिताजी ने प्रॉपर्टी खरीदने की सलाह दी। उस समय मैं क्या जानती थी कि प्रॉपर्टी का मतलब आये दिन मामला-मुकदमा है?

उस दिन यह सुनकर निर्मल पालित हँस पड़ा। बोला — आप [illegible] रहेंगी और उसका टैक्स नहीं देंगी?

माँजी बोली — लेकिन टैक्स देते-देते तो मैं तबाह हो गयी बेटा, [illegible] धरम-करम कुछ भी इस झमेले के मारे नहीं हो पाता। फिर [illegible] यह सब झमेला सँभालनेवाला भी तो मेरे घर में कोई नहीं है! [illegible] सर्वनाश तुम्हारे पिताजी कर गये —

निर्मल पालित बोला — लेकिन पिताजी ने कौन-सा बुरा [illegible] माँजी। पिताजी को शायद ज्यादा से ज्यादा फाइव परसेंट [illegible] काम वे अच्छा कर गये हैं। रुपया कभी बाहर न [illegible]

घर में देवता की मूर्ति स्थापना के बाद उसकी पूजा न करना जैसा पाप है, रुपया रहने पर उसे आइड्ल रखना भी वैसा ही पाप है! यही देखिए न, आपने अपने बेटे की शादी में कितनी कैश डावरी ली थी?

मांजी बोलीं — अब वह प्रसंग मत छेड़ो बेटा, तुम्हारे पिताजी की बातों में आकर मैं किस तरह ठगी गयी, यह मैं ही जानती हूँ।

— वह कैसे?

— पता नहीं कहाँ से तुम्हारे पिताजी यह रिश्ता ले आये। मैंने सुना कि अमीर हैं और उन्हीं की इकलौती बेटी है। लेकिन उस समय क्या मैं जानती थी कि वे इतने बड़े आदमी हैं! मैंने बेवकूफ की तरह दस हजार रुपये नगद माँग लिये।

निर्मल पालित ने माथा ठोंक लिया और कहा — अरे! एकदम डैम लॉस!

— बताओ, मैं क्या करती, तुम्हारे पिताजी रिश्ता लाये थे, मैंने विश्वास कर सब कुछ उन पर छोड़ दिया था। यदि वे एक बार भी इशारा करते कि लड़की के बाप के पास इतने रुपये हैं, तो मैं तीस हजार माँग लेती। मेरा बेटा भी तो बुरा नहीं है! तुमने तो देखा है, वह कोई नशा नहीं करता, एम० ए० पास है, चरित्रवान है, किसी से कोई मतलब नहीं रखता, सिर्फ अपनी किताब और लाइब्रेरी में डूबा रहता है और इतना सीधा कि सात थप्पड़ लगा दो, चूँ तक नहीं करेगा। ऐसा हीरा लड़का मैंने मिट्टी के भाव लुटा दिया। मेरा भाग्य ही घाटा सहने का है! और यह सब तुम्हारे पिताजी के कारण हुआ ....

निर्मल पालित ने कहा — लेकिन लड़की का भाई-वाई तो नहीं है, वही एक-मात्र संतान है, बाप के मरने पर सारी प्रॉपर्टी आपको ही मिलेगी।

मांजी बोलीं — तुम जो सोच रहे हो, वह नहीं है।

— क्यों?

मांजी बोलीं — सब कुछ उसी लड़की को मिलेगा — न मुझे मिलेगा, न मेरे बेटे को।

— लेकिन लड़की को मिलने पर तो वह आपके लड़के को मिलना हुआ, और आपके लड़के को मिलने का मतलब आपको मिलना है।

मांजी बोलीं — नहीं ....

निर्मल पालित आश्चर्य में पड़ गया। बोला — क्यों? हिन्दू मैरिज ऐक्ट में तो यही है। फिर आपको न मिला तो मैं हूँ न! मैं लिटिगेशन करूँगा। यह कैसे हो सकता है!

मांजी बोलीं — नहीं। नहीं हो सकता।

— क्यों नहीं हो सकता?

क्यों नहीं हो सकता, यह बताना चाहकर भी मांजी को जरा दुविधा हुई। फिर भी वे बोलीं — हर बात में मैं तुम्हारे पिताजी से सलाह करती थी, अब तुम्हीं

से करूँ। मैं कहना तो नहीं चाहती थी, लेकिन बात निकल आयी तो कह रही हूँ — बहू घर में नहीं है।

— नहीं है ?

— हाँ, नहीं है। वह चली गयी है।

— बाप के पास गयी है ? बर्मा में ?

माँजी बोलीं — नहीं ....

अचानक माँजी की निगाह बाहर बरामदे की तरफ गयी। वे बोलीं — कौन है रे ? शंभु ? तू वहाँ क्या कर रहा है ? वहाँ खड़ा होकर तू क्या सुन रहा है ? जा, वहाँ से हट ....

शंभु वहाँ से हट गया।

दीपंकर ने पूछा — फिर क्या हुआ ?

शंभु बोला — फिर बैरिस्टर बाबू और माँजी दोनों बातें करने लगे और मैं वहाँ से चला आया। अभी तो मुंशीजी बाजार नहीं जा सकता। बैरिस्टर बाबू जब तक रहेगा, तब तक मुंशीजी को खाता-बही लेकर वहीं मौजूद रहना पड़ेगा। मुंशीजी ही अदालत-कचहरी का कामकाज देखता है न।

नीचे कुंडी खटखटाने की आवाज होते ही दीपंकर उत्सुक हो उठा। शायद लक्ष्मी दी आयी हैं। काशी ने दरवाजा खोल दिया तो किसी के पाँवों की आहट मिली। कोई सीढ़ी से ऊपर आ रहा है। दीपंकर कमरे से निकलने को हुआ कि लक्ष्मी दी अंदर आयीं ! वह बोलीं — क्या खबर है दीपू ? सती कहाँ है ?

दीपंकर बोला — सती सो रही है।

लक्ष्मी दी ने बंद दरवाजे की तरफ देखा।

दीपंकर बोला — देखिए, सती की ससुराल से यह आया है। इसी से उस घर के अंदर की खबरें मालूम कर रहा था। सुना, सती की सास बैरिस्टर से इसी मामले में सलाह-मशवरा कर रही थीं।

लक्ष्मी दी बोलीं — सती क्या कह रही है ? जायेगी ?

दीपंकर बोला — यह तो मैं नहीं बता सकता। अभी तो वह सो रही है। कल वह जरूर कह रही थी किसी तरह नहीं जायेगी ....

लक्ष्मी दी बोलीं — तू उसे बुला न ....

दीपंकर बोला — आप ही बुलाइए।

लक्ष्मी दी बोलीं — मैं नहीं बुलाऊँगी। वह मेरी बात नहीं मानेगी। अगर वह किसी की बात मानेगी तो तेरी ही बात मानेगी। तू उसे समझा-बुझाकर पहुँचा दे। तू उसकी सास से मिलकर माफी माँग लेना। कहना कि उसकी उम्र कम है, इसलिए

उसने ऐसी गलती की है।

दीपंकर बोला — लेकिन आप यह बताइए कि उसका मैं कौन हूं ? मेरी बात वे लोग क्यों मानेंगे ? इसलिए आप भी चलिए, मैं भी साथ रहूँगा।

लक्ष्मी दी बोली — मैं जाऊँगी तो वे लोग नहीं पूछेंगे कि मैं कौन हूँ ? फिर बहुत सी बातें पैदा होंगी और झमेला बढ़ जायेगा। इसलिए ठीक होगा कि तू ही पहुँचा आ ....

दीपंकर बोला — लेकिन वह जाना चाहे तब न !

शंभु इतनी देर खड़ा होकर सब सुन रहा था। अब वह बोला — मैं बहूदीदी को बुलाऊँ ?

— बुलाओ न।

शंभु आगे बढ़कर धीरे-धीरे दरवाजे पर टहोका लगाने लगा। फिर उसने पुकारा — बहूदीदी, बहूदीदी ....

दीपंकर को आज भी याद है कि उस दिन उसके मन में बहुत-सी शंकाएँ पैदा हुई थीं। रात भर की घटना उस समय भी उसकी आँखों के आगे तिर रही थी। उसके बाद क्या सती मुझसे बोलेगी ? क्या मेरी तरफ देखेगी ? उस दिन मानो किसी ने दुविधा और संकोच का पहाड़ दीपंकर के सिर पर रख दिया था। वह ठीक से अपने ही आमने-सामने होने से भी डरने लगा था। पता नहीं क्यों उसने रात के अँधेरे में अपने को उस तरह खो दिया था ? फिर क्या इतने दिनों की उसकी शिक्षा-दीक्षा सब बेकार गयी थी ? क्या इतने दिनों का इतना चिंतन व्यर्थ था ? फिर क्या बारबार उसकी परीक्षा लेने के लिए ही भगवान अपना दूत भेज देता है ? मानो इसी तरह कल वह बाँह-कटी भिखारी लड़की परीक्षा लेने आयी थी। मानो इसी तरह उसकी परीक्षा लेने रात दो बजे सती उसके कमरे में आयी थी !

शंभु ने फिर पुकारा — बहूदीदी, बहूदीदी, मैं शंभु हूँ ....

आज इतने दिन बाद भी उस दिन की उस घटना की छोटी-मोटी बातें भी दीपंकर को याद हैं। लेकिन सती की सास की प्रॉपर्टी-प्रीति और निर्मल पालित की वैषयिक वृत्ति आज न जाने कहाँ चली गयी हैं। आज सारी दुनिया नयी दृष्टि से सती की ससुराल की तरफ देख रही है। इन कई वर्षों में लोगों की खानदानी प्रतिष्ठा की नींव तक हिल गयी है बड़े लोगों की एक नयी जमात तैयार हो गयी है और कलकत्ते में नयी प्रतिष्ठा की नींव डाली गयी है। भवानीपुर, प्रियनाथ मल्लिक रोड, ईश्वर गांगुली लेन, स्टेशन रोड, फ्री स्कूल स्ट्रीट और गाड़ियाहाट लेवल क्रॉसिंग का नया मूल्यांकन सन् १९४० से ही शुरू हो गया था।

टैक्सी उस दिन सवेरे प्रियनाथ मल्लिक रोड पहुँची।

लक्ष्मी दी ने पहले आना नहीं चाहा था। पहले उसे संकोच हुआ था। संकोच की बात भी थी। लक्ष्मी दी ने कहा था — अब मैं किसलिए जाऊँगी दीपू, मेरे जाने

पर शायद सती की सास नाराज ही होगी।

फिर भी दीपंकर ने सोचा था कि सब मिलकर अगर सती की सास से कहें तो शायद उनका गुस्सा कम होगा। आज अगर सती के माँ-बाप होते तो उनके साथ किसी को नहीं जाना पड़ता। शायद किसी की भी मदद की जरूरत नहीं पड़ती। दीपंकर की भी माँ अगर होती तो बड़ा काम बनता। माँ खुद सती को उसकी ससुराल पहुँचा आती। लेकिन जब कोई नहीं है, तब उन्हीं को जाना पड़ेगा।

लक्ष्मी दी ने कहा था — घर में मेरे बहुत से काम पड़े हैं दीपू ....

दीपंकर ने कहा था — काम तो मेरे भी हैं लक्ष्मी दी, मुझे भी दफ्तर जाना है, आज से मुझे नया काम करना पड़ेगा।

लेकिन जिस सती को लेकर उस दिन उतनी समस्या उठ खड़ी हुई थी, उसी ने फिर कोई आपत्ति नहीं की थी। रात दो बजे के बाद वह मानो पूरी तरह बदल गयी थी — मानो बहुत ज्यादा गुमसुम हो गयी थी। शंभु ने पुकारा तो वह दरवाजा खोलकर बाहर निकल आयी थी। अपने सामने उतने सारे लोगों को देखकर भी उसने कुछ नहीं कहा था। मानो उस घटना के बाद वह एकदम अवसन्न हो गयी थी। उसे देखकर लगा था कि वह रातभर सोयी न थी। उसकी दोनों आँखें लाल थीं। उसने सबकी तरफ देखा। फिर शंभु को देखकर वह उसकी तरफ बढ़ गयी। बोली — क्या खबर है शंभु ? उस घर की क्या खबर है ?

सती को देखकर शंभु को मानो रोना आ गया। उसने कहा — आपको ढूँढने आया था बहूदीदी ....

— क्या वे सब मुझे ढूँढ रहे हैं ?

शंभु बोला — आपको कोई नहीं ढूँढ रहा है बहूदीदी, माँजी ने सबसे कह दिया है कि कोई आपको न ढूँढे। उन्होंने सबसे कह दिया है कि कोई आपका नाम न ले ....

मानो सती ने कुछ सोच लिया, फिर कहा — क्या कोई नहीं ढूँढ रहा है ? क्या पुलिस को खबर नहीं की गयी ? फाटक का ताला खोलने के लिए क्या दरवान से भी कुछ नहीं कहा गया ?

शंभु बोला — किसी से कुछ भी नहीं कहा गया। सिर्फ माँजी ने सबको होशियार कर दिया है। उन्होंने मुझे भी नौकरी से निकाल देने की धमकी दी है।

— और तेरे दादाबाबू ?

शंभु बोला — दादाबाबू उसी तरह हैं, वे भी किसी से कुछ नहीं कह रहे हैं।

— कल रात वे कहाँ सोये थे ? किस कमरे में सोये थे ?

— माँजी के कमरे में, जहाँ वे रोज सोते हैं। माँजी ने उनसे भी कह दिया है कि वे कुछ न बोलें, जो कुछ करना होगा वे खुद करेंगी। आज सवेरे माँजी के बुलाने पर बैरिस्टर बाबू भी आया था। माँजी उससे आपके बारे में ही बात कर रही थीं।

—क्या बात हो रही थी ?

—यह मैं नहीं सुन सका। मुझे देखते ही माँजी ने भगा दिया था।

यह सब सुनकर सती न जाने क्या सोचने लगी। फिर वह बोली—ठीक है, मैं लौट जाऊँगी।

शंभु बोला—हाँ बहूदीदी, लौट चलिए। आपके बिना हमलोगों का उस घर में मन नहीं लग रहा है। बतासी की माँ और भूती की माँ बारबार आपको याद कर रही हैं। सबको न जाने क्यों वह मकान बड़ा सूना-सूना लग रहा है।

शंभु की बातें मानो सती के कानों में नहीं गयीं। सती ने मानो अपने मन में ही तय कर लिया कि उसे लौट जाना है।

अचानक सती बोली—टैक्सी बुला ला—

शंभु टैक्सी बुलाने गया। दीपंकर ने सती से कहा—अगर तुम कहो तो हम भी तुम्हारे साथ चल सकते हैं।

सती बोली—नहीं, मेरे साथ किसी को नहीं जाना पड़ेगा।

लक्ष्मी दी बोली—दीपू का जाना ठीक रहेगा, सास अगर कुछ कहेंगी तो दीपू तो उनको समझा सकेगा, नहीं तो वे सोचेंगी कि तू पता नहीं कहाँ थी, रात को किसके पास थी, तरह-तरह की बातें पैदा होंगी ....

दीपंकर बोला—फिर आप भी हमारे साथ चलिए लक्ष्मी दी, हम सब मिलकर सती को पहुँचा आयें। कम से कम एक औरत साथ रहेगी तो बात काफी आसान हो जायेगी।

अंत में उस दिन तीनों ही टैक्सी में बैठे थे। जब अपराध हो गया है, तब उसके लिए प्रायश्चित्त करना ही पड़ेगा। टैक्सी जब चलने लगी थी, तब लक्ष्मी दी ने कहा था—मेरे जाने से कहीं बात बिगड़ न जाय ?

दीपंकर ने कहा था—आप घबड़ाइए नहीं लक्ष्मी दी, सती की तरफ से हम उसकी सास से माफी माँग लेंगे।

लक्ष्मी दी ने कहा था—माफी माँगने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है दीपू, जरूरत पड़ेगी तो मैं उनके पाँव भी पकड़ लूँगी, उनके पाँवों पर सिर रख दूँगी। जब हम लोगों की लड़की है, तब सारा अपराध हमारा ही है। लड़केवालों से माफी माँगने में शर्म किस बात की ? लेकिन वे मुझे देखकर कहीं बिगड़ न जायँ ....

दीपंकर बोला—इसीलिए मैं आपको ले जा रहा हूँ लक्ष्मी दी। मैं सती की सास से कहूँगा कि आप जिसके कारण सती को इतना ताना देती हैं, वह यही लक्ष्मी दी हैं। अब आप देख लीजिए कि लक्ष्मी दी खुद आप से माफी माँगने आयी हैं। आप को एक बार देख लेने पर सती की सास के मन का भ्रम जरूर दूर होगा। आपको देख लेने पर किसी का क्रोध नहीं रह सकता।

लक्ष्मी दी बोली—मैं उनके पाँव पकड़कर भी माफी माँग सकती हूँ, मुझे कोई

आपत्ति नहीं है। वे मुझसे गाली-गलौज भी करेंगी तो मैं सिर झुकाकर सब सह लूंगी। सिर्फ मैं उनसे कहूंगी कि आप सती को माफ कर दीजिए। हमारी माँ नहीं है, आप ही सती की माँ हैं। ऐसा कहने में मेरा अपमान नहीं है, इसके लिए मैं अपने को छोटा नहीं समझूंगी ....

फिर जरा रुककर लक्ष्मी दी बोली — सती तो नहीं जानती कि जब वह छोटी थी तब मैंने उसके लिए क्या नहीं किया। वह अब शायद वह सब भूल गयी है। पिताजी मुझे कोई चीज खरीद देते थे तो मैं उनसे कहकर वही चीज सती को खरीदवा देती थी। मैं बड़ी लड़की थी, इसलिए पिताजी मुझे अधिक चाहते थे, लेकिन सती बता दे कि कभी मैंने उसे दिये बिना कोई चीज ली हो। मेरे साथ सती बराबर लड़ती थी, लेकिन उसके लिए मैं उससे कभी कुछ नहीं कहती थी ....

सचमुच उस दिन टैक्सी में बैठी सती ने लक्ष्मी दी की बातों का कोई प्रतिवाद नहीं किया था। शायद उसके लिए प्रतिवाद करने को कुछ था भी नहीं। बचपन से एक साथ दोनों बहनों के बड़े होने की लंबी अवधि के वे सारे दिन शायद उसे याद आने लगे थे। शायद बीते दिनों की स्मृति के लिए उस सवेरे टैक्सी में पास-पास बैठी दोनों बहनें दुःखी होने लगी थीं। शायद इसी तरह हर इन्सान बड़ा होकर अपने बचपन के लिए दुःखी होता है। हर इन्सान अपने बचपन में लौट जाना चाहता है। दीपंकर दोनों को देख रहा था। दोनों बहनें। दोनों में कितनी लड़ाई हुई है, फिर भी दोनों में कितना प्यार है। सती ने लक्ष्मी दी को बुरा-भला कहा है, आघात पहुँचाया है, फिर भी लक्ष्मी दी आज यहाँ आये बिना नहीं रह सकी।

लक्ष्मी दी बोली — कहना चाहिए कि सती का असली जीवन तो अब शुरू हुआ है। शादी के बाद ही स्त्री का सच्चा जीवन शुरू होता है। शादी से पहले वह अपने जीवन का कितना जान सकती है, कितना देख पाती है! असली परीक्षा तो अभी शुरू ही हुई है। बाप के घर सभी लड़कियाँ अच्छी हैं। वहाँ हजार दोष करने पर भी उन्हें माफ करने वालों और उनसे मीठी बात कहने वालों की कमी नहीं रहती। लेकिन ससुराल? ससुराल में ही भले-बुरे की जाँच होती है। ससुराल में जो स्त्री अपने सास-ससुर को खुश कर सकी और पति को वश में ला सकी, उसी की जीत है। कौन लड़की कितनी अच्छी है, यह तभी पता चलता है जब वह ससुराल जाती है। चाची कहती थी — तेल की जाँच साग में और सोने की जाँच आग में। स्त्री के लिए ससुराल भी वही आग है ....

दीपंकर ने फिर सती की तरफ देखा। सती अब भी कुछ नहीं बोल रही थी। वह चुपचाप एकटक बाहर देख रही थी। मानो वह कहीं खो गयी थी। मानो वह जिंदगी की भूलभुलैया में लापता हो गयी थी। अपनी बुद्धि का भरोसा करने पर उसने जो कुछ खो दिया था, हृदय का भरोसा करने पर वही मानो उसे मिल गया था। मानो इतने दिन बाद वह समझ सकी थी कि विशृंखलता में उत्तेजना तो है — लेकिन

—क्या बात हो रही थी ?

—यह मैं नहीं सुन सका। मुझे देखते ही भाँजी ने भगा दिया था।

यह सब सुनकर सती न जाने क्या सोचने लगी। फिर वह बोली — ठीक है, मैं लौट जाऊँगी।

शंभु बोला — हाँ बहूदीदी, लौट चलिए। आपके बिना हमलोगों का उस घर में मन नहीं लग रहा है। बतासी की माँ और भूती की माँ बारबार आपको याद कर रही हैं। सबको न जाने क्यों वह मकान बड़ा सूना-सूना लग रहा है।

शंभु की बातें मानो सती के कानों में नहीं गयीं। सती ने मानो अपने मन में ही तय कर लिया कि उसे लौट जाना है।

अचानक सती बोली — टैक्सी बुला ला —

शंभु टैक्सी बुलाने गया। दीपंकर ने सती से कहा — अगर तुम कहो तो हम भी तुम्हारे साथ चल सकते हैं।

सती बोली — नहीं, मेरे साथ किसी को नहीं जाना पड़ेगा।

लक्ष्मी दी बोली — दीपू का जाना ठीक रहेगा, सास अगर कुछ कहेंगी तो दीपू तो उनको समझा सकेगा, नहीं तो वे सोचेंगी कि तू पता नहीं कहाँ थी, रात को किसके पास थी, तरह-तरह की बातें पैदा होंगी ....

दीपंकर बोला — फिर आप भी हमारे साथ चलिए लक्ष्मी दी, हम सब मिलकर सती को पहुँचा आयें। कम से कम एक औरत साथ रहेगी तो बात काफी आसान हो जायेगी।

अंत में उस दिन तीनों ही टैक्सी में बैठे थे। जब अपराध हो गया है, तब उसके लिए प्रायश्चित्त करना ही पड़ेगा। टैक्सी जब चलने लगी थी, तब लक्ष्मी दी ने कहा था — मेरे जाने से कहीं बात बिगड़ न जाय ?

दीपंकर ने कहा था — आप घबड़ाइए नहीं लक्ष्मी दी, सती की तरफ से हम उसकी सास से माफी माँग लेंगे।

लक्ष्मी दी ने कहा था — माफी माँगने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है दीपू, जरूरत पड़ेगी तो मैं उनके पाँव भी पकड़ लूंगी, उनके पाँवों पर सिर रख दूँगी। जब हम लोगों की लड़की है, तब सारा अपराध हमारा ही है। लड़केवालों से माफी माँगने में शर्म किस बात की ? लेकिन वे मुझे देखकर कहीं बिगड़ न जायँ ....

दीपंकर बोला — इसीलिए मैं आपको ले जा रहा हूँ लक्ष्मी दी। मैं सती की सास से कहूँगा कि आप जिसके कारण सती को इतना ताना देती हैं, वह यही लक्ष्मी दी हैं। अब आप देख लीजिए कि लक्ष्मी दी खुद आप से माफी माँगने आयी हैं। आप को एक बार देख लेने पर सती की सास के मन का भ्रम जरूर दूर होगा। आपको देख लेने पर किसी का क्रोध नहीं रह सकता।

लक्ष्मी दी बोली — मैं उनके पाँव पकड़कर भी माफी माँग सकती हूँ, मुझे कोई

कल्याण नहीं है, आनन्द भी नहीं है। मानो इसीलिए वह अपने में खोयी चुपचाप बैठी थी।

लक्ष्मी दी ने अचानक सती से कहा — तूने माँ को तो नहीं देखा, मैंने देखा है, मुझे थोड़ी-बहुत याद है।

सती फिर भी कुछ नहीं बोली।

लक्ष्मी दी कहने लगी — माँ की बात करना मुझे शोभा नहीं देता, फिर भी कह रही हूँ कि माँ जिंदा होती तो हमारा घर इस तरह बरबाद न होता। माँ होती तो क्या तू इस तरह ससुराल से आती ? माँ की बात याद कर तुझे जरूर तकलीफ होती। फिर मैं तेरी बात क्यों करूँ ? क्या मैं भी वही होती जो आज हूँ ? याद है, बचपन में माँ मुझे कितनी सूक्तियाँ याद कराती थी। एक दिन माँ ने कहा था — हाथ में हलदी लगे बिना कोई रसोई बनाना नहीं सीखती। एक स्त्री का वही हाल है। जब तक शादी नहीं होती, तब तक सही माने में कोई स्त्री नहीं बनती। जब तक शादी नहीं होती तब तक तो बड़ा आराम है। गलती करने पर कोई डाँटनेवाला नहीं होता। लेकिन कभी न कभी सभी को पति की घर-गृहस्थी करनी पड़ती है। कभी तेरे भी बेटा होगा, बेटे की शादी होगी और बहू आयेगी। तब बहू को अपना समझकर उससे मिलकर तुझे गृहस्थी चलानी होगी। वह भी परीक्षा की एक दूसरी घड़ी होगी ....

दीपंकर बोला — सिर्फ स्त्रियों की बात क्यों करती हैं लक्ष्मी दी, हर मनुष्य के जीवन में परीक्षा की घड़ियाँ आती हैं। कभी स्कूल और कॉलेज में परीक्षाएँ दी थीं, लेकिन अब लगता है कि इस परीक्षा के आगे वे परीक्षाएँ कितनी सरल थीं !

लक्ष्मी दी बोली — मैंने कालेज की किताब में आस्कर वाइल्ड की एक बात पढ़ी थी — The Book of life begins in a garden, and ends in Revelations. अभी तो हमारे जीवन की शुरूआत है। बस शुरूआत ! अभी रुक जाने से कैसे काम चलेगा ?

दोनों ने सारी बातें सती को लक्ष्य कर कहीं थीं, लेकिन जिसको लक्ष्य कर ये बातें कही गयीं, उसने एक भी बात नहीं कही। वह अब भी एकटक बाहर की तरफ देखती निर्विकार उदासीन बैठी थी। टैक्सी तेज रफ्तार में चली जा रही थी। आगे ड्राइवर की बगल में शंभु बैठा था और वे तीन जने पीछे थे।

लक्ष्मी दी सती से कहने लगी — आज मेरी बातें शायद तुझे अच्छी नहीं लग रही हैं सती, लेकिन देख लेना, जब तू खुद घर की मालकिन होगी और बाल-बच्चों की माँ बनेगी, तब तू कहेगी कि लक्ष्मी दी ने ठीक कहा था ! मेरी जिंदगी तो खतम हो चली है। उस समय मैं शायद देखने नहीं आऊँगी, तुमसे कुछ कहने भी नहीं आऊँगी — लेकिन मैं जहाँ भी रहूँगी, तुझे सुखी जानने पर मुझे मरकर भी सुख मिलेगा ....

दीपंकर बोला — ऐसी बात क्यों कर रही है लक्ष्मी दी, आपकी कौन ऐसी उम्र हो गयी है अभी ?

लक्ष्मी दी बोली — बाहर की उम्र ही क्या सब कुछ है ? मन की उम्र नहीं देख रहा है ? इस जिन्दगी में कितने आंधी-तूफ़ान आये, कोई दूसरा होता तो इतने दिन में पागल हो जाता। मैं जिंदा हूँ, यही काफ़ी है। बस एक ही आशा लिए जिंदा हूँ कि इस जीवन का अन्त देखूँगी। चाहे वह अंत कितना ही दुःखदायी हो और कितना ही कष्ट कर। मैं देखना चाहती हूँ कि भाग्य मेरी नाव किस घाट ले जाता है। लेकिन सती के जीवन की तो बस शुरुआत है, अभी से वह इस तरह हिम्मत हारेगी तो कैसे चलेगा ? उसकी जिंदगी का अभी बहुत बाकी है रे। तुझे भी बहुत दूर जाना है। हां, जो लोग जीवन को सिर्फ़ सुख समझते हैं, उनकी बात अलग है। जो सिर्फ़ उसे दुःख समझते हैं, उनकी भी बात अलग है। लेकिन मैंने देखा है दीपू, जो जीवन जितना दुःखी है, वह उतना ही मधुर भी है ! इसलिए दुःख में ही सुख को ढूंढना चाहिए — इसके बिना कोई उपाय नहीं है।

लक्ष्मी दी को पहले कभी इतनी बातें करते दीपंकर ने नहीं सुना था। लक्ष्मी दी भी इतनी बातें जानती हैं, यह उसने कभी सोचा भी नहीं था।

दीपंकर ने पूछा — आप इतनी बातें कैसे जान गयीं लक्ष्मी दी ?

लक्ष्मी दी बोली — मैं नहीं जानूंगी तो कौन जानेगा रे ? मेरी तरह किस स्त्री ने जीवन को इतने विचित्र रूप में देखा है ? कलकत्ते के सब से ऊँचे तबके के लोगों में मैं यदि घुली-मिली हूँ तो मैंने एकदम सड़क की नाली की भी जिंदगी देखी है। क्या कुछ देखना मेरे लिए बाकी है ? फिर भी कभी-कभी लगता है कि मैं कुछ भी नहीं देख सकी। मानो जीवन का बहुत कुछ देखना अभी बाकी है ! इतना देखा है, तभी तो सती से इतनी बातें कह रही हूँ। आज सती इतनी-सी तकलीफ़ बरदाश्त नहीं कर पा रही है, लेकिन वह नहीं जानती कि बरदाश्त करने का नतीजा कितना अच्छा होता है। इन्सान बरदाश्त करता है, तभी तो वह इन्सान है। इन्सान ही आगे की बात सोच सकता है, इन्सान ही आशा करता है, प्यार करता है और बड़ा बनता है। जो बरदाश्त नहीं कर सकता, वह ठगा जाता है। वही आत्महत्या करता है। इसीलिए बरदाश्त करने में कम फ़ायदा नहीं है ? जो बरदाश्त करता है, वह सब कुछ पाता है। वह कष्ट, दुःख और दर्द पाता है तो आराम भी कम नहीं पाता। लेकिन जो आत्महत्या करता है, वह तो सिर्फ़ कष्ट पाता है। वह तो सिर्फ़ जीवन का एक पहलू देखता है और दूसरा पहलू उसे दिखाई ही नहीं पड़ता। वह तो एक आँख वाला हिरन है ....

ये सब बातें सती को लक्ष्य कर कही गयीं थीं, फिर भी दीपंकर को ये बातें सुनने में अच्छी लग रहीं थीं। आखिर लक्ष्मी दी ने इतनी बातें कैसे सीख लीं हैं ! उसने इतना देखा है, और इतना सोचा है !

लक्ष्मी दी कहने लगी — यह दुनिया है ही बड़ी अजीब जगह। सती जब खुद

सास बनेगी और अपने घर की मालकिन होगी, तब वही अपनी बहू को इसी तरह सतायेगी, उसी तरह तकलीफ देगी और अपना अतीत एकदम भूल जायेगी। यही दुनिया का नियम है, ऐसा ही होता आया है और यही एक स्त्री के जीवन की चरम आयरनी है। लेकिन देख ....

इतने में टैक्सी प्रियनाथ मल्लिक रोड पहुँच गयी और दीपंकर बोला — हम आ गये हैं लक्ष्मी दी, वही सती की ससुराल है ....

— कहाँ ?

— वही जो दायें हाथ तिमंजिला मकान है, वही ....

रोज की तरह दरवान गेट के अन्दर बैठा था। गाड़ी की आवाज मिलते ही उसने झटपट आकर गेट खोल दिया। फिर सती को गाड़ी में बैठी देखकर उसने हाथ उठाकर सलाम किया। लेकिन सती अब भी निर्विकार थी। लक्ष्मी दी मकान की विशालता देखकर आश्चर्य में पड़ गयी। अन्दर बगीचे की तरफ निगाह जाते ही वह बोली — ये लोग तो बड़े अमीर हैं।

टैक्सी रुकते ही शंभु पहले उतरकर न जाने कहाँ गायब हो गया। उसके बाद दीपंकर उतरा, लक्ष्मी दी उतरी। लक्ष्मी दी मकान के अन्दर चारों तरफ देखने लगी। सती भी उतर गयी। दीपंकर ने टैक्सी का किराया दे दिया तो वह चली गयी।

बगीचे के माली ने दूर से देख लिया था। गैरेज के पास ड्राइवर बैठा था। सब पास आये। सबने सती को प्रणाम किया। लेकिन किसी के मुँह से कोई बात नहीं निकल रही थी। सती को देखकर मानों सभी सिटपिटा गये थे। सारा मकान मानो गुमसुम हो गया था। सारा मकान मानो अवसन्न और निस्पन्द हो गया था। दीपंकर को डर लगने लगा। कहाँ था इस घर का प्राण और कहाँ थी इसकी आत्मा ? किसके पास जाकर किससे माफी माँगनी होगी ? किसके अपराध का वे प्रायश्चित्त करने आये हैं ?

याद है, उस दिन — उस सवेरे दीपंकर पहले जरा डर गया था। लेकिन क्यों यह डर था, किससे यह डर था, इसकी स्पष्ट धारणा उसे नहीं थी। फिर, अपराध क्या था, इसका भी उसे स्पष्ट ज्ञान नहीं था। बाद में भी कभी वह स्पष्ट नहीं हुआ। अपराध तो मनुष्य ही करता है। देवताओं को अपराध नहीं करना पड़ता। क्षमा भी मनुष्य ही करता है। फिर भी अपराध के लिए अपराधी मनुष्य के मर्मांतक प्रायश्चित्त की क्या विडंबना है, यह तो दीपंकर जिन्दगी भर देखता रहा है। जिससे अपराध होता है, अपराध के विरुद्ध वही निर्लज्ज प्रचार भी करता है और उसी से यह संसार सदैव विडं-बित होता है। फिर भी दीपंकर उसी मामूली प्रायश्चित्त और उसी मामूली क्षमा की की दुहाई का भरोसा कर उस दिन घोष परिवार के मकान के आँगन में जा खड़ा हुआ था।

सती आगे-आगे चल रही थी। लक्ष्मी दी उसके पीछे-पीछे बरामदे की तरफ

जा रही थी। दीपंकर उन दोनों के पीछे चल रहा था। कहाँ जाना है, यह तीनों में से कोई में से कोई नहीं जानता था। शायद सती सनातन बाबू के कमरे की तरफ जा रही थी। लेकिन सनातन बाबू के पास जाने पर सारी समस्याओं का समाधान नहीं होगा, यह भी सती जानती थी। लेकिन सनातन बाबू से भी ऊपर कोई श्रीमती नयनरंजिनी दासी है, यह मानो सती जान-बूझकर भूलना चाह रही थी।

अचानक किसी की आवाज से तीनों रुक गये।

— कौन जा रहे हैं वहाँ?

पहले सती रुक गयी। उससे पीछे लक्ष्मी दी रुकी और सबके पीछे दीपंकर रुक गया।

— तुम लोग कौन हो? कहाँ जा रहे हो?

दीपंकर को इसका जवाब देना चाहिए था। लेकिन जवाब न देकर उसने सती की सास के सामने जाकर उनके पाँव छूए।

— बस, बस, छूओ नहीं, छू मत देना। मैं अभी पूजा करके आ रही हूँ।

दीपंकर बोला — आप शायद मुझे पहचान नहीं पा रही हैं, मैं दीपंकर हूँ। बहुत दिन पहले मैं दो बार इस मकान में आया था ....

सती की सास दीपंकर को पहचान सकी या नहीं, समझ में नहीं आया, उन्होंने पूछा — और यह कौन है?

इशारा लक्ष्मी दी की तरफ है।

दीपंकर बोला — यही सती की बड़ी बहन लक्ष्मी दी है ....

परिचय देने से पहले ही लक्ष्मी दी ने गले में [illegible] के पाँवों में प्रणाम किया।

— छी, छी, तुमने छू दिया? तुम्हीं तो बड़ी [illegible]

लक्ष्मी दी ने विनय से कहा — हाँ माँ, [illegible]

— तो तुम्हीं घर छोड़कर चली गयी थी [illegible] बारे में कुछ नहीं बताया। मैं विधवा हूँ। [illegible] अपनी छोटी लड़की की शादी कर दी! लेकिन [illegible] इस मकान में घुसने दिया है? क्या रात [illegible]

दीपंकर बोला — जी नहीं, [illegible] लाया हूँ।

— अगर तुम्हारे घर बहू एक [illegible] ले आये? क्या एक ही रात में [illegible]

इन सारी बातों के लिए [illegible] नहीं देना चाहता। इसीलिए [illegible]

खैर, बहू की तो सास [illegible]

तुम लोग किस अधिकार से इस मकान में घुसे हो ? किसने तुम लोगों से यहाँ आने के लिया कहा ? भले आदमी के घर में घुसते हुए तुम लोगों को शर्म नहीं आयी ? तुम लोगों की इतनी हिम्मत कैसे हुई ?

फिर सती की सास ने मुँह फेरकर कहा — अरे दरवान किधर चला गय है ? दरवान ....

इसके लिए भी लक्ष्मी दी तैयार थी। आगे बढ़कर लक्ष्मी दी ने फिर सती की सास के आगे फर्श पर सिर नवाया और कहा — आपके पाँवों पड़ रही हूँ माँ, हमारी माँ नहीं है, आप ही सती की माँ हैं, आप ही उसके लिए सब कुछ हैं। आप उसे क्षम कर दीजिए माँ। उसका सारा दोष मैं अपने पर ले रही हूँ — आप मुझे सज दीजिए !

यह सब होने के बाद सती बरामदा पारकर सीधे सामने जा रही थी। उध निगाह जाते ही सास ने कहा — तुम कहाँ जा रही हो बहू ? कहाँ जा रही हो यहाँ आकर चुपचाप खड़ी रहो !

सती अब हिली नहीं। वह जहाँ थी, वहीं रुककर खड़ी रही।

लक्ष्मी दी कहने लगी — आप जो सजा देंगी माँ, मैं सिर झुकाकर स्वीका करूँगी, सारा दोष हमारा है। आप सारा अपराध क्षमा कर सती को अपने घर मे शरण दीजिए। उसकी उम्र कम है। उसने नासमझी में ऐसी गलती की है। लेकि आप तो समझदार हैं, आप उसे दुत्कार मत दीजिए। आप उसे शरण नहीं देंगी तो वह कहाँ जायेगी ? किसके पास जायेगी ? उसका कौन है ?

इतनी देर तक दीपंकर ने देखा नहीं था। कमरे में निर्मल पालित काफी दे से इन्तजार कर रहा था। अब वह अचानक बाहर आया। उसने सती की सास से कहा — अब मैं चलूँ माँजी ?

सास ने निर्मल पालित की तरफ देखा। कहा — क्यों ? तुमसे मेरा काम है थोड़ी देर इन्तजार करो। तुम से बहुत काम है ....

निर्मल पालित फिर कमरे में जाने लगा। लेकिन अचानक दीपंकर को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गया।

— अरे दीपू, तू ?

दीपंकर बोला — मैं एक काम से आया हूँ। तू यहाँ कैसे ?

— अरे, ये लोग मेरे क्लाएंट हैं ! हाँ, यहाँ तुझे कैसा काम पड़ गया ? इन लोगों से तेरी कैसी जान-पहचान है ?

दीपंकर बोला — है एक काम। सनातन बाबू की पत्नी को मैं जानता हूँ उसी के सिलसिले में आया हूँ।

सती की सास ने ये बातें सुन लीं। उन्होंने निर्मल पालित से पूछा — क्या तुम इस छोकरे को जानते हो बेटा ?

निर्मल पालित बोला — जानता नहीं ? खूब जानता हूँ। बचपन में हम धर्म-
न ट्रस्ट माइरा स्कूल में एक साथ पढ़ते थे — बाद में मैं कैथिड्रल मिशनरी में चला
ा या। — फिर निर्मल ने दीपंकर से पूछा — हाँ, वह किरण आजकल कहाँ है रे ?
ा था कि वह टेररिस्ट पार्टी में शामिल होकर एकदम बरबाद हो गया है ! बेचारे
फैमिली बड़ी पुअर थी ....

दीपंकर सिर्फ बोला — हाँ ....

— फिर उस दिन राय बहादुर कह रहा था कि वह ऐब्स्कॉण्ड कर जर्मनी
भाग गया है। ओफ ! इन्सान कितना नीचे गिर सकता है। जिंदा रहने से रियली
बहुत कुछ देखा जा सकता है ....

दीपंकर को ये सब बातें अच्छी नहीं लग रही थीं। कहना चाहिए कि इस
मकान में इस परिस्थिति में निर्मल पालित से सामना होना भी उसे अच्छा नहीं लगा।

लेकिन निर्मल पालित छोड़नेवाला जीव नहीं था। उसने कहा — तेरे उस बूढ़े
रॉबिन्सन ने तो रिटायर किया है। तूने तो सुना होगा ? हम लोगों ने ओल्डमैन को
रोटरी में एक पार्टी दी थी। हाँ, तुझे कोई प्रोमोशन मिला ? या तू उसी थर्डग्रे
सीज में सड़ रहा है ? मैंने उस बूढ़े से कहा था कि रेलवे में ऐसा पुअर पे देने पर
ऑटोमेटिकली सब लोग टेररिस्ट पार्टी ज्वाइन करेंगे — यू कांट चेक इट, इट्स नेक्स्ट
टु इम्पॉसिब्ल ....

— उठो। उठ जाओ !

लक्ष्मी दी सती की सास के पाँवों के पास पड़ी थीं।

सती की सास चिल्लायीं — उठो ! उठ जाओ ! ऐसी नखरे की रुलाई मैंने
हुत सुनी है। नखरे की इस रुलाई से मैं भूलने वाली नहीं हूँ। उठो। उठ जाओ !
सी बेअदब मेरी बहू है, वैसी बेअदब उसकी बड़ी बहन ! उठो ....

लक्ष्मी दी बोलीं — पहले आप बताइए कि आपने सती को माफ कर दिया
....

— पहले तुम उठो तो। मैंने कौन ऐसा पाप किया है कि मुझे तुम लोगों को
चन देना पड़ेगा ? मैं कह रही हूँ कि उठो, नहीं तो दरवान को बुलाऊँगी ....

लक्ष्मी दी बोलीं — आपके पाँवों पड़ रही हूँ माँ, आप सती को शरण
जिए ....

सती की सास बोलीं — मेरे पाँव इतने सस्ते नहीं हैं बेटा, तुम हटो ....

यह कहकर सती की सास स्वयं जरा हट गयीं। लेकिन लक्ष्मी दी उनकी तरफ
े।

सती की सास बोलीं — यह तो अच्छी जिद है ! भले घर की बहू बाहर रात
ता आयी और मैं उसे शरण दूँगी। क्यों ? मैंने कौन-सा अपराध किया है कि मैं उसे
ण दूँगी ?

लक्ष्मी दी बोली — क्षमा तो मनुष्य ही करता है। अपराध जिस तरह मनुष्य करता है, क्षमा भी उसी तरह वही करता है! अगर आप उसे क्षमा नहीं कर सकती, तो उसे सजा दीजिए! सजा पाने के लिए ही हम आपके पास आये हैं माँ — आप जैसी सजा चाहे दीजिए ....

लगा, इस बात का कुछ असर हुआ।

सती की सास ने न जाने एक क्षण क्या सोच लिया। उसके बाद सामने शंभु को देखकर उन्होंने उससे कहा — शंभु, इधर सुन ....

शंभु पास आया। सती की सास बोलीं — जा, अन्दर से सबको बुला ला — भूती की माँ, बतासी की माँ, कैलास और रसोइया — जो जहाँ हैं, हरेक को बुला ला ....

— कहाँ बुलाऊँ माँजी ?

— यहीं आँगन में बुला लायेगा, और कहाँ ? दरबान को भी बुला ले ....

शंभु सबको बुलाने चला गया। सती की सास ने लक्ष्मी दी से कहा — तुमने सजा देने की बात कही, इसीलिए मैं सजा दे रही हूँ ....

फिर सती की सास ने आँगन की तरफ देखा और कहा — कहाँ ? सब आ गये हैं ?

शंभु बोला — हाँ माँजी, सब आ गये हैं ....

सास ने सबको देख लिया। बतासी की माँ, भूती की माँ, कैलास, दो रसोइये और कई दूसरे नौकर-चाकर। दीपंकर सबको जानता भी नहीं।

सती की सास बोलीं — ड्राइवर कहाँ गया ? उसे भी बुला ....

ड्राइवर दौड़ता हुआ आया। माँजी बोलीं — यहाँ मत आ, वहीं कतार में खड़ा हो जा ....

फिर दरबान को ढूँढ़ा गया। दरबान ? कहाँ गया दरबान ? उसे भी बुला!

अंत तक सब आ गये। आँगन में एक कतार में सब खड़े हो गये। दीपंकर कुछ नहीं समझ पा रहा था कि सती की सास का इरादा क्या था!

माँजी ने अचानक पुकारा — सोना!

सनातन बाबू अपनी लाइब्रेरी में किताब पढ़ने में व्यस्त थे। शंभु के बुलाने पर वे चौंके। बोले — क्या है रे ?

शंभु बोला — माँजी आपको बाहर बुला रही हैं ....

— क्यों ?

— यह मैं नहीं जानता, आइए ....

सनातन बाबू आये और इतने लोगों को देखकर आश्चर्य में पड़ गये। सती आयी है! वे सती की तरफ बढ़े।

माँजी ने पुकारा — उधर नहीं, मेरे पास आओ सोना ....

सनातन बाबू माँ के पास जाकर बोले — क्या है माँ ?

माँजी बोली — तुम अपने चप्पल उतार दो ....

— चप्पल ?

— हाँ। जो मैं कह रही हूँ, करो ....

सनातन बाबू पाँवों से चप्पल उतार कर माँ को देने लगे। माँ बोली — मुझे नहीं, बहू को दो ....

सनातन बाबू समझ नहीं सके कि यह सब क्या हो रहा है। उन्होंने सती को चप्पल थमा दिये।

माँजी ने सती से कहा — लो, चप्पल सिर पर रख लो ....

सती ने एक बार आगा-पीछा किया। लेकिन माँजी चिल्लायी — रखो सिर पर रखो ....

सती ने दोनों चप्पल सिर पर रखे। दोनों हाथों से दोनों चप्पल सिर पर रखकर वह खड़ी रही।

माँजी बोली — हाँ, इसी तरह खड़ी रहो। जब तक मैं उतारने को न कहूँ, तब तक चप्पल सिर पर रखे रहो, उतारना मत।

सब लोग मानो गूँगे बन गये। निर्मल पालित, लक्ष्मी दी नौकर-चाकर, दरबान, ड्राइवर सब इस अद्भुत घटना को देखकर निस्पन्द जड़वत् हो गये। मानो पलक झपकाना भी सब भूल गये।

सनातन बाबू से अब रहा नहीं गया। वे बोले — सती, तुमने सिर पर चप्पल क्यों रख लिये ?

माँजी ने डाँट — तुम चुप रहो ....

और सती! पत्थर की मूर्ति भी शायद वैसी स्थिर और अचल नहीं होती। पत्थर की आँखें भी शायद वैसी सूखी, कठोर और तीक्ष्ण नहीं हो सकतीं। सर्वंसहा धरती भी शायद वैसी सहनशील नहीं हो सकती। सती मनुष्य की सारी लज्जा, सारा पाप और सारी घृणा को आत्मसात् कर पूर्वाह्न के प्रखर सूरज के प्रकाश में सबकी संकुचित दृष्टि के सामने धैर्य की मूर्ति बनी नितांत अपराधी की तरह खड़ी रही। असंख्य साक्षियों की क्षुब्ध दृष्टि ने मानो उस लज्जाशीला की लज्जा का आवरण फाड़ कर, टुकड़े-टुकड़े कर दूर बहुत दूर फेंक दिया। मानो सती सबके सामने नंगी खड़ी हो गयी। घोष परिवार की कुललक्ष्मी पहली बार सबकी आँखों के सामने अपवित्र हुई।

लक्ष्मी दी ने हाथ पकड़कर खींचा तो दीपंकर मानो होश में आया। वह बोला — चलिए लक्ष्मी दी — अब यह देखा नहीं जाता ....

चुपचाप दोनों बाहर आये। बाहर आकर लक्ष्मी दी बोली — छी ! रोते नहीं — रोना नहीं चाहिए ....

— लेकिन यह क्या हो गया लक्ष्मी दी ! यह तो मैंने नहीं चाहा था।

लक्ष्मी दी बोली — अच्छा ही हुआ है दीपू, तू मत घबड़ा — इससे सती का भला ही होगा ....

लेकिन दीपंकर को लगा कि यह भी एक तरह का आउटरेज है ! दीपंकर की आँखों के सामने सबने मिलकर सती का आउटरेज किया। सबने मिलकर सती से रेप किया। और दीपंकर कुछ न कर सका। वह असहाय बना बस दोनों आँखें फाड़कर खड़ा देखता रहा। हाजरा रोड के मोड़ पर उस भीड़ में उसे लगा कि उसकी अन्तरात्मा का क्रुद्ध प्रतिवाद आर्तनाद बनकर बाहर निकलना चाह रहा है।

लक्ष्मी दी बोली — चल ! ट्राम आ गयी है ....